राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

[सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

श्री आचार्य विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार, जयपुर

ग्रन्थाङ्क ७९

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[दुष्करोद्धार एवं दुर्गमबोध टीकाद्वय सवलित]

प्रकाशक

राजस्थान राज्य संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR.

जोधपुर (राजस्थान)

१९६५ ई०

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यत अखिलभारतीय तथा विशेषत राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत प्राकृत, अपभ्रंश राजस्थानी हिन्दी आदि भाषानिबद्ध
विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावली

प्रधान सम्पादक

पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य

सम्मान्य संचालक राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर,
ऑनरेरि मेम्बर ऑफ जर्मन ओरिएन्टल सोसाइटी, जर्मनी,
निवृत्त सम्मान्य नियामक (ऑनरेरि डायरेक्टर),
भारतीय विद्याभवन बम्बई, प्रधान सम्पादक
सिंघी जैन ग्रन्थमाला इत्यादि

ग्रन्थाङ्क ७९

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[दुष्करोद्धार एवं दुर्गमबोध व्याख्याद्वय समन्वित]

प्रकाशक
राजस्थान राज्याज्ञानुसार
सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान
जोधपुर (राजस्थान)
१९६५ ई०

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[भट्ट लक्ष्मीनाथ एवं महोपाध्याय मेघविजय प्रणीत टीकाएं तथा आठ परिशिष्ट एवं समीक्षात्मक विस्तृत भूमिका सहित]

सम्पादक

महोपाध्याय विनयसागर

साहित्य महोपाध्याय, साहित्याचार्य, दर्शनशास्त्री,
साहित्यरत्न, काव्यभूषण, शास्त्रविशारद

प्रकाशनकर्ता
राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान
जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०२२
प्रथमावृत्ति १०००

भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८८७

खिस्ताब्द १९६५
मूल्य—१८ २५

मुद्रक- हरिप्रसाद पारीक, साधना प्रेस, जोधपुर

Vrittamauktika

of

Chandrashekhar Bhatta

with commentaries by Bhatt Lakshminath and Meghavijaya Gani

Edited with

Appendices and elaborate preface

by

M. Vinayasagar,

Sahitya-mahopadhyaya, Sahityacharya

Darshan-shastri, Sahitya-ratna, Shastra-visharad etc.

Published under the orders of the Government of Rajasthan

By

THE RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE

JODHPUR (Rajasthan)

V.S. 2022]

[1965 A.D.

सञ्चालकीय वक्तव्य

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के ७६वें ग्रन्थाक के स्वरूप वृत्त-मौक्तिक नाम का यह एक मुक्ताकित ग्रन्थरत्न गुम्फित होकर ग्रन्थ-माला के प्रिय पाठकवर्ग के करकमलो मे उपस्थित हो रहा है।

जैसा कि इसके नाम से हो सूचित हो रहा है कि यह ग्रन्थ वृत्त अर्थात् पद्यविषयक शास्त्रीय वर्णन का निरूपण करने वाला एक छन्द.शास्त्र है। भारतीय वाड्मय मे इस शास्त्र के अनेक ग्रन्थ उपलब्ध होते है। प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक, इस विषय का विवेचन करने वाले सैंकडो ही छोटे-बडे ग्रन्थ भारत की भिन्न-भिन्न भाषाओ मे ग्रथित हुए है। प्राचीनकाल मे प्राय सब ग्रन्थ सस्कृत और प्राकृत भाषा मे रचे गये हैं। बाद मे, जब देश्य-भाषाओ का विकास हुआ तो उनमे भी तत्तद् भाषाओ के ज्ञाताओ ने इस शास्त्र के निरूपण के वैसे अनेक ग्रन्थ बनाये।

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला का प्रधान उद्देश्य वैसे प्राचीन शास्त्रीय एव साहित्यिक ग्रन्थो को प्रकाश मे लाने का रहा है जो अप्रसिद्ध तथा अज्ञात स्वरूप रहे है। इस उद्देश्य की पूर्त्तिरूप मे, हमने इससे पूर्व छन्द शास्त्र से सम्बन्ध रखने वाले पाँच ग्रन्थ इस ग्रन्थमाला मे प्रकाशित किये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ का छठा स्थान है।

इनमे पहला ग्रन्थ महाकवि स्वयभू रचित है जो 'स्वयंभू छंद' के नाम से अकित है। स्वयभू कवि ९-१०वी शताब्दी मे हुआ है। वह अपभ्र श भाषा का महाकवि था। उसका बनाया हुआ अपभ्र श भाषा का एक महाकाव्य 'पउमचरिउ' है, जिसको हमने अपनी 'सिंघी जैन ग्रन्थमाला' मे प्रकाशित किया है। स्वयभू कवि ने अपने छन्द शास्त्र मे, सस्कृत और प्राकृतभाषा के उन बहुप्रचलित और सुप्रतिष्ठित छन्दो का तो यथायोग्य वर्णन किया ही है परन्तु तदुपरान्त विशेष रूप से अपभ्र श-

भाषा-साहित्य के नवीन विकसित छन्दों का भी बहुत विस्तार से वर्णन किया है। अपभ्रंश भाषा-साहित्य की दृष्टि से यह ग्रन्थ विशिष्ट रत्न-रूप है।

दूसरा ग्रन्थ है 'वृत्तजातिसमुच्चय'। इसका कर्ता विरहांक नाम से अंकित कोई 'कइसिट्ठ' है। यह शब्द प्राकृत है, जिसका सही संस्कृत पर्याय क्या होगा, पता नहीं लगता। 'कइसिट्ठ' का संस्कृत रूप कवि श्रेष्ठ कविशिष्ट और कृतशिष्ट अथवा कृतिश्रेष्ठ भी हो सकता है। वृत्तजातिसमुच्चय भी प्राचीन रचना सिद्ध होती है। इसकी रचना ९वीं १०वीं शताब्दी की या उससे भी कुछ प्राचीन अनुमानित की जा सकती है। यह रचना शिष्ट प्राकृत भाषा में ग्रथित है। इसमें संस्कृत की अपेक्षा प्राकृत के छन्दों का विस्तृत निरूपण है और साथ में अपभ्रंश भाषा के भी अनेक छन्दों का वर्णन है। ग्रन्थकार ने अपभ्रंश शनो के छन्दो का विवेचन करते हुए उसकी उपशाखाएँ स्वरूप 'आभीरी' और मारवी' अथवा 'मारुवाणी' का भी नाम-निर्देश किया है जो प्राचीन राजस्थानी भाषा-साहित्य के विकास के इतिहास की दृष्टि से प्राचीनतम उल्लेख है। राजस्थानी के पिछले कवियों ने जिसे 'मरुभाषा अथवा मुरधरभाखा' कहा है, उसे ही कवि विरहांक ने 'मारुवाणी' नाम से उल्लेख किया है। इस मारुवाणी का एक प्रिय और प्रसिद्ध छन्द है जिसका नाम 'घोपा' अथवा 'घोपा' बताया है। इस उल्लेख से यह ज्ञात होता है कि ९वीं १०वीं शताब्दी में राजस्थान की प्रसिद्ध बोली 'मारुई' या 'मारवी' का अस्तित्व और उसके कवि सम्प्रदाय तथा उनकी काव्यकृतियों का व्यवस्थित विकास हो रहा था। प्राकृत और अपभ्रंश भाषा में पद्य रचना के विविध प्रयोगों का इस ग्रन्थ में बहुत महत्त्वपूर्ण निरूपण है।

तीसरा ग्रन्थ है 'कविदर्पण'। यह भी प्राकृत के पद्य-स्वरूपों का निरूपण करने वाला एक विशिष्ट ग्रन्थ है। इसकी रचना विक्रम की १४वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुई प्रतीत होती है। विक्रम की १२वीं शताब्दी के प्रारम्भ में राजस्थान और गुजरात में प्राकृत और अप

भ्रंश भाषा के साहित्य मे जिस प्रकार के अनेकानेक मात्रागणीय छन्दो का विकास और प्रसार हुआ है उनका सोदाहरण लक्षण-वर्णन इस रचना मे दिया गया है। 'सदेशरासक' जैसी रासावर्ग की सर्वोत्तम रचना मे जिन विविध प्रकार के छन्दो का कवि ने प्रयोग किया है उन सब का निरूपण इस ग्रन्थ मे मिलता है। प्राकृतपिगल नाम के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में जिस प्रकार के छन्दो का वर्णन दिया गया है उनमे के प्राय. सभी छन्द इस ग्रन्थ मे, उसी शैली का पूर्वकालीन पथप्रदर्शन करने वाले, मिलते है। जिस प्रकार प्राकृतपिगल मे दिये गये उदाहरणभूत पद्यो मे, कर्ण, जयचद, हमीर आदि राजाओ के स्तुति-परक पद्य मिलते है उसी तरह इस ग्रन्थ मे भीमदेव, सिद्धराज जयसिंह, कुमारपाल आदि अणहिलपुर के राजाओ के स्तुतिपरक पद्य दिये गये हैं।

उक्त तीनो ग्रन्थो का सम्पादन हमारे प्रियवर विद्वान् मित्र प्रो० एच० डी० वेलणकरजी ने किया है जो भारतीय छन्द शास्त्र के अद्वितीय मर्मज्ञ विद्वान् है। इन ग्रन्थो की विस्तृत प्रस्तावनाओ मे (जो अग्रेजी मे लिखी गई है) सम्पादकजी ने प्राकृत एव अपभ्र श के पद्य-विकास का बहुत पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया है। इन ग्रन्थो के अध्ययन से अपभ्र श और प्राचीन राजस्थानी-गुजराती, हिन्दीभाषा के विविध छदो का किस क्रम से विकास हुआ है वह अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है।

विगत वर्ष मे हमने इसी ग्रन्थमाला के ६९ वें मणि के रूप मे 'वृत्तमुक्तावली' नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया—जिसके रचयिता जयपुर के राज्यपण्डित श्रीकृष्ण भट्ट थे, महाराजा सवाई जयसिंह ने उनको बडा सम्मान दिया था। वृत्तमुक्तावली मे वैदिक छन्दो का भी निरूपण किया गया है, जो उपर्युक्त ग्रन्थो मे आलेखित नही हैं। वृत्तमुक्तावली मे वैदिक छन्द तथा प्राचीन संस्कृत एव प्राकृत-साहित्य मे सुप्रचलित वृत्तो के अतिरिक्त उन अनेक देश्यभाषा-निबद्ध वृत्तो का भी निरूपण किया गया है जो उक्त प्राचीन ग्रन्थकारो के बाद होने वाले अन्यान्य कवियो द्वारा प्रयुक्त हुए हैं। श्रीकृष्ण भट्ट सस्कृत-भाषा के प्रौढ

पण्डित थे। संस्कृत काव्य रचना में उनकी गति प्रखर और अबाध थी इसलिये उन्होंने उक्त प्रकार के सब छन्दों के उदाहरण स्वरचित पद्यों द्वारा ही प्रदर्शित किये है। प्राकृत, अपभ्रंश और प्राचीन देशी भाषा के प्रधानवृत्तों के उदाहरण-स्वरूप पद्य भी उन्होंने संस्कृत में ही लिखे। हिन्दी राजस्थानी-गुजराती भाषा में बहुप्रचलित और सर्वविश्रुत दोहा, चौपाई सवैया कवित्त और छप्पय जैसे छन्द भी उन्होंने संस्कृत मे ही अवतारित किये।

इन ग्रंथों से विलक्षण एक ऐसा छन्द विषयक अन्य बड़ा ग्रंथ भी हमने ग्रन्थमाला में गुम्फित किया है जो 'रघुवरजसप्रकास' है। इसका कर्त्ता चारण कवि किसनाजी आढा है वह उदयपुर के महाराणा भीमसिंह जी का दरबारी कवि था। वि० सं० १८८० ८१ में उसने इस ग्रन्थ की राजस्थानी भाषा में रचना की। जिसको कवि 'मुरधर भाखा' के नाम से उल्लिखित करता है। यह छन्दोवर्णन विषयक एक बहुत ही विस्तृत और वैविध्य-पूर्ण ग्रंथ है। कर्त्ता ने इस ग्रन्थ में छन्द शास्त्र विषयक प्रायः सभी बातें अंकित कर दी हैं। वर्णवृत्त और मात्रावृत्तों के लक्षण दोहा छन्द में बताये है। उदाहरणभूत सब पद्य अर्थात् वृत्त कवि ने अपनी मुरधरभाखा अर्थात् मरुभाषा में स्वयं ग्रथित किये हैं। इस प्रकार संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषा के सुप्रसिद्ध सभी छन्दों के उदाहरण उसने 'मरुभाखा' में ही लिखकर अपनी देशभाषा के भाव सामर्थ्य और शब्दभंडार के महत्त्व को बहुत उत्तम रीति से प्रकट किया है। इसके अतिरिक्त उसने इस ग्रंथ में राजस्थानी भाषाशैली में प्रचलित उन सैकड़ों गीतों के लक्षण और उदाहरण गुम्फित किये हैं जो अन्य भाषा-ग्रथित छन्दग्रन्थों में प्राप्त नहीं होते।

प्रस्तुत 'वृत्तमौक्तिक' ग्रन्थ इस ग्रंथमाला का छंदशास्त्र विषयक छठा ग्रंथ है। यह ग्रंथ भी वृत्तमुक्तावली के समान संस्कृत में गुम्फित है। वृत्तमुक्तावली के रचना काल से कोई एक शताब्दी पूर्व इसकी रचना हुई होगी। इसमें भी वृत्तमुक्तावली की तरह सभी वृत्तों या पद्यों के उदाहरण ग्रंथकार के स्वरचित हैं। वृत्तमुक्तावली की तरह इसमें

वैदिक छदो का निरूपण नही है पर संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य में प्रयुक्त प्राय. सभी छदो का विस्तृत वर्णन है। जितने छदो अर्थात् वृत्तो का निरूपण इस ग्रन्थ मे किया गया है उतनो का वर्णन इसके पूर्व निर्मित किसी भी सस्कृत छदोग्रन्थ में नही मिलता है। इस दृष्टि से यह ग्रन्थ छद शास्त्र की एक परिपूर्ण रचना है।

सस्कृत-साहित्य में पद्य-रचना के अतिरिक्त अनेक विशिष्ट गद्य-रचनायें भी हैं जो काव्य-शास्त्र मे वर्णित रस और अलकारो से परि-पूर्ण हैं, परन्तु गद्यात्मक होने से पद्यो की तरह उनका गेय स्वरूप नही बनता। तथापि इन गद्य-रचनाओ मे कही कही ऐसे वाक्यविन्यास और वर्णन-कण्डिकाएँ, कविजन ग्रथित करते रहते है जिनमे पद्यो का अनुकरण-सा भासित होता है और उन्हें पढने वाले सुपाठी मर्मज्ञ जन ऐसे ढग से पढते हैं जिसके श्रवण से गेय-काव्य का सा आनन्द आता है। ऐसे गद्यपाठ के वाक्यविन्यासो को छन्द शास्त्र के ज्ञाताओ ने पद्यानुगन्धी अथवा पद्याभासी गद्य के नाम से उल्लेखित किया है और उसके भी कुछ लक्षण निर्धारित किये है। प्रस्तुत ग्रन्थ मे वृत्तमौक्तिक-कार ने ऐसे विशिष्ट गद्याशो का विस्तृत निरूपण किया है और इस प्रकार के शब्दालकृत गद्य की कुछ विद्वानो की विशिष्ट स्वतत्र रचनायें भी मिलती है जो विरुदावली और खण्डावली आदि के नाम से प्रसिद्ध है। ऐसी अनेक विरुदावलियो तथा कुछ खण्डावलियो का निरूपण इस वृत्तमौक्तिक मे मिलता है जो इसके पूर्व रचे गये किसी प्रसिद्ध छन्दोग्रन्थ मे नही मिलता। इस प्रकार की छन्द शास्त्र-विषयक अनेक विशेषताओ के कारण यह वृत्तमौक्तिक यथानाम ही मौक्तिक स्वरूप एक रत्न-ग्रन्थ है।

इस ग्रन्थ की विशिष्ट मूल-प्रति राजस्थान के बीकानेर मे स्थित सुप्रसिद्ध अनूप सस्कृत पुस्तकालय मे सुरक्षित है। मूल-प्रति ग्रन्थकार के समय मे ही लिखी गई है—अर्थात् ग्रन्थ की समाप्ति के बाद १४ वर्ष के भीतर। यह प्रति आगरा में रहने वाले लालमणि मिश्र ने वि स. १६६० मे लिख कर पूर्ण की।

ग्रन्थ की रचना कहाँ हुई इसका उल्लेख कहीं नहीं किया गया। परन्तु ग्रन्थकार तैलंगदेशीय भट्ट वंश के ब्राह्मण थे और उनकी वंश-परम्परा सुप्रसिद्ध वैष्णव सम्प्रदाय के धर्माचार्य श्री वल्लभाचार्य के वंश से अभेद स्वरूप रही है। प्रस्तुत रचना में कर्त्ता ने सर्वत्र श्रीकृष्ण भक्ति का और मथुरा वृन्दावन के गोप गोपीजनों के रस विहार का जो वर्णन किया है उससे यह कल्पना होती है कि ग्रन्थकार मथुरा-वृन्दावन के रहने वाले हों।

इस ग्रन्थ का सम्पादन श्री विनयसागरजी महोपाध्याय ने बहुत परिश्रम-पूर्वक बड़ी उत्तमता के साथ किया है। ग्रन्थ से सम्बद्ध सभी विचारणीय विषयों का इन्होंने अपनी विद्वत्तापूर्ण विस्तृत प्रस्तावना और परिशिष्टों में बहुत विशद रूप से विवेचन किया है जिसके पढ़ने से विद्वानों को यथेष्ट जानकारी प्राप्त होगी।

ग्रन्थमाला के स्वर्णसूत्र में इस मौक्तिक-स्वरूप रत्न की पूर्ति करने निमित्त हम श्री विनयसागरजी के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं और आशा रखते हैं कि वे अपनी विद्वत्ता के परिचायक इस प्रकार के और भी ग्रन्थ-सम्पादन के कार्य द्वारा ग्रन्थमाला की सेवा और शोभावृद्धि करते रहेंगे।

जन्माष्टमी सं २०२२　　　　मुनि जिनविजय
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान　　　　सम्मान्य सञ्चालक
जोधपुर
दि १०-८-६५

समर्पण

यः सूरीश्वर - वंश-सागर - मणिर्वादीभपञ्चाननः ,
तं श्रीजैनविधौ गणे दिनमणिं ध्यायामि हृद्ध्वान्तहम् ।
हिन्द्यामागमसंप्रसारमणिना प्रोद्धारि येन श्रुतं ,
भव्यानामुपदेशदानमणये तस्मै नमः सर्वदा ॥

यस्मात्प्रादुरभून्मणेः शुभविधा श्रीगौतमाद्वागिव ,
वागीशानिव वादिनो जितवती वादेषु संवादिनः ।
सौमत्यम्बुनिधेर्मणे समुदयात् सज्ज्ञानमालोकते ,
ग्रन्थं मौक्तिकनामकं गुरुमणौ भक्त्या मया ह्यर्प्यते ॥

चरणचञ्चरीक
विनय

क्रमपञ्जिका

भूमिका

विषय	पृष्ठांक
छन्दःशास्त्र का उद्‌भव और विकास	१ – १६
कवि-वंश-परिचय	२० – ४३
वृत्तमौक्तिक का सारांश	४३ – ६०
ग्रन्थ का वैशिष्ट्य	६० – ७१
वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल	७२ – ७४
वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण	७४ – ७८
वृत्तमौक्तिक और गोविन्दविरुदावली	
वृत्तमौक्तिक में उद्धृत अप्राप्त ग्रन्थ	
प्रस्तुत संस्करण की विशेषतायें	
प्रति-परिचय	
सम्पादन-शैली	
आभार-प्रदर्शन	६२ – ६३
पारिभाषिक-शब्द	६४ – ६६

१. प्रथमखंड

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
प्रथम गाथाप्रकरणम्	१ - १२१	१ - १३
मङ्गलाचरणम्	१ – ६	१
गुरुलघुस्थिति	७ – १०	१ – २
विकल्पस्थिति	११ – १२	२
काव्यलक्षणेऽनिष्टफलवेदनम्	१३ – १४	२
मात्राणां गणव्यवस्थाप्रस्तारश्च	१५ – १८	२ – ३
मात्रागणानां नामानि	१९ – ३८	३ – ४
वर्णवृत्तानां गणसंज्ञा	३९ – ४०	४
गणदेवता	४१	४
गणानां मैत्री	४२	४
गणदेवानां फलाफलम्	४३ – ५०	४ – ५
मात्रोद्दिष्टम्	५१ – ५२	५

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
मात्रानष्टम्	५२ – ५४	५
वर्णोद्दिष्टम्	५५	५
वर्णनष्टम्	५६	६
वर्णमेरुः	५७ – ५८	६
वर्णपताका	५९ – ६१	६
मात्रामेरुः	६२ – ६५	६
मात्रापताका	६६ – ६८	६
वृत्तद्वयस्य गुरुलघुज्ञानम्	६९	७
वर्णमर्कटी	७० – ७५	७
मात्रामर्कटी	७६ – ८५	७ – ८
ग्रन्थाभिधानम्	८६	८
प्रस्तारसंख्या	८७ – ८८	८
गाथाभेदाः	८९ – ९०	८
गाथा	९१ – ९५	९
गाथायाः सप्तविंशतिभेदाः	९६ – १०३	९ – १०
विगाथा	१०४ – १०५	१० – ११
गाहू	१०६ – १०८	११
उद्गाथा	१०९ – ११०	११
गाहिनी	१११ – ११२	११ – १२
सिंहिनी	११३ – ११४	१२
स्कन्धकम्	११५ – ११६	१२
स्कन्धकस्याऽष्टाविंशतिभेदाः	११७ – १२१	१२ – १३
द्वितीयं षट्पदप्रकरणम्	१ – ७१	१४ – २६
दोहा	१ – ३	१४
दोहायाः त्रयोविंशतिभेदाः	४ – ८	१४
रसिका	९ – ११	१५
रसिकाया अष्टौ भेदाः	१२ – १५	१६
रोला	१६ – १७	१६
रोलाया त्रयोदश भेदाः	१८ – २१	१७
गन्धानकम्	२२ – २४	१७ – १८
चौपैया	२५ – २७	१८ – १९
घत्ता	२८ – ३०	१९
घत्तानन्दम्	३१ – ३३	१९
काव्यम्	३४ – ३७	१९ – २०

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
उल्लालम्	३८ – ३९	२०
शक (काव्यभेद)	४० – ४२	२०
काव्यस्य पञ्चचत्वारिंशद्भेदा	४३ – ५२	२० – २२
षट्पदम्	५३ – ५५	२३
षट्पदवृत्तस्यैकसप्ततिर्भेदा	५६ – ६३	२३ – २४
काव्यषट्पदयोर्दोषा	६४ – ७१	२५ – २६
तृतीय रड्डाप्रकरणम्	१ - २५	२७ - ३०
पज्झटिका	१ – २	२७
अडिल्ला	३ – ४	२७
पादाकुलकम्	५ – ६	२७ – २८
चौबोला	७ – ८	२८
रड्डा	९ – १२	२८ – २९
रड्डाया सप्तभेदा	१३ – १५	२९
[१] करभी	१६ – १७	२९
[२] नन्दा	१८	२९
[३] मोहिनी	१९	३०
[४] चारुसेना	२०	३०
[५] भद्रा	२१	०
[६] राजसेना	२२	
[७] तालङ्किनी	२३ – २५	
चतुर्थ ...	१ - ६९	
पद्मावती	– २	
कुण्डलिका	– ४	
गगनाङ्गणम्	– ६	
द्विपदी	–	
झुल्लणा		
खञ्जा		

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठाङ्क
चन्द्रकला	१ – ११	१७
कामकला	१२ – १३	१७
रुचिरा	१४ – १५	१७
दीपकम्	१६ – १९	१८
सिंहविलोकितम्	४ – ४१	१८
प्लवङ्गम	४२ – ४३	१९
लीलावती	४४ – ४५	१९
हरिगीतम्	४६ – ४७	३९ – ४
हरिगीत[क]म्	४८ – ४९	४० – ४१
मनोहरहरिगीतम्	५ – ५१	४१
हरिगीता	५२ – ५३	४१
अपरा हरिगीता	५४ – ५५	४१ – ४२
त्रिभङ्गी	५६ – ५७	४२
दुर्मिलका	५८ – ५९	४२
हीरम्	६ – ६२	४३
जनहरणम्	६३ – ६४	४४
मदनगृहम्	६५ – ६७	४५
मरहट्ठा	६८ – ६९	४६
पञ्चमं सवैयाप्रकरणम्	१ १२	४७ ४९
सवैया	१ – २	४७
सवैयाभेदानां नामानि	३	४७
मदिरा सवैया	४	४७
मालती सवैया	५	४७
मल्ली सवैया	६	४८
मल्लिका सवैया	७	४८
माधवी सवैया	८	४८
मागधी सवैया	९ – १	४८
घनाक्षरम्	११ – १२	४९
षष्ठं गलितकप्रकरणम्	१ ३५	५० ५६
गलितकम्	१ – २	५
विगलितकम्	३ – ४	५
सङ्गलितकम्	५ – ६	५ – ५१
सुन्दरगलितकम्	७ – ८	५१
भूषणगलितकम्	९ – १	५१

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
मुखगलितकम्	११ – १२	५१ – ५२
विलम्बितगलितकम्	१३ – १४	५२
समगलितकम्	१५ – १६	५२
अपर समगलितकम्	१७ – १८	५३
अपर सङ्गलितकम्	१९ – २०	५३
अपर लम्बितागलितकम्	२१ – २२	५३
विक्षिप्तिकागलितकम्	२३ – २४	५३ – ५४
ललितागलितकम्	२५ – २६	५४
विषमितागलितकम्	२७ – २८	५४
मालागलितकम्	२९ – ३०	५५
मुग्धमालागलितकम्	३१ – ३२	५५
उद्गलितकम्	३३ – ३५	५५ – ५६
ग्रन्थकृत्प्रशस्ति	३६ – ३९	५६

द्वितीय खंड

प्रथम वृत्तनिरूपण-प्रकरणम्	१ - ६१७	५७ - १८०
मङ्गलाचरणम्	१ – २	५७
एकाक्षरम्	३ - ६	५७
श्री	३ – ४	५७
इ	५ – ६	५७
द्व्यक्षरम्	७ - १४	५८
काम	७ – ८	५८
मही	९ – १०	५८
सारम्	११ – १२	५८
मधु	१३ – १४	५८
त्र्यक्षरम्	१५ - ३०	५९ - ६०
ताली	१५ – १६	५९
शशी	१७ – १८	५९
प्रिया	१९ – २०	५९
रमण	२१ – २२	५९
पञ्चालम	२३ – २४	

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
अष्टाक्षरम्	८४ – १०१	६७ – ६९
विद्युन्माला	८४ – ८५	६७
प्रमाणिका	८६ – ८७	६८
मल्लिका	८८ – ८९	६८
तुङ्गा	९० – ९१	६८
कमलम्	९२ – ९३	६८
माणवकक्रीडितकम्	९४ – ९५	६९
चित्रपदा	९६ – ९७	६९
अनुष्टुप्	९८ – ९९	६९
जलदम्	१०० – १०१	६९
नवाक्षरम्	१०२ – १२४	७० – ७२
रूपामाला	१०२ – १०३	७०
महालक्ष्मिका	१०४ – १०५	७०
सारङ्गम्	१०६ – १०८	७०
पाइन्तम्	१०९ – ११०	७१
कमलम्	१११ – ११२	७१
बिम्बम्	११३ – ११४	७१
तोमरम्	११५ – ११६	७१
भुजगशिशुसृता	११७ – ११८	७२
मणिमध्यम्	११९ – १२०	७२
भुजङ्गसङ्गता	१२१ – १२२	७२
सुललितम्	१२३ – १२४	७२
दशाक्षरम्	१२५ – १४६	७३ – ७५
गोपाल	१२५ – १२६	७३
सयुतम्	१२७ – १२९	७३
चम्पकमाला	१३० – १३१	७३
सारवती	१३२ – १३३	७३ – ७४
सुषमा	१३४ – १३५	७४
अमृतगति	१३६ – १३७	७४
मत्ता	१३८ – १३९	७४
त्वरितगति	१४० – १४२	७४ – ७५
मनोरमम्	१४३ – १४४	७५
ललितगति	१४५ – १४६	७५

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
इन्द्रवंशा	२१६ – २२१	९३ – ९४
वंशस्थविलेन्द्रवंशोपजाति	२२२	९४–९७
जलोद्धतगतिः	२२३ – २२४	९७
वैश्वदेवी	२२५ – २२६	९७
मन्दाकिनी	२२७ – २२८	९८
कुसुमविचित्रा	२२९ – २३०	९८ – ९९
तामरसम्	२३१ – २३२	९९
मालती	२३३ – २३४	९९
मणिमाला	२३५ – २३६	१००
जलधरमाला	२३७ – २३८	१००
प्रियंवदा	२३९ – २४०	१०१
ललिता	२४१ – २४२	१०१
ललितम्	२४३ – २४४	१०१ – १०२
कामदत्ता	२४५ – २४६	१०२
वसन्तचत्वरम्	२४७ – २४८	१०२
प्रमुदितवदना	२४९ – २५०	१०३
नवमालिनी	२५१ – २५२	१०३
तरलनयनम्	२५३ – २५४	१०३ – १०४
त्रयोदशाक्षरम्	२५५ - २९४	१०४ - ११३
वाराह	२५५ – २५६	१०४
माया	२५७ – २५८	१०४ – १०५
मत्तमयूरम्	२५९ – २६०	१०५ – १०६
तारकम्	२६१ – २६३	१०६
कन्दम्	२६४ – २६५	१०६ – १०७
पङ्क्तावलि	२६६ – २६७	१०७
प्रहर्षिणी	२६८ – २७०	१०७ – १०८
रुचिरा	२७१ – २७२	१०८
चण्डी	२७३ – २७४	१०८
मञ्जुभाषिणी	२७५ – २७६	१०९
चन्द्रिका	२७७ – २७८	१०९
कलहंस	२७९ – २८०	११०
मृगेन्द्रमुखम्	२८१ – २८२	११०
क्षमा	२८३ – २८४	११० – १११
लता	२८५ – २८६	१११

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
चन्द्रलेखम्	२८७ – २८८	१११
सुप्र ति:	२८९ – २९०	११२
लक्ष्मी	२९१ – २९२	११२
विमलमति:	२९३ – २९४	११२ – ११३
चतुर्दशाक्षरम्	२९५ ३२९	११३ १२०
सिंहास्य	२९५ – २९६	११३
वसन्ततिलका	२९७ – २९९	११३ – ११४
चक्रम्	३०० – ३०२	११४
असम्बाधा	३०३ – ३०४	११४ – ११५
अपराजिता	३०५ – ३०६	११५
प्रहरणकलिता	३०७ – ३०९	११५ – ११६
वासन्ती	३१० – ३११	११६
लोला	३१२ – ३१३	११६
नान्दीमुखी	३१४ – ३१५	११७
वैदर्भी	३१६ – ३१७	११७
इन्दुवदनम्	३१८ – ३१९	११७ – ११८
शरभी	३२० – ३२१	११८
अहिधृति	३२२ – ३२३	११८
विमला	३२४ – ३२५	११८ – ११९
मल्लिका	३२६ – ३२७	११९
मणिगणम्	३२८ – ३२९	११९ – १२
पञ्चदशाक्षरम्	३३० ३७२	१२० १२८
लीलाखेल	३३ – ३३१	१२
मालिनी	३३२ – ३३६	१२ – १२१
चामरम्	३३७ – ३३९	१२१ – १२२
भ्रमरावलिका	३४० – ३४२	१२२
मनोहंस	३४३ – ३४५	१२३
शरभम्	३४६ – ३४७	१२३
मणिगुणनिकरम्	३४८ – ३५१	१२३ – १२४
निशिपालकम्	३५२ – ३५४	१२४ – १२५
विपिनतिलकम्	३५५ – ३५७	१२५
चन्द्रलेखा	३५८ – ३५९	१२५
चित्रा	३६ – ३६१	१२६

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
केसरम्	३६२ – ३६३	१२६
एला	३६४ – ३६५	१२६ – १२७
प्रिया	३६६ – ३६८	१२७
उत्सव.	३६९ – ३७०	१२७
उडुगणम्	३७१ – ३७२	१२८
षोडशाक्षरम्	३७३ - ४०४	१२८ - १३४
राम	३७३ – ३७४	१२८
पञ्चचामरम्	३७५ – ३७७	१२९
नीलम्	३७८ – ३७९	१२९
चञ्चला	३८० – ३८२	१३०
मदनललिता	३८३ – ३८४	१३०
वाणिनी	३८५ – ३८६	१३१
प्रवरललितम्	३८७ – ३८८	१३१
गरुडरुतम्	३८९ – ३९०	१३१ – १३२
चकिता	३९१ – ३९२	१३२
गजतुरगविलसितम्	३९३ – ३९४	१३२
शैलशिखा	३९५ – ३९६	१३३
ललितम्	३९७ – ३९८	१३३
सुकेसरम्	३९९ – ४००	१३३
ललना	४०१ – ४०२	१३४
गिरिवरधृतिः	४०३ – ४०४	१३४
सप्तदशाक्षरम्	४०५ - ४४०	१३५ - १४२
लीलाधृतम्	४०५ – ४०६	१३५
पृथ्वी	४०७ – ४०९	१३५
मालावती	४१० – ४११	१३६
शिखरिणी	४१२ – ४१७	१३६ – १३७
हरिणी	४१८ – ४२१	१३७ – १३८
मन्दाक्रान्ता	४२२ – ४२४	१३८ – १३९
वंशपत्रपतितम्	४२५ – ४२६	१३९
नर्दटकम्	४२७ – ४२८	१३९ – १४०
कोकिलकम्	४२९ – ४३०	१४०
हारिणी	४३१ – ४३२	१४० – १४१
भाराक्रान्ता	४३३ – ४३४	१४१
मतङ्गवाहिनी	४३५ – ४३६	१४१

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
पद्मकम्	४३७ – ४३८	१४२
दशमुखहरम्	४३९ – ४०	१४२
अष्टादशाक्षरम्	४४१ – ४७२	१४३ – १५०
लीलाचन्द्र	४४१ – ४४२	१४३
मञ्जीरा	४४३ – ४४४	१४३
चर्चरी	४४५ – ४५२	१४४ – १४५
क्रीडाचन्द्रः	४५३ – ४५५	१४५ – १४६
कुसुमितलता	४५६ – ४५७	१४६
नन्दनम्	४५८ – ४६	१४६ – १४७
नाराच	४६१ – ४६२	१४८
चित्रलेखा	४६३ – ४६४	१४८
भ्रमरपदम्	४६५ – ४६६	१४८
शार्दूलललितम्	४६७ – ४६८	१४८ – १४९
सुललितम्	४६९ – ४७	१४९
उपवनकुसुमम्	४७१ – ४७२	१४९ – १५
एकोनविंशाक्षरम्	४७३ – ४९८	१५० – १५५
नागानन्द	४७३ – ४७४	१५
शार्दूलविक्रीडितम्	४७५ – ४७८	१५ – १५१
चन्द्रम्	४७९ – ४८१	१५१
धवलम्	४८२ – ४८४	१५२
शम्भु	४८५ – ४८७	१५२ – १५३
मेघविस्फूर्जिता	४८८ – ४९	१५३
छाया	४९१ – ४९२	१५३ – १५४
सुरसा	४९३ – ४९४	१५४
फुल्लदाम	४९५ – ४९६	१५४
मृदुलकुसुमम्	४९७ – ४९८	१५५
विंशाक्षरम्	४९९ – ५१५	१५५ – १५९
योगानन्द	४९९ – ५	१५५
गीतिका	५ १ – ५ ३	१५६
गण्डका	५ ४ – ५ ६	१५६ – १५७
शोभा	५ ७ – ५ ८	१५७
सुवदना	५ ९ – ५११	१५७ – १५८
प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्	५१२ – ५१३	१५८
शशाङ्कचलितम्	५१४ – ५१५	१५८

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठाङ्क
भद्रकम्	५१६ – ५१७	१५९
अनवधिगुणगणम्	५१८ – ५१९	१५९
एकविंशाक्षरम्	५२० - ५३८	१६०-१६३
ब्रह्मानन्द	५२० – ५२१	१६०
स्रग्धरा	५२२ – ५२५	१६० – १६१
मञ्जरी	५२६ – ५२९	१६१
नरेन्द्र	५३० – ५३२	१६१ – १६२
सरसी	५३३ – ५३४	१६२
रुचिरा	५३५ – ५३६	१६३
निरुपमतिलकम्	५३७ – ५३८	१६३
द्वाविंशत्यक्षरम्	५३९ - ५५७	१६४-१६७
विद्यानन्द	५३९ – ५४०	१६४
हंसी	५४१ – ५४३	१६४
मदिरा	५४४ – ५४५	१६५
मन्द्रकम्	५४६ – ५४७	१६५
शिखरम्	५४८ – ५४९	१६५ – १६६
अच्युतम्	५५० – ५५१	१६६
मदालसम्	५५२ – ५५५	१६६ – १६७
तरुवरम्	५५६ – ५५७	१६७
त्रयोविंशाक्षरम्	५५८ - ५७५	१६७-१७१
दिव्यानन्द	५५८ – ५५९	१६८
सुन्दरिका	५६० – ५६१	१६८
पद्मावतिका	५६२ – ५६३	१६८ – १६९
अद्रितनया	५६४ – ५६७	१६९ – १७०
मालती	५६८ – ५६९	१७०
मल्लिका	५७० – ५७१	१७०
मत्ताक्रीडम्	५७२ – ५७३	१७१
कनकवलयम्	५७४ – ५७५	१७१
चतुर्विंशाक्षरम्	५७६ - ५८९	१७२ - १७४
रामानन्द	५७६ – ५७७	१७२
दुर्मिलका	५७८ – ५८०	१७२
किरीटम्	५८१ – ५८२	१७३
तन्वी	५८३ – ५८५	१७३
माधवी	५८६ – ५८७	१७४

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
अपरवक्त्रम्	१८ – २०	१८९ – १९०
सुन्दरी	२१ – २३	१९०
भद्रविराट्	२४ – २५	१९०
केतुमती	२६ – २७	१९१
वाङ्मती	२८ – २९	१९१
षट्पदावली	३०	१९१
उपसंहार	३१	१९१
पञ्चम विषमवृत्त-प्रकरणम्	१ - २५	१९२ - १९५
विषमवृत्तलक्षणम्	१	१९२
उद्गता	२ – ३	१९२
उद्गताभेद	४ – ६	१९२
सौरभम्	७ – ८	१९२ – १९३
ललितम्	९ – १०	१९३
भाव	११ – १२	१९३
वक्त्रम्	१३ – १५	१९३
पथ्यावक्त्रम्	१६ – १७	१९४
उपसंहार	१८ – २५	१९४
षष्ठ वैतालीय-प्रकरणम्	१ - ३४	१९६ - २००
वैतालीयम्	१ – ३	१९६
औपच्छन्दसकम्	४ – ५	१९६
आपातलिका	६ – ७	१९६
नलिनम्	८ – ९	१९६ – १९७
नलिनमपरम्	१० – ११	१९७
दक्षिणान्तिका-वैतालीयम्	१२ – १४	१९७
उत्तरान्तिका-वैतालीयम्	१५ – १६	१७९
प्राच्यवृत्तिवैतालीयम्	१७ – २०	१९७ – १९८
उदीच्यवृत्तिवैतालीयम्	२१ – २३	१९८
प्रवृत्तक वैतालीयम्	२४ – २६	१९८ – १९९
अपरान्तिका	२७ – ३०	१९९
चारुहासिनी	३१ – ३४	१९९ – २००
सप्तम यतिनिरूपण-प्रकरणम्	१ - १८	२०१ - २०६
अष्टम गद्यनिरूपण-प्रकरणम्	१ - ९	२०७ - २१०
गद्यानि लक्षणम्	१ – ७	२०७

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
पुरुषोत्तमश्चण्डवृत्तम्	९	२२०
तिलक चण्डवृत्तम्	९ – १०	२२० – २२१
अच्युत चण्डवृत्तम्	१० – ११	२२१ – २२२
धर्द्धित चण्डवृत्तम्	११	२२२ – २२४
रणश्चण्डवृत्तम्	११ – १२	२२४ – २२५
वीरश्चण्डवृत्तम्	१२ – १३	२२५ – २२६
शाकश्चण्डवृत्तम्	१३ – १४	२२६
मातङ्गखेलित चण्डवृत्तम्	१४ – १५	२२६ – २२८
उत्पल चण्डवृत्तम्	१५ – १६	२२८ – २२९
गुणरतिश्चण्डवृत्तम्	१६	२२९ – २३०
कल्पद्रुमश्चण्डवृत्तम्	१६ – १७	२३० – २३१
कन्दलश्चण्डवृत्तम्	१७	२३१
अपराजित चण्डवृत्तम्	१८	२३१
नर्त्तन चण्डवृत्तम्	१९	२३१
तरत्समस्त चण्डवृत्तम्	१९ – २०	२३१ – २३२
वेष्टन चण्डवृत्तम्	२० – २१	२३२
अस्खलित चण्डवृत्तम्	२१ – २२	२३२
पल्लवित चण्डवृत्तम्	२२ – २३	२३२ – २३३
समग्रश्चण्डवृत्तम्	२३	२३३ – २३४
तुरगश्चण्डवृत्तम्	२३ – २४	२३४ – २३५
पङ्केरुहश्चण्डवृत्तम्	२४ – २५	२३५ – २३७
सितकञ्जादिभेदानां लक्षणम्	२६ – २८	२३७
सितकञ्जश्चण्डवृत्तोदाहरणम्		२३८ – २३९
पाण्डूत्पलश्चण्डवृत्तोदाहरणम्		२३९ – २४०
इन्दीवरश्चण्डवृत्तोदाहरणम्		२४० – २४२
अरुणाम्भोरुहश्चण्डवृत्तोदाहरणम्		२४२ – २४३
फुल्लाम्बुज चण्डवृत्तम्	२९ – ३०	२४३ – २४४
चम्पक चण्डवृत्तम्	३१ – ३२	२४५ – २४६
वञ्जुलश्चण्डवृत्तम्	३२	२४६ – २४७
कुन्दश्चण्डवृत्तम्	३३	२४७ – २४८
बकुलभासुरश्चण्डवृत्तम्	३३ – ३४	२४८ – २४९
बकुलमङ्गलश्चण्डवृत्तम्	३४ – ३५	२४९ – २५०
मञ्जर्या कोरकश्चण्डवृत्तम्	३६	२५१ – २५२
गुच्छकश्चण्डवृत्तम्	३७ – ३८	२५२ – २५३

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
कुसुमस्तबकवृत्तम्	१९	२५१ – २५४
विरुदावल्यां तृतीयं त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरणम्	१ ६	२५५ २५९
दण्डकत्रिभङ्गीकलिका	१ – २	२५५ – २५६
सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गीकलिका	३ – ४	२५६ – २५८
मिश्रकलिका	४ – ६	२५८ – २५९
विरुदावल्यां चतुर्थं साधारणमत्त चण्डवृत्त प्रकरणम्	१ ४	२६०
विरुदावली	१ १९	२६० २६७
साप्तविभक्तिकी कलिका	१ – ७	२६१ – २६२
अक्षमयी कलिका	८ – ९	२६२ – २६४
सर्वलघु-कलिका	१ – ११	२६४ – २६५
सर्वकलिकासु विरुदानां पृथगेव लक्षणम्	१२ – १८	२६५ – २६७
विरुदावलीपाठफलम्	१९	२६७
पञ्चमं खण्डावली प्रकरणम्	१ ६	२६८ २७१
खण्डावली-लक्षणम्	१	२६८
तामरस-खण्डावली	२	२६८ – २७
मञ्जरी खण्डावली	३	२७ – २७१
प्रकरणोपसंहारः	४ – ६	२७१
एकादशो दोष-प्रकरणम्	१ ४	२७२
द्वादशं अनुक्रमणी-प्रकरणम्		२७३ २८९
१ प्रथमखण्डानुक्रमणी	१ ४	२७३ २७५
१ गाथाप्रकरणानुक्रमणी	१ – १४	२७३ – २७४
२ षट्पदप्रकरणानुक्रमणी	१५ – १६	२७४
३ रड्डाप्रकरणानुक्रमणी	१ – २२	२७४
४ पद्मावतीप्रकरणानुक्रमणी	२३ – ३	२७४ – २७५
५ सवैयाप्रकरणानुक्रमणी	३१ – ३३	२७५
६ गलितकप्रकरणानुक्रमणी	३४ – ३८	२७५
ग्रन्थः प्रकरणसंख्या च	३९ – ४	२७५
२ द्वितीयखण्डानुक्रमणी	१ १८८	२७५ २८९
१ वृत्तानुक्रमणी	१ – १३७	२७५ – २८५
२ प्रकीर्णकवृत्तानुक्रमणी	१३८ – १४	२८५ – २८६
३ दण्डकवृत्तानुक्रमणी	१४१ – १४४	२८६

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठाङ्क
४ अर्द्धसमवृत्तानुक्रमणी	१४४ – १४८	२८६
५ विषमवृत्तानुक्रमणी	१४८ – १५१	२८६
६ वैतालीयवृत्तानुक्रमणी	१५१ – १५५	२८६ – २८७
७ यतिप्रकरणानुक्रमणी	१५५ – १५६	२८७
८ गद्यप्रकरणानुक्रमणी	१५६ – १५९	२८७
९. विरुदावलीप्रकरणानुक्रमणी	१६० – १८०	२८७ – २८९
(१) कलिकाप्रकरणानुक्रमणी	१६० – १६२	२८७
(२) चण्डवृत्तानुक्रमणी	१६३ – १७३	२८७ – २८८
(३) त्रिभङ्गीकलिकानुक्रमणी	१७३ – १७५	२८८
(४) साधारणचण्डवृत्तानुक्रमणी	१७६ – १७७	२८८
(५) विरुदावलीवृत्तानुक्रमणी	१७८ – १८०	२८८ – २८९
१० खण्डावली-प्रकरणानुक्रमणी	१८१ – १८२	२८९
११ दोषप्रकरणानुक्रमणी	१८२ – १८३	२८९
१२ खण्डद्वयानुक्रमणी	१८३ – १८८	२८९
ग्रन्थकृत्-प्रशस्तिः	१ - ९	२९० - २९१

टीकाद्वय - क्रम - पञ्जिका

विषय	पृष्ठाङ्क
१ वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार	२९२ - ३२६
(१) प्रथमो विश्राम (मात्रोद्दिष्टम्)	२९२ – २९४
(२) द्वितीयो विश्राम (मात्रानष्टम्)	२९५ – २९६
(३) तृतीयो विश्राम (वर्णोद्दिष्टम्)	२९७ – २९९
(४) चतुर्थो विश्राम (वर्णनष्टम्)	३०० – ३०१
(५) पञ्चमो विश्राम (वर्णमेरु)	३०२ – ३०३
(६) षष्ठो विश्राम (वर्णपताका)	३०४ – ३०६
(७) सप्तमो विश्राम (मात्रामेरु)	३०७ – ३१०
(८) अष्टमो विश्राम (मात्रापताका)	३११ – ३१४
(९) नवमो विश्राम. (वृत्तस्थगुरुलघुसंख्याज्ञानम्)	३१५ – ३१७
(१०) दशमो विश्राम (वर्णमर्कटी)	३१७ – ३२०
(११) एकादशो विश्राम (मात्रामर्कटी)	३२१ – ३२५
वृत्तिकृत्प्रशस्ति	३२६
वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध	३२७ - ३६७
मात्रोद्दिष्टप्रकरणम्	३२७ – ३३०
मात्रानष्टप्रकरणम्	३३१ – ३४२
वर्णोद्दिष्ट-नष्टप्रकरणम्	३४३

भूमिका

छन्दःशास्त्र का उद्भव और विकास

किसी पदार्थ के आयतन को उसका छन्द कहा जाता है। छन्द के बिना किसी भी वस्तु की अवस्थिति इस संसार मे संभव नही है। मानव-जीवन को भी छन्द कहा जाता है। सात छन्दो या मर्यादाओ से जीवन मर्यादित है। छन्द या मर्यादा के कारण ही मनुष्य स्व और पर की सीमाओ मे बंधा हुआ है। स्वच्छन्दत्व उसे प्रिय होता है परच्छन्दत्व नही। मनुष्य स्वकीय छन्दो या सीमाओ को विस्तृत करता हुआ, स्वतन्त्रता के मार्ग का अनुशीलन करता हुआ अपने जीवन का उद्देश्य प्राप्त कर लेता है।

छन्द पद का निर्वचन—

छन्द और छन्दस् पदो की निरुक्ति क्षीरस्वामी ने 'छद' धातु से बतलाई है। अन्य व्युत्पत्तियो के अनुसार छन्द शब्द 'छदिर् ऊर्जने, छदि संवरणे, चदि आह्लादने दीप्तौ च, छद संवरणे, छद अपवारणे' धातुओ से निष्पन्न है।[1] वस्तुतः इन धातुओ से निष्पन्न शब्द विभिन्न अर्थो मे पृथक्-पृथक् रूप से प्रयुक्त होते रहे होगे। कालांतर मे ये शब्द छन्द और छन्दस् शब्द-रूपो में खो गये। यास्क ने 'छन्दांसि छादनात्'[2] कह कर आच्छादन के अर्थ मे प्रयुक्त छन्द शब्द का अस्तित्व माना है। सायण ने ऋग्वेद-भाष्यभूमिका मे 'आच्छादक-त्वाच्छन्द' कथन द्वारा यास्क का समर्थन किया है। छान्दोग्योपनिषद् की एक गाथा के अनुसार देव मृत्यु से डर कर त्रयी-विद्या मे प्रविष्ट हुए। वे छदो से आच्छादित हो गये। आच्छादन करने से ही छदो का छदत्व है।[3] ऐतरेय आरण्यक के अनुसार स्तोता को आच्छादित करके छद पापकर्मों से रक्षित करते हैं।[4] इन स्थानो पर आच्छादन अर्थ वाला छद शब्द प्रयुक्त हुआ है। असीम चैतन्य-सत्ता को सीमाओ या मर्यादाओ मे बाध कर ससीम बना देने वाली प्रकृति भी आच्छादन करने के कारण ही छन्द कही जाती है। वैदिक-दर्शन के अनुसार छन्द 'वाक्-विराज्' का भी नाम है जो सांख्य की प्रकृति या वेदांत की माया के

१–वैदिक छन्दोमीमांसा, —पं० युधिष्ठिर मीमांसक, पृ० ११-१३

२–निरुक्त ७।१२

३–छान्दोग्योपनिषद् १।४।२, तुलनीय गार्ग्य का उपनिदान सूत्र ८।२

४–ऐतरेय आरण्यक २।२

छन्द की परिभाषा करते हुए कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी मे अक्षर ं परिमाण को छन्द कहा है—यदक्षरपरिमाण-तच्छन्द.। अन्यत्र अक्षर-सख्या व नियामक छद कहा गया है।[1] छन्द का महत्व केवल अक्षर-ज्ञान कराना मा नही है। ऊपर के निर्वचनो पर विचार करने पर भावो को आच्छादित कर अपने मे सीमित करने वाली शब्द-सघटना को साहित्य में छन्द कह सकते हैं अर्थ को प्रकाशित करके अर्थचेता को आह्लादयुक्त कर देने मे छन्द का छदर प्रकट होता है।

वैदिक छद मत्रो के अर्थ प्रकट करने की विशेष शैली प्रक्रिया के द्योतक हैं वेदो के व्याख्याकारो ने इस बात पर जोर दिया है कि ऋषि, देवता और छ के ज्ञान के बिना मत्रो के अर्थ उद्भासित नही होते। देवता मत्रो के विषय ं ऋषि वे सूत्र हैं जिनसे अर्थ सरलतया प्रकट हो जाते हैं और छद अर्थप्राप्ति व प्रक्रिया का नाम है।[2] छदो की अर्थ प्रकट करने की विशिष्ट प्रक्रिया के कार हो वैदिक-शैली को 'छादस्' कहा गया है। पारसी धर्म-ग्रथ 'जेन्द अवस्ता' व जेन्द नाम भी छद का अपभ्रष्ट रूप ज्ञात होता है।

ब्राह्मण ग्रन्थो मे छादस्-प्रक्रिया का बडा ही सूक्ष्म व रहस्यात्मक वर्ण देखने को मिलता है। वहाँ छदो के नामो द्वारा सम्पूर्ण सृष्टि-प्रक्रिया को समझा का प्रयत्न किया गया है। सब से अधिक रहस्यात्मक वर्णन गायत्री छद का है ं सूर्यलोक से प्राप्त होने वाले सावित्री प्राण का प्रतीक बन गया है। छदो व रहस्यात्मक वर्णन स्वतत्र रूप से अनुसधान का विषय है। यहाँ छद के व्यावह रिक रूप पर ही विचार किया जा रहा है।

व्यावहारिक दृष्टिकोण से छद अक्षरो के मर्यादित प्रक्रम का नाम है। ज छद होता है वही मर्यादा आ जाती है।[3] मर्यादित जीवन मे ही साहित्यिक छ जैसी स्वस्थ-प्रवाहशीलता और लयात्मकता के दर्शन होते हैं। मर्यादित इच्छ की अभिव्यक्ति प्राचीन गणराज्यो की जीवन्त छद परम्परा Voting Systen कही जाती है।

भावो का एकत्र सवहन, प्रकाशन तथा आह्लादन छद के मुख्य लक्षण हैं इस दृष्टि से रुचिकर और श्रुतिप्रिय लययुक्त वाणी ही छद कही जाती है-

---

१–छन्दोऽक्षरसख्यावच्छेदकमुच्यते —अथर्ववेदीय बृहत्सर्वानुक्रमणी

२–ऋग्वेद के मत्रद्रष्टा ऋषि —वद्रीप्रसाद पचोली, वेदवाणी, वनारस। १५।१

३–वेदविद्या —डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० १०२

४–प्राचीन भारत मे गणतात्रिक व्यवस्था —वद्रीप्रसाद पचोली, शोधपत्रिका, उदयपुर, १५..

समभता है। सारा विश्व इसी से विकसित होता है। आच्छादनभाव को स्पष्ट करने के लिए अतिच्छन्द नाम का विशेष रूप से इसमें उल्लेख किया गया है।[1] यह एक छन्द ही विविध रूपों में एक से अनेक हो जाता है। इन विभिन्न छन्दों में आत्मा आच्छादित हो कर व्याप्त हो जाती है। आत्मा 'छन्दोमा' के रूप में विविध छन्दों को प्रकाशित करती है।[2] छन्द से छन्दित छन्दोमा स्वयं छन्द है और ज्योतिस्वरूप होने से उसका सम्बन्ध दीप्ति से तथा आनन्दस्वरूप होने से आह्लाद से भी जुड़ जाता है। चदि धातु से निष्पन्न छन्द (मूल रूप चन्द) का प्रयोग ऐसे प्रसंगों में होता रहा ज्ञात होता है। प्राण (प्राणा वै छन्दांसि)[3] सूर्य (छन्दांसि वै व्रजो गोस्थान:)[4] और सूर्य रश्मियों (ऋग्वेद १।९२।६) को छन्द कहने का कारण भी दीप्तियुक्त होना ही ज्ञात होता है। लोक में भी गायत्री आदि पद्य वेद आवरण संहिता इच्छा अभिमन्त्रित आचार आदि[5] अर्थों में प्रयुक्त छन्द शब्द देखा जाता है। ये सब एक छन्द शब्द के विविध अर्थ नहीं हैं वरन् इन इन अर्थों में प्रयुक्त अलग-अलग शब्द हैं। किसी समय इनका सूक्ष्म भेद सुविज्ञात था। स्वर आदि द्वारा यह भेद स्पष्ट कर दिया जाता था। कालान्तर में अन्य शब्दों की तरह[6] ये सारे शब्द एक छन्द शब्द में विलष्ट हो गये और उनके स्वर-चिह्नों ने भी उदात्तादि प्रबल स्वरों में अपना अस्तित्व खो दिया।

साहित्य में छन्द—

ऊपर छन्द के विविध अर्थों में एक गायत्री आदि छन्द का भी उल्लेख किया गया है। वाङ्मय में छन्द का विशिष्ट महत्त्व है। कात्यायन के अनुसार सारा वाङ्मय छन्दोरूप है छन्दोमूलमिदं सर्वं वाङ्मयम्। छन्द के बिना वाक् उच्चरित नहीं होती।[7] कोई शब्द छन्द रहित नहीं होता।[8] इसीलिए गद्य और पद्य दोनों को छन्दोयुक्त माना जाता है।

१–वैदिक दर्शन —डॉ फतहसिंह पृष्ठ १८१ १८३
२–वैदिक दर्शन पृ १८४ तथा उसमें उद्धृत ताण्ड्य महाब्राह्मण १४।११।१४
३–कौषीतकि ब्राह्मण ७।९, ११।८ १७।२
४ तैत्तिरीय ब्राह्मण ३।२।९।३
५–वैदिक छन्दोमीमांसा प ७-
६–शब्दों के विकास की ऐसी प्रकृति के लिए देखें— ऋग्वेद में गोतत्त्व'—बद्रीप्रसाद पंचोली
७–ऋक्सर्वानुक्रम परिशिष्ट १ गुणनीय छन्दोऽनुशासन-अथर्वोक्ति १।२
८–नाच्छन्दसि वागुच्चरति इति —निरुक्त ७।२, दुर्गवृत्ति
९–छन्दोहीनो न शब्दोऽस्ति —नाट्यशास्त्र १४।१५
१ –वैदिक छन्दोमीमांसा पृ ८

मिला है। जिस ग्रथ मे छदो का भाषण या व्याख्यान मिलता हो उसे छदोभाषा कहा गया है। गणपाठो मे यह नाम आया है।[1] ऐसी भी मान्यता है कि छदोभाषा नाम प्रातिशाख्यो के लिए प्रयुक्त हुआ है।[2] विष्णुमित्र ने ऋक्प्रातिशाख्य की वृत्ति मे छदोभाषा शब्द का अर्थ वैदिक भाषा किया है। कुछ अन्य लोगो ने छद का अर्थ छद.शास्त्र तथा भाषा का अर्थ व्याकरण या निरुक्त किया है।[3] परन्तु प० युधिष्ठिर मीमासक ने इन मतो को निराकृत करके छदोभाषानामक छद शास्त्र के ग्रथो का अस्तित्व माना है उन्होने भी इस नाम को चरणव्यूह आदि मे प्रातिशाख्य के लिए प्रयुक्त माना है।[4]

जिस ग्रथ द्वारा छदो पर विजय प्राप्त हो सके उसे छदोविजिति कहा जाता है। चान्द्र गणपाठ, जैनेन्द्र गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि मे यह नाम प्रयुक्त हुआ है। छदोनाम के लिए मीमांसकजी ने सभावना प्रकट की है कि यह छदोमान का अपभ्रश हो सकता है। छदोव्याख्यान, छदसा विचय, छदसा लक्षण, छदोऽनुशासन, छद शास्त्र आदि भी छदोविषयक ग्रथो के नाम हैं। वृत्त पद के आधार पर वृत्तरत्नाकर आदि ग्रथो के नामकरण किए गये हैं। हमारे विवेच्य ग्रथ वृत्तमौक्तिक का नाम भी इसी परम्परा मे उल्लेखनीय है।

छन्द शास्त्र के लिए पिंगल-नाम छद.शास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल के कारण ही प्रयुक्त हुआ ज्ञात होता है।[5] पिंगल नाम के अनेक प्राकृतभाषा के ग्रथ प्रसिद्ध हैं।

छन्द शास्त्र की प्राचीनता—

वैदिक छदो के नाम सर्वप्रथम वैदिक-सहिताओ मे ही प्रयुक्त हुए हैं। वैदिक षडगो मे छद शास्त्र का नाम भी आता है। वेदमत्रो के साथ उनके छदो का नामोल्लेख भी हुआ है। उनका विशुद्ध और लयबद्ध उच्चारण छद शास्त्र के ज्ञान से ही सम्भव है। इसलिए वेदार्थ के विषय मे विवेचन करने वाले सभी ग्रथो मे छदो का भी प्रसगवश उल्लेख मिल जाता है।

पाणिनि ने गणपाठ मे छद शास्त्र-सम्बन्धी ग्रथो का उल्लेख किया है। उनके समय मे तो लौकिक सस्कृत-भाषा मे महाकाव्यो की रचनाए लिखी जाने लगी

१–वैदिक छन्दोमीमासा पृ० ३७

२–सस्कृत-साहित्य का इतिहास —गैरोला, पृ० १६१

३–अन्य मतो के लिए देखो —वैदिक छदोमीमासा, पृ० ३७-३९

४–वैदिक छदोमीमासा, पृ० ३९-४०

५– " ४२

'छंदयति पृणाति रोचते इति छंद ।' जिस वाणी को सुनते ही मन आह्लादित हो जाता है वह वाणी ही छंद है— छदयति आह्लादयति छंद्यते अनेन इति छंद ।'[१]

स्पष्ट है कि छंद के रूप में अक्षर-मर्यादा का निर्वाह करने का सम्बन्ध शब्द-संघटना से है और प्रकाशन एवं आह्लादन का सम्बन्ध अर्थ के साथ है। इसी तरह छंद के प्रथम दो लक्षणों का संबंध वक्ता से होता है और तृतीय का श्रोता से। इस दृष्टि से छंद श्रोता और वक्ता के बीच में प्रभावशाली सेतु का काम करता है। शतपथब्राह्मण में 'रसो वै छंदांसि'[२] कह कर छंद की रागात्मिका अनुभूति और अभिव्यक्ति की ओर स्पष्ट संकेत किया गया है।

छन्दशास्त्र—

छंदःशास्त्र में छंदों का विवेचन किया जाता है। भारतवर्ष में वैदिक तथा लौकिक संस्कृत भाषा के छंदों पर विचार अत्यन्त प्राचीन काल से ही प्रारम्भ हो गया था। वैदिक छन्दोमीमांसा में छंदःशास्त्र का आदि मूल वेद माना गया है।[३] छंदःशास्त्र के प्राचीन संस्कृत-वाङ्मय में प्रयुक्त अनेक नामों का उल्लेख भी इसमें है। यथा—

(१) छंदोविचिति (२) छन्दोनाम (३) छंदोभाषा (४) छंदोविजिनि (५) छंदोनाम (६) छंदोविचिति छंदोविजित (७) छंदोव्याख्यान (८) छंदसां विचय (९) छंदसां लक्षण (१०) छंदःशास्त्र (११) छंदोऽनुशासन (१२) छंदोविवृति (१३) वृत्त (१४) पिंगल।[४]

छंदोविचिति पद का अर्थ है—वह ग्रन्थ जिसमें छंदों का चयन किया गया हो। यह पद पाणिनि के गणपाठ कौटिल्य के अर्थशास्त्र सरस्वतीकण्ठाभरण गणरत्नमहोदधि आदि में प्रयुक्त हुआ है। पिंगलप्रोक्त छंदोविचिति पतंजलि प्रोक्त छंदोविचिति जनाश्रयप्रोक्त छंदोविचिति दण्डिप्रोक्त छंदोविचिति तथा एक ग्रन्थ पालिभाषा के छंदोविचिति का नामोल्लेख श्रीमीमांसकजी ने किया है।[५]

छंदोनाम नाम भी छंदवाची है। पाणिनि के गणपाठ सरस्वतीकण्ठाभरण आदि में यह नाम प्रयुक्त हुआ है परन्तु अभी तक इस नाम का कोई ग्रंथ नहीं

१—संस्कृत साहित्य का इतिहास—वाचस्पति गैरोला पृ ११
२—शतपथ ब्राह्मण ७।३।१।३७
३—वैदिक छंदोमीमांसा प युधिष्ठिर मीमांसक पृ ४३
४— " " ३५
५— " " ३६

मिला है। जिस ग्रथ में छदो का भाषण या व्याख्यान मिलता हो उसे छदोभाषा कहा गया है। गणपाठो मे यह नाम आया है।[1] ऐसी भी मान्यता है कि छदोभाषा नाम प्रातिशाख्यो के लिए प्रयुक्त हुआ है।[2] विष्णुमित्र ने ऋक्प्रातिशाख्य की वृत्ति मे छदोभाषा शब्द का अर्थ वैदिक भाषा किया है। कुछ अन्य लोगो ने छद का अर्थ छद.शास्त्र तथा भाषा का अर्थ व्याकरण या निरुक्त किया है।[3] परन्तु प० युधिष्ठिर मीमासक ने इन मतो को निराकृत करके छदोभाषा-नामक छद शास्त्र के ग्रथो का अस्तित्व माना है उन्होने भी इस नाम को चरण-व्यूह आदि मे प्रातिशाख्य के लिए प्रयुक्त माना है।[4]

जिस ग्रथ द्वारा छदो पर विजय प्राप्त हो सके उसे छंदोविजिति कहा जाता है। चाद्र गणपाठ, जैनेन्द्र गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि मे यह नाम प्रयुक्त हुआ है। छदोनाम के लिए मीमासकजी ने सभावना प्रकट की है कि यह छदोमान का अपभ्रश हो सकता है। छदोव्याख्यान, छदसा विचय, छदसा लक्षण, छदोऽनुशासन, छद शास्त्र आदि भी छदोविषयक ग्रथो के नाम हैं। वृत्त पद के आधार पर वृत्तरत्नाकर आदि ग्रथो के नामकरण किए गये हैं। हमारे विवेच्य ग्रथ वृत्तमौक्तिक का नाम भी इसी परम्परा मे उल्लेखनीय है।

छन्द शास्त्र के लिए पिंगल-नाम छद शास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल के कारण ही प्रयुक्त हुआ ज्ञात होता है।[5] पिंगल नाम के अनेक प्राकृतभाषा के ग्रथ प्रसिद्ध हैं।

छन्द शास्त्र की प्राचीनता—

वैदिक छदो के नाम सर्वप्रथम वैदिक-सहिताओ मे ही प्रयुक्त हुए हैं। वैदिक षडगो मे छद शास्त्र का नाम भी आता है। वेदमत्रो के साथ उनके छदो का नामोल्लेख भी हुआ है। उनका विशुद्ध और लयबद्ध उच्चारण छद शास्त्र के ज्ञान से ही सम्भव है। इसलिए वेदार्थ के विषय मे विवेचन करने वाले सभी ग्रथो मे छदों का भी प्रसगवश उल्लेख मिल जाता है।

पाणिनि ने गणपाठ में छद शास्त्र-सम्बन्धी ग्रथो का उल्लेख किया है। उनके समय में तो लौकिक सस्कृत-भाषा मे महाकाव्यो की रचनाए लिखी जाने लगी

१–वैदिक छन्दोमीमासा पृ० ३७
२–सस्कृत-साहित्य का इतिहास —गैरोला, पृ० १६१
३–अन्य मतो के लिए देखो —वैदिक छदोमीमासा, पृ० ३७-३९
४–वैदिक छदोमीमासा, पृ० ३९-४०
५– " ४२

थी। इसलिए वैदिक छंदों के अतिरिक्त लौकिक छंदों पर भी विवेचना होने लगी होगी और इस विषय के अनेक ग्रंथ विद्यमान होंगे। विद्वानों की मान्यता है कि छंद-शास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल पाणिनि के समकालीन थे। छंद-शास्त्र के विकास में पिंगल का वही स्थान है जो व्याकरण-परम्परा में पाणिनि का है। *क्रौष्टुकि यास्क क्रौष्टुकि सैतव काश्यप, रात माण्डव्य आदि आचार्य पिंगल से* भी प्राचीन हैं।[1] इससे छंद-शास्त्र की अतिप्राचीनता के विषय में किसी प्रकार कोई संदेह नहीं रह जाता है।

छन्दशास्त्र के प्राचीन आचार्य—

वेदांगों के प्रवक्ता शिव और बृहस्पति माने जाते हैं। महाभारत के एक उल्लेख के अनुसार वेदांगों का प्रवचन बृहस्पति ने[2] तथा एक दूसरे उल्लेख के अनुसार शिव ने[3] किया। परवर्ती ग्रंथकारों ने छंद-शास्त्र के प्रवक्ता आचार्यों की परम्परा का उल्लेख किया है। छंद-सूत्र भाष्य के अन्त में यादवप्रकाश ने छंद-शास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों की परम्परा का उल्लेख किया है —

> छन्दोज्ञानमिदं भवाद् भगवतो लेभे सुराणां गुरुः
> तस्माद् दुश्च्यवनस्ततो सुरगुरुर्माण्डव्यनामा ततः।
> माण्डव्यादपि सैतवस्तत ऋषिर्यास्कस्ततः पिंगलः
> तस्येदं यशसा गुरोर्भुवि धृतं प्राप्यास्मदाद्यैः क्रमात्॥

इसी ग्रंथ के अन्त में किसी का एक अन्य श्लोक भी दिया हुआ है —

> छन्दःशास्त्रमिदं पुरा त्रिनयनाल्लेभे गुहोऽनादितः
> तस्मात् प्राप सनत्कुमारमुनिस्तस्मात् सुराणां गुरुः।
> तस्माद्देवपतिस्ततः फणिपतिस्तस्माच्च सत्पिंगलः
> तच्छिष्यैर्बहुभिर्महात्मभिरथो मह्यां प्रतिष्ठापितम्॥[4]

प० युधिष्ठिर मीमांसक ने इनमें से प्रथम परम्परा को अधिक विश्वसनीय माना है। उन्होंने राजवार्तिक से उल्लिखित —

> शिवगिरिजानन्दिफणीन्द्रबृहस्पतिच्यवनशुक्रमाण्डव्याः।
> सैतवपिंगलगरुडप्रमुखा आद्या जयन्ति गुरुचरणाः॥

1—वैदिक छन्दोमीमांसा पृ० ४१
2—वेदांगानि तु बृहस्पतिः —महाभारत शान्तिपर्व २१२।१२
3—वेदाद् षडंगान्युद्धृत्य —महाभारत शान्तिपर्व २८४।९२
4—उपर्युक्त मतों के लिए द्रष्टव्य वैदिक छन्दोमीमांसा पृ० ६७

तथा यति के प्रसग मे छद शास्त्र-प्रवक्ता जयकीर्ति द्वारा उल्लिखित—

वाञ्छन्ति यतिं पिंगलवसिष्ठकौडिन्यकपिलकम्बलमुनय ।
नेच्छन्ति भरतकोहलमाण्डव्याश्वतरसैतवाद्या. केचित् ॥

परम्पराओ का उल्लेख भी किया है।[1]

पिंगल-छद सूत्र मे उल्लिखित आचार्यो का नाम ऊपर आ चुका है। इससे प्रकट है कि आचार्य पिंगल से पहले छद शास्त्र के प्रवक्ताओ की एक व्यवस्थित एव अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी।

वैदिक और लौकिक छन्दःशास्त्र

छद दो प्रकार के कहे गये हैं —वैदिक और लौकिक।[2] वेद-सहिताओ मे प्रयुक्त गायत्री, अनुष्टुप्, त्रिष्टुप्, जगती, पक्ति, उष्णिक्, बृहती, विराट् आदि छद वैदिक कहे जाते हैं। छद शास्त्र के प्रारभिक ग्रथो मे केवल वैदिक छदो और उनके भेद-प्रभेदो पर ही विचार किया जाता था। बाद मे वाल्मीकि ने लौकिक साहित्य मे भी छद का प्रयोग किया। उन्हे आदि-कवि होने का श्रेय मिला। इतिहास, पुराण, काव्य आदि मे छदो का प्रभूत रूप से प्रयोग होने लगा। बाद मे इन छदो के लक्षणादि के विषय मे छद शास्त्र मे विचार प्रारम्भ हुआ। सस्कृत-छद शास्त्रो के आधार पर परवर्ती काल मे प्राकृत और अपभ्रश भाषाओ में छदो के लक्षण-ग्रथ भी लिखे गये।

छन्द के विषय मे उपलब्ध प्राचीनतम सामग्री

वैदिक-सहिताओ मे गायत्री आदि छदो के नाम अनेकधा उल्लिखित हैं परन्तु उनका विवेचन वहाँ प्राप्त नही होता। वस्तुतः उन स्थलो पर छन्दो के नामो द्वारा आधिदैविक और आध्यात्मिक रहस्यो की ओर ही सकेत किया गया ज्ञात होता है। मत्रो के ऐसे सकेतो का ब्राह्मण-ग्रथो मे विस्तार से स्पष्टीकरण किया गया है। विराट् छद का सबध विराज-गौ (प्रकृति) से बतलाते हुए ताण्ड्य-महाब्राह्मण में उसे छदो मे ज्योतिस्वरूप कहा गया है—विराड् वै छन्दसा ज्योतिः।[3] विराट् को दशाक्षरा भी कहा गया है।[4] अन्य छदो के विषय मे भी ऐसे ही रहस्यमिश्रित विचार ब्राह्मण-ग्रथो मे मिलते हैं।

१–जयकीर्तिकृत छन्दोनुशासन, १।१३ एवं वैदिक छदोमीमासा पृ० ५८
२–नारदपुराण —पूर्व भाग २।५७।१
३–ताण्ड्यमहाब्राह्मण, ६।३।६, १०।२।२
४–दशाक्षरा वै विराट् —शतपथब्राह्मण, १।१।१।२२, ऐतरेयब्राह्मण, ६।२०; गोपथब्राह्मण पूर्वार्ध ४।२४, उत्तरार्ध, १।१८, ६।२, ६।१५; ताण्ड्यमहाब्राह्मण, ३।१३।३

ऋग्वेद प्रातिशाख्य को छंदःशास्त्र की प्राचीनतम रचना माना जाता है। यह महर्षि शौनक की रचना है। इसका विवेच्यविषय व्याकरण है परन्तु प्रसंग वश छंदों की भी चर्चा की गई है। यह चर्चा नितांत अधूरी है। छंदों का ज्ञान प्राप्त किये बिना मंत्रों का उच्चारण ठीक तरह से नहीं हो सकता। इसीलिए इस ग्रंथ में छंदों का विवरण दिया गया है।[1]

ऋग्वेद तथा यजुर्वेद की सर्वानुक्रमणियों में भी छंदों का विवरण मिलता है। छन्दोऽनुक्रमणी में दस मण्डल हैं और उसमें ऋग्वेद के समस्त छंदों का क्रमशः विवरण दिया गया है। यह भी शौनक की रचना है। शांखायन श्रौतसूत्र में भी प्रसंगवश छन्दों पर विचार किया गया है।

पतञ्जलि ने निदानसूत्र मे छन्दों का उल्लेख करते हुए कुछ प्राचीन छन्दःशास्त्र के प्रवक्ताओं के नामों का उल्लेख भी किया है। ये पतञ्जलि महाभाष्यकार पतंजलि से भिन्न कोई प्राचीन आचार्य थे। एक अन्य गार्ग्य नामक आचार्य ने उपनिदानसूत्र में इन पतञ्जलि के अतिरिक्त तण्डिब्राह्मण पिंगल आदि आचार्यों तथा उक्थशास्त्र का उल्लेख किया है। उक्थशास्त्र संभव है छन्दःशास्त्र के लिए प्रयुक्त कोई प्राचीन नाम रहा हो। कीथ ने हलायुधकोश की साक्षी से इन वैदिक-परम्परा के प्राचीन ग्रंथों को वेदांग छन्दस् कहा है।[2]

यास्क ने अपने निरुक्त मे वैदिक छंदों के नामों का निर्वचन किया है। यथा —

> गायत्री गायतेः स्तुतिकर्मणः। त्रिगमना वा विपरीता। गायतो मुखादुदपतदिति च ब्राह्मणम्। उष्णिगुत्स्नाता भवति। स्निह्यतेर्वा स्यात्कान्तिकर्मणः। उष्णीषिणी वेत्यौपमिकम्। उष्णीषं स्नायतेः। ककुप् ककुभिनी भवति। ककुप् च कुब्जश्च कुजतेर्वा उब्जतेर्वा। अनुष्टुबनुष्टोभनात्। गायत्रीमेव त्रिपदां सतीं चतुर्थेन पादेनानुष्टोभतीति इति च ब्राह्मणम्। बृहती परिबर्हणात्। पङ्क्तिः पंचपदा। त्रिष्टुप् स्तोभत्युत्तरपदा। का तु त्रिता स्यात्। तीर्णतमं छन्दः। त्रिवृद्वज्रस्तस्य स्तोभतीति वा। यत् त्रिरस्तोभ-त्तत्त्रिष्टुभस्त्रिष्टुप्त्वम्—इति विज्ञायते। जगती गततमं छन्दः। जलचरगतिर्वा। जल्गल्यमानो-ऽसृजत् इति च ब्राह्मणम्। विराड् विराजनाद्वा। विराधनाद्वा। विप्रापणाद्वा। विरा-जनात्सम्पूर्णाक्षरा। विराधनादूनाक्षरा। विप्रापणादधिकाक्षरा। पिपीलिकामध्येत्यौ-पमिकम्। पिपीलिका पेलतेर्गतिकर्मणः।[3]

१—वैदिक-साहित्य —रामगोविन्द त्रिवेदी पृ १४

२—संस्कृत-साहित्य का इतिहास —कीथ (हिंदी अनुवाद चौखम्बा) पृ ४१२

३—निरुक्त ७।१२

यास्क ने गायत्री को अग्नि के साथ, त्रिष्टुप् को इन्द्र के साथ तथा जगती को आदित्य के साथ भाग लेने वाला कहा है।[1]

छदो का देवो के साथ सबध तो वाजसनेयी-सहिता आदि मे भी मिलता है।[2] वैदिक छदो के इस प्रकार के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि रहस्यमिश्रित वर्णन से भी छदो के स्वरूप पर प्रकाश पडता है और वेदार्थ-ज्ञान मे उनकी उपयोगिता भी कम नही है। पाणिनि ने तो छद को वेद का पाद कहा है —'छन्द पादौ तु वेदस्य'।[3]

पिंगल के पूर्ववर्त्ती छन्द शास्त्र के आचार्य—

पिंगल से पूर्व का कोई ग्रथ छदो के विषय में प्राप्त नही है, परन्तु उनके पूर्ववर्त्ती अनेक ग्रथकारो के नाम मिलते है। इससे पता चलता है कि उनके पूर्व छद शास्त्र की एक अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी। उनके पहले के कुछ आचार्यो का परिचय यहा दिया जा रहा है—

१ शिव व उनका परिवार—

शिव को छद शास्त्र के प्रवर्त्तक आदि आचार्य के रूप मे यादवप्रकाश और राजवार्तिककार ने स्मरण किया है। व्याकरण के आदि आचार्य भी शिव माने जाते हैं। सभव है ये केवल शैव-सम्प्रदाय मे ही प्रवर्त्तक माने जाते हो। वेदागो के शैव या माहेश्वर-सम्प्रदाय का प्राचीन काल मे महत्वपूर्ण स्थान रहा ज्ञात होता है। शिव के साथ उनके पुत्र गुह व पत्नी पार्वती का नाम भी छद शास्त्र के प्रवक्ता के रूप मे लिया जाता है। नन्दी शिव का वाहन माना जाता है। सभव है यह किसी शिव-भक्त आचार्य का नाम रहा हो। राजवार्तिककार के अनुसार ये पतजलि के गुरु तथा पार्वती के शिष्य थे। वात्स्यायन ने कामशास्त्र के आचार्य के रूप में भी नन्दी के नाम का उल्लेख किया है जो शिव के अनुचर थे।[4]

२ सनत्कुमार—

यादवप्रकाश के भाष्य के अन्त में दी हुई अज्ञात लेखक की परम्परा में

१—निरुक्त ७।८-११

२—वाजसनेयी-सहिता १४।१८-१९; मैत्रायणी-सहिता ५।११९, काठक-सहिता १७।३-४; जैमिनीय-ब्राह्मण ६६

३—पाणिनीय-शिक्षा ४१

४—कामसूत्रम्, १।१।८

इनका नाम भी उल्लिखित है। कालक्रम से ये बृहस्पति के पूर्ववर्ती रहे होंगे। उपयुक्त साक्षी से तो ये बृहस्पति के गुरु ठहरते हैं। परन्तु इस बात की पुष्टि किसी अन्य सूत्र से होती नहीं जान पड़ती।

३ बृहस्पति—

इनका नाम उपर्युक्त तीनों परम्पराओं में आया है। व्याकरण के बार्हस्पत्य सम्प्रदाय का अस्तित्व पं० युधिष्ठिर मीमांसक ने माना है।[1] महाभारत की ऊपर दी हुई साक्षी से वेदांगों के प्रवर्तक बृहस्पति हैं। ये माहेश्वर सम्प्रदाय से भिन्न परम्परा के प्रवर्तक ज्ञात होते हैं। बृहस्पति को भारतीय परम्परा में देव गुरु माना गया है और इन्द्र इनके शिष्य कहे गये हैं।

४ इन्द्र—

ऐन्द्र-व्याकरण के प्रवक्ता इन्द्र का छन्दःशास्त्र के प्रवक्ता के रूप में भी उल्लेख किया जाता है। यादवप्रकाश के भाष्य की दोनों परम्पराओं में इन्द्र का नाम आया है। राजवार्तिक के अनुसार फणीन्द्र ही इन्द्र ज्ञात होता है। पं० युधिष्ठिरजी ने फणीन्द्र को पतञ्जलि का नाम माना है और च्यवन को दुश्च्यवन मान कर इन्द्र से अभिन्न मानने की सम्भावना प्रकट की है।[2] इस विषय में अभी निश्चय-पूर्वक कुछ भी कहना सम्भव नहीं है।

६ शुक्र—

यादवप्रकाश व राजवार्तिक दोनों में शुक्र का नाम आया है। सम्भव है शुक्रनीति के प्रवक्ता आचार्य शुक्र और छन्दःशास्त्र के प्रवक्ता शुक्र अभिन्न हों।

७ कपिल—

इनको मीमांसकजी ने कृतयुग का अन्तिम आचार्य माना है। जयकीर्ति के छन्दःशास्त्र में यति चाहने वाले आचार्य के रूप में इनका नामोल्लेख किया गया है। सांख्यदर्शन के आचार्य कपिल और ये अभिन्न ज्ञात होते हैं।

८ माण्डव्य—

माण्डव्य के नाम का उल्लेख पिंगल जयकीर्ति यादवप्रकाश चन्द्रशेखर भट्ट आदि द्वारा किया गया है। इनको मीमांसक जी ने त्रेतायुगीन माना है।

१-वैदिक-छन्दोमीमांसा पृ ३१ ३४
२- „ „ २८-२९

९ वसिष्ठ—

जयकीर्ति ने इनका नाम छद शास्त्र के आचार्य के रूप मे लिया है।

१० सैतव—

इनका नाम सभी परम्पराओ मे आया है। ऐसा ज्ञात होता है कि ये बहुत प्रसिद्ध आचार्य रहे होगे।

११ भरत—

ये नाट्यशास्त्र-कर्ता भरत से अभिन्न ज्ञात होते हैं। जयकीर्ति ने छन्द शास्त्र के प्रवक्ता के रूप मे इनके नाम का स्मरण किया है। नाट्यशास्त्र के १४वें तथा १५वें परिच्छेद मे भरत ने छन्दो पर विचार किया है। सम्भव है इनका कोई पृथक् ग्रथ भी इस विषय पर रहा हो।

१२ कोहल—

कोहल का नामोल्लेख भी जयकीर्ति ने ही किया है।

द्वापरयुगीय अन्य छन्द प्रवक्ता—

मीमासकजी ने यास्क, रात, क्रौष्टुकि, कौण्डिन्य, ताण्डी, अश्वतर, कम्बल, काश्यप, पाचाल (बाभ्रव्य) तथा पतजलि को द्वापरकालीन छद शास्त्र के आचार्य के रूप मे विभिन्न साक्षियो के आधार पर स्वीकार किया है।[१] यास्क के किसी पृथक्-छद सबधी ग्रथ का पता नही चलता। अन्य आचार्यों के मतो का ही यत्र-तत्र उल्लेख मिलता है।

कलियुग के प्रारम्भ मे होने वाले छद प्रवक्ता—

मीमासकजी ने उक्थशास्त्रकार, कात्यायन, गरुड, गार्ग्य, शौनक आदि का कलियुग के प्रारम्भ मे होने वाले छद शास्त्र-प्रवक्ताओ के रूप मे नामोल्लेख किया है। पिंगल का काल भी उन्होने यही माना है।

उपर्युक्त छद शास्त्र-प्रवक्ताओ के कोई ग्रथ इस समय प्राप्त नही हैं, परतु उनके मतो के उद्धरण अन्य ग्रथो मे मिल जाते हैं। परवर्ती विद्वानो को सबसे अधिक प्रभावित करने वाले आचार्य पिंगल रहे हैं।

आचार्य पिंगल और पिंगल-छन्दःसूत्र—

पिंगल को कीथ ने प्राकृत-छदो-विषयक-ग्रथ "प्राकृत-पैंगलम्" के रचयिता

१–वैदिक-छन्दोमीमासा ५६

नाम	काल	नाम	काल
१ पूज्यपाद[1] (देवनन्दी)	४७०-५१२ वि	२ भामह[2]	६ शती
३ दण्डी[3]	७०० वि.	४. पाल्यकीर्ति[4]	८७१-९२४ वि
५ दमसागर मुनि[5]	१०५० वि.	६. वृद्धकवि[6]	
७. सालाहण[7]		८. हाल[8]	
९ मनोरथ[9]		१०. अर्जुन[10]	
११ गोसल[11]		१२. गोविन्द[12]	
१३ चतुर्मुख[13]			

छद शास्त्र के परवर्ती ग्रथो में से प्रसिद्ध कतिपय ग्रन्थ निम्नलिखित है .—

१ बृहत्सहिता —यह वराहमिहिर की ज्योतिष विषयक रचना है। प्रसगवश इसके चौदहवें अध्याय मे ग्रह-नक्षत्रो की गति-विधि के साथ छदो का विवेचन भी मिलता है। कीथ के अनुसार वराहमिहिर का स्वतन्त्र छद शास्त्र का ग्रथ भी होना चाहिए किन्तु ऐसा कोई ग्रथ अभी तक देखने मे नही आया।

२ जानाश्रयी-छन्दोविचिति .—जनाश्रय (?) नामक कवि ने इसकी रचना विष्णुकुण्डीन (कृष्णा और गोदावरी का जिला) के अधिपति माधववर्मन् प्रथम के राज्य मे—जिसका समय ६ शताब्दी A D पूर्व माना जाता है—की है। यह ग्रथ ६ अध्यायो में विभक्त है। इसका प्राकृत-छन्दो का अन्तिम अध्याय महत्वपूर्ण है। गणशैली स्वतन्त्र है। युधिष्ठिर मीमासकजी[14] ने गणस्वामी को ही इसका कर्त्ता माना है।

३ जयदेवच्छन्दस्—जयदेव की रचना होने से यह 'जयदेवच्छन्दस्' के नाम से

१–जयकीर्ति-छदोनुशासन, ८,१९
२–कीथ : ए हिस्ट्री आव सस्कृत लिटरेचर
३,४,५–वैदिक-छदोमीमासा, पृ० ६०-६१
६–विरहाक-वृत्तजातिसमुच्चय २।८-९ तथा ३।१२
७– ,, ,, २।८-९
८– ,, ,, ३।१२
९–कविदर्पण-राजस्थान प्राच्य विद्या, प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२
१०-११–रत्नशेखर : छन्द कोश (कविदर्पण गत) ,, ,, ,,
१२-१३–स्वयम्भूछन्द— ,, ,, ,,
१४–वैदिक-छदोमीमासा, पृ० ६१

प्रसिद्ध है। प्रो० एच० डी० वेलणकर[1] ने इनका समय ६०० ६०० वि० सं० का मध्य माना है। जयदेव जैन कवि थे। इन्होंने अपना यह ग्रंथ पिंगल के अनुकरण पर लिखा है। लौकिक-छन्दों की निरूपण शैली पिंगल से भिन्न है। छन्दों का विवेचन संस्कृत-परम्परा के अनुकूल और अत्यन्त व्यवस्थित है।

इसमें आठ अध्याय हैं। द्वितीय और तृतीय अध्याय में वैदिक-छन्दों का निरूपण है। सम्भवतः जैन लेखक होने के कारण ही इस ग्रन्थ का विशेष प्रसार न हो सका।

४ गाथालक्षण—जैन कवि नन्दिताढ्य की यह रचना है। श्री वेलणकर के मतानुसार इनका समय ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में माना जा सकता है। प्राकृत-अपभ्रंश परम्परा के छन्दःशास्त्रीय ग्रन्थों में यह प्राचीनतम ग्रंथ है। नन्दिताढ्य द्वारा इस ग्रंथ में जिन छंदों का चयन किया गया है वे केवल जैनागमों में ही उपलब्ध हैं। ग्रंथकार ने गाथावर्ग के विविध छन्दों का विस्तार से वर्णन किया है। लेखक के दृष्टिकोण से अपभ्रंश-भाषा हेय है।[3] ग्रंथ की भाषा प्राकृत है।

५ वृत्तजातिसमुच्चय—विरहांक की यह रचना है। डॉ० वेलणकर[4] के के मतानुसार इनका समय ६वीं १०वीं शताब्दी या इससे भी पूर्व माना जा सकता है। पिंगल के पश्चात् मात्रिक-छंदों का सर्वाधिक विवेचन इसी ग्रंथ में प्राप्त है। इसमें ६ परिच्छेद हैं। भाषा प्राकृत है किन्तु पांचवें परिच्छेद में वर्णिकवृत्तों के लक्षण संस्कृत में हैं। ग्रंथ में यति का उल्लेख नहीं है अतः सम्भव है ये यति विरोधी सम्प्रदाय के हों। इस ग्रंथ में मगणादि गणों के स्थान पर पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग है जो कि पूर्ववर्ती ग्रंथों में प्राप्त नहीं है।

६ छन्दोनुशासन—इसके प्रणेता कवि जयदेव कन्नड़ प्रान्तीय दिगम्बर जैन थे। डॉ वेलणकर[5] ने इनका समय १० ० ई० के लगभग माना है। पिंगल एवं जयदेव की परम्परा के अनुसार यह ग्रंथ भी आठ अध्यायों में विभक्त है। इसमें अपभ्रंश के मात्रिक-छन्दों का विवेचन भी प्राप्त है। छंदों के लक्षण कारिका-शैली में हैं उदाहरण स्वतन्त्ररूप से प्राप्त नहीं हैं।

१—देखें जयदामन् की भूमिका—हरितोषमाला बम्बई

२—देखें कविदर्पण —गाथालक्षण की भूमिका—रा.प्रा.वि.प्र. जोधपुर, सन् १९६२

३—गाथालक्षण पद्य ११

४—देखें वृत्तजातिसमुच्चय की भूमिका—राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

५—देखें जयदामन् की भूमिका—हरितोषमाला बम्बई

७ स्वयम्भूछन्द—इसके प्रणेता कविराज स्वयम्भू जैन हैं। कर्त्ता के संबंध मे विद्वानो के अनेक मत[1] हैं किन्तु डॉ० वेल्हणकर[2] ने इनका समय १०वी शती का उत्तरार्द्ध माना है। स्वयभू अपभ्रश-भाषा के श्रेष्ठ कवि हैं। अपभ्रश छन्द-परम्परा की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण कृति है। कवि ने मगणादि गणो का प्रयोग न करके 'छ प च त द'[3] पारिभाषिक शब्दो के आधार से छन्दो के लक्षण कहे हैं। इस ग्रथ मे छदो के उदाहरण-रूप मे विभिन्न प्राकृत-कवियो के २०६ पद्य उद्धृत हैं। लेखक ने कवियो के नाम भी दिये हैं।

८ रत्नमञ्जूषा—अज्ञातकर्तृक जैन-कृति है। वेल्हणकर[4] ने इसका समय हेमचन्द्र से पूर्व स्वीकार किया है, अत ११-१२वी शती माना जा सकता है। इसमे आठ अध्याय हैं। लेखक ने वर्णिकवृत्तो का समान प्रमान और वितान शीर्षक से विभाजन किया है। मगणादि-गणो की परिभाषा भी लेखक की स्वतन्त्र है। यह पारिभाषिक शब्दावली सम्भवत पूर्ववर्त्ती एव परवर्त्ती कवियो ने स्वीकार नही की है।

९ वृत्तरत्नाकर—इसके प्रणेता कश्यपवशीय पव्वेकभट्ट के पुत्र केदार-भट्ट हैं। कीथ[5] ने इनका समय १५वी शती माना है किन्तु ११९२ की हस्त-लिखित प्रति प्राप्त होने से एव ११वी शती की इसी ग्रथ की त्रिविक्रम की प्राचीन टीका प्राप्त होने से वेल्हणकर[6] ने इनका सत्ताकाल ११वी शताब्दी ही स्वीकार किया है। पिंगल के अनुकरण पर इसकी रचना हुई है। जयदेवच्छन्दस् की तरह इसमे भी छन्दो के लक्षण लक्ष्य-छदो मे ही देकर लक्षण और उदाहरण का एकीकरण किया गया है। इस ग्रथ का प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१०. सुवृत्ततिलक—इसके प्रणेता क्षेमेन्द्र का समय कीथ[7] ने हेमचन्द्र के पूर्व अथवा ११वी शती माना है। मेकडानल[8] के अनुसार क्षेमेन्द्र की बृहत्कथामजरी

१–डॉ० भोलाशकर व्यास प्राकृतपैंगलम् भा० २, पृ० ३६५, डॉ० शिवनन्दनप्रसाद मात्रिक छन्दो का विकास पृ० ४५-४६

२–देखें, स्वयम्भूछन्द की भूमिका–राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

३–तुलना के लिये देखें, इसी ग्रथ का प्रथम परिशिष्ट

४–देखें, रत्नमञ्जूषा की भूमिका–भारतीय ज्ञानपीठ काशी, १९४९ ई०

५–कीथ · ए हिस्ट्री आव् सस्कृत लिटरेचर पृ० ४१७

६–देखें, जयदामन् की भूमिका–हरितोषमाला बम्बई

७–कीथ · ए हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर, पृ० १३५

८–आर्थर ए मेकडॉनल · हिस्ट्री आव् सस्कृत लिटरेचर, पृ० ३७६

की रचना १०३४ ई० में हुई थी। अतः क्षेमेन्द्र का समय ११वीं शती निश्चित है। क्षेमेन्द्र ने इस ग्रंथ में पहले छन्द का लक्षण दिया है और तदुपरांत अपने ग्रंथों से उदाहरण दिये हैं। छंदों के नाम दो बार आये हैं, एक बार लक्षण में और दूसरी बार उदाहरण में। यह ग्रन्थ तीन विन्यासों में विभक्त है। क्षेमेन्द्र के विचार में विशेष रसों या प्रसंगों के लिए विशेष छंद ही उपयुक्त और पर्याप्त प्रभावशाली होते हैं। ग्रंथकार के अनुसार उपजाति पाणिनि का, मन्दाक्रांता कालिदास का, वंशस्थ भारवि का और शिखरिणी भवभूति का प्रिय छंद रहा है।

११ श्रुतबोध—इसके लेखक कालिदास कहे जाते हैं। कीथ ने इस बात का कोई आधार नहीं माना। कुछ लोग वररुचि को भी इसका लेखक मानते हैं[1]। कृष्णमाचारी[2] भी कालिदासों में से तीसरा कालिदास मानते हैं। गरोला के अनुसार ये ७ या ८वीं शताब्दी के कोई अन्य कालिदास होंगे। युधिष्ठिर मीमांसक[3] के अनुसार इस कालिदास का समय १२वीं शती था। संभव है यह मान्यता उचित हो और यह कालिदास राजा भोज के सभा के रूप में लोक-कथाओं में ख्याति प्राप्त कालिदास हो। लक्षण में ही उदाहरण का यथार्थ हो जाना इस ग्रंथ की सब से बड़ी विशेषता है। इसका भी प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१२ छन्दोऽनुशासन—इसके प्रणेता कलिकाल-सर्वज्ञ हेमचन्द्र पूर्णतल्लगच्छीय श्रीदेवचन्द्रसूरि के शिष्य हैं। अणहिलपुर पत्तन के नृपति सिद्धराज जयसिंह की सभा के ये प्रमुखतम विद्वान् थे और महाराजा कुमारपाल के ये धर्मगुरु थे। इनका समय वि० सं० ११४५-१२२९ माना जाता है। ये बहुमुखी प्रतिभा वाले लेखक और वैज्ञानिक-दृष्टि-सम्पन्न आचार्य एवं शास्त्र-प्रणेता थे। हेमचन्द्र ने अपने इस ग्रंथ को पिंगल जयदेव और जयकीर्ति के अनुकरण पर ही आठ अध्यायों में ग्रथित किया है। वर्णवृत्त और मात्रावृत्त के कुछ नये भेद जिनका उल्लेख पिंगल जयदेव विरहांक जयकीर्ति आदि पूर्ववर्ती आचार्यों ने नहीं किया हेमचन्द्र ने प्रस्तुत किये हैं। इसमें लगभग सातसौ आठसौ छंदों का निरूपण प्राप्त है। नवीन मात्रिक-छंदों की दृष्टि से इस ग्रंथ का सर्वाधिक महत्त्व है।

हेमचन्द्र ने इस ग्रंथ पर स्वोपज्ञ टीका[4] भी बनाई है। इस टीका में हेमचन्द्र ने

१—कीथ ए हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर, पृ ४१६
२—एम कृष्णमाचारी ए हिस्ट्री आव् क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर, पृ १ ८
३—देखें वैदिक-छन्दोमीमांसा पृ १२
४—डॉ एच डी वेलणकर-सम्पादित टीकासहित यह ग्रंथ सिंघी जैनग्रंथमाला में प्रकाशित है।

छदो के नामान्तर देते हुये 'इति भरत' कह कर जो नामभेद दिये हैं उनमे से निम्नलिखित छद वर्तमान मे प्राप्त भरत के नाट्यशास्त्र मे उपलब्ध नही हैं, और यति-विरोधी आचार्यों मे गणना होने से सभव है कि नाट्यशास्त्र मे निरूपित छदो के अतिरिक्त भरत ने छद शास्त्र पर कोई स्वतन्त्र ग्रथ भी लिखा हो। भरत के नाम से उल्लिखित अनुपलब्ध छदो की तालिका निम्न है :—

३ अक्षर	घू.	६ अक्षर	गिरा
,, ,,	तडित्	७ ,,	शिखा
४ ,,	ललिता	,, ,,	भोगवती
,, ,,	जया	,, ,,	द्रुतगति
५ ,,	भ्रमरी	१० ,,	पुष्पसमृद्धि
,, ,,	वागुरा	,, ,,	रुचिरा
,, ,,	कुन्तलतन्वी	११ ,,	अपरवक्त्रम्
,, ,,	शिखा	,, ,,	द्रुतपदगति
,, ,,	कमलमुखी	,, ,,	रुचिरमुखी
६ ,,	नलिनी	१३ ,,	मनोवती
,, ,,	वीथी		

१३ **कविदर्पण**—यह अज्ञात जैन-कर्तृक कृति है। छदो के उदाहरणो मे जिनसिंहसूरि-रचित 'चूडाल-दोहक'[1] का उदाहरण है। जिनसिंहसूरि खरतर-गच्छीय द्वितीय जिनेश्वरसूरि के शिष्य हैं, इनका शासनकाल १३००-१३४१ तक का है। कविदर्पण का सर्वप्रथम उल्लेख स० १३६५ में रचित अजितशाति-स्तव की टीका मे जिनप्रभसूरि ने किया है जो कि जिनसिंहसूरि के शिष्य हैं। अत यह अनुमान किया जा सकता है कि इसके प्रणेता जिनसिंहसूरि के शिष्य और जिनप्रभसूरि के गुरुभ्राता ही होगे।

यह ग्रथ प्राकृतभाषा मे ६ उद्देश्यो मे विभक्त है। छन्दो के वर्गीकरण तथा लक्षण निर्देश से इसकी मौलिकता प्रकट होती है। प्राकृत-अपभ्रंश की परम्परा में इसका यथेष्ट महत्त्व है।

१४. **छन्द कोष**—इसके प्रणेता रत्नशेखरसूरि हेमतिलकसूरि के शिष्य हैं। इनका समय १५वी शती है। यह ग्रथ प्राकृतभाषा मे है। इसमे कुल ७४ पद्य हैं। इस ग्रथ के छदो का विवेचन छदो व्यवहार के अधिक निकट है और तद्युगीन छदो के स्वरूप-विकास के अध्ययन की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण है।

१—कविदर्पण, पृ० २४

१५ प्राकृत पिंगल—इसके प्रणेता के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है किन्तु डॉ भोलाशंकर व्यास[1] के अनुसार हरिब्रह्म या हरिहर इसका कर्ता माना जा सकता है और प्राकृतपिंगल का सकलन-काल १४वीं शती का प्रथम चरण मान सकते हैं। इसमें मात्रिक और वर्णिकवृत्त नाम से दो परिच्छेद हैं। लक्षणों में ग्रन्थकार ने टादिगण प्रस्तारभेद, नाम पर्याय एवं मगणादिगणों की पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग किया है।

अपभ्रंश और हिन्दी में प्रयुक्त मात्रिक-छन्दों के अध्ययन के लिए यह ग्रंथ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। वर्णिकवृत्तों के लिए संस्कृत-साहित्य में जो स्थान पिंगलकृत छन्द सूत्र का है मात्रिक-छंदों के लिए वही स्थान प्राकृतपिंगल का है।

१६ वाणीभूषण—इसके प्रणेता दामोदर मिश्र दीर्घघोषकुलोत्पन्न मैथिली ब्राह्मण हैं। डॉ० भोलाशंकर व्यास[2] ने प्राकृतपिंगल के संग्राहक हरिहर को पितामह और रविकर को दामोदर का पिता या पितृव्य स्वीकार किया है। विद्वानों के मतानुसार दामोदर मिथिलापति कीर्तिसिंह के दरबार में थे। अतः दामोदर मिश्र और कविवर विद्यापति सम-सामयिक होने चाहिये। दामोदर मिश्र का समय १४३१ से १४६६ तक माना जाता है।

यह ग्रंथ संस्कृत भाषा में है। इसमें दो परिच्छेद हैं। लक्षणों का गठन पारिभाषिक शब्दावली में है और उदाहरण स्वरचित हैं। वस्तुतः यह ग्रंथ प्राकृत-पिंगल का संस्कृत में रूपान्तर मात्र है।

१७ छन्दोमञ्जरी—गैरोला[3] ने लेखक का नाम दुर्गादास माना है किन्तु यह भ्रामक है। ग्रन्थ के प्रथम पद्य में ही लेखक ने स्वयं का नाम गंगादास और पिता का नाम गोपालदास वैद्य एवं माता का नाम सन्तोषदेवी लिखा है।[4] इनका समय १५वीं या १६वीं शताब्दी है। ग्रंथकार ने स्वरचित 'अच्युतचरित महाकाव्य' और 'कंसारिशतक' एवं 'दिनेशशतक' का भी उल्लेख किया है।[5] छन्दो-

---

१–देखें प्राकृतपैंगलम् भा २ पृ १९

२– „ „ १९ १८

३–गैरोला : संस्कृत-साहित्य का इतिहास पृ ९९१

४–देवं प्रणम्य गोपालं वैद्यगोपालदासजः ।
सन्तोषातनयश्छन्दो गंगादासस्तनोत्यदः ॥१॥

५–सर्गैः षोडशभिः अच्युतचरितं [illegible]—
कंसारेः अच्युतस्य चरितं काव्यं कविप्रीतिदम् ।
कंसारेः शतकं दिनेशशतकं च तस्यापरमी
गंगादासकृते गुणी सुविदितां छन्दस्तती मञ्जरी ॥१।६॥

मञ्जरी की शैली वृत्तरत्नाकर से मिलती-जुलती है। इसमे ६ स्तवक हैं। छठे स्तवक मे गद्य-काव्य और उनके भेदो पर विचार है जो कि इसकी विशेषता है।

१८. वृत्तमुक्तावली[1]—इसके प्रणेता तैलगवशीय कवि-कलानिधि देवर्षि कृष्णभट्ट हैं। इस ग्रन्थ का रचनाकाल १७८८ से १७६६ के मध्य का है। इसमे तीन गुम्फ हैं :—१ वैदिक छन्द, २ मात्रिक छद, और ३. वर्णिक वृत्त। पिंगल और जयदेव के पश्चात् प्राप्त एव प्रसिद्ध ग्रन्थो मे वैदिक-छदो का निरूपण न होने से इस ग्रथ का महत्त्व बढ जाता है। मात्रिक-गुम्फ प्राकृतपिंगल और वाणीभूषण से अनुप्राणित है। इसमे ४२ दण्डक-छदो के लक्षण एव उदाहरण प्राप्त हैं।

१६ वाग्वल्लभ—इसके प्रणेता कवि दु खभजन शर्मा हैं जो कि काशी-निवासी कान्यकुब्जवशीय प्रताप शर्मा के पौत्र और चूडामणि शर्मा के पुत्र हैं। इसकी 'वरवर्णिनी' नामक टीका की रचना दु.खभजन कवि के ही पुत्र महोपाध्याय देवीप्रसाद शर्मा ने वि० स० १६८५ मे की है, अत इसका रचना समय १६५० से १६७० वि० स० का मध्य माना जा सकता है। गैरोला ने इनका समय १६वी शती माना है जो कि भ्रामक है।[2] कवि दु खभजन ज्योतिर्विद् तो थे ही, इसीलिए जहाँ आज तक के प्राप्त छद शास्त्रो मे प्रयुक्त छद प्रायश ग्रहण किये हैं तो वहाँ प्रस्तार का आधार लेकर सैकड़ो नवीन छद भी निर्मित किये हैं। इस ग्रथ मे कुल १५३६ छन्दो का निरूपण है। शैली वृत्त-रत्नाकर की है। प्रत्येक वर्णिकवृत्त प्रस्तार-सख्या के क्रम से दिया है।

इनके अतिरिक्त छद शास्त्र के सैकडो ग्रथ और उनकी टीकायें प्राप्त होती हैं जिनकी सूची मैंने इसी ग्रथ के ८वें परिशिष्ट मे दी है।

वृत्तमौक्तिक भी छद शास्त्र का बडा ही प्रौढ और महत्त्वपूर्ण ग्रथ है। चन्द्रशेखर भट्ट ने अपने इस ग्रथ मे जिस पाडित्य का परिचय दिया है, वह केवल उन ही तक सीमित नही था। उनकी वश-परम्परा मे जैसा कि हम देखेंगे बडे बडे माने हुए प्रतिभा-सम्पन्न विद्वान् हुए, और इसमे सदेह नही कि ऐसी ज्ञान-समृद्ध परम्परा मे जिसका व्यक्तित्व विकसित हुआ हो वह अपने कृतित्व और व्यक्तित्व के लिये उन पूर्वजो का सब से अधिक ऋणी होगा। इसीलिये कवि के परिचय से पूर्व ग्रन्थ के माहात्म्य की पृष्ठभूमि को समझने के लिए सर्वप्रथम कवि के पूर्वजो का परिचय प्राप्त कर लेना भी वाछनीय है।

१—राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित

२—गैरोला सस्कृत साहित्य का इतिहास पृ. १६३

कवि-वंश-परिचय

चन्द्रशेखर भट्ट वासिष्ठ-वंशीय[1] लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं। ग्रन्थकार ने अपने पूर्वजों में वृद्धप्रपितामह रामचन्द्र भट्ट[2] पितामह रायभट्ट[3] और पितृचरण लक्ष्मीनाथ भट्ट का उल्लेख किया है।

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने प्राकृतपिंगलसूत्र की टीका 'पिंगलप्रदीप' में अपना वंश परिचय इस प्रकार दिया है —

> भट्ट श्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेहः श्रुतो यः
> श्रीमान्नारायणाख्यः कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट ।
> तत्पुत्रो रायभट्टः सकलकविकुलख्यातकीर्तिस्तदीयो
> लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिरं पिंगलार्थप्रदीपम् ॥
>
> [मंगलाचरण पद्य २]

इस आधार से ग्रन्थकार का वंशवृक्ष इस प्रकार बनता है —
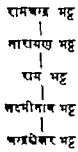
रामचन्द्र भट्ट
|
नारायण भट्ट
|
राय भट्ट
|
लक्ष्मीनाथ भट्ट
|
चन्द्रशेखर भट्ट

१–लक्ष्मीनाथ भुभट्टवर्य्य इति यो वासिष्ठवंशोद्भव—
स्तत्सूनुः कविचन्द्रशेखर इति प्रख्यातकीर्तिर्भुवि

[वृत्तमौक्तिक प्रशस्ति १]

२–अस्मद्वृद्धप्रपितामहश्रीमत्कविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते

[वृत्तमौक्तिक पृ० १०७]

३–अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते ।

[वृत्तमौक्तिक पृ० १२१]

४–निर्णयसागर संस्करण और प्राकृतपैङ्गलम् भा० १ में रामभट्ट मुद्रित है जो अशुद्ध है।

ग्रथकार के वृद्धप्रपितामह श्रीरामचन्द्र भट्ट वस्तुत तैलगदेशीय वेलनाट यजुर्वेदान्तर्गत तैत्तिरीयशाखाध्यायी आपस्तम्ब त्रिप्रवरान्वित आगिरस बार्हस्पत्य भारद्वाजगोत्रीय श्री लक्ष्मण भट्ट सोमयाजी के पुत्र हैं, जोकि वसिष्ठवशीय ननिहाल मे मातुल के यहाँ दत्तकरूप मे चले गये थे। अत भारद्वाजीय गोत्रापेक्षया वशवृक्ष इस प्रकार बनता है .—

गोविन्दाचार्य
|
वल्लभ दीक्षित
|
यज्ञनारायण
|
गगाधर भट्ट सोमयाजी
|
गणपति भट्ट सोमयाजी
|
श्रीवल्लभ भट्ट (बालभट्ट)

श्रीवल्लभ भट्ट (बालभट्ट) के पुत्र: लक्ष्मण भट्ट सोमयाजी | जनार्दन भट्ट

लक्ष्मण भट्ट सोमयाजी के पुत्र: रामकृष्ण भट्ट (नारायण भट्ट) | महाप्रभु वल्लभाचार्य[1] | रामचन्द्र भट्ट | विश्वनाथ भट्ट[2]

रामचन्द्र भट्ट
|
नारायण भट्ट
|
राय भट्ट
|
लक्ष्मीनाथ भट्ट
|
चन्द्रशेखर भट्ट
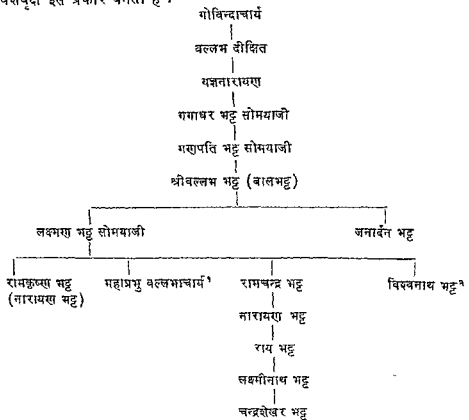
वासिष्ठ एव भारद्वाज दोनो गोत्रो का उल्लेख होने से यहाँ यह विचारणीय है कि रामचन्द्र भट्ट भारद्वाज-गोत्रीय थे या वसिष्ठ-गोत्रीय ? या नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट एक ही व्यक्ति है अथवा भिन्न-भिन्न ? और, यदि एक ही व्यक्ति है तो गोत्रभेद का क्या कारण है ? तथा रामचन्द्र भट्ट यदि वल्लभाचार्य के अनुज हे तो वल्लभ-साहित्य एव परम्परा मे रामचन्द्र एव इनकी परम्परा का उल्लेख क्यो नही है ? आदि प्रश्न उपस्थित होते है। अत इन पर यहाँ विचार करना असंगत न होगा।

१–देखें, काकरोली का इतिहास, द्वितीय भाग, एव वल्लभवशवृक्ष।
२–देखें, वल्लभवशवृक्ष।

रामचन्द्र भट्ट ने स्वप्रणीत 'गोपाललीला-महाकाव्य' 'रोमावलीशतक' एवं 'रसिकरञ्जन' की पुष्पिकाओं में स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र स्वीकार किया है —

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते गोपाललीलाख्ये महाकाव्ये कंसवधो नाम एकोनविंशः सर्गः ।

[गोपाललीला महाकाव्य की पुष्पिका][1]

'इतिश्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृतं रोमावलीशृङ्गारशतकं सम्पूर्णम् ।

[रोमावलीशतक की पुष्पिका][2]

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनुश्रीरामचन्द्रकविकृतं सटीकं रसिकरञ्जनं नाम शृङ्गारवैराग्यार्थसमानं काव्यं सम्पूर्णम् ।

[रसिकरञ्जन की पुष्पिका][3]

कवि ने 'कृष्णकुतूहल' महाकाव्य में स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र और वल्लभाचार्य का अनुज स्वीकार किया है —

श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलकः श्रीवल्लभस्यानुजः ।

[कृष्णकुतूहलमहाकाव्य प्रशस्तिपद्य][4]

रोमावलीशतक में कवि ने स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र, वल्लभ का अनुज और विश्वनाथ का ज्येष्ठभ्राता लिखा है —

श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुजः श्रीवल्लभः श्रीगुरो',
प्रध्येतु' समग्रजो गुणिमणेः श्रीविश्वनाथस्य च ।

[रोमावलीशतक-पद्य १११]

इन उल्लेखों में भारद्वाजगोत्र का कहीं भी उल्लेख न होने पर भी लक्ष्मण भट्ट एवं वल्लभाचार्य का उल्लेख होने से यह स्पष्ट है कि ये भारद्वाज गोत्रीय थे।

रामचन्द्र भट्ट ने 'कृष्णकुतूहल-महाकाव्य' के अष्टम सर्ग के अन्त में स्वयं का वसिष्ठगोत्र स्वीकार किया है —

१–भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा सन् १८९९ में प्रकाशित
२–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, ग्रं. नं. ११२१५
३–काव्यमाला चतुर्थ गुच्छक में प्रकाशित
४–गोपाललीला भूमिका

'विद्यानिष्ठवसिष्ठगोत्रजनुषा तेन प्रणीते महा—
काव्ये कृष्णकुतूहलेंवरहुतिः सर्गोऽजनिष्टाष्टम ।'

अत यह स्पष्ट है कि रामचद्र भट्ट स्वय को लक्ष्मण भट्ट का पुत्र और वल्लभ का अनुज मानते हुए भी अपना वासिष्ठ-गोत्र स्वीकार करते है।

चन्द्रशेखर भट्ट वृत्तमौक्तिक[1] मे कृष्णकुतूहल-महाकाव्य के प्रणेता रामचद्र भट्ट को 'प्रवृद्धपितामह' शब्द से सम्बोधित करते है। अत यह निर्विवाद है कि नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट पृथक्-पृथक् व्यक्ति नही है अपितु वही वल्लभानुज ही है। ऐसी अवस्था मे गोत्रभेद क्यो ? इस सम्बन्ध मे कोई प्राचीन प्रमाण तो उपलब्ध नही है, किन्तु गोपाललीला-महाकाव्य के सम्पादक श्री बेचनराम शर्मा सम्पादकीय-उपसहार[2] मे लिखते है —

'इय वसिष्ठगोत्रोद्भवत्वोक्तिर्मातामहगोत्राभिप्रायेण ऊहनीया।'

इसी बात को स्पष्ट करते हुये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'वल्लभीय सर्वस्व'[3] मे लिखते है :—

'लक्ष्मण भट्टजी के मातुल वसिष्ठ-गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इनको (रामचन्द्र को) अपने घर ले गये थे।'

इससे स्पष्ट है कि लक्ष्मण भट्ट के मामा जो अपुत्र थे, उन्होने लक्ष्मणभट्ट से अपने नाती रामचद्र को दत्तक रूप मे ले लिया। दत्तक रूप मे जाने के पश्चात् उत्तर भारत की परम्परा के अनुसार गोत्र-परिवर्तन हो ही जाता है। लक्ष्मण भट्ट के मातुल वसिष्ठगोत्रीय थे अत रामचद्र का गोत्र भी भारद्वाज न हो कर वसिष्ठ हो गया। यही कारण है कि रामचद्र भट्ट ने स्वय का गोत्र वसिष्ठ ही स्वीकार किया है।

वसिष्ठ-गोत्र का उल्लेख करते हुए भी धर्म (दत्तक) पिता का नाम न देकर सर्वत्र लक्ष्मणभट्ट-तनुज और वल्लभानुज का उल्लेख करना अप्रासगिक सा प्रतीत होता है किन्तु तत्त्वतः विरोध न होकर विरोधाभास ही है। इसका मुख्य कारण यह है कि रामचद्र भट्ट ने पुरुषोत्तम-क्षेत्र मे वल्लभाचार्य के सहवास में रह कर

१—देखें, पृष्ठ १०५, १०७

२—देखें, गोपाललीला पृ० २५५

३—भारतेन्दु ग्रथावली भाग ३, पृ० ५६८

'विद्यानिष्ठवसिष्ठगोत्रजनुषा तेन प्रणीते महा—
काव्ये कृष्णकुतूहलेंबरहुतिः सर्गोऽजनिष्टाष्टम. ।'

अत. यह स्पष्ट है कि रामचद्र भट्ट स्वय को लक्ष्मण भट्ट का पुत्र और वल्भभ का अनुज मानते हुए भी अपना वासिष्ठ-गोत्र स्वीकार करते हैं।

चन्द्रशेखर भट्ट वृत्तमौक्तिक[1] मे कृष्णकुतूहल-महाकाव्य के प्रणेता रामचद्र भट्ट को 'प्रवृद्धपितामह' शब्द से सम्बोधित करते हैं। अत यह निर्विवाद है कि नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट पृथक्-पृथक् व्यक्ति नही है अपितु वही वल्लभानुज ही हैं। ऐसी अवस्था मे गोत्रभेद क्यो ? इस सम्बन्ध मे कोई प्राचीन प्रमाण तो उपलब्ध नही है, किन्तु गोपाललीला-महाकाव्य के सम्पादक श्री बेचनराम शर्मा सम्पादकीय-उपसहार[2] मे लिखते हैं —

'इय वसिष्ठगोत्रोद्भवत्वोक्तिर्मातामहगोत्राभिप्रायेण ऊहनीया।'

इसी बात को स्पष्ट करते हुये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'वल्लभीय सर्वस्व'[3] मे लिखते हैं :—

'लक्ष्मण भट्टजी के मातुल वसिष्ठ-गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इनको (रामचन्द्र को) अपने घर ले गये थे।'

इससे स्पष्ट है कि लक्ष्मण भट्ट के मामा जो अपुत्र थे ; उन्होंने लक्ष्मणभट्ट से अपने नाती रामचद्र को दत्तक रूप मे ले लिया। दत्तक रूप मे जाने के पश्चात् उत्तर भारत की परम्परा के अनुसार गोत्र-परिवर्तन हो ही जाता है। लक्ष्मण भट्ट के मातुल वसिष्ठगोत्रीय थे अत रामचद्र का गोत्र भी भारद्वाज न हो कर वसिष्ठ हो गया। यही कारण है कि रामचद्र भट्ट ने स्वय का गोत्र वसिष्ठ ही स्वीकार किया है।

वसिष्ठ-गोत्र का उल्लेख करते हुए भी धर्म (दत्तक) पिता का नाम न देकर सर्वत्र लक्ष्मणभट्ट-तनुज और वल्लभानुज का उल्लेख करना अप्रासगिक सा प्रतीत होता है किन्तु तत्त्वत. विरोध न होकर विरोधाभास ही है। इसका मुख्य कारण यह है कि रामचद्र भट्ट ने पुरुषोत्तम-क्षेत्र मे वल्लभाचार्य के सहवास में रह कर

१—देखें, पृष्ठ १०५, १०७

२—देखें, गोपाललीला पृ० २५५

३—भारतेन्दु ग्रथावली भाग ३, पृ० ५६८

सर्वशास्त्र और सब दर्शनों का अध्ययन आचार्यश्री से ही किया था।[1] अतः पितृभक्ति, भ्रातृ प्रेम एवं भक्तिवश ही इनका सर्वत्र स्मरण किया जाना स्वाभाविक ही है।

अतएव यह तो स्पष्ट ही है कि रामचन्द्र भट्ट गोत्रापेक्षया पृथक् पृथक् व्यक्ति न हो कर लक्ष्मण भट्ट के पुत्र एवं वल्लभ के लघुभ्राता थे और दत्तकरूप में वसिष्ठ-वंश में आने के कारण भारद्वाजगोत्रीय न रह कर वसिष्ठगोत्रीय हो गये थे। संभव है इसी कारण से पुष्टिमार्गप्रवर्त्तक वल्लभाचार्य के जीवनवृत्त सम्बन्धी समग्र-साहित्य में रामचन्द्र भट्ट एवं इनकी परम्परा का कोई उल्लेख नहीं हुआ हो। अस्तु।

वंश-परिचय गोविन्दाचार्य से न देकर ग्रंथकार-सम्मत वसिष्ठगोत्रापेक्षया रामचन्द्र भट्ट से दिया जा रहा है।

रामचन्द्र भट्ट

इनके पिताश्री का नाम लक्ष्मण भट्ट[2] और मातुश्री का नाम इल्लम्मागारू था। इनका जन्म अनुमानतः वि० सं० १५४०[3] में काशी में हुआ था। लक्ष्मण भट्ट का स्वर्गवास वि० सं० १५४६ चैत्र कृष्णा नवमी को दक्षिण में वेंकटेश्वर बालाजी नामक स्थान पर हुआ था। स्वर्गवास के पूर्व ही लक्ष्मण भट्ट ने अपने मातामह की संपूर्ण चल और अचल संपत्ति इनको प्रदान कर अयोध्या भेज दिया था। इस सम्बन्ध में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'वल्लभीयसर्वस्व' में लिखते हैं —

लक्ष्मण भट्टजी साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम के धाम अक्षरब्रह्म शेषजी के स्वरूप हैं इससे आपको त्रिकाल का ज्ञान है। सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब काकरवार से बड़े पुत्र रामकृष्ण भट्टजी को बालाजी में बुलाया और वहीं आपने डेरा किया। पुत्रों को अनेक शिक्षा देकर भी रामकृष्ण भट्टजी को श्री

१–'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलकः श्रीवल्लभस्य प्रिय-
स्तिष्ठल्लक्ष्मणपुत्रतात्परगो यो रामचन्द्रः कविः।'

[भारतेन्दु हरिश्चन्द्रः गोपाललीला-भूमिका]

'पुरुषोत्तमक्षेत्रे समागत्य ज्येष्ठभ्रातुः श्रीवल्लभाचार्यात्— सकाशात्
सर्वाणि शास्त्राणि मतानि च समधीत्य।'

[विश्वनाथ शर्मा- गोपाललीला-उपक्रमवर्णन]

२–लक्ष्मण भट्ट जी के परिचय के लिए देखें कांकरोली का इतिहास भाग २

३–कृष्णमाचारी हिस्ट्री ऑफ दी क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर पृ २११

४–भारतेन्दु ग्रन्थावली भाग ३ पृ ४७१

यज्ञनारायण के समय के श्रीरामचन्द्रजी पधराय दिए और कहा कि देश मे जा कर सब गाव और घर आदि पर अधिकार और वेल्लिनाटि तैलग जाति की प्रथा और अपने कुल अनुसार सब धर्म पालन करो। ऐसे ही श्रीयज्ञनारायण भट्ट के समय के एक शालिग्रामजो और मदनमोहनजी श्रीमहाप्रभुजी को देकर कहा कि आप आचार्य होकर पृथ्वी मे दिग्विजय करके वैष्णवमत प्रचार करो और छोटे पुत्र रामचन्द्रजी को, जिनका काशी मे जन्म हुआ था, अपने मातामह की सब स्थावर-जगम-सपत्ति दिया।'

यहाँ लक्ष्मण भट्ट के वसिष्ठगोत्रीय मातामह और मातुल का नाम प्राप्त नही है। सम्भवत ये अयोध्या मे ही रहते हो और इनकी स्थावर एव जङ्गम सम्पत्ति भी अयोध्या मे ही हो। पो० कण्ठमणि शास्त्री[1] ने लक्ष्मण भट्ट का ननिहाल धर्मपुरनिवासी बह्‌वृच् मौद्‌गल्यगोत्रीय काशीनाथ भट्ट के यहाँ स्वीकार किया है जब कि प्रस्तुत ग्रथकार चन्द्रशेखर भट्ट एव भारतेन्दु हरिश्चन्द्र[2] वसिष्ठगोत्र में स्वीकार करते हैं। मेरे मतानुसार सभव है कि लक्ष्मण भट्ट के पिता बालभट्ट ने दो शादियाँ की हो। एक बह्‌वृच् मौद्‌गल्यगोत्रीया 'पूर्णा' के साथ और दूसरी वसिष्ठगोत्रीया के साथ। फिर भी यह प्रश्न तो रह ही जाता है कि लक्ष्मण भट्ट बह्‌वृच् मौद्‌गल्यगोत्रीया पूर्णा के पुत्र थे या वसिष्ठगोत्रीया के? इसका समाधान तो इस वश-परम्परा के विद्वान् ही कर सकते हैं।

कवि रामचन्द्र आदि चार भाई थे। नारायणभट्ट उपनाम रामकृष्ण भट्ट और वल्लभाचार्य बडे भाई थे और विश्वनाथ छोटे भाई थे। रामकृष्ण भट्ट काकरवाड में ही रहते थे और पिताश्री लक्ष्मण भट्ट के स्वर्गारोहण के कुछ समय पश्चात् ही सन्यासी हो गये थे।[3] केशवपुरी के नाम से ये प्रसिद्ध थे और दक्षिण-भारत के किसी प्रसिद्ध मठ के अधिपति थे। डॉ० हरिहरनाथ टडनलिखित 'वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन'[4] के अनुसार गोविन्दरायजी (सत्ताकाल

१–काकरोली का इतिहास, भाग २, पृ० ५

२–भारतेन्दु-ग्रथावली, भाग ३, पृ० ५६८

३–'ये काकरवाड मे ही रहते थे। ये कुछ दिन पीछे सन्यासी हो गये तब केशवपुरी नाम पडा। ये ऐसे सिद्ध थे कि खडाऊ पहिने गगा पर स्थल की भांति चलते थे।'

भारतेन्दु ग्रथावली भा० ३, पृ० ५६८

४–'हरिरायजी के प्रागट्य के सम्बन्ध मे सम्प्रदाय के ग्रथो मे यह प्रसिद्ध है कि जब श्री कल्याणरायजी दस वर्ष के थे, तब एक दिन श्रीआचार्यजी के छोटे भाई केशवपुरी जो सन्यासी हो गए थे और दक्षिणभारत के किसी बडे मठ के अधिपति थे वहा आए और उन्होंने श्रीगुसाईजी से अपनी गद्दी के लिये एक बालक मागा, जिस पर आपने कहा कि जिस बालक के पास ठाकुरजी नहीं होंगे उन्हें दे दिया जायगा। श्रीकल्याणरायजी के पास ठाकुरजी नहीं थे। इसलिये उन्हे देना निश्चित हुआ।'

वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन पृ० ३९७

१५६६ १६१०) के प्रथम पुत्र कल्याणरायजी (जन्म सं० १६२५) दस वर्ष की अवस्था में केशवपुरी गुसाईंजी से मिले थे। अतः शतायु से अधिक ये विद्यमान रहे यह निश्चित ही है। वि० सं० १५६८ में रचित 'वल्लिकाऽऽश्रयवृत्तिपत्रक'[1] नामक एक पत्र आपका प्राप्त होता है, जिसका आद्यन्त इस प्रकार है —

गोभिर्नु तं प्रकृतिसुन्दरमन्दहास
　　भापासमुल्लसितमञ्जुलवक्त्रबिम्बम्।
श्रीमन्नन्दनमत्सखितमण्डमार्गं
　　भासार्यमिश्रय(क)मद्य हृदि भावयामि ॥१॥

×　　　　×　　　　×

विद्वद्भिः किल कृष्णदासकमुखैः शिष्यैरनेकैर्वृत
　　सोऽहं श्रीबद्री(दरी)वनाम्नमगमं शुक्रे(ज्येष्ठ)शकाब्दे तथा।
देवाम्भःपतिभूमिते (१४३३) सह नरं नारायणं वीक्षितुं
　　तत्र व्यासमुनीशसत्कृतिरभूदाकस्मिकी मे शुभा ॥६॥

×　　　　×　　　　×

श्रीवल्लभाचार्यमहाप्रभूणां नियोगतो बुद्धिमतां विमाय।
श्रीरामकृष्णाभिधभट्ट एतल्लेखं व्यतानीत् पुरतश्च तेषाम् ॥११॥

द्वितीय बृहद्भ्राता महाप्रभु वल्लभाचार्य भारत के प्रसिद्धतम आचार्यों में से हैं। इनका प्रतिपादित पुष्टिमार्ग आज भी भारत के कोने-कोने में फैला हुआ है। इन्हीं के साहचर्य में रह कर रामचन्द्र भट्ट ने समग्र शास्त्रों का अध्ययन किया था और वे इन्हें केवल बड़ा भाई ही नहीं अपितु अपना गुरु भी मानते थे।

रामचन्द्र भट्ट वेदान्त मीमांसा व्याकरण काव्य और साहित्य-शास्त्र के विशिष्ट विद्वान् थे। न केवल विद्वान् ही अपितु वादजेता भी थे। अहर्निश शास्त्रार्थ में रत रहने के कारण कई पराजित वादी आपके विरोधी भी हो गये थे और इसी विरोध-स्वरूप आपको विष भी दे दिया गया था। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ये अल्पायु में ही स्वर्गलोक को प्राप्त हो गए थे।

महाकवि रामचन्द्र भट्ट ने अनेक ग्रंथों का निर्माण किया होगा! वर्तमान में इनके रचित निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त होते हैं। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है.—

१–यह पत्र वार्ता साहित्य एक बृहद् अध्ययन पृ० १४५ पर प्रकाशित है।
२–कांकरोली संग्रहावली भाग १ पृष्ठ ११७

१ गोपाललीला महाकाव्य :—कवि ने इस काव्य में भगवान् श्रीकृष्ण का जन्म से लेकर कस-वध पर्यन्त भगवल्लीला का वर्णन १६ सर्गों मे किया है। प्रत्येक सर्ग की पद्यसख्या इस प्रकार है —७०, ५८, ७८, ७१, ५१, ७६, ७६, ५२, ६२, ७५, ६१, ६०, ५१, ६१, ५६, ६१, ६६, ५७, ७६। इसमे रचना-मवत् का उल्लेख नही है। प्रसाद एव माधुर्यगुण युक्त रचना है । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इसका प्रकाशन वि० स० १९२६ मे किया है, जो अब अप्राप्त है। इस काव्य का सपादन काशिक राजकीय पाठशाला के साख्यशास्त्र के प्रधानाध्यापक प० वेचनराम शर्मा ने किया है। इस काव्य का आद्यन्त इस प्रकार है —

आदि— शुभममितमचिन्त्यचिद्विचित्र श्रुतिशतमूर्धनि केशपाशकल्पम् ।
दिशतु किमपि धाम कामकोटि-प्रतिभटदीधिति वासुदेवसज्ञम् ॥१॥
वहति शिरसि नागसम्भव य स्फुटमनुरागमिवात्मभक्तियुक्ते ।
कटतटविगलन्मदाम्बुदम्भ-श्रितकरुणारसमाश्रये गणेशम् ॥२॥
कविजनरसनाग्रतुङ्ग रङ्ग-स्थलकृतलास्यकलाविलासकाम्या ।
कृतिषु सपदि वाञ्छित यथेच्छ मयि ददती करुणा करोतु वाणी ॥३॥
इह विदधति भव्यकाव्यबन्धान् भुवि यशसे कवयस्तदाप्नुवन्ति ।
इति भवति ममापि काव्यबन्धे व्रजन इवाधिगिरि स्पृहाति पङ्गो ॥४॥
मयि विदधति काव्यबन्धमन्धा स्तवमथवा पिशुना सृजन्तु निन्दाम् ।
अहमिह न बिभेमि कीर्तनीय कथमपि कृष्णकुतूहल मया यत् ॥५॥

अन्त— विप्रैराद्योऽप्यजादेर्विधिवदुपनयादेत्य जन्म द्वितीय ,
हृद्गायत्र्या स्वय ता निजहृदि निदधद् ब्रह्मविच्चित्रकृद्यः ।
साङ्गे वेदेऽप्यधीती सपदि किल ऋचो यस्य विश्वासरूपा-
स्तत्राभिर्व्यक्तमूर्तिर्विभुरपि स मम श्रीधर श्रेयसेऽस्तु ॥७६॥

इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते गोपाललीलाख्ये महाकाव्ये कस-वधो नाम एकोनविंश सर्ग ।

२. कृष्णकुतूहल महाकाव्य —कवि ने इस काव्य की रचना वि.स १५७७ मे अयोध्या मे रहते हुए की है।[1] इसका भी प्रतिपाद्य विषय श्रीकृष्णलीला का

१-अब्दे गोत्रमुनीषुचन्द्रगणिते (१५७७) माघस्य पक्षे सिते-
ऽयोध्यायां निवसन् सता परगुणप्रीत्यात्मना सेवक ।
श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलक श्रीवल्लभेन्द्रानुज ,
काव्य कृष्णकुतूहलाख्यमकृत श्रीरामचन्द्र कवि ।
[गोपाललीला पृ० २५५]

१५६१ १६२०) के प्रथम पुत्र कल्याणरायजी (जन्म सं० १६२५) दस वर्ष की अवस्था में केशवपुरी गुसाईंजी से मिले थे। अतः शताब्दी से अधिक ये विद्यमान रहे यह निश्चित ही है। वि० सं० १५६८ में रचित 'बद्रिकाश्रमवृत्तिपत्रक' नामक एक पत्र आपका प्राप्त होता है जिसका आद्यन्त इस प्रकार है —

श्रीमिवृ र्त प्रकृतिसुन्दरमन्दहास
मापासमुल्लसितमञ्जुलवक्त्रबिम्बम् ।
श्रीमन्दमन्दममलस्मितमप्यसार्भ
बासार्यमिश्रय(क)मर्हं हृदि भावयामि ॥१॥

× × ×

विद्वद्भिः किल कृष्णदासकमुखैः शिष्यैरनेकैर्युतः
सोऽहं श्रीबद्री(दरी)वनान्तमगमं शुक्रे(ज्येष्ठ)शकाब्दे तथा ।
वेदाम्बपतिभूमिते (१४३३) सह नरं नारायणं वीक्षितुं
तत्र व्यासमुनीशसङ्गतिरभूदाकस्मिकी मे शुभा ॥६॥

× × ×

श्रीवल्लभाचार्यमहाप्रभूणां नियोगतो बुद्धिमतां विभाव्य ।
श्रीरामकृष्णाभिधभट्ट एतल्लेख व्यधानीत् पुरतस्त तेषाम् ॥११॥

द्वितीय बृहद्भ्राता महाप्रभु वल्लभाचार्य भारत के प्रसिद्धतम आचार्यों में से हैं। इनका प्रतिपादित पुष्टिमार्ग आज भी भारत के कोने-कोने में फैला हुआ है। इनही के साहचर्य में रह कर रामचन्द्र भट्ट ने समग्र शास्त्रों का अध्ययन किया था और वे इन्हें केवल बड़ा भाई ही नहीं अपितु अपना गुरु भी मानते थे।

रामचन्द्र भट्ट वेदान्त मीमांसा व्याकरण काव्य और साहित्य-शास्त्र के विशिष्ट विद्वान् थे। न केवल विद्वान् ही अपितु वादवेत्ता भी थे। अहर्निश शास्त्रार्थ में रत रहने के कारण कई पराजित वादी आपके विरोधी भी हो गये थे और इसी विरोध-स्वरूप आपको विष भी दे दिया गया था। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ये अल्पायु में ही स्वर्गलोक को प्राप्त हो गए थे।

महाकवि रामचन्द्र भट्ट ने अनेक ग्रंथों का निर्माण किया होगा। वर्तमान में इनके रचित निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त होते हैं। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है —

१—यह पत्र वार्ता साहित्य एक बृहद् अध्ययन पृ० १४५ पर प्रकाशित है।
२—भारतेन्दु ग्रंथावली भाग १ पृष्ठ १६८

अतिशस्तवस्तुवृत्तिर्बहुशस्तन्यस्तनवरसोपाधिः ।
अर्वाचीनकवीनामुपमाता कालिदासोऽभूत् ॥४॥

प्रभवति परनेक पञ्चपाणा समाजे,
निजमतगुणजातिर्दुर्ज्जनस्त्याज्यमूर्ति ।
श्रवणरसनचक्षुर्घ्राणिहृत्त्वक्कदम्बे,
प्रथममिह मनीषी वेत्तु दृष्टान्तमन्त ॥५॥

श्रितभूपचेतसि सता जातु न वक्रादिभावविदम् ।
भुवि कविभिरसुलभादौ विदित सदृश सता सदालोड्य ॥६॥

कृतेराद्यश्लोके मतिमुपयता कर्त्तुमधुना,
न शक्य केनापि क्वचन शतशो वर्णनमिति ।
मुहु श्रुत्वा लोकाञ्जनितकृतिकौतूहलहृदा,
मयोपक्रम्यान्यस्सपदि विहित साहसमिदम् ॥७॥

अस्पृष्टपूर्वकविताच्छविता दधान,
उर्वीश्वरेश्वरमनोतिविनोदनाय ।
श्लोकै शतेन कुतुकात् कविरामचन्द्रो,
रोमावलेः किमपि वर्णनमातनोति ॥८॥

× × ×

अन्त— **श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुज. श्रीवल्लभश्रीगुरो-**
रध्येतु. सममग्रजो गुणिमणे. **श्रीविश्वनाथस्य** च ।
अब्दे वेदमुनीषुचन्द्रगणिते (१५७४) **श्रीरामचन्द्रः** कृती,
रोमालीशतक व्यधात् सकुतुकादुर्वीधरप्रीतये ॥१२५॥
इति **श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृत रोमावलीशृङ्गारशतक** सम्पूर्णम् ।

× × ×

यह काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी एक पूर्ण प्रति विद्याविभाग सरस्वती भडार, काकरोली मे है,[1] और दो अपूर्ण प्रतियें राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर[2] एव शाखा-कार्यालय जयपुर[3] मे है।

---

१ बध ६६।१२, पत्र सख्या १२, प्रथमपत्र लिखित परिचय—"पुस्तकमिद पञ्चनदि-मधुसूदनभट्टस्य । शृङ्गारशतके रामचन्द्रकविकृते ।"–किनारे पर–"लक्ष्मीनाथभट्टीयम् ।"

२ ग्रन्थ न० ११२३५ पत्र सख्या १७

३ विश्वनाथ धारवानन्दल सग्रह, ग्रथांक ३३५ ।

वर्णन ही है। श्रीगोपाललीला काव्य की अपेक्षा इसकी रचना अधिक प्रौढ और प्राञ्जल है।[1] यह काव्य अद्यावधि अप्राप्त है। केवलराम शर्मा ने गोपाललीला के सम्पादकीय उपसंहार में अवश्य उल्लेख किया है कि आरम्भ के दो पत्ररहित इसकी प्रति मुझे प्राप्त हुई है।[2] विशेष शोध करने पर संभव है इस महाकाव्य की अन्य प्रतियाँ भी प्राप्त हो जायें।

प्रस्तुत ग्रन्थ में चन्द्रशेखर भट्ट ने भी मत्तमयूर प्रहर्षिणी वसन्ततिलका प्रहरणकलिका मालिनी पृथ्वी शिखरिणी हरिणी मन्दाक्रान्ता शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के प्रत्युदाहरण कृष्णकुतूहल काव्य के दिये हैं। इन कतिपित् पद्यों का रसास्वादन करने से यह स्पष्ट है कि वस्तुत: यह काव्य महाकाव्य की श्रेणि का ही है।

३ रोमावलीशतकम् —१२५ पद्यों का यह खण्ड काव्य है। वि० सं० १५७४ में इसकी रचना हुई है। यह लघुकाव्य आलंकारिक-भाषा में शृंगार रस से ओत प्रोत है। इसमें कवि ने अनेक छन्दों का प्रयोग किया है। इसका आद्यंत इस प्रकार है —

आदि— श्रीलावण्याम्बिवेलाकलितनवयोवासलालाविशाला
लीला नानाकलानां त्वरितमपसरद्बाल्यवेलाम्बलयीः।
ह्रीमात्स्यप्रवृत्तीनिहितपतिवशीभावभीलादिशिक्षा—
श्रीलास्य रोमराजी हरतु हरिरुचिर्वाष्पवाचां श्रिया नः ॥१॥

व्यासस्यात्रिकवे सुबन्धुविदुषो बाणस्य चान्यस्य वा
वाचामाश्रितपूर्वपूर्वकसामासाद्य काव्यक्रमम्।
अर्वाञ्चो भवभूति मारविमुखा श्रीकालिदासादय
सञ्जाता कवयो वयं तु कविता के नाम कुर्वीमहि ॥२॥

इत्थं जातविकल्पनेऽपि कवितामार्गे कथ सञ्चर—
त्यन्येयं न विकीर्तिमित्यवितरां जागर्ति चिन्ता चिरात्।
तत्कि काव्यमुपक्रमेयकविभि प्राड मर्दिते वाड मये
भारत्या विमदेऽव्यवाप्रतिसुमर्म किं कस्य नाम्यस्यत ॥३॥

१—गोपाललीला की अपेक्षा कृष्णकुतूहल विशेष चमत्कृति वना है।
पारुडेन्दु हरिदत्त गोपाललीला भूमिका।

२—'इदं च कृष्णकुतूहलाख्यं काव्यमारम्भे द्वितीयपत्ररहित मयाधारि।' पृ २५१

अतिशस्तवस्तुवृत्तिर्बहुशस्तन्यस्तनवरसोपाधिः ।
अर्वाचीनकवीनामुपमाता कालिदासोऽभूत् ॥४॥

प्रभवति परलेक पञ्चपाणा समाजे,
निजमतगुणजातिर्दुर्जनस्त्याज्यमूर्ति. ।
श्रवणरसनचक्षुर्घ्राणिहृत्त्वक्कदम्बे,
प्रथममिह मनीषी वेत्तु दृष्टान्तमन्त. ॥५॥

श्रितभूपचेतसि सता जातु न वक्रादिभावविदम् ।
भुवि कविभिरसुलभादौ विदित सदृश सता सदालोड्य ॥६॥

कृतेराद्यश्लोके मतिमुपयता कर्तुमधुना,
न शक्य केनापि क्वचन शतशो वर्णनमिति ।
मुहु श्रुत्वा लोकाज्जनितकृतिकौतूहलहृदा,
मयोपक्रम्यान्यस्सपदि विहित साहसमिदम् ॥७॥

अस्पृष्टपूर्वकविताच्छविता दधान,
उर्वीधरेश्वरमनोतिविनोदनाय ।
श्लोकैः शतेन कुतुकात् **कविरामचन्द्रो,**
रोमावलेः किमपि वर्णनमातनोति ॥८॥

× × ×

अन्त— **श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुज श्रीवल्लभश्रीगुरो-**
रध्येतु सममग्रजो गुणिमणे **श्रीविश्वनाथस्य** च ।
अब्दे वेदमुनीषुचन्द्रगणिते (१५७४) **श्रीरामचन्द्रः** कृती,
रोमालीशतक व्यधात् सकुतुकादुर्वीधरप्रीतये ॥१२५॥

इति **श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृत रोमावलीशृङ्गारशतकं** सम्पूर्णम् ।

× × ×

यह काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी एक पूर्ण प्रति विद्याविभाग सरस्वती भडार, काकरोली में है,[१] और दो अपूर्ण प्रतियें राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर[२] एव शाखा-कार्यालय जयपुर[३] में है।

---

१ बध ६६।१२, पत्र सख्या १२, प्रथमपत्र लिखित परिचय—"पुस्तकमिद पञ्चनदि-मधुसूदनभट्टस्य । शृङ्गारशतके रामचन्द्रकविकृते ।"—किनारे पर—"लक्ष्मीनाथभट्टीयम् ।"

२. ग्रन्थ न० ११२३५ पत्र सख्या १७

३ विश्वनाथ शारदानन्दन सग्रह, ग्रथांक ३३५ ।

४ रसिकरञ्जन स्वोपज्ञटीका-सहित — इस लघुकाव्य का दूसरा नाम शृङ्गारवैराग्यशतम्' भी है। इस काव्य की यह विशेषता है कि प्रत्येक पद्य शृङ्गार और वैराग्य दोनों पक्षों का समानरूप से प्रतिपादन करता है अर्थात् इसे द्वयाश्रय काव्य या द्विसन्धान काव्य भी कह सकते हैं। इसमें कुल १३० पद्य हैं। टीका की रचना स्वयं कवि ने वि० सं० १५८०, अयोध्या में की है। ग्रन्थ का आद्यन्त इस प्रकार है —

आदि— शुभारम्भे दम्भे महितमतिडिम्भेङ्क्रितशत
मणिस्तम्भे रम्भेक्षणसकुचकुम्भे परिणतम्।
अनासम्भे सम्भे पथि पदविसम्भेऽर्मितसुखं,
तमालम्बे स्तम्बेरमवदनमम्बेक्षितमुखम् ॥१॥

× × ×

एकश्लोककृती पुरः स्फुरितया सत्तत्त्वगोष्ठ्या समं
साधूनां सदसि स्फुटां विटकथां को वाच्यवृत्त्या नयेत्।
इत्याकर्ण्य जनश्रुतिं वितनुते श्रीरामचन्द्रः कविः
श्लोकानां सह पञ्चविंशतिशतं शृङ्गारवैराग्ययोः ॥३॥

अन्त— प्रख्यातो यः पदार्थैरमृतहरिगणश्रीसदैः श्लोकयासी
स्फीतातिस्फूर्तिरवद्बुधमुवनुमिरं क्षीरधी रामचन्द्रः।
भ्रातोऽस्मिन् मन्दरागः फणिपतिगुणमृम्यातुमक्ष्णेऽकर्थं न
स्यावामारोऽमुना येविह न विरचितं श्रीमता ब्राह्मणेन ॥१३०॥

× × ×

टीका का उपसंहार—

शृङ्गारवैराग्यशतं सपञ्चविंशत्ययोध्यानगरे व्यधत्त।
अब्दे बिमद्बाणबाणचन्द्रे (१५८०) श्रीरामचन्द्रोऽस्य च तस्य टीकाम् ॥
श्रीरामचन्द्रकविना काव्यमिदं व्यरचि विरतिवीवतया।
रसिकानामपि रतये शृङ्गारार्थोऽपि संगृहीतोऽत्र ॥

पुष्पिका—इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनु-श्रीरामचन्द्रकविकृतं सटीकं रसिकरञ्जनं नाम शृङ्गारवैराग्यार्थसमानं काव्यं सम्पूर्णम्।

यह काव्य वि० सं० १७०३ की लिखित प्रति के आधार से संपादित होकर सन् १८८७ में काव्यमाला के चतुर्थगुच्छक में प्रकाशित हो चुका है, जो कि अब प्रायः अप्राप्य है।

५ श्रृङ्गारवेदान्त—इसका उल्लेख केवल भारतेन्दु हरिश्चन्द्र[1] ने ही किया है, अन्य किसी भी सूचीपत्र में इसका उल्लेख नहीं है। अप्राप्त ग्रथ है। मेरे विचारानुसार सम्भव है रसिकरजन के अपरनाम 'श्रृङ्गारवैराग्यशत' को 'श्रृङ्गारवेदान्त' मान कर भारतेन्दुजी ने लिख दिया हो !

६ दशावतार-स्तोत्रम्—यह स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य वृत्तमौक्तिक[2] मे पञ्चचामर छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप मे उद्धृत हुआ है जो निम्नलिखित है —

अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन—
क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिक्वणत्कुठारभीषण ।
प्रकामवाम जामदग्न्यनाम रामहैहय—
क्षयप्रयत्ननिर्दय व्यय भयस्य जृम्भय ॥

७ नारायणाष्टकम्—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है। मदालस छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये चन्द्रशेखरभट्ट[3] ने यह पद्य इस रूप में दिया है—

कुन्दातिभासि शरदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू—
वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।
वन्दारुविस्म्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत—
च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मज भुवनकन्दाकृतिं हृदि भजे ॥

कवि की प्राप्त रचनाओ मे स १५८० तक का उल्लेख है। अत अनुमान किया जा सकता है कि इसके कुछ समय पश्चात् ही विषप्रयोग से कवि स्वर्गलोक को प्रयाण कर गया हो।

नारायण भट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पुत्र नारायण भट्ट के सम्बन्ध मे कोई विशिष्ट उल्लेख प्राप्त नही है और न इनके द्वारा रचित किसी कृति का उल्लेख ही प्राप्त होता है।

रायभट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पौत्र रायभट्ट के सम्बन्ध में भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नही है। इनका बनाया हुआ श्रृङ्गारकल्लोल नामक १०४ पद्यो का खण्ड-

१—भारतेन्दु ग्रन्थावली, भाग ३, पृ० ५६८
२—वृत्तमौक्तिक पृष्ठ १२६
३— „ १६७

४ रसिकरञ्जन स्वोपज्ञटीका-सहित — इस लघुकाव्य का दूसरा नाम 'शृङ्गारवैराग्यशतम्' भी है। इस काव्य की यह विशेषता है कि प्रत्येक पद्य शृङ्गार और वैराग्य दोनों अर्थों का समानरूप से प्रतिपादन करता है अर्थात् इसे द्व्याश्रय काव्य या द्विसन्धान काव्य भी कह सकते हैं। इसमें कुल १३० पद्य हैं। टीका की रचना स्वयं कवि ने वि० सं० १६८०, अयोध्या में की है। ग्रंथ का आद्यंत इस प्रकार है —

आदि— सुमारम्भे रम्भे महितमतिडिम्भेङ्गितयतं,
मणिस्तम्भे रम्भेक्षणसकुचकुम्भे परिणतम्।
अनालम्बे लम्बे पथि पथिकसम्बेऽमितसुखं
तमालम्बे स्तम्बेरमवदनमम्बेक्षितमुखम् ॥१॥

× × ×

एकश्लोककृती पुरः स्फुरितया सत्तत्त्वगोष्ठ्या समं
साधूनां वदति स्फुटां विटकथां को नाम्यवृत्त्या ममेत्।
इत्याकर्ण्य जनश्रुतिं वितनुते श्रीरामचन्द्रः कविः
श्लोकानां सह पञ्चविंशतिशतं शृङ्गारवैराग्ययोः ॥३॥

अन्त— प्रख्यातो यः पदार्थैरमृतहरियशःश्रीसखैः श्लोकधामी
स्फोतातिस्फूर्तिरुपद्‌बुधमुदनुगिरं श्रीरयी रामचन्द्रः।
भाग्लोऽस्मिन् मन्दरागः फणिपतिगुणभृन्मातृमल्लेसकन न
स्याद्वाधारोऽमुना चेविह न विरचितं श्रीमता वाक्‌मुखेन ॥१३०॥

× × ×

टीका का उपसंहार—
शृङ्गारवैराग्यशतं सपञ्चविंशत्ययोध्यानपरे व्यधत्त।
अब्दे वियद्‌वारणबाणचन्द्रे (१६८०) श्रीरामचन्द्रोऽनु च तस्य टीकाम् ॥
श्रीरामचन्द्रकविना काव्यमिदं व्यरचि विरतिबीजतया।
रसिकानामपि रतये शृङ्गारार्थोऽपि संगृहीतोऽत्र ॥

पुष्पिका—इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनु-श्रीरामचन्द्रकविकृतं सटीकं रसिकरञ्जनं नाम शृङ्गारवैराग्यार्थसमानं काव्यं सम्पूर्णम्।

यह काव्य वि० सं० १७०१ की लिखित प्रति के आधार से संपादित होकर सन् १८८७ में काव्यमाला के चतुर्थगुच्छक में प्रकाशित हो चुका है जो कि अब प्रायः अप्राप्य है।

५. श्रृङ्गारवेदान्त—इसका उल्लेख केवल भारतेन्दु हरिश्चन्द्र[1] ने ही किया है, अन्य किसी भी सूचीपत्र में इसका उल्लेख नहीं है। अप्राप्त ग्रंथ है। मेरे विचारानुसार सम्भव है रसिकरंजन के अपरनाम 'श्रृङ्गारवैराग्यशत' को 'श्रृङ्गारवेदान्त' मान कर भारतेन्दुजी ने लिख दिया हो !

६ दशावतार-स्तोत्रम्—यह स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य वृत्तमौक्तिक[2] में पञ्चचामर छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में उद्धृत हुआ है जो निम्नलिखित है :—

> अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन—
> क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिक्वणत्कुठारभीषण ।
> प्रकामवाम जामदग्न्यनाम रामहैहय—
> क्षयप्रयत्ननिर्दय व्यय भयस्य जृम्भय ॥

७ नारायणाष्टकम्—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है। मदालस छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये चन्द्रशेखरभट्ट[3] ने यह पद्य इस रूप में दिया है—

> कुन्दातिभासि शरदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू—
> वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।
> वन्दारुविभ्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत—
> च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मज भुवनकन्दाकृतिं हृदि भजे ॥

कवि की प्राप्त रचनाओं में सं १५८० तक का उल्लेख है। अतः अनुमान किया जा सकता है कि इसके कुछ समय पश्चात् ही विषप्रयोग से कवि स्वर्गलोक को प्रयाण कर गया हो।

नारायण भट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पुत्र नारायण भट्ट के सम्बन्ध में कोई विशिष्ट उल्लेख प्राप्त नहीं है और न इनके द्वारा रचित किसी कृति का उल्लेख ही प्राप्त होता है।

रायभट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पौत्र रायभट्ट के सम्बन्ध में भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नहीं है। इनका बनाया हुआ श्रृङ्गारकल्लोल नामक १०४ पद्यों का खण्ड-

---

१—भारतेन्दु ग्रन्थावली, भाग ३, पृ० ५६८
२—वृत्तमौक्तिक पृष्ठ १२९
३— ,, १६७

काव्य अवश्य प्राप्त होता है। इस लघुकाव्य में पार्वती और शंकर का शृङ्गार वर्णन किया गया है। इस का उपसंहार और पुष्पिका इस प्रकार है —

उपसंहार—गुम्फो वाचां मसृणमधुरो मालतीनामिव स्यात्,
अर्थो बाध्य प्रसरणपरः सम्मित सौरभस्य।
भावर्यम्यो रस इव रसस्तद्विवाह्लादहेतु
र्मल्लिकास्यो शुकविरचना कस्य भूषा न धत्ते ॥१०४॥

पुष्पिका—इति श्रीविद्यागरिष्ठ-वसिष्ठ-नारायणभट्टात्मजेन महाकविपण्डित राय-भट्टे न विरचितं शृङ्गारकल्लोलनाम खण्डकाव्यम्।

चन्द्रशेखरभट्ट[1] ने मालिनी छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा है —
"अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मम इव रमणीनां रागिणी वारुणीयं,
हृदयमिव युवानस्तस्कराः स्व हरन्ति।
भवनमिव मदीयं नाथ शून्यो हि देश
स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा॥"

इस पद्य को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि काव्य-साहित्य पर आपका अच्छा अधिकार था और यह लघु रचना आपकी सफल रचना है। यह खण्ड काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी १६६६ की लिखित[2] एकमात्र १२ पत्रों की प्रति विद्याविभाग सरस्वती भंडार कांकरोली में सं का बंध ६६।१० पर सुरक्षित है। इस प्रति का द्वितीय पत्र अप्राप्त है।

केटलॉग केटलोगरम् भा १ पृ ४७१ के अनुसार रायभट्टरचित 'यति संस्कार-प्रयोग' नामक ग्रन्थ भी प्राप्त है। रायभट्ट यही है या अन्य कोई विद्वान्? इसका निर्णय प्रति के सम्मुख न होने से नहीं किया जा सकता।

लक्ष्मीनाथ भट्ट—

चन्द्रशेखर भट्ट के पिता एवं कवि रामचन्द्र भट्ट के प्रपौत्र लक्ष्मीनाथ भट्ट के सम्बन्ध में भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नहीं है। प्राप्त रचनाओं में पिङ्गल प्रदीप का रचनाकाल १६५७ है, अतः इनका आविर्भाव-काल १६२० से १६८० के मध्य का माना जा सकता है। इनकी प्राप्त रचनाओं को देखते हुए यह

१ देखें वृत्तमौक्तिक पृ १२८.
२ भूतांकषट्विधुमिते (१६६६) वर्षे वारे निरोत्तम।
शक्रपक्षप्रतिपदि लिखितं हरिवल्लभेनेदम्॥

नि सदेह कहा जा सकता है कि इनका अलङ्कार-शास्त्र, छन्द शास्त्र और काव्य-साहित्य पर एकाधिपत्य था। 'सकलोपनिषद्रहस्यार्णवकर्णधार'[1] विशेषण से सभव है कि इन्होने किसी उपनिषद् पर या उपनिषद्-साहित्य पर लेखिनी अवश्य ही चलाई हो! वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार की रचना १६८७ मे हुई है, अत. अनुमान है कि यह रचना इनकी अन्तिम रचना हो! इनके द्वारा सर्जित प्राप्त साहित्य का सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है —

१. सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका—धाराधिपति भोजनरेन्द्र-प्रणीत इस ग्रन्थ की टीका का नाम 'दुष्करचित्रप्रकाशिका' है। टीकाकार ने इसमे रचना सवत् नही दिया है। टीका के नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि यह विस्तृत परिमाणवाली टीका न होकर दुर्गम स्थलो का विवेचन मात्र है। इसकी एकमात्र ४६ पत्रो की कीटभक्षित प्रति एशियाटिक सोसायटी, कलकता के सग्रह मे सुरक्षित है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है —

आदि— स्मार स्मारमुदारदारविरहव्याधिव्यथाव्याकुल,
राम वारिविबन्धबन्धुरयशःसम्पृष्टदिङ् मण्डलम् ।
श्रीमद्भोजकृतप्रबन्धजलधौ सेतु कवीना मुदो
हेतुं सरचयामि बन्धविविधव्याख्यातकौतुहलै' ।।१।।

अन्त— श्रीरायभट्टतनयेन नयान्वितेन,
धाराधिनाथनृपते सुमते प्रबन्धे ।
प्रोचे यदेव वचन रचन गुणाना,
वाग्देवताऽपि परितुष्यति तेन माता ।।१।।

कुर्वन्तु कवय' कण्ठे दुष्करार्थसुमालिकाम् ।
लक्ष्मीनाथेन रचिता वाग्देवीकण्ठभूषणे ।।२।।

पुष्पिका— इति श्रीमद्रायभट्टात्मज-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टविरचिता सरस्वतीकण्ठाभरणालङ्कारे दुष्करचित्रप्रकाशिका समाप्ता।

२ प्राकृतपिङ्गल-टीका—इस टीका का नाम पिङ्गलप्रदीप या छन्द प्रदीप है। इसकी रचना स १६५७ मे हुई है। प्रौढ एव प्राञ्जल भाषा मे विशद शैली मे विवेचन होने से यह टीका छन्द शास्त्रियो के लिये सचमुच प्रदीप के समान ही है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

---

१. देखें, वृत्तमौक्तिक पृ २९१, २९४, २९६, २९९, ३०१ आदि

आदि— गोपीपीनपयोधरद्वयमिलच्चेलाञ्चलाकर्षण
क्रीडाव्यापृतचारुचञ्चलकराम्भोज व्रजस्कानने ।
द्राक्षामञ्जुलमाधुरीपरिमलद्वाग्विभ्रमं तन्ममा
मद्वैत समुपास्महे यदुकुलालम्बं विचित्र महः ॥१॥

लम्बोदरमवलम्बे स्तम्बेरमवदनमेकदन्तधरम् ।
यम्बेक्षितमुखकमलं न वेदो नापि तत्त्वतो वेद ॥२॥

गङ्गाधीशपयोमयादिव मिलद् भालाक्षिकीलादिव,
व्यालक्ष्वेलजफूत्कृतादिव सदा लक्ष्म्यापवादादिव ।
रुक्षोक्षापादिव कण्ठकालिमकुहूसान्निध्ययोगादिव,
श्रीकण्ठस्य कृशः करोतु कुशलं शीतद्युति श्रीमताम् ॥३॥

विहितदया मन्देष्वपि दत्त्वा मन्देभ वाङ्मय देहम् ।
वन्देऽर्मे सन्देहव्ययाय वन्दे गिरं गिरं देवीम् ॥४॥

भट्टश्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेहः श्रुतो यः
श्रीमान्नारायणाख्यः कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट ।
तत्पुत्रो रायभट्टः सकलकविकुलख्यातकीर्तिस्तदीयो
लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिरं पिङ्गलार्थप्रदीपम ॥५॥

श्रीरायभट्टतनयो लक्ष्मीनाथः समुल्लसत्प्रतिभः ।
प्रायः पिङ्गलसूत्रे तनुते भाष्य विशालमति ॥६॥

अलीकलां तुल्यतमैः खलैः किं रम्येऽपि दोषग्रहणस्वभावैः ।
सतां परानन्दनमन्दिराणां चमत्कृति मत्कृतिरातनोतु ॥७॥

यन्न सूर्येण शमितं नापि रत्नेन भास्वता ।
तत्पिङ्गलप्रदीपेन नाशयतामान्तरं तमः ॥८॥

यद्यस्ति कौतुक छन्दःसन्दर्भविज्ञाने ।
सन्तः पिङ्गलदीपं लक्ष्मीनाथेन दीपित पठत ॥९॥

विज्ञ मत्कृतिरियं चमत्कृतिं चेत्स चेतसि सतां विधास्यति ।
भारती वचतु भारतीभया लब्धया परमतो रसायनम् ॥१०॥

अन्त— इत्यादि गद्यकाव्येषु मया किञ्चित्प्रदर्शितम् ।
विशेषस्तत्र तत्रापि मोक्तो विस्तरशङ्कया ॥१॥
मन्दः कथं ज्ञास्यसि सत्यवार्थमित्याकलय्याशु मया प्रदीप्तम् ।
छन्दःप्रदीप क्रमशो विलोक्य छन्दः समस्तं स्वयमेव वित्त ॥२॥

अब्दे भास्करवाजिपाण्डवरसक्ष्मा (१६५७) मण्डलोद्भासिते,
भाद्रे मासि सिते दले हरिदिने वारे तमिस्रापते ।
श्रीमत्पिङ्गलनागनिर्मितवरग्रन्थप्रदीप मुदे,
लोकाना निखिलार्थसाधकमिम लक्ष्मीपतिर्निर्ममे ॥३॥
विशिष्टस्नेहभरित सत्पात्रपरिकल्पितम् ।
स्फुरद्वृत्तदश छन्द प्रदीप पश्यत स्फुटम् ॥४॥
छन्द प्रदीपक सोऽयमखिलार्थप्रकाशक ।
लक्ष्मीनाथेन रचितस्तिष्ठत्वाचन्द्रतारकम् ॥५॥

पुष्पिका—इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणिश्रीमद्रायभट्टात्मजश्रीलक्ष्मीनाथभट्टविरचिते पिङ्गलप्रदीपे वर्णवृत्ताख्यो द्वितीय परिच्छेद समाप्त ।

डा भोलाशकर व्यास द्वारा सम्पादित प्राकृतपैङ्गलम्, भा. १ मे यह टीका प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी वाराणसी द्वारा सन् १९५९ मे प्रकाशित हो चुकी है।

३ उदाहरणमञ्जरी—यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त है। लक्ष्मीनाथ भट्ट की यह स्वतन्त्र कृति प्रतीत होती है। इस ग्रन्थ मे केवल छन्दो के ही नही, अपितु विपुल सख्या मे प्राप्त छन्द-भेदो के उदाहरण भी दिये गये हैं। यही कारण है कि स्वय लक्ष्मीनाथ ने पिंगलप्रदीप[1] मे और भट्ट चन्द्रशेखर ने वृत्तमौक्तिक[2] मे गाथा, स्कन्धक, दोहा आदि छन्द-भेदो के उदाहरणो के लिये 'उदाहरणमञ्जरी' देखने का आग्रह किया है। स० १६५७ मे रचित पिंगलप्रदीप मे उल्लेख होने से यह निश्चित है कि इसकी रचना १६५७ के पूर्व ही हो चुकी थी।

केटलॉगस् केटलॉगरम्, भाग २ पृष्ठ १३ पर इसका नाम उदाहरणचन्द्रिका दिया है, जो कि भ्रमवाचक है।

४ **वृत्तमौक्तिक-द्वितीयखण्ड का अश**—प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम-खण्ड की रचना चन्द्रशेखर भट्ट ने १६७५ में पूर्ण की है और द्वितीय-खण्ड की समाप्ति होने के पूर्व ही चन्द्रशेखर इस लोक से प्रयाण कर गये। प्रयाण करने के पूर्व इन्होने अपनी आन्तरिक अभिलाषा अपने पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट को बतलाई कि मेरे इस ग्रथ को आप पूर्ण कर दें। सुयोग्य, प्रतिभाशाली, पाण्डवचरित आदि महाकाव्यो के प्रणेता, विनयशील पुत्र की अन्तिम अभिलाषा के अनुसार ही शोकसन्तप्त लक्ष्मीनाथ भट्ट ने अपने पुत्र की कीर्त्ति को अक्षुण्ण रखने के लिये तत्काल ही स० १६७६ कार्त्तिकी पूर्णिमा के दिन इस ग्रथ को पूर्ण कर दिया।

१–देखें, पृष्ठ २९२, ३९५, ३९७, ४०६, ४०९,
२–देखें, पृष्ठ १०, १३, १४, १६, १७, २१, २४,

आदि— गोपीपीनपयोधरद्वयमिलच्चेलाञ्चलाकर्षण
व्यवसित्यापृतचारुचञ्चलकराम्भोज व्रजत्कानने ।
द्राक्षामञ्जुलमाधुरीपरिणमद्वाग्विभ्रम तन्मना
गर्वोत्त समुपास्महे यदुकुलालम्ब विचित्र महः ॥१॥

लम्बोदरमवलम्बे स्तम्बेरमवदनमेकदन्तवरम् ।
अम्बेक्षितमुखकमल यं वेदो नापि तत्त्वतो वेद ॥२॥

गङ्गाधीतपयोमयादिव मिलद् भालाक्षिकीलादिव
व्यालक्ष्वेलजफूत्कृतादिव सदा सकम्पापवादादिव ।
स्वीयापापादिव कण्ठकालिमकुहूसाम्यप्रयोगादिव,
श्रीकण्ठस्य कृश करोतु कुशलं शीतद्युति श्रीमताम् ॥३॥

विहितदया मन्देष्वपि दस्यामन्देन वाङ्मय देहम् ।
शब्देऽर्थे सन्देहभ्रममाय वन्दे चिर गिरं देवीम ॥४॥

भट्टश्रीरामचन्द्र कविविबुधकुले लब्धदेह सुतो य,
श्रीमन्नारायणाख्य कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽस्मभिष्ट ।
तत्पुत्रो रायभट्ट सकलकविकुलख्यातकीर्तिस्तदीयो
लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिर पिङ्गलार्थप्रदीपम ॥५॥

श्रीरायभट्टतनयो लक्ष्मीनाथ समुल्लसत्प्रतिभ ।
प्राय पिङ्गलसूत्रे तनुते भाष्य विशालमति ॥६॥

नमीक्षा तुल्यतमं सती कि रम्येपि दोषग्रहणस्वभावे ।
सतां परानन्दममन्दिराणां चमत्कृति मत्कृतिरातनोतु ॥७॥

यत्र सूर्येण शशिना नापि रत्नेन भास्वता ।
तत्पिङ्गलप्रदीपेन नाश्यतामान्तर तम ॥८॥

यद्यस्ति कौतुक वच्छन्द सन्दर्भविज्ञाने ।
सन्त पिङ्गलदीप लक्ष्मीनाथेन दीपित पठत ॥९॥

विरच्य मत्कृतिरिमं चमत्कृति चेत चेतसि सतां विधास्यति ।
भारती भवतु भारतीभया सज्जया परमसौ रसातमम् ॥१०॥

अन्त— इत्यादि गद्यकाव्येषु मया किञ्चित्प्रदर्शितम् ।
विशेषस्तत्र तत्रापि भीक्ष्यो विस्तरशङ्कया ॥१॥

मन्द मन्द भ्रास्यति मत्पदार्थमित्याकलय्याशु मया प्रदीप्तम् ।
छन्दःप्रदीपं भवतो विलोक्य छन्दः समस्तं स्वयमेव चित्त ॥२॥

पिङ्गल-सम्मत दो नगण, आठ रगण[1] का प्राप्त है, जब कि लक्ष्मीनाथ भट्ट ने 'पिंगलप्रदीप'[2] मे प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। दो नगण, सात यगण के लक्षण को 'वृत्तमौक्तिक मे 'सर्वतोभद्र' दण्डक का लक्षण माना है और मतान्तर का उल्लेख करते हुए लिखा है—'एतस्यैवान्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम् ।'[3] अत मेरे मतानुसार चतुर्थ अर्द्धसम-प्रकरण तक की रचना चन्द्रशेखर भट्ट की है और पचम विषमवृत्त-प्रकरण से अन्त तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की होनी चाहिये। अस्तु

५. वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार—चन्द्रशेखरभट्ट रचित वृत्तमौक्तिक-प्रथम खण्ड के प्रथम गाथा-प्रकरणस्थ पद्य ५१ से ८६ तक के ३६ पद्यों पर यह टीका है। टीकाकार ने इसे ११ विश्रामो मे विभक्त किया है। मात्रोद्दिष्ट, मात्रानष्ट, वर्णोद्दिष्ट, वर्णनष्ट, वर्णमेरु, वर्णपताका, मात्रामेरु, मात्रापताका, वृत्तस्य लघुगुरुसख्या-ज्ञान, वर्णमर्कटी और मात्रामर्कटी नामक विश्राम हैं। छन्द शास्त्र मे यदि कोई कठिनतम विषय है तो वह है प्रस्तार। इसी प्रस्तार-स्वरूप का टीकाकार ने बहुत ही रोचक शैली मे विशद वर्णन किया है, जिससे तज्ज्ञगण सरलता के साथ इस दुष्कर प्रस्तार का अवगाहन कर सकते हैं। इस टीका की रचना स० १६८७ कार्तिककृष्णा पचमी[4] को हुई है। यह टीका प्रस्तुत ग्रथ मे पृ० २९२ से ३२६ तक मे मुद्रित है।

६ शिवस्तुति—यह शायद भगवान् शिव का स्तोत्र है या अष्टक या कविकृत किसी ग्रथ का अश है निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता। वृत्तमौक्तिक[5] मे मदनगृह नामक मात्रिक छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा है— 'यथा वाऽस्मत्पितु शिवस्तुतौ'। अत सभवत यह स्तोत्र ही होना चाहिए। पद्य निम्नलिखित है —

> करकलितकपाल धृतनरमाल
> भालस्थानलहुतमदन कृतरिपुकदन ।
> भवभयहरण गिरिजारमण
> सकलजनस्तुतशुभचरित गुणगणभरितम् ।

१–देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८४

२–'अथ प्रचितको दण्डक —प्रचितकसमभिधो धीरधीभि स्मृतो दण्डको न द्वयादुत्तरै सप्तभिर्यैः। नगणद्वयादुत्तरै सप्तभिर्यगणैर्धीरधीभिः सप्तविंशतिवर्णात्मकचरण प्रचितकाख्यो दण्डक स्मृत ।' [प्राकृतपैंगलम् पृ० ५०६]

३–देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८५

४– „ पृ० ३२६ ५– „ पृ० ४५

याते दिवं सुतनये विनयोपपन्ने,
श्रीचन्द्रशेखरकवौ किल तत्प्रबन्धः ।
विच्छेदमाप भुवि तद्वचसश्च सार्द्धं,
पूर्णीकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ॥८॥

श्रीवृत्तमौक्तिकमिदं लक्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् ।
जीयादाचन्द्रार्कं श्रीचातुर्विधलोकस्य ॥९॥

× × ×

रसमुनिरसचन्द्रैर्मापिते (१६७६) वैक्रमेऽब्दे
सितपक्षकसितेऽस्मिन्कार्त्तिके पौर्णमास्याम् ।
मतिविमलमतिः श्रीचन्द्रमौलिर्विरते,
रुचिरतरमपूर्वं मौक्तिकं वृत्तपूर्वम् ॥६॥

यहाँ यह विचारणीय है कि द्वितीय-खण्ड का कितना अंश चन्द्रशेखरभट्ट ने लिखा है और कितने अंश की पूर्ति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है ? इसका निर्णय करने के लिये वृत्तमौक्तिक का अतरंग आलोडन आवश्यक है ।

ग्रन्थकार की शैली सूत्रकार की तरह संक्षिप्त शैली नहीं है प्रत्येक छन्द का लक्षण कारिकारूप में न देकर उसी लक्षणयुक्त पूर्ण पद्य में दिया है जिससे छन्द का लक्षण और विराम स्पष्ट हो जाते हैं और वह लक्षण उदाहरण का भी कार्य दे सकता है । पश्चात् स्वय रचित उदाहरण और प्राचीन महाकवियों के प्रत्युदाहरण दिये हैं । और दूसरी बात तत्समय मे या प्राचीन छन्दशास्त्रों में प्रयोग प्राप्त प्रत्येक छन्द का लक्षण देने का प्रयत्न किया है। इस प्रकार की शैली हमें द्वितीय-खण्ड के प्रथमवृत्तनिरूपण प्रकरण तक ही प्राप्त होती है । द्वितीय प्रकरण से छन्दों का संक्षिप्तीकरण दृष्टिगोचर होता है । कतिपय स्थलों पर छन्दों के लक्षण उदाहरण-स्वरूप न होकर कारिका-सूत्ररूप में प्राप्त होते हैं। और, उस कारिका को स्पष्ट करने के लिये स्वोपज्ञ टीका प्राप्त होती है जो कि प्रथम प्रकरण तक प्राप्त नहीं है । साथ ही पीछे के प्रकरणों में छन्द शास्त्रों के प्रचलित छन्दों के भी लक्षण न देकर अन्य ग्रंथ देखने का संकेत किया है एवं कई उदाहरणों के लिये 'ऊह्यम्' कह कर या प्रथमचरण मात्र ही दिया है । अत यह अनुमान कर सकते हैं कि प्रथम प्रकरण तक की रचना चन्द्रशेखर भट्ट की है और द्वितीय प्रकरण से १२वें प्रकरण तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की है । किन्तु तृतीय प्रकरण में 'प्रचितक' दण्डक का लक्षण छन्द-सूत्रकार आचार्य

है कि कोई लघुकाव्य का अंश हो। पद्य निम्न है.—

संग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूभृद्विहारी,
शत्रुक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविक्षोभकारी।
माद्यन्मातङ्गकुम्भस्थलगलदमलस्थूलमुक्ताग्रहारी,
स्फारीभूताङ्गधारी जगति विजयते खड्गपञ्चाननस्ते ॥[1]

चन्द्रशेखरभट्ट—

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रणेता चन्द्रशेखर भट्ट लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं। इनकी माता का नाम लोपामुद्रा[2] है। इन्होने अपनी अन्तिम रचना वृत्तमौक्तिक (स० १६७५-७६) मे स्वप्रणीत पाण्डवचरित महाकाव्य और पवनदूत खण्डकाव्य का उल्लेख किया है अत. ये दोनो रचनायें स० १६७५ के पूर्व की हैं। महाकाव्य की रचना के लिए कम से कम २५-३० की अवस्था तो अपेक्षित है ही। इस अनुमान से इनका जन्म १६४० और १६४५ के मध्य माना जा सकता है। स० १६७५ की वसन्त पचमी और स० १६७६ की कार्तिकी पूर्णिमा के मध्य मे इनका अल्पावस्था मे ही स्वर्गवास हो गया था। अनुमान के अतिरिक्त इनके सम्बन्ध मे कोई भी ज्ञातव्य वृत्त प्राप्त नही है। चन्द्रशेखर लक्ष्मीनाथ भट्ट के एकाकी पुत्र थे या इनके और भी भाई थे? और चन्द्रशेखर के भी कोई सन्तान थी या नही? इनकी वश-परपरा यही लुप्त हो गई या आगे भी कुछ पीढियो तक चली? आदि प्रश्न तिमिराछन्न ही हैं। इस सम्बन्ध मे तो एतद्देशीय भट्ट-वश के विद्वान् ही प्रकाश डाल सकते हैं।

ग्रन्थकार द्वारा सर्जित साहित्य इस प्रकार है—

१ **पाण्डवचरित महाकाव्य**—स्वय ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ में 'द्रुतविलम्बित, मालिनी, शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के उदाहरण एवं प्रत्युदाहरण देते हुये 'मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये, ममैव पाण्डवचरिते,' लिखा है। अत उल्लिखित पद्य यहाँ दिये जा रहे हैं—

मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे[3] —

नृपु विलक्षणमस्यपुनर्वपुस्सहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम्।
सकललक्षणलक्षितमद्‌भुत न घटते रथकारकुलोचितम् ॥

---

१. वृत्तमौक्तिक पृ. १६०

२. छन्द शास्त्रपयोनिधिलोपामुद्रापति पितरम्।
श्रीमल्लक्ष्मीनाथ सकलागमपारग वन्दे ॥ पृ २६०

३. वृत्तमौक्तिक पृ. ९२,

कृतफणिपतिहार त्रिभुवनसारं
वक्षमखक्षयसंक्षुब्ध रमणीलुब्धं ।
गमराजितगरलं गङ्गाविमल
कैलाशाचलधामकलं प्रणमामि हरम् ।।

यह पूर्ण स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है ।

७. नन्दनन्दनाष्टक—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है । इसका केवल एक पद्य चर्चरी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्राप्त है —

'यथा वा अस्मत्तातचरणानां श्रीनन्दनन्दनाष्टके—'

मन्दहासविराजितं मुनिवृन्दवन्द्यपदाम्बुज
सुन्दराधरमन्दराधरधारि चारुलसद्भुजम् ।
गोपिकाकुचयुग्मकुंकुमपङ्करूषितवक्षस
नन्दनन्दनमाश्रये मम किं करिष्यति भास्करिः ।

८ सुन्दरीध्यानाष्टकम्—यह अष्टकस्तोत्र भी अप्राप्त है। इसका भी केवल एक पद्य चर्चरी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्राप्त है—

यथा वा तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके'—

कल्पपादपवाटिकावृतदिव्यसौधमहार्णवे
रत्नसङ्घकृतान्तरीपसुनीपराजिविराजिते ।
चिन्तितार्थविधानदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगां
मुक्तिपादपवल्लरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ।।

९ देवीस्तुति—यह देवीस्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ मे हीरं छन्द' के प्रत्युदाहरण-रूप मे प्राप्त है'—

पाहि जननि ! शम्भुरमणि ! शुम्भदलनपण्डिते ।
सारतरसरसजनितहारनवमयमण्डिते !
भासुरचिरचन्द्रचारुसद्योमि सकलनन्दिते !
देहि सततभक्तिमतुलमुक्तिमखिलवन्दिते ।

१० गङ्गास्तव—इसका एक पद्य स्रग्धराछन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्रस्तुत ग्रन्थ में प्राप्त है। संभवत कविरचित यह स्फुट पद्य हो या हो सकता

१ २ वृत्तमौक्तिक पृ १४४
३ वृत्तमौक्तिक पृ ४१

है कि कोई लघुकाव्य का अश हो ! पद्य निम्न है.—

> सग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूभृद्विहारी ,
> शत्रुक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविक्षोभकारी ।
> माद्यन्मातङ्गकुम्भस्थलगलदमलस्थूलमुक्ताग्रहारी ,
> स्फारीभूताङ्गधारी जगति विजयते खङ्गपञ्चाननस्ते ॥[1]

चन्द्रशेखरभट्ट—

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रणेता चन्द्रशेखर भट्ट लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं । इनकी माता का नाम लोपामुद्रा[2] है । इन्होने अपनी अन्तिम रचना वृत्तमौक्तिक (स० १६७५-७६) मे स्वप्रणीत पाण्डवचरित महाकाव्य और पवनदूत खण्डकाव्य का उल्लेख किया है अत ये दोनो रचनायें स० १६७५ के पूर्व की हैं । महाकाव्य की रचना के लिए कम से कम २५-३० की अवस्था तो अपेक्षित है ही । इस अनुमान से इनका जन्म १६४० और १६४५ के मध्य माना जा सकता है । स० १६७५ की वसन्त पचमी और स० १६७६ की कार्तिकी पूर्णिमा के मध्य मे इनका अल्पावस्था मे ही स्वर्गवास हो गया था । अनुमान के अतिरिक्त इनके सम्बन्ध मे कोई भी ज्ञातव्य वृत्त प्राप्त नही है । चन्द्रशेखर लक्ष्मीनाथ भट्ट के एकाकी पुत्र थे या इनके और भी भाई थे ? और चन्द्रशेखर के भी कोई सन्तान थी या नही ? इनकी वश-परपरा यही लुप्त हो गई या आगे भी कुछ पीढियो तक चली ? आदि प्रश्न तिमिराच्छन्न ही हैं । इस सम्बन्ध मे तो एतद्देशीय भट्ट-वश के विद्वान् ही प्रकाश डाल सकते हैं ।

ग्रन्थकार द्वारा सर्जित साहित्य इस प्रकार है—

१ पाण्डवचरित महाकाव्य—स्वय ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ मे 'द्रुतविलम्बित, मालिनी, शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के उदाहरण एवं प्रत्युदाहरण देते हुये 'मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये, ममैव पाण्डवचरिते,' लिखा है । अत उल्लिखित पद्य यहाँ दिये जा रहे हैं—

मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे[3] —

> नृपु विलक्षणमस्यपुनर्वपुस्सहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम् ।
> सकललक्षणलक्षितमद्भुत न घटते रथकारकुलोचितम् ॥

---

१. वृत्तमौक्तिक पृ. १६०

२ छन्द शास्त्रपयोनिधिलोपामुद्रापति पितरम् ।
श्रीमल्लक्ष्मीनाथ सकलागमपारग वन्दे ॥ पृ २६०

३. वृत्तमौक्तिक पृ. ६२,

यथा वा, तत्रैव विदुरोक्तौ—

भिदुरनामसमासुचिचक्षुपं स विदुरो निनदैरतिभीषणैः ।
सकलबालपराक्रमवर्णने सदसि भूमिपतिं समबोधयत् ॥

× × ×

यथा वा पाण्डवचरिते —

भवनमिव ततस्ते बाणजालैरकुर्वन्
गजरथहयपृष्ठे बाहुयुद्धे च दक्षा ।
विधृतमिषितसङ्ग्रामधर्मेणा भाषमाना
विदधुरथ समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ॥

× × ×

यथा वा ममैव पाण्डवचरिते अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्[1] —

शर्म यस्य ममारमजादपि घना शस्त्रास्त्रशिक्षाधिकं
पार्थः सोऽर्जुनसंज्ञकोऽत्र सकलैः कौतूहलाद् दृश्यताम् ।
श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवची गोधाङ्गुलित्राणवान्
पार्थस्तूणधरासनादिरुचिरस्समाजगाम द्रुतम् ॥

× × ×

यथा, ममैव पाण्डवचरिते[2]

दृष्टेनास्य द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र दत्तास्यनुज्ञ
कर्णोऽपि प्राप्तनामस्सदसि कुरुपतेरद्धयुद्धार्थमागात् ।
जम्भाराति स्वसूनोरुपरि घनभरैस्संध्यधादातपत्र
चण्डांशुश्चापि कर्णोपरि निजकिरणालातलामातिदीताद् ॥

इन पांचों पद्यों की रचनाशैली, शब्दयोजना लाक्षणिकता और प्रालंकारिक योजना को देखते हुये निःसंदेह कह सकते हैं कि यह काव्य गुणों से परिपूर्ण महाकाव्य ही है। लघुवयस्क की रचना होते हुये भी इसमें भावों की प्रौढ़ता और भाषा की प्रांजलता परिलक्षित होती है। खेद है कि यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त है। संभव है शोधकर्ताओं को शोध करते हुये यह महाकाव्य प्राप्त हो जाय तो ग्रन्थकार के जीवन और दर्शन पर अधिक प्रकाश डाला जा सके।

१–वृत्तमौक्तिक पृ १२१ २–पृष्ठ १२१ ३–पृ १६

२ पवनदूतम्—यह खण्डकाव्य है। इसको 'दूतम्' शब्द से मेघदूत या किसी दूत-काव्य की पादपूर्तिरूप तो नहीं समझना चाहिए किन्तु रचना इसकी मेघदूत के अनुकरण पर ही हुई है। कृष्ण के मथुरा चले जाने पर राधा पवन के द्वारा सदेश भेजती है और स्वय की मानसिक-अवस्था का दिग्दर्शन कराती है। यह खण्डकाव्य भी अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ मे शिखरिणी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप मे प्राप्त है—

यथा वा, ममैव पवनदूते खण्डकाव्ये[1] —

> यदा कसादीना निधनविषये यादवपुरी,
> गत श्रीगोविन्द पितृभवनतोऽक्रूरसहित ।
> तदा सद्योन्मीलद्विरहदहनज्वालगहने,
> पपात श्रीराधा कलिततदसाधारणगतिः ॥

३. प्राकृतपिङ्गल-'उद्योत' टीका—प्राकृतपिङ्गल मे दो परिच्छेद हैं—१ मात्रावृत्त परिच्छेद और २ वर्णिकवृत्त परिच्छेद। यह उद्योत नामक टीका प्रथम परिच्छेद पर है। इसकी रचना स १६७३ मे हुई है। वैसे तो इस पर बीसो टीकायें है जिनमे रविकर, पशुपति, लक्ष्मीनाथभट्ट, वशीधर आदि की मुख्य है, किन्तु इस टीका की विशेषता यह है कि प्रस्तार और मात्रिक-छदो का विवेचन लालित्यपूर्ण भाषा मे होते हुये भी सरलीकरण को लिये हुये है। पाण्डित्य-प्रदर्शन की अपेक्षा वर्ण्यविषय का अधिक स्पष्टता के साथ प्रतिपादन किया है। इसकी १८वी शती की लिखित ४५ पत्रो की एकमात्र-प्रति अनूप सस्कृत लाय्ब्रेरी, बीकानेर मे ग्रन्थ न ५४१२ पर सुरक्षित है। यह कृति प्रकाशन-योग्य है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

आदि— अहितहृदयकील गोपनारीसुलील,
> सजलजलदनील लोकसत्राणशीलम् ।
> उरसि निहितमाल भक्तवृन्दस्य पाल,
> कलय दनुजकाल नन्दगोपालबालम् ॥१॥
> तातसरचितपिङ्गलदीपध्वस्तचितघनमोहनसतति (?)
> अर्थभारयुतपिङ्गलभावोद्योतमाचरति चन्द्रशेखर ॥२॥
> श्रीमत्पिङ्गलनागोक्त सूत्राणा विशदार्थिका ।
> शिष्यावबोधसिद्धयर्थं सक्षिप्ता वृत्तिरुच्यते ॥३॥

[1]—वृत्तमौक्तिक पृ १३६

प्रशस्त— श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तमात्रावृत्तप्रकाशकम् ।
पिङ्गलोद्योतममलमविस्तृतमपि स्फुटम् ।।
हराक्षिमुनिप्राणस्त्रेन्दुमितेऽब्दे (१६७३) मासि चाश्विने ।
सिते मिते चन्द्रशेखरः संव्यरीरचत् ।।

पुष्पिका—इति महामहोपाध्यायालङ्कारिकचक्रचूडामणि छन्दःशास्त्रप्रख्यातपरमाचार्य-वेदान्तार्णवकर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकात्मज-चन्द्रशेखरभट्टविरचितायां पिङ्गलोद्योताख्यायां सूत्रवृत्तौ मात्रावृत्ताख्यः प्रथमः प्रकाशः समाप्तः । समाप्तश्चायं सूत्रवृत्तौ प्रथमः खण्डः ।

संयोज्य पाणियुगलं याचे साधूनहं किमपि ।
मत्सररहितैर्यत्नात् संशोध्यं मे क्वचित् स्खलितम् ।।

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने वृत्तमौक्तिक-वार्तिकदुष्करोद्धार'[1] में इस पिंगलोद्योत टीका के उद्धरण दिए हैं ।

४ वृत्तमौक्तिकम्—छन्दःशास्त्र का प्रस्तुत ग्रन्थ है । इसमें दो खण्ड हैं । प्रथम मात्रावृत्त खण्ड जिसकी १६७५ में रचना हुई है और द्वितीय वर्णवृत्त खण्ड है जिसकी रचना १६७६ में हुई है । इस ग्रन्थ का विशद परिचय आगे दिया जायगा ।

केटलॉगस केटलॉगरम् भाग १ पृष्ठ १८१ पर भट्ट चन्द्रशेखर रचित गंगादासीय छन्दोमञ्जरी की टीका 'छन्दोमञ्जरीजीवन' का भी उल्लेख है । इसकी एकमात्र प्रति इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन में है यह प्रति बंगला लिपि में लिखी हुई है । इस टीका का मंगलाचरण निम्न है—[2]

वाणी कमलामभितो दोर्भ्यामालिङ्गितो योऽसौ ।
त नारायणमादि सुरतरुकल्पं सदा वन्दे ।।१।।
छन्दसां मञ्जरी तन्त्राभिधेया स्फुटमामुना ।
तस्या कि जीवनं न स्याच्चन्द्रशेखरभारती ।।२।।

किन्तु इस टीका के मंगलाचरण में टीकाकार ने अपना नाम चन्द्रशेखर

१—वृत्तमौक्तिक पृ १ १ ११

२—राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के सञ्चालक श्री गोपालनारायणजी बहुरा ने इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन के कार्यवाहकों से सम्पर्क करके इस प्रति के प्रारम्भ भाग की फोटोकॉपी मँगवा कर अवलोकन की इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ ।—स

भारती दिया है न कि चन्द्रशेखर भट्ट। चन्द्रशेखर भट्ट ने अपनी कृतियो मे अपने नाम के साथ कही भी 'भारती' शब्द का प्रयोग नही किया है। अपने नाम के साथ सर्वत्र भट्ट एव लक्ष्मीनाथात्मज का प्रयोग किया है। अत यह स्पष्ट है कि छन्दोमञ्जरीजीवन के कर्ता चन्द्रशेखर भट्ट नही है, अपितु कोई चन्द्रशेखर भारती हैं। सभव है चन्द्रशेखर नाम-साम्य से भ्रमवशात् सम्पादक ने लिख दिया हो।

वृत्तमौक्तिक का सारांश

नामकरण—

कवि चन्द्रशेखर भट्ट ने प्रस्तुत ग्रथ का नाम 'वृत्तमौक्तिकम्'[1] रखा है, किन्तु द्वितीय-खण्ड के ग्यारहवे प्रकरण मे 'वार्तिक वृत्तमौक्तिकम्'[2] तथा प्रथम खण्ड एव द्वितीय-खण्ड की पुष्पिका मे 'वृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके'[3] और प्रथम-खण्ड के १,३,४,५वें प्रकरणो की तथा द्वितीय-खण्ड के प्रकरण ५, ७ से १० की पुष्पिकाओ मे 'वृत्तमौक्तिके वार्त्तिके'[4] का उल्लेख है। लक्ष्मीनाथ भट्ट ने इस ग्रथ का नाम 'वृत्तमौक्तिक-वार्तिक' ही स्वीकार किया है, इसीलिए टीका का नाम भी 'वृत्तमौक्तिवार्त्तिकदुष्करोद्धार'[5] रखा है। वस्तुत प्राकृतपिंगल, छन्द-सूत्र एव प्राकृतपिंगल के टीकाकार पशुपति और रविकर की टीकाओ और शम्भु[6] प्रणीत छन्दश्चूडामणि (?) के आधार एव अनुकरण पर पिंगल के वार्त्तिक-रूप में ग्रन्थकार ने इसकी स्वतन्त्र रचना की है। अत वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक नाम स्वीकार कर सकते हैं, किन्तु मूलत अधिकाश स्थानों पर ग्रन्थकार ने एव टीकाकार महोपाध्याय मेघविजयजी ने 'वृत्तमौक्तिकम्' मौलिक नाम ही ग्रहण किया है, जो कि अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

ग्रन्थ का सारांश—

प्रस्तुत ग्रन्थ दो खण्डों मे विभक्त हैं। प्रथम-खण्ड मात्रावृत्त खण्ड[7] और द्वितीय-खण्ड वर्णिकवृत्त खड[8] है।

१—श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम्। पृ० १,
स्पष्टार्थं वरवृत्तमौक्तिकमिति ग्रथ मुदा निर्ममे। पृ० २९०
श्रीवृत्तमौक्तिकमिदम्। पृ० २९१

२—पृ० २७२ ३—पृ० ५६ एव २९१

४—देखें पृ० १३, ३०, ४६, ४९, १९४, २०६, २१०, २६७, २७१

५—देखें, वार्तिक-दुष्करोद्धार का मगलाचरण एव प्रत्येक विश्राम की पुष्पिका।

६—रविकर-पशुपति-पिङ्गल-शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्बन्धात्। पृ० २७३

७—तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमे। पृ० २७३

८—अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णवृत्तस्य। पृ० २७६

अन्त— श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तमात्रावृत्तप्रकाशकम् ।
पिङ्गलोद्योतमसममविस्तृतमपि स्फुटम् ।।
हराक्षिमुनिशीतांशुमितेऽब्दे (१६७२) मासि चाश्विने ।
सिते मिते चन्द्रशेखरः समरीरचत् ।।

पुष्पिका—इति महामहोपाध्यायालङ्कारिकचक्रचूडामणि छन्दःशास्त्रप्रस्थानपरमाचार्य-वेदान्तार्णवकर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकात्मज चन्द्रशेखरभट्टविरचितायां पिङ्गलोद्योताख्यायां सूत्रवृत्तौ मात्रावृत्ताख्यः प्रथमः प्रकाशः समाप्तः । समाप्तश्चायं सूत्रवृत्तौ प्रथम खण्ड ।

समोज्य पाणियुगलं याचे साधूनहं किमपि ।
मत्सररहितैर्यत्नात् संशोध्यं मे क्वचित् स्खलितम् ।।

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने 'वृत्तमौक्तिक-वार्तिकदुष्करोद्धार'[1] में इस पिंगलोद्योत टीका के उद्धरण दिए हैं ।

४ वृत्तमौक्तिकम्—छन्द शास्त्र का प्रस्तुत ग्रन्थ है । इसमें दो खंड हैं । प्रथम मात्रावृत्त खंड जिसकी १६७५ में रचना हुई है और द्वितीय वर्णवृत्त खंड है जिसकी रचना १६७६ मे हुई है । इस ग्रन्थ का विशद परिचय आगे दिया जायगा ।

केटलॉगस केटलॉगरम् भाग १ पृष्ठ १८१ पर भट्ट चन्द्रशेखर रचित गंगादासीय छन्दोमंजरी की टीका 'छन्दोमञ्जरीजीवन' का भी उल्लेख है । इसकी एकमात्र प्रति इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन[2] में है यह प्रति बंगला लिपि में लिखी हुई है । इस टीका का मंगलाचरण निम्न है—

वाणीं कमलासमिती दोर्भ्यामालिङ्गितो योऽसौ ।
त नारायणमादिं सुरतरुरस्य सदा वन्दे ।।१।।
छन्दसां मञ्जरी तस्याभिधेया स्फुटमामुना ।
तस्या विं जीवन न स्याच्चन्द्रशेखरभारती ।।२।।

किन्तु इस टीका के मंगलाचरण में टीकाकार ने अपना नाम चन्द्रशेखर

१—वृत्तमौक्तिक पृ ३ ४ २११

२—राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के तत्कालीन श्री गोपालनारायणजी बहुरा ने इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन के कार्यवाहकों से सम्पर्क करके इस प्रति के आवश्यक अंश की फोटोस्टेट मंगवा कर अवलोकन को सुलभ किया। मैं उनका आभारी हूँ।—सं

गाथा के विगाथा, गाहू, उद्‌गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक आर्या-भेदो का नामोल्लेख कर गाथा का लक्षण और आर्या[1] का सामान्य लक्षण उदाहरण सहित दिया है। प्राचीन परम्परा के अनुसार आर्या का विशिष्ट भेद दिखाया है जिसके अनुसार एक जगणयुक्त आर्या कुलीना, दो जगणयुक्त आर्या अभिसारिका, तीन जगणयुक्त आर्या रण्डा और अनेक जगणयुक्त आर्या वेश्या कहलाती है।[2] गाथा छन्द के २५ भेदो के नाम और लक्षण देकर उदाहरणो के लिये स्वपिता लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमजरी' देखने का सकेत किया है।

विगाथा, गाहू, उद्‌गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक छन्दो के उदाहरण सहित लक्षण दिये हैं और स्कन्धक छन्द के २८ भेदो के नाम और लक्षण देते हुये उदाहरणो के लिये 'उदाहरणमजरी' का उल्लेख किया है।

इस प्रकार प्रथम प्रकरण में छन्दसख्या की दृष्टि से गाथादि ७ छद और गाथा के २५ भेद एवं स्कन्धक के २८ भेदो का प्रतिपादन है।

२ षट्पद प्रकरण

इस प्रकरण मे दोहा, रसिका, रोला, गन्धानक, चौपैया, घत्ता, घत्तानन्द, काव्य, उल्लाल और षट्पद छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। इसमे उल्लाल छन्द का उदाहरण नही है। साथ ही दोहा के २३ भेद, रसिका के ८ भेद रोला के १३ भेद, काव्य के ४५ भेद और षट्पद के ७१ भेदो के नाम और लक्षण दिये हैं तथा इन समस्त भेदो के उदाहरणो के लिए कवि ने 'उदाहरण-मजरी' देखने का सकेत किया है। इसमे काव्य के प्रथम भेद शक्रछन्द का उदाहरण भी दिया है।

चौपैया छन्द के एक चरण मे ३० मात्रायें होती हैं। ग्रथकार ने चार चरणो का अर्थात् १२० मात्राओ का एक पाद स्वीकार कर चार पदो की ४८० मात्रा स्वीकार की है।

प्रकरण के अन्त मे काव्य और षट्पद के प्राकृत और सस्कृत साहित्य के अनुसार दोषो का निरूपण है।

१–सस्कृत साहित्य मे जिसे आर्या कहते हैं, उसे प्राकृत और अपभ्र श साहित्य मे गाथा कहते हैं। "आर्यैव सस्कृतेतरभाषासु गाथासज्ञेति।" हेमचन्द्रीय-छन्दोनुशासन, पत्र १२८।

२–एकस्मात् कुलीना, द्वाभ्यामभिसारिका भवति।
नायकहीना रण्डा, वेश्या बहुनायका भवति॥ पृ० ६

प्रथम खण्ड मे छह प्रकरण हैं —१ गाथाप्रकरण २ षट्पदप्रकरण ३ रड्डाप्रकरण ४ पद्मावतीप्रकरण ५ सवैयाप्रकरण और ६ गलित प्रकरण।

द्वितीय-खण्ड में बारह प्रकरण हैं —१ वर्णवृत्त प्रकरण, २ प्रकीर्णक वृत्त प्रकरण ३ दण्डक प्रकरण ४ अर्धसमवृत्त प्रकरण ५ विषमवृत्त प्रकरण ६ वैतालीय प्रकरण ७ यतिनिरूपण प्रकरण ८ गद्य निरूपण प्रकरण ९ विरुदावली प्रकरण १० खण्डावली प्रकरण ११ विरुदावली-खण्डावली का दोषप्रकरण और १२ दोनों खण्डों की अनुक्रमणिका।

द्वितीय-खण्ड के नवम विरुदावली प्रकरण में चार अवान्तर प्रकरण हैं— १ कलिका प्रकरण २ चण्डवृत्त प्रकरण ३ त्रिभङ्गीकलिका प्रकरण और ४ साधारण चण्डवृत्त प्रकरण।

इस प्रकार दोनों खण्डों के १८ प्रकरण होते हैं और नवम प्रकरण के चारों अवान्तर प्रकरण सम्मिलित करने पर कुल २२ प्रकरण होते हैं।

प्रथम खण्ड का सारांश

१ गाथा प्रकरण

कवि मंगलाचरण एवं ग्रंथ प्रतिज्ञा करके वर्णों की गुरु-लघु स्थिति का उदाहरण सहित वर्णन और लक्षण रहित काव्य का अनिष्ट फल का प्रतिपादन करता है। मात्राओं की टगणादि गणों की व्यवस्था और उनके प्रस्तार का निरूपण करते हुए मात्रिक-गणों के नाम तथा उनके पर्यायों की पारिभाषिक-सांकेतिक शब्दों की तालिका[1] देता है। पश्चात् वर्णिकवृत्तों के मगणादि गण गणदेवता गणों की मैत्री और गणदेवों का फलाफल प्रदर्शित है।

प्रस्तार का वर्णन करते हुये मात्रोद्दिष्ट मात्रानष्ट वर्णोद्दिष्ट वर्णनष्ट वर्णमेरु वर्णपताका, मात्रामेरु मात्रापताका वृत्तद्वयस्य गुरु-लघुज्ञान वर्णमर्कटी और मात्रामर्कटी का दिग्दर्शन कराते हुये प्रस्तारपिण्ड-संख्या का निर्देश किया है जिसके अनुसार समवृत्तों की प्रस्तार संख्या १३ ४२ १७ ७२६ होती है।

१-दमलो. पाण्डवादवापि कथमुक्ते प्रकाशितम्।
हासितानि ग्रन्थ एव पठिर वृत्तमौक्तिके ॥ पृ २८६
१-पारिभाषिक शब्द तालिका के लिए प्रथम परिशिष्ट देखें।

गाथा के विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक आर्या-भेदो का नामोल्लेख कर गाथा का लक्षण और आर्या[1] का सामान्य लक्षण उदाहरण सहित दिया है। प्राचीन परम्परा के अनुसार आर्या का विशिष्ट भेद दिखाया है जिसके अनुसार एक जगणयुक्त आर्या कुलीना, दो जगणयुक्त आर्या अभिसारिका, तीन जगणयुक्त आर्या रण्डा और अनेक जगणयुक्त आर्या वेश्या कहलाती है।[2] गाथा छन्द के २५ भेदो के नाम और लक्षण देकर उदाहरणो के लिये स्वपिता लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमजरी' देखने का सकेत किया है।

विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक छन्दो के उदाहरण सहित लक्षण दिये हैं और स्कन्धक छन्द के २८ भेदो के नाम और लक्षण देते हुये उदाहरणो के लिये 'उदाहरणमजरी' का उल्लेख किया है।

इस प्रकार प्रथम प्रकरण मे छन्दसख्या की दृष्टि से गाथादि ७ छद और गाथा के २५ भेद एव स्कन्धक के २८ भेदो का प्रतिपादन है।

२. षट्पद प्रकरण

इस प्रकरण में दोहा, रसिका, रोला, गन्धानक, चौपैया, घत्ता, घत्तानन्द, काव्य, उल्लाल और षट्पद छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। इसमे उल्लाल छन्द का उदाहरण नही है। साथ ही दोहा के २३ भेद, रसिका के ८ भेद रोला के १३ भेद, काव्य के ४५ भेद और षट्पद के ७१ भेदो के नाम और लक्षण दिये हैं तथा इन समस्त भेदो के उदाहरणो के लिए कवि ने 'उदाहरण-मजरी' देखने का सकेत किया है। इसमे काव्य के प्रथम भेद शक्रछन्द का उदाहरण भी दिया है।

चौपैया छन्द के एक चरण मे ३० मात्रायें होती हैं। ग्रथकार ने चार चरणो का अर्थात् १२० मात्राओ का एक पाद स्वीकार कर चार पदो की ४८० मात्रा स्वीकार की है।

प्रकरण के अन्त में काव्य और षट्पद के प्राकृत और सस्कृत साहित्य के अनुसार दोषो का निरूपण है।

१–सस्कृत साहित्य मे जिसे आर्या कहते हैं, उसे प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य मे गाथा कहते हैं। "आर्यैव सस्कृतेतरभाषासु गाथासंज्ञेति।" हेमचन्द्रीय-छन्दोनुशासन, पत्र १२८।

२–एकस्मात्तु कुलीना, द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति।
नायकहीना रण्डा, वेश्या बहुनायका भवति ॥ पृ० ९

३ रड्डा प्रकरण

इस प्रकरण में पज्झटिका अडिल्ला पादाकुलक चौबोला और रड्डा छन्द के लक्षण एवं उदाहरण हैं। अन्त में रड्डा छन्द के सात भेद —करभी, नन्दा मोहिनी चारुसेना भद्रा, राजसेना और तालकिनी के लक्षण मात्र दिये हैं और इनके उदाहरणों के लिए सुधीभिः स्वयमूह्यम् कह कर प्रकरण समाप्त किया है।

४ पद्मावती प्रकरण :

इस प्रकरण में पद्मावती कुण्डलिका गगनांगण द्विपदी झुल्लणा खञ्जा शिखा माला चूलिमाला सोरठा हाकलि मधुभार आभीर दण्डकला काम कला रुचिरा दीपक सिंहविलोकित प्लवंगम लीलावती हरिगीतम् त्रिभंगी दुर्मिलका हीरं जनहरण मदनगृह और मरहठा छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। हरिगीत छन्द के १ हरिगीतम् २ हरिगीतकम् ३ मनोहर हरिगीत और ४ ५, मतिभेद से लक्षण-क्रम सहित हरिगीता के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

सोरठा हाकलि दीपक हीर और मदनगृह छन्द के प्रत्युदाहरण भी हैं।

५ सवैया प्रकरण :

इस प्रकरण में मदिरा मालती, मल्ली मल्लिका माधवी और मागधी सवैयों के लक्षण देकर क्रमशः इनके उदाहरण दिये हैं। अन्त में घनाक्षर छन्द का लक्षण एवं उदाहरण दिया है।

६ गलितक प्रकरण

इस प्रकरण में गलितकम् विगलितकम् संगलितकम् सुन्दरगलितकम् भूषणगलितकम् मुखगलितकम् विलम्बितगलितकम् समगलितकम् अपरं समगलितकम् अपरं सगलितकम् अपरं लम्बितागलितकम् विक्षिप्तिकागलितकम् लम्बितागलितकम विषमितागलितकम् मालागलितकम्, मुग्धमालागलितकम् और उद्गलितकम् छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं।

प्रथमखण्ड के छन्द एवं भेदों का प्रकरणानुसार वर्गीकरण इस प्रकार है—

प्रकरण संख्या	छन्द संख्या	छन्द भेद नाम	भेद संख्या	मूलभेद की न्यूनता	कुल
१	७	गाथा	२५	१	५८
		स्कन्धक	२८	१	

प्रकरण सख्या	छन्द सख्या	छन्द भेद नाम	भेद सख्या	मूल भेद की न्यूनता	कुल
२	६	दोहा	२३	१	१६४
		रसिका	८	१	
		रोला	१३	१	
		काव्य	४५	१	
		षटपदी	७१	१	
३	१२	रड्डा		१	११
४	२७	हरिगीत	५	१	३१
५	७		०	०	७
६	१७		०		१७
६	७९		२१८	९	२८८

छन्द का मूल भेद, छन्द-भेद-सख्या मे सम्मिलित होने से ९ भेद कम होते हैं। अत भेद सख्या २१८ मे से ९ कम करने पर २०९ होते हैं और ७९ छद सख्या सम्मिलित करने पर कुल २८८ छन्द होते हैं। अर्थात् मूल छद ७९ और भेद २०९ हैं।

इस प्रकार कवि चद्रशेखर भट्ट ने वि स १६७५ वसत पचमी को इसका प्रथम-खण्ड पूर्ण किया है।

द्वितीय-खण्ड का सारांश

१ वर्णिकवृत्त प्रकरण

कवि चद्रशेखर 'गौरीश' का स्मरण कर वर्णिक छन्द कहने की प्रतिज्ञा करता है और एकाक्षर से छब्बीस अक्षरो तक के वर्णिकवृत्तो के लक्षण एव उदाहरण देता है, जो इस प्रकार हैं —

१ अक्षर—श्री और इः छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

२ अक्षर—काम, मही, सार और मधु नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

३ अक्षर—ताली, शशी, प्रिया, रमण, पञ्चाल, मृगेन्द्र, मन्दर और कमल नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। ताली छन्द का नाम-भेद नारी दिया है।

४ अक्षर—तीर्णा, धारी, नगाणिका और शुभ नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। तीर्णा छन्द का नामभेद कन्या दिया है।

३ रड्डा प्रकरण

इस प्रकरण में पज्झटिका, अडिल्ला, पादाकुलक, चौबोला और रड्डा छन्द के लक्षण एवं उदाहरण हैं। अन्त में रड्डा छन्द के सात भेद —करभी नन्दा, मोहिनी चारुसेना भद्रा, राजसेना और तालंकिनी के लक्षण मात्र दिये हैं और इनके उदाहरणों के लिए 'सुबुद्धिभि स्वयमूह्यम्' कह कर प्रकरण समाप्त किया है।

४ पद्मावती प्रकरण :

इस प्रकरण में पद्मावती कुण्डलिका, गगनांगण द्विपदी, भुल्लणा खञ्जा शिखा माला, चुलियाला सोरठा हाकलि मधुभार आभीर दण्डकला कामकला रुचिरा दीपक सिंहविलोकित, प्लवंगम लीलावती हरिगीतम् त्रिभंगी दुर्मिलका हीरं जनहरण मदनगृह और मरहट्ठा छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। हरिगीत छन्द के १ हरिगीतम् २ हरिगीतकम् ३ मनोहर हरिगीतं और ४ इ, मतिभेद से लक्षण-क्रम सहित हरिगीता के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

सोरठा हाकलि दीपक हीर और मदनगृह छंद के प्रत्युदाहरण भी हैं।

५ सवैया प्रकरण

इस प्रकरण मे मदिरा मालती मल्ली मल्लिका माधवी और मागधी सवैयों के लक्षण देकर क्रमश: इनके उदाहरण दिये हैं। अन्त मे घनाक्षर छन्द का लक्षण एवं उदाहरण दिया है।

६ गलितक प्रकरण

इस प्रकरण में गलितकम् विगलितकम् संगलितकम् सुन्दरगलितकम् भूषणगलितकम् मुखगलितकम् विलम्बितगलितकम् समगलितकम् अपरं समगलितकम् अपरं संगलितकम् अपरं लम्बितागलितकम् विक्षिप्तिकागलितकम् लम्बितागलितकम्, विषमितागलितकम्, मालागलितकम्, मुग्धमालागलितकम् और उद्गलितकम् छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं।

प्रथमखण्ड के छन्द एवं भेदों का प्रकरणानुसार वर्गीकरण इस प्रकार है—

प्रकरण संख्या	छन्द संख्या	छन्द भेद नाम	भेद संख्या	मूलभेद की न्यूनता	कुल
१	७	गाथा	२५	१	५८
		स्कन्धक	२८	१	

के लक्षण एव उदाहरण नही दिये हैं। इनके उदाहरणो के लिये स्वपितृ-रचित ग्रन्थ[1] को देखने का सकेत किया है।

१२ अक्षर—आपीड, भुजङ्गप्रयात, लक्ष्मीधर, तोटक, सारगक, मौक्तिक-दाम, मोदक, सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, वशस्थविला, इन्द्रवशा, वशस्थविला-इन्द्रवशा-उपजाति, जलोद्धतगति, वैश्वदेवी, मन्दाकिनी, कुसुमविचित्रा, तामरस, मालती, मणिमाला, जलधरमाला, प्रियवदा, ललिता, ललित, कामदत्ता, वसन्तचत्वर, प्रमुदितवदना, नवमालिनी और तरलनयन नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

आपीड का विद्याधर, लक्ष्मीधर का स्रग्विणी, वशस्थविला का वशस्थविल और वशस्तनित, मन्दाकिनी का प्रभा, मालती का यमुना, ललिता का सुललिता, ललित का ललना और प्रमुदितवदना का प्रभा, ये नामभेद दिये हैं।

सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, इन्द्रवशा, मन्दाकिनी और मालती के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमे द्रुतविलबित और मालती के प्रत्यु-दाहरण दो-दो हैं।

१३ अक्षर—वाराह, माया, तारक, कन्द, पङ्क्तावली, प्रहर्षिणी रुचिरा, चण्डी, मञ्जुभाषिणी, चन्द्रिका, कलहस, मृगेन्द्रमुख, क्षमा, लता, चन्द्रलेख, सुद्युति, लक्ष्मी और विमलगति नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। माया का मत्तमयूर, मञ्जुभाषिणी का सुनन्दिनी तथा प्रबोधिता, चन्द्रिका का उत्पलिनी, कलहस का सिंहनाद तथा कुटज, और चन्द्रलेख का चन्द्रलेखा नामभेद दिये हैं। माया के ५, तारक, प्रहर्षिणी और चन्द्रिका के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१४ अक्षर—सिंहास्य, वसन्ततिलका, चक्र, असम्बाधा, अपराजिता, प्रहरण-कलिका, वासन्ती, लोला, नान्दीमुखी, वैदर्भी, इन्दुवदन, शरभी, अहिधृति, विमला, मल्लिका और मणिगण छन्द के लक्षण एव उदाहरण हैं। इन्दुवदन का इन्दुवदना नामभेद दिया है। वसन्ततिलका, चक्र और प्रहरणकलिका के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

---

१ भेदाश्चतुर्दशैतस्या क्रमतस्तु प्रदर्शिता ।
प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्रातिस्फुटस्तत ॥ पृ ८१

इससे सभवत ग्रन्थकार का सकेत लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमजरी' ग्रथ की ओर ही हो।

५ अक्षर—सम्मोहा हारी, हंस प्रिया और यमक नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। यमक का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

६ अक्षर—शेषा तिलका विमोह चतुरंस, मन्थान, शंखनारी सुमाल तिका तनुमध्या और दमनक नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। प्राकृत पिंगल के मतानुसार विमोह का विज्जोहा चतुरंस का चउरंसा, मन्थान का मन्थाना और सुमालतिका का मालती नामभेद भी दिये हैं।

७ अक्षर—शीर्षा, समानिका सुवासक, करहञ्चि कुमारललिता, मधुमती मदलेखा और कुसुमतति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

८ अक्षर—विद्युन्माला प्रमाणिका मल्लिका तुङ्गा, कमल माणवक-क्रीडितक चित्रपदा, अनुष्टुप् और जसद नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। मल्लिका का नाम भेद समानिका दिया है।

९ अक्षर—रूपामाला महालक्ष्मिका सारंग पाइत्तं कमल बिम्ब तोमर, भुजगशिशुसृता मणिमध्य भुजङ्गसङ्गता और सुललित नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के अनुसार सारंग का सारंगिका और पाइत्तं का पाइन्ता नामभेद दिये हैं। भुजगशिशुसृता के लिये लिखा है कि यह नाम आचार्य शम्भु एवं प्राचीनाचार्यों द्वारा सम्मत है और आधुनिक छन्द-शास्त्री इसका नाम भुजगशिशुभृता मानते हैं। सारंग का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

१० अक्षर—गोपाल संयुत चम्पकमाला सारवती सुषमा अमृतगति मत्ता त्वरितगति मनोरमं और ललितगति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के अनुसार संयुत का संयुता चम्पकमाला का रुक्मवती एवं रूपवती तथा मनोरम का मनोरमा नामभेद दिये हैं। संयुत और त्वरितगति छन्दों के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

११ अक्षर—मालती बन्धु सुमुखी शालिनी वातोर्मी, शालिनी-वातोर्म्युपजाति दमनक चण्डिका सेनिका इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रोपजाति रथोद्धता स्वागता भ्रमरविलसिता अनुकूला मोटनक सुकेशी सुभद्रिका और बकुल नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। बन्धु का दोधक चण्डिका का सेनिका और श्येनी नामभेद दिये हैं। रथोद्धता का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

शालिनी-वातोर्मी-उपजाति और इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा-उपजाति के ग्रन्थकार ने १४ १४ भेद प्रस्तार-दृष्टि से स्वीकार किये हैं किन्तु इन प्रस्तार भेदों

के लक्षण एवं उदाहरण नहीं दिये हैं। इनके उदाहरणों के लिये स्वपितृ-रचित ग्रन्थ[1] को देखने का संकेत किया है।

१२ अक्षर—आपीड, भुजङ्गप्रयात, लक्ष्मीधर, तोटक, सारंगक, मौक्तिकदाम, मोदक, सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, वंशस्थविला, इन्द्रवंशा, वंशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति, जलोद्धतगति, वैश्वदेवी, मन्दाकिनी, कुसुमविचित्रा, तामरस, मालती, मणिमाला, जलधरमाला, प्रियंवदा, ललिता, ललित, कामदत्ता, वसन्तचत्वर, प्रमुदितवदना, नवमालिनी और तरलनयन नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

आपीड का विद्याधर, लक्ष्मीधर का स्रग्विणी, वंशस्थविला का वंशस्थविल और वंशस्तनित, मन्दाकिनी का प्रभा, मालती का यमुना, ललिता का सुललिता, ललित का ललना और प्रमुदितवदना का प्रभा, ये नामभेद दिये हैं।

सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, इन्द्रवंशा, मन्दाकिनी और मालती के प्रत्युदाहरण भी दिये है, जिसमे द्रुतविलंबित और मालती के प्रत्युदाहरण दो-दो हैं।

१३ अक्षर—वाराह, माया, तारक, कन्द, पङ्कावली, प्रहर्षिणी रुचिरा, चण्डी, मञ्जुभाषिणी, चन्द्रिका, कलहंस, मृगेन्द्रमुख, क्षमा, लता, चन्द्रलेख, सुद्युति, लक्ष्मी और विमलगति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। माया का मत्तमयूर, मञ्जुभाषिणी का सुनन्दिनी तथा प्रबोधिता, चन्द्रिका का उत्पलिनी, कलहंस का सिंहनाद तथा कुटज, और चन्द्रलेख का चन्द्रलेखा नामभेद दिये हैं। माया के ५, तारक, प्रहर्षिणी और चन्द्रिका के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१४ अक्षर—सिंहास्य, वसन्ततिलका, चक्र, असम्बाधा, अपराजिता, प्रहरणकलिका, वासन्ती, लोला, नान्दीमुखी, वैदर्भी, इन्दुवदन, शरभी, अहिवृति, विमला, मल्लिका और मणिगण छन्द के लक्षण एवं उदाहरण हैं। इन्दुवदन का इन्दुवदना नामभेद दिया है। वसन्ततिलका, चक्र और प्रहरणकलिका के प्रत्युदाहरण भी दिये है।

---

१ भेदाश्चतुर्दशैतस्या क्रमतस्तु प्रदर्शिता ।
प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्रातिस्फुटस्तत ॥ पृ. ८१

इससे संभवतः ग्रन्थकार का संकेत लक्ष्मीनाथ भट्ट की ओर ही हो !

१५ अक्षर—लीलाखेल, मालिनी, चामर भ्रमरावलिका, मनोहंस शरभ, निशिपालक विपिनतिलक चन्द्रलेखा, चित्रा, केसर, एला, प्रिया, उत्सव और उडुगण नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लीलाखेल का सारंगिका चामर का तूणक भ्रमरावलिका का भ्रमरावली, शरभ का शशिकला तथा यतिभेद से मणिगुणनिकर एवं स्रग् चन्द्रलेखा का चन्द्रलेखा चित्रा का चित्र और प्रिया का यतिभेद से अलि नामभेद दिये हैं।

लीलाखेल मालिनी चामर भ्रमरावलिका, मनोहंस मणिगुणनिकर, स्रग् निशिपालक और विपिनतिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं जिसमें मालिनी के ३ प्रत्युदाहरण हैं।

१६ अक्षर—राम पञ्चचामर नील चञ्चला मदनललिता नन्दिनी प्रवरललित गरुडरुत, चकिता गजतुरगविलसित शैलशिखा ललित सुकेसर ललना और गिरिवरधृति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। राम का ब्रह्मरूपक, पञ्चचामर का नराच चञ्चला का चित्रसंग गजतुरगविलसित का ऋषभगजविलसित और गिरिवरधृति का अचलधृति नामभेद दिये हैं। पञ्चचामर तथा चञ्चला के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१७ अक्षर—लीलाधृष्ट पृथ्वी मालावती शिखरिणी हरिणी मन्दाक्रान्ता वंशपत्रपतित नर्दटक यतिभेद से कोकिलक हारिणी भाराक्रान्ता मतङ्गवाहिनी पद्मक और वंशमुखहर नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। मालावती का प्राकृतपिंगल के अनुसार मालाधर वंशपत्रपतित का वंशपत्रपतिता और आचार्य शम्भु के मतानुसार वंशदलं नामान्तर दिये हैं। पृथ्वी शिखरिणी हरिणी मन्दाक्रान्ता वंशपत्रपतित नर्दटक और कोकिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमे शिखरिणी के तीन तथा हरिणी के चार प्रत्युदाहरण हैं।

१८ अक्षर—लीलाचन्द्र मञ्जीरा चर्चरी क्रीडाचन्द्र कुसुमितलता नन्दन नाराच चित्रलेखा भ्रमरपद शार्दूलललित सुललित और उपवनकुसुम नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। नाराच का मञ्जुला नामान्तर दिया है। मञ्जीरा चर्चरी क्रीडाचन्द्र कुसुमितलता नन्दन और नाराच के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं जिसमे चर्चरी के पांच और नन्दन के दो प्रत्युदाहरण है।

१९ अक्षर—नागानन्द शार्दूलविक्रीडित चन्द्र धवल शम्भु, मेघ विस्फूर्जिता छाया सुरसा फुल्लदाम और मृदुलकुसुम नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगलानुसार चन्द्र का चन्द्रमाला और धवल का

धवला नामभेद दिये हैं। शार्दूलविक्रीडित के दो, चन्द्र, धवल, शम्भु और मेघविस्फूर्जिता के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२० अक्षर—योगानन्द, गीतिका, गण्डका, शोभा, सुवदना, प्लवङ्ग भगमगल, शशाङ्कचलित, भद्रक, और अनवधिगुणगण नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। गण्डका का चित्रवृत्त एव वृत्त नामभेद दिया है। गीतिका के दो, गण्डका और सुवदना के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२१ अक्षर—ब्रह्मानन्द, स्रग्धरा, मञ्जरी, नरेन्द्र, सरसी, रुचिरा और निरुपमतिलक नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। सरसी का सुरतरु और सिद्धक नामान्तर दिया है। स्रग्धरा और मञ्जरी के दो-दो, नरेन्द्र और सरसी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२२ अक्षर—विद्यानन्द, हसी, मदिरा, मन्द्रक, शिखर, अच्युत, मदालस, और तरुवर नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण है। हसी का एक और मदालस के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२३ अक्षर—दिव्यानन्द, सुन्दरिका, यतिभेद से पद्मावतिका, अद्रितनया, मालती, मल्लिका, मत्ताक्रीड और कनकवलय नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। अद्रितनया का अश्वललित नामान्तर दिया है। अद्रितनया और अश्वललित के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२४ अक्षर—रामानन्द, दुर्मिलका, किरीट, तन्वी, माधवी और तरलनयन नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। दुर्मिलका और तन्वी के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२५ अक्षर—कामानन्द, क्रौंचपद, मल्ली और मणिगणनामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। क्रौंचपदा का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

२६ अक्षर—गोविन्दानन्द, भुजङ्गविजृंभित, अपवाह, मागधी और कमलदल नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। तथा भुजगविजृंभिल और अपवाह के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

उपसहार में कवि कहता है कि इस प्रकरण मे लक्ष्य-लक्षण-सयुक्त २६५ छन्दो का निरूपण किया है और प्रत्युदाहरण के रूप मे प्राचीन कवियो के क्वचित् उदाहरण भी लिये है। अन्त मे लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप के अनुसार समस्त वृत्तो की प्रस्तारपिंड-सख्या १३,४२,१७,७२६ बतलाई है।

१५ अक्षर—लीलाखेल, मालिनी, चामरं भ्रमरावलिका, मनोहंस शरभ, निशिपालक विपिनतिलक चन्द्रलेखा, चित्रा केसरं एला, प्रिया उत्सव और उडुगण नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लीलाखेल का सारंगिका चामर का तूणकं भ्रमरावलिका का भ्रमरावली, शरभं का शशिकला तथा यतिभेद से मणिगुणनिकर एवं स्रग् चन्द्रलेखा का चन्द्रलेखा, चित्रा का चित्र और प्रिया का मतिमद से अलि नामभेद दिये हैं।

लीलाखेल मालिनी चामर, भ्रमरावलिका, मनोहंस मणिगुणनिकर स्रग् निशिपालक और विपिनतिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमें मालिनी के ३ प्रत्युदाहरण हैं।

१६ अक्षर—राम पञ्चचामर, नील, चञ्चला मदनललिता नन्दिनी प्रवरललित मत्तकरट, चकिता गजतुरगविलसित शैलशिखा ललित सुकेसर ललना और गिरिवरधृति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। राम का ब्रह्मरूपक, पञ्चचामर का नराच चञ्चला का चित्रसंगं गजतुरगविलसित का ऋषभगजविलसित और गिरिवरधृति का अचलधृति नामभेद दिये हैं। पञ्चचामर तथा चञ्चला के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१७ अक्षर—लीलाधृष्ट पृथ्वी मालावती शिखरिणी हरिणी मन्दाक्रान्ता वंशपत्रपतित नर्दटक यतिभेद से कोकिलक हारिणी भाराक्रान्ता मतङ्गवाहिनी पयक और द्वादशमुखहर नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। मालावती का प्राकृतपिंगल के अनुसार मालाधर वंशपत्रपतितं का वंशपत्रपतिता और आचार्य शम्भु के मतानुसार वंशवदन नामान्तर दिये हैं। पृथ्वी शिखरिणी हरिणी मन्दाक्रान्ता वंशपत्रपतित नर्दटक और कोकिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं जिसमे शिखरिणी के तीन तथा हरिणी के चार प्रत्युदाहरण हैं।

१८ अक्षर—लीलाचन्द्र मञ्जीरा चर्चरी क्रीडाचन्द्र कुसुमितलता नन्दन नाराच चित्रलेखा भ्रमरपद शार्दूलललित सुललित और उपवनकुसुम नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। नाराच का मञ्जुला नामान्तर दिया है। मञ्जीरा चर्चरी क्रीडाचन्द्र कुसुमितलता नन्दन और नाराच के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं जिसमे चर्चरी के पांच और नन्दन के दो प्रत्युदाहरण हैं।

१९ अक्षर—नागानन्द शार्दूलविक्रीडित चन्द्र धवल शम्भु, मेघ विस्फूर्जिता छाया सुरसा फुल्लदाम और मृदुलकुसुम नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगलानुसार चन्द्र का चन्द्रमाला और धवल का

इस प्रकार तालिकानुसार उक्त प्रकरण मे कुल २६५ छन्द है, उदाहरण २६५ है, प्रत्युदाहरण ८७ है और नामभेद ५० है।

२. प्रकीर्णक वृत्त-प्रकरण :

इस प्रकरण मे ग्रन्थकार ने पिपीडिका, पिपीडिकाकरभ, पिपीडिकापणव और पिपीडिकामाला-नामक छन्दो के लक्षण की एक प्राचीन आचार्यों की सग्रह-कारिका दी है। स्वय के स्वतन्त्र लक्षण एव उदाहरण नही है। पश्चात् द्वितीय त्रिभगी और शालूर नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये है।

३. दण्डक-प्रकरण :

इस प्रकरण मे चण्डवृष्टिप्रपात, प्रचितक, अर्ण, सर्वतोभद्र, अशोकमञ्जरी, कुसुमस्तबक, मत्तमातङ्ग और अनङ्गशेखर नामक दण्डक-वृत्तो के लक्षण सहित उदाहरण दिये है। ग्रन्थविस्तार-भय से अन्य प्रचलित दण्डकवृत्तो के लिये लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप देखने के लिये आग्रह किया है।

प्रचितक दण्डक का लक्षण ग्रन्थकार ने छन्द सूत्रानुसार दो नगण और ८ रगण दिया है जो कि छन्द सूत्र और वृत्तमौक्तिक के अनुसार 'अर्ण' दण्डक का भी लक्षण है। छन्द सूत्र के अतिरिक्त समस्त छन्द.शास्त्रियो ने प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। ग्रन्थकार ने इस लक्षण के दण्डक को सर्वतोभद्र दण्डक लिखा है। यही कारण है कि आचार्यों के मतो को ध्यान मे रख कर ही 'एतस्यैव अन्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम्'[1] लिखा है।

४ अर्धसमवृत्त-प्रकरण :

जिस छन्द मे चारो चरणो के लक्षण समान हो वह समवृत्त कहलाता है, जिस छन्द के प्रथम और तृतीय चरण तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण एक सदृश हो वह अर्धसमवृत्त कहलाता है और जिस छन्द के चारो चरणो के लक्षण विभिन्न हो वह विषमवृत्त कहलाता है।

इस अर्धसमवृत्त प्रकरण मे पुष्पिताग्रा, उपचित्र, वेगवती, हरिणप्लुता, अपरवक्त्र, सुन्दरी, भद्रविराट्, केतुमती, वाङ्मती और षट्पदावली नामक छन्दों के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। पुष्पिताग्रा के तीन, अपरवक्त्र और सुन्दरी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। षट्पदावली का उदाहरण नही दिया है।

---

१ वृत्तमौक्तिक पृ १८५।

इस प्रकरण के वर्णाक्षरों के अनुसार प्रस्तारसंख्या, छन्दसंख्या उदाहरण संख्या, प्रत्युदाहरण संख्या और नामभेदों की तालिका इस प्रकार है —

वर्णाक्षर	प्रस्तार संख्या	छन्द संख्या	उदाहरण संख्या	प्रत्युदाहरण संख्या	नामभेद संख्या
१	२	२	२	×	×
२	४	४	४	×	×
३	८	८	८	×	१
४	१६	४	४	×	१
५	३२	५	५	१	×
६	६४	९	९	×	४
७	१२८	८	८	×	×
८	२५६	९	९	×	१
९	५१२	११	११	१	३
१०	१०२४	१०	१०	२	३
११	२०४८	२०	२०	१	२
१२	४०९६	३०	२९	९	८
१३	८१९२	१८	१८	८	६
१४	१६ ३८४	१६	१६	९	१
१५	३२ ७६८	१५	१५	१०	७
१६	६५ ५३६	१५	१५	२	५
१७	१ ३१ ०७२	१३	१३	१२	२
१८	२ ६२ १४४	१२	१२	११	१
१९	५ २४ २८८	१०	१	६	२
२०	१ ४८ ५७६	९	९	४	१
२१	२० ९७ १५२	७	७	६	१
२२	४१ ९४ ३ ४	८	८	३	×
२३	८३ ८८ ६०८	७	८	२	१
२४	१ ६७ ७७ २१७	६	६	२	×
२५	३ ३५ ५४ ४३२	४	४	१	×
२६	६ ७१,०८ ८६४	५	५	२	×
		२६५	२६५	८७	५०

इस प्रकार तालिकानुसार उक्त प्रकरण मे कुल २६५ छन्द है, उदाहरण २६५ है, प्रत्युदाहरण ८७ है और नामभेद ५० है।

२. प्रकीर्णक वृत्त-प्रकरण :

इस प्रकरण मे ग्रन्थकार ने पिपीडिका, पिपीडिकाकरभ, पिपीडिकापणव और पिपीडिकामाला-नामक छन्दो के लक्षण की एक प्राचीन आचार्यो की सग्रह-कारिका दी है। स्वयं के स्वतन्त्र लक्षण एव उदाहरण नही है। पश्चात् द्वितीय त्रिभगी और शालूर नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये है।

३ दण्डक-प्रकरण :

इस प्रकरण मे चण्डवृष्टिप्रपात, प्रचितक, अर्ण, सर्वतोभद्र, अशोकमञ्जरी, कुसुमस्तबक, मत्तमातङ्ग और अनङ्गशेखर नामक दण्डक-वृत्तो के लक्षण सहित उदाहरण दिये है। ग्रन्थविस्तार-भय से अन्य प्रचलित दण्डकवृत्तो के लिये लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप देखने के लिये आग्रह किया है।

प्रचितक दण्डक का लक्षण ग्रन्थकार ने छन्द.सूत्रानुसार दो नगण और ८ रगण दिया है जो कि छन्द.सूत्र और वृत्तमौक्तिक के अनुसार 'अर्ण' दण्डक का भी लक्षण है। छन्द सूत्र के अतिरिक्त समस्त छन्द.शास्त्रियो ने प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। ग्रन्थकार ने इस लक्षण के दण्डक को सर्वतोभद्र दण्डक लिखा है। यही कारण है कि आचार्यों के मतो को ध्यान मे रख कर ही 'एतस्यैव अन्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम्'[1] लिखा है।

४ अर्धसमवृत्त-प्रकरण :

जिस छन्द मे चारो चरणो के लक्षण समान हो वह समवृत्त कहलाता है; जिस छन्द के प्रथम और तृतीय चरण तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण एक सदृश हो वह अर्धसमवृत्त कहलाता है और जिस छन्द के चारो चरणो के लक्षण विभिन्न हो वह विषमवृत्त कहलाता है।

इस अर्धसमवृत्त प्रकरण मे पुष्पिताग्रा, उपचित्र, वेगवती, हरिणप्लुता, अपरवक्त्र, सुन्दरी, भद्रविराट्, केतुमती, वाङ्मती और षट्पदावली नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। पुष्पिताग्रा के तीन, अपरवक्त्र और सुन्दरी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। षट्पदावली का उदाहरण नही दिया है।

---

१ वृत्तमौक्तिक पृ १८५।

इस प्रकरण के वर्णाक्षरों के अनुसार प्रस्तारसंख्या, छन्दसंख्या उदाहरण संख्या, प्रत्युदाहरण संख्या और नामभेदों की तालिका इस प्रकार है —

वर्णाक्षर	प्रस्तार संख्या	छन्द संख्या	उदाहरण संख्या	प्रत्युदाहरण संख्या	नामभेद संख्या
१	२	२	२	×	×
२	४	४	४	×	×
३	८	८	८	×	१
४	१६	४	४	×	१
५	३२	५	५	१	×
६	६४	९	९	×	४
७	१२८	८	८	×	×
८	२५६	९	९	×	१
९	५१२	११	११	१	३
१०	१०२४	१०	१०	२	३
११	२०४८	२०	२०	१	२
१२	४०९६	३०	२९	९	८
१३	८१९२	१८	१८	८	६
१४	१६ ३८४	१६	१६	१	१
१५	३२ ७६८	१५	१५	१०	७
१६	६५,५३६	१५	१५	२	५
१७	१ ३१ ०७२	१३	१३	१२	२
१८	२ ६२ १४४	१२	१२	११	१
१९	५ २४ २८८	१०	१०	६	२
२०	१० ४८ ५७६	९	९	४	१
२१	२० ९७ १५२	७	७	६	१
२२	४१ ९४ ३०४	८	८	३	×
२३	८३ ८८६ ८	७	८	२	१
२४	१ ६७ ७७ २१६	६	६	२	×
२५	३ ३५ ५४ ४३२	४	४	१	×
२६	६ ७१, ०८ ८६४	५	५	२	×
		२६५	२६५	८७	५०

मुरारि, जयदेव (गीतगोविन्दकार), देवेश्वर, गगादास आदि के मतो का उल्लेख करते हुये यतिभग से दोष और यतिरक्षा से काव्य-सौन्दर्य की अभिवृद्धि आदि का सुन्दर, विश्लेषण किया है ।

८. गद्य-प्रकरण

वाड्मय दो प्रकार का है—१ पद्यात्मक और २. गद्यात्मक । पद्य-वाड्मय का वर्णन प्रारभ के प्रकरणो मे किया जा चुका है । अत. यहाँ इस प्रकरण मे गद्य-वाड्मय का विवेचन है । गद्य के प्रमुख तीन भेद है—१ चूर्णगद्य, २ उत्कलिकाप्राय-गद्य और ३ वृत्तगन्धि-गद्य ।

चूर्णकगद्य के तीन भेद है —१ आविद्धचूर्ण, २ ललितचूर्ण और ३ मुग्धचूर्ण । मुग्धचूर्ण के भी दो भेद हैं.—१ अवृत्तिमुग्धचूर्ण और २ अत्यल्प-वृत्तिमुग्धचूर्ण ।

इस प्रकार इन समस्त गद्य-भेदो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। उत्कलिकाप्राय का एक और वृत्तगन्धि गद्य के तीन प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। यथा —

अन्य ग्रन्थकारो ने गद्य के चार भेद स्वीकार किये हैं :—१ मुक्तक, २ वृत्तगन्धि, ३ उत्कलिकाप्राय और ४ कुलक । इन चारो भेदो के लक्षण एव उदाहरण भी ग्रथकार ने दिये हैं । उत्कलिकाप्राय गद्य का प्राकृत-भाषा का उदाहरण भी दिया है ।

९ विरुदावली-प्रकरण

गद्य-पद्यमयी राजस्तुति को विरुद कहते हैं और विरुदो की आवली = समूह को विरुदावली कहते हैं। यह विरुदावली पाँच प्रकरणो में विभाजित है :—

५. विषमवृत्त प्रकरण

जिस छन्द के चारों चरणों के लक्षण भिन्न-भिन्न हों उसे विषमवृत्त कहते हैं। विषमवृत्तों में उद्‌गता उद्‌गताभेद सौरभ, ललित, भाव, वक्त्र पथ्यावक्त्र और अनुष्टुप्-नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। उद्‌गताभेद का ग्रन्थकार का स्वोक्त उदाहरण नहीं है किन्तु भारवि और माघ के दो उदाहरण हैं।

अनुष्टुप् के लिये लिखा है कि कतिपय आचार्य इसे भी 'वक्त्र' छन्द का ही लक्षण मानते हैं और अनेक पुराणों में नानागणभेद से यह प्राप्त होता है। अतः इसे विषमवृत्त ही मानना चाहिये। पदचतुरूर्ध्वादि और उपस्थित प्रचुपित आदि विषमवृत्तों के लिये छन्दःसूत्र की हलायुध की टीका देखने का संकेत किया है।

६ वैतालीय प्रकरण

वैतालीय औपच्छन्दसक आपातलिका नलिन द्वितीय नलिन दक्षिणान्तिका वैतालीय उत्तरान्तिका-वैतालीय, प्राच्यवृत्ति उदीच्यवृत्ति प्रवृत्तक अपरान्तिका और चारुहासिनी नामक वैतालीय छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। दक्षिणान्तिका-वैतालीय का एक, प्राच्यवृत्ति के दो उदीच्यवृत्ति का एक प्रवृत्तक का एक अपरान्तिका के दो और चारुहासिनी के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

इस प्रकरण में वृत्तों के लक्षण पूर्ण पद्यों में न होकर सूत्र-कारिका रूप में प्राप्त हैं और साथ ही इन कारिकाओं को स्पष्ट करने के लिये टीका भी प्राप्त है।

७ यतिनिरूपण-प्रकरण

पद्य में जहाँ पर विच्छेद हो विरूाम हो विश्राम हो विराम हो अवसान हो उसे यति कहते हैं। समुद्र, इन्द्रिय भूत इन्दु, रस पक्ष और दिक् आदि शब्द साकांक्षी होने से यति से सम्बन्ध रखते हैं। ग्रंथकार मूल-शास्त्र अर्थात् छन्दःसूत्र का आलोडन कर उदाहरण सहित इस प्रकरण पर विवेचन करता है।

पद्य ४ से ७ तक प्राचीन आचार्यों की संग्रह-कारिकायें और इनकी व्याख्या दी गई है। ये चारों पद्य और इनकी उदाहरणसहित व्याख्या छन्दःसूत्र की हलायुध टीका में प्राप्त है। किंचित् परिवर्तन के साथ यह स्वरूप यहाँ पर ज्यों का त्यों उद्धृत किया गया है। अन्त में आचार्य भरत आचार्य पिङ्गल जयदेव श्वेतमाण्डव्य

मुरारि, जयदेव (गीतगोविन्दकार), देवेश्वर, गगादास आदि के मतो का उल्लेख करते हुये यतिभग से दोष और यतिरक्षा से काव्य-सौन्दर्य की अभिवृद्धि आदि का सुन्दर, विश्लेषण किया है।

८ गद्य-प्रकरण

वाङ्मय दो प्रकार का है—१ पद्यात्मक और २. गद्यात्मक। पद्य-वाङ्मय का वर्णन प्रारभ के प्रकरणो मे किया जा चुका है। अत यहाँ इस प्रकरण मे गद्य-वाङ्मय का विवेचन है। गद्य के प्रमुख तीन भेद है—१. चूर्णगद्य, २ उत्कलिकाप्राय-गद्य और ३ वृत्तगन्धि-गद्य।

चूर्णकगद्य के तीन भेद है —१. आविद्धचूर्ण, २. ललितचूर्ण और ३ मुग्धचूर्ण। मुग्धचूर्ण के भी दो भेद हैं.—१ अवृत्तिमुग्धचूर्ण और २ अत्यल्पवृत्तिमुग्धचूर्ण।

इस प्रकार इन समस्त गद्य-भेदो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। उत्कलिकाप्राय का एक और वृत्तगन्धि गद्य के तीन प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। यथा —

अन्य ग्रन्थकारो ने गद्य के चार भेद स्वीकार किये हैं .—१ मुक्तक, २ वृत्तगन्धि, ३ उत्कलिकाप्राय और ४ कुलक। इन चारो भेदो के लक्षण एव उदाहरण भी ग्रथकार ने दिये हैं। उत्कलिकाप्राय गद्य का प्राकृत-भाषा का उदाहरण भी दिया है।

९ विरुदावली-प्रकरण

गद्य-पद्यमयी राजस्तुति को विरुद कहते हैं और विरुदो की आवली = समूह को विरुदावली कहते हैं। यह विरुदावली पाँच प्रकरणो में विभाजित है :—

५. विषमवृत्त-प्रकरणम्

जिस छन्द के चारों चरणों के लक्षण भिन्न-भिन्न हों उसे विषमवृत्त कहते हैं। विषमवृत्तों में उद्‌गता उद्‌गताभेद सौरभ, ललित, भाव, वक्त्र पथ्यावक्त्र और अनुष्टुप्-नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। उद्‌गताभेद का ग्रन्थकार का स्वोक्त उदाहरण नहीं है किन्तु भारवि और माघ के दो उदाहरण हैं।

अनुष्टुप् के लिये लिखा है कि कतिपय आचार्य इसे भी 'वक्त्र' छन्द का ही लक्षण मानते हैं और अनेक पुराणों में नामान्तरभेद से यह प्राप्त होता है। अतः इसे विषमवृत्त ही मानना चाहिये। पदचतुरूर्ध्वादि और उपस्थित प्रचुपित आदि विषमवृत्तों के लिये छन्दःसूत्र की हलायुध की टीका देखने का संकेत किया है।

६. वैतालीय-प्रकरण

वैतालीय औपच्छन्दसक आपातलिका, नलिन द्वितीय नलिन दक्षिणान्तिका वैतालीय उत्तरान्तिका-वैतालीय, प्राच्यवृत्ति उदीच्यवृत्ति प्रवृत्तक अपरान्तिका और चारुहासिनी नामक वैतालीय छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। दक्षिणान्तिका-वैतालीय का एक, प्राच्यवृत्ति के दो उदीच्यवृत्ति का एक प्रवृत्तक का एक अपरान्तिका के दो और चारुहासिनी के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

इस प्रकरण में वृत्तों के लक्षण पूर्ण पद्यों में न होकर सूत्र-कारिका रूप में प्राप्त हैं और साथ ही इन कारिकाओं को स्पष्ट करने के लिये टीका भी प्राप्त है।

७. यतिनिरूपण प्रकरण

पद्य में जहाँ पर विच्छेद हो विभजन हो विश्राम हो विराम हो अवसान हो उसे यति कहते हैं। समुद्र, इन्द्रिय भूत इन्दु, रस पक्ष और दिक आदि शब्द साकांक्षी होने से यति से सम्बन्ध रखते हैं। ग्रंथकार मूल-ग्रन्थ अर्थात् छन्दःसूत्र का आलोडन कर उदाहरण सहित इस प्रकरण पर विवेचन करता है।

पद्य ४ से ७ तक प्राचीन आचार्यों की संग्रह-कारिकायें और इनकी व्याख्या दी गई है। ये चारों पद्य और इनकी उदाहरणसहित व्याख्या छन्दःसूत्र की हलायुध टीका में प्राप्त है। किंचित् परिवर्तन के साथ यह स्थल यहाँ पर ज्यों का त्यों उद्धृत किया गया है। अन्त में आचार्य भरत, आचार्य पिङ्गल जयदेव श्वेतमाण्डव्य

मुरारि, जयदेव (गीतगोविन्दकार), देवेश्वर, गगादास आदि के मतो का उल्लेख करते हुये यतिभग से दोष और यतिरक्षा से काव्य-सौन्दर्य की अभिवृद्धि आदि का सुन्दर, विश्लेषण किया है।

८ गद्य-प्रकरण

वाङ्मय दो प्रकार का है—१ पद्यात्मक और २. गद्यात्मक। पद्य-वाङ्मय का वर्णन प्रारभ के प्रकरणो मे किया जा चुका है। अत यहाँ इस प्रकरण मे गद्य-वाङ्मय का विवेचन है। गद्य के प्रमुख तीन भेद हैं—१. चूर्णगद्य, २ उत्कलिकाप्राय-गद्य और ३ वृत्तगन्धि-गद्य।

चूर्णकगद्य के तीन भेद हैं —१ आविद्धचूर्ण, २ ललितचूर्ण और ३ मुग्धचूर्ण। मुग्धचूर्ण के भी दो भेद है —१. अवृत्तिमुग्धचूर्ण और २. अत्यल्प-वृत्तिमुग्धचूर्ण।

इस प्रकार इन समस्त गद्य-भेदो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। उत्कलिकाप्राय का एक और वृत्तगन्धि गद्य के तीन प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। यथा —

अन्य ग्रन्थकारो ने गद्य के चार भेद स्वीकार किये हैं :—१ मुक्तक, २ वृत्तगन्धि, ३ उत्कलिकाप्राय और ४ कुलक। इन चारो भेदो के लक्षण एव उदाहरण भी ग्रथकार ने दिये हैं। उत्कलिकाप्राय गद्य का प्राकृत-भाषा का उदाहरण भी दिया है।

९ विरुदावली-प्रकरण

गद्य-पद्यमयी राजस्तुति को विरुद कहते हैं और विरुदो की आवली = समूह को विरुदावली कहते हैं। यह विरुदावली पाँच प्रकरणो मे विभाजित है :—

१ कलिका-प्रकरण, २ चण्डवृत्त प्रकरण ३ त्रिभंगीकलिका प्रकरण, ४ साधारण चण्डवृत्त प्रकरण और ५ विरुदावली।

(१) द्विपादिकलिका-प्रवान्तर-प्रकरण

कलिका के नव भेद माने हैं —१ द्विगा-कलिका २ रादिकलिका, ३ मादिकलिका ४ नादिकलिका, ५ नमादिकलिका ६ मिश्रकलिका ७ मध्याकलिका ८ द्विभङ्गीकलिका और ९ त्रिभङ्गीकलिका। ७ मध्या कालिका के दो भेद हैं।

त्रिभंगी-कलिका के भी ९ भेद माने हैं —१ विदग्धत्रिभङ्गी-कलिका २ तुरगत्रिभङ्गी-कलिका ३ पद्मत्रिभंगी-कलिका ४ हरिणप्लुतत्रिभंगी-कलिका ५ नर्तकत्रिभंगी-कलिका ६ भुजगत्रिभंगी-कलिका ७ त्रिगतात्रिभंगी-कलिका, ८ वरतनुत्रिभंगी-कलिका और ९ द्विपादिका-युग्मभंगा कलिका।

त्रिगतात्रिभंगी-कलिका के दो भेद हैं —१ ललिता त्रिगता त्रिभंगी कलिका और २ ललिता-त्रिगता-त्रिभंगी-कलिका। वरतनु-त्रिभंगी-कलिका के भी दो भेद माने हैं।

द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका के ६ भेद माने हैं —१ मुग्धा-द्विपादिका युग्मभंगा-कलिका २ प्रगल्भा-द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका ३ मध्या-द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका ४ शिथिला-द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका ५ मधुरा द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका और ६ तरुणी द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका। इसमें मध्या द्विपादिका-युग्मभंगा कलिका के भी चार भेद माने हैं।

इस प्रकार मूलभेद ९ और प्रतिभेद २५ कुल ३४ कलिकाओं के लक्षण और उदाहरण ग्रंथकार ने दिये हैं। लक्षण पूर्णपद्यों में नहीं हैं किन्तु पद्य के टुकड़ों में कारिका रूप में हैं। इन लक्षणों को स्पष्ट करने के लिये टीका भी दी है। उदाहरण के भी पूर्णपद्य नहीं हैं किन्तु प्रत्येक उदाहरण के लिये केवल एक चरण दिया है। मध्याकलिका का उदाहरण नहीं दिया है। यथा—

- कलिका विरुदावली
  - द्विगा
  - रादि
  - मादि
  - नादि
  - गलादि
  - मिश्रा
  - मध्या (दो भेद)
  - द्विभंगी
  - त्रिभंगी
    - विदग्ध
    - तुरग
    - पद्म
    - हरिणप्लुत
    - नर्त्तक
    - भुजग
    - त्रिगता
      - ललिता
    - वरतनु (दो भेद)
      - वल्गिता
    - द्विपादिका
      - मुग्धा
      - प्रगल्भा
      - मध्या (चार भेद)
      - शिथिला
      - मधुरा
      - तरुणी

(२) चण्डवृत्त-प्रवान्तर-प्रकरण

महाकलिकाचण्डवृत्त के दो भेद हैं —१ सलक्षण और २ साधारण।

सलक्षण चण्डवृत्त के तीन भेद हैं —१ शुद्धसलक्षण २ सकीर्णसलक्षण और ३ गर्भितसलक्षण।

शुद्ध सलक्षण चण्डवृत्त के २० भेद हैं :—१ पुरुषोत्तम २ तिलक ३ अच्युत ४ वर्द्धित, ५ रण ६ वीर, ७ शाक ८ मातङ्गखेलित ९ उत्पल १० गुणरति ११ कल्पद्रुम, १२ कन्दल १३ अपराजित १४ नर्तन १५ तरलसमस्त १६ वेष्टन १७ अस्खलित, १८ पल्लवित १९ समग्र और २० तुरग।

संकीर्णसलक्षण-चण्डवृत्त के ५ भेद हैं —१ पङ्केरुह २ सितकञ्ज ३ पाण्डूत्पल ४ इन्दीवर और ५ अरुणाम्भोरुह।

गर्भितसलक्षण चण्डवृत्त के ९ भेद हैं —१ फुल्लाम्बुज २ चम्पक ३ वजुल ४ कुन्द ५ बकुलभासुर ६ बकुलमगल ७ मञ्जरीकोरक, ८ गुच्छक और ९ कुसुम।

भेदकथन के पश्चात् रचना-वैशिष्ट्य में प्रयुक्त मधुर शिलष्ट अशिलष्ट शिथिल और दृढादि की परिभाषा और इनका विवेचन करते हुये उपर्युक्त ३४ महाकलिका चण्डवृत्तों के क्रमश: लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लक्षण पूर्ण पद्यों में न होकर खण्डपद्यों में कारिका-रूप में हैं और इन लक्षणों को स्पष्ट करने के लिये व्याख्या भी दी है। ग्रंथकार ने ग्रंथ-विस्तार के भय से प्रत्येक चण्डवृत्त के उदाहरण में एक-एक चरणमात्र दिया है।

श्रीरूपगोस्वामिप्रणीत गोविन्दविरुदावली से निम्नलिखित चण्डवृत्तों के प्रत्युदाहरण दिये हैं —१ तिलक २ अच्युत ३ वर्द्धित, ४ रण ५ वीर, ६ मातंगखेलित ७ उत्पल ८ गुणरति ९ पल्लवित १० तुरग ११ पंकेरुह १२ सितकज १३ पाण्डूत्पल १४ इन्दीवर १५ अरुणाम्भोरुह १६ फुल्लाम्बुज १७ चम्पक १८ वंजुल १९ कुन्द २० बकुलभासुर, २१ बकुलमंगल २२ मञ्जरीकोरक २३ गुच्छ और २४ कुसुम।

वीर का वीरभद्र रण का समग्र और तुरग का तुरंग नामभेद भी दिया है।

(३) त्रिभंगी-कलिका-प्रवान्तर-प्रकरण

विरुदसहित दण्डक त्रिभंगी-कलिका विरुदसहित सम्पूर्ण विदग्धत्रिभंगी कलिका और मिश्रकलिका के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लक्षण-कारिकाओं

की टीका भी है। उदाहरण के एक-एक चरण हैं। तीनो ही विरुदावलियो के प्रत्युदाहरण दिये हैं जो कि रूपगोस्वामिकृत गोविन्दविरुदावली के हैं। ग्रन्थकार ने तीनो ही भेद चण्डवृत्त के ही प्रभेद माने हैं।

(४) साधारण-चण्डवृत्त-ग्रवान्तर-प्रकरण

इस प्रकरण मे साधारण चण्डवृत्तो के लक्षण एव उदाहरण दिये गये हैं।

(५) विरुदावली-प्रकरण

साप्तविभक्तिकी कलिका, ग्रक्षमयी कलिका ग्रौर सर्वलघु कलिका के लक्षण देकर इन कारिकाग्रो की व्याख्या दी है। इन तीनो के स्वय के उदाहरण नही हैं। तीनो ही कलिकाग्रो के उदाहरण गोविन्दविरुदावली से उद्धृत हैं। ग्रन्त मे समग्र कलिकाग्रो मे प्रयुक्त विरुदो के युगपद् लक्षण कहे हैं।

देव, भूपति एव तत्तुल्यवर्णनो मे धीर, वीर ग्रादि विरुदो का प्रयोग होता है। सस्कृत-प्राकृत के श्रव्यकाव्यो में शौर्य, वीर्य, दया, कीर्ति ग्रौर प्रतापादि प्रधान विषयो मे कलिकादि का प्रयोग होता है। गुण, ग्रलङ्कार, रीति, मैत्र्यनुप्रास एव छन्दाडम्बर से युक्त कलिका ग्रौर विरुद का निरूपण करते हुए समग्र विरुदावलियो के सामान्य लक्षण दिये हैं। इसके ग्रनुसार कलिका-श्लोकविरुद न्यूनातिन्यून पन्द्रह होते हैं ग्रौर ग्रधिक से ग्रधिक नव्वे होते हैं। नव्वे कलिका-श्लोक विरुद युक्त विरुदावली ग्रखडा विरुदावली या महती विरुदावली कहलाती है। मतान्तर के ग्रनुसार किसी कलिका के स्थान पर केवल गद्य होता है या विरुद होता है ग्रौर कलिका एव विरुद ग्राशीर्वादात्मक पद्यो से युक्त होता है। प्रत्येक विरुदावली मे तीन या पाच कलिकायें ग्रौर इतने ही श्लोको की रचना ऐच्छिक होती है। ग्रत मे विरुदावली का फल-निर्देश है।

१०. खण्डावली-प्रकरण

विरुदावली के समान ही खडावली होती है किन्तु इतना ग्रतर है कि ग्रादि ग्रौर ग्रत में ग्राशीर्वादात्मक पद्य विरुदरहित होते हैं। तामरसखडावली ग्रौर मञ्जरी-खडावली के लक्षणसहित उदाहरण दिये हैं। लक्षणकारिकाग्रो की टीका भी है। ग्रत मे कवि कहता है कि खडावली के हजारो भेद सम्भव हैं किंतु ग्रथ विस्तारभय से मैंने इसके भेदो के उल्लेख नही किये हैं, केवल सुकुमारमतियो के लिये मार्ग-प्रदर्शन किया है।

११ दोष-प्रकरण

इस प्रकरण मे विरुदावली ग्रौर खण्डावली के दोषो का दिग्दर्शन कराया

(२) चण्डवृत्त-अवान्तर-प्रकरण

महाकलिकाचण्डवृत्त के दो भेद हैं —१ सलक्षण और २ साधारण।

सलक्षण चण्डवृत्त के तीन भेद हैं —१ शुद्धसलक्षण २ सकीर्णसलक्षण और ३ गर्भितसलक्षण।

शुद्ध सलक्षण चण्डवृत्त के २० भेद हैं :—१ पुरुषोत्तम २ तिलक ३ अच्युत ४ वर्द्धित ५ रण ६ वीर, ७ शाक ८ मातङ्गखेलित ९ उत्पल १० गुणरति ११ कल्पद्रुम १२ कन्दल १३ अपराजित, १४ नर्तन १५ तरलसमस्त १६ वेष्टन १७ अस्खलित, १८ पल्लवित १९ समग्र और २० तुरग।

सकीर्णसलक्षण चण्डवृत्त के ५ भेद हैं —१ पङ्केरुह २ सितकञ्ज ३ पाण्डूत्पल ४ इन्दीवर और ५ अरुणाम्भोरुह।

गर्भितसलक्षण चण्डवृत्त के ९ भेद हैं —१ फुल्लाम्बुज २ चम्पक ३ वञ्जुल ४ कुन्द ५ बकुलभासुर ६ बकुलमंगल ७ मञ्जरीकोरक, ८ गुच्छक और ९ कुसुम।

भेदकथन के पश्चात् रचना-वैशिष्ट्य में प्रयुक्त मधुर श्लिष्ट अश्लिष्ट शिथिल और ह्लादि की परिभाषा और इनका विवेचन करते हुये उपयुक्त ३४ महाकलिका-चण्डवृत्तों के क्रमशः लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लक्षण पूर्ण पद्यों में न होकर चण्डपदों मे कारिका-रूप मे हैं और इन लक्षणों को स्पष्ट करने के लिये व्याख्या भी दी है। ग्रंथकार ने ग्रंथ-विस्तार के भय से प्रत्येक चण्डवृत्त के उदाहरण में एक-एक चरणमात्र दिया है।

श्रीरूपगोस्वामिप्रणीत गोविन्दविरुदावली से निम्नलिखित चण्डवृत्तों के प्रत्युदाहरण दिये हैं —१ तिलक २ अच्युत ३ वर्द्धित ४ रण ५ वीर, ६ मातङ्गखेलित ७ उत्पल ८ गुणरति ९ पल्लवित १० तुरग ११ पंकेरुह १२ सितकंज १३ पाण्डूत्पल १४ इन्दीवर १५ अरुणाम्भोरुह १६ फुल्लाम्बुज १७ चम्पक १८ वंजुल १९ कुन्द २० बकुलभासुर २१ बकुल मंगल २२ मञ्जरीकोरक २३ गुच्छ और २४ कुसुम।

वीर का वीरभद्र रण का समग्र और तुरग का तुरग नामभेद भी दिया है।

(३) त्रिभंगी-कलिका-अवान्तर-प्रकरण

विरुदसहित दण्डक त्रिभंगी-कलिका विरुदसहित सम्पूर्ण विदग्धत्रिभंगी कलिका और मिश्रकलिका के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लक्षण-कारिकाओं

तुलनात्मक अध्ययन करने पर इस ग्रथ का महत्त्व कई दृष्टियो से आका जा सकता है। न केवल सस्कृत और प्राकृत-अपभ्र श छन्द-परम्परा की दृष्टि से ही अपितु हिन्दी छद-परम्परा की दृष्टि से भी इस ग्रथ को छद शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ ग्रथ मान सकते हैं। इस ग्रथ की प्रमुख-प्रमुख विशेपतायें इस प्रकार हैं :—

१ पारिभाषिक शब्द और गण

इस ग्रथ में मात्रिक और वर्णिक दोनो छदो का विधान होने से ग्रथकार ने सस्कृत और प्राकृत-अपभ्र श की भगणादिगण एव टगणादिगणो की दोनो प्रणालिओ का साधिकार प्रयोग किया है। स्वयभू छद, छदोनुशासन और कविदर्पण आदि ग्रथो मे षट्कल, पञ्चकल, चतुष्कल आदि कलाओ का ही प्रयोग मिलता है किंतु इनके प्रस्तार-भेद, नाम और उसके कर्ण, पयोधर, पक्षिराज आदि पर्यायो का प्रयोग हमे प्राप्त नही होता है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग हमे कवि विरहाक कृत वृत्तजातिसमुच्चय मे प्राप्त होता है। इसके पश्चात् तो इसका प्रयोग प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ आदि अनेक ग्रथो मे प्राप्त होता है।

वृत्तमौक्तिक मे ट = षट्कल, ठ = पञ्चकल ड = चतुष्कल, ढ = त्रिकल, ण = द्विकल गण स्थापित कर इनके प्रस्तारभेद, नाम और प्रत्येक के पर्याय विशदता के साथ प्राप्त है। साथ ही पृथक् रूप से मगणादि आठ गण भी दिये है। इस पारिभाषिक शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन के साथ परिचय मैंने इसी ग्रथ के प्रथम परिशिष्ट मे दिया है, अत यहां पर पुन पिष्टपेषण अनावश्यक है, किंतु रत्नमञ्जूषा और जानाश्रयी छन्दोविचिति मे हमे एक नये रूप मे पारिभाषिक शब्दावली प्राप्त होती है जिसका कि पूर्ववर्त्ती और परवर्ती किसी भी ग्रथ में प्रयोग नही मिलता है अत तुलना के लिये दोनो की सकेत सूची यहां देना अप्रासगिक न होगा।

रत्नमञ्जूषा				वृत्तमौक्तिक
क्	और	आ	ऽ ऽ ऽ	मगण, हर
च्	,,	ए	। ऽ ऽ	यगण, इन्द्रासन आदि
त्	,,	औ	ऽ । ऽ	रगण, सूर्य, वीणा आदि
प्	,,	ई	। । ऽ	सगण, करतल, कर आदि
श्	,,	अ	ऽ ऽ ।	तगण, हीर
ष्	,,	उ	। ऽ ।	जगण, पयोधर, भूपति आदि
स्	,,	ऋ	ऽ । ।	भगण, दहन, पितामह आदि

है। ममत्री, अनुप्रासाभाव दौर्बल्य कलाहृति असाम्प्रत, छलोभिराम विपरीतमुख, विर्मुखस और स्वलसतालनामक ९ दोषों के लक्षण एवं उदाहरण देते हुये कहा है कि इन सब दोषों को जो विद्वान् नहीं जानता है और काव्य रचना करता है वह समोलोक में उलूक होता है अर्थात् काव्य मे इन दोषों का त्याग अनिवार्य है।

१२ अनुक्रमणी प्रकरण

रविकर पशुपति पिंगल एवं शम्भु के छंद शास्त्रों का अवलोकन कर चन्द्र शेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक की रचना की है।

यह प्रकरण दो विभागों में विभक्त है। प्रथम विभागों ४० पद्यो का है जिसमें प्रथम-खण्ड की अनुक्रमणिका दी है और द्वितीय विभाग १८८ पद्यों का है जिसमें द्वितीय-खंड को अनुक्रमणिका दी है।

प्रथम खण्डानुक्रम—इसमें मात्रावृत्त नामक प्रथम खंड के छहों प्रकरणों को विस्तृत सूची है। प्रत्येक छंद का क्रमश नाम दिया है और अंत में छंद सख्या भेदों सहित २८८ दिखलाई है।

द्वितीय खण्डानुक्रम —प्रथम प्रकरण में प्ररूपित अक्षरानुसार अर्थात् एक से छब्बीस अक्षर पर्यन्त छंदों के क्रमश नाम, नामभेद और प्रस्तारभेद के साथ सूची दी है और अंत में प्रस्तारपिंड की सख्या देते हुये उल्लिखित २९५ छंदों की सख्या दी है। द्वितीय प्रकरण से छठे प्रकरण तक की सूची मे छंदनाम और नामभेद दिये हैं। सप्तम यतिप्रकरण का उल्लेख करते हुये आठवें गद्य प्रकरण के भेदों का सूचन किया है और नवम तथा दसवें प्रकरण के समस्त छंदों के नाम और नामभेद दिये हैं एवं ग्यारहवें शेष प्रकरण का उल्लेख किया है।

अंत में दोनों खंडों के प्रकरणो की सख्या देते हुये उपसंहार किया है।

ग्रन्थकृत्प्रशस्ति—

वि स० १६७६ कार्तिकी पूर्णिमा को वसिष्ठवंशीय लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र चन्द्रशेखर भट्ट ने इसकी (द्वितीय खंड) रचना पूर्ण की है। प्रशस्तिपद्य ८ एवं ९ मे लिखा है कि चन्द्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास हो जाने के कारण इस ग्रंथ की पूर्णाहुति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है।

ग्रन्थ का वैशिष्ट्य

प्रस्तुत ग्रंथ का छंदशास्त्र की परम्परा में एक विशिष्ट स्थान है। इसी ग्रंथ के पृष्ठांक ४१४ में उल्लिखित छंद शास्त्र के १९ ग्रंथ और दो टीका-ग्रंथों के साथ

पारिभाषिक शब्दावली का ग्रन्थकार ने सफलता के साथ विविध रूपो मे प्रयोग किया है —१ विशुद्ध टादिगण, २. टादि और मगणादि मिश्र, ३. टादि और पारिभाषिक मिश्र, ४ विशुद्ध पारिभाषिक, ५ विशुद्ध मगणादि और ६ पारिभाषिक एव मगणादि मिश्र। उदाहरण के तौर पर प्रत्येक प्रयोग का एक-एक पद्य प्रस्तुत है —

१ विशुद्ध टगणादि का प्रयोग—

आदौ षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि।
ठगण डगण द्वयमपि **घत्तानन्दे** धेहि ॥३२॥ [पृ० १६]

अर्थात् घत्तानन्द नामक मात्रिक छद मे षट्कल = ६ मात्रा, डगणत्रय = चतुष्कल तीन १२ मात्रा, ठगण = पञ्चकल ५ मात्रा और डगणद्वय = चतुष्कलद्वय ८ मात्रा कुल ३१ मात्रा होती है।

२ टादि और मगणादि मिश्र का प्रयोग—

डगण कुरु विचित्रमन्ते जगणमत्र।
मध्ये द्विलमवेहि दीपकमिति विधेहि ॥३६॥ [पृ० ३८]

अर्थात् दीपक नामक मात्रिक छद में डगण = चतुष्कल ४ मात्रा, द्विल = दो लघु २ मात्रा और जगण = ४ मात्रा, कुल १० मात्रा होती है।

३. टादि और पारिभाषिक-मिश्र का प्रयोग—

यदि योगडगणकृत - चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणा।
नायक-विरहितपद - कविजनकृतमदपठनादपि मानसहरणा।
इह दशवसुमनुभि क्रियते कविभिर्विरतिर्यदि युगदहनकला।
सा पद्मावतिका फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥१॥
[पृ० ३०]

अर्थात् पद्मावतीनामक मात्रिक छद मे 'योगडगण' डगण = चतुष्कल, योग = आठ अर्थात् ३२ मात्रायें होती हैं जिनमें द्विज = ।।।। चार मात्रा, गुरु-युग = ऽऽ चार मात्रा, कर = ।।ऽ सगण ४ मात्रा, वसुचरण = ऽ।। भगण चार मात्रा का प्रयोग अपेक्षित है और नायक = ।ऽ। जगण चार मात्रा का प्रयोग निषिद्ध है। इस छद मे यति १०, ८, १४ मात्रा पर होती है।

४ विशुद्ध पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग—

द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
कुचतटगत पुष्प हार तथा दधती मुदा।

ह् और ह	।।।	नगण, भाव रस भामिनी आदि
ग्	ऽऽ	कर्ण सुरतलता, आदि
द	।ऽ	ध्वज चिह्न चिरालय आदि
ब्	।।	सुप्रिय परम
म्	ऽ	हार ताटंक नूपुर आदि
न्	।	सर, मेरु कनक, दण्ड आदि

× × × ×

वाणभूषण छन्दोविचिति		वृत्तमौक्तिक
म	ऽ	ग हार ताटंक आदि
ह	।	ल सर मेरु आदि
गङ्गास्	ऽऽ	गुरुयुगल कर्ण रसिक आदि
नदीज्	।ऽ	पलय, तोमर, पवन आदि
नपुर्	।।	सुप्रिय, परम
नूतसाम्	ऽऽऽ	मगण हर,
कुथाङ्गोम्	।ऽ	यगण कुञ्जर, रदन मेघ आदि
धीवराद्	ऽ।ऽ	रगण गरुड भुजंगम विहग आदि
कुस्तेम्	।।ऽ	सगण कमल हस्त रत्न आदि
तेश्रीक्वत्	ऽऽ।	तगण हीर
विभातिक्	।ऽ।	जगण भूपति कुच आदि
सातवत्	ऽ।।	भगण तात पद अधायुगल आदि
तरतिम्	।।।	नमण रस ताण्डव आदि
नभरतिद्	।।।।	विप्र द्विज बाण आदि
भाग्रमग्	ऽ।।।	महिपण
नबीनम्	।ऽ।।	कुसुम
नतुबग्र	।।ऽ।	शेखर
नमनिमीय्	।।।ऽ	चाप
सोममासाप्	ऽ।ऽऽ	..
रौतिमपूरोम्	ऽ।।ऽऽ	...
धैर्यमस्तुतेद्	ऽ।ऽ।ऽ	..
मनुतरति	।।।।।	पापगण
जयनरवरम्	।।।।।।	गालि

पारिभाषिक शब्दावली का ग्रन्थकार ने सफलता के साथ विविध रूपों मे प्रयोग किया है '—१ विशुद्ध टादिगण, २. टादि और मगणादि मिश्र, ३. टादि और पारिभाषिक मिश्र, ४ विशुद्ध पारिभाषिक, ५ विशुद्ध मगणादि और ६ पारिभाषिक एव मगणादि मिश्र। उदाहरण के तौर पर प्रत्येक प्रयोग का एक-एक पद्य प्रस्तुत है —

१ विशुद्ध टगणादि का प्रयोग--

> आदौ षट्कलमिह् रचय डगणत्रयमिह् धेहि।
> ठगणं डगण द्वयमपि घत्तानन्दे धेहि ॥३२॥ [पृ० १९]

अर्थात् घत्तानन्द नामक मात्रिक छद मे षट्कल = ६ मात्रा, डगणत्रय = चतुष्कल तीन १२ मात्रा, ठगण = पञ्चकल ५ मात्रा और डगणद्वय = चतुष्कलद्वय ८ मात्रा कुल ३१ मात्रा होती है।

२ टादि और मगणादि मिश्र का प्रयोग—

> डगण कुरु विचित्रमन्ते जगणमत्र।
> मध्ये द्विलमवेहि दीपकमिति विधेहि ॥३६॥ [पृ० ३८]

अर्थात् दीपक नामक मात्रिक छद मे डगण = चतुष्कल ४ मात्रा, द्विल = दो लघु २ मात्रा और जगण = ४ मात्रा, कुल १० मात्रा होती है।

३. टादि और पारिभाषिक-मिश्र का प्रयोग—

> यदि योगडगणकृत - चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणा।
> नायक-विरहितपद - कविजनकृतमदपठनादपि मानसहरणा।
> इह दशवसुमनुभि क्रियते कविभिर्विरतिर्यदि युगदहनकला।
> सा पद्मावतिका फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥१॥
> [पृ० ३०]

अर्थात् पद्मावतीनामक मात्रिक छद मे 'योगडगण' डगण = चतुष्कल, योग = आठ अर्थात् ३२ मात्रायें होती हैं जिनमे द्विज = ।।।। चार मात्रा, गुरु-युग = ऽऽ चार मात्रा, कर = ।।ऽ सगण ४ मात्रा, वसुचरण = ऽ।। भगण चार मात्रा का प्रयोग अपेक्षित है और नायक = ।ऽ। जगण चार मात्रा का प्रयोग निषिद्ध है। इस छद मे यति १०, ८, १४ मात्रा पर होती है।

४ विशुद्ध पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग—

> द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
> कुचतटगत पुष्प हार तथा दधती मुदा।

विरुतमणित सविभ्राण, पदान्तगनूपुर
रसजमनिधिचिह्नप्रा नागप्रिया हरिणी मता ॥४१८॥
[पृ० ११७]

हरिणी नामक छन्द १७ वर्णों का होता है। इसमें द्विज = । । । ।, रस = ।, कर्णेन्द्र = S S S S, कम्बल = S कुच = । S । पुष्प = । हार = S, विरुत = । नूपुर = S होते हैं अर्थात् इस छन्द में नगण सगण मगण रगण, सगण लघु और गुरु होते हैं। ६ ४ और ७ पर यति होती है।

५ विशुद्ध मगणादिगणों का प्रयोग—

कुरु नगणयुग मेहि त भगण तत,
प्रतिपदविरतौ भासते रगणोऽन्ततः।
मुनिरचितयतिर्नागराजफणिप्रिया
सकलवमुमृतां मानसे वसति प्रिया ॥३६६॥ [पृ० १२७]

१५ वर्ण के प्रियाछन्द का लक्षण है—नगण नगण तगण भगण और रगण। ७ और ८ पर यति होती है।

६ पारिभाषिक और मगणादिमिश्र का प्रयोग—

पूर्व कर्णमिरवं कारय पश्चाद्देहि मकार विम्बं
हार वह्निप्रोक्तं धारय हस्तं देहि मकार चान्ते।
रम्भैर्वर्णविरामं कुरु पादे नागमहाराजोक्तं
मञ्जीराख्यं वृत्तं भावय शीघ्रं चेतसि कान्ते स्वीये ॥४४३॥
[पृ० १४१]

१८ अक्षरों के मञ्जीराछन्द का लक्षण है —कर्णमिरवं = S S S S S S, मकार = S । । हार वह्नि = S S S हस्तं = । । S, और मकार = S S S अर्थात् इसमें मगण मगण मगण भगण मगण और मगण होते हैं। यति ६ ६ पर है।

इस पारिभाषिक शब्दावली के कारण यह सत्य है कि वृत्तरत्नाकर, छंदोमञ्जरी और श्रुतबोध की तरह वह बाल-सरसता भवश्य ही नहीं रही किन्तु इसके सफल प्रयोग से इस ग्रंथ में जैसा शब्दमाधुर्य भाषा की प्राञ्जलता रचना सौष्ठव और लालित्य प्राप्त होता है वैसा उन ग्रंथों में कहाँ है ?

२ विशिष्ट छन्द—

वृत्तमौक्तिक में जिन छन्दों के लक्षण, एवं उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं उनमें से कतिपय छन्द ऐसे हैं जिनका पृष्ठ ४१४ पर दी हुई सन्दर्भ-ग्रंथ

सूची के प्रसिद्ध छद.शास्त्र के २१ ग्रन्थो मे भी उल्लेख नही है और कतिपय छद ऐसे है जो केवल हेमचन्द्रीय छदोनुशासन, पिंगलकृत छद सूत्र, हरिहरकृत प्राकृतपिंगल और दु खभञ्जनकृत वाग्वल्लभ मे हो प्राप्त होते है। इन विशिष्ट छदो की वर्गीकृत तालिका इस प्रकार है .—

वृत्तमौक्तिक के विशिष्ट छन्द—

मात्रिक छन्द —कामकला, हरिगीतकम्, मनोहर हरिगीतम्, अपरा हरिगीता, मदिरा सवया, मालती सवया, मल्ली सवया, मल्लिका सवया, माधवी सवया, मागधी सवया, घनाक्षर, अपर समगलितक और अपर सगलितक।

वर्णिक छन्द —१४ अक्षर – शरभी, अहिधृति, १६ अक्षर – सुकेसरम्, ललना, १७ अक्षर – मत्तगवाहिनी, १९ अक्षर – नागानन्द, मृदुलकुसुम, २० अक्षर – प्लवगभगमगल, अनवधिगुणगण, २१ अक्षर – ब्रह्मानन्द, निरुपमतिलक, २२ अक्षर – विद्यानन्द, शिखर, अच्युत, २३ अक्षर – दिव्यानन्द; कनकवलय, २४ अक्षर – रामानन्द, तरलनयन, २५ अक्षर–कामानन्द, मणिगुण, २६ अक्षर–कमलदल और विषमवृत्तो मे भाव तथा वैतालीय छदो मे नलिन और अपर नलिन।

इस प्रकार मात्रिक छद १३ और वर्णिक छद २४ कुल ३७ छन्द ऐसे है जिनका अन्य छद शास्त्रो मे उल्लेख नही है।

निम्नलिखित ११ छद केवल हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन एव वृत्तमौक्तिक मे ही प्राप्त है —

मात्रिक छन्द :—विगलितक, सुन्दरगलितक, भूषणगलितक, मुखगलितक, विलम्बितगलितक, समगलितक, विक्षिप्तिकागलितक, विषमितागलितक और मालागलितक।

वर्णिक छन्द—१३ अक्षर – सुद्युति और २१ अक्षर – रुचिरा।

१८ वर्ण का लीलाचन्द्र नामक छन्द प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक मे ही प्राप्त है।

निम्नाकित १७ वर्णिक छद वृत्तमौक्तिक और दु खभजन कवि रचित वाग्वल्लभ में ही प्राप्त हैं।

८ अक्षर – जलद, ९ अक्षर – सुललित, १० अक्षर – गोपाल, ललितगति, ११ अक्षर – शालिनी-वातोर्म्युपजाति, बकुल, १३ अक्षर – वाराह, विमलगति; १४ अक्षर – मणिगण, १५ अक्षर – उडुगण, १७ अक्षर – लीलाधृष्ट, १८

विरुतमसितं सविश्रामं पदाम्तगनूपुरं
रसजसनिधिर्भिच्छन्दा नागप्रिया हरिणी मता ॥४१८॥
[पृ० ११७]

हरिणी नामक छंद १७ वर्णों का होता है। इसमें द्विज = ।।।। रस = ।, कर्णद्वन्द्व = SSSS, कच्छप = S, कुच = ।S।, पुष्प = ।, हार = S, विरुत = । नूपुर = S होते हैं अर्थात् इस छंद में नगण सगण मगण रगण, सगण लघु और गुरु होते हैं। ६, ४ और ७ पर यति होती है।

५ विशुद्ध नगणादिगणों का प्रयोग—

कुरु नगणयुगं धेहि तं भगण ततः,
प्रतिपदविरतौ भासते रगणोऽन्तस ।
मुनिरचितयतिर्नागराजफणिप्रिया
सकलतनुभृतां मानसे लसति प्रिया ॥३६६॥ [पृ० १२७]

१५ वर्ण के प्रियाछन्द का लक्षण है—नगण नगण तगण भगण और रगण। ७ और ८ पर यति होती है।

६ पारिभाषिक और गणादिमिश्र का प्रयोग—

पूर्वं कर्णविरवं कारय पश्चाद्धेहि मकारं विम्बं
हारं वह्निप्रोक्तं धारय हस्तं धेहि मकारं कान्ते ।
रम्यैर्वर्णैर्विश्रामं कुरु पादे नागमहाराजोक्तं
मञ्जीराख्यं वृत्तं भावय शीघ्रं चेतसि कान्ते स्वीये ॥४४३॥
[पृ १४२]

१८ अक्षरों के मञ्जीराछन्द का लक्षण है —कर्णविरव = SSSSS मकार = S।। हार वह्नि = SSS, हस्तं = ।।S, और मकार = SSS अर्थात् इसमें मगण मगण, भगण मगण सगण और मगण होते हैं। यति १३ पर है।

इस पारिभाषिक शब्दावली के कारण यह सत्य है कि वृत्तरत्नाकर छंदोमञ्जरी और श्रुतबोध की तरह यह ग्रंथ सरलता अवश्य हो नहीं रहा किन्तु इसके सफल प्रयोग से इस ग्रंथ में जैसा शब्दमाधुर्य भाषा की प्राञ्जलता रचना सौष्ठव और लालित्य प्राप्त होता है वैसा उन ग्रंथों में कहाँ है ?

२ विशिष्ट छन्द—

वृत्तमौक्तिक में जिन छन्दों के लक्षण, एवं उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं उनमें से कतिपय छंद ऐसे हैं जिनका पृष्ठ ४१४ पर दी हुई सन्दर्भ-ग्रंथ

हो सकते थे ? सभव है, इसका कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ भी अवश्य रहा हो। कतिपय स्फुट विरुदावलिया अवश्य प्राप्त होती हैं तथा शोध करने पर और भी प्राप्त होना सभव है किन्तु इनके भेद, प्रभेद उदाहरणो के साथ सकलन अद्यावधि अप्राप्त है। कवि ने इस विच्छिन्नप्राय परम्परा को अक्षुण्ण रख कर जो साहित्य जगत् को अमूल्य देन दी है वह श्लाघ्य ही नही महत्त्वपूर्ण भी है।

अद्यावधि जो सस्कृत-वाड्मय प्रकाश मे आया है उसमे विरुदावली-साहित्य पर नही के समान प्रकाश पडा है। अत शोध-विद्वानो का कर्त्तव्य है कि वे इस अछूते और वैशिष्ट्यपूर्ण विरुदावली-साहित्य पर अनुसधान कर इसके महत्त्व पर प्रकाश डाले।

५ यति एव गद्य प्रकरण—

समग्र छन्द शास्त्रियो ने मात्रिक और वर्णिक पद्य के पदान्त और पदमध्य में यतिविधान आवश्यक माना है। वृत्तमौक्तिककार ने भी यति प्रकरण मे इस का सुन्दर विश्लेषण और विवेचन किया है। इनके मत से काव्य मे मधुरता के लिये यति का बन्धन आवश्यक है। यति से काव्य मे सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। यति के बिना काव्य श्रेष्ठतर नही हो सकता[1]।

ग्रन्थकार के मत से भरत, पिंगल और जयदेव सस्कृत-साहित्य मे यति आवश्यक मानते हैं और श्वेतमाण्डव्य आदि मुनिगण यति का बन्धन स्वीकार नही करते हैं[2]। जयकीर्त्ति के मतानुसार पिंगल वसिष्ठ, कौण्डिन्य, कपिल, कम्बलमुनि यति को अनिवार्य मानते है और भरत, कोहल, माण्डव्य, अश्वतर, सैतव आदि कतिपय आचार्य यति को अनावश्यक मानते हैं—

वाञ्छन्ति यति पिङ्गल-वसिष्ठ-कौण्डिन्य-कपिल-कम्बलमुनयः।
नेच्छन्ति भरत-कोहल-माण्डव्याश्वतरसैतवाद्या केचित्॥
[छन्दोनुशासन, १ १३]

स्वयम्भूछन्द मे लिखा है—

जयदेवपिंगला सक्कयमि दुच्चिय जइ समिच्छति।
मडव्वभरहकासवसेयवपमुहा न इच्छति ॥१,७१॥
[जयदेवपिंगलौ सस्कृते द्वावेव यति समिच्छन्ति।
माण्डव्यभरतकाश्यपसैतवप्रमुखा न इच्छन्ति॥]

अर्थात् जयदेव और पिंगल यति मानते हैं और माण्डव्य, भरत, काश्यप, सैतव आदि नही मानते हैं।

१–पृ० २०४ पद्य ८ २–पृ २०४ पद्य १०

अक्षर – उपवनकुसुम, २३ अक्षर – मल्लिका २४ अक्षर – माधवी, २५ अक्षर – मल्ली, २६ अक्षर – गोविन्दानन्द और मागधी ।

दो नगण और आठ रगणयुक्त प्रचितक-नामक दण्डक का प्रयोग केवल छंदःसूत्र और वृत्तमौक्तिक में ही है ।

चौपैया नामक मात्रिक छंद अन्य ग्रंथों में भी प्राप्त है । किन्तु जहाँ अन्य ग्रंथों में १२० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है वहाँ इस ग्रन्थ में १२० मात्रा का एक पद और ४८० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है ।

इस वर्गीकरण से स्पष्ट है कि अन्य ग्रंथों की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक में छंदों का वैशिष्ट्य और बाहुल्य है ।

३ छन्दों के नाम भेद

प्रस्तुत ग्रंथ में ५० छंद ऐसे हैं जिनका ग्रंथकार ने प्राकृतपिंगल, आचार्य शंभु एवं तत्कालीन आधुनिक छंदःशास्त्रियों के मतानुसार नाम भेद दिये हैं । इन नामभेदों की तालिका ग्रंथ के सारांश में और चतुर्थ परिशिष्ट (ख) में देखी जा सकती है । इस प्रकार की नामभेदों की प्रणाली अन्य मूलग्रन्थों में उपलब्ध नहीं है । हाँ हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की स्वोपज्ञ टीका और वृत्तरत्नाकर की नारायणभट्टी टीका आदि कतिपय टीका-ग्रन्थों में यह प्रणाली अवश्य लक्षित होती है किन्तु इतनी विपुलता के साथ नहीं ।

इससे यह तो स्पष्ट है कि ग्रन्थकार ने प्राचीन एवं अर्वाचीन अनेक छन्दःशास्त्रों का आलोडन कर प्रस्तुत ग्रंथ द्वारा नवनीत रखने का प्रयास किया है ।

४ बिरुदावली और खण्डावली

ग्रंथ के द्वितीय-खण्ड के नवम प्रकरण में बिरुदावली दसवें प्रकरण में खण्डावली और ग्यारहवें प्रकरण में इन दोनों के दोषों का वर्णन है । बिरुदावली में १४ कलिका ४० बिरुदावली और २ खण्डावली के लक्षण एवं उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं । यह बिरुदावली कवि की मौलिक-रचना प्रतीत होती है क्योंकि अन्य छन्द-ग्रंथों में बिरुदावली के भेद और लक्षण तो दूर रहे किन्तु इसका नामोल्लेख भी नहीं है । हाँ इतना अवश्य है कि कवि ने २६ बिरुदावलियों के उदाहरण रूपगोस्वामी प्रणीत गोविन्दबिरुदावली से दिये हैं अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि रूपगोस्वामी के पूर्व भी इसकी परम्परा कवि-वर्गों में अवश्य विद्यमान थी अन्यथा इतने भेद और प्रभेद कैसे प्राप्त

हो सकते थे ? सभव है, इसका कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ भी अवश्य रहा हो ! कतिपय स्फुट विरुदावलिया अवश्य प्राप्त होती हैं तथा शोध करने पर और भी प्राप्त होना सभव है किन्तु इनके भेद, प्रभेद उदाहरणो के साथ सकलन अद्यावधि अप्राप्त है। कवि ने इस विच्छिन्नप्राय परम्परा को अक्षुण्ण रख कर जो साहित्य जगत् को अमूल्य देन दी है वह श्लाघ्य ही नही महत्त्वपूर्ण भी है।

अद्यावधि जो सस्कृत-वाङ्मय प्रकाश मे आया है उसमे विरुदावली-साहित्य पर नही के समान प्रकाश पडा है। अत शोध-विद्वानो का कर्त्तव्य है कि वे इस अछूते और वैशिष्टयपूर्ण विरुदावली-साहित्य पर अनुसधान कर इसके महत्त्व पर प्रकाश डालें।

५ यति एव गद्य प्रकरण—

समग्र छन्द शास्त्रियो ने मात्रिक और वर्णिक पद्य के पदान्त और पदमध्य मे यतिविधान आवश्यक माना है। वृत्तमौक्तिककार ने भी यति प्रकरण मे इस का सुन्दर विश्लेषण और विवेचन किया है। इनके मत से काव्य मे मधुरता के लिये यति का बन्धन आवश्यक है। यति से काव्य मे सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। यति के बिना काव्य श्रेष्ठतर नही हो सकता[१]।

ग्रन्थकार के मत से भरत, पिंगल और जयदेव सस्कृत-साहित्य मे यति आवश्यक मानते है और श्वेतमाण्डव्य आदि मुनिगण यति का बन्धन स्वीकार नही करते हैं[२]। जयकीर्ति के मतानुसार पिंगल वसिष्ठ, कौण्डिन्य, कपिल, कम्बलमुनि यति को अनिवार्य मानते हैं और भरत, कोहल, माण्डव्य, अश्वतर, सैतव आदि कतिपय आचार्य यति को अनावश्यक मानते हैं—

> वाञ्छन्ति यतिं पिङ्गल-वसिष्ठ-कौण्डिन्य-कपिल-कम्बलमुनयः।
> नेच्छन्ति भरत-कोहल-माण्डव्याश्वतरसैतवाद्या केचित्॥
>
> [छन्दोनुशासन, १ १३]

स्वयम्भूछन्द मे लिखा है—

> जयदेवपिंगला सक्कयमि दुच्चिय जइ समिच्छति।
> मडव्वभरहकासवसेयवपमुहा न इच्छति॥१,७१॥
>
> [जयदेवपिंगलौ सस्कृते द्वावेव यतिं समिच्छन्ति।
> माण्डव्यभरतकाश्यपसैतवप्रमुखा न इच्छन्ति॥]

अर्थात् जयदेव और पिंगल यति मानते हैं और माण्डव्य, भरत, काश्यप, सैतव आदि नही मानते हैं।

१–पृ. २०४ पद्य ८ २–पृ २०४ पद्य १०

भरत के नाट्यशास्त्र के छन्द प्रकरण में पादान्त यति तो प्राप्त है ही साथ ही पदमध्ययति भी प्राप्त है।[1] ऐसी अवस्था में जयकीर्ति एवं स्वयम्भू-छन्दकार ने भरत को यतिविरोधी कैसे माना विचारणीय है! वृत्तमौक्तिककार ने भरत को यतिसमर्थक ही माना है।

यति का सांगोपांग विश्लेषण छन्दःसूत्र की हलायुधटीका हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की स्वोपज्ञटीका और वृत्तमौक्तिक में ही प्राप्त है। अन्य छन्द-शास्त्रों में कतिपय छन्द-शास्त्रियों ने इसका सामान्य-वर्णन सा ही किया है।

गद्य काव्य-साहित्य का प्रमुख अंग है। प्रस्तुत ग्रन्थ में इसके भेद प्रभेदों के लक्षण और प्रत्येक के उदाहरण प्राप्त हैं। साथ ही अन्य आचार्यों के मतों का उल्लेख कर उनके मतानुसार ही उदाहरण भी ग्रंथकार ने दिये हैं। इस प्रकार गद्य-काव्य का विवेचन अन्य छन्दग्रन्थों में प्राप्त नहीं है। संभव है इसे काव्य का अंग मानकर साहित्य-शास्त्रियों के लिये छोड़ दिया हो!

६ रचना शैली—

छन्दःशास्त्र की प्राचीन और अर्वाचीन रचनाशैली अनेक रूपों में प्राप्त होती है जिनमें तीन शैलियां मुख्य हैं—१ गद्य सूत्र रूप २ कारिका-शैली (लक्षण सम्मत चरण रूप) और ३ पूर्णपद्य शैली।

गद्यसूत्ररूप शैली में छन्द सूत्र रत्नमञ्जूषा जानाश्रयी छन्दोविचिति और हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की रचनायें आती हैं।

कारिकारूपशैली में जयदेवछन्दस् स्वयम्भूछन्द कविदर्पण जयकीर्ति कृत छन्दोनुशासन वृत्तरत्नाकर छन्दोमंजरी और वाग्वल्लभ की रचनायें हैं।

पूर्णपद्यशैली में प्राकृतपिंगल वाणीभूषण श्रुतबोध और वृत्तमुक्तावली की रचनायें हैं।

भरत नाट्यशास्त्र में लक्षण अनुष्टुप् छन्द में है वृत्तमुक्तावली में मात्रिक छन्दों के लक्षण गद्य में हैं और वाग्वल्लभ में मात्रिक-छन्दों के लक्षण पूर्ण पद्यों में हैं।

छन्द सूत्र रत्नमञ्जूषा जानाश्रयी छन्दोविचिति जयदेवछन्दस् जयकीर्तीय छन्दोनुशासन हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन कविदर्पण वृत्तरत्नाकर छन्दोमञ्जरी एवं वाग्वल्लभ में लक्षणमात्र प्राप्त हैं स्वरचित उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। स्वयम्भूछन्द हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की टीका और प्राकृतपिंगल में कतिपय

[1] नाट्यशास्त्र (१६ ११)

स्वरचित एवं अन्य कवियों के उदाहरण प्राप्त हैं। नाट्यशास्त्र, वाणीभूषण और वृत्तमुक्तावली में ग्रन्थकार रचित उदाहरण प्राप्त हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना-शैली हमें दो रूपों में प्राप्त होती है—१ पूर्णपद्य-शैली और २. कारिकाशैली। प्रारम्भ से द्वितीय-खण्ड के विषमवृत्तप्रकरण तक मात्रिक एवं वर्णिक छन्दों के लक्षण पूर्णपद्यशैली में हैं जिससे छन्द का लक्षण और यति आदि का विश्लेषण विशद और सरल रूप में हो गया है। वैतालीय छन्द तथा विरुदावली-खण्डावली-प्रकरण कारिकाशैली में होने से विषय को स्पष्ट करने के लिये ग्रन्थकार ने व्याख्या का आधार लिया है। यह हम पहले ही कह आये हैं कि ग्रन्थ के मूललेखक चन्द्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास द्वितीय-खण्ड के रचनाकाल के मध्य में हो गया था और तदुपरान्त उसकी इच्छा के अनुसार उनके पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट ने ग्रन्थ को पूर्ण करने का कार्य पूर्ण मनोयोग के साथ अपने हाथ में लिया था। पचम प्रकरण में तो उन्होंने जैसे तैसे ही लक्षण स्पष्ट करने के लिये पद्यशैली को अपनाये रखनेका प्रयास किया प्रतीत होता है परन्तु छठे प्रकरण (वैतालीय) पर आते ही दोनों लेखकों के व्यक्तित्व की भिन्नता का प्रतिबिम्ब हमें शैलीगत भिन्नता में मिल जाता है, क्योंकि यहां से लेखक ने कारिका-शैली को इस कार्य के लिये सुविधाजनक समझ कर अपना लिया है और अन्त तक उसी का निर्वाह उन्होंने किया है।

कवि ने स्वप्रणीत मुक्तक पद्यों के माध्यम से ही समग्र छन्दों के उदाहरण दिये हैं। प्रत्युदाहरणों में अवश्य ही पूर्ववर्ती कवियों के पद्य उद्धृत किये हैं। हां, विरुदावलीप्रकरण में स्वप्रणीत उदाहरण एक-एक चरण के ही दिये हैं।

लक्षणों के सीमित दायरे में बद्ध रहने पर भी पारिभाषिक शब्दावली के माध्यम से छन्दों के अनुरूप ही शब्दों का चयन कर कवि ने जो लयात्मक सौन्दर्य, माधुर्य और चमत्कार का सृजन किया है वह अनूठा है। यथा—

पूर्णपद्यशैली का उदाहरण—

हारद्वयं स्फुरदुरोजयुतं दधाना,
हस्तं च गन्धकुसुमोज्ज्वलकंकणाढ्यम्।
पादे तथा सरुतनूपुरयुग्मयुक्ता,
चित्ते वसन्ततिलका किल चाकसीति ॥२९७॥ [पृ० ११३]

कारिकाशैली का उदाहरण—

अस्य युग्मं रचिताऽपरान्तिका ॥२७॥

[व्या] अस्य प्रवृत्तकस्य समपादकृता'—'समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भि पादै रचिताऽपरान्तिका ।

उदाहरण मुक्तक पद्यों में हैं । इसमें छन्द-नामों के अनुरूप ही शृ गार, वीर रौद्र और शान्त आदि रसों के अनुकूल जिस शाब्दिक गठन, आलंकारिकता और लाक्षणिकता का कवि ने प्रयोग किया है वह भी वर्णनीय है । उदाहरण के तौर पर दो पद्य प्रस्तुत हैं—

मनोहंस-नामानुरूप उदाहरण—

> तनुजाम्मिना सखि मानसं मम दह्यते,
> तनुसम्भिरुम्नगदारुवत् परिमिद्यते ।
> अघरं च शुष्यति वारिमुक्तसुधासिवत्
> कुरु मद्गृहं कृपया सदा वनमालिमत् ॥३४४॥ [पृ० १२१]

सिंहास्यछन्द के अनुरूप उदाहरण—

> यो दैत्यानामिभ्रं वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रे
> भिन्दन् प्रह्लाद व्याकृत्योच्चर्ष्यामिदृमानुग्रे ।
> दत्तासीकाम्युमिश्रं भिर्यद् विद्युद्वृत्तास्य
> स्तूर्णं सोऽस्माकं रक्षां कुर्याद् घोर (वीरः) सिंहास्य ॥२१६॥
> [पृ १११]

स्पष्ट है कि उल्लिखित ग्रन्थों को अपेक्षा इस ग्रन्थ की रचनाशैली विशद स्पष्ट सरस और विविधता को लिये हुये है ।

७ छन्दजाति—

अद्यावधि उपलब्ध समस्त छन्द-शास्त्रियों ने एक अक्षर से छब्बीस अक्षर पर्यन्त के वर्णिक छन्दों की निम्नजाति-संज्ञा स्वीकार की है—

उक्ता	=	१ अक्षर	बृहती	=	६ अक्षर
अत्युक्ता	=	२ अक्षर	पंक्ति	=	१० अक्षर
मध्या	=	३ अक्षर	त्रिष्टुप्	=	११ अक्षर
प्रतिष्ठा	=	४ अक्षर	जगती	=	१२ अक्षर
सुप्रतिष्ठा	=	५ अक्षर	अतिजगती	=	१३ अक्षर
गायत्री	=	६ अक्षर	शक्वरी	=	१४ अक्षर
उष्णिक	=	७ अक्षर	अतिशक्वरी	=	१५ अक्षर
अनुष्टुप्	=	८ अक्षर	अष्टि	=	१६ अक्षर

अत्यष्टि	=	१७ अक्षर	आकृति	=	२२ अक्षर
धृति	=	१८ अक्षर	विकृति	=	२३ अक्षर
अतिधृति	=	१९ अक्षर	संस्कृति	=	२४ अक्षर
कृति	=	२० अक्षर	अतिकृति	=	२५ अक्षर
प्रकृति	=	२१ अक्षर	उत्कृति	=	२६ अक्षर

किन्तु प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वृत्तमौक्तिक में यह परम्परा दृष्टिगोचर नही होती है। इन तीनो ग्रन्थो मे एकाक्षर, द्वयक्षर, त्र्यक्षर आदि सज्ञा का ही प्रयोग मिलता है। सभवत मध्ययुगीन हिन्दी-परम्परा के निकट आ जाने के कारण ही इन ग्रन्थकारों ने वैदिक-परम्परा का त्याग कर सामान्य प्रणालिका अपनाई है।

८ विषयसूची—

प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड के बारहवें प्रकरण में दोनो खण्डो के प्रत्येक प्रकरणस्थ प्रतिपाद्य विषय की विस्तृत अनुक्रमणिका ग्रन्थकार ने दी है। वर्ण्य विषय के साथ साथ छन्द-नाम, नामभेद और प्रत्येक अक्षर की प्रस्तारसख्या का भी उल्लेख है। इस प्रकार की अनुक्रमणिका अन्य छन्द-ग्रन्थो में प्राप्त नही है, केवल प्राकृतपिंगल में प्रथम परिच्छेद के अत में मात्रिक-छन्द-सूची और द्वितीय परिच्छेद के अन्त में वर्णिकवृत्त-सूची गद्य में प्राप्त है। इस प्रकार की बृहत्सूची जिस विधिवत् ढग से दी गई है उससे यह प्रमाणित होता है कि लेखक का ज्ञान बहुत विस्तृत रहा है और उसने छन्द शास्त्र के प्रतिपादन मे वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने का प्रयत्न किया है और वह इसमें सफल भी हुआ है।

निष्कर्ष—उपर्युक्त छन्द-ग्रन्थो के साथ तुलना करने पर यह स्पष्ट है कि सभी दृष्टियो से अन्य ग्रन्थो की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक छन्द.शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ एव प्रौढ ग्रन्थ है। साथ ही मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य मे जो स्थान और महत्व प्राकृतपिंगल का है उससे भी अधिक महत्व इस ग्रन्थ का है क्यो कि जहा प्राकृतपिंगल में सवैया छन्द के उद्‌भव के अकुर प्राप्त होते हैं वहा वृत्तमौक्तिक मे सवैया (मदिरा, मालती आदि ६ भेद) और घनाक्षरी छन्द सोदाहरण प्राप्त हैं। मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य की दृष्टि से इसमें वे सब छन्द प्राप्त हैं जिनका प्राय. प्रयोग तत्कालीन कवि कर रहे थे। अत सस्कृत और हिन्दी दोनो के साहित्यिक दृष्टिकोण से वृत्तमौक्तिक का छन्द शास्त्र मे विशिष्ट स्थान और महत्व सुनिश्चित ही है।

[व्या॰] अस्य प्रवृत्तकस्य समपादवृत्ता'—'समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादैः रचिताऽपरान्तिका ।

उदाहरण मुक्तक पद्यों में हैं। इसमें छन्द-नामों के अनुरूप ही शृंगार, वीर, रौद्र और शान्त आदि रसों के अनुकूल जिस शाब्दिक गठन, आलंकारिकता और लाक्षणिकता का कवि ने प्रयोग किया है वह भी दर्शनीय है। उदाहरण के तौर पर दो पद्य प्रस्तुत हैं—

मनोहंस-नामानुरूप उदाहरण—

> तनुभाम्मिना सखि मानसं मम दह्यते
>
> > तमुसन्निरुण्णगवारवत् परिभिद्यते ।
>
> अधरं च शुष्यति वारिमुक्तसुधासिवत्
>
> > कुरु मद्गृहं कृपया सदा वनमालिमत् ॥१४४॥ [पृ० १२३]

सिंहास्यछन्द के अनुरूप उदाहरण—

> यो दैत्यानामिन्द्र वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै
>
> > भिद्यद् ब्रह्माण्डं व्याकुर्व्यो क्ष्माभृन्नादुग्रैः ।
>
> वसासीकाम्पुग्निम निर्यद् विद्युद्वृतास्य
>
> > स्तूर्णं सोऽस्माकं रक्षां कुर्याद् घोर (वीरः) सिंहास्यः ॥२१६॥
>
> > [पृ० १११]

स्पष्ट है कि उल्लिखित ग्रन्थों की अपेक्षा इस ग्रन्थ की रचनाशैली विशद स्पष्ट, सरस और विविधता को लिये हुये है।

७ छन्दजाति—

अद्यावधि उपलब्ध समस्त छन्द-शास्त्रियों ने एक अक्षर से छब्बीस अक्षर पर्यन्त के वर्णिक छन्दों की निम्नजाति-संज्ञा स्वीकार की है—

उक्ता	=	१ अक्षर	बृहती	=	९ अक्षर
अत्युक्ता	=	२ अक्षर	पंक्ति	=	१० अक्षर
मध्या	=	३ अक्षर	त्रिष्टुप्	=	११ अक्षर
प्रतिष्ठा	=	४ अक्षर	जगती	=	१२ अक्षर
सुप्रतिष्ठा	=	५ अक्षर	अतिजगती	=	१३ अक्षर
गायत्री	=	६ अक्षर	शक्वरी	=	१४ अक्षर
उष्णिक	=	७ अक्षर	अतिशक्वरी	=	१५ अक्षर
अनुष्टुप्	=	८ अक्षर	अष्टि	=	१६ अक्षर

अत्यष्टि	=	१७ अक्षर	आकृति	=	२२ अक्षर
धृति	=	१८ अक्षर	विकृति	=	२३ अक्षर
अतिधृति	=	१९ अक्षर	संस्कृति	=	२४ अक्षर
कृति	=	२० अक्षर	अतिकृति	=	२५ अक्षर
प्रकृति	=	२१ अक्षर	उत्कृति	=	२६ अक्षर

किन्तु प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वृत्तमौक्तिक में यह परम्परा दृष्टिगोचर नहीं होती है। इन तीनों ग्रन्थों में एकाक्षर, द्वयक्षर, त्र्यक्षर आदि संज्ञा का ही प्रयोग मिलता है। संभवतः मध्ययुगीन हिन्दी-परम्परा के निकट आ जाने के कारण ही इन ग्रन्थकारों ने वैदिक-परम्परा का त्याग कर सामान्यप्रणालिका अपनाई है।

८ विषयसूची—

प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड के बारहवें प्रकरण में दोनों खण्डों के प्रत्येक प्रकरणस्थ प्रतिपाद्य विषय की विस्तृत अनुक्रमणिका ग्रन्थकार ने दी है। वर्ण्य विषय के साथ साथ छन्द-नाम, नामभेद और प्रत्येक अक्षर की प्रस्तारसंख्या का भी उल्लेख है। इस प्रकार की अनुक्रमणिका अन्य छन्द-ग्रन्थों में प्राप्त नहीं है, केवल प्राकृतपिंगल में प्रथम परिच्छेद के अंत में मात्रिक-छन्द-सूची और द्वितीय परिच्छेद के अन्त में वर्णिकवृत्त-सूची गद्य में प्राप्त है। इस प्रकार की बृहत्सूची जिस विधिवत् ढंग से दी गई है उससे यह प्रमाणित होता है कि लेखक का ज्ञान बहुत विस्तृत रहा है और उसने छन्दःशास्त्र के प्रतिपादन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने का प्रयत्न किया है और वह इसमें सफल भी हुआ है।

निष्कर्ष—उपर्युक्त छन्द-ग्रन्थों के साथ तुलना करने पर यह स्पष्ट है कि सभी दृष्टियों से अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक छन्दःशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ एवं प्रौढ ग्रन्थ है। साथ ही मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य में जो स्थान और महत्त्व प्राकृतपिंगल का है उससे भी अधिक महत्त्व इस ग्रन्थ का है क्योंकि जहां प्राकृतपिंगल में सवैया छन्द के उद्भव के अंकुर प्राप्त होते हैं वहां वृत्तमौक्तिक में सवैया (मदिरा, मालती आदि ६ भेद) और घनाक्षरी छन्द सोदाहरण प्राप्त हैं। मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य की दृष्टि से इसमें वे सब छन्द प्राप्त हैं जिनका प्रायः प्रयोग तत्कालीन कवि कर रहे थे। अतः संस्कृत और हिन्दी दोनों के साहित्यिक दृष्टिकोण से वृत्तमौक्तिक का छन्दःशास्त्र में विशिष्ट स्थान और महत्त्व सुनिश्चित ही है।

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल का आलोचन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक के मात्रावृत्तनामक प्रथम खण्ड में न केवल प्राकृतपिंगल का आधार ही लिया है अपितु पांचवां और छठा प्रकरण तथा कतिपय स्थलों को छोड़ कर पूर्णत प्राकृतपिंगल की छाया या अनुवाद के रूप में ही रचना की है। मुख्य अन्तर है तो केवल इतना ही है कि प्राकृतपिंगल की रचना प्राकृत-अपभ्रंश में है तो वृत्तमौक्तिक की रचना संस्कृत में है। दोनों ही ग्रन्थों की समानतायें इस प्रकार हैं—

१ दोनों ही ग्रन्थ मात्रावृत्त और वर्णवृत्त-नामक दो परिच्छेदों में विभक्त हैं। वृत्तमौक्तिक में परिच्छेद के स्थान पर 'खण्ड' शब्द का प्रयोग किया गया है।

२ प्रारम्भ से अन्त तक विषयक्रम और छन्द-क्रम एकसदृश है जो विषय सूची से स्पष्ट है।

३ रचनाशैली में पारिभाषिक (सांकेतिक) शब्दावली और उसका प्रयोग एक-सा ही है।

४ गाथा स्कन्धक दोहा रोला रसिका काव्य और षट्पद-नामक छन्दों के प्रस्तारभेद और नाम एकसमान हैं। नामों में यत्किंचित् अन्तर अवश्य है जो चतुर्थ परिशिष्ट (क) में द्रष्टव्य है। दोनों में भेदों के लक्षणमात्र ही हैं उदाहरण नहीं हैं। वृत्तमौक्तिक में गाथा-छन्द के २७ के स्थान पर २५ भेद स्वीकार किये हैं।

५. रड्डा छन्द के सातों भेदों के उदाहरण दोनों में प्राप्त नहीं हैं।

६ लक्षणों की शब्दावली भी प्राय: समान है। उदाहरण के लिये कुछ पद्य प्रस्तुत हैं—

प्राकृतपिंगल	वृत्तमौक्तिक
दीहो संजुत्तपरो बिंदुजुओ पाडिओ य चरणंते। स गुरू वंक दुमत्तो अण्णो लहु होय सुद्ध एक्कअलो ॥२॥	दीर्घ संयुक्तपरः पादान्तो वा विसर्गबिन्दुयुतः। स गुरुर्वक्रो द्विकलो लघुरन्य शुद्ध एककलः ॥६॥
× ×	× ×

जइ दीहो वि अ वण्णो
लहु जीहा पढइ होइ सो वि लहू ।
वण्णोवि तुरिअपढिओ
दोत्तिण्णि वि एक्क जाणेहु ॥ ८ ॥

यद्यपि दीर्घं वर्णं
जिह्वा लघु पठति भवति सोऽपि लघु ।
वर्णास्त्वरित पठितान्
द्वित्रानेक विजानीत ॥ ११ ॥

\+ +

जेम ण सहइ कणअतुला
तिलतुलिअ अद्धअद्धेण ।
तेम ण सहइ सवणतुला
अवछद छदभगेण ॥ १० ॥

कनकतुला यद्वन्न हि
सहते परमाणुवैषम्यम् ।
श्रवणतुला नहि तद्व—
च्छन्दोभङ्गेन वैषम्यम् ॥ १३ ॥

\+ +

हर ससि सूरो सक्को
सेसो अहि कमल बम कलि चदो ।
धुअ घम्मो सालिअरो
तेरह मेआ छमत्ताण ॥ १५ ॥

हर-शशि-सूर्या शक्र
शेषोप्यहिकमलधातृकलिचन्द्राः ।
ध्रुव-धर्म-शालिसञ्ज्ञाः
षण्मात्राणा त्रयोदशैव भिदा ॥१६॥

\+ +

दिअवरगण धरि जुअल
पुण विअ तिअ लहु पअल
इम विहि विहु छउ पअणि
जिम सुहइ सुससि रअणि
इह रसिअउ मिअणगणि
एअदह कल गअगमणि ॥८६॥

द्विजवरयुगलमुपनय
दहनलघुकमिह रचय
इति विधिशरभववदन-
चरणमिह कुरु सुवदन
इति हि रसिकमनुकलय
भुजगवर कथितमभय ॥१०॥

[द्वितीय प्रकरण]

\+ +

सोलह मत्तह बे वि पमाणहु
बीअ चउत्थहि चारिदहा ।
मत्तह सट्ठि समग्गल जाणहु
चारि पआ चउबोल कहा ॥१३१॥

रसविधुकलकमयुगमवधारय,
सममपि वेदविधूपमितम् ।
सर्वमपि षष्टिकल विचारय,
चौबोलाख्यं फणिकथितम् ॥७॥

[तृतीय प्रकरण]

\+ +

सगणा भगणा विप्रगणइ
मत्त चउद्दह पम पलई ।
संठइ वको विरइ सुहा
हाकलि रूपउ एहु कहा ॥१७२॥

सगणभंगणनंसभुयुतैं
सकलं चरणं प्रविरचितम ।
गुरुकेन च सर्वं कलितं
हाकलिवृत्तमिदं कथितम्॥२२॥
[चतुर्थ प्रकरण]

+ + + +

प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक में निम्न असमानतायें हैं—

१ प्राकृतपिंगलकार ने छन्दों के उदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के दिये हैं और वृत्तमौक्तिककार ने समग्र उदाहरण स्वरचित दिये हैं प्रत्युदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के अवश्य दिये हैं ।

२ शिखा कामकला रुचिरा हरिगीत के भेद मदिरा सवया, मागधी सवैया मत्ली सवैया मल्लिका सवैया माधवी सवया मागधी सवैया घनाक्षर और गलितक प्रकरण के १७ छन्द विशिष्ट हैं जो प्राकृतपिंगल में प्राप्त नहीं हैं।

३ प्रथम खण्ड छह प्रकरणों में विभक्त है ।

वृत्तमौक्तिक के द्वितीय खंड की रचना प्राकृतपिंगल के अनुकरण पर नहीं है। रचना-शैली शब्दावली प्रकरण आदि सब पृथक है। प्राकृतपिंगल के द्वितीय परिच्छेद में केवल १०४ वर्णिक छन्द हैं और वृत्तमौक्तिक में २६५ वर्णिक छन्द प्रकीर्णक दण्डक अर्धसम विषम वैतालीय छन्द यति प्रकरण गद्य-प्रकरण और विरुदावली आदि कई विशिष्ट प्रकरण हैं जो कि अन्यत्र दुर्लभ हैं।

वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण

प्राकृतपिंगलकार हरिहर के पौत्र रविकर के पुत्र दामोदरप्रणीत वाणीभूषण प्राकृतपिंगल का संस्कृत रूपान्तर है और इस ग्रंथ का वृत्तमौक्तिककार ने भी यथेच्छ प्रयोग किया है। प्रत्युदाहरणों में सुन्दरी तारक चक्र चामर, निशिपालक चञ्चला मञ्जीरा चर्चरी क्रीडाचन्द्र चन्द्र धवल, मण्डूका एव दीपक (मात्रिक) के उदाहरणों का तो प्रयोग किया ही है किन्तु रुचिरा (मात्रिक) और किरीट (वर्णिक) छन्द के तो लक्षण एव उदाहरण भी ज्यों के त्यों उद्धृत कर दिये हैं । अत यह निःसंकोच मानना होगा कि पूर्ववर्ती वाणीभूषण का वृत्तमौक्तिककार ने पूर्णतया अनुकरण किया है ।

वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण दोनो की समानताओ का भी उल्लेख करना यहा अप्रासगिक न होगा ।

(१) दोनो ही ग्रथ मात्रिकवृत और वर्णिकवृत्त नामक दो परिच्छेदो मे विभक्त हैं ।

(२) विषयक्रम और छन्दक्रम दोनो का समान है ।

(३) पारिभाषिक शब्दावली का दोनो ने पूर्ण प्रयोग किया है ।

(४) दोनो ग्रथो मे छन्दो के लक्षण कारिका-रूप मे न होकर लक्षणसम्मत पूर्ण-पद्यो मे हैं ।

(५) लक्षण एव उदाहरण दोनो के स्वरचित हैं ।

(६) लक्षणो को शब्दावली भी एक-सदृश है । तुलना के लिये कुछ स्थल द्रष्टव्य हैं—

वाणीभूषण	वृत्तमौक्तिक
शिवशशिदिनपतिसुरपति- शेषाहिसरोजधातृकलिचन्द्रा । ध्रुवधर्मौ शालिकर षण्मात्रे स्युस्त्रयोदशविभेदा ॥६॥	हरशशिसूर्या शक्र शेषोप्यहिकमलधातृकलिचन्द्रा. । ध्रुवधर्मशालिसज्ञा षण्मात्राणा त्रयोदशैव भिदा ॥१६॥
इन्द्रासनमथ शूर- श्चापो हीरश्च शेखर कुसुमम् । अहिगणपापगणाविति पञ्चकलाना च नामानि ॥१०॥	इन्द्रासनमथ सूर्यः, चापो हीरश्च शेखर कुसुमम् । अहिगणपापगणाविति पञ्चकलस्यैव सज्ञा स्यु ॥२०॥
+ +	+ - +
तातपितामहदहना पदपर्यायाश्च गण्डवलभद्रौ । जङ्घायुगल रतिरि- त्यादिगुरोश्चतुष्कले सज्ञा ॥१७॥	दहनपितामहताता: पदपर्यायाश्च गण्डवलभद्रौ । जङ्घायुगल रतिरि- त्यादिगुरौ स्युश्चतुष्कले सज्ञा ॥२२॥
ध्वजचिह्नचिरचिरालय- तोमरतुम्बुरुकचूतमाला च । रसवासपवनवलया लघ्वादित्रिकलनामानि ॥१८॥	ध्वजचिह्नचिरचिरालय- तोमरपत्राणि चूतमाले च । रसवासपवनवलया भेदास्त्रिकलस्य लघुकमालम्ब्य ॥२३॥
+ +	+ +

सगणा भगणा विप्रगणह	सगणर्भगमनसभुयुतै
मत्त चउद्दह पअ पलई ।	सकल चरणं प्रविरचितम ।
सठइ वको विरइ तहा	गुरुकेन च सर्व कमित
हाकलि रूमउ एहु कहा ॥१७२॥	हाकलिवृत्तमिदं कथितम्॥२२॥
	[चतुर्थ प्रकरण]

+ + + +

प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक में निम्न असमानतायें हैं—

१ प्राकृतपिंगलकार ने छन्दों के उदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के दिये हैं और वृत्तमौक्तिककार ने समग्र उदाहरण स्वरचित दिये हैं प्रत्युदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के अवश्य दिये हैं।

२ शिखा कामकला रुचिरा हरिगीत के भेद मदिरा सवैया मालती सवैया मल्ली सवैया, मल्लिका सवैया माधवी सवैया मागधी सवैया घनाक्षर और गलितक प्रकरण के १७ छन्द विशिष्ट हैं जो प्राकृतपिंगल में प्राप्त नहीं हैं।

३ प्रथम खण्ड छह प्रकरणों में विभक्त है।

वृत्तमौक्तिक के द्वितीय खंड की रचना प्राकृतपिंगल के अनुकरण पर नहीं है। रचना-शैली शब्दावली प्रकरण आदि सब पृथक हैं। प्राकृतपिंगल के द्वितीय परिच्छेद में केवल १०४ वर्णिक छन्द हैं और वृत्तमौक्तिक मे २६५ वर्णिक छन्द प्रकीर्णक दण्डक अर्धसम विषम वैतालीय छन्द यति प्रकरण गद्य-प्रकरण और विरुदावली आदि कई विशिष्ट प्रकरण हैं जो कि अन्यत्र दुर्लभ हैं।

वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण

प्राकृतपिंगलकार हरिहर के पौत्र रविकर के पुत्र दामोदरप्रणीत वाणीभूषण प्राकृतपिंगल का संस्कृत रूपान्तर है और इस ग्रंथ का वृत्तमौक्तिककार ने भी यथेच्छ प्रयोग किया है। प्रत्युदाहरणों में सुन्दरी तारक चक्र चामर, निशिपालक चञ्चला मञ्जीरा चर्चरी क्रीडाचन्द्र चन्द्र धवल गण्डका एवं दोधक (मात्रिक) के उदाहरणों का तो प्रयोग किया ही है किन्तु रुचिरा (मात्रिक) और किरीट (वर्णिक) छन्द के तो लक्षण एवं उदाहरण भी ज्यों के त्यों उद्धृत कर दिये हैं। अतः यह निःसंकोच मानना होगा कि पूर्ववर्ती वाणीभूषण का वृत्तमौक्तिककार ने पूर्णतया अनुकरण किया है।

द्विजगणमाहर, भगणमुपाहर ।	द्विजमिह धारय, भमनु च कारय ।
भणति सुवासकमिति गुणनायक ॥५६॥	भवति सुवासकमिति गुणलासक ॥७२॥
+ +	+ +
विनिधेहि चतु सगण रुचिर,	यदि वै लघुयुग्मगुरुक्रमत
रविसख्यकवर्णकृत सुचिरम् ।	रविसम्मितवर्ण इह प्रमित' ।
फणिनायकपिङ्गलसंभणित	अहिभूपतिना फणिना भणित
कुरु तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥१३५॥	सखि तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥१६६॥
+ +	+ +
पादयुग कुरु नूपुरसयुत-	पादयुग कुरु नूपुरराजित-
मत्र कर वररत्नमनोहर,	मत्र कर वररत्नमनोहर,
वस्त्रयुग कुसुमद्वयसगत-	वस्त्रयुग कुसुमद्वयसङ्गत-
कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।	कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-	पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-
कल्पितसज्जनमौलिरसालय,	कल्पितसज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपन्नगराजनिवेदित-	पिंगलपन्नगराजनिवेदित-
वृत्तकिरीटमिद परिभावय ॥२२१॥	वृत्तकिरीटमिद परिभावय ॥५८१॥
+ +	+ +

वाणीभूषण की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक में निम्नलिखित विशेषतायें पाई जाती हैं —

(१) वाणीभूषण मे केवल ४३ मात्रिक छन्द हैं जब कि वृत्तमौक्तिक में ७९ मूल छन्द और २०९ छन्द-भेद है। निम्न छन्दो का प्रयोग वाणीभूषणकार ने नही किया है —

रसिका, काव्य, उल्लाल, चौबोला, झुल्लणा, शिखा, दण्डकला, कामकला, हरिगीत के भेद और पचम सवैया-प्रकरण तथा छठा गलितक-प्रकरण के पूर्ण छन्द ।

(२) गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य, और षट्पद के प्रस्तारभेद, नाम एव लक्षण तथा रड्डा छन्द के सातो भेदो के लक्षण वाणीभूषण में नही हैं।

(३) वाणीभूषण में ११२ समवर्णिक छन्द है जब कि वृत्तमौक्तिक मे २६५ छन्द हे। इसका वर्गीकरण चतुर्थ परिशिष्ट (ख) में देखा जा सकता है।

रोलावृत्तमवेहि
नागपिङ्गलकविभणित
प्रतिपदमिह चतुरधिक-
कलविंशतिपरिगणितम।
एकादशमपि विरति
रसिकजनचित्ताहरण,
सुललितपदमदकारि
विमलकविकण्ठाभरणम् ॥५१॥

या चरणे कलानां
चतुरधिकविंशतिर्गदिता
सा किल रोला भवति
नागकविपिङ्गलकथिता।
एकादशकलविरति
रसिकजनचित्ताहरणा
सुललितपदकुलकलित
विमलकविकण्ठाभरणा ॥१६॥
[द्वितीय प्रकरण]

\+ +

भगणगुरुलघुनियमविरहित
भुजगराजपिङ्गलपरिगणितम्।
भवति सुगुम्फितयोडशकलक
वाणीभूषणपादाकुलकम् ॥७५॥

गुरुलघुकृतगणनियमविरहितं
फणिपतिनायकपिंगलगदितम्।
रसविधुकलयुतयमकितचरणं
पादाकुलक श्रुतिसुखकरणम ॥५॥
[तृतीय प्रकरण]

\+ +

षट्कलमादौ रचय
चतुस्तुरगं परिरचय,
शेषे द्विकल कलय
चतुष्पदमेवं संचिनु।
छन्दः षट्पदनाम
भवति फणिनायकगीतं
रुद्रै विरतिमुपैति
नृपतिसुखकरमुपनीतम्।
उल्लालयुगमत्र च
भवेदष्टाविंशतिकलमितं
शृणु पञ्चदशे विरतिस्थित
पठनादपि पण्डितजनमहितम् ॥७७॥

षट्पदवृत्त कलय
सरसकविपिंगलभणितं
एकादश इह विरति
रच च वहुर्नैविधुगणितम्।
षट्कलमादौ रचय
चतुस्तुरग परिरचय,
शेषे द्विकलं रचय
चतुष्पदमेव संचिनु।
उल्लालद्वयमत्र हि
भवेदष्टाविंशतिकलयुतं
यदि पञ्चदशे विरतिस्थितं
पठनादपि गुणिगणमहितम् ॥५३॥
[द्वितीय प्रकरण]

\+ +

द्वितीय परिच्छेद
नरेन्द्रमुदेहि। मृगेन्द्रमवेहि ॥२१॥

\+ +

द्वितीय-खण्ड--१ वृत्तनिरूपण प्रकरण
नरेन्द्रविराजि। मृगेन्द्रमवेहि ॥२१॥

\+ +

द्विजगणमाहर, भगणमुपाहर ।	द्विजमिह धारय, भमनु च कारय ।
भणति सुवासकमिति गुणनायक ॥५६॥	भवति सुवासकमिति गुणलासक ॥७२॥
+ +	+ +
विनिधेहि चतु सगण रुचिर,	यदि वै लघुयुगमगुरुक्रमत
रविसख्यकवर्णकृत सुचिरम् ।	रविसम्मितवर्ण इह प्रमित ।
फणिनायकपिङ्गलसंभणित	अहिभूपतिना फणिना भणित
कुरु तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥१३५॥	सखि तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥१६६॥
+ +	+ +
पादयुग कुरु नूपुरसयुत-	पादयुग कुरु नूपुरराजित-
मत्र कर वररत्नमनोहर,	मत्र कर वररत्नमनोहर,
वस्त्रयुग कुसुमद्वयसगत-	वस्त्रयुग कुसुमद्वयसङ्गत-
कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।	कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-	पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-
कल्पितसज्जनमौलिरसालय,	कल्पितसज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपन्नगराजनिवेदित-	पिंगलपन्नगराजनिवेदित-
वृत्तकिरीटमिद परिभावय ॥२२१॥	वृत्तकिरीटमिद परिभावय ॥५८१॥
+ +	+ +

वाणीभूषण की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक मे निम्नलिखित विशेषतायें पाई जाती हैं :—

(१) वाणीभूषण मे केवल ४३ मात्रिक छन्द हैं जब कि वृत्तमौक्तिक मे ७९ मूल छन्द और २०९ छन्द-भेद है। निम्न छन्दो का प्रयोग वाणीभूषणकार ने नही किया है —

रसिका, काव्य, उल्लाल, चौबोला, झुल्लणा, शिखा, दण्डकला, कामकला, हरिगीत के भेद और पचम सवैया-प्रकरण तथा छठा गलितक-प्रकरण के पूर्ण छन्द।

(२) गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य, और षट्पद के प्रस्तारभेद, नाम एव लक्षण तथा रड्डा छन्द के सातो भेदो के लक्षण वाणीभूषण में नही हैं।

(३) वाणीभूषण में ११२ समवर्णिक छन्द है जब कि वृत्तमौक्तिक मे २६५ छन्द है। इसका वर्गीकरण चतुर्थ परिशिष्ट (ख) मे देखा जा सकता है।

(४) वृत्तमौक्तिक में ७ प्रकीर्णक ८ दण्डक ८ विषम १२ वैतालीय, ७४ विरुदावली और २ खण्डावली छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण प्राप्त हैं जब कि वाणीभूषण में इन छन्दों का उल्लेख भी नहीं है।

(५) वाणीभूषण में अर्द्धसम छन्दों में केवल पुष्पिताग्रा छन्द है जब कि वृत्तमौक्तिक में १० छन्द हैं।

(६) वाणीभूषण में यतिनिरूपण और गद्य निरूपण प्रकरण नहीं है।

(७) वृत्तमौक्तिक में दोनों खण्डों के प्रकरणों की सूची है जिसमें छन्द नाम नामभेद एवं प्रस्तार संख्या दी है जब कि वाणीभूषण में सूची नहीं है।

अतः इस तुलना से स्पष्ट है कि वाणीभूषण एक लघुकाय छन्दोग्रन्थ है जब कि वृत्तमौक्तिक छन्दों का आकर और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है।

वृत्तमौक्तिक और गोविन्दविरुदावली

वृत्तमौक्तिक के नवम विरुदावली प्रकरण में चण्डवृत्तों के प्रत्युदाहरण देते हुए ग्रन्थकार ने श्री रूपगोस्वामी कृत गोविन्दविरुदावली का मुक्त हृदय से प्रयोग किया है। गोविन्दविरुदावली के एक या दो ही उदाहरण ग्रहण नहीं किये हैं अपितु समग्र विरुदावली ही उद्धृत कर दी है केवल गोविन्दविरुदावली का मंगलाचरण और उपसंहार मात्र ही अवशिष्ट रहा है।

विरुदावली छन्द क्रम में दोनों में अन्तर है जो तालिका से स्पष्ट है—

गोविन्दविरुदावली		वृत्तमौक्तिक		
क्रम-संख्या	नाम	क्रम-संख्या	नाम	पृष्ठांक
१	खण्डित	४	खण्डित	२२१
२	वीरभद्र	६	वीर (वीरभद्र)	२२५
३	समग्र	५	रण (समग्र)	२२४

१–आदि— इयं मङ्गलरूपा स्याद् गोविन्दविरुदावली।
यस्याः पठनमात्रेण श्रीगोविन्दः प्रसीदति॥
अन्त— स्फुरदमल गुणिवरमतिविर्तनगणादिविर्मलस्तवन।
भक्तः कृष्णे भवेद् यः स विरुदावलिपाठकः॥
यः स्तौति विरुदावल्या मथुरामण्डले हरिम्।
अनया रम्यया तस्मै तूर्णमेव प्रसीदति॥

४	अच्युत	३	अच्युत	२२१
५	उत्पल	९	उत्पल	२२८
६	तुरङ्ग	२०	तुरग	२३४
७	गुणरति	१०	गुणरति	२२९
८	मातङ्गखेलित	८	मातङ्गखेलित	२२६
९	तिलक	२	तिलक	२२०
१०	पङ्केरुह	२१	पङ्केरुह	२३५
११	सितकञ्ज	२२	सितकञ्ज	२३८
१२	पाण्डूत्पल	२३	पाण्डूत्पल	२३९
१३	इन्दीवर	२४	इन्दीवर	२४०
१४	अरुणाम्भोरुह	२५	अरुणाम्भोरुह	२४२
१५	फुलाम्बुज	२६	फुल्लाम्बुज	२४३
१६	चम्पक	२७	चम्पक	२४५
१७	वञ्जुल	२८	वञ्जुल	२४६
१८	कुन्द	२९	कुन्द	२४७
१९	बकुलभासुर	३०	बकुलभासुर	२४८
२०	बकुलमगल	३१	बकुलमगल	२४९
२१	मञ्जरीकोरक	३२	मजरीकोरक	२५१
२२	गुच्छ	३३	गुच्छक	२५२
२३	कुसुम	३४	कुसुम	२५३
२४	दण्डकात्रिभगी कलिका	१	दण्डकत्रिभगी कलिका	२५५
२५	विदग्धत्रिभगी कलिका	२	सपूर्णा विदग्धत्रिभगी-कलिका	२५६
२६	मिश्रा कलिका	३	मिश्रकलिका	२५८
२७	साप्तविभक्तिकी कलिका	१	साप्तविभक्तिकी कलिका	२६१
२८	अक्षमयी कलिका	२	अक्षमयी कलिका	२६२
२९	सर्वलघुकलिका	३	सर्वलघुक-कलिका	२६४

गोविन्दविरुदावली के अतिरिक्त जिन चण्डवृत्तों के लक्षण वृत्तमौक्तिक में दिये गये हैं उनके उदाहरण एक-एक चरण के ही प्राप्त हैं, पूर्ण उदाहरण या प्रत्युदाहरण प्राप्त नहीं हैं। इन चण्डवृत्तों की तालिका इस प्रकार है—

१ पुरुषोत्तम, ७ शाक, ११, कल्पद्रुम १२ कन्दल १३ अपराजित १४ नर्त्तन १५ तरलसमस्त १६ वेष्टन १७ अस्खलित और १९ समग्र ।

पल्लवित-नामक विरुदावली गोविन्दविरुदावली में नहीं है । चन्द्रशेखरभट्ट ने इसका प्रत्युदाहरण गोविन्दविरुदावली में प्रदत्त फुल्लाम्बुज के उदाहरणस्थ अंश का दिया है ।

वृत्तमौक्तिक में चण्डवृत्त के ३४ भेद त्रिभंगी-कलिका के ३ भेद और विरुदावली के तीन भेद माने हैं जब कि गोविन्दविरुदावली में इनका वर्गीकरण इस प्रकार है—

चण्डवृत्त-कलिका के दो भेद हैं—१ नग्न और २ विशिख ।

नग्न के ९ भेद हैं—१ वर्षित २ वीरभद्र ३ समग्र ४ अच्युत ५ उत्पल ६ तरङ्ग ७ गुणरति ८ मातङ्गखेलित और ९ तिलक ।

विशिख के ११ भेद हैं—१ पङ्केरुह २ सितकञ्ज ३ पाण्डूत्पल ४ इन्दीवर, ५ अरुणाम्भोरुह ६ फुल्लाम्बुज ७ चम्पक ८ वञ्जुल ९ कुन्द १० बकुलभासुर और ११ बकुलमंगल ।

द्विगादिगणवृत्त-कलिका मंजरी के तीन भेद हैं—१ मञ्जरी-कोरक २ गुच्छ और ३ कुसुम ।

त्रिभंगी-कलिका के दो भेद हैं—१ दण्डकत्रिभंगी-कलिका और २ विदग्ध-त्रिभंगी-कलिका ।

मिश्रकलिका के ४ भेद हैं—१ मिश्रकलिका २ साप्तविभक्तिकी कलिका ३ अक्षमयी-कलिका और ४ सर्वलघु-कलिका ।

इस प्रकार गोविन्दविरुदावली में विरुदावली के कुल २९ भेदों का दिग्दर्शन है तो वृत्तमौक्तिक में ४० विरुदावलियों और ३४ कलिकाओं का निरूपण है ।

वृत्तमौक्तिक में उद्धृत अप्राप्त ग्रन्थ

प्रस्तुत ग्रंथ में चन्द्रशेखरभट्ट ने छन्दों के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन-जिन ग्रन्थकारों और जिन-जिन ग्रन्थों का उल्लेख किया है उनमें से कतिपय ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त हैं । अप्राप्त ग्रन्थों की अक्षरानुक्रम से तालिका इस प्रकार है—

संख्या	ग्रन्थ-नाम	ग्रन्थकार	उल्लेख-पृष्ठाङ्क
१	उदाहरणमञ्जरी	लक्ष्मीनाथ भट्ट	१० १३ १६ आदि

२	कृष्णकुतूहल-महाकाव्य	रामचन्द्र भट्ट	१०५,१०७ आदि
३	दशावतारस्तोत्र	"	१२६
४	नन्दनन्दनाष्टक	लक्ष्मीनाथ भट्ट	१४४
५	नारायणाष्टक	रामचन्द्र भट्ट	१६७
६	पवनदूतम्	चन्द्रशेखर भट्ट	१३६
७	पाण्डवचरित-महाकाव्य	"	९२,१२१ आदि
८	शिकी-काव्य		१५६
९	शिवस्तुति	लक्ष्मीनाथ भट्ट	४५
१०	सुन्दरीध्यानाष्टक	"	१४४

इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे स्थल हैं जिनमें केवल ग्रन्थकार के नाम हैं और वर्ण्य विषय का सकेत है किन्तु उनके ग्रन्थो का कोई उल्लेख नही मिलता ।

१	राक्षसकवि	दक्षिणानिलवर्णन	१५३
२	लक्ष्मीनाथभट्ट	खड्गवर्णन	१६०
३	"	देवीस्तुति	४३
४	शम्भु	छन्दःशास्त्र	१०९,१३९,१९७आदि

वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका मे (पृ. १४५) पर शम्भु-प्रणीत छन्दश्चूडामणि ग्रन्थ का उल्लेख है । संभवत यही शम्भु हों ! किन्तु ग्रन्थ अप्राप्त है ।

मालती छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये भारवि रचित निम्न पद्य दिया है—

अयि विजहीहि दृढोपगूहन, त्यज नवसङ्गमभीरु वल्लभम् ।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते, वरतनु सम्प्रवदन्ति कुक्कुटा ।। पृ. १००

इसका उल्लेख छन्दोमञ्जरी (पृ ५६) में भी है किन्तु भारवि कृत किरातार्जुनीय काव्य (मुद्रित) में यह पद्य प्राप्त नही है । अत. भारवि कृत किस ग्रन्थ का यह पद्य है, अन्वेषणीय है ।

प्रस्तुत संस्करण की विशेषतायें

ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ में ६७१ छन्दो के लक्षण एव उदाहरणो का निरूपण किया है । इन छन्दो के अतिरिक्त मैंने ग्रथान्तरो से पाद-टिप्पणियो मे ७७ और पचम परिशिष्ट में १३८१ छन्दो के लक्षण दिये हैं । अर्थात् इस सकलन मे २१२९ छन्दो का दिग्दर्शन है जो कि इस संस्करण की प्रमुख विशेषता है ।

इस संस्करण में मूल ग्रन्थ के पश्चात् दो टीकायें और ८ परिशिष्ट दिये हैं जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :—

(१) वृत्तमौक्तिक-वार्तिक-दुष्करोद्धार-टीका

इस टीका और टीकाकार लक्ष्मीनाथ भट्ट का परिचय प्रारंभ में कवि वंश-परिचय में दिया जा चुका है, अतः यहाँ पिष्टपेषण अनावश्यक है।

(२) वृत्तमौक्तिक-दुर्गमबोध-टीका

इस दुर्गमबोधटीका के प्रणेता महोपाध्याय मेघविजय १८ वीं शताब्दी के बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न विशिष्टतम विद्वान् हैं। इनका जन्म संवत् जन्म स्थान और गार्हस्थ्य जीवन का ऐतिहय परिचय अद्यावधि अप्राप्त है। श्रीवल्लभोपाध्याय प्रणीत 'विजयदेवमाहात्म्य' पर मेघविजयजी रचित विवरण की सं. १७०९ की लिखित हस्तलिखित[1] प्रति प्राप्त होने से यह निश्चित है कि विवरण की रचना १७०९ के पूर्व हो हो चुकी थी। अतः यह अनुमान सहज भाव से लगाया जा सकता है कि इस रचना के समय इनकी अवस्था कम से कम २०-२५ वर्ष की अवश्य होगी। अतः १६८५ और १६९० के मध्य इनका जन्म-समय माना जा सकता है।

मेघविजयजी श्वेताम्बर-जैन-परम्परा में तपागच्छीय अकबर प्रतिबोधक जगद्गुरु हीरविजयसूरि की शिष्य-परम्परा में कृपाविजयजी के शिष्य हैं[2]। विजयसिंहसूरि के पट्टधर विजयप्रभसूरि ने इनको उपाध्यायपद प्रदान किया था।[3]

मेघविजयजी-गुम्फित साहित्य को देखने पर यह साधिकार कहा जा सकता है कि ये एकदेशीय विद्वान् न होकर सार्वदेशीय विद्वान् थे। काव्य-साहित्य पादपूर्ति व्याकरण छन्द अनेकार्थ न्यायशास्त्र दर्शनशास्त्र ज्योतिष सामुद्रिक और अध्यात्मशास्त्र आदि प्रत्येक विषय के ये अगाध पण्डित थे और इन्होंने प्रत्येक विषय पर साधिकार सर्वस्वपूर्ण लेखिनी चलाई है। इनका साहित्य-सर्जना काल वि. सं. १७०९ से १७६० तक का तो निश्चित ही है। वर्तमान समय में प्राप्त इनकी रचित साहित्य-सामग्री की सूची निम्न है—

१—विजयदेवमाहात्म्य प्रस्तावना
२—युक्तिप्रबोध प्रशस्ति
३—देवानन्द महाकाव्य प्रशस्ति

१	सप्तसन्धान-महाकाव्य र. स १७६०[1]	प्रकाशित
२	दिग्विजय-महाकाव्य	"
३	शान्तिनाथचरित्र (नैषधीय-पादपूर्ति)	"
४	देवानन्द-महाकाव्य (माघ-पादपूर्ति)	"
५	किरातसमस्यापूर्ति[2]	अप्रकाशित
६	मेघदूत-समस्यालेख (मेघदूत-पादपूर्ति)	प्रकाशित
७	लघुत्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र	अप्रकाशित
८	भविष्यदत्तचरित्र	प्रकाशित
९	पञ्चाख्यान	अप्रकाशित
१०	पाणिनिद्व्याश्रयविज्ञप्तिलेख[3]	"
११	" [4]	"
१२	विज्ञप्तिका	प्रकाशित[5]
१३	गुरुविज्ञप्तिलेखरूप-चित्रकोशकाव्य	अप्रकाशित[6]
१४	विज्ञप्तिपत्र	" [7]
१५	" अपूर्ण[8]	"
१६	"	" [9]
१७	" अपूर्ण[10]	"
१८	चन्द्रप्रभा-व्याकरण (हैमकौमुदी) र० स० १७५७[11]	प्रकाशित
१९	हैमशब्दचन्द्रिका	"
२०	हैमशब्दप्रक्रिया[12]	अप्रकाशित

१–विश्वद्रसमुनीन्दूना प्रमाणात् परिवत्सरे । [सप्तसन्धान प्रशस्ति]

२–देखें, दिग्विजय-महाकाव्य-प्रस्तावना

३-४ भाण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना २९९A, १८८२-८३

५–विज्ञप्तिलेखसंग्रह प्रथम भाग (सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई)

६–अभयजैन-ग्रन्थालय, बीकानेर

७–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, स० २०४१५

८,९,१०–,, ,, ,, शाखा कार्यालय बीकानेर, मोतीचद खजांची-संग्रह, 'ञ' २८४

११–विजयन्ते ते गुरवः शैलशरर्षीन्दुवत्सरे । [चन्द्रप्रभाप्रशस्ति ७]

१२–भाण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना

२१ चिन्तामणि-परीक्षा[1] (नव्यन्यायप्रवर्तक गंगेशोपाध्याय कृत तत्त्वचिन्तामणि का परीक्षण) अप्रकाशित
२२ युक्तिप्रबोध प्रकाशित
२३ धर्ममञ्जूषा अप्रकाशित
२४ मेघमहोदयवर्षप्रबोध प्रकाशित
२५ हस्तसंजीवन स्वोपज्ञ-टीका-सहित ,,
२६ रमलशास्त्र उल्लेख, मेघमहोदय-वर्षप्रबोध
२७ उदयदीपिका र० सं० १७५२ अप्रकाशित
२८ प्रश्नसुन्दरी
२९ वीसायन्त्रविधि प्रकाशित
३० मातृकाप्रसाद र० सं० १७४७ अप्रकाशित
३१ ब्रह्मबोध अप्राप्य[3]
३२ अर्हद्गीता प्रकाशित
३३ विजयदेवमाहात्म्यविवरण
३४ वृत्तमौक्तिक दुर्गमबोध[4] टीका (प्रस्तुत)
३५ पञ्चतीर्थीस्तुति सटीक अप्रकाशित
३६ भक्तामरस्तोत्र-टीका[5] ,,
३७ चतुर्विंशतिजिनस्तव[6]
३८ आदिनाथस्तोत्र अपूर्ण

गुर्जर भाषा में रचित कृतियें

३९ विजयदेवसूरिनिर्वाणरास[8] अप्रकाशित
४ कृपाविजयनिर्वाणरास[9]
४१ जैनधर्मदीपकस्वाध्याय
४२ जैनशासनदीपकस्वाध्याय[1]

१–इसका मैं सम्पादन कर रहा हूँ जो राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर से प्रकाशित होगा।
२–नवतत्त्वेऽश्ववार्ध्येन्दुमिते पौष पञ्चमे ।
श्रीधर्मनगरे ग्रन्थ पूर्णोभिमतसिद्धिदम् । [मातृकाप्रसाद प्रशस्ति]
३ ४ ५–देखें दिग्विजयमहाकाव्य – प्रस्तावना
६–महोपाध्याय विनयसागर-संग्रह, कोटा
७–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, ग्रं० २ ४१५
८ ११–देखें दिग्विजय-महाकाव्य – प्रस्तावना

४३	आहारगवेषणा-स्वाध्याय[1]	अप्रकाशित
४४	चौवीस जिनस्तवन[2]	,,
४५	पार्श्वनाथस्तवन[3]	,,
४६	मक्षीपार्श्वनाथस्तवन[4]	,,

वृत्तमौक्तिक की दुर्गमबोध नामक टीका की रचना मेघविजयजी ने अपने शिष्य भानुविजय के पठनार्थ सं० १६५५ में की है। भट्ट लक्ष्मीनाथीय 'दुष्करोद्धार' टीका के समान ही यह टीका भी वृत्तमौक्तिक के प्रथम खण्ड, प्रथम गाथा-प्रकरण के पद्य ५१ से ८६ तक अर्थात् ३६ पद्यों पर रची गई है। पूर्व टीका की तरह यह भी ९ प्रकरणों में विभक्त है। इसमें वर्णोद्दिष्ट और वर्णनष्ट एक-साथ दे दिये हैं और वृत्तस्थ गुरु-लघु-ज्ञान का स्वतन्त्र प्रकरण नहीं है। प्रस्तार जैसे गहन विषय को मेघविजयजी ने अपनी लेखिनी द्वारा सरलतम बना दिया है। प्राकृत-पिंगल, वाणीभूषण और छन्दोरत्नावली आदि ग्रन्थों के उद्धरण और अनेकों चित्र देकर प्रत्येक प्रकरण के वर्ण्य विषय का विशदता के साथ स्पष्टीकरण किया है। भाषा में प्रवाह और सरलता है। कहीं-कहीं देश्य शब्दों का प्रयोग भी मिलता है।

यह टीका अद्यावधि अज्ञात और अप्राप्त थी। इसकी स्वयं टीकाकार द्वारा लिखित एक मात्र प्रति मेरे निजी संग्रह में है।

परिशिष्टों का परिचय

प्रथम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में वृत्तमौक्तिककार द्वारा स्वीकृत पारिभाषिक-शब्दावली दी गई है। टगणादि गण, इनका प्रस्तारभेद, नाम तथा उनके पर्याय यहाँ क्रमशः दिये हैं और अन्त में इस पद्धति से मगणादि ८ गणों के पर्याय दिये हैं।

पाद-टिप्पणियों में स्वयम्भूछन्द, वृत्तजातिसमुच्चय, कविदर्पण, हेमचन्द्रीय-छन्दोनुशासन, प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ के साथ इस पद्धति की तुलना की है अर्थात् इन ग्रन्थकारों ने इस प्रणाली को किस रूप में स्वीकार किया है, कौन-कौन से शब्द स्वीकृत किये हैं, कौन-कौन से शब्द इन ग्रन्थों में नहीं हैं और कौन-कौन से नये पारिभाषिक शब्दों को स्वीकृत किया है, इन सब का दिग्दर्शन है।

---

१ - ३— देखें, दिग्विजय-महाकाव्य — प्रस्तावना.

४—महोपाध्याय विनयसागर-संग्रह, कोटा.

द्वितीय परिशिष्ट—

(क) मात्रिक छन्दों का अकारानुक्रम—इसमें मात्रिक छन्द ७१ और गाथा, एकपद दोहा रोला रसिका काव्य और षट्पद आदि के २१८ भेदों के नामों को अकारानुक्रम से दिया है।

(ख) वर्णिक छन्दों का अकारानुक्रम—इसमें वर्णिक सम-छन्द प्रकीर्णक दण्डक अर्द्धसम विषम और वैतालीय छन्दों का एवं टिप्पणियों में उद्धृत छन्दों का अकारानुक्रम दिया है। छन्दों के आगे ( ) कोष्ठक में प्रकीर्णक का प्र दण्डक का द अर्द्धसम का अ विषम का वि वैतालीय का वै और टिप्पणी का टि दिया है। संकेत-कोष्ठक में ग्रन्थकार ने जो छन्दों के नाम भेद दिये हैं वे भी अकारानुक्रम में सम्मिलित हैं वे नाम भेद भी ( ) कोष्ठक में दिये हैं।

(ग) विरुदावली-छन्दों का अकारानुक्रम— इसमें कलिका-विरुदावली, चण्डवृत्त विरुदावली आदि समस्त विरुदावली छन्दों का अकारानुक्रम दिया है।

तृतीय परिशिष्ट—

(क) पद्यानुक्रम—इसमें प्रतिपाद्य विषय के पद्यों और छन्द के लक्षण-पद्यों को अकारानुक्रम से दिया है। वैतालीय प्रकरण की लक्षण-कारिकायें भी इसी में अकारानुक्रम से सम्मिलित कर दी गई हैं।

(ख) उदाहरण-पद्यानुक्रम—इसमें ग्रन्थकार द्वारा स्वरचित-उदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के प्रत्युदाहरण गर्वाङ्ग के उदाहरण और टिप्पणियों में उद्धृत उदाहरण अकारानुक्रम से दिये हैं। गर्वाङ्ग के लिये कोष्ठक ( ) में ग और टिप्पणी के लिये टि का संकेत दिया है। यति प्रकरण में उद्धृत और विरुदावली में प्रयुक्त एक-एक चरण के पद्यों को भी अकारानुक्रम में सम्मिलित किया गया है।

चतुर्थ परिशिष्ट—

क (१) मात्रिक छन्दों के लक्षण एवं नाम भेद—प्रारंभ में छन्दर्भ-ग्रन्थ सूची और संकेत देकर वृत्तमौक्तिक के अनुसार छन्द-नाम और उसके टगणादि में लक्षण एवं प्रतिचरण की मात्रायें दी हैं। पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २२ ग्रन्थों के नाम छन्द नाम और लक्षणों की तुलना की गई है। जिन जिन ग्रन्थों में वृत्तमौक्तिक-लक्षण-सम्मत छन्द का वही नाम है तो उन ग्रन्थों के अंक दे दिये हैं और लक्षण सही होते हुये भी नाम यदि पृथक् है तो वह नाम भेद देकर

उन-उन ग्रन्थो के अक लगा दिये हैं। ग्रन्थ-विस्तार-भय से यहा पर ग्रन्थो के नाम न देकर उनके अक दिये हैं।

क (२) गाथादि छन्द-भेदो के लक्षण एव नामभेद—इसमे गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद नामक छन्दो के प्रस्तार-सख्या-क्रम से लक्षण, छन्द-नाम और नामभेद दिये हैं। इन छन्दो के प्रस्तारभेद कुछ ही ग्रन्थो मे प्राप्त हैं, समग्र ग्रन्थो में नही हैं, इसलिये अको का प्रयोग न करके ग्रन्थनाम-शीर्षक से ही दिये हैं।

ख वर्णिक-छन्दो के लक्षण एव नामभेद—इसमे वर्णिक-सम, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्द्धसम, विषम और वैतालीय-छन्दो के वृत्तमौक्तिक के अनुसार छन्द-नाम और लक्षण दिये हैं। लक्षण मगणादिगणो के सक्षिप्त रूप 'म य र स त. ज भ न ल ग.' रूप में दिये हैं। पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थो के अक, नामभेद और अक दिये हैं। यह प्रणालिका 'क १ मात्रिक-छन्दो के लक्षण एव नामभेद' के अनुसार ही है।

केवल २६५ वर्णिक सम-छन्दो में से ६१ छन्द ही ऐसे हैं जिनके कि नाम-भेद प्राप्त नही है। एक ही छन्द के एक से लेकर आठ तक नामभेद प्राप्त होते हैं। नामभेदो की तुलना से यह स्पष्ट है कि इसका प्रयोग कितना व्यापक था। ऐसा प्रतीत होता है कि नाम-निर्वाचन के लिये छन्द शास्त्रियों के सम्मुख कोई निश्चित परिपाटी नही थी, वे स्वेच्छा से छन्दो का नाम-निर्वाचन कर सकते थे, अन्यथा इतने नामभेद प्राप्त नही होते।

ग छन्दो के लक्षण एव प्रस्तार-सख्या—इसमे वृत्तमौक्तिक मे प्रयुक्त एकाक्षर से षड्विंशाक्षर तक के सम-वर्णिक छन्दो के क्रमश नाम देकर 'S, ।' गुरु-लघुरूप में लक्षण दिये हैं पश्चात् उसकी प्रस्तारसख्या दिखाई है कि यह भेद प्रस्तारसख्या की दृष्टि से कौन सा है। मैंने यथासाध्य समग्र छन्दो की प्रस्तार-सख्या देने का प्रयत्न किया है, फिर भी कतिपय छन्द ऐसे हैं जिनकी प्रस्तार-सख्या प्राप्त नही हुई है। तज्ज्ञो से निवेदन है कि इसकी पूर्ति करने का वे प्रयत्न करें।

प्रकीर्णक, दण्डक, अर्धसम और विषम छन्दो के नाम और लक्षण प्रणालिका से ही दिये हैं।

पञ्चम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में जिन छन्दों का वृत्तमौक्तिक में उल्लेख नही है और जो सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २१ ग्रन्थों में प्रयुक्त हैं उन छन्दो को भी छन्द शास्त्रविषयक

जिज्ञासुओं के लिये प्रस्तार-संख्या के क्रम से दिये हैं। प्रारंभ में प्रस्तार संख्या छन्द-नाम, लक्षण और सन्दर्भग्रन्थ के अंक, नामभेद तथा अंक दिये हैं। यह पद्धति 'क (१) मात्रिक-छन्दों के लक्षण एवं नामभेद' के अनुसार ही है।

इसमें अक्षरानुक्रम से इतने विशिष्ट छन्द प्राप्त हैं —

अक्षर		छन्द	अक्षर		छन्द
४ अक्षर	१२	छन्द	१६ अक्षर	१६	छन्द
५ ,,	२७		१७	२७	,,
६ ,,	५५	,,	१८ ,,	३३	,,
७	१२०	,,	१९ ,,	२५	,,
८ ,,	८९	,,	२० ,,	१६	,,
९ ,,	५७		२१ ,,	१८	,,
१० ,,	९८		२२ ,,	२०	,,
११	१०३		२३ ,,	१८	,,
१२ ,,	११२		२४ ,,	२१	,,
१३	९०	,,	२५ ,,	२०	,,
१४	७७		२६ ,,	२७	,,
१५	३८	,,			

इस प्रकार वर्णिक-सम के ११३९ प्रकीर्णक वृत्त २४ दण्डक-वृत्त ६६ तथा अर्धसमवृत्त १५२ अर्थात् कुल १३८१ अवशिष्ट प्राप्त-छन्दों का इसमें संकलन है।

विषमवृत्त के भी सैकड़ों छन्द और वैतालीय के प्रस्तार-भेद से अनेकों भेद प्राप्त होते हैं जिनका संकलन इस संग्रह में समयाभाव से नहीं किया जा सका।

षष्ठ परिशिष्ट—

वृत्तमौक्तिक में गाथा स्कन्धक दोहा, रोला रसिका काव्य और षट्पद के प्रस्तार भेद से भेदों के नाम एवं संक्षेप में लक्षण प्राप्त हैं किन्तु इनके उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। ग्रन्थान्तरों में भी इनके उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। केवल कविदर्पण में गाथा भेदों के उदाहरण और प्राकृतपैंगल में गाथा और दोहा भेदों के लक्षणयुक्त उदाहरण प्राप्त होते हैं। अतः गाथा और दोहा भेदों के स्वरूप का दिग्दर्शन कराने के लिये इस परिशिष्ट में प्राकृतपैंगल से गाथा और दोहा भेदों के लक्षण-युक्त उदाहरण उद्धृत किये हैं।

सप्तम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट मे ग्रन्थकार चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक मे छन्दो के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन ग्रन्थकारो और ग्रन्थो के उद्धरण दिये हैं उनकी अकारानुक्रम से सूची दी है। कतिपय स्थलो पर 'अन्ये च' 'यथा वा' कह कर जो उद्धरण दिये हैं, उनका भी मैंने इस सूची मे उल्लेख कर दिया है।

अष्टम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट मे मैंने अनेक सूचीपत्रो के आधार से 'छन्द शास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें' शीर्षक से ग्रन्थो की अकारानुक्रम से विस्तृत सूची दी है। इसमे ग्रन्थ का नाम, उसकी टीका, ग्रन्थकार एव टीकाकार का नाम तथा यह ग्रन्थ कहा प्राप्त है या किस सूची मे इसका उल्लेख है, सकेत किया है। शोध करने पर और भी अनेको ग्रन्थ प्राप्त हो सकते हैं। मैं समझता हूँ कि छन्द-शास्त्रियो और शोधकर्त्ताओं के लिये यह सूची अवश्य ही उपादेय एव मार्ग दर्शक सिद्ध होगी।

प्रति–परिचय

मूल ग्रन्थ का सम्पादन पांच प्रतियो के आधार से किया गया है जिसमे तीन प्रतिया प्रथम खण्ड की हैं और दो प्रतिया द्वितीय खण्ड की हैं। इन पाचो प्रतियो का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक, प्रथम खण्ड

१ क सज्ञक, आदर्श प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२७
माप—२६ ५ c.m. × ११ ३ c.m.
पत्र सख्या ४१, पक्ति ७, अक्षर ३६
लेखन-काल १८वी शती का पूर्वार्द्ध
शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

२. ख सज्ञक प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२८
माप—२५.२ cm × १० ६ cm
पत्र सख्या २३ ; पक्ति १० , अक्षर ४२.
लेखन काल १६९० के लगभग, सभवतः लालमनि मिश्र की ही लिखी हुई है।
अपूर्ण प्रति। शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

३ ग संज्ञक प्रति

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर. सख्या ५८३

माप—२५ ८ c.m. × १० ७ c.m

पत्र सख्या १० , पंक्ति १८ अक्षर ५६

लेखनकाल अनुमानत १८वी शती का प्रथम चरण लिपि सुन्दर ए किन्तु अशुद्ध है।

इसमें रचना और लेखन प्रशस्ति नही है।

वृत्तमौक्तिक द्वितीय खण्ड

१ क संज्ञक आदर्श प्रति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर. सख्या ५५३०

माप—२५ २ c.m × १० ६ c.m

पत्र सख्या १६६ पंक्ति ७ अक्षर ३१

लेखनकाल १६६० वि लेखक—लालमणि मिश्र

लेखनस्थान—अर्गलपुर (आगरा)

शुद्धतम एवं संशोधित प्रति है। लेखन प्रशस्ति इस प्रकार है—

॥सवत् १६६० समये श्रावणवदि ११ रवौ शुभदिने लिखितं शुभस्थाने अर्गलपुरनगरे लालमणिमिश्रेण। शुभम्। इद पत्रसख्या १८५०।

२ ख संज्ञक प्रति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर संख्या ५५२१

माप २६ ५ c.m. × ११ ३ c.m.

पत्रसख्या १६१ पंक्ति ७ अक्षर ३६

लेखनकाल १८वी शती का पूर्वार्द्ध

शुद्धलेखन शुद्धप्रति लेखन प्रशस्ति नही है।

दोनों टीकाओं की अद्यावधि एक-एक ही प्रति प्राप्त होने से इन्हीं के आधार से सम्पादन किया है। दोनों टीकाओं की प्रतियों का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करोद्धार

टी॰ लक्ष्मीनाथ भट्ट

अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर संख्या ५५३१

माप २७ ५ c.m × ११ ५ c.m

पत्र संख्या ३८, पक्ति ७, अक्षर ३७
लेखनकाल १६६० वि० लेखक - लालमनि मिश्र
लेखन स्थान - अर्गलपुर (आगरा)
शुद्ध एव सशोधित पूर्णप्रति एकमात्र प्रति

लेखन-प्रशस्ति इस प्रकार है :—

"॥ सवत् १६६० समये भाद्रपदशुदि३ भौमे शुभदिने अर्गलपुरस्थाने लिखित लमनिमिश्रेण । शुभ भूयात् । श्रीविष्णवे नम. ॥"

तमौक्तिकदुर्गमबोध

टी० महोपाध्याय मेघविजय

महोपाध्याय विनयसागर सग्रह, कोटा, पोथी २३, प्र न ११
माप २५ ५ c.m. × १०.७ c.m.
पत्रसख्या १०, पक्ति २१; अक्षर ६०
लेखनकाल १८वी शती टीकाकार - महोपाध्याय मेघविजय द्वारा स्वय लिखित शुद्ध एव संशोधित एकमात्र प्रति पत्र २-५ तक प्रस्तार चित्र

सम्पादन-शैली

सम्पादन मे प्रथम खण्ड की तीनो प्रतियो को क, ख, ग और द्वितीय-खण्ड की दोनो प्रतियो को क, ख, सज्ञा प्रदान की है।

प्रथमखण्ड की ख. सज्ञक प्रति और द्वितीयखण्ड की क सज्ञक प्रति एक ही व्यक्ति की लिखी हुई और प्रथमखण्ड की क सज्ञक और द्वितीयखण्ड की ख सज्ञक प्रति सभवत इसी प्रति की प्रतिलिपि हो, क्योकि दोनो मे अतीव सामीप्य होने से विशेष पाठ-भेद प्राप्त नही होते।

दोनो खण्डो की क सज्ञक प्रति को मैंने आदर्श माना है और अन्य प्रतियो के पाठभेदो को मैंने टिप्पणी में पाठान्तर-रूप मे दिये हैं। कतिपय स्थलो पर प्रतिलिपिकार के भ्रम से जो अश या पक्तिया क सज्ञक प्रति में छूट गई हैं वे ख सज्ञक प्रति से मूल मे सम्मिलित कर दी गई हैं और कतिपय शब्द ख प्रति के शुद्ध होने से उसे मूल में रखकर क प्रति के पाठ को पाठान्तर में दे दिया है।

ग्रथकार ने प्रत्युदाहरणो और नामभेदो मे जिन ग्रथो का उल्लेख किया है उन ग्रथो के स्थल, सर्गसख्या और पद्यसंख्या टिप्पणी में दी गई है और जिन प्रत्यु-

३ ग संज्ञक प्रति

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर संख्या ५८३

माप—२५ ८ c.m.× १० ७ c.m.

पत्र संख्या १० पंक्ति १८ , अक्षर ५६

लेखनकाल अनुमानत १८वीं शती का प्रथम चरण, लिपि सुन्दर है किन्तु अशुद्ध है।

इसमें रचना और लेखन प्रशस्ति नहीं है।

वृत्तमौक्तिक द्वितीय खण्ड

१ क संज्ञक आदर्श प्रति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर. संख्या ५५३०

माप—२५ २ c.m ×१० ६ c.m.

पत्र संख्या १६६ ; पंक्ति ७ अक्षर ३१

लेखनकाल १६६० वि० लेखक—बालमणि मिश्र

लेखनस्थान—अर्गलपुर (आगरा)

शुद्धतम एवं संशोधित प्रति है। लेखन-प्रशस्ति इस प्रकार है—

'।।संवत् १६६० समये श्रावणवदि ११ रवौ शुभदिने लिखितं शुभस्थाने अर्गलपुरनगरे बालमनिमिश्रेण। शुभम्। इदं ग्रंथसंख्या ३८५०।'

२ ख संज्ञक प्रति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर संख्या ५५२६

माप २६ ५ c.m. × ११ ३ c.m

पत्रसंख्या १६१ पंक्ति ७ अक्षर ३६

लेखनकाल १८वीं शती का पूर्वार्द्ध

शुद्धलेखन सुन्दरप्रति लेखन प्रशस्ति नहीं है।

दोनों टीकाओं की यद्यावधि एक-एक ही प्रति प्राप्त होने से उन्हीं के आधार से सम्पादन किया है। दोनों टीकाओं की प्रतियों का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक-वार्तिकदुष्करोद्धार

टी० लक्ष्मीनाथ भट्ट

अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर संख्या ५५३३

माप २७ ५ c.m. × ११ ५ c.m

के साथ समय-समय पर परामर्श एवं सहयोग देकर कृतार्थ किया, उसके लिये मैं इन दोनों का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं।

श्री अगरचन्दजी नाहटा के सत्प्रयत्न से अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर के संरक्षक बीकानेर के महाराजा एवं व्यवस्थापकों ने वृत्तमौक्तिक की प्रतियां सम्पादनार्थ प्रदान की, अतः मैं इन सब का आभारी हूँ।

पो० श्री कण्ठमणिशास्त्री काकरोली, श्री गंगाधरजी द्विवेदी जयपुर, श्री भंवरलालजी नाहटा कलकत्ता, डॉ० श्री नारायणसिंहजी भाटी एम ए, पी एच डी, संचालक राजस्थानी शोध संस्थान जोधपुर, श्रीबद्रीप्रसाद पचोली एम ए, एवं इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी, लन्दन, के व्यवस्थापक आदि ने परामर्श देकर एवं ग्रन्थों की आद्यन्त-प्रशस्तियां भेज कर जो सहयोग प्रदान किया है उसके लिये मैं इन सब का उपकृत हूँ।

मेरे परममित्र श्री लक्ष्मीनारायणजी गोस्वामी का अभिनन्दन मैं किन शब्दों में करूं! इस ग्रन्थ को शुद्ध एवं श्रेष्ठ बनाने का सारा श्रेय ही इन्हीं को है।

साधना प्रेस जोधपुर के संचालक श्री हरिप्रसादजी पारीक भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इसके मुद्रण में पूर्ण सहयोग दिया है।

अन्त में, मैं अपने पूज्य गुरुदेव श्रीजिनमणिसागरसूरिजी महाराज का अत्यन्त ही ऋणी हूँ कि जिनकी कृपा और आशीर्वाद से आज मैं इस ग्रन्थ का सम्पादन करने योग्य बन सका!

श्रीमती सन्तोषकुमारी जैन (मेरी धर्मपत्नी) के सहयोग और प्रेरणा से मैं इस कार्य में संलग्न रहा इसके लिये उसको भी साधुवाद।

मानगढ़ निवास, जोधपुर
२४-५-६५

—म. विनयसागर

दाहरणों के कहीं-कहीं पूर्णपद्य न देकर एक-एक चरण-मात्र दिये हैं उन्हें पूर्णरूप में टिप्पणी में दे दिये हैं।

इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा-उपजाति वंशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति और शालिनी-वातोर्मी-उपजाति के ग्रंथकार ने १४ १४ भेद स्वीकार किये हैं किन्तु उनके नाम लक्षण एवं उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी में इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति और वंशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति के १४ १४ भेदों के नाम लक्षण एवं उदाहरण अन्य ग्रंथों के आधार से दिये हैं तथा शालिनी-वातोर्मी उपजाति एवं रथोद्धता-स्वागता-उपजाति के टिप्पणी में लक्षणमात्र दिये हैं क्योंकि अन्य ग्रंथों मे इनके नाम और उदाहरण पृथक्रूप में मुझे प्राप्त नहीं हुये।

कतिपय स्थलों पर लक्षण स्पष्ट न होने से एवं उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी में लक्षणों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है, साथ ही अन्य ग्रंथों से प्राप्त उदाहरण भी दिये हैं। गाथादि छंदभेदों के लक्षण और नाम टिप्पणी में देकर इन भेदों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है।

प्रतियों में छन्द के प्रारम्भ में कहीं 'अथ' का प्रयोग है और कहीं नहीं है कहीं नाम के साथ 'वृत्त' या 'छन्द' का प्रयोग है और कहीं नहीं है तथा छन्द के अंत मे केवल नाम ही प्राप्त है किन्तु मैंने ग्रंथ मे एकरूपता रखने के लिये प्रारंभ में 'अथ' और छन्द का नाम और अंत में 'इति' और छन्द नाम का सर्वत्र प्रयोग किया है। इसी प्रकार श्लोक-संख्या में भी एकरूपता की दृष्टि से मैंने प्रत्येक प्रकरण की श्लोक-संख्या पृथक्-पृथक् दी है।

गोविन्दबिरुदावली के पाठान्तर मैंने राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर ग्रन्थांक २१४८० पत्र ८ पंक्ति १६ अक्षर ४१ की प्रति से दिये हैं।

पाठान्तर, टिप्पणियां और परिशिष्टों द्वारा मैंने यथासम्भव इस ग्रन्थ को श्रेष्ठ बनाने का प्रयास किया है किन्तु मैं इसमें कहाँ तक सफल हुआ हूँ इसका निर्णय तो एतद्विषय के विद्वान् ही कर सकेंगे।

आभार प्रदर्शन—

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के सम्मान्य सञ्चालक मनीषी पद्मश्री मुनि श्री जिनविजयजी पुरातत्त्वाचार्य ने इस ग्रन्थ के सम्पादन का कार्य प्रदान कर मुझे जो साहित्य-साधना का अवसर दिया तथा प्रतिष्ठान के उप संचालक सम्माननीय श्री गोपालनारायणजी बहुरा एम ए ने जिस आत्मीयता

के साथ समय-समय पर परामर्श एवं सहयोग देकर कृतार्थ किया, उसके लिये मैं इन दोनों का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं।

श्री अगरचन्दजी नाहटा के सत्प्रयत्न से अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर के संरक्षक बीकानेर के महाराजा एवं व्यवस्थापकों ने वृत्तमौक्तिक की प्रतियां सम्पादनार्थ प्रदान की, अतः मैं इन सब का आभारी हूँ।

पं० श्री कण्ठमणिशास्त्री कांकरोली, श्री गंगाधरजी द्विवेदी जयपुर, श्री भंवरलालजी नाहटा कलकत्ता, डॉ० श्री नारायणसिंहजी भाटी एम.ए., पी.एच.डी., संचालक राजस्थानी शोध संस्थान जोधपुर, श्रीबद्रीप्रसाद पंचोली एम.ए., एवं इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी, लन्दन, के व्यवस्थापक आदि ने परामर्श देकर एवं ग्रन्थों की आद्यन्त-प्रशस्तियां भेज कर जो सहयोग प्रदान किया है उसके लिये मैं इन सब का उपकृत हूँ।

मेरे परममित्र श्री लक्ष्मीनारायणजी गोस्वामी का अभिनन्दन मैं किन शब्दों में करूं! इस ग्रन्थ को शुद्ध एवं श्रेष्ठ बनाने का सारा श्रेय ही इन्हीं को है।

साधना प्रेस जोधपुर के संचालक श्री हरिप्रसादजी पारीक भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इसके मुद्रण में पूर्ण सहयोग दिया है।

अन्त में, मैं अपने पूज्य गुरुदेव श्रीजिनमणिसागरसूरिजी महाराज का अत्यन्त ही ऋणी हूँ कि जिनकी कृपा और आशीर्वाद से आज मैं इस ग्रन्थ का सम्पादन करने योग्य बन सका!

श्रीमती सन्तोषकुमारी जैन (मेरी धर्मपत्नी) के सहयोग और प्रेरणा से मैं इस कार्य में संलग्न रहा इसके लिये उसको भी साधुवाद।

आनन्द निवास, जोधपुर
२४-५-६५

—म. विनयसागर

दाहरणों के कहीं-कहीं पूर्णपद्य न देकर एक-एक चरण-मात्र दिये हैं उन्हें पूर्णरूप में टिप्पणी में दे दिये हैं।

इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा-उपजाति वंशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति और शालिनी-वातोर्मी-उपजाति के ग्रंथकार ने १४ १४ भेद स्वीकार किये हैं किन्तु उनके नाम लक्षण एवं उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी में इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति और वंशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति के १४ १४ भेदों के नाम लक्षण एवं उदाहरण अन्य ग्रंथों के आधार से दिये हैं तथा शालिनी-वातोर्मी उपजाति एवं रथोद्धता-स्वागता-उपजाति के टिप्पणी में लक्षणमात्र दिये हैं क्योंकि अन्य ग्रंथों मे इनके नाम और उदाहरण पूर्णरूप में मुझे प्राप्त नहीं हुये।

कतिपय स्थलों पर लक्षण स्पष्ट न होने से एवं उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी में लक्षणों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है, साथ ही अन्य ग्रंथों से प्राप्त उदाहरण भी दिये हैं। गाथादि छंदभेदों के लक्षण और नाम टिप्पणी में देकर इन भेदों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है।

प्रतियों में छन्द के प्रारम्भ में कहीं 'अथ' का प्रयोग है और कहीं नहीं है कहीं नाम के साथ 'वृत्त' या 'छन्द' का प्रयोग है और कहीं नहीं है तथा छन्द के अंत मे केवल नाम ही प्राप्त है किन्तु मैंने ग्रंथ मे एकरूपता रखने के लिये प्रारम्भ में 'अथ' और छन्द का नाम और अंत में 'इति' और छन्द नाम का सर्वत्र प्रयोग किया है। इसी प्रकार श्लोक-संख्या में भी एकरूपता की दृष्टि से मैंने प्रत्येक प्रकरण की श्लोक-संख्या पृथक-पृथक दी है।

गोविन्दविरुदावली के पाठान्तर मैंने राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर ग्रन्थांक २३४८० पत्र ८ पंक्ति १६ अक्षर ४१ की प्रति से दिये हैं।

पाठान्तर, टिप्पणियां और परिशिष्टों द्वारा मैंने यथासम्भव इस ग्रन्थ को श्रेष्ठ बनाने का प्रयास किया है किन्तु मैं इसमें कहाँ तक सफल हुआ हूँ इसका निर्णय तो एतद्विषय के विद्वान् ही कर सकेंगे।

आभार प्रदर्शन—

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के सम्मान्य सञ्चालक मनीषी पद्मश्री मुनि श्री जिनविजयजी पुरातत्त्वाचार्य ने इस ग्रन्थ के सम्पादन का कार्य प्रदान कर मुझे जो साहित्य-साधना का अवसर दिया तथा प्रतिष्ठान के उप संचालक सम्माननीय श्री गोपालनारायणजी बहुरा एम ए ने जिस आत्मीयता

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ-संख्या	पद्य-संख्या
तुम्बुरु	IS	१६१	४२६
तुरङ्गम	चतुर्मात्रा	४	३६
तूर्य-पर्याय	SI	३	२४
तोमर	IS	३	२३
दण्ड	I	४	३७
दहन	SII	४	३२
द्विजपाति	IIII	४	३३
द्विजवर	IIII	४	३३
धर्म	SIIII	३	१९
धातु	IIISI	३	१९
ध्रुव	ISIII	३	१९
ध्वज	IS	३	२३
नगण	III	४	४०
नरेन्द्र-पर्याय	ISI	४	३१
नायक	ISI	४	३१
नारी	III	३	२५
निर्वाण	SI	३	२४
नूपुर	S	३	२६
पक्षी	SIS	३३	६१
पक्षिराज	SIS	५४	६४
पञ्चशर	IIII	४	३३
पटह	SI	३	२४
पत्र	IS	३	२३
पदपर्याय	SII	४	३२
पदाति	चतुर्मात्रा	४	३६
पयोधर	ISI	३	२१
परम	II	३	२७
पवन	IS	३	२३
पवन	ISI	४	३१
पाणि	IIS	३	२९
पापगण	IIIII	३	२०
पितामह	SII	४	३२
पुष्प	I	४	३८
प्रहरण	IIS	३	२९
प्रहरणासानि	पञ्चमात्रा	४	३९
फणि	SI	३	२६
बाण	IIII	४	३३
बाण	I	४	३८
बलभद्र	SII	४	३२
बाहु	IIS	३	२९
भगण	SII	४	४०
भामिनी-पर्याय	III	३	२५
भाव	III	३	२५
भुजङ्ग	SIS	४	३५
भुजदण्ड	IIS	३	२९
भुजाभरण	IIS	३	२९
भूपति	ISI	४	३१
मगण	SSS	४	३९
मनोहर	SS	३	२८
मानस	S	३	२६
मुग्धाभरण	S	३	२६
मुनिगण	IIII	४४	६३
मृगेन्द्र	SIS	४	३५
मेघ	ISS	४	३४
मेरु	I	४	३७
यक्ष	SIS	४	३५
यगण	ISS	४	३९
रगण	SIS	४	३९
रज्जु	ISI	४	३१
रति	SII	४	३२
रदन	IIS	३	२९
रथ	चतुर्मात्रा	४	३६
रवन	ISS	४	३४
रम	IS	३	२३
रस	I	४	३८
रसना	S	३	२६
रसलान	SS	३	२८
रसिक	[illegible]		

अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर से प्राप्त द्वितीय खण्ड क संज्ञक प्रति के प्रथम पत्र और
क संज्ञक प्रति के अन्तिम पत्र की प्रतिकृति

कविशेखर-भट्टश्रीचन्द्रशेखरप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

प्रथमः खण्डः

प्रथमं गाथाप्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

युष्मान् पातु चिरन्तनं किमपि तत्सत्यं चिदेकात्मकं,
प्रोतं यत्र चराचरात्मकमिदं वाक्चेतसोर्यत्परम् ।
यस्माद् विश्वमुदेति भाति च यतो यस्मिन्पुनर्लीयते,
यद्वित्तं श्रुतिशान्तदान्तमनसामानन्दकन्दं महः ॥ १ ॥
अमुष्मिन् मे दर्वी करकलितदुर्बोधविषमे,
मतिः छन्दःशास्त्रे यदपि चरितं नास्ति विपुला ।
तथाप्याराध्यश्रीपितृचरणसेवा[1] सुमतिना,
तदीयाभिर्वाग्भिर्विरचितपथे गम्यत इह ॥ २ ॥
श्रीलक्ष्मीनाथभट्टस्य पितुर्नत्वा पदाम्बुजम् ।
श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम् ॥ ३ ॥
श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तच्छन्दःशास्त्रमहोदधिः ।
पितृप्रसादादभवन् मम गोष्पदसन्निभः[2] ॥ ४ ॥
अलसाः प्राकृते केचिद् भवन्ति सुधियः क्वचित् ।
तत्सन्तोषाय भवतु वार्त्तिकं वृत्तमौक्तिकम् ॥ ५ ॥
यो नानाविधमात्राप्रस्तारात् सागरं प्राप्य ।
गरुडमवञ्चयदतुलं स हि नागः पिङ्गलो जयति ॥ ६ ॥

गुरुलघुस्थिति

दीर्घः संयुक्तपरः पादान्तो वा विसर्गबिन्दुयुतः ।
स गुरुर्वक्रो द्विकलो लघुरन्यः शुद्ध एककलः ॥ ७ ॥

---

१ ग सेवां । २ ग सन्निभो ।

महोपाध्याय विनयसागर संग्रह, कोटा से प्राप्त वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध टीका के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

स्थले शून्ये तद्वद् घटय[1] गुरुमेवेति नियमो,
लघुं सर्वो वर्णो भवति पदमध्ये च शिशुका[2] ॥ १७ ॥
मात्राप्रस्तारे खलु यावद्भिः स्यात् कलापूर्ति ।
तावन्तो गुरुलघवो देया इत्यनियम प्रोक्त ॥ १८ ॥

मात्रागणानां नामानि

हर-शशि-सूर्या शक्र शेषोप्यहि-कमल-धातृ-कलि-चन्द्राः ।
ध्रुव-धर्म-शालिसञ्ज्ञा षण्मात्राणा त्रयोदशैव भिदा[3] ॥ १९ ॥
इन्द्रासनमथ सूर्यश्चापो हीरश्च शेखर कुसुमम् ।
अहिगण-पापगणाविति पञ्चकलस्यैव सञ्ज्ञा स्यु ॥ २० ॥
गुरुयुग्म किल कर्णो गुर्वन्त करतलो भवति ।
गुरुमध्यम पयोधर इति विज्ञेयस्तृतीयोऽपि ॥ २१ ॥
आदिगुरुर्वसुचरणो विप्रो लघुभिश्चतुर्भिरेव स्यात् ।
इति हि चतुष्कलभेदा पञ्चैव भवन्ति पिङ्गलेनोक्ता. ॥ २२ ॥
ध्वज-चिह्न-चिर-चिरालय-तोमर-पत्राणि चूतमाले च ।
रस-वास-पवन-वलया भेदास्त्रिकलस्य लघुकमालम्ब्य ॥ २३ ॥
करताल-पटह-ताला सुरपतिरानन्दतूर्यपर्याया ।
निर्वाण-सागरावपि गुर्वादित्रिकलनामानि ॥ २४ ॥
सात्विकभावास्ताण्डवनारीणा भामिनीना च ।
नामानि यानि लोके त्रिलघुगणस्यैव तानि जानीत ॥ २५ ॥
नूपुर-रसना-चामर-फणि-मुग्धाभरण-कनक-कुण्डलकम् ।
वक्रो मानस-वलयौ हारावलिरिति गुरोश्च नामानि ॥ २६ ॥
सुप्रिय-परसौ कथितौ द्विलघोरिति नाम सक्षेपात् ।
अथ कथयामि चतुष्कलनामान्यन्यानि पिङ्गलोक्तानि* ॥ २७ ॥
सुरतलता गुरुयुगल कर्णसमानेन रसिक-रसलग्नौ ।
लम्बित-सुमति-मनोहर-लहलहिताना च नाम्नापि[4] ॥ २८ ॥
कर-पाणि-कमल-हस्ता प्रहरण-भुजदण्ड-बाहु-रत्नानि ।
वज्र[5] गजभुजयोरप्याभरण स्याच्चतुष्कले सञ्ज्ञा ॥ २९ ॥
कर्णपर्यायिन शब्दा गुरुयुग्मस्य वाचका ।
हस्तायुधस्य पर्याया गुर्वन्तस्यैव बोधका ॥ ३० ॥

---

१ ग. पूर्वं रचय । २ ख नियत । ३ ग भेद । ४ ख ग नामानि । ५ ग वज्रो ।

* टि. द्रष्टव्य -प्राकृतपैंगलम् । (परि० १, गाथा २३–३२) ।

यथा –

गौरीवर भस्मविभूषिताङ्ग इन्दुप्रभाभासितभालदेशम् ।
गङ्गातरङ्गावलिभासमानमूर्धानमानन्दितमानमामि ॥ ८ ॥

रेफहकारव्यञ्जनसंयोगात् पूर्वसंस्थितस्य भवेत् ।
वैकल्पिकं लघुत्वं वर्णस्योदाहरन्ति विद्वांसः ॥ ९ ॥

यथा –

जयति प्रदीपितकामो मम मानसहृदनिमज्जनासिरयम् ।
यस्य यमगरमदम्मान् मालिन्यमन्तरस्थित लग्नम् ॥ १० ॥

विकल्पस्थितिः

यदपि दीर्घं वर्णं जिह्वा लघु पठति भवति सोऽपि लघुः ।
वर्णांस्त्वरितं पठितान् द्विमानेक विजानीत ॥ ११ ॥

यथा –

अरे रे* ! कथय वार्त्तां दूति तस्याश्चिषित्री
मम सविधमुपेष्यत्येष कृष्णः कदा नु ।
इति चटु कथयन्त्यां राधिकायां तदानीं
मति डगमगदेह कैवायोप्याऽविराशीत् ॥ १२ ॥

काव्यलक्षणेऽनिष्टफलवेदनम्

कनकतुला यद्वन्नहि सहते परमाणुवैषम्यम् ।
श्रवणतुला नहि तद्वत्स्वरभङ्गेन वैषम्यम् ॥ १३ ॥
लक्षणविकलं काव्यं पण्डितसदसत्सु यो बुधः पठति ।
हस्ताग्रलग्नखड्गं कृत्तं शीर्षं न जानाति ॥ १४ ॥

मात्राणां षडादीनां प्रस्तारसंज्ञा

रसबाणवेदवह्नी पक्षाभ्यां चैव सम्मिता मात्रा ।
येषां ते प्रस्ताराष्ट-ठ-ड-ढ-णेत्येव संज्ञकाः प्रोक्ताः ॥ १५ ॥
ट त्रयोदशभेदाः स्युरष्टौ भेदाष्ठकारजाः ।
डस्य भेदाः पञ्च ढस्य त्रयो द्वावन्तिमस्य तु[३] ॥ १६ ॥
गुरोरधस्तादाद्ये लघुकमथ देहि प्रथमतः
ततः शेषान् वर्णानुपरितनतुल्यान् घटयत[५] ।

---

१ क ख मेन्तरस्थित । अन्तःस्थितमिति पाठः समीचीनः (सं०) । २ ग विजानीयात् ।
३ ग पद्यं नास्ति इदं स्मृतम् । ४ ग पूर्वस्याधो । ५ ख ग विरचय ।
*अत्र 'रे रे' इति लघुपठनीये स्तः ।

स्थले शून्ये तद्वद् घटय[1] गुरुमेवेति नियमो,
लघुं सर्वो वर्णो भवति पदमध्ये च शिशुका[2] ॥ १७ ॥
मात्राप्रस्तारे खलु यावद्भि स्यात् कलापूर्ति ।
तावन्तो गुरुलघवो देया इत्यनियम प्रोक्त ॥ १८ ॥

मात्रागणाना नामानि

हर-शशि-सूर्या शक्र शेषोप्यहि-कमल-धातृ-कलि-चन्द्राः ।
ध्रुव-धर्म-शालिसंज्ञा. षण्मात्राणा त्रयोदशैव भिदा[3] ॥ १९ ॥
इन्द्रासनमथ सूर्यश्चापो हीरश्च शेखर कुसुमम् ।
अहिगण-पापगणाविति पञ्चकलस्यैव सज्ञा स्यु ॥ २० ॥
गुरुयुग्म किल कर्णो गुर्वन्त करतलो भवति ।
गुरुमध्यम पयोधर इति विज्ञेयस्तृतीयोऽपि ॥ २१ ॥
आदिगुरुर्वसुचरणो विप्रो लघुभिश्चतुर्भिरेव स्यात् ।
इति हि चतुष्कलभेदा पञ्चैव भवन्ति पिङ्गलेनोक्ता ॥ २२ ॥
ध्वज-चिह्न-चिर-चिरालय-तोमर-पत्राणि चूतमाले च ।
रस-वास-पवन-वलया भेदास्त्रिकलस्य लघुकमालम्ब्य ॥ २३ ॥
करताल-पटह-ताला सुरपतिरानन्दतूर्यपर्याया ।
निर्वाण-सागरावपि गुर्वादित्रिकलनामानि ॥ २४ ॥
सात्त्विकभावास्ताण्डवनारीणा भामिनीना च ।
नामानि यानि लोके त्रिलघुगणस्यैव तानि जानीत ॥ २५ ॥
नूपुर-रसना-चामर-फणि-मुग्धाभरण-कनक-कुण्डलकम् ।
वक्रो मानस-वलयौ हारावलिरिति गुरोश्च नामानि ॥ २६ ॥
सुप्रिय-परमौ कथितौ द्विलघोरिति नाम सक्षेपात् ।
अथ कथयामि चतुष्कलनामान्यन्यानि पिङ्गलोक्तानि* ॥ २७ ॥
सुरतलता गुरुयुगल कर्णसमानेन रसिक-रसलग्नौ ।
लम्बित-सुमति-मनोहर-लहलहिताना च नाम्नापि* ॥ २८ ॥
कर-पाणि-कमल-हस्ता प्रहरण-भुजदण्ड-बाहु-रत्नानि ।
वज्र[5] गजभुजयोरप्याभरण स्याच्चतुष्कले सज्ञा ॥ २९ ॥
कर्णपर्यायिन शब्दा गुरुयुग्मस्य वाचका ।
हस्तायुधस्य पर्याया गुर्वन्तस्यैव बोधका ॥ ३० ॥

---

१ ग. पूर्व रचय । २ ख नियत । ३ ग भेद । ४ ख ग. नामानि ।
५. ग वज्रो ।
* टि द्रष्टव्य -प्राकृतपैंगलम् । (परि० १, गाथा २३–३२) ।

भूपति-नायक-गजपति-नरेन्द्र-कुचवाचका शब्दा ।
गोपाल-रज्जु-पवना मध्यगुरोर्बोधका[1] ज्ञेया ॥ ३१ ॥
दहन-पितामह-ताता पवपर्यायश्च गण्ड[2]-जगमध्यौ ।
जङ्घायुगल रतिरित्यादिगुरौ स्युश्चतुष्कले संज्ञा ॥ ३२ ॥
द्विज-आदि शिखर-विप्रा परमोपायेन[3] पञ्चाक्षर-बाणौ ।
द्विजवर इत्यपि कथिता[4] लघुकचतुष्कले गणे संज्ञा ॥ ३३ ॥
सुनरेन्द्राधिप-कुञ्जरपर्याया रदन-मेघयोश्चापि ।
ऐरावत-तारापतिरित्यादि सर्वोश्च पञ्चमात्रस्य ॥ ३४ ॥
वीणा-विराट्-मृगेन्द्रामृत-विहगा गरुडपर्याया ।
जोहल[5]-यक्ष भुजङ्गा मध्यलघो पञ्चमात्रस्य ॥ ३५ ॥
विविधप्रहरणनामा पञ्चकल पिङ्गलेनोक्तः ।
गज रथ-तुरङ्गम-पदातिसञ्ज्ञक स्याच्चतुर्नाम ॥ ३६ ॥
ताटङ्क-हार-नूपुर-केयूरकमिति भवन्ति गुरुभेदा ।
शर-मेरुदण्ड-कनक लघुभेदा इति विजानीत ॥ ३७ ॥
शब्द-रूप रस-गन्ध-काहलै पुष्प-शङ्ख-बाणनामभि ।
मत्प्रबन्ध इह वृत्तमौक्तिके ज्ञायतां लघुकनाम पण्डिता ॥ ३८ ॥

वर्णवृत्तानां गणसंज्ञा

मस्त्रिगुरुरादिलघुको यगणो रगणश्च लघुमध्य ।
अन्तगुरु सस्तगणोऽप्यन्तलघुर्मध्यगुरुको ज ॥ ३९ ॥
आदिगुरुर्भगणोऽपि च नगणस्त्रिलघुर्मत सद्भि ।
इति पिङ्गलप्रकाशित गणसंज्ञा वर्णवृत्तानाम् ॥ ४० ॥

गणदेवता

पृथ्वी-जल शिखि-पवना गगन धूमणीन्दु-पन्नगान् क्रमत[6] ।
इत्यष्टौ गणदेवान् पिङ्गलकथितान् विजानीत ॥ ४१ ॥

गणानां मैत्री

मगणस्त्रिलघू मित्रे भृत्यौ भयगणौ स्मृतौ ।
उदासीनौ जतगणावरी रसगणौ मतौ ॥ ४२ ॥

गणदेवानां फलाफलम्

मगणो ऋद्धिकार्यं यगण सुखसम्पदो धत्ते ।
रगणो ददाति रमणं 'समणोदेशाद् विमासयति'[7] ॥ ४३ ॥

---

१ ग बोधिका । २ ग. गण्डु । ३ ग परमोपायेन । ४ ग नास्ति पाठ । ५ ग जोहल । ६ क ग. पृथिवीजलशिखिकालाः गगनं सर्वश्च चन्द्रमा नाम । ७ ग विगुरु । ८ ग जगणो रुजमादधात्येव ।

*तगण शून्य[1] तनुते जगणो रुजमादधात्येव ।
भगणो मङ्गलदायी नगण सकल फल दिशति* ॥ ४४ ॥
इति पिङ्गलेन कथितो गणदेवानां फलाफलविचार ।
ग्रन्थस्यादौ कविना बोद्धव्य सर्वथा यत्नात् ॥ ४५ ॥
मित्रद्वयेन ऋद्धि स्थिरकार्यं भृत्ययोर्भवति ।
मित्रोदास्ताभ्यामपि कार्याभावश्च बन्धोऽपि ॥ ४६ ॥
मित्रारिभ्या बान्धवपीडा कार्यं च मित्रभृत्याभ्याम् ।
भृत्याभ्यामुग्रो[2]ऽसुख[3]-मुदास्तभृत्यौ धन हरत ॥ ४७ ॥
भृत्योदासीनाभ्या भृत्यारिभ्या[4] च हाक्रन्द[5] ।
अल्प कार्यमुदास्तान् मित्रात् सजायतेप्युदास्ताभ्याम् ॥ ४८ ॥
सम्यगसम्यङ् न भवत्युदास्तशत्रू च वैरिण[6] कुरुत ।
शत्रोर्मित्राच्च फल स्त्रीनाश शत्रुभृत्ययोर्भवति ॥ ४९ ॥
शत्रूदासीनाभ्या धननाश सर्वथा भवति ।
शत्रुभ्या नायकमृतिरिति फलमफल गणद्वये कथितम् ॥ ५० ॥

मात्रोद्दिष्टम्

दद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयत ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उर्वरितैश्च[7] तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्ट विजानीयात् ।

मात्रानष्टम्

अथ मात्राणा नष्ट यददृष्ट[8] पृच्छ्यते रूपम् ॥ ५२ ॥
यत्कलकप्रस्तारो लघव कार्याश्च तावन्त ।
दत्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्क[9] लोपयेदन्त्ये ॥ ५३ ॥
उर्वरितोवरितानामङ्काना यत्र[10] लभ्यते भाग ।
परमात्रा च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ५४ ॥

वर्णोद्दिष्टम्

द्विगुणानङ्कान् दत्वा वर्णोपरि लघुशिर स्थितानङ्कान् ।
एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्ट विजानीत ॥ ५५ ॥

- ग प्रतौ – त्याजयति सोऽपि देशं, तगण॰ शून्यफल च विदधाति ।
मगल भगणो दायी, नगणात् सर्वं समीचीनम् ।

१ ख शून्यं फलेन विदधति । २ ख ग मग्रे । ३ क सख । ४ ग भृत्यादिभ्यां । ५ ग महाक्रन्द । ६ ग वैरिणां । ७ ग उच्चरितैश्च । ८ ग विद्वद्भिर्यत्र । ९. ग प्रश्नाङ्क । १० ग नास्ति पाठः ।

वर्णनष्टम्

नष्टे पृष्ठे भाग कर्तव्य पृष्ठसंख्याया ।
समभागे स[1] कुर्यात् विषमे स्वैकमानयेद् गुरुकम् ॥ ५६ ॥

वर्णमेरु

कोष्ठानेकाधिकान् वर्णे[2] कुर्यादाद्यन्तयो पुन ।
एकाङ्कमुपरिस्थाङ्कद्वयरन्यात्(न्?)प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥
वर्णमेरुरय सर्वगुर्वादिगणवेदकम्[3] ।
प्रस्तारसंस्थानामस्य फलं तस्योच्यते बुधै ॥ ५८ ॥

वर्णपताका

दत्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कैर्योजयेत्परान् ।
अङ्क पूर्वं यो वै भृतस्तत्र पंक्तिसञ्चार ॥ ५९ ॥
अङ्का पूर्वं भृता येन तमङ्क भरणे त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं य सिद्धस्तमङ्क नैव साधयेत् ॥ ६० ॥
प्रस्तारसस्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेय विलिख्य तु ॥ ६१ ॥

मात्रामेरु

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पङ्क्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्क पूर्वभागे तु ॥ ६२ ॥
एकाङ्कमयुकपङ्क्ते समपङ्क्ते पूर्वयुग्माङ्कम् ।
तदादादिमकोष्ठे यावत् पङ्क्ति प्रपूर्ति स्यात ॥ ६३ ॥
प्राद्याङ्केन तदीये शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थै ।
उपरिस्थितेन कोष्ठ विषमायां पूरयेत् पङ्क्तौ ॥ ६४ ॥
समपङ्क्तौ कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय ।
उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिसस्थैर्वामस्थितैरङ्कै ॥ ६५ ॥
मात्रामेरुरयं प्रोक्त पूर्वोक्तफलभागिति ।

मात्रापताका

अथ मात्रापताकाऽपि कथ्यते कवितुष्टये ॥ ६६ ॥
दत्त्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्तेन लोपयेदन्त्ये[4] ।
अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततो भवेत्[5] पंक्तिसञ्चार ॥ ६७ ॥
एकैकाङ्कस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।
द्वित्र्यादीनां विलोपे तु पंक्तिद्वित्र्यादिबोधिनी ॥ ६८ ॥

---

१ म मधु। २ ख वर्णान्। ३ ख ग वेदनम्। ४ ग मरणे। ५. ख अन्त्यो।
६ ख नास्ति पाठ।

वृत्तद्वयस्थगुरुलघुज्ञानम्

पृष्ठे वर्णच्छन्दसि कृत्वा वर्णास्तथा मात्रा ।
वर्णाङ्केन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते[1] ॥ ६९ ॥

वर्णमर्कटी

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा ।
कोष्ठमक्षरसख्यात[2] पक्ती[3] रचय पट् तथा ॥ ७० ॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु ।
अपराया तु द्विगुणान् अक्षरसज्ञेषु तेष्वेव ॥ ७१ ॥
आदिपक्तिरियतैरङ्कैर्विभाव्यापरपक्तिगान् ।
अङ्कांश्चतुर्थपक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२ ॥
[4]पूरयेत् पष्ठ-पञ्चम्याव(म)ङ्कैस्तुर्याङ्कसम्भवै ।
एकीकृत्य चतुर्थस्थ-पञ्चमस्थाङ्ककान् सुधी ॥ ७३ ॥
कुर्यात् पक्तितृतीयस्थकोष्ठकानपि पूरितान् ।
वर्णाना मर्कटी सेय पिङ्गलेन प्रकाशिता ॥ ७४ ॥
वृत्त भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोऽपि ।
प्रस्तारस्य[5] पडेते ज्ञायन्ते पंक्तित. क्रमत. ॥ ७५ ॥

मात्रामर्कटी

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पक्तिपट्क[6],
कुर्यात् मात्रामर्कटीसिद्धिहेतो ।
तेपु द्व्याद्येनादिपक्ति(क्त)वथाङ्का-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्क सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥
दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्या-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्क पक्षपक्तावथाऽपि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा ततस्तान्,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपक्तिस्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥
प्रथमे द्वितीयमङ्क द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
हत्वा बाणद्विगुण तद् द्विगुण नेत्रतुर्ययोर्दद्यात् ॥ ७८ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चमपक्तिस्थितान् पूर्वान् ।
दत्वा तथैकमङ्क कुर्यात्तेनैव पञ्चम[7] पूर्णम्[8] ॥ ७९ ॥

---

१ ग विशिष्यते । २ ग सज्ञात । ३ ग. पक्ति । ४ ग पूरयत्पष्टपञ्चभ्या वेवे
५ ग प्रस्तारस्य । ६ ग पट्के । ७ ग पञ्चमा । ८ ग पूर्णाम् ।

त्यक्त्वा पञ्चममङ्कं पूर्वोक्तानेव भावमापाद्य ।
दत्त्वा तथैवमङ्कं षष्ठं कोष्ठं प्रपूरयेद्[1] विद्वान् ॥ ८० ॥
कृत्वैक्यं चाङ्कानां पञ्चमपङ्क्तिस्थितानां च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्कं हित्वैकं पूरयेत् मुने[2] कोष्ठम् ॥ ८१ ॥
एवं निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यात् ।
प्रकृतानुपयोगवशाच्च कृतोऽङ्कविस्तारः ॥ ८२ ॥
एवं पञ्चमपङ्क्तिं कृत्वा पूर्वां च प्रथममेकाङ्कम्[4] ।
दत्त्वा पञ्चमपङ्क्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चम-षष्ठस्थितान् विद्वान् ।
कुर्याच्चतुर्थपङ्क्तिं पूर्णां मागाज्ञया तूर्णम् ॥ ८४ ॥
वृत्तं प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पङ्क्तिताः पूर्वप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥

मर्कटीफलम्

नष्टोद्दिष्टं यद्वत् मेरुद्वितयं तथा पताका च ।
मर्कटिकाऽपि तद्वत् कौतुकहेतुर्निबध्यते सर्वं ॥ ८६ ॥

प्रस्तारसंख्या

षड्विंशति सप्तशतानि चैव
तथा सहस्राण्यपि सप्तपङ्क्तिः ।
लक्षाणि[6] दृग्वेदसुसम्मितानि
कोटयस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥ ८७ ॥

१३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारपिण्डसंख्या ।

एकाक्षरादिषड्विंशतिवर्णान्तवर्णवृत्तानाम् ।
उक्ता समस्तसंख्या लक्ष्यन्ते जातयश्चार्याः ॥ ८८ ॥

गाथाभेदाः

मुनिबाणकला गाथा विगाथापि तथा भवेत् ।
वेदबाणकला गाहू[8] षष्ट्यो(ष्ठ्या)द्गाथा भवेत् पुनः ॥ ८९ ॥
गाहिनी स्याद् द्विषष्ट्या तु मात्राणां सिंहिनी तथा ।
चतुःषष्ट्या कलानां तु स्कन्धकः कथ्यते बुधैः ॥ ९० ॥

---

१ ख नास्ति पाठः । २ ख वै पूरयेद् । ३ ख नास्ति पाठः । ४ ग प्रकृतोपयोग-वशात् । ५ ग. एकतम् । ६ ख ग. लक्षाणि ... , द्विनानि कोटयो नव ... । ७ ग. न लक्षा जातयश्चार्या. । ख चार्याः । ८ ख गुहा ।

१ गाथा

प्रथमे द्वादशमात्रा मात्रा ह्यष्टादश द्वितीये तु[1] ।
दहने द्वादशमात्रास्तुर्ये दशपञ्च रामप्रोक्ता ॥ ९१ ॥
इति गाथाया लक्षणमस्यास्तामान्यलक्षण चाऽय ।
षष्ठे जो वा विप्रो विषमे न हि जो गणाश्च गुर्वन्ता ॥ ९२ ॥
सप्त हरय सहारा. षष्ठे रज्जुद्विजोऽपि वा भवति ।
चरमदले लघु षष्ठ विषमे पवनस्तु नैव स्यात् ॥ ९३ ॥

यथा–

गोकुलहारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरि. पायात् ॥ ९४ ॥

एकस्मात् कुलीना द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति ।
नायकहीना रण्डा वेश्या बहुनायका भवति ॥ ९५ ॥

गाथाया: पञ्चविंशतिर्भेदा

सर्वस्या गाथाया मुनिबाणसमाख्यया कला ज्ञेया ।
प्रथमे दले खरामैरपरेऽपि दलेऽश्वपक्षाभ्याम्[2] ॥ ९६ ॥
नखमुनिपरिमितहारा वह्निमिता यत्र लघव स्यु. ।
सा गाथाना गाथा प्रथमा खाग्न्यक्षरा लक्ष्मी. ॥ ९७ ॥[3]
एकैकगुरुवियोगाल्लघुद्वयस्यापि सयोगात् ।
अस्या भवन्ति भेदा शरपक्षाभ्या मिता एव ॥ ९८ ॥[4]
मुनिपक्षाभ्या हारा लघवो दहनैश्च स· प्रथम. ।
विधुवार्णैर्लघव स्युर्गुरवो दहनैश्च सोऽन्त्य स्यात् ॥ ९९ ॥
त्रिंशद्वर्णा लक्ष्मी वदते सर्वपण्डिता कवय ।
नश्यत्येकैको यद्वर्ण कथयामि तानि नामानि ॥ १०० ॥[5]
लक्ष्मीर्ऋद्धिर्बुद्धि[6]र्लज्जा विद्या क्षमा च वै देही[7] ।
गौरी धात्री चूर्णा[8] छाया कान्तिर्महामाया ॥ १०१ ॥
कीर्ति सिद्धिर्मानी[9] रामा विश्वा च वासिता च मता ।
शोभा हरिणी चक्री कुररी[10] हसी च सारसी च मता ॥ १०२ ॥

---

१ ग ऽपि । २ ग प्रथमदले च खराम स्वरपक्षाभ्यां मिता एव । ख. स्वरपक्षाभ्याम् । ३-४ ग पद्यद्वय ९७-९८ नास्ति । ५ ख ग. पद्यमेक १०० नास्ति । ६ ग शुद्धि । ७ ख ग देही च । ८ ग पूर्णा । ९. ग. मानिनी । १० ग. कुरगी ।

त्यक्त्वा पञ्चममङ्कं पूर्वोक्तानेव भावमापाद्य ।
दत्त्वा तथैवमङ्कं षष्ठं कोष्ठं प्रपूरयेद्[1] विद्वान् ॥ ८० ॥
कृत्वैवं चाङ्कानां पञ्चमपङ्क्तिस्थितानां च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्कं द्वित्रैकं पूरयेन् मुने[3] कोष्ठम् ॥ ८१ ॥
एवं निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यात् ।
प्रकृतानुपयोगवधाच्च कृतोऽङ्कविस्तारः ॥ ८२ ॥
एवं पञ्चमपंक्तिं कृत्वा पूर्णां च प्रथममेकाङ्कम्[4] ।
दत्त्वा पञ्चमपङ्क्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चम-षष्ठस्थितान् विद्वान् ।
कुर्याच्चतुर्थपंक्तिं पूर्णां मात्राज्ञया तूर्णम् ॥ ८४ ॥
वृत्तं प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पङ्क्तितः पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥

नष्टादिकथनम्

नष्टोद्दिष्टं यद्वन् मेरुद्वितयं तथा पताका च ।
मर्कटिकाऽपि तद्वच्च कौतुकहेतुर्निबध्यते तज्ज्ञैः ॥ ८६ ॥

प्रस्तारसंख्या

षड्विंशति सप्तशतानि चैव
तथा सहस्राण्यपि सप्तपंक्तिः ।
लक्षाणि[6] दृग्वेदसुसम्मितानि
कोटयस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥ ८७ ॥

१३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारपिण्डसंख्या ।

एकाक्षरादिषड्विंशतिवर्णान्तवर्णवृत्तानाम् ।
उक्ता समस्तसंख्या लक्ष्यन्ते चाद्यपद्यार्याः ॥ ८८ ॥

गाथाभेदाः

मुनिबाणकला गाथा विगाथापि तथा भवेत् ।
वेदबाणकला गाहू[8] षष्टयो(यु)द्गाथा भवेत् पुनः ॥ ८९ ॥
गाहिनी स्याद् द्विषष्ट्या तु मात्राणां सिंहिनी तथा ।
चतुःषष्ट्या कलानां तु स्कन्धकं कथ्यते बुधैः ॥ ९० ॥

---

१ ग नास्ति पाठः । २ ग. से पूरयेद् । ३ ग नास्ति पाठः । ४ ग. प्रकृतोपयोग-बधते । ५ ग पूर्वेकम् । ६ ख ग. लक्षाणि पञ्चदशसहस्राणि द्वीणानि कोटयो नव-पष्टिलक्षाणि । ७ ग. न लक्षा चाद्यपद्यार्याः । ८ ग. चार्वाः । ९ ग. हूणा ।

१ गाथा

प्रथमे द्वादशमात्रा मात्रा ह्यष्टादश द्वितीये तु[1] ।
दहने द्वादशमात्रास्तुर्ये दशपञ्च सम्प्रोक्ता ॥ ९१ ॥
इति गाथाया लक्षणमार्यासामान्यलक्षण चाऽथ ।
षष्ठे जो वा विप्रो विषमे न हि जो गणाश्च गुर्वन्ता ॥ ९२ ॥
सप्त हरय सहारा षष्ठे रज्जुर्द्विजोऽपि वा भवति ।
चरमदले लघु षष्ठ विषमे पवनस्तु नैव स्यात् ॥ ९३ ॥

यथा–

गोकुलहारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरि· पायात् ॥ ९४ ॥

एकस्मात् कुलीना द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति ।
नायकहीना रण्डा वेश्या बहुनायका भवति ॥ ९५ ॥

गाथायाः पञ्चविंशतिभेदा

सर्वस्या गाथाया मुनिवाणसमाख्यया कला ज्ञेया ।
प्रथमे दले खरामैरपरेऽपि दलेऽश्वपक्षाभ्याम्[2] ॥ ९६ ॥
नखमुनिपरिमितहारा वह्निमिता यत्र लघव. स्यु. ।
सा गाथाना गाथा प्रथमा खाग्न्यक्षरा लक्ष्मी ॥ ९७ ॥[3]
एकैकगुरुवियोगाल्लघुद्वयस्यापि सयोगात् ।
अस्या भवन्ति भेदा शरपक्षाभ्या मिता एव ॥ ९८ ॥[4]
मुनिपक्षाभ्या हारा लघवो दहनैश्च स प्रथम. ।
विधुबाणैर्लघव स्युर्गुरवो दहनैश्च सोऽन्त्य स्यात् ॥ ९९ ॥
त्रिंशद्वर्णां लक्ष्मी वदते सर्वपण्डिता कवय ।
नश्यत्येकैको यद्वर्णं कथयामि तानि नामानि ॥ १०० ॥[5]
लक्ष्मीर्ऋद्धिर्बुद्धि[6]र्लज्जा विद्या क्षमा च वै देही[7] ।
गौरी धात्री चूर्णा[8] छाया कान्तिर्महामाया ॥ १०१ ॥
कीर्ति सिद्धिर्मानी[9] रामा विश्वा च वासिता च मता ।
शोभा हरिणी चक्री कुररी[10] हसी च सारसी च मता ॥ १०२ ॥

---

१. ग ह्यपि । २ ग प्रथमदले च खराम स्वरपक्षाभ्यां मिता एव । ख. स्वरपक्षाभ्याम् ।
३-४. ग पद्यद्वयं ९७-९८ नास्ति । ५. ख ग. पद्यमेक १०० नास्ति । ६ ग वृद्धि ।
७ ख ग देही च । ८ ग पूर्णा । ९ ग. मानिनी । १० ग. कुरगी ।

त्यक्त्वा पञ्चममङ्कं पूर्वोक्तानेव भावमापाद्य ।
दत्त्वा तथैवमङ्कं षष्ठं[1] कोष्ठं प्रपूरयेद्[2] विद्वान् ॥ ८० ॥
कृत्वैक्यं चाङ्कानां पञ्चमपंक्तिस्थितानां च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्कं द्विसैकं पूरयेन् मुने[3] कोष्ठम् ॥ ८१ ॥
एवं निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यात् ।
[4]प्रकृतानुपयोगवशाच्च कृतोऽङ्कविस्तारः ॥ ८२ ॥
एवं पञ्चमपंक्ति कृत्वा पूर्णां च प्रथममेकाङ्कम्[5] ।
दत्त्वा पञ्चमपंक्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चम-षष्ठस्थितान् विद्वान् ।
कुर्यात्सप्तमपंक्ति पूर्णां मागाशया तूर्णम् ॥ ८४ ॥
वृत्त प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पंक्तिश्च पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥

मर्कटीविवरणम्

मष्टोद्दिष्टं यद्वन् मेरुद्वितयं तथा पताका च ।
मर्कटिकाऽपि तद्वत् कौतुकहेतुर्निबध्यते तज्ज्ञैः ॥ ८६ ॥

प्रस्तारसंख्या

षड्विंशति सप्तशतानि चैव
　　　　तथा सहस्राण्यपि सप्तपंक्तिः ।
लक्षाणि[6] दृग्वेदसुसम्मितानि,
　　　　कोट्यस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥ ८७ ॥

१३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारपिण्डसंख्या ।

एकाक्षरादिपदवधिकविंशतिवर्णान्तवर्णवृत्तानाम् ।
उक्ताः समस्तसंख्या लक्ष्यन्ते जातयश्चार्याः ॥ ८८ ॥

मात्राभेदाः

मुनिबाणकला गाथा विगाथाऽपि तथा भवेत् ।
वेदबाणकला गाहू[7] षष्टयो(यु)द्गाथा भवेत् पुनः ॥ ८९ ॥
गाहिनी स्याद् द्विषष्ट्या तु मात्राणां सिंहिनी तथा ।
चतुःषष्ट्या कलानां तु स्कन्धकं कथ्यते बुधैः[8] ॥ ९० ॥

---

१ ख नास्ति पाठः । २ ग ख पूरयेत् । ३ ग नास्ति पाठः । ४ ग. प्रकृतोपयोग-वशात । ५. ग एकैकम् । ६ ख ग. लक्षाणि षड्चत्वारिंशत्संख्या, द्वीन्दवि कोट्यो सप्त-पंक्तिसंख्या । ७ ख ख लक्षा जातयश्चार्याः । ८ आर्याः । ८ ग बुधाः ।

यथा–

तरणितनूजातीरे चीरेऽपहृतेऽपि वीरेण ।
हिमनीरे रमणीनामकुटिलधारेव मनसि सजज्ञे ॥ १०५ ॥

इति विगाथा

३ गाहू[1]

पूर्वार्द्धे च परार्द्धे सप्ताधिकविंशतिर्मात्रा. ।
अर्द्धद्वयेऽपि यस्या. षष्ठो ल सैव गाहू स्यात् ॥ १०६ ॥

यथा–

अतिचटुलचन्द्रिकाञ्चितचञ्चलनवकुन्तल किमपि ।
राधावितनुज[2]बाधासाधारणमौषध जयति ॥ १०७ ॥

यथा वा –

कलशीगतदधिचोर रदजितहीर स्फुरच्चीरम् ।
राधावदनचकोर नन्दकिशोर नमस्यामः ॥ १०८ ॥

इति गाहू ।

४. उद्गाथा

यस्या द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे भवन्ति वै मात्रा ।
वसुविधुसख्यायुक्ता सोद्गाथा पिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ॥ १०९ ॥

यथा –

उपवनमध्यादभिनवविलोकनासक्तराधिकाकृष्णौ ।
अन्योन्यगमनवेलामपेक्षमाणौ[3]न जग्मतु क्वापि ॥ ११० ॥

इत्युद्गाथा

५. गाहिनी

यस्या द्वितीयचरणे वसुविधुमात्रा भवन्ति तुर्ये तु ।
पादे विंशतिमात्रा सा गाहिनिका तु सिंहिनी विपरीता ॥ १११ ॥

---

१. ग गाहा । २ ग वितम । ३ ख. अवेक्ष्यमाणौ, ग. अपेक्ष्यमाणौ ।

इति भेदाभिधा पिङ्गलरचितायामतिस्फुटम् ।
उदाहरणमनन्वर्यां बोध्यैतासामुदाहृति * ॥ १०३ ॥

इति गाथा

२ विगाथा

यस्या द्वितीयचरणे मात्रा शरभूमिभिः प्रोक्ता ।
सैव विगाथा तुर्ये चरणे वसुभूमिसंख्यकाश्च कलाः ॥ १०४ ॥

---

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथविरचितायां पिङ्गलप्रदीपाख्यायां प्राकृतपिङ्गलवृत्तौ गाथाच्छन्दसः सप्तविंशतिभेदाः —

१ लक्ष्मीः	२७ गुरु	३ लघु	३० अक्षर
२ ऋद्धि	२६ गुरु	५ लघु	३१ अक्षर
३ बुद्धिः	२५ गुरु	७ लघु	३२ अक्षर
४ लज्जा	२४ गुरु	९ लघु	३३ अक्षर
५ विद्या	२३ गुरु	११ लघु	३४ अक्षर
६ क्षमा	२२ गुरु	१३ लघु	३५ अक्षर
७ देही	२१ गुरु	१५ लघु	३६ अक्षर
८ गौरी	२० गुरु	१७ लघु	३७ अक्षर
९ धात्री	१९ गुरु	१९ लघु	३८ अक्षर
१० चूर्णा	१८ गुरु	२१ लघु	३९ अक्षर
११ छाया	१७ गुरु	२३ लघु	४० अक्षर
१२ कान्ति	१६ गुरु	२५ लघु	४१ अक्षर
१३ महामाया	१५ गुरु	२७ लघु	४२ अक्षर
१४ कीर्तिः	१४ गुरु	२९ लघु	४३ अक्षर
१५ सिद्धिः	१३ गुरु	३१ लघु	४४ अक्षर
१६ मानिनी	१२ गुरु	३३ लघु	४५ अक्षर
१७ रामा	११ गुरु	३५ लघु	४६ अक्षर
१८ गाहिनी	१० गुरु	३७ लघु	४७ अक्षर
१९ विश्वा	९ गुरु	३९ लघु	४८ अक्षर
२० वासिता	८ गुरु	४१ लघु	४९ अक्षर
२१ शोभा	७ गुरु	४३ लघु	५० अक्षर
२२ हरिणी	६ गुरु	४५ लघु	५१ अक्षर
२३ चक्री	५ गुरु	४७ लघु	५२ अक्षर
२४ सारसी	४ गुरु	४९ लघु	५३ अक्षर
२५ कुररी	३ गुरु	५१ लघु	५४ अक्षर
२६ सिंही	२ गुरु	५३ लघु	५५ अक्षर
२७ हंसी	१ गुरु	५५ लघु	५६ अक्षर

ग्रन्थेऽस्मिन् सिंही-गाहिनीति द्वौ भेदौ नैव स्वीकृतौ ।

यथा–

तरणितनूजातीरे चीरेऽपहृतेऽपि वीरेण ।
हिमनीरे रमणीनामकुटिलधारेव मनसि सजज्ञे ॥ १०५ ॥

इति विगाथा

३. गाहू[1]

पूर्वार्द्धे च परार्द्धे सप्ताधिकविंशतिर्मात्राः ।
अर्द्धद्वयेऽपि यस्या षष्ठो ल सैव गाहू स्यात् ॥ १०६ ॥

यथा–

अतिचटुलचन्द्रिकाञ्चितचञ्चलनवकुन्तल किमपि ।
राधावितनुज[2]वाधासाधारणमौषध जयति ॥ १०७ ॥

यथा वा –

कलशीगतदधिचोर रदजितहीर स्फुरच्चीरम् ।
राधावदनचकोर नन्दकिशोर नमस्याम. ॥ १०८ ॥

इति गाहू ।

४. उद्गाथा

यस्या द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे भवन्ति वै मात्रा ।
वसुविधुसख्यायुक्ता सोद्गाथा पिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ॥ १०९ ॥

यथा –

उपवनमध्यादभिनवविलोकनासक्तराधिकाकृष्णौ ।
अन्योन्यगमनवेलामपेक्षमाणौ[3]न जग्मतु क्वापि ॥ ११० ॥

इत्युद्गाथा

५. गाहिनी

यस्या द्वितीयचरणे वसुविधुमात्रा भवन्ति तुर्ये तु ।
पादे विंशतिमात्रा सा गाहिनिका तु सिंहिनी विपरीता ॥ १११ ॥

---

१ ग. गाहा । २ ग. विसम । ३ ख. प्रवेक्ष्यमाणौ, ग. प्रवेक्ष्यमाणौ ।

वसुपक्षपरिमितानामुदाहृति स्वप्रबन्धे तु ।
एतेषामतिरुचिरा पितृचरणैः स्फुटतया प्रोक्ता ॥ १२१ ॥*

इति स्कन्धकम् ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके[1] प्रथमं गाथाप्रकरणं समाप्तम् ।

---

१ ग नास्ति पाठ ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथविरचितायां पिङ्गलप्रदीपाख्यायां प्राकृतपिङ्गलवृत्तौ गुरुह्रास-लघुवृद्धयनुपातेन स्कन्धकस्याष्टाविंशतिभेदाः प्रदर्शितास्तद्यथा—

१ नन्द	३० गुरु	४ लघु	३४ अक्षर
२ भद्र	२९ गुरु	६ लघु	३५ अक्षर
३ शेष	२८ गुरु	८ लघु	३६ अक्षर
४ सारङ्ग	२७ गुरु	१० लघु	३७ अक्षर
५ शिव	२६ गुरु	१२ लघु	३८ अक्षर
६ ब्रह्मा	२५ गुरु	१४ लघु	३९ अक्षर
७ वारण	२४ गुरु	१६ लघु	४० अक्षर
८ वरुण.	२३ गुरु	१८ लघु	४१ अक्षर
९ नील	२२ गुरु	२० लघु	४२ अक्षर
१० मदन.	२१ गुरु	२२ लघु	४३ अक्षर
११ तालाङ्क	२० गुरु	२४ लघु	४४ अक्षर
१२ शेखर	१९ गुरु	२६ लघु	४५ अक्षर
१३ शर	१८ गुरु	२८ लघु	४६ अक्षर
१४ गगनम्	१७ गुरु	३० लघु	४७ अक्षर
१५ शरभ	१६ गुरु	३२ लघु	४८ अक्षर
१६ विमति	१५ गुरु	३४ लघु	४९ अक्षर
१७ क्षीरम्	१४ गुरु	३६ लघु	५० अक्षर
१८ नगरम्	१३ गुरु	३८ लघु	५१ अक्षर
१९ नर	१२ गुरु	४० लघु	५२ अक्षर
२० स्निग्ध	११ गुरु	४२ लघु	५३ अक्षर
२१ स्नेह	१० गुरु	४४ लघु	५४ अक्षर
२२ मदकल	९ गुरु	४६ लघु	५५ अक्षर
२३ भूपाल.	८ गुरु	४८ लघु	५६ अक्षर
२४ शुद्ध	७ गुरु	५० लघु	५७ अक्षर
२५ सरित्	६ गुरु	५२ लघु	५८ अक्षर
२६ कुम्भ	५ गुरु	५४ लघु	५९ अक्षर
२७ कलश	४ गुरु	५६ लघु	६० अक्षर
२८ शशी	३ गुरु	५८ लघु	६१ अक्षर

यथा–

स जयति मुरलीवादनकेलिकलाभिर्विमोहयन् गोपीः ।
वृन्दावनान्तभूमौ रासरसाक्षिप्तविबुध[1]विधिरुद्रमुखः ॥ ११२ ॥

इति गाहिनी ।

६ सिंहिनी

यस्या द्वितीयचरणे विंशतिमात्रा मनोहराकारगुणा ।
सा सिंहिनी प्रदिष्टा नागाधिपपिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ॥ ११३ ॥

यथा –

वन्देऽरविन्दनयनं वृन्दारकवृन्दवन्दितपदाम्भोजम् ।
नन्दानन्दनिधानं नवजलधररुचिरमन्दिरारमणम् ॥ ११४ ॥

इति सिंहिनी

७ अथ स्कन्धकम्

यस्य द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे च विंशतिर्मात्राः स्युः ।
स स्कन्धक[2] इति कथितो यस्मिन्नष्टौ गणाश्चतुर्मात्राभिः ॥ ११५ ॥

यथा–

राधामुखाब्जतरणिस्तरणिः संसारसागरोत्तरणविधौ ।
स जयति निजभक्तानां कामितदाता दुरन्तशक्तिसहायः ॥ ११६ ॥

स्कन्धकस्याष्टाविंशतिभेदाः

नन्दो[3] भद्रः शेषः सारङ्ग-शिव-ब्रह्म-वारणाः ।
वरुणो मदनो नीलः तालाङ्कः शेखरः शरः ॥ ११७ ॥
गगनं शरभो विमतिः क्षीरं नगरं नरः स्निग्धः ।
स्नेहलु-मदकल-भूपाः[5] शुद्धः कुम्भः सरित् कलशः ॥ ११८ ॥
शशीति संख्या भेदाः स्कन्धकस्य प्रकीर्तिताः ।
समुपदामितास्ते स्युः गुरुह्रासाल्लघुवृद्धितः ॥ ११९ ॥
त्रिंशद्गुरवो यस्मिन् वेदाः लघवश्च स प्रथमः ।
समुपरमयतो यस्मिन् गुरुत्रयं चैव सोऽन्त्यः स्यात् ॥ १२० ॥

---

१ ग विबुध इति पाठो नास्ति । २ ग स्कन्धं । ३ ग नन्दी । ४ ग वारिधः ।
५ ग स्नेहलुमदकलभूपालाः ।

२ रसिका

द्विजवरयुगलमुपनय,
दहनलघुकमिह रचय ।
इति विविशरभववदन–
चरणमिह कुरु सुवदन ।
इति हि रसिकमनुकलय,
भुजगवर कथितमभय ॥ १० ॥

यथा –

जय जय हर वृषगमन,
तरणिदहन विधुनयन ।
नयनदहन जितमदन,
निजशरकृतपुरकदन ।
मम हृदयगतमपनय–
मविनयमधिकमपनय ॥ ११ ॥

---

४ श्येन	१९ गुरु	१० लघु	२९ अक्षर
५ मण्डूक	१८ गुरु	१२ लघु	३० अक्षर
६ मर्कट	१७ गुरु	१४ लघु	३१ अक्षर
७ करभ	१६ गुरु	१६ लघु	३२ अक्षर
८ नर	१५ गुरु	१८ लघु	३३ अक्षर
९ मराल	१४ गुरु	२० लघु	३४ अक्षर
१० मदकल	१३ गुरु	२२ लघु	३५ अक्षर
११ पयोधर	१२ गुरु	२४ लघु	३६ अक्षर
१२ चल	११ गुरु	२६ लघु	३७ अक्षर
१३ वानर	१० गुरु	२८ लघु	३८ अक्षर
१४ त्रिकल	९ गुरु	३० लघु	३९ अक्षर
१५ कच्छपः	८ गुरु	३२ लघु	४० अक्षर
१६ मत्स्य	७ गुरु	३४ लघु	४१ अक्षर
१७ शार्दूल	६ गुरु	३६ लघु	४२ अक्षर
१८ अहिवर	५ गुरु	३८ लघु	४३ अक्षर
१९ व्याघ्र	४ गुरु	४० लघु	४४ अक्षर
२० विडाल	३ गुरु	४२ लघु	४५ अक्षर
२१ शुनक	२ गुरु	४४ लघु	४६ अक्षर
२२ उन्दुर	१ गुरु	४६ लघु	४७ अक्षर
२३ सर्प	० गुरु	४८ लघु	४८ अक्षर

द्वितीयं षट्पद प्रकरणम्

१ दोहा

त्रिदशकला विषमे रचय सम एकादश धेहि ।
दोहालक्षणमेतदिति कविभिः कथितमवेहि ॥ १ ॥
टगण-जगण-तगणाः क्रमतः इति विषमे न पतन्ति ।
समपादान्ते चैककलमिति दोहां कथयन्ति ॥ २ ॥

यथा—

गौरीविरचितसंमुखकम् मस्तकराजितगङ्ग ।
जय वृषभध्वज पुरमथन महादेव निःशङ्क ॥ ३ ॥

दोहायाः त्रयोविंशतिभेदाः

यस्याः प्रथमतृतीये पादे जगणा भवन्ति सा कथु [1] ।
स्वपतिगृहीतस्त्रीवत् दोहादोषं प्रकाशयति ॥ ४ ॥
भ्रमर भ्रामर-शरभाः श्येनो मण्डूक[2]-मर्कटौ करभः ।
नवकल-पयोधर-चलाः नरो मराल[4]स्तथा त्रिकलः ॥ ५ ॥
वानर-कच्छपौ मत्स्यः शार्दूलोऽप्यहिवरो व्याघ्रः ।
उन्दुर-शुनक-बिडालाः सर्पश्चैते प्रभेदाः स्युः ॥ ६ ॥
रसपक्षवर्णमुक्तो द्वाविंशतिगुरुक-वेदलघुसहितः ।
कथितः प्रथमो भेदः गुरुन्यूनः सर्वलघुकोऽन्त्यः ॥ ७ ॥[5]
एकैकस्य गुरोर्लोपात् लघुद्वयविवृद्धितः ।
दोहाभेदस्समुद्दिष्टास्त्रयोविंशतिसंख्यकाः ॥ ८ ॥
स्फुटतरमेते भेदाः समुदाहृत्य प्रदर्शिताः चित्राः ।
स्वनिबन्धे* कविवर्यैस्तत एव विलोकनीयास्ते ॥ ९ ॥

इति दोहा ।

---

१ ग कर्णु । २ घ. तावद् । ३ घ सद्गुन । ४ घ. रसाल । ५ घ पद्यद्वयं ६–७ नास्ति ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुह्रास-लघुवृद्ध्यनुपातेन दोहा–द्विपदाच्छन्दसः त्रयोविंशतिभेदानां वर्णीकरणम्—

१ भ्रमर	२२ गुरु	४ लघु	२६ अक्षर
२ भ्रामर	२१ गुरु	६ लघु	२७ अक्षर
३ शरभ	२ गुरु	८ लघु	२८ अक्षर

रसिकाया अष्टौ भेदाः

यस्याश्चतुष्कलद्वयमादौ स्यात् पुनरपि विकलः ।
एवं षट्पदयुक्ता या सोक्ता भुजङ्गमप्रोक्ता ॥ १२ ॥
अत्र लघुयुगवियोगादेकैकगुरोश्च संयोगात् ।
अष्टौ भवन्ति भेदा शेषा स्युर्दण्डकन्यायात् ॥ १३ ॥
रसिका हंसी रेखा तालाङ्की कम्पिनी च गम्भीरा ।
काली कलरुद्राणी इत्यष्टौ भेदनामानि ॥ १४ ॥
उदाहरणमन्वर्थामुदाहृतिरतिस्फुटा ।[*]
एतेषामपि भेदानां द्रष्टव्या कविपण्डितैः[1] ॥ १५ ॥

इति रसिका

३ रोला

या चरमे कलानां चतुरधिकविंशतिर्गदिता
सा किल रोला भवति नागकविपिङ्गलकथिता ।
एकादशकलविरतिरखिलजनचित्ताहरणा
सुललितपदकुलकलितविमलकविकण्ठाभरणा ॥ १६ ॥

यथा–

अरिगणमभितापयति विबुधलोकानुपमन्वसि
धरणिविवरगतभुजगनिकरमभितापेन क्षरति ।
सकलदिगीशपुरमभिनिषतापैरभियोजयति,
भूप कथं प्रतापस्तव[2] कीर्ति न शोषयति ॥ १७ ॥

१ ग काली इत्थं । ख या सा कल्ली । २ ग कैविद् पण्डितैः । ३ ग प्रतापस्तव ।
टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुवृद्धि-लघुह्रासानुक्रमेण रसिकाया अष्टौ भेदाः —

१ रसिका	६६ लघु	० गुरु	६६ मात्रा
२ हंसी	६४ लघु	१ गुरु	„ „
३ रेखा	६२ लघु	२ गुरु	„ „
४ तालङ्किनी	६० लघु	३ गुरु	„ „
५ कम्पिनी	५८ लघु	४ गुरु	„
६ गम्भीरा	५६ लघु	५ गुरु	
७ काली	५४ लघु	६ गुरु	„ „
८ कलरुद्राणी	५२ लघु	७ गुरु	„ „

रोलायाः त्रयोदशभेदाः

कुन्द करतल-मेघौ तालाङ्कौ रुद्र-कोकिलौ कमलम् ।
इन्दु शम्भुश्चमरो गणेश-शेषौ सहस्राक्ष ॥ १८ ॥
त्रयोदशगुरुर्यत्र सप्ततिर्लघवस्तथा ।
स आद्यभेदो[1] विज्ञेयस्सोऽन्त्य एकगुरुर्यत ॥ १९ ॥
एकैकस्य गुरोर्नाशा[2] ल्लघुद्वयनिवेशत[3] ।
भेदास्त्रयोदश ज्ञेया रोलाया[4] कविशेखरै ॥ २० ॥
त्रयोदशैव भेदानामुदाहृतिरुदीरिता ।
उदाहरणमञ्जर्यां[5] द्रष्टव्या तत एव हि ॥ २१ ॥

इति रोला ।

४ गन्धानकम्

रचय प्रथम पद मुनिविधुवर्णरचित,
तथा द्वितीयमपि वसुविधुवर्णयमकचितम्[*] ।
तथान्यदलमपि यतिगणनियमरहित,
गन्धानकवृत्तमवधेहि कविपिङ्गलगदितम् ॥ २२ ॥

---

१ ग आदिभेदो । २ ग ह्रासात् । ३. ग. विवृद्धित. । ४ ग रोलायां ।
५ ग युतम् ।

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे रोलाया त्रयोदशभेदाना गुरुह्रास-लघुवृद्ध्यनुसारेण प्रदर्शनम् —

१ कुन्द	१३ गुरु	७० लघु	९६ मात्रा
२ करतल	१२ गुरु	७२ लघु	,, ,,
३ मेघ	११ गुरु	७४ लघु	,, ,,
४ तालाङ्क	१० गुरु	७६ लघु	,, ,,
५ कालरुद्र	९ गुरु	७८ लघु	,, ,,
६ कोकिल	८ गुरु	८० लघु	,, ,,
७ कमलम्	७ गुरु	८२ लघु	,, ,,
८ इन्दु	६ गुरु	८४ लघु	,, ,,
९ शम्भु	५ गुरु	८६ लघु	,, ,,
१० चामर	४ गुरु	८८ लघु	,, ,,
११ गणेश्वर	३ गुरु	९० लघु	,, ,,
१२ सहस्राक्ष	२ गुरु	९२ लघु	,, ,,
१३ शेष	१ गुरु	९४ लघु	,, ,,

यथा–

सम्भ्रम दिशि दिशि विलसति घनमनु शम्पा,
इयमपि चञ्चलतरकुसुमजलरुहपम्पा ।
दयितोदन्तः सम्प्रति[1] कथमपि न ह्यवगत
सोढुं शक्यो विरहः कथमिह हि मयकानुगतः[2] ॥ २३ ॥

यथा वा–

गर्जति जलधर, परिनृत्यति शिखिनिवहः,
नीपवनीमवधूय वहति दक्षिणगन्धवहः ।
दूरे दयित कथय सखि ! किमिह हि[3] करवै
प्रज्वालय दहन झटिति[4] शरणमनुकरवै ॥ २४ ॥

इति गगनाङ्गम् ।

१ चौपैया छन्दः

चौपैया छन्दः कविकुलचन्द्र कथयति पिङ्गलनागः
कुरु सप्तचतुष्कलगणमिह पुष्कलमभिगुरुचरणविभागः ।
इह दिग्वसुसूर्यैः पण्डितवर्यैर्यतिरिह मात्रात्रिंशत्
यस्मिन् किल[5] कथिते कविजनमथिते राजति नृपवरसंसत् ॥२५॥

या विरत्यधिकयतैर्मात्राणामेकपादेषु ।
सा चौपैया न्यस्यादशीत्यधिकशतचतुष्टयकलाका ॥ २६ ॥

यथा–

चेतः स्मरसहितं कमलासहितं वारितदारणकंसं,
हृतधेनुकदानवमिन्द्रामानवमृषिजनमानसहंसम् ।
यमुनावरतीरे तरलसमीरे कारितगोपीरासं
भवबाधाहरणं राधारमणं कुन्दकुसुमसमहासम् ॥

व्रजजनकृतपाशं वासितवासं वादितमधुरवंश[6]
रोचनयुतभालं धृतवनमालं शोभितशरदवतंसम् ।
विविजव्रजकामं वादिततालं कृतसुरमुनिगणदासं
दधिकर्षिततमालं जितमनजालं भासितयादववंशम् ॥

सरसीरुहनयनं जगतामयनं कण्ठलसत्सितहारं
भृतगोपसुवेषं कुञ्चितकेशं स्मितजितनवघनसारम् ।

---

१ ग दयितोदन्तनिवासी । २ क ख ग सङ्गमिदं दुःखं मरणं शरणमनुगतं । ३ ग. नास्ति पाठः । ४ ख ग झटिति । ५. ग किल । ६ ग मधुरतरम् ।

जितनयनचकोर मन्दकिशोर गोपीमानसचोर,
कृतराधाधार सज्जनतार दितिसुतनाशकठोरम् ॥
नवकलितकदम्ब जगदवलम्ब सेवितयमुनातीर,
नन्दितसुरवृन्द जगदानन्द गोपीजनहृतचीरम् ।
धृतधरणीवलय करुणानिलय दन्तविनिर्जितहीर,
भवसागरपार भुवनागार नन्दसुत यदुवीरम् ॥ २७ ॥

इति चौपैया

६. घत्ता

पिङ्गलकविकथिता त्रिभुवनविदिता घत्ता द्विरसकला भवति ।
कुरु सप्तचतुष्कल-मन्त्यत्रिकल-त्रिलघुकमेतदपि द्विपदि ॥ २८ ॥
प्रथम दशसु यति स्याद् वसुमात्राभिद्वितीयाऽपि ।
दहनावनिभि. पुनरपि यतिरिह(य)मेकार्द्धघत्ताया. ॥ २९ ॥

यथा–

भवबाधाहरण राधारमण नन्दकिशोर स्मर हृदय ।
यमुनायास्तीरे तरलसमीरे कृतमनुरास त्वमनुसर[1] ॥ ३० ॥

इति घत्ता ।

७ घत्तानन्दम्

अहिपतिपिङ्गलकथितमयुतगुणयुतमिह भवति घत्तानन्दम् ।
यद्येकादशविरतिर्मुनिषु च भवति यतिरधिकजनितानन्दम् ॥ ३१ ॥
आदौ षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि ।
ठगण डगण द्वयमपि घत्तानन्दे धेहि ॥ ३२ ॥

यथा[2]–

दितिसुतनिवहगञ्जनमसुखभञ्जनमनुगतजनतापहरणम् ।
निखिलमानसरञ्जनमतिनिरञ्जनमस्तु किमपि महः शरणम् ॥ ३३ ॥

इति घत्तानन्दम्

८[१] काव्यम्

अथ षट्पदहेतुत्वात् काव्य सम्यङ् निरूप्यते ।
लक्ष्यलक्षणसयुक्त प्रोल्लाल[3] सप्रभेदकम् ॥ ३४ ॥

---

१ ग तमनुसर । २ ग तद्यथा । ३. ख ग प्रोल्लासम् । उल्लालस्थाने ख ग प्रतौ सर्वत्रापि उल्लास विद्यते ।

टगणमिहादौ कलय जलधिकलशममनु च कुरु ।
टगण चान्ते रचय दहनयुतविप्रं च कुरु ॥ ३५ ॥
एकादशकलविरतिरथ दहनविधुभिरपि भवति ।
काव्यं भुजगकविरिति बुधजनसुखकरमनुवदति ॥ ३६ ॥

यथा–

मुकुटविराजितचन्द्र चन्द्रकलोपमतिलकवर
तिलकदहनवरनयन मयगुजितमदममनोहर ।
भ्रमरनिकरकृतनमन मननिरतधियकरुणाकर,
करधृतमभुजकपाल विबुधजनतिमिरविभाकर ॥ ३७ ॥

१ उल्लालम्

आदौ भयस्तुरगास्तदनु त्रिकलो रसस्तथा तुरग ।
त्रिकलश्चान्ते यस्मिन्नुल्लालं तं विजानीयात् ॥ ३८ ॥
षट्पदवृत्त ह्याभ्यां वृत्ताभ्यां जायते यस्मात् ।
काव्योल्लालौ तस्मान्निरूपितौ वृत्तमौक्तिके स्फुटत ॥ ३९ ॥
प्रस्तारस्तु द्विधा प्रोक्तो गुरुमध्यादिभेदत ।
अत्र मध्यादिभेदेन प्रस्तारपरिकल्पना ॥ ४० ॥
चतुरधिका इह चत्वारिंशद् गुरवो भवन्ति काव्येऽस्मिन् ।
यद् गुरुहीनं वृत्तं शक्रं तन्नामतो वृत्तम्[१] ॥ ४१ ॥

यथा –

अभिनवजलधरपटलसदृशधर कमकवसनधर
परिणतशशधरवदन समरविभिकरणचतुरतर ।
अविरतवितरणनिपुण सकलरिपुकुलवनकरिवर,
विदमितयजयकतुरग विगतमद जय जय यदुवर ॥ ४२ ॥

काव्यस्य पञ्चचत्वारिंशद्भेदाः

यथा यथाऽस्मिन् वलयो विवर्धते
तथा तथा नाम विधिर्विधीयताम् ।
पठन्तु शम्भु प्रथमं ततो बुधा
मूर्धं तदन्ते श्रुतियुग्मसम्भवम् ॥ ४३ ॥

१ घ विर्त । २ क ग पठन्ति ।

आदाय गुरुविहीन शक्र भेदान् बुधा पठत ।
इन्द्रियवेदैर्गणितान् नागाधिपपिङ्गलप्रोक्तान् ॥ ४४ ॥
अथ लघुयुग्मविलोपा[1]देकैकगुरोर्विवृद्धित क्रमश ।
बाणाम्बुधिपरिगणिता भेदा सम्यक् प्रदर्श्यन्ते ॥ ४५ ॥

यथा–

शक्र शम्भु सूर्यो गण्ड स्कन्धस्तथा विजय ।
तालाङ्क-दर्प-समरा. सिह शेषस्तथोत्तेजा ॥ ४६ ॥
प्रतिपक्ष परिधर्मो मराल-दण्डौ मृगेन्द्रश्च ।
मर्कट-मदनौ राष्ट्रो वसन्त-कण्ठौ मयूरोऽपि ॥ ४७ ॥
बन्धो भ्रमरोऽपि तथा भिन्नोऽथ स्यान्महाराष्ट्र ।
बलभद्रोऽपि च राजा वलितो रामस्तथा च मन्थान ॥ ४८ ॥
मोहो बली तत स्यात् सहस्रनेत्रस्तथा बालः ।
दृप्त शरभो दम्भो दिवसोद्दम्भौ तथा च वलिताङ्क ॥ ४९ ॥
तुरगो हरिणोऽप्यन्धो भृङ्गश्चैते प्रसख्याता. ।
वास्तुकाख्ये छदसि बाणाम्बुधिभिर्मिता भेदा ॥ ५० ॥
पादे यत्यनुरोधात् तृतीयजगणानुरोधाच्च ।
वेदाङ्कलघुकयुक्तश्चन्द्रगुरुर्य स आद्य स्यात् ॥ ५१ ॥
शरवेदमिता भेदा काव्यवृत्तस्य दर्शिता ।
उदाहरणमञ्जर्यां बोध्यैतेषामुदाहृति ॥ ५२ ॥*

इति काव्यम् ।

---

१ ग ह्रासाद ।

टिप्पणी – भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे काव्यवृत्तस्य गुरुवृद्धि-लघुह्रासक्रमेण पञ्च-चत्वारिंशद्भेदाना वर्गीकरणम्—

१ शक्र	० गुरु	९६ लघु	९६ अक्षर
२ शम्भु	१ गुरु	९४ लघु	९५ अक्षर
३ सूर्य	२ गुरु	९२ लघु	९४ अक्षर
४ गण्ड	३ गुरु	९० लघु	९३ अक्षर
५ स्कन्ध	४ गुरु	८८ लघु	९२ अक्षर
६ विजय	५ गुरु	८६ लघु	९१ अक्षर
७ दर्प	६ गुरु	८४ लघु	९० अक्षर
८ तालाङ्क	७ गुरु	८२ लघु	८९ अक्षर
९ समर	८ गुरु	८० लघु	८८ अक्षर
१० सिह	९ गुरु	७८ लघु	८७ अक्षर

शल्यो भवरङ्ग-मनोहरौ गगनं रत्न-नर-हीरा ।
भ्रमरः शेखर-कुसुमाकरौ ततो दीप्त-शङ्ख-वसु-शब्दाः ॥ ६२ ॥
इति भेदाभिधा पिङ्गले रचितायामपि स्फुटम् ।
उदाहरणमप्येषामुक्तं तासामुदाहृतिः* ॥ ६३ ॥

इति षट्पदम् ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे षट्पदच्छन्दसः गुरुह्रास-लघुवृद्धिपरिपाट्या एकसप्ततिभेदानामुदाहरणानि—

१ अजयः	७ गुरु	१२ लघु	८२ अक्षर
२ विजयः	६९ गुरु	१४ लघु	८३ अक्षर
३ बलिः	६८ गुरु	१६ लघु	८४ अक्षर
४ कर्णः	६७ गुरु	१८ लघु	८५ अक्षर
५ वीरः	६६ गुरु	२ लघु	८६ अक्षर
६ वैतालः	६५ गुरु	२२ लघु	८७ अक्षर
७ बृहन्नलः	६४ गुरु	२४ लघु	८८ अक्षर
८ मर्कटः	६३ गुरु	२६ लघु	८९ अक्षर
९ हरिः	६२ गुरु	२८ लघु	९ अक्षर
१ हरः	६१ गुरु	३ लघु	९१ अक्षर
११ ब्रह्मा	६ गुरु	३२ लघु	९२ अक्षर
१२ इन्दुः	५९ गुरु	३४ लघु	९३ अक्षर
१३ चन्दनम्	५८ गुरु	३६ लघु	९४ अक्षर
१४ शुभङ्करः	५७ गुरु	३८ लघु	९५ अक्षर
१५ श्वा	५६ गुरु	४ लघु	९६ अक्षर
१६ सिंहः	५५ गुरु	४२ लघु	९७ अक्षर
१७ शार्दूलः	५४ गुरु	४४ लघु	९८ अक्षर
१८ कूर्मः	५३ गुरु	४६ लघु	९९ अक्षर
१९ कोकिलः	५२ गुरु	४८ लघु	१ अक्षर
२ खरः	५१ गुरु	५ लघु	१ १ अक्षर
२१ कुञ्जरः	५ गुरु	५२ लघु	१ २ अक्षर
२२ मदनः	४९ गुरु	५४ लघु	१ ३ अक्षर
२३ मत्स्यः	४८ गुरु	५६ लघु	१ ४ अक्षर
२४ तालाङ्कः	४७ गुरु	५८ लघु	१ ५ अक्षर
२५ शेषः	४६ गुरु	६ लघु	१ ६ अक्षर
२६ सारङ्गः	४५ गुरु	६२ लघु	१ ७ अक्षर
२७ पयोधरः	४४ गुरु	६४ लघु	१ ८ अक्षर

काव्यषट्पदयोर्दोषा

काव्यषट्पदयोश्चापि दोषा: पन्नगभाषिता ।
वक्ष्यन्ते यान् विदित्वैव काव्य कर्त्तुमिहार्हति ।। ६४ ।।
पददुष्टो भवेत्पङ्गु कलाहीनस्तु खञ्जकः ।
कलाधिको वातूल. स्यात् तेन शून्यफलश्रुतिः ।। ६५ ।।
अन्धोऽलङ्काररहितो बधिरो भ्रमवर्जित ।
प्राकृते सस्कृते चाऽपि विज्ञेय पददूषणम् ।। ६६ ।।
गणोद्दवणिका यस्य पञ्चत्रिकलका भवेत् ।
स मूक कथ्यतेऽर्थेन विना स्याद् दुर्बलस्तथा ।। ६७ ।।

---

२८ कुन्द	४३ गुरु	६६ लघु	१०९ अक्षर
२९ कमलम्	४२ गुरु	६८ लघु	११० अक्षर
३० वारण	४१ गुरु	७० लघु	१११ अक्षर
३१ शरभ	४० गुरु	७२ लघु	११२ अक्षर
३२ जङ्गम	३९ गुरु	७४ लघु	११३ अक्षर
३३ ज्योतिष्टम्	३८ गुरु	७६ लघु	११४ अक्षर
३४ दाता	३७ गुरु	७८ लघु	११५ अक्षर
३५ शर	३६ गुरु	८० लघु	११६ अक्षर
३६ सुशर:	३५ गुरु	८२ लघु	११७ अक्षर
३७ समरः	३४ गुरु	८४ लघु	११८ अक्षर
३८ सारस	३३ गुरु	८६ लघु	११९ अक्षर
३९ शारद	३२ गुरु	८८ लघु	१२० अक्षर
४० मेरु	३१ गुरु	९० लघु	१२१ अक्षर
४१ मदकर	३० गुरु	९२ लघु	१२२ अक्षर
४२ मद	२९ गुरु	९४ लघु	१२३ अक्षर
४३ सिद्धि	२८ गुरु	९६ लघु	१२४ अक्षर
४४ बुद्धि	२७ गुरु	९८ लघु	१२५ अक्षर
४५ करतलम्	२६ गुरु	१०० लघु	१२६ अक्षर
४६ कमलाकर	२५ गुरु	१०२ लघु	१२७ अक्षर
४७ धवल	२४ गुरु	१०४ लघु	१२८ अक्षर
४८ मन	२३ गुरु	१०६ लघु	१२९ अक्षर
४९ ध्रुव	२२ गुरु	१०८ लघु	१३० अक्षर
५० कनकम्	२१ गुरु	११० लघु	१३१ अक्षर
५१ कृष्णः	२० गुरु	११२ लघु	१३२ अक्षर

११ शेषः	१० गुरु	७६ लघु	८६ अक्षर
१२ उत्तेजाः	११ गुरु	७४ लघु	८५ अक्षर
१३ प्रतिपक्षः	१२ गुरु	७२ लघु	८४ अक्षर
१४ परिधर्मः	१३ गुरु	७० लघु	८३ अक्षर
१५ मरालः	१४ गुरु	६८ लघु	८२ अक्षर
१६ मृगेन्द्रः	१५ गुरु	६६ लघु	८१ अक्षर
१७ दण्डः	१६ गुरु	६४ लघु	८० अक्षर
१८ मर्कटः	१७ गुरु	६२ लघु	७९ अक्षर
१९ मदनः	१८ गुरु	६० लघु	७८ अक्षर
२० महाराष्ट्रः	१९ गुरु	५८ लघु	७७ अक्षर
२१ वसन्तः	२० गुरु	५६ लघु	७६ अक्षर
२२ कण्ठः	२१ गुरु	५४ लघु	७५ अक्षर
२३ मयूरः	२२ गुरु	५२ लघु	७४ अक्षर
२४ बन्धः	२३ गुरु	५० लघु	७३ अक्षर
२५ भ्रमरः	२४ गुरु	४८ लघु	७२ अक्षर
२६ द्वितीयो महाराष्ट्रः	२५ गुरु	४६ लघु	७१ अक्षर
२७ बलभद्रः	२६ गुरु	४४ लघु	७० अक्षर
२८ राजा	२७ गुरु	४२ लघु	६९ अक्षर
२९ वलितः	२८ गुरु	४० लघु	६८ अक्षर
३० रामः	२९ गुरु	३८ लघु	६७ अक्षर
३१ मन्थानः	३० गुरु	३६ लघु	६६ अक्षर
३२ बली	३१ गुरु	३४ लघु	६५ अक्षर
३३ मोहः	३२ गुरु	३२ लघु	६४ अक्षर
३४ सहस्राक्षः	३३ गुरु	३० लघु	६३ अक्षर
३५ बालः	३४ गुरु	२८ लघु	६२ अक्षर
३६ दृप्तः	३५ गुरु	२६ लघु	६१ अक्षर
३७ शरभः	३६ गुरु	२४ लघु	६० अक्षर
३८ दम्भः	३७ गुरु	२२ लघु	५९ अक्षर
३९ अहिः	३८ गुरु	२० लघु	५८ अक्षर
४० उद्दम्भः	३९ गुरु	१८ लघु	५७ अक्षर
४१ वलिताङ्कः	४० गुरु	१६ लघु	५६ अक्षर
४२ तुरङ्गः	४१ गुरु	१४ लघु	५५ अक्षर
४३ हरिणः	४२ गुरु	१२ लघु	५४ अक्षर
४४ अन्धः	४३ गुरु	१० लघु	५३ अक्षर
४५ भृङ्गः	४४ गुरु	८ लघु	५२ अक्षर

१० षट्पदम्

षट्पदवृत्तं कलय सरसकविपिङ्गलभणित,
एकादश इह विरतिरथ च दहनैर्विधुगणितम् ।
षट्कलमादौ तदनु चतुस्तुरग परिसततु,
शेषे द्विकल रचय चतुष्पदमेव सचिनु ॥
उल्लालद्वयमत्र हि भवेदष्टाविंशतिकलयुतम् ।
यदि पञ्चदशे विरतिस्थित पठनादपि गुणिगणहितम् ॥ ५३ ॥

दहनगणनियमविरहितकाव्य सोल्लालचरणयुगलेन ।
कथयति पिङ्गलनाग षट्पदवृत्त मनोहारि ॥ ५४ ॥

यथा–

जय जय नन्दकुमार मारसुन्दर वरलोचन,
लोचनजितनवकज कञ्जनिभशय भवमोचन ।
नूतनजलधरनील शीलभूषित गतदूषण,
दूषणहर धृतमाल भालभूषितवरभूषण ॥
दूषणगणमिह[१] मम निखिलमपि कुरु दूरे नन्दकिशोर ।
तव चरणकमलयुगलमनुदिनमनुसेवे नयनचकोर ॥ ५५ ॥

षट्पदवृत्तस्यैकसप्ततिर्भेदा

वेदयुग्मगुरून् काव्यादुल्लालाद् रसपक्षकान् ।
आदाय तस्य स्थाने तु लघुद्वयनिवेशत[२] ॥ ५६ ॥
भेदा स्युर्भूमिमुनिभिर्गुं हीत्वान्त्य तु सर्वलम् ।
आद्यस्तु रविलो बिन्दुर्मुनिग सोऽजय स्मृत ॥ ५७ ॥
विजय-बलि-कर्ण-वीरा वैताल-बृहन्नरौ मर्क्कः ।
हरि-हर-विधीन्दु-चन्दन-शुभङ्करा श्वा च सिंहश्च ॥ ५८ ॥
शार्दूल-कूर्म-कोकिल-खर-कुञ्जर-मदन-मत्स्य-तालाङ्का ।
शेष सारङ्गोऽपि च पयोधर कुन्द-कमले च ॥ ५९ ॥
वारण-जङ्गम-शरभास्तथा द्युतीष्टोऽपि दाता च ।
शर-सुशर-समर-सारस-शारद-मद-मदकरा मेरु ॥ ६० ॥
सिद्धिर्बुद्धि करतल-कमलाकर-धवल-मानस-ध्रुवका ।
कनक कृष्णो रञ्जन-मेघकर-ग्रीष्म-गरुड-शशि-सूर्या ॥ ६१ ॥

---

१ ग दूषणमिह । २. ग. निवेशित ।

११ शेष	१ गुरु	७६ लघु	८६ अक्षर
१२ उत्तमा	११ गुरु	७४ लघु	८५ अक्षर
१३ प्रतिपक्षः	१२ गुरु	७२ लघु	८४ अक्षर
१४ परिधर्मः	१३ गुरु	७ लघु	८३ अक्षर
१५ मराल	१४ गुरु	६८ लघु	८२ अक्षर
१६ मृगेन्द्रः	१५ गुरु	६६ लघु	८१ अक्षर
१७ दण्डः	१६ गुरु	६४ लघु	८० अक्षर
१८ मर्कटः	१७ गुरु	६२ लघु	७९ अक्षर
१९ मदन	१८ गुरु	६ लघु	७८ अक्षर
२ महाराष्ट्रः	१९ गुरु	५८ लघु	७७ अक्षर
२१ वसन्त	२ गुरु	५६ लघु	७६ अक्षर
२२ कण्ठः	२१ गुरु	५४ लघु	७५ अक्षर
२३ मयूरः	२२ गुरु	५२ लघु	७४ अक्षर
२४ बन्धः	२३ गुरु	५० लघु	७३ अक्षर
२५ भ्रमर,	२४ गुरु	४८ लघु	७२ अक्षर
२६ द्वितीयो महाराष्ट्रः	२५ गुरु	४६ लघु	७१ अक्षर
२७ बलभद्रः	२६ गुरु	४४ लघु	७ अक्षर
२८ राजा	२७ गुरु	४२ लघु	६९ अक्षर
२९ वलितः	२८ गुरु	४ लघु	६८ अक्षर
३ राम	२९ गुरु	३८ लघु	६७ अक्षर
३१ मन्थान	३ गुरु	३६ लघु	६६ अक्षर
३२ बली	३१ गुरु	३४ लघु	६५ अक्षर
३३ मोहः	३२ गुरु	३२ लघु	६४ अक्षर
३४ सहस्राक्षः	३३ गुरु	३ लघु	६३ अक्षर
३५ बाल	३४ गुरु	२८ लघु	६२ अक्षर
३६ दृप्तः	३५ गुरु	२६ लघु	६१ अक्षर
३७ शरभः	३६ गुरु	२४ लघु	६ अक्षर
३८ दम्भः	३७ गुरु	२२ लघु	५९ अक्षर
३९ अहिः	३८ गुरु	२ लघु	५८ अक्षर
४ उद्दम्भः	३९ गुरु	१८ लघु	५७ अक्षर
४१ वलिताङ्कः	४ गुरु	१६ लघु	५६ अक्षर
४२ तुरङ्गः	४१ गुरु	१४ लघु	५५ अक्षर
४३ हरिणः	४२ गुरु	१२ लघु	५४ अक्षर
४४ अन्धः	४३ गुरु	१ लघु	५३ अक्षर
४५ भृङ्गः	४४ गुरु	८ लघु	५२ अक्षर

काव्यषट्पदयोर्दोषाः

काव्यषट्पदयोश्चापि दोषा' पन्नगभाषिता ।
वक्ष्यन्ते यान् विदित्वैव काव्य कर्त्तु मिहार्हति ।। ६४ ।।
पददुष्टो भवेत्पङ्गु कलाहीनस्तु खञ्जक' ।
कलाधिको वातूल. स्यात् तेन शून्यफलश्रुतिः ।। ६५ ।।
अन्धोऽलङ्काररहितो वधिरो फलवर्जित ।
प्राकृते सस्कृते चाऽपि विज्ञेय पददूपणम् ।। ६६ ।।
गणोद्दवणिका यस्य पञ्चत्रिकलका भवेत् ।
स मूक कथ्यतेऽर्थेन विना स्याद् दुर्वलस्तथा ।। ६७ ।।

---

२८ कुन्द	४३ गुरु	६६ लघु	१०६ अक्षर
२९ कमलम्	४२ गुरु	६८ लघु	११० अक्षर
३० वारणः	४१ गुरु	७० लघु	१११ अक्षर
३१ शरभ	४० गुरु	७२ लघु	११२ अक्षर
३२ जङ्गम	३९ गुरु	७४ लघु	११३ अक्षर
३३ ज्योतिष्टम्	३८ गुरु	७६ लघु	११४ अक्षर
३४ दाता	३७ गुरु	७८ लघु	११५ अक्षर
३५ शर	३६ गुरु	८० लघु	११६ अक्षर
३६ सुशर	३५ गुरु	८२ लघु	११७ अक्षर
३७ समर'	३४ गुरु	८४ लघु	११८ अक्षर
३८ सारस	३३ गुरु	८६ लघु	११९ अक्षर
३९ शारद	३२ गुरु	८८ लघु	१२० अक्षर
४० मेरु	३१ गुरु	९० लघु	१२१ अक्षर
४१ मदकर	३० गुरु	९२ लघु	१२२ अक्षर
४२ मद	२९ गुरु	९४ लघु	१२३ अक्षर
४३ सिद्धि	२८ गुरु	९६ लघु	१२४ अक्षर
४४ वुद्धि	२७ गुरु	९८ लघु	१२५ अक्षर
४५ करतलम्	२६ गुरु	१०० लघु	१२६ अक्षर
४६ कमलाकर	२५ गुरु	१०२ लघु	१२७ अक्षर
४७ धवल	२४ गुरु	१०४ लघु	१२८ अक्षर
४८ मन	२३ गुरु	१०६ लघु	१२९ अक्षर
४९ ध्रुव	२२ गुरु	१०८ लघु	१३० अक्षर
५० कनकम्	२१ गुरु	११० लघु	१३१ अक्षर
५१ कृष्णः	२० गुरु	११२ लघु	१३२ अक्षर

शल्यो नवरङ्ग-मनोहरौ गगन रत्न-नर-हीराः ।
भ्रमरः शेखर-कुसुमाकरौ ततो दीप्त-शंख-वसु-शब्दाः ॥ ६२ ॥
इति भेदाभिधा पिङ्गे रचितायामपि स्फुटम् ।
उदाहरणमस्माभिर्मुक्तं तासामुदाहृतिः* ॥ ६३ ॥

इति षट्पदम् ।

---

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे षट्पदच्छन्दसः गुरुह्रास-लघुवृद्धिपरिपाट्या एकसप्ततिभेदानामुदाहरणानि—

१ अजयः	७० गुरु	१२ लघु	८२ अक्षर
२ विजयः	६९ गुरु	१४ लघु	८३ अक्षर
३ बलिः	६८ गुरु	१६ लघु	८४ अक्षर
४ कर्णः	६७ गुरु	१८ लघु	८५ अक्षर
५ वीरः	६६ गुरु	२० लघु	८६ अक्षर
६ वैतालः	६५ गुरु	२२ लघु	८७ अक्षर
७ बृहन्नलः	६४ गुरु	२४ लघु	८८ अक्षर
८ मर्कटः	६३ गुरु	२६ लघु	८९ अक्षर
९ हरिः	६२ गुरु	२८ लघु	९० अक्षर
१० हरः	६१ गुरु	३० लघु	९१ अक्षर
११ ब्रह्मा	६० गुरु	३२ लघु	९२ अक्षर
१२ इन्दुः	५९ गुरु	३४ लघु	९३ अक्षर
१३ चन्दनम्	५८ गुरु	३६ लघु	९४ अक्षर
१४ शुभङ्करः	५७ गुरु	३८ लघु	९५ अक्षर
१५ श्वा	५६ गुरु	४० लघु	९६ अक्षर
१६ सिंहः	५५ गुरु	४२ लघु	९७ अक्षर
१७ शार्दूलः	५४ गुरु	४४ लघु	९८ अक्षर
१८ कूर्मः	५३ गुरु	४६ लघु	९९ अक्षर
१९ कोकिलः	५२ गुरु	४८ लघु	१०० अक्षर
२० खरः	५१ गुरु	५० लघु	१०१ अक्षर
२१ कुञ्जरः	५० गुरु	५२ लघु	१०२ अक्षर
२२ मदनः	४९ गुरु	५४ लघु	१०३ अक्षर
२३ मत्स्यः	४८ गुरु	५६ लघु	१०४ अक्षर
२४ तालाङ्कः	४७ गुरु	५८ लघु	१०५ अक्षर
२५ शेषः	४६ गुरु	६० लघु	१०६ अक्षर
२६ सारङ्गः	४५ गुरु	६२ लघु	१०७ अक्षर
२७ पयोधरः	४४ गुरु	६४ लघु	१०८ अक्षर

काव्यषट्पदयोर्दोषा

काव्यषट्पदयोश्चापि दोषा' पन्नगभाषिता ।
वक्ष्यन्ते यान् विदित्वैव काव्य कर्त्तु मिहार्हति ॥ ६४ ॥
पददुष्टो भवेत्पङ्गु कलाहीनस्तु खञ्जकः ।
कलाधिको वातूलः स्यात् तेन शून्यफलश्रुतिः ॥ ६५ ॥
अन्धोऽलङ्काररहितो बधिरो भलवर्जित ।
प्राकृते सस्कृते चाऽपि विज्ञेयं पददूषणम् ॥ ६६ ॥
गणोट्टवणिका यस्य पञ्चत्रिकलका भवेत् ।
स मूक कथ्यतेऽर्थेन विना स्याद् दुर्बलस्तथा ॥ ६७ ॥

---

२८ कुन्द	४३ गुरु	६६ लघु	१०९ अक्षर
२९ कमलम्	४२ गुरु	६८ लघु	११० अक्षर
३० वारण'	४१ गुरु	७० लघु	१११ अक्षर
३१ शरभ	४० गुरु	७२ लघु	११२ अक्षर
३२ जङ्गम	३९ गुरु	७४ लघु	११३ अक्षर
३३ युतीष्टम्	३८ गुरु	७६ लघु	११४ अक्षर
३४ दाता	३७ गुरु	७८ लघु	११५ अक्षर
३५ शर	३६ गुरु	८० लघु	११६ अक्षर
३६ सुशर	३५ गुरु	८२ लघु	११७ अक्षर
३७ समर'	३४ गुरु	८४ लघु	११८ अक्षर
३८ सारस	३३ गुरु	८६ लघु	११९ अक्षर
३९ शारद	३२ गुरु	८८ लघु	१२० अक्षर
४० मेरु	३१ गुरु	९० लघु	१२१ अक्षर
४१ मदकर	३० गुरु	९२ लघु	१२२ अक्षर
४२ मद'	२९ गुरु	९४ लघु	१२३ अक्षर
४३ सिद्धि	२८ गुरु	९६ लघु	१२४ अक्षर
४४ बुद्धि	२७ गुरु	९८ लघु	१२५ अक्षर
४५ करतलम्	२६ गुरु	१०० लघु	१२६ अक्षर
४६ कमलाकर	२५ गुरु	१०२ लघु	१२७ अक्षर
४७ धवल	२४ गुरु	१०४ लघु	१२८ अक्षर
४८ मन	२३ गुरु	१०६ लघु	१२९ अक्षर
४९ ध्रुव	२२ गुरु	१०८ लघु	१३० अक्षर
५० कनकम्	२१ गुरु	११० लघु	१३१ अक्षर
५१ कृष्ण'	२० गुरु	११२ लघु	१३२ अक्षर

शल्यो नवरङ्ग-मनोहरौ गगन रत्न-नर-हीराः ।
भ्रमरः शेखर-कुसुमाकरौ ततो दीप्त-शङ्ख-वसु-शब्दाः ॥ ६२ ॥
इति भेदाभिधा पिङ्ग रचितायामपि स्फुटम् ।
उदाहरणमञ्जर्यामुक्त तासामुदाहृतिः* ॥ ६३ ॥

इति षट्पदम् ।

---

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे षट्पदच्छन्दसः गुरुह्रास-लघुवृद्धिपरिपाट्या एकसप्ततिभेदानामुदाहरणानि—

१ अजयः	७० गुरु	१२ लघु	८२ अक्षर
२ विजयः	६९ गुरु	१४ लघु	८३ अक्षर
३ बलिः	६८ गुरु	१६ लघु	८४ अक्षर
४ कर्णः	६७ गुरु	१८ लघु	८५ अक्षर
५ वीरः	६६ गुरु	२० लघु	८६ अक्षर
६ वेतालः	६५ गुरु	२२ लघु	८७ अक्षर
७ बृहन्नलः	६४ गुरु	२४ लघु	८८ अक्षर
८ मर्कटः	६३ गुरु	२६ लघु	८९ अक्षर
९ हरिः	६२ गुरु	२८ लघु	९० अक्षर
१० हरः	६१ गुरु	३० लघु	९१ अक्षर
११ ब्रह्मा	६० गुरु	३२ लघु	९२ अक्षर
१२ इन्दुः	५९ गुरु	३४ लघु	९३ अक्षर
१३ चन्दनम्	५८ गुरु	३६ लघु	९४ अक्षर
१४ शुभङ्करः	५७ गुरु	३८ लघु	९५ अक्षर
१५ श्वा	५६ गुरु	४० लघु	९६ अक्षर
१६ सिंहः	५५ गुरु	४२ लघु	९७ अक्षर
१७ शार्दूलः	५४ गुरु	४४ लघु	९८ अक्षर
१८ कूर्मः	५३ गुरु	४६ लघु	९९ अक्षर
१९ कोकिलः	५२ गुरु	४८ लघु	१०० अक्षर
२० खरः	५१ गुरु	५० लघु	१०१ अक्षर
२१ कुञ्जरः	५० गुरु	५२ लघु	१०२ अक्षर
२२ मदनः	४९ गुरु	५४ लघु	१०३ अक्षर
२३ मत्स्यः	४८ गुरु	५६ लघु	१०४ अक्षर
२४ तालाङ्कः	४७ गुरु	५८ लघु	१०५ अक्षर
२५ शेषः	४६ गुरु	६० लघु	१०६ अक्षर
२६ सारङ्गः	४५ गुरु	६२ लघु	१०७ अक्षर
२७ पयोधरः	४४ गुरु	६४ लघु	१०८ अक्षर

काव्यषट्पदयोर्दोषा

काव्यषट्पदयोश्चापि दोषा पन्नगभाषिता ।
वक्ष्यन्ते यान् विदित्वैव काव्य कर्त्तु मिहार्हति ॥ ६४ ॥
पददुष्टो भवेत्पङ्गु कलाहीनस्तु खञ्जक' ।
कलाधिको वातूल. स्यात् तेन शून्यफलश्रुतिः ॥ ६५ ॥
अन्धोऽलङ्काररहितो बधिरो भलवर्जित ।
प्राकृते सस्कृते चाऽपि विज्ञेय पददूषणम् ॥ ६६ ॥
गणोद्दवणिका यस्य पञ्चत्रिकलका भवेत् ।
स मूक कथ्यतेऽर्थेन विना स्याद् दुर्बलस्तथा ॥ ६७ ॥

---

२८ कुन्द	४३ गुरु	६६ लघु	१०९ अक्षर
२९ कमलम्	४२ गुरु	६८ लघु	११० अक्षर
३० वारण	४१ गुरु	७० लघु	१११ अक्षर
३१ शरभ	४० गुरु	७२ लघु	११२ अक्षर
३२ जङ्गम	३९ गुरु	७४ लघु	११३ अक्षर
३३ ज्योतिष्टम्	३८ गुरु	७६ लघु	११४ अक्षर
३४ दाता	३७ गुरु	७८ लघु	११५ अक्षर
३५ शर	३६ गुरु	८० लघु	११६ अक्षर
३६ सुशर	३५ गुरु	८२ लघु	११७ अक्षर
३७ समरः	३४ गुरु	८४ लघु	११८ अक्षर
३८ सारस	३३ गुरु	८६ लघु	११९ अक्षर
३९ शारद	३२ गुरु	८८ लघु	१२० अक्षर
४० मेरु	३१ गुरु	९० लघु	१२१ अक्षर
४१ मदकर	३० गुरु	९२ लघु	१२२ अक्षर
४२ मद	२९ गुरु	९४ लघु	१२३ अक्षर
४३ सिद्धि	२८ गुरु	९६ लघु	१२४ अक्षर
४४ बुद्धि	२७ गुरु	९८ लघु	१२५ अक्षर
४५ करतलम्	२६ गुरु	१०० लघु	१२६ अक्षर
४६ कमलाकर	२५ गुरु	१०२ लघु	१२७ अक्षर
४७ धवल	२४ गुरु	१०४ लघु	१२८ अक्षर
४८ मन	२३ गुरु	१०६ लघु	१२९ अक्षर
४९ ध्रुव	२२ गुरु	१०८ लघु	१३० अक्षर
५० कनकम्	२१ गुरु	११० लघु	१३१ अक्षर
५१ कृष्णः	२० गुरु	११२ लघु	१३२ अक्षर

हठात्कृष्टाक्षरैश्चापि कठोरः केकरोऽपि च ।
श्लेषः प्रसादादिगुणैर्विहीनः काण उच्यते ॥ ६८ ॥
सर्वैरङ्गैः समः शुद्धः स लक्ष्मीकः स रूपवान् ।
काव्यात्मा पुरुषः कोऽपि राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ६९ ॥
दोषानिमानविज्ञाय यस्तु काव्यं चिकीर्षति ।
न सत्सु स मान्यः स्यात् कवीनामतदर्हणः ॥ ७० ॥
एते दोषाः समुद्दिष्टाः संस्कृते प्राकृतेऽपि च ।
विशेषतश्च तथापि केचित्प्राकृत एव हि ॥ ७१ ॥

इति षट्पदीप्रस्तारे द्वितीयं षट्पदप्रकरणं समाप्तम् ।

---

५२ रमणम्	१९ गुरु	११४ लघु	१३३ अक्षर
५३ मेघकरः	१८ गुरु	११६ लघु	१३४ अक्षर
५४ ग्रीष्मः	१७ गुरु	११८ लघु	१३५ अक्षर
५५ गरुडः	१६ गुरु	१२ लघु	१३६ अक्षर
५६ शशी	१५ गुरु	१२२ लघु	१३७ अक्षर
५७ सूर्यः	१४ गुरु	१२४ लघु	१३८ अक्षर
५८ शल्यः	१३ गुरु	१२६ लघु	१३९ अक्षर
५९ नवरङ्गः	१२ गुरु	१२८ लघु	१४ अक्षर
६ मनोहरः	११ गुरु	१३ लघु	१४१ अक्षर
६१ गगनम्	१ गुरु	१३२ लघु	१४२ अक्षर
६२ रत्नम्	९ गुरु	१३४ लघु	१४३ अक्षर
६३ नरः	८ गुरु	१३६ लघु	१४४ अक्षर
६४ हीरः	७ गुरु	१३८ लघु	१४५ अक्षर
६५ भ्रमरः	६ गुरु	१४ लघु	१४६ अक्षर
६६ शेखरः	५ गुरु	१४२ लघु	१४७ अक्षर
६७ कुसुमाकरः	४ गुरु	१४४ लघु	१४८ अक्षर
६८ दीपः	३ गुरु	१४६ लघु	१४९ अक्षर
६९ शङ्खः	२ गुरु	१४८ लघु	१५ अक्षर
७ वसु	१ गुरु	१५ लघु	१५१ अक्षर
७१ शब्दः	गुरु	१५२ लघु	१५२ अक्षर(१५२मात्रा)

तृतीयं रड्डा-प्रकरणम्

१. पज्झटिका

डगणाश्चतुर पादे विधेहि,
अन्ते गणमिह मध्यगमवेहि।
इति पज्झटिका निखिलचरणेषु,
षोडशमात्रा सर्वचरणेषु ।। १ ।।

यथा–

गाङ्ग वन्द्य परिजयति वारि,
निखिलजनाना दुरितविनिवारि[1]।
भवमुकुटविराजिजटाविहारि,
मज्जज्जनमानसतापहारि ।। २ ।।

इति पज्झटिका।

२ अडिल्ला[2] [अरिल्ला]

सर्वे डगणा अरिल्ला छन्दसि,
नायकमत्र नयति त नन्दसि।
षोडशमात्रा विदिता यस्मि-
न्नन्ते सुप्रियमपि कुरु तस्मिन् ।। ३ ।।

यथा–

हरिरुपगत इति सखि ! मयि वेदय,
कुञ्जगृहोदरगतमपि खेदय।
इह यदि सपदि सविधमुपयास्यति,
रदवसनामृतमिदमनुपास्यति ।। ४ ।।

इति अरिल्ला।

३ पादाकुलकम्

गुरुलघुकृतगण[3]-नियमविरहित,
फणिपतिनायकपिङ्गलगदितम्।
रसविधुकलयुतयमकितचरण,
पादाकुलक श्रुतिसुखकरणम् ।। ५ ।।

---

१ ग विनिवासव। २ ग अडल्ला। ३. ग. गुण।

दुष्टाकृष्टाक्षरैश्चापि कठोरः केकरोऽपि च ।
श्लेषः प्रसादादिगुणविहीनः काण उच्यते ॥ ६८ ॥
सर्वैरङ्गैः समः शुद्धः स लक्षणः स रूपवान् ।
काव्यात्मा पुरुषः कोऽपि राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ६९ ॥
दोषानिमानविज्ञाय यस्तु काव्यं चिकीर्षति ।
न सभवि स मान्यः स्यात् कवीनामतदर्हणः ॥ ७० ॥
एते दोषाः समुद्दिष्टाः संस्कृते प्राकृतेऽपि च ।
विशेषतस्च तथापि केचित्प्राकृत एव हि ॥ ७१ ॥

इति धाममलीप्रस्तारे द्वितीयं दूषणप्रकरणं समाप्तम् ।

---

५२ रम्भणम्	१९ गुरु	११४ लघु	१३३ प्रस्तार
५३ मेघकर:	१८ गुरु	११६ लघु	१३४ प्रस्तार
५४ ग्रीष्मः	१७ गुरु	११८ लघु	१३५ प्रस्तार
५५ गरुडः	१६ गुरु	१२ लघु	१३६ प्रस्तार
५६ शशी	१५ गुरु	१२२ लघु	१३७ प्रस्तार
५७ सूर्यः	१४ गुरु	१२४ लघु	१३८ प्रस्तार
५८ शल्यः	१३ गुरु	१२६ लघु	१३९ प्रस्तार
५९ नवरङ्गः	१२ गुरु	१२८ लघु	१४ प्रस्तार
६ मनोहर:	११ गुरु	१३ लघु	१४१ प्रस्तार
६१ गगनम्	१ गुरु	१३२ लघु	१४२ प्रस्तार
६२ रत्नम्	९ गुरु	१३४ लघु	१४३ प्रस्तार
६३ नर:	८ गुरु	१३६ लघु	१४४ प्रस्तार
६४ हीरः	७ गुरु	१३८ लघु	१४५ प्रस्तार
६५ भ्रमर:	६ गुरु	१४ लघु	१४६ प्रस्तार
६६ शेखर:	५ गुरु	१४२ लघु	१४७ प्रस्तार
६७ कुसुमाकर:	४ गुरु	१४४ लघु	१४८ प्रस्तार
६८ दीपः	३ गुरु	१४६ लघु	१४९ प्रस्तार
६९ शङ्खः	२ गुरु	१४८ लघु	१५ प्रस्तार
७ वसुः	१ गुरु	१५ लघु	१५१ प्रस्तार
७१ शब्दः	गुरु	१५२ लघु	१५२ प्रस्तार(१५२मात्रा)

अपरान्ते लघुयुगनियमः स्यात् कलाद्वयम् ।
समादौ स्याच्चतुर्थान्ते त्रिलघुर्गण ईरितः ॥ ११ ॥

यथा–

पिकरुतमिदमनुविलसति दिक्षु
किंशुककलिका विकसति[1]
वहति मलयमरुदयमपि सुलघु
विरुतमलिरपि कलयति
विकसति मञ्जुल[2]मञ्जरिरपि च ।
इति मधुरनुवनमनुसरति बहुलीभूय सुकेशि !
हरिरपि विनमति चरणयुगमनुसर तं हृदयेशि ! ॥ १२ ॥

रड्डाया सप्तभेदा

अथैतस्याः सप्तभेदाः कथ्यन्ते पिङ्गलोदिताः ।
यान् विधाय कविः काव्यगोष्ठ्यां बहुमतो भवेत् ॥ १३ ॥
प्रथमा करभी प्रोक्ता ततो नन्दा च मोहिनी ।
चारुसेना चतुर्थी स्यात्तथा[3] भद्रापि पञ्चमी ॥ १४ ॥
राजसेना तु षष्ठी स्यात् तथा तालङ्किनी मता ।
सप्तमी कथिता रड्डा भेदा लक्षणमुच्यते ॥ १५ ॥

५[१] करभी

विषमेऽग्निविधुकलाको रुद्रकलाको द्वितीयोऽपि ।
तुर्योऽपि रुद्रमात्रः पञ्चपदानीह कथितानि ॥ १६ ॥
एवं पञ्चपदानामग्रे दोहापि यस्यास्ताम् ।
करभीति नागराजः कथयति गणकल्पना तु दोहावत् ॥ १७ ॥

इति करभी ।

५[२] नन्दा

विषमेषु वेदविधुभिर्द्वितीयतुर्यौ च रुद्रमात्राभिः ।
अग्रे दोहा यस्या[4] तां नन्दामामनन्ति वृत्तज्ञाः ॥ १८ ॥

इति नन्दा ।

---

१ ग विलसति । २ ग मञ्जुर । ३ ख ग अथ । ४ ग यस्याः ।

यथा–

जलधरदान[1]-हृष्टितवनभागः
शीतलमारुतकृतपरभागः[2] ।
चम्पकदलघपलाधृतवनमामः
समुपागत इह जलधरकालः ॥ ६ ॥

इति पादाकुलकम् ।

४ चौबोला

रसविधुकलकमयुगमवधारय,
सममपि वेदविधूपमितम् ।
सर्वमपि षष्टिकल विचारय,
चौबोलास्य फणिकथितम् ॥ ७ ॥

यथा–

दिशि दिशि विलसति जलधररंगमिलि-
मर्थ तडिल्का राजमते ।
सा मम चेतः कुरुते लजित-
मपि को कान्तो भासयते ॥ ८ ॥

इति चौबोला ।

५ रड्डा[8]

विषमचरणेषु डगण[3]मुपनय
डगणत्रयमनुविरचय
जगणमुत[4] विप्रमन्त्यमुपनय
डगणत्रयमपि रचय
समेऽन्ते[5] सर्वलघु विरचय ।
दोहाचरणचतुष्टयं तेषामन्ते धेहि ।
फणिपतिपिङ्गलभाषितं रड्डा वृत्तमवेहि ॥ ९ ॥

विषमे चरविधुमात्रो द्वादशमात्रास्तथा द्वितीयोऽपि ।
तुर्यो रुद्रकलाकः प्रथमान्ते जगणविप्रनियमः स्यात् ॥ १० ॥

---

१ जलधरदान । २ परिभागः । ३ ख प्रकरज । ४ ग रगण । ५ ग अनु । ६. ख ग नास्ति । ७. ग. रड्डा । ८ प्रती रड्डायाः स्थाने सर्वत्रापि रड्डायाः चौबोलो लिख्यते ।

अपरान्ते लघुयुगनियम. स्यात् कलाद्वयम् ।
समादौ स्याच्चतुर्थान्ते त्रिलघुर्गण ईरित ॥ ११ ॥

यथा–

पिकरुतमिदमनुविलसति दिक्षु
किंशुककलिका विकसति[1]
वहति मलयमरुदयमपि सुलघु
विरुतमलिरपि कलयति
विकसति मञ्जुल[2]मञ्जरिरपि च ।

इति मधुरमुवनमनुसरति बहुलीभूय सुकेशि !
हरिरपि विनमति चरणयुगमनुसर त हृदयेशि ! ॥ १२ ॥

रड्डाया सप्तभेदा

अथैतस्या सप्तभेदा कथ्यन्ते पिङ्गलोदिता ।
यान् विधाय कवि. काव्यगोष्ठ्या बहुमतो भवेत् ॥ १३ ॥
प्रथमा करभी प्रोक्ता ततो नन्दा च मोहिनी ।
चारुसेना चतुर्थी स्यात्तथा[3] भद्रापि पञ्चमी ॥ १४ ॥
राजसेना तु षष्ठी स्यात् तथा तालङ्किनी मता ।
सप्तमी कथिता रड्डा भेदा लक्षणमुच्यते ॥ १५ ॥

५[१] करभी

विषमेऽग्निविधुकलाको रुद्रकलाको द्वितीयोऽपि ।
तुर्योऽपि रुद्रमात्र पञ्चपदानीह कथितानि ॥ १६ ॥
एव पञ्चपदानामग्रे दोहापि यस्यास्ताम् ।
करभीति नागराज कथयति गणकल्पना तु दोहावत् ॥ १७ ॥

इति करभी ।

५[२] नन्दा

विषमेषु वेदविधुभिर्द्वितीयतुर्यौ च रुद्रमात्राभि ।
अग्रे दोहा यस्या[4] ता नन्दामामनन्ति वृत्तज्ञा ॥ १८ ॥

इति नन्दा ।

---

१ ग विलसति । २ ग मञ्जुर । ३ ख ग अथ । ४ ग यस्या ।

५[३] मोहिनी

अयुजि पदे नवमात्रा[1] समेऽपि विगलद्रसस्यामि[2] ।
पुरतो दोहा यस्यां शेषस्तां मोहिनीमाह ॥ १९ ॥

इति मोहिनी ।

५[४] चारुसेना

असमपदे सरचन्द्रा[3] समयोरेकादशैव यस्यास्ताम् ।
दोहाविरचितशीर्षां भणति फणीन्द्रस्तु[4] चारुसेनेति ॥ २० ॥

इति चारुसेना ।

५[५] भद्रा

विषमेषु पञ्चदशभिर्द्वितीयतुर्यो च सूर्यसङ्ख्यामि ।
या दोहाङ्कितशीर्षा सा भद्रा भवति पिङ्गलेनोक्ता ॥ २१ ॥

इति भद्रा ।

५[६] राजसेना

पूर्ववदेव हि विषमे सम क्रमादेव सूर्यरुद्रैश्च ।
पूर्ववदेव हि दोहा यत्र स्याद् राजसेना सा ॥ २२ ॥

इति राजसेना ।

५[७] तालङ्किनी

विषमे पदेषु(च) यस्यां षोडशमात्रा विराजन्ते ।
पूर्ववदेव हि समयोर्दोहाऽपि च पूर्ववद्भवति ॥ २३ ॥
तालङ्किनीति कथिता सा रड्डा नागराजेन ।
एवं सप्तविभेदा विविच्य सम्यक् प्रदर्शिता क्रमशः[5] ॥ २४ ॥
उदाहरणमेतेषां ग्रन्थविस्तरशङ्कया ।
नोक्तं सुबुद्धिभिस्तद्धि स्वयमूह्यं[6] महात्मभिः ॥ २५ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिके[7] दुष्करोद्धारे रड्डा-प्रकरणं समाप्तम् ।

---

१ ग. चन्द्री। २ क ग च। ३ ग क्रमतः। ४ ग तत्। ५ ग विरचय्य।
६ ग. वार्तिके नास्ति। ७ ग वर्हेदा।

चतुर्थं पद्मावती-प्रकरणम्

१. पद्मावती

यदि योगडगणकृत-चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणा, ,
नायकविरहितपद-कविजनकृतमद-पठनादपि मानसहरणा ।
इह दशवसुमनुभि [1] क्रियते कविभिर्विरतिर्यदि युगदहनकला ,
सा पद्मावतिका फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ।। १ ।।

यथा।[2] –

करयुगधृतवंशी रुचिरवतंसी गोवर्द्धनधारणशील ,
प्रियगोपविहारी भवसन्तारी वृन्दावनविरचितलोलः ।
धृतवरवनमाली निजजनपाली वरयमुनाजलरुचिशाली[3] ,
मम मङ्गलदायी कृतभवमायी[4] वरभूषणभूषितभाली[5] ।। २ ।।

इति पद्मावती ।

२ कुण्डलिका

दोहाचरणचतुष्टय प्रथम नियतमवेहि,
कुण्डलिकां फणिरनुवदति काव्य तदनु विधेहि ।
काव्य तदनु विधेहि पद प्रतियमकितचरणं,
तदुभयविरतौ भवति पुनरपि च[1] तदुभयपठनम् ।
तदुभयसुपठनसमयरचितकरकविजनमोहा ।
कुण्डलिका सा भवति भवति यदि पूर्वं दोहा ।। ३ ।।

यथा–

चरण शरण भवतु तव मुरलीवादनशील,
सुरगणवन्दितचरणयुग वनभुवि विरचितलील ।
वनभुवि विरचितलील दुष्टजनखण्डनपण्डित,
दुर्जनजनहृदि कील गण्डयुगकुण्डलमण्डित ।
दुर्जनजनहृदि कील[7] भीतभयतापविहरण[8],
मुनिजनमानसहस हरतु मम ताप चरणम्[9] ।। ४ ।।

---

१ ग मुनिभि । २ ग तद्यथा । ग प्रतौ यथा शब्दस्य स्थाने सर्वत्र तद्यथ पाठो दृश्यते । ३ ग माली । ४ ग नवबरदायी । ५ ग माली । ६ ग नास्ति पाठ । ७ ग नास्ति पाठ' । ८ ख विहरण । ९ ख चरण, ग चरणम् ।

३ गगनाङ्गणम्

टगण[1]मिहादौ रचयत विरमित[2]विनतानन्दन[3],
मध्य नियमविरहित रचितयति कविनन्दनम्[4] ।
धरपक्षमितकलाक[5]-नक्षमित[6]-वर्णविकासित,
गगनाङ्गणमिद भवति फणिपतिपिङ्गलभाषितम् ॥ ५ ॥

यथा –

मानसमिह मम कृन्तति कोकिलविरुतमकारणं
कलितशरासनसायकमतनु[7] कलयति मारणम् ।
मधुसमये कथमपि सखि[8] ! जीवं निजमपि धारये
रुचिरमधुमितमन्तरा क्षणमपि सोढुमपारये ॥ ६ ॥

इति गगनाङ्गणम् ।

४ द्विपदी

आदौ टगणसमुपरचित तदनु च धारडगणसुविहितम् ।
गान्तं द्विपदीवृत्तं वसुपक्षकल फणिपतिभणितम्[9] ॥ ७ ॥

यथा–

मम मानसमभिलपति सखि-कृतरासकेलिरसनायके ।
निजरुचिविजितनूतनजलधर-मुरलीनादसुखदायके ॥ ८ ॥

इति द्विपदी ।

५. मुक्तमणा[10]

प्रथममिह दशसु यतिरथ च तदवधि भवति
तदुपरि च मुनिविधुभिरथ युक्ता ।
इति[11] हि विधियुगदला मुनिबहुनकृतकला
मुक्तमणा भवति गणनियमयुक्ता ॥ ९ ॥

यथा–

करविधृतसंगरपटुतहृदय विलसभव
गाढमानन्दकरदधिरथामे ।

---

१ ग टगण। २ ग विरचित। ३ ग. विनतानन्द। ४ ग कविवन्द। ५ ग कला। ६ ग मर्वाणित। ७ ग. रचितमपि। ८ ग सखी। ९ ग भाषितम्। १० ग. मुक्तमणा। ११ ग इह।

मम सविधमुपयासि मम वचनमनुपासि
वल्लवीरभिभूय जनितदासे[1] ॥ १० ॥

इति भुल्लणा* ।

---

१ ग हासे ।

*टिप्पणी—श्रीकृष्णभट्टेन वृत्तमुक्तावल्यां द्वितीयगुम्फेऽस्य छन्दसः भुल्लण-उपभुल्लण-सुभुल्लन-प्रतिभुल्लननामभिश्चत्वारो भेदाः प्रदर्शितास्ते चात्राविकल समुद्ध्रियन्ते—

अथ भुल्लनच्छन्दः

यस्य चरणे सप्त पञ्चकलास्ततो द्वे कले तज् भुल्लन नाम । यद्यपि पञ्चकलभेदा अविशेषेणैव गृहीतास्तथापि प्रतिगणं द्वितीया कला परया कलया मिश्रितोद्वेजिकेत्यनुभवसाक्षिकम् ।

यथा—

गोपपतगेशविबुधेशभुवनेशभूतेशसचिवेशपसुनिदेशधरणी,
कन्दलितमुन्दरानन्दमकरन्दरसमज्जनमिलिन्दभवसिन्धुतरणी ।
ज्ञानमण्डनपरा कर्मखण्डनधरा शमनदण्डनपरा भूतिहरणी,
नित्यमिह वक्ति मुनिवृन्दमनुरक्तिमज्जयति हरिभक्तिरामक्तिकरणी ॥ ६१ ॥

अष्टत्रिंशत् कल उपभुल्लम् । तस्मिश्चोपान्त्यो गुरुरन्त्यो लघुर्नियत ।

यथा—

चण्डभुजदण्डसदखण्डकोदण्ड(ध)शिखण्डशरखण्डभरदण्डितविपक्ष,
पर्वभृतशर्वरीनाथरुचिगर्वहरसर्वहृदखर्वसुखलीलनवलक्ष ।
दुष्टनररुष्टतरपुष्टनयजुष्टजनतुष्टमतिघुष्टचरितौघकृतिदक्ष,
तत्क्षणसमक्षकृतरक्षणसपक्षगणलक्षितसुलक्षण जयेश गतलक्ष ॥ ६२ ॥

कलाद्वयाधिक्येन एकोनचत्वारिंशत्कलचरणमपि सभवति, तच्च सुभुल्लन नाम ।

यथा—

चूतनवपल्लवकषायकलकण्ठवलमञ्जुकलकोकिलाकूजितनिदान,
माधुरीमधुरमधुपानमत्तालिकुलवल्लकीतारझङ्कारसुखदानम् ।
चारुमलयाचलोद्भूतपवमानजवजागरितचित्तभवसायकवितानम्,
पश्य सखि पश्य कुसुमाकरमुदित्वर मा कलय मानसे मानमतिमानम् ॥ ६३ ॥

चत्वारिंशत्कल प्रतिभुल्लनमपि स्वीकार्यम् ।

यथा—

काशकैलाससविलासहरहासमधुमाससनिकाससितसारससमानगति,
शारदतुषारकरसारघनसारभरहारहिमपारदविसारसमुदारमति ।
बालकमृणालमृदुमालतीजालरुचिचालितविशालविबुधालयमरालतति,
राजमृगराजवर राजते तव यशो राम सुरराजसुसभाजितसमाजनति ॥ ६४ ॥

६. चम्पा ।

नवमसधिकसमितगणमिह[1] समुपनय
तदनु च कुरुत रगणमपि फणिमणिसखसञ्ज्ञके ।
इति विधिविरचितदलयुगमिह भवति
निखिलभुवनगतवरकविजनहृदयसुखसञ्ज्ञके ॥ ११ ॥

यथा–

निजतनुरुचिविजितनवजलधररुचि
विधृतरुचिरतर[2]मुकुट हरिरिह मम हृदि भासताम् ।
मम हृदयमविरतमनुभवतु तव
निजजनसुखवितरणरसिकचरणसरसिजदासताम् ॥ १२ ॥

इति चम्पा ।

७ शिखा

रसजसधिकसमुपनयत फणिरिति वदति सकलकविसखा हि ।
चपरदसमय मुनिकृतमुभयमपि जगणविरतिगमिति[3] भवति शिखा हि ॥१३

यथा–

विकचनलिनगतमधुरमधुकरकलरवमनुकलय सुकेशि ।
हरिरिति विनमति चरणयुगमपि मयि[4] कुरु हृदयमपरुषमति[5] सुवेषि ॥१४॥

इति शिखा ।

८ माला

वसुनिधिकलमिह[6] नवगणमुपनय तदनु च
रगणमपि हि गुरुयुगलमथ कुरु पिङ्गलभोक्तम् ।
गाथोत्तरार्द्धसहितं मालावृत्तं विजानीहि ॥ १५ ॥

यथा–

मथितहृदय परयुवतिजनमदनहरण
परधनयुवतिरतमिनतिरभममान्तरदृशा[7] (?) ।
तीरे कल्मषनाशी चरणनमाली हरि पायाद् ॥ १६ ॥

इति माला ।

१ ख. कमलमुखनयनमिह । २ ख वर । ३ ग विरतिविलसिति । ४ ख मह ।
५. ख हृदि दर्शनं । । ६ ख मिह । ७ ख दृग्बाण ।

६ चुलिआला[1]

यदि दोहादलविरतिकृत,
गरकलकुसुमगणो हि विराजति ।
फणिनायकपिङ्गलरचित,
चुलिआला किल जातिषु राजति ।। १७ ।।

यथा–

क्षणमुपविश वनभुवि हरे,
मम पुनरागमनाऽवधि पालय ।
उपयाता[2]मिह मम सखी[3],
तामङ्के राधामुपलालय[4]।। १८ ।।

इति चुलिआला ।

१०. सोरठा

सोरठाख्य तत्तु फणिनायक भणित भवति ।
दोहावृत्त यत्तु विपरीत कविजनभवति ।। १९ ।।

यथा–

रूपविनिर्जितमार ! सकलयादवकुलपालक ! ।
जय जय नन्दकुमार ! गोपगोपीजनलालक ! ।। २० ।।

यथा वा–

गलकृतमस्तकमाल ! भालगतदहनविराजित !
जय जय हर ! भूतेश ! शेषकृतभूषणभासित ! ।। २१ ।।

इति सोरठा

११ हाकलि

सगणै[5]र्भगणैर्नलघुयुतं,
सकल चरण प्रविरचितम्[6] ।
गुरुकेन च सर्वं कलित,
हाकलिवृत्तमिद कथितम् ।। २२ ।।

प्रथमद्वितीयचरणौ रुद्रार्णावथ तृतीयतुर्यौ च ।
दशवर्णौं सकलेषु च मात्रा वेदेन्दुभि प्रोक्ता ।। २३ ।।

---

१. ग चूलिआला । २ ख. उपुयाता । ३ ख ग सखीं । ४ ग. पालय ।
५. ग सगुणै । ६. ग प्रविचरित ।

यथा–

विकृतभयानकवेषकरं
चरणाङ्कितवरभूमितलम् ।
व्योमसमानसकम्बुगलं,
नौमि विभूषितभालतलम् ॥ २४ ॥

यथा वा[1]–

यमुनाजलकेलिषु कलितं
वनिताजनमानसचलितम् ।
सुरभीगणसङ्गा[2]ञ्चलितं
नौमि मुदा व्रजसम्मिलितम् ॥ २५ ॥

इति हारकलि ।

१२ मधुभारः

जगणमथवेहि जगणमनु देहि ।
मधुभारमाशु परिकलय धासु ॥ २६ ॥

यथा–

उरसि कृतभास, भक्तजनपास ।
रुचिजिततमास जय नन्दवास ॥ २७ ॥

इति मधुभारः ।

१३ आभीरः

अन्ते जगणमवेहि
विधुयुगकला विधेहि ।
आभीर परिशोभि
कविजनमानसलोभि ॥ २८ ॥

यथा –

व्रजभुवि रचितविहार
श्रुतिशतकलितविचार ।
मधुकुलजनितनिवास
जय भूतलकृतरास[3] ॥ २९ ॥

इत्याभीरः ।

---

१ ग यथावत्च । २ ग संचालत् । ३ ग जय जय भुवि कृतरास ।

१४. दण्डकला

वेदडगणविरचितमनु[१] च[२] टगणकृत[३]-मन्ते डगणद्वयविहित,
गुरुकृतपदविरत कविजनसुमत दण्डकलाख्यमिद विदितम् ।
वरफणिकुलपतिना विमलसुमतिना पक्षदहनकृतचरणकल,
गगनेन्दुविराजित-योगविकासित-वेदावनिकृतयतिविमलम् ॥ ३० ॥

यथा–

खरकेशिनिषूदन-विनिहतपूतन-रचितदितिजकुलवलदलन,
वाणावलिसालित-सङ्करपालित-पार्थविलोकितशुभवदनम् ।
कृतमायामानव-रणहतदानव-दुस्तरभवजलराशितरिं,
सुरसिद्धि[४]-विधायक-यादवनायकमशुभहर प्रणमामि हरिम् ॥ ३१ ॥

इति दण्डकला ।

१५ कामकला

यदि रसविधुमात्राणामन्ते विरतिर्भवेत्तदा सैव[५] ।
कामकलेति फणीश्वरपिङ्गलकथिता मता सद्भिः[६] ॥ ३२ ॥

यथा–

कमलाकरलालितपदकमल निजजनहृदयविनाशित[७]शमलं,
पीतवसनपरिभासितममल जितकम्बुमनोहरविमलगलम् ।
नाभिकमलगतविधिकृतनमन फणिमणिकुण्डलमण्डितवदन,
नौमि जलधिशयमतिरुचिसदन दानवनिवहसमरकृतकदनम् ॥ ३३ ॥

इति कामकला ।

१६ रुचिरा

सप्तचतुष्कलकलितसकलदल-मन्त्याहितकुण्डलरुचिरा ।
न कुरु पयोधरमिह फणिपतिवर-भणितमिद वृत्त रुचिरा ॥ ३४ ॥

यथा–

कस्य तनुर्मनुजस्य सितासित-सङ्गममविविधित पतिता ।
यस्य कृते करभोरु विषीदसि मिहिरातपनिहिते[८]व लता ॥३५॥

इति रुचिरा ।

१७ दीपकम्

जगणं कुरु विचित्र
मन्ते जगणमत्र ।
मध्ये द्विसमवेहि[1]
दीपकमिति विधेहि ॥ ३६ ॥

यथा—

शेषविरचितहार,
पितृकाननविहार ।
जय जय हर ! महेश,
गौरीकृतसुवेष ! ॥ ३७ ॥

अथवा—

तुरगीकमुपधाय
सुनरेन्द्र[2]मवधाय ।
इति[3] दीपकमवेहि
सभुमन्तमभिधेहि ॥ ३८ ॥

यथा[4]—

क्षणमात्रमतिवल्गु,
जगदेतदतिफल्गु ।
धनलोभमपहाय
भज पद्मनयनाय ॥ ३९ ॥

इति दीपकम् ।

१८ सिंहविलोकितम्

सगणद्विजगणविरचितचरणं
चरणे रसभूमिकलाभरणम् ।
फणिनायकपिङ्गलभणितवरं
वरसिंहविलोकितहृदयहरम् ॥ ४० ॥

यथा—

हतदूषणकृतजननिचितरणं
रणभुवि हतदानवकुलमरणम् ।
रणरणितशरासन[5]भङ्गकरं,
करकलितशिरो मम[7] देववरम् ॥४१॥

इति सिंहविलोकितम् ।

---

१ ग द्विजगणमवेहि । २ ग. सुनरेन्द्र । ३ ग इह । ४ ग [illegible]
५. ग 'इदं नास्ति । ६ ग. शरासन । ७ ग मम ।

१९. प्लवङ्गम

आदावादिगुरु कुरु षट्कलभाषित,
[पञ्चकल तदनु च डगण विभूषितम् ।
अन्ते नायकमथ रचय गुरुविकासित]¹
वृत्तमिद प्लवङ्गममहिपतिसुभाषितम् ॥ ४२ ॥

यथा–

कुञ्चितचञ्चलकुन्तलकलितवरानन,
वेणुविरावविनोदविमोहित²काननम् ।
मण्डलनायकदानवखण्डनपण्डित,
चिन्तय चण्डकरोपमकुण्डलमण्डितम् ॥ ४३ ॥

इति प्लवङ्गमः ।

२०. लीलावती

लघुगुरुवर्णरचित-नियमविरहित-वसुडगणकृत-चरणविरचिता,
सगणद्विजवर-जगण-मगण-गुरुयुगकृतपदमतियमकसुकथिता ।
लीलावतिका पक्षदहनकृतकला वरकविजनहृदयमहिता,
विरचितललितपद-जनहृदयकृतमद-फणिनायकपिङ्गलभणिता ॥ ४४ ॥

यथा–

गुञ्जाकृतभूषणमखिलजनहृतदूषणमधिककृतरासकल,
करयुगधृतमुरलि नवजलधर³नील वृन्दावनभुवि चपलम् ।
हृतगोपीमान नारदकृतगान लीलावलदेवयुत,
स्मर नन्दतनूज सुरवरकृतपूज मम हृदयमुनिजननुतम् ॥ ४५ ॥

इति लीलावती ।

२१[१] हरिगीतम्

चरणे प्रथम विरचय ठगण तदनु डगणविराजित,
रचय शरकल तदनु दहनमितमन्ते गुरुविकासितम् ।
वसुपक्षकलाक कविजनससदि हृदयसुखदायक,
हरिगीतमिति वृत्तमहिपतिकविनृपतिजल्पितनायकम् ॥ ४६ ॥

---

१ कोष्ठकान्तर्गतोऽय पाठ ख ग प्रतावेवास्ति । पाठेऽस्मिन् पञ्चकल-चतुष्कलयोर्विधान दृश्यते तच्च प्राकृतपैङ्गलमतविरुद्ध 'पचमत्त चउमत्त गणा णहि किज्जए' इति [illegible]

मुरलीरव[1]-मोहनमनु[2]-मोहितनिखिलयुवतिजन[3]-कृतरास,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकाजनमानसजनितविलासम् ॥ ४६ ॥

इति हरिगीत[क]म् ।

२१ [३] मनोहर हरिगीतम्[4]

इयमेव यदि विरामे गुर्वन्त शरकल भवति ।
नैयत्येन कवीन्द्रैर्वसुपक्षकल मनोहर कथितम् ॥ ५० ॥

एतदनुसारेण पाठान्तर यथा–

उरसि विलसितानुपमनलिनकृतमधुकररुतयुतमालं,
मुनिजनयमनियमादिविनाशकसकलदनुजकुलकालम् ।
मुरलीरवमोहनमनुमोहितनिखिलयुवतिकृतरास,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकामानसजनितविलासम् ॥ ५१ ॥

इति मनोहर हरिगीतम्

२१ [४] हरिगीता

रन्ध्रैर्मुनिभि सूर्यै कृतविरतिर्भाविता कविभि ।
इद(य)मेव हि हरिगीता फणिनायकपिङ्गलोदिता भवति ॥ ५२ ॥

यथा–

भुजगपरिवारित-वृषभधारित-हस्तडमरुविराजित,
कृतमदनगञ्जन-मशुभभञ्जन-सुरमुनिगणसभाजितम् ।
हिमकरणभासित-दहनभूषित-भालमुमया सङ्गत,
धृतकृत्तिवाससममलमानसमनुसर सुखदमङ्ग तम् ॥ ५३ ॥

इति हरिगीता ।

२१ [५] अपरा हरिगीता

इयमेव वेदचन्द्रै कृतविरतिर्भाविता कविभि ।
पितृचरणैरतिविशदा पिङ्गलविवृतावुदाहृता स्फुटत ॥ ५४ ॥

तदुदाहरण यथा[5]–

सखि ! बभ्रमीति मनो भृश जगदेव शून्यमवेक्ष्यते,
परिभिद्यते मम हृदयमर्म न शर्म सम्प्रति वीक्ष्यते ।

---

१ ग वर । २. मम । ३ ग 'जन' नास्ति । ४. ग प्रतौ छन्दसोऽस्य लक्षणोदाहरणे न स्त । ५ क ग प्रतौ नास्त्युदाहरणपद्यमिदम् ।

परिहीयते वपुषा भृशं नलिनीव हिमततिसङ्गता
नुदती घने[1] वदतीति सा सुदती रतीशवशङ्गता ॥ ५५ ॥

इत्यपरा हरिगीता ।

२१ त्रिभङ्गी

प्रथमं दशसु च[2] यतिरनु च वसुषु यतिरथ च तदधिकृति-रस[3]कथितं
शेषे गुरुगदितं त्रिभुवनविदितं जगणविरहितं जगति हितम् ।
वसुसगणकृतचरण-मधिकसुखकरण-सकलजनशरण-मतिसुमतिः,
वदतीति त्रिभङ्गीमिह निरनङ्गीकृतरतिसङ्गी फणिनृपतिः ॥ ५६ ॥

यथा–

वरमुक्ताहार हृदि कृतभार विरहितसारं कुरु मुदितं
छादय विधुबिम्ब न कुरु विलम्ब हर निकुरम्ब कमलकृतम् ।
वहि[4] मलयजपवन मधु मधुवहन तनुकृतदहनं मोहकर
मम चित्तमधीरं रचितहीरं यदुवरवीरं याति परम् ॥ ५७ ॥

इति त्रिभङ्गी ।

२२ दुर्मिलका

यत्राऽष्टौ सगणाः कविसुखकरणाः प्रतिपदगुम्फनमतियुता
गगनाधनिरचिता वसुषु च कथिता यत्र वेदविधुयतिरुदिता ।
द्वात्रिंशन्मात्रा स्फुरतिविविधाभरणे यस्मिन् कविगदिता
जनहृदि सुखदात्री बुद्धिविधात्री सा दुर्मिलका फणिभणिता ॥ ५८ ॥

यथा–

हैयङ्गवचोर नन्दकिशोर तनुसुखकरुचिरसमरदनं
घनकुञ्चितकेश मञ्जुलवेष विजितममुमसुरुचिसदनम् ।
अपरिस्फुटवचनं दधियुतवदन नौमि विविधभवसङ्कटहरं,
मुक्ताभूपालकमद्भुतबालकमखिलमुनिजनहृदि सुखकरम्[5] ॥ ५९ ॥

इति दुर्मिलका ।

---

१ वदती घन इति पाठः पिङ्गलप्रदीपे । २ च नास्ति । ३ कथन । ४ व. नास्ति । ५ 'मुक्ताभूपालकमद्भुतबालकमखिलजनहृदय सौख्यकरम्' इति पाठे मुनिजनसुख-शोभाविकृति स्यात् (ख)

२४. हीरम्

आदिगयुत-वेदलयुत-नागरचितपट्कल,
वह्निगदित-लोकविदितमन्त्यकथितमध्यकलम् ।
भाति यदनु-पादमतनु-कान्तिसुतनुसङ्गत,
हीरमहिपवीरकथितमीदृगखिलसम्मतम् ॥ ६० ॥

यथा–

चन्द्रवदन-कुन्दरदन-मन्दहसनभूषण,
भीतिकदन-नीतिसदन[1]-कान्तिमदनदूषणम् ।
धीरमतुलहीरबहुलचीरहरणपण्डित,
नौमि विमलधूतकमलनेत्रयुगलमण्डितम् ॥ ६१ ॥

यथा वाऽस्मत्तातचरणानाम्–

पाहि जननि ! शम्भुरमणि ! शुम्भ[2]दलनपण्डिते !
तारतरलरत्नखचितहारवलयमण्डिते ।
भालरुचिरचन्द्रशकलशोभि[3]सकलनन्दिते[4] !
देहि सततभक्तिमतुलमुक्तिमखिलवन्दिते ! ॥ ६२ ॥

इत्यादिमहाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि ।

इति हीरम्* ।

---

१ ग नास्ति । २. ग शम्भु । ३ ग कलशशोभि । ४ ग सकलसनन्दिते ।

*टिप्पणी—वृत्तमुक्तावल्यां द्वितीयगुम्फे 'हीर'वृत्तस्य सुहीर हीर लघुहीरक परिवृत्ताहीरक-चेति चत्वारो भेदा निबद्धास्तेऽत्र प्रदर्श्यन्ते—

प्रतिपट्कल यत्या रहित सुहीरम् ।

यथा–

रासललितलासकलितहासवलितशोभन,
लोकसकलशोकशमलमोक्षमखिललोभनम् ।
जातनयनपातजनितशातमुदितभारस,
भाति मदनमानकदनमीशवदनसारसम् ॥ ५५ ॥

यथा–

प्रतिषट्कल यत्या सहित हीरम् ।

खञ्जनवरगञ्जनकरमञ्जनरुचिराजित,
कामहृदभिराममसिललामरतिसभाजितम् ।
नीलकमलशीलमुदितकीलविरहमोचन,
जातिकुटिलयाति. सुदति भाति तव विलोचनम् ॥ ५६ ॥

२६ मदनगृहम्

प्रथम द्विल[1] सहित वरगुरुमहित
विरतौ विमलसकल[2]-चरणे श्रुति[3]-सुखकरणे,
नवडगणविकासित-मध्यविराजित-
जनशुभदायकदेहधर फणिभणितवरम् ।
गगनावलिकल्पित-वसुमितजल्पित-
वेदविधूदितयतिसहित[4] वसुयतिमहित,[5]
गगनोदधिमात्र भवति विचित्र
मदनगृह पवनविरहित[6] सकलकविहितम् ॥ ६५ ॥

यथा–

सुरनतपदकमल हृतजनशमल
वारिजविजयिनयनयुगल वारिद[7]विमल,
दितिसुतकुलविलय कमलानिलय
कल[8]करयुगलकलितवलय केलिषु सलयम् ।
चन्द्रकचित[9]-मुकुट विनिहतशकट
दुष्टकसहृदि बहुविकट मुनिजननिकट,
गतयमुनारूप कृतबहुरूप
नमतारूढहरितनीप[10] श्रुतिशतदीपम् ॥ ६६ ॥

यथा वाऽस्मत्पितु' शिवस्तुतौ—

करकलितकपाल धृतनरमाल
भालस्थानलहुतमदन कृतरिपुकदन,
भवभयभरहरण[11] गिरिजारमण
सकलजनस्तुतशुभचरित गुणगणभरितम्[12] ।
कृतफणिपतिहार त्रिभुवनसार
दक्षमखक्षयसक्षुब्ध रमणीलुब्ध,
गलराजितगरल गङ्गाविमल
कैलाशाचलधामकर प्रणमामि हरम् ॥ ६७ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।
इति मदनगृहम् ।

---

१ ग द्विजसहितम् । २ ग कमल । ३ ग श्रुति । ४ ख महितम् । ५. ग 'वसुयतिमहित' नास्ति । ६ 'पवनविरहित मदनगृह' इति पाठात् श्रुतिकटुत्वदोषनिरास स्यात् । (स०) ७ ग वारिज । ८ ग वरकर । ९ ग चन्द्रकजुत । १० ग हरितानीपम् । ११ ख ग भवभवभयहरणम् । १२ ग त्रैलोक्यहितम् ।

२७ मरहट्ठा [महाराष्ट्रम्]

प्रथम कुरु टगण पुनरपि डगण हारपरिमितमतिशोभि
देपे कुरु हार मधुमय सारं कविजनमानसलोभि ।
गगनेन्दौ विरति तदनु वसुयति पुनरपि विधुयुगलेऽपि,
मरहट्ठावृत्त कविजनचित्ते भवयुगरचितकलेऽपि ॥ ९८ ॥

यथा–

गर्वविनिभासुर हतकंसासुर भुवि कृतविमलविलास
मुरलीभासितकर वृषभासुरहर धरतरणीकृतरास[1] ।
दावानलवासक गोधनपालक हिमकरकरनिभहास
कृपया कुरु दृष्टि मयि सुखवृष्टि मुनिहृदि[2] अनिशविकास ॥ ९९ ॥

इति मरहट्ठा ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके चतुर्थं पद्यावलीप्रकरणम् ।

–

पञ्चमं सवया-प्रकरणम्

अथ सवया[1]

सप्तभकारविभूपित-पिंगलभापितमन्तगुरूपहितं[2],
अन्यदयापि तथैव भभूपितमन्तगुरुद्वयसविहितम् ।
अष्टसकारमयो गुरुसङ्गतमेतदयान्यदपि प्रथितं,
सप्तजकारविराजितमन्त्यलघु[3] गुरु[4]भासितमन्यदिदम् ॥ १ ॥
अन्यदिदं [मुनिनायकभापितमन्त्यलघु गुरुयुग्मसुयुक्तं,
योगचतुष्कलपूजित][5]मन्यदिदं युगवह्निकलाभिरमुक्तम्[6] ।
पण्डितमण्डलिनायकभूपतिमानसरञ्जनमद्भुतवृत्तं,
सर्वमिदं सवयाभिधमुक्तमशेपकवीन्द्रविमोहितचित्तम् ॥ २ ॥

अथैतेषां भेदानां नामानि

मदिरा मालती मल्ली मल्लिका माधवी तथा ।
मागधीति च नामानि तेपामुक्तान्यशेपतः ॥ ३ ॥

क्रमेणोदाहरणानि[7], यथा[8]—

१ मदिरा सवया

भालविराजितचन्द्रकलं नयनानलदाहितकामवरं,
बाहुविराजितशेपफणीन्द्रफणामणिभासुरकान्तिधरम् ।
भूधरराजसुतापरिमण्डितखण्डित[9]नूपुरदण्डधरं,
नौमि महेशमशेपसुरेशविलक्षणवेषमुमेश[10]हरम् ॥ ४ ॥

इति मदिरा सवया ।

२ मालती सवया

चन्द्रकचारुचमत्कृतिचञ्चलमौलिविलुम्पित-[11]चन्द्रकिशोभं,
वन्यनवीनविभूपणभूषितनन्दसुतं वनिताधरलोभम् ।
धेनुकदानवदारणदक्ष-दयानिधिदुर्गमवेदरहस्यं
नौमि हरिं दितिजावलिमालित[12]-भूमिभरापनुदं सुयशस्यम् ॥ ५ ॥

इति मालती सवया ।

---

१ ग. सवईया । २ ग विहितम् । ३ ख ग लघु । ४. ग मुनि । ५ कोष्ठकगतोंशो नास्ति क प्रतौ । ६ ग कलारसमुक्तम् । ७ ग तासां क्रमेणोदाहरणानि । ८ ग तद्यथा । ९ क प्रतौ 'खण्डित' शब्दो नैव । १० ग मुनेश । ११ ग विलम्बित । १२ ग दितिजावलिभारित ।

३ मल्ली सवया

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर गलमस्तकमाल
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर विगृहीतकपालम् ।
गरलानलभूषित-दीनदयालु-मदभ्रमरोद्धत[1]-दानवकाल
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेष[2]-कलानिधिभासितभालम् ॥ ६ ॥

इति मल्ली सवया ।

४ मल्लिका सवया

धुनोति मनो मम चम्पककाननकम्पितकेसिरय पवन
कथमपि नव करोमि तथापि मृषा कदन कुरुते मदन ।
कलानिधिरेव भलादयि ! मुञ्चति वह्निकलापमलीकहिम
विधेहि सखा मतिमेति यथा सविधेन यथा व्रजभूमहिम ॥ ७ ॥

इति मल्लिका सवया ।

५ माधवी सवया

विलोलविलोचनकोणविलोकित-मोहितगोपवधूजनचित्त
मयूरकलापविकल्पितमौलिरपारकलानिधिबालचरित्र ।
करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसुन्दरकुन्दसुदन्त
सखीमिति[2] कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्त ॥ ८ ॥

इति माधवी सवया ।

६ मागधी सवया

माधव[3] विधुरियं भवने तव कथयति पीतवसनमभिरामम्
अमधरनीलगगनपद्धतिरपि तव तनुरुचिमनुसरति निकामम् ।
इन्द्रधरासनमपि तव भकाति मालितवरकलभासाक्षीर्ण
[कुरु मम वचनं सफलय हृदय राधामरमधुविरचितसोमम्] ॥ ९ ॥

इति मागधी सवया ।

उक्तानि सवयास्यानि छन्दांस्येतानि कानिचित् ।
ऊह्यानि मध्यमालोक्य[5] शेषाणि निजबुद्धिभि ॥ १० ॥

---

१ ख मदोद्धत । २ ख. सखीरिति । ३ ख माधव । ४ चतुर्थचरणं ख प्रती नास्ति । ५ ख मालोक्य ।

७ घनाक्षरम्[1]

रसभूमिवर्णयतिक[2] तदनु च शरभूमिविरतिक यत्तु[3] ।
विधुवह्निवर्ण[4]सङ्गतमिदमप्रतिम घनाक्षर वृत्तम् ॥ ११ ॥

यथा–

रावणादिमानपूर-दूरनाशनेति वीर
राम कि विशालदुर्गमायाजालमेव ते,
मैथिलीविलासहास धूतसिन्धुवासर(रा)स[5]
भूतपतिशरासनभङ्गकर[6] भासते ।
दीनदुःखदानसावधान पारावारपार[7]-
यान-वीरवानरेन्द्रपक्ष किं महामते !,
ते रणप्रचण्डबाहुदण्डमेव हेतुमत्र
बाणदावदग्धशत्रुसैनिका प्रकुर्वते ॥ १२ ॥

इति घनाक्षरम् ।

इति वृत्तमौक्तिके वार्त्तिके[8] पञ्चम सवया[9] प्रकरणम् ।

---

१ ग. तद्यथा आर्या । २ ग य कि । ३ ग कमनु । ४. ग विधुवर्णो वह्नी । ५ ग भाससार । ६. ग सगकर । ७ ग पारावान । ८ ग नास्ति । ९ ग सवाय ।

षष्ठं गलितकप्रकरणम्

अथ गलितकानि—

१ गलितकम्

चरणम पञ्चपरिमित जभधिकलयुग
प्रविलसति यस्मिश्चरणे मधुगुर्वनुगम्[1] ।
विभुयुगकलारचितमहिपतिफणिकलितक
वरकविजनमानसहरं[2] भवति गलितकम् ॥ १ ॥

यथा—

मल्लि[3]-भासतियूथिपङ्कजकुन्दकलिके
कुमुदचम्पककेतकिपरिमलमलदलिके ।
मलयपर्वतशीतल त्वयि वातपवन
हरिवियोगतनोरिव मम कथं दहन ॥ २ ॥

इति गलितकम् ।

२ विगलितकम्

ठगणद्वयं[5] भवति चतुष्कलद्वयसङ्गतं
तदनु च चरकलं भवति सुललितकविसम्मतम् ।
दहनपक्षकलाविलसितविमलसकलचरणं
विगलितकमेतद् फणिपतिभणितसुखकरणम् ॥ ३ ॥

यथा—

भवजलधितारिणि[6] सकलतापहारिणि गङ्गे
अघवहनकारिणि रविभारिणि हरकृतसङ्गे ।
गिरिभिकरदारिणि मनोहारिणि तरलभङ्गे
त्वयिमि वारिणि हंसहारिणि तव विमलतरङ्गे ॥ ४ ॥

इति विगलितकम् ।

३ सङ्गलितकम्

जगणयुगेन विराजितं
पञ्चकलेन समाश्रितम् ।
सङ्गलितकमिति कल्पितं
फणिपतिपिङ्गलजल्पितम् ॥ ५ ॥

---

१ ख पूर्वयुग्मः । २ ग मानसहर तवति । ३ ग मल्लिका । ४ ख कुन्दचम्पककेतकि परिमलवलितके । ५ ग ठगणद्वयम् । ६ ख भवजलधितरणि ।

धृतिमवधारय मानसे,
हरिमपि[1] गततनुरानशे ।
सखि ! तव वचन मानये,
ननु वनमालिनमानये ॥ ६ ॥

इति सङ्गलितकम् ।

४ सुन्दरगलितकम्

ठगणद्वयेन भाषित,
लादित्रिकलविकासितम्[2] ।
सुन्दरगलितकनामक,
वृत्तममलरुचिधामकम् ॥ ७ ॥

यथा–

विगलितचिकुरविलासिनी,
नवहिमकरनिभहासिनीम् ।
सुबलराधिकान्तामये[3],
तनुजितकनका कामये ॥ ८ ॥

इति सुन्दरगलितकम् ।

५ भूषणगलितकम्

ठगणद्वितय प्रथम चरणे,
रसभूमिसुसख्यकलाभरणे ।
त्रिकलद्वितय पुनरेव यदा,
फणिभाषित-भूषणकेति तदा[4] ॥ ६ ॥

यथा–

रुचिरवेणुविरावविमोहिता
द्रुतपदा कृतरासरसे[5] हिता ।
हरिमदूरवने हरिणेक्षणा
स्तमनुजग्मुरनन्यगतेक्षणा.[6] ॥ १० ॥

इति भूषणगलितकम् ।

६ मुखगलितकम्

षट्कल प्रथममथ वेदत्रिकलयुत,
पुनरपि यच्चरणशेषगतवलयचितम् ।

---

१ ग हरिमपगत । २ ग बिलासितम् । ३ ग सुबलिराधिकाम् । ४. ग यदा । ५ ख ग रसे । ६. ग क्षणम् ।

गगनपलकमाकृतचरणविकासित
मुखगलितकमिव वरफणिपतिभाषितम् ॥ ११ ॥

यथा–

ब्रह्मभवादिकनुतपदपङ्कजयुगल
माश्रितभक्तजनभयभवदारुणशमनम् ।
दीनकृपानिधि-भवजलराशितारकं
नौमि हरिं कमलनयनमशुभदारकम्[1] ॥ १२ ॥

इति मुखगलितकम् ।

७. विलम्बितगलितकम्

आदौ षट्कल तदनु चान्तगेन सहित
जलनिधिकलचतुष्कमहिनायकेन विहितम् ।
सप्तमे जगणेन सहितं[2] फणीन्द्रभणित
विलम्बितास्यमेतदखिलसुकवीन्द्रगणितम्[3] ॥ १३ ॥

यथा–

नमामि पङ्कजाननं सकलदुःखहरणं
भवाम्बुराशितारकं निखिलवन्द्यचरणम् ।
कपोललोलकुण्डलं[4] मकरभूषणसहितं
विलासहासपेशलं सरसरासमहितम् ॥ १४ ॥

इति विलम्बितगलितकम् ।

८ [१] समगलितकम्

द्विगणविभूषं प्रथममवेहि पञ्चकलयुगयुतं[5]
तदनु चतुष्कलयुगसहितं विरतौ लगुरुमहितम्[6] ।
चरयुगमामासहितमभुतमपिङ्गलभाषित
समगलितमिदमतिसुखकरसुललितपदभासितम् ॥ १५ ॥

यथा–

त्रिदशसुरगणविनुतपङ्कजकोमलचरणयुगलं
पीतवसनविलसितचारुशरीरमनुत्तमकम्बुगलम् ।
नौमि निगमपरिगदितमपारगुणयुतमिन्दुमुखं
नन्दतनूजमखिलगोपवधूजनदत्तसुखम् ॥ १६ ॥

इति समगलितकम् ।

---

१ ग. दारकम् । २ ग सहितम् । ३ ग भणितम् । ४ ग कण्ठावरलम् ।
५ ग युक्तं । ६ ग युतम् । ७ ग लघुगुरुसहितम् ।

८ [२] अपरं समगलितकम्

समगलितक प्रभवति[1] विषमे यदि डगणत्रिकलाभ्यां कलितकम्[2] ।
मुखगलितक समचरणे किल भवति निखिलपण्डितमुखवलितकम्[3] ॥ १७ ॥

यथा–

विभूतिसित शिरसि निवसिता[4]-नुपमनदीभवपङ्कजविलसितम् ।
अहिप[5]-रुचिर किमपि विलसिता[6] मम हृदि वेदरहस्यमतिसुचिरम् ॥ १८ ॥

इति द्वितीय समगलितकम् ।

८ [३] अपर सङ्कलितकम्

विपरीतस्थितसकलपदयुतमेव समगलितक सङ्कलितकम्[7] ॥ १९ ॥

विपरीतपठितमिदमेवोदाहरणम् । यथा–

शिरसि निवसिता[8]नुपमनदीभव-पङ्कजविलसित विभूतिसितम् ।
किमपि विलसिता मम हृदि वेदरहस्यमतिसुचिर अहिप[9]-रुचिरम् ॥ २० ॥

इति द्वितीय सङ्कलितकम् ।

८-[४] अपर लम्बितागलितकम्

शरमितडगणै स्याद् भाविता[10] निखिलपादे
विषमजगणमुक्ता चान्तगा[11]विगतवादे ।
युगयुगकृतमात्राः कल्पिता[12] यदनुपाद,
फणिपतिभणितेय लम्बिता त्यज विषादम् ॥ २१ ॥

यथा–

राजति वशीरुतमेतत् काननदेशे,
गच्छति कृष्णे तस्मिन्नथ मञ्जुलकेशे ।
याहि मया सार्द्धमितो रासाहितचित्ते,
तत्सविधे प्रेमविलोले तेन च वित्ते[13] ॥ २२ ॥

इति द्वितीय लम्बितागलितकम् ।

९ विक्षिप्तिकागलितकम्

शरोदितकलो यदि भाति[14] गणो विषमस्थितियुत
समस्थित(ति)विभूषितेन तदनु चतुष्कलेन युत ।

---

१ ग 'समगलितक' नास्ति, भवति च । २ ग सकलितकम् । ३ ग मुखवतिलकम् । ४ ग निवासिता । ५ ग फणिप । ६ ग विलसता । ७ ग नास्ति ८ ग विलासिता । ९ ख ग फणिप । १० ग भावित । ११ ग चान्तगावितवादे । १२ ग कल्पित । १३ ग चलचित्ते । १४ क भावि ।

शरोदितगणै परिभाविससकलचरणै सहिता
कवीन्द्रकथिताम्तगुरु[1] किल विक्षिप्तिका महिता[2] ॥ २३ ॥

यथा–

चन्द्रकथितमुकुटमखिलमुनिमनहृदयसुखकरण
धृतवेणुकल वरमक्तजमस्यादभुत शरणम् ।
वृन्दावनभूमिषु वल्लवनारीमनोहरण
रुचिर निजचेतसि चिन्तय गोवर्द्धनोद्धरणम् ॥ २४ ॥

इति विक्षिप्तिकावर्णितकम् ।

१ ललितावर्णितकम्

पूर्वं कथिता विक्षिप्तिकैव[4] चरणसुकलिता
ठगणे[5] चतुष्कलेन भूषिता प्रभवति ललिता ॥ २५ ॥

यथा–

कमलापति कमलसुलोचनमिन्दुनिमानन
मञ्जुलपरिपीतवाससमपारगुणकाननम् ।
सनकादिकमानसजनितनिवाससमस्तनुतं
प्रणमामि हरिं निजभक्तजनस्य हिते निरतम ॥ २६ ॥

इति ललितावर्णितकम् ।

११ विषमितावर्णितकम्

पूर्वं द्वितीयचरणे विषमस्थितिकपञ्चकल
तुर्ये तृतीयचरणे प्रथमं भवति चतुष्कल[7] ।
सकले समस्थित(ति)वेदकलो[8] विरतौ विरचिता
या(यो)गेन[9] शरोक्तगणेन च सा भवति विषमिता ॥ २७ ।

यथा–

वेणु करे[1] कलयता सखि ! गोपकुमारकेण
पीताम्बरावृतशरीरभृता भवतारकेण ।
प्रेमोद्गतस्मितरुचा वनजभूषणशोभिना
चेतो ममाऽपि कवलीकृतं मानसलोभिना ॥ २८ ॥

इति विषमितावर्णितकम् ।

---

१ प लहिताः । २ ब गुरु । ३ प महिताः । ४ ग चरणम् । ५ ग विक्षिप्तिकैः कथिता च । ६ ग ठगणेन । ७ ग तुर्ये: च च कलो । ८ ब. सावेन ।
१ प वेणुकरे ।

१२ मालागलितकम्

षट्कलविरचित तदनु च दश[1]-सम्यङगण-
परिभावितचरणमुदेति मालाभिधं गलितकम् ।
मध्यगुरुजगणेन विरचितसमस्तसमगण-
रसोदधिकलकमहीन्द्रफणिवदने[2] वलितकम् ॥२६॥

यथा[3]–

कालियकुलविभञ्जक-मसुरविडम्बक-दनुजविलुम्पक-
मखिलजनस्तुतशुभचरितमुनिनुत,
नौमि विमलतर सकलसुखकर कलिकलुषहर,
भवजलधितरिं हरिं पालने सुनियतम् ।
कंसहृदि विकट मुनिगणनिकट विनिहतशकट
परिधृतमुकुट जगद्विरचनेऽतिचतुर,
भक्तजनशरण भवभयहरण वरसुखकरण
स्वपदवितरण जगन्नाशने धृतधुरम् ॥ ३० ॥

इति मालागलितकम् ।

१३ मुग्धमालागलितकम्[4]

मालाभिख्यमेव[5] हि भवति चतुष्कल-
युगरहित फणिपवित्त[6] मुग्धपूर्वम् ॥ ३१ ॥

यथा[7]–

वन्दे नन्दनन्दनमनवरत मरकतसुतनु धृतरुचि मुरारिमा(मी)श,
वादितवशमानतमुनिजन-नारदविरचितगानमवनीमणीमनीषम् ।
कारितरासहासपरवशरत विरचितसुरत विततकुङ्कुमेन पीत,
त देव प्रमोदभरसुविदित मुदितसुरनुत सततमात्मजेन गीतम् ॥ ३२ ॥

इति मुग्धमालागलितकम् ।

१४ उद्गलितकम

मुग्धपूर्वकमेव डगणयुगलेन रहितपदमुद्गलितकम् ॥ ३३ ॥

यथा[8]–

नन्दनन्दनमेव कलयति न किञ्चिदिह जगति सारमपर,
पुत्रमित्रकलत्रमखिलमपि चित्रघटितमिव भाति न परम् ।

---

१ ग शरसस्य । २ ग फणिपवनेव । ३. ग ऊह्यमुदाहरण, उदाहरण नास्ति । ४ ग मुग्धामालागलितकम् । ५ ग मालाभिसख्यमेव । ६ ग वित्त । ७ ग ऊह्यमुदाहरण, उदाहरणं नास्ति । ८ ग लक्षणानुसारादेव कविभिरुदाहरणमूह्यम्, उदाहरणं नास्ति ।

हारोदितगण परिभावितसकलचरणै सहिता[1]
कवीन्द्रकथितान्तगुरु[2] किल विक्षिप्तिका महिता[3] ॥ २३ ॥

यथा–

चन्द्रकचितमुकुटमतिसमुनिजनहृदयसुखकरण
धृतवेणुकल चरमकमलमस्यादमृत धारणम् ।
वृन्दावनभूमिषु वल्लवनारीमनोहरण,
रुचिरं निजचेतसि चिन्तय गोवर्द्धनोद्धरणम्[4] ॥ २४ ॥

इति विक्षिप्तिकानामविलतकम् ।

१ ललितापविलतकम्

पूर्वं कथिता विक्षिप्तिकैव[5] परमसुकलिता
ठगणे[6] चतुष्कलेन भूषिता प्रभवति ललिता ॥ २५ ॥

यथा–

कमलापतिं कमलसुलोचनमिन्दुनिभाननं,
मञ्जुलपरिपीतवाससमपारगुणकाननम् ।
सनकादिकमानसमभितनिवाससमस्तनुत
प्रणमामि हरिं निजभक्तजनस्य हिते निरतम् ॥ २६ ॥

इति ललितापविलतकम् ।

११ विषमितापविलतकम्

पूर्वं द्वितीयचरणे विषमस्थितिकपञ्चकल
तुर्ये तृतीयचरणे प्रथम भवति चतुष्कल ।
सकले समस्थित(ति)वेदकलो[7] विरतौ विरचिता
मा(यो)गेन[8] हारोक्तगणेन च सा भवति विषमिता ॥ २७ ।

यथा–

वेणु करे[9] कलयता सखि ! गोपकुमारकेण
पीताम्बरावृतशरीरभृता मनतारकेण ।
प्रेमोद्गतस्मितरुचा वनजभूषणशोभिना
चेतो ममापि कवलीकृतं मानसलोभिना ॥ २८ ॥

इति विषमितापविलतकम् ।

---

१ म सहिता। २ म गुरु। ३ म महिताः। ४ प. धरणम्। ५ म विक्षिप्तिकैः कथिता च। ६ म ठगणेन। ७ म तुर्ये। ८ म कलो। ९ प तानेन। १ प वेणुकरे।

१२ मालागलितकम्

षट्कलविरचित तदनु च दश[1]-सख्यडगण-
परिभावितचरणमुदेति मालाभिध गलितकम् ।
मध्यगुरुजगणेन विरचितसमस्तसमगण-
रसोदधिकलकमहीन्द्रफणिवदने[2] वलितकम् ॥२९॥

यथा[3]–

कालियकुलविभञ्जक-मसुरविडम्बक-दनुजविलुम्पक-
मखिलजनस्तुतशुभचरितमुनिनुत,
नौमि विमलतर सकलसुखकर कलिकलुषहर,
भवजलधितरि हरि पालने सुनियतम् ।
कसहृदि विकट मुनिगणनिकट विनिहतशकट
परिवृतमुकुट जगद्विरचनेऽतिचतुर,
भक्तजनशरण भवभयहरण वरसुखकरण
स्वपदवितरण जगन्नाथने धृतधुरम् ॥ ३० ॥

इति मालागलितकम् ।

१३ मुग्धमालागलितकम्[4]

मालाभिख्यमेव[5] हि भवति चतुष्कल-
युगरहित फणिपविन्न[6] मुग्धपूर्वम् ॥ ३१ ॥

यथा[7]–

वन्दे नन्दनन्दनभनवरत मरकतसुतनु धृतरुचि मुरारिमा(मी)श,
वादितवशमानतमुनिजन-नारदविरचितगानमवनीमणीमनीषम् ।
कारितरासहासपरवशरत विरचितसुरत विततकुङ्कुमेन पीत,
त देव प्रमोदभरसुविदित मुदितसुरनुत सततमात्मजेन गीतम् ॥ ३२ ॥

इति मुग्धमालागलितकम् ।

१४. उद्गलितकम

मुग्धपूर्वकमेव डगणयुगलेन रहितपदमुद्गलितकम् ॥ ३३ ॥

यथा[8]–

नन्दनन्दनमेव कलयति न किञ्चिदिह जगति सारमपर,
पुत्रमित्रकलत्रमखिलमपि चित्रघटितमिव भाति न परम् ।

---

१ ग दारसख्य । २ ग फणिपवनेव । ३ ग ऊह्यमुदाहरण, उदाहरण नास्ति । ४ ग मुग्धामालागलितकम् । ५ ग मालाभिसख्यमेव । ६ ग वित्त । ७ ग ऊह्यमुदाहरण, उदाहरणं नास्ति । ८ ग लक्षणानुसारादेव कविभिरुदाहरणमूह्यम्, उदाहरणं नास्ति ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टसूनु-कविचन्द्रशेखरभट्टप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

द्वितीयः खण्डः

प्रथमं वृत्तनिरूपण - प्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

शिरोऽदिव्यद्[1] गङ्गाजलभवकलालोलकमला-
न्यल शुण्डादण्डोद्धरणविषयान्यारचयता ।
जटाया कृष्टाया द्विरदवदनेनाथ रभसा,
दुदश्रुर्गौरीश क्षपयतु मन क्षोभनिकरम् ।। १ ।।
मात्रावृत्तान्युक्त्वा कौतूहलत फणीन्द्रभणितानि ।
अथ चन्द्रशेखरकृती वर्णच्छन्दासि कथयति स्फुटत ।। २ ।।

[अथैकाक्षरं वृत्तम्]

१ श्री

यो ग । सा श्री ।। ३ ।।

यथा—

श्री-र्मा-मव्यात् ।। ४ ।।

इति श्री १

२ अथ इ

ल इ-रि-ति ।। ५ ।।

यथा—

श-म कु-रु ।। ६ ।।

इति इ २

अत्रैकाक्षरस्य प्रस्तारगत्या द्वावेव भेदौ भवत[2] ।

इत्येकाक्षरं वृत्तम् ।

---

१. ख वोप्यद् । २ पक्तिरिय नास्ति क प्रतौ ।

अथ द्व्यक्षरम्

तत्र-

१ कामः

गौ चेत् कामो ।
मात्र प्रोक्तः ॥ ७ ॥

यथा

वन्दे कृष्णम् ।
केशी-घृष्णम् ॥ ८ ॥

इति कामः १

४ अथ मही

लगौ महीम् ।
वदस्यहिः ॥ ९ ॥

यथा-

रमापते ।
नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

इति मही ४

५ अथ सारम्

वक्र-लौ च ।
सार-मत्र ॥ ११ ॥

यथा-

कंस-काल ।
नौमि बाल ॥ १२ ॥

इति सारम् ५

६ अथ मधु

द्विलघु इति ।
मधुरिति ॥ १३ ॥

यथा-

मतिभव ।
मम भव ॥ १४ ॥

इति मधु ६

अत्रापि द्व्यक्षरस्य प्रस्तारगत्या चत्वार ४ एव भेदा भवन्तीति तावन्तोऽप्युक्ताः ।

इति द्व्यक्षरम् ।

अथ त्र्यक्षरम्

तत्र-

७ ताली

पादे या म प्रोक्ता ।
ताली सा नागोक्ता ॥१५॥

यथा-

गोवृन्दे सञ्चारी ।
पायाद् दुग्धाहारी ॥ १६ ॥

इति ताली ७. 'नारी'त्यन्यत्र ।

८ अथ शशी

शशीवृत्तमेतत् ।
यकारो यदि स्यात् ॥ १७ ॥

यथा-

मुदे नोऽस्तु कृष्ण ।
प्रियाया सतृष्ण ॥ १८ ॥

इति शशी ८

९. अथ प्रिया

वल्लकी राजते ।
सा प्रिया भासते ॥ १९ ॥[1]

यथा-

राधिका-रागिणम् ।
नौमि गोचारिणम् ॥ २० ॥

इति प्रिया ९

१०. अथ रमण

क्रियते सगण ।
फणिना रमण ॥ २१ ॥

यथा-

सखि मे भविता ।
हरिरप्यचिता ॥ २२ ॥

इति रमण १०

---

१ वृत्तमेतद् रगणेनाहृते. । (स)

११ अथ पञ्चालम्[1]

पादेषु तो यहि ।
पञ्चाल-वृत्त हि ॥२३॥

यथा–

स देहि गोपेश ।
मन्ये महत्क्लेश ॥ २४ ॥

इति पञ्चालम् ११

१२ अथ मृगेन्द्र

नरेन्द्र विराजि ।
मृगेन्द्रमवेहि ॥ २५ ॥

यथा–

विलोमवतस ।
नमो धृतवस ॥ २६ ॥

इति मृगेन्द्र १२

१३ अथ मन्दर

भो यदि सुन्दरि ।
मन्दरमेव हि ॥ २७ ॥

यथा–

नन्दसकुन्तल ।
नौमि सुमङ्गल ॥ २८ ॥

इति मन्दरः १३

१४ अथ कमलम्

नममुकलय ।
कमलममल ॥ २९ ॥

यथा–

अहिपशयन ।
शमिह कलय ॥ ३ ॥

इति कमलम् १४

अत्रापि त्र्यक्षरस्य प्रस्तारगत्या अष्टौ भेदा भवन्तीति तावन्तोऽप्युदाहृता ।

इति त्र्यक्षरम् ।

---

१ क प्रतौ पाञ्चालवृत्तस्य लक्षणमुदाहरणं नोल्लिखिते ।

अथ चतुरक्षरम्

तत्र–

१५. तीर्णा

यस्मिन् कर्णौ वृत्ते स्वर्णौ ।
सा स्यात् तीर्णा नागोत्कीर्णा ॥ ३१ ॥

यथा–

गोपीचित्ताकर्षे सक्तम् ।
वन्दे कृष्ण गोभिर्युक्तम् ॥ ३२ ॥

इति तीर्णा १५. 'कन्या' इत्यन्यत्र ।

१६. अथ धारी

पक्षिभासि मेरुधारि ।
वारिराशि वर्णवारि[1] ॥ ३३ ॥

यथा–

गोपिकोडुसङ्घचन्द्र ।
नौमि जन्मपूतनन्द ॥ ३४ ॥

इति धारी १६

१७ अथ नगाणिका

विधेहि ज ततो गुरुम् ।
नगाणिका भवेदरम् ॥ ३५ ॥

यथा–

विलोलमौलिभासुरम् ।
नमामि सहृतासुरम् ॥ ३६ ॥

इति नगाणिका १७

१८ अथ शुभम्

द्विजवरमिह यदि ।
विदधत, शुभमिति ॥ ३७ ॥

यथा–

अशुभमपहरतु ।
हृदि हरिरुदयतु ॥ ३८ ॥

इति शुभम् १८

अत्रापि चतुरक्षरस्य प्रस्तारगत्या षोडश १६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यन्तभेद-युक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कयाऽत्र चत्वारो भेदा प्रदर्शिताः, शेषभेदा सुधीभिरूह्या इति।*

इति चतुरक्षरम् ।

---

१ ख वर्णधारि ।

*शेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

अथ पञ्चाक्षरम्

तत्र–

१९ सम्मोहा

आदौ म प्रोक्त पश्चात् कर्णोक्तम् ।
बाणार्णैर्युक्तं सम्मोहावृत्तम् ॥ ३९ ॥

यथा–

वन्दे गोपालं वंश्यानां कालम् ।
गोपीगोपानां पालं दीनानाम् ॥ ४० ॥

इति सम्मोहा १९

२ अथ हारी

यस्मिन् तकार पक्षोक्तहारः ।
पञ्चार्णयुक्तं हारीति वृत्तम् ॥ ४१ ॥

यथा–

आनन्दकारी गोपीविहारी ।
मां पातु बाल' केलीरसाल' ॥ ४२ ॥

इति हारी २

२१ अथ हंस

भाविरमान्त कुण्डलयुक्त' ।
मध्यगत' सो यत्र स हंस ॥ ४३ ॥

यथा –

नन्दकुमार सुन्दरहार' ।
गोकुलपाल पातु स बाल' ॥ ४४ ॥

इति हंसः २१

२२ अथ प्रिया

सगणाहिता लगसंयुता ।
भवतीह या किल सा प्रिया ॥ ४५ ॥

यथा –

सखि ! गोकुले सुखसंकुले[1] ।
व्रजसुन्दरो ननु निर्दय' ॥ ४६ ॥

इति प्रिया २२

---

१ ख 'सुखसंकुले' नास्ति ।

२३. अथ यमकम्

नमिह कुरु लयुगमथ ।
इति यमकमनुकलय ॥ ४७ ॥

यथा–

असुरयम शमिह मम ।
अनुकलय फणिवलय ॥ ४८ ॥

यथा वा–

लुषहर धरणिधर ।
दलितभव सुजनमव ॥ ४९ ॥

इति यमकम् २३

अत्र प्रस्तारगत्या पञ्चाक्षरस्य द्वात्रिंशद् ३२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचनोक्ताः शेषास्तूह्या ।*

इति पञ्चाक्षरम् ।

अथ षडक्षरम्

तत्र–

२४ शेषा

नागाधीशप्रोक्त सर्वैर्दीर्घैर्युक्तम् ।
षड्भिर्वर्णैर्वृत्त[1] शेषाख्य स्याद् वृत्तम् ॥ ५० ॥

यथा–

कसादीना काल गोगोपीना पाल ।
पायान्मायाबाल मुक्ताभूषाभाल[2] ॥ ५१ ॥

इति शेषा २४

२५. अथ तिलका

यदिसद्वितयाचित सर्व पदा ।
तिलकेति फणिर्वदतीह तदा ॥ ५२ ॥

यथा–

कमनीयवपु शकटादिरिपु ।
जयतीह हरि भवसिन्धुतरि ॥ ५३ ॥

इति तिलका २५

---

१ ग मित्त इव । २ ख माल॰ ।

*टिप्पणी—शेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

२६ अथ विमोहम्

पक्षिराजद्वय यत्र पादस्थितम् ।
पिङ्गलेनोदित तद् विमोह मतम् ॥ ५४ ॥

यथा–

गोपिकामानसे य सदा ध्यानगो ।
पातु मां सेवक सोऽङ्गजो वकम्[1] ॥ ५५ ॥

इति विमोहम् २६

विज्जोहा' इति स्त्रीलिङ्गं पिङ्गले*[1] ।

२७ अथ चतुरंसम्

प्रथमनकारं[2] तदनु यकारम् ।
कुरु चतुरंसे फणिकुलहंसे ॥ ५६ ॥

यथा–

विनिहतकंसं तरसवतंसम् ।
मम भृतवंश सुरकुलहंसम् ॥ ५७ ॥

इति चतुरंसम् २७

चउरंसा' इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले* ।

२८ अथ मन्थानम्

पादे द्विर्त देहि षड्वर्णमाधेहि ।
जानीहि नागोक्तमन्थानमेतद्धि ॥ ५८ ॥

यथा

धूतासुराधीश गोगोपकाधीश ।
मां पाहि गोविन्द गोपीजनानन्द[3] ॥ ५९ ।

इति मन्थानम् २८. स्त्रीलिङ्गमन्यत्र ।

२९. अथ शङ्खनारी

यदा स्तो यकारौ रसप्रोक्तवर्णौ ।
तदा शङ्खनारी फणीन्द्रोदिता स्यात् ॥ ६० ॥

यथा

व्रजे रासकारी भवत्तापहारी ।
वपूर्मि समतो हरिः पातु नः ॥ ६१ ॥

इति शङ्खनारी २९ 'सोमराजी' त्यन्यत्र ।

---

१ ख पतिनरित्वं नास्ति । २ क ख पुस्तके नकार' स्थाने 'ननकार' पाठ- सोऽसमीचीन (स) ३ ख ननाद ।

टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलम्परिच्छेद २ पद्य ४५

*टिप्पणी—२ ,, ,, ,, ४७

३०. अथ सुमालतिका

जकारयुगेन विभाति युतेन ।
अहिर्वदतीति सुमालतिकेति ॥ ६२ ॥

यथा— व्रजाधिपबाल विभूषितबाल[1] ।
सुरारिविनाश नमाम्यनलाश ॥ ६३ ॥

इति सुमालतिका ३० 'मालती'ति पिङ्गले*[1] ।

३१ अथ तनुमध्या

यस्या शरयुग्म कुन्तीसुतयुग्मे ।
अन्त्ये खलु साध्या सा स्यात्तनुमध्या ॥ ६४ ॥

यथा— राधासुखकारी वृन्दावनचारी ।
कंसासुरहारी पायाद् गिरिधारी ॥ ६५ ॥

इति तनुमध्या ३१

३२ अथ दमनकम्

नगणयुगलमिह रचयत ।
दमनकमिति परिकलयत ॥ ६६ ॥

यथा— व्रजजनयुत सुरगणवृत ।
जय मुनिनुत व्रजपतिसुत ॥ ६७ ॥

इति दमनकम् ३२

अत्र प्रस्तारगत्या षडक्षरस्य चतुःषष्टि ६४ भेदा भवन्ति, तेषु आद्यन्त-सहिता कियन्तो भेदा उक्ता, शेषभेदा सुधीभिरूह्या। ग्रन्थविस्तरशङ्कया नात्रोक्ता इति ।*[2]

इति षडक्षरम् ।६।

अथ सप्ताक्षरम्

तत्र— ३३ शीर्षा

वर्णा दीर्घा यस्मिन् स्युः पादेऽक्षीणा सख्याका ।
नागाधीशप्रोक्तं तत् शीर्षाभिख्यं वृत्तं स्यात् ॥६८॥

यथा— मुण्डानां मालाजाले-र्भास्वत्कण्ठं भूतेशम् ।
कालव्यालैः खेलन्तं वन्दे देवं गौरीशम् ॥ ६९ ॥

इति शीर्षा ३३

---

१ ख भाल ।
*टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलम्-परिच्छेद २ पद्य ५४ ।
*टिप्पणी—२ शेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

१४ अथ समानिका

पक्षिराजभासिता जेन संविभूषिता ।
भृङ्गगेन शोभिता सा समानिका मता ॥ ७० ॥

यथा–

फुल्लपङ्कजाननं कोमिशोभिकाननम् ।
बल्लवीमनोहरं नौमि राधिकावरम् ॥ ७१ ॥

इति समानिका १४

१५ अथ सुवासकम्

द्विजमिह धारय भगनु च कारय ।
भवति सुवासक मिति गुणभासक ॥ ७२ ॥

यथा–

विबुधतरङ्गिणि भुवि कृत[१]रिङ्गिणि ।
तरलतरङ्गिणि जय हरसङ्गिणि ॥ ७३ ॥

इति सुवासकम् १५

१६ अथ करहञ्चि

नगणमिह धेहि तदनु समवेहि ।
इति किर[ण]रचि भवसि करहञ्चि ॥ ७४ ॥

यथा–

व्रजभुवि विलास युवतिकृत[रा]स ।
जय मिहतवैरस जघन[२]कृतधरय ॥ ७५ ॥

इति करहञ्चि १६

१७ अथ कुमारललिता

जकारयुतकर्णा मुनीन्द्रमितवर्णा ।
लघुद्वितयमध्या कुमारललिता स्यात् ॥ ७६ ॥

यथा–

व्रजाधिपकिशोरं नवीनदधिचोरम् ।
कुमारललित [तं] नमामि हृदि सततम् ॥ ७७ ॥

इति कुमारललिता १७

१८ अथ मधुमती

नगणयुगयुता तदनु ग-महिता ।
वदति मधुमती-महिररतिमुमति ॥ ७८ ॥

१ क 'युत । २ ख मथन ।

यथा–

दितिसुतकदन शशधरवदन ।
विलसतु हृदि न तनुजितमदन ॥ ७९ ॥

इति मधुमती ३८.

३९ अथ मदलेखा

आद्यन्ते कृतकर्णा शैलै सम्मितवर्णा ।
मध्ये भेन विशेषा नागोक्ता मदलेखा ॥ ८० ॥

यथा–

गोपाल कृतरास गो - गोपीजनवासम् ।
वन्दे कुन्दसुहास वृन्दारण्यनिवासम् ॥ ८१ ॥

इति मदलेखा ३९.

४०. अथ कुसुमतति

द्विजमनुकलय नमनु विरचय ।
अहिरनुवदति कुसुमततिरिति ॥ ८२ ॥

यथा–

विषमशरकृत कुसुमततियुत ।
युवतिमनुसर मनसि-शयकर ॥ ८३ ॥

इति कुसुमतति ४०.

अत्र प्रस्तारगत्या सप्ताक्षरस्य अष्टाविंशत्यधिक शत १२८ भेदा भवन्ति, तेषु आद्यन्तसहित भेदाष्टक प्रोक्त, शेषभेदा ऊहनीया सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तर-शङ्कया नात्रोक्ता इति ।*१

इति सप्ताक्षरम् ।

अथ अष्टाक्षरं वृत्तम्

तत्र–

४१. विद्युन्माला

सर्वे वर्णा दीर्घा यस्मिन्नष्टौ नागाधीशप्रोक्ता ।
अब्धावब्धौ विश्राम स्याद् विद्युन्मालावृत्त तत् स्यात् ॥ ८४ ॥

यथा–

कण्ठे राजद्विद्युन्माल श्यामाम्भोदप्रख्यो बाल ।
गो-गोपीना नित्य पाल पायात् कसादीना काल ॥ ८५ ॥

इति विद्युन्माला ४१

---

*१ शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

४२ अथ प्रमाणिका

क्षरैस्तथा च कुण्डलै क्रमेण याऽतिशोभिता ।
गिरीन्द्रवर्णभासिता प्रमाणिकेति सा मता ॥ ८६ ॥

यथा–

विमोहमौलिशोभित व्रजाङ्गनासु लोभितम् ।
नमामि नन्दबालकं तटस्थचीरहारकम् ॥ ८७ ॥

इति प्रमाणिका ४२

४३ अथ मल्लिका

हारमेकमत्र देहि त पुन क्रमाद्विदेहि ।
वेहि योगवर्णमासु (गु) मल्लिकां कुरुष्व वासु ॥ ८८ ॥

यथा–

वेणुरन्ध्रपूरकाय गोपिकासु मध्यगाय ।
बन्धहारमण्डिताय मे नमोऽस्तु केशवाय ॥ ८९ ॥

इति मल्लिका ४३

इयमेव ग्रन्थान्तरे अष्टाक्षरप्रस्तारे समानिका इत्युच्यते । अस्माभिस्तु सप्ताक्षरप्रस्तारे समानिका प्रोक्तेति विशेष ।

४४ अथ तुङ्गा

द्विजवरगणयुग्म तदनु करतलोक्ता ।
पुनरपि गुरुसङ्गा फणिपतिकृततुङ्गा ॥ ९० ॥

यथा–

व्रजविहरणशील युवतिषु कृतलील ।
हृदि विलसतु विष्णु वितिसुतकुलजिष्णु ॥ ९१ ॥

इति तुङ्गा ४४

४५ अथ कमलम्

नगण-सगणाचितं लघुगुरुविराजितम् ।
फणिनृपविकासितं कमलमिति भाषितम् ॥ ९२ ॥

यथा–

वरमुकुटभासुरः व्रजभुवि हतासुरः ।
व्रजनृपतिनन्दन जयति हृदि नन्दन ॥ ९३ ॥

इति कमलम् ४५

१ ख पुस्त ।

४६. अथ माणवकक्रीडितकम्

भेन युत तेन चित दण्डकृत हारवृतम् ।
वेदयति नागमत माणवकक्रीडितकम् ।। ६४ ।।

यथा–

वेणुधर तापहर[1] नन्दसुत बालयुतम् ।
चन्द्रमुख भक्तसुख नौमि सदा शुद्धहृदा ।। ६५ ।।

इति माणवकक्रीडितकम् ४६

४७ अथ चित्रपदा

भद्वितयाचितकर्णा शैलविकासितवर्णा ।
वारिनिधौ यतियुक्ता चित्रपदा फणिनोक्ता ।। ६६ ।।

यथा–

वेणुविराजितहस्त गोपकुमारकशस्तम् ।
वारिदसुन्दरदेह नौमि कलाकुलगेहम् ।। ६७ ।।

इति चित्रपदा ४७.

४८ अथ अनुष्टुप्

सर्वत्र पञ्चम यस्य लघु षष्ठ गुरु स्मृतम् ।
सप्तम समपादे तु ह्रस्व तस्यादनुष्टुभम् ।। ६८ ।।

यथा–

कमल ललितापाङ्गि-कालालिकुलसङ्कुलम् ।
विलुलत् कुन्तल सुभ्रु ! कलयत्यतुल सुखम् ।। ६९ ।।

इति अनुष्टुप् ४८.

४९. अथ जलदम्

कुरु नगणयुगल मनु च लयुगमिह ।
वरफणिपतिकृति[2] कलय जलदमिति ।। १०० ।।

यथा–

नवजलदविमल शुभनयनकमल ।
कलय मम हृदय-मखिलजनसदय ।। १०१ ।।

इति जलदम् ४९

अत्र च प्रस्तारगत्या अष्टाक्षरस्य षट्पञ्चाशदधिक द्विशत २५६ भेदास्तेषु आद्यन्तसहित कियन्तस्समुदाहृता, शेषभेदा प्रस्तार्य समुदाहर्तव्या इति ।*

इत्यष्टाक्षरम् ।

---

१ 'तापहर' क प्रतौ नास्ति । २ ख फणिपतिकृतमय ।

*टिप्पणी—ग्रन्थान्तरेपु सप्राप्त ये शेषभेदास्ते पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

अथ नयाक्षरम्

तत्र–

१ रूपामाला

नेत्रोक्ता मा पादे दृश्यन्ते यस्मिन्नष्टा वर्णा भासन्ते ।
यच्छ्रुत्वा भूपाला मोदन्ते सद् रूपामालाख्य प्रोक्ता ते ॥ १०२ ॥

यथा–

मध्याभि केकाभि सम्मिश्रा कुर्वन्त सम्पूर्णा सर्वाशा ।
एते वर्त्तीन्द्राणां सकाशा मेघा पूर्णास्तस्मात् सम्प्राप्ता ॥ १०३ ॥

इति रूपामाला १

११ महालक्ष्मिका

वैनतेयो यदा भासते सोऽपि चेद् वह्निना भूष्यते ।
रम्यवर्णा यदा सङ्गता सा महालक्ष्मिका सम्मता ॥ १०४ ॥

यथा

कानने भाति वंशीरव कामबाणावलीसंयुतम् ।
मानस भावनादाहितं क्षीयय स्वं मनो माहि तम् ॥ १०५ ॥

इति महालक्ष्मिका ११

१२ अथ सारङ्गम्

नगणमकारग्रथित लघुयुगगौ[1] सकथितम् ।
कविजनसञ्जातमद फणपत सारङ्गमिदम् ॥ १०६ ॥

यथा–

सखि हरिराभाति यदा विरचितकम्पेन मुदा ।
न किमपि वक्तु कलये कथमपि दृष्टे वलये ॥ १०७ ॥

यथा वा–

प्रणमत सर्वाघहर दितिसुतगर्वापहरम् ।
सुरपतितर्वाहरण विलसदखर्वाभरणम् ॥ १०८ ॥

इति सारङ्गम् १२.

इदमेव सारङ्गिकेति पिङ्गले* नामान्तरणोक्तम् ।

---

१ क युगकैः ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलम्-परि० २ पद्य

५३ अथ पाइन्तम

यस्यादिर्वै मगणकृतश्चान्तो हस्तेन विरचित ।
मध्ये भो यस्य विलसित तत् पाइन्त फणिभणितम् ।। १०९ ।।

यथा–

गोपालाना रचितसुख सम्पूर्णेन्दुप्रतिममुखम् ।
कालिन्दीकेलिषु ललित वन्दे गोपीजनवलितम् ।। ११० ।।

इति पाइन्तम् ५३ पाइन्ता इति पिङ्गले* ।

५४ अथ कमलम्

नगणयुगलमहित तदनु करविरचितम् ।
फणिकुलमतिविमल प्रभवति किल कमलम् ।। १११ ।।

यथा–

तरलनयनकमल रुचिरजलदविमलम् ।
शुभदचरणकमल कलय हरिमपमलम् ।। ११२ ।।

इति कमलम् ५४

५५ अथ बिम्बम्

द्विजवरनरेन्द्रकर्णै प्रविरचितनन्दहवर्णैः ।
फणिनृपतिनागवित्त कविसुखदबिम्बवृत्तम् ।। ११३ ।।

यथा–

लुलितनलिनालसाक्ष शठललितवाचिदक्ष ।
कलयसि सुरागिवक्ष त्वमपि मयि जातभिक्ष ।। ११४ ।।

इति बिम्बम् ५५.

५६ अथ तोमरम्

सगण मुदा त्वमवेहि जगणद्वय च विधेहि ।
नवसङ्ख्या वर्णविधारि कुरु तोमर सुखकारि ।। ११५ ।।

यथा–

कमलेषु 'सलुलितालि वकुली[कृत] वरमालि ।
अवलोकये वनमालि वपुरेति'[१] किं वनमालि ।। ११६ ।।

इति तोमरम् ५६

---

१ ' ' चिह्नमध्यग पाठो नास्ति ख प्रतौ ।

* टिप्पणी—प्राकृतपैङ्गलम्-परि २ पद्य ८० ।

२७ अथ भुजगशिशुसृता

नगणयुगलसहितं तदनु मगणनिर्दिष्टम् ।
भुजगशिशुसृतावृत्तं कलयत फणिना चित्तम् ॥ ११७ ॥

यथा– अनुपमयमुनातीरे नवपवस (कमल) समसमीरे ।
प्रणमत कदलीकुञ्जे हरिमिह सुदृशां पुञ्जे ॥ ११८ ॥

इति भुजगशिशुसृता २७

सृता इत्येव शम्भुप्रभृतिषु पाठः । भृता इति आधुनिका पठन्ति*

२८ अथ मणिमध्यम्

आदिमकारं वेहि तत सोऽपि गणान्ते[1] मासमतः ।
मध्यमकारो भाति यथा स्यान्मणिमध्यं नाम तदा ॥ ११९ ॥

यथा– कल्पवनारीमानहरः पूरितवंशीरावपरः ।
गोकुलनेता गोपुरगः पातु हरिस्त्वां गोपवरः ॥ १२० ॥

इति मणिमध्यम् २८

२९ अथ भुजङ्गसङ्गता

सगणं विधेहि सङ्गतं जगणं ततोऽपि संयुतम् ।
रगणं च नागसम्मता कथिता भुजङ्गसङ्गता ॥ १२१ ॥

यथा– मम वल्लवे मनो भृशं परिभावयाङ्कक क्षणम् ।
कथयामि च तमागमे धृतिमासि येन धारये ॥ १२२ ॥

इति भुजङ्गसङ्गता २९

९ अथ सुललितम्

दहन-नमिह् विधनु चरणमनु च सुतनु ।
फणिपतिनृपतिकृति कलय सुललितमिति ॥ १२३ ॥

यथा– कलितललितमुकुट निहतदितिजशकट ।
मम सुखमनुकलय करयुगधृतवलय ॥ १२४ ॥

इति सुललितम् ९

अत्र प्रस्तारगत्या नवाक्षरस्य द्वादशाधिकपञ्चशत भेदेषु ५१२ आद्यन्त सहिता एकादशभेदा प्रदर्शिता शेषभेदा ऊहनीया ॥ ९ ॥*

इति नवाक्षरं वृत्तम् ।

---

१ ख वचोलते ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी द्वि स्त कारिका २४

*टिप्पणी—९ नवविधम्, प्राप्तभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्याः ।

अथ दशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

६१ गोपाल.

वह्नेस्सख्याका मा पादे यस्मि-न्नन्ते हारश्चैको युक्तो यस्मिन् ।
नागाधीशप्रोक्त तद् गोपाल पक्त्यर्णैर्युक्त मुह्यद्भूपालम् ॥ १२५ ॥

यथा–

गो-गोपालाना वृन्दे सञ्चारी भूमौ दृप्यद्दैत्याना सहारी ।
यद्वेणुक्वाणैर्मोह सप्रापु गोप्य सोऽव्यात् मा य देवा नापु [1] ॥ १२६ ॥

इति गोपाल ६१

६२. अथ सयुतम्

सगण विधाय मनोहर जगणद्वय च ततोऽपरम् ।
गुरुसङ्गत फणिजल्पित सखि ! सयुत परिकल्पितम् ॥ १२७ ॥

यथा–

सखि गोपवेशविहारिण शिखिपिच्छचूडविधारिणम् ।
मधुसुन्दराधरशालिन ननु कामये वनमालिनम् ॥ १२८ ॥

यथा वा–

व्रजनायिका हृतकालिय कलयन्ति या मनसालि यम् ।
सदय मया सह शालिन कुरु तासु त वनमालिनम् ॥ १२९ ॥

इति सयुतम् ६२

सयुता इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले ।*

६३ अथ चम्पकमाला

आदिभकारो यत्र कृत स्यात् प्रेयसि पश्चात् मोपि मत स्यात् ।
अन्तसकारो गेन युत स्यात् चम्पकमालावृत्तमिद स्यात् ॥ १३० ॥

यथा–

सर्वमह जाने हृदय ते कामिनि ! किं कोपेन कृत ते ।
पङ्कजघातैर्लोचनपातै. कामितमाप्त चेतसि ता तै ॥ १३१ ॥

इति चम्पकमाला ६३.

रुक्मवतीति अन्यत्र । रूपवतीति च क्वचित् नामान्तरेण इयमेव ज्ञेया ।

६४ अथ सारवती

भत्रितयाचित सर्वपदा पण्डितमण्डलिजातमदा ।
गेन युता किल सारवती नागमता गुणभारवती ॥ १३२ ॥

---

[1] ख पदैवानापु ।

* टिप्पणी—प्राकृतपैङ्गलम्, परि० २, पद्य ६० ।

यथा–

माधवमासि हिमांशुकर चिन्तय चेतसि तापकरम् ।
माधवमानय जातरस चित्तमिदं मम तस्य वशम् ॥ १३३ ॥

इति सारवती ६४

६५ अथ सुषमा

आदौ त(त)गणः पश्चाद् यगणः यस्यामनु पादं स्याद् भगणः ।
हारः कथितश्चान्ते महिता सेयं सुषमा नागप्रथिता[1] ॥ १३४ ॥

यथा–

गोपीजनचित्ते सवसितं वृन्दावनकुञ्जे सम्मसितम् ।
वन्दे यमुनातीरे तरलं कंसादिकवंश्यानां गरलम् ॥ १३५ ॥

इति सुषमा ६५

६६ अथ अमृतगतिः

नगण-नरेन्द्र-नविहिता तदनु च चामरमहिता ।
अमृतगतिः कविकथिता फणिभणितोरथिमथिता ॥ १३६ ॥

यथा–

सखि मनसो मम हरणं हरिमुरलीकृत[2]करणम् ।
भव मम जीवितधारणं किमु कलये निजमरणम् ॥ १३७ ॥

इति अमृतगतिः ६६

६७ अथ मत्ता

आदौ कुर्यात् मगणमुपुक्तं श म पश्चाद् भगणसुविरतम् ।
अन्ते हस्तं कुरु गुरुहारं मत्तावृत्तं कविजनसारम् ॥ १३८ ॥

यथा–

वृन्दारण्ये कुसुमितकुञ्जे गोपीवृन्दैः सह सुखपुञ्जे ।
राधासक्तं जलधरनीलं योगं वन्दे भुवि कृतलीलम् ॥ १३९ ॥

इति मत्ता ६७

६८ अथ त्वरितगतिः

नगणयुता जगणयुता नगणहिता गुरुमहिता ।
इति हि फणिर्भणति यदा त्वरितगतिर्भवति तदा ॥ १४० ॥

---

१ क कथिता । २ क रव ।

यथा–

सरसमतिर्यदुनृपति परमततिस्त्वरितगति ।
क्षपितमद कलितगद सकलतरिर्जयति हरि ॥ १४१ ॥

यथा वा–

क्षितिविजिति स्थितिविहृति-व्रतरतय परगतय ।
उरु रुरुधुर्गुरु दुधुवु-र्युधि कुरव स्वमरिकुलम् ॥ १४२ ॥

इति दण्डिनी*[1]

इति त्वरितगति ६८

६९ अथ मनोरमम्

नगणपक्षिराजराजित कुरु मनोरम सभाजितम् ।
जगणकुण्डलप्रकाशित फणिप-पिङ्गलेन भाषितम् ॥ १४३ ॥

यथा–

कलय भाव नन्दनन्दन सकललोकचित्तचन्दनम् ।
दितिज-देवराजवन्दन कठिनपूतनानिकन्दनम् ॥ १४४ ॥

इति मनोरमम् ६९

स्त्रीलिङ्गमिदमन्यत्र*[2] । अत्रापि न तेन काचित् क्षति ।

७० अथ ललितगति

दहननमिह कलयत तदनु शरमपि कुरुत ।
वदति फणिनृपतिरिति पठत ललितगतिमिति ॥ १४५ ॥

यथा–

ललितललिततरगति हरिरिह समुपसरति ।
तव सविधमयि सुदति ! सफलय निजजनुरति ॥ १४६ ॥

इति ललितगति· ७०

अत्र प्रस्तारगत्या दशाक्षरस्य चतुर्विंशत्यधिक सहस्र १०२४ भेदा भवन्ति तेषु कियन्तो भेदा लक्षिता, शेषभेदा [स्तु सुधीभिरूह्या.][1] ।*[3]

इति दशाक्षरं वृत्तम् ।

---

१ ख प्रस्तार्य लक्षणीया ।

*टिप्पणी—१ काव्यादर्श तृतीय परिच्छेद पद्य ८५

*टिप्पणी—२ छन्दोमञ्जरी द्वि० स्त० का० ३४

*टिप्पणी—३ ग्रन्थान्तरेपूपलब्धा शेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या. ।

लघुमध ग च जन सुमुखी,
भवति[1] यत किल सा सुमुखी ॥ १५१ ॥

यथा–

तरुणविधूपमित वदन,
मम हृदये कुरुते मदनम् ।
इति कथयश्चरणौ नमते[2],
हरिरनुघेहि दृश वनिते ॥ १५२ ॥

इति सुमुखी ७३

७४ अथ शालिनी

कृत्वा पादे नूपुरौ हारयुग्म,
धृत्वा वीणामङ्किता चामरेण ।
पुष्पप्रोत चापि[3] कर्णं दधाना,
नागप्रोक्ता शालिनीय विभाति ॥ १५३ ॥

यथा–

चन्द्रार्कौ ते राम[4]कीर्त्तिप्रतापौ,
चित्र शत्रुक्षोणिपालापकीर्त्तिम् ।
भासागाढध्वान्तमध्वसयन्तौ,
त्रैलोक्यस्य[5] श्वेतता सन्दधाते ॥ १५४ ॥

यतिरप्यत्र वेदलोकैर्ज्ञेया ।

इति शालिनी ७४

७५ अथ वातोर्मी

पूर्वं पादे मगणेन प्रयुक्ता,
या वै पश्चाद् भगणेनाथ युक्ता ।
वातोर्मीय तगणान्तस्थकर्णा,
वेदैर्लोके स यती रुद्रवर्णा ॥ १५५ ॥

यथा–

मायामीनोऽवतु लोक समस्त,
लीलागत्या क्षुभिताम्भोधिमध्य ।
धात्रे दास्यन्नयन वेदरूप,
य कल्पाब्धौ जगृहे तिर्यगाख्याम् ॥ १५६ ॥

इति वातोर्मी ७५

---

१. ख भवत भ्रत । २ ख भजते । ३ ख वागि । ४. ख मीन । ५ ख विश्वस्यापि ।

७६ अथानयोरुपजातिः

चेद् वातोर्मीचरणानां यदि स्यात्

पाठः सार्धं शालिनीवृत्तपादैः ।

छन्दःप्रोक्ता सम्भवन्तीह भेदा-

स्तेषां नामान्युपजातीति विद्धि ॥ १५७ ॥

यथा–

गोपं वन्दे गोपिकाचित्तचौरं

हास्यज्योत्स्नालुब्धहृद्यच्चकोरम् ।

शश्वायन्तं[1] धेनुसंघे धुनानं

वक्त्रं वंशीमधरे सन्दधानम् ॥ १५८ ॥

इति शालिनी-वातोर्म्युपजातिः ७६

अनयोरेकत्र पञ्चमाक्षरगुरुत्वादपरत्र च पञ्चमलघुत्वात् अल्पो भेद इति चतुर्दशोपजातिभेदाः पदेन पदाभ्यां पदैश्च परस्परं योजनात् प्रस्ताररचनया जायन्त इत्युपदेशः ।

७७ अथ दमनकम्

दहनमितनगणरचित-

तदनु कुरु लघुगुरुयुगम् ।

फणिवरनरपतिमथितं

दमनकमिदमिति कथितम् ॥ १५९ ॥

---

१ क यन्तं ।

*टिप्पणी—१ छन्दसोऽस्य चतुर्दशभेदानां नामलक्षणोदाहरणानि ग्रन्थकृताप्यनुल्लिखितानि नैव चान्यत्र ग्रन्थेषु भवन्ति समुपलब्धानि, अतश्चात्र प्रस्ताररीत्या चतुर्दशभेदानां लक्षणान्यतो निर्दिश्यन्ते—

१	शा	वा	वा	वा	८	वा	वा	वा	शा
२	वा	शा	वा	वा	९	शा	वा	वा	शा
३	शा	शा	वा	वा	१०	वा	शा	वा	शा
४	वा	वा	शा	वा	११	शा	शा	वा	शा
५	शा	वा	शा	वा	१२	वा	वा	शा	शा
६	वा	शा	शा	वा	१३	शा	वा	शा	शा
७	शा	शा	शा	वा	१४	वा	शा	शा	शा

अत्र 'शा' 'वा' इति संकेतद्वयेन शालिनी-वातोर्मी क्रमशो ज्ञेये ।

यथा –

हृदि कलयत मधुमथन,
गिरिकृतजलनिधिमथनम् ।
रचितसलिलनिधिशयन,
तरलकमलनिभनयनम् ॥ १६० ॥

इति दमनकम् ७७

७८ अथ चण्डिका

आदिशेषशोभिहारभूषितौ,
बिभ्रती पयोधरावदूषितौ ।
स्वर्णशङ्खकुण्डलावभासिता,
चण्डिकाऽहिभूषणस्य सम्मता ॥ १६१ ॥

यथा–

व्यालकालमालिकाविकाशित,
भालभासितानलप्रकाशितम् ।
शैलराजकन्यकासभाजित,
नौमि चारुचन्द्रिकाविराजितम् ॥ १६२ ॥

इति चण्डिका ।

सेनिका इति अन्यत्र । क्वचिच्च श्रेणीति[1] रगण-जगण-रगण-लघु-गुरुभिर्नामान्तर, फलतस्तु न कश्चिद्विशेष । किञ्च इयमेव चण्डिका यदि लघुगुरुक्रमेण क्रियते तदा सेनिका इत्यस्मन्मतम् । अतएव भूषणकारोऽपि*[1] हारशङ्खविपरीताभ्या रूपनूपुराभ्या लघुगुरुभ्या क्रमशो मण्डिता चण्डिकामेव सेनिकामुदाजहार । तन्मतमवलम्ब्य वयमपि सलक्षणमुदाहराम ।

७९ अथ सेनिका

शरेण कुण्डलेन च क्रमेण,
महेश-वर्णसख्यया भ्रमेण ।
समस्तपादपूरण विधेहि,
फणिप्रयुक्त-सेनिकामवेहि ॥ १६३ ॥

---

१ ख रेणीति ।

*टिप्पणी—हारशङ्खकुण्डलेन मण्डिता या पयोधरेण वीणयाङ्किता ।
रूपनूपुरेण चापि दुर्लभा सेनिका भुजङ्गराजवल्लभा ॥ २१२ ॥
[वाणीभूषण द्वि० अ०]

८२ अथानयोरुपजातय

उपेन्द्रवज्राचरणेन युक्त,
　　स्यादिन्द्रवज्राचरण यदैव ।
नागप्रयुक्ताश्च तदैव भेदा,
　　महेन्द्रसख्या उपजातय. स्यु ॥ १६९ ॥

यथा–

मुखन्तवैणाक्षि ! कठोरभानो,
　　सोढुं कर नालमिति ब्रुवाण ।
पटेन पीतेन वनेषु राधा[1],
　　चकार कृष्ण परिधृतबाधाम् ॥ १७० ॥

इति उपजाति ८२

भेदाश्चतुर्दशैतस्या क्रमतस्तु प्रदर्शिता ।
प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्राऽतिस्फुटस्तत ॥ १७१ ॥
विलोकनीया भेदास्ते नास्माभिस्समुदाहृता ।
कथितत्वाद् विशेषेण ग्रन्थविस्तरशङ्कया*[1] ॥ १७२ ॥

---

१ ख राधा।

*टिप्पणी—१ ग्रन्थकृता वृत्तस्यास्य भेदाना लक्षणोदाहरणार्थं स्वपितृश्रीलक्ष्मीनाथभट्टकृतोदाहरणमञ्जरी द्रष्टव्येति ससूचितम्, किन्तु उदाहरणमञ्जरीपुस्तकस्याद्याप्यनुपलब्धत्वादत्रास्माभि 'प्राकृतपैङ्गला' २(१२२) श्रामलक्षणानि, छन्द - सूत्र- (निर्णयसागरसस्करण) स्य अनन्तशर्मकृतटिप्पणीत उदाहरणानि समुद्धृतान्यत्र प्रदर्शितानि—

१ कीर्ति.	[उ इ. इ इ]	८. बाला	[इ इ इ उ]
२. वाणी	[इ उ इ इ]	९ आर्द्रा	[उ इ. इ उ]
३ माला	[उ उ इ. इ]	१० भद्रा	[इ उ इ उ]
४ शाला	[इ इ उ इ]	११ प्रेमा	[उ उ इ उ]
५. हसी	[उ इ उ इ]	१२ रामा	[इ इ उ उ]
६ माया	[उ उ उ इ]	१३ ऋद्धि	[उ इ उ उ]
७ जाया	[इ. उ उ उ]	१४ बुद्धि	[इ उ. उ उ]

१ कीर्ति –

(उ)　स मानसी मेरुसख पितॄणा,
(इ)　कन्या कुलस्य स्थितये स्थितिज्ञ ।

(इ) मेनां मुनीनामपि माननीया
(इ) मात्मानुरूपां विधिनोपयेमे ॥

[कुमारसम्भव १।१८]

२ वाणी—

(इ) यः पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान्
(उ) दरीमुखोत्थेन समीरणेन ।
(इ) उद्गास्यतामिच्छति किन्नराणां
(इ) तानप्रदायित्वमिवोपगन्तुम् ॥

[कुमारसम्भव १।८]

३ माला—

(उ) कपोलकण्डूः करिभिर्विनेतुं
(उ) विघट्टितानां सरलद्रुमाणाम् ।
(इ) यत्र स्रुतक्षीरतया प्रसूतः
(इ) सानूनि गन्धः सुरभीकरोति ॥

[कुमारसम्भव १।९]

४ शाला—

(इ) उद्वेजयत्यङ्गुलिपार्ष्णिभागान्
(इ) मार्गे शिलीभूतहिमेऽपि यत्र ।
(उ) न दुर्वहश्रोणिपयोधरार्ता
(इ) भिन्दन्ति मन्दां गतिमश्वमुख्यः ॥

[कुमारसम्भव १।११]

५ हंसी [विपरीताख्यानिकी]

(उ) पदं तुषारस्रुतिधौतरक्तं
(इ) यस्मिन्नदृष्ट्वापि हतद्विपानाम् ।
(उ) विदन्ति मार्गं नखरन्ध्रमुक्तैः
(इ) मुक्ताफलैः केसरिणां किराताः ॥

[कुमारसम्भव १।६]

६ माया—

(उ) प्रसीद विश्राम्यतु वीर वज्रं
(उ) शरैर्मदीयैः कतमः सुरारिः ।
(उ) बिभेतु मोघीकृतबाहुवीर्यः
(इ) स्त्रीभ्योऽपि कोपस्फुरिताधराभ्यः ॥

[कुमारसम्भव ३।६]

७ जाया—

(इ) कालक्रमेणाथ तयोः प्रवृत्ते
(उ) स्वरूपयोग्ये सुरतप्रसङ्गे ।

(उ) मनोरम यौवनमुद्वहन्त्या
(उ) गर्भोऽभवद् भूधरराजपत्न्या ।।

[कुमारसम्भव १।१९]

८ बाला—

(इ) य सर्वशैला परिकल्प्य वत्स,
(इ) मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे ।
(इ) भास्वन्ति रत्नानि महौषधीश्च,
(उ) पृथूपदिष्टा दुदुहुर्धरित्रीम् ।।

[कुमारसम्भव १।२]

९. आर्द्रा—

(उ) दिवाकराद रक्षति यो गुहासु,
(इ) लीन दिवाभीतमिवान्धकारम् ।
(इ.) क्षुद्रेऽपि नून शरण प्रपन्ने,
(उ) ममत्वमुच्चै शिरसां सतीव ।।

[कुमारसम्भव १।१२]

१० भद्रा (आख्यानिकी)—

(इ) अस्त्युत्तरस्या दिशि देवतात्मा,
(उ) हिमालयो नाम नगाधिराज ।
(इ) पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य,
(उ) स्थित पृथिव्या इव मानदण्ड ।।

[कुमारसम्भव १।१]

११ प्रेमा—

(उ) अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य,
(उ) हिम न सौभाग्यविलोपि जातम् ।
(इ.) एको हि दोषो गुणसंनिपाते,
(उ) निमज्जतीन्दो किरणेष्विवाङ्क ।।

[कुमारसम्भव १।३]

१२ रामा—

(इ.) यश्चाप्सरोविभ्रममण्डनाना,
(इ) सम्पादयित्री शिखरैर्बिभर्ति ।
(उ) बलाहकच्छेदविभक्तरागा-
(उ) मकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम् ।।

[कुमारसम्भव १।४]

(उ) मनोरम यौवनमुद्वहन्त्या
(उ) गर्भोऽभवद् भूधरराजपत्न्या ॥

[कुमारसम्भव १।१९]

८ बाला—

(इ) य सर्वशैला परिकल्प्य वत्स,
(इ) मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे ।
(इ) भास्वन्ति रत्नानि महौषधीश्च,
(उ) पृथूपदिष्टा दुदुहुर्धरित्रीम् ॥

[कुमारसम्भव १।२]

९. आर्द्रा—

(उ) दिवाकराद रक्षति यो गुहासु,
(इ) लीन दिवाभीतमिवान्धकारम् ।
(इ) क्षुद्रेऽपि नून शरण प्रपन्ने,
(उ) ममत्वमुच्चै शिरसा सतीव ॥

[कुमारसम्भव १।१२]

१० भद्रा (आख्यानिकी)—

(इ) अस्त्युत्तरस्या दिशि देवतात्मा,
(उ) हिमालयो नाम नगाधिराज ।
(इ) पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य,
(उ) स्थित पृथिव्या इव मानदण्ड ॥

[कुमारसम्भव १।१]

११ प्रेमा—

(उ) अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य,
(उ) हिम न सौभाग्यविलोपि जातम् ।
(इ.) एको हि दोषो गुणसन्निपाते,
(उ) निमज्जतीन्दो किरणेष्विवाङ्क ॥

[कुमारसम्भव १।३]

१२. रामा—

(इ.) यश्चाप्सरोविभ्रममण्डनानां,
(इ) सम्पादयित्री शिखरैर्बिभर्ति ।
(उ) बलाहकच्छेदविभक्तरागा-
(उ) मकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम् ॥

[कुमारसम्भव १।४]

८३ अथ रथोद्धता

स्वर्णशङ्खवलय रसाहितं,
सुन्दर करतलेन सङ्गतम् ।
पुष्पहारमथ राविनूपुरं
बिभ्रती विजयते रथोद्धता ॥ १७३ ॥

यथा–

यामिनीमधिवगाम धामत
कामिनीकुसमनन्तसीरिणो[ ] ।
मामनी कथयवाणु सगमत्
यामिनीपि सखि मन्दमन्दनम् ॥ १७४ ॥

यथा वा–

गोपिके तव सुतोऽपि कैतवो
मामितामयि[1] ममापि नायक ।
[2]भीतमेव नवनीतमेषय
त्येष मे कपटवेषनन्दन ॥ १७५ ॥

इति रथोद्धता ८३

८४ अथ स्वागता

हारभूषितकुचाञ्चनुयाण
भ्राजिता कुसुमकङ्कणहस्ता ।

---

१ ख मामिमामय । २ ख –'चोरयस्यनुदिन गृहे गृहे न तमेव नवनीतमेवयत् ।

१३ ऋद्धिः—

(अ) प्रसन्नदिक्पांसुविविक्तवात
(इ) शङ्खस्वनानन्तरपुष्पवृष्टिः ।
(उ) शरीरिणां स्थावरजङ्गमानां
(ए) सुखाय तज्जन्मदिनं बभूव ॥

[कुमारसम्भव १।२३]

१४ बुद्धिः—

(इ) यत्रांशुकाक्षेपविलज्जितानां
(उ) यदृच्छया किंपुरुषाङ्गनानाम् ।
(उ) दरीगृहद्वारविलम्बिबिम्बा
(ए) स्तिरस्करिण्यो जलदा भवन्ति ॥

[कुमारसम्भव १।१४]

नूपुरेण च विराजितपादा,
स्वागता भवति चेत् किमिहाऽन्यत् ॥ १७६ ॥

यथा

वल्लवीनयनपङ्कजभानु,
दानवेन्द्रकुलदावकृशानु ।
राधिकावदनचन्द्रचकोर,
सकटादवतु नन्दकिशोर. ॥ १७७ ॥

इति स्वागता[*1] ८४

८५. अथ भ्रमरविलसिता

पूर्वं मः स्यात् तदनु च भगण,
पश्चाद् यस्मिन् प्रकटितनगण ।
अन्ते लो ग कविजनसहिता,
सेय प्रोक्ता भ्रमरविलसिता ॥ १७८ ॥

यथा–

स्वान्ते चिन्ता परिहर वनिते,
नन्दादेशात् सपदि सुललिते ।
आगन्तास्मिन् हरिरिह न चिर,
कुञ्जे शय्या सफलय सुचिरम् ॥ १७६ ॥

इति भ्रमरविलसिता ८५

---

[1] टिप्पणी—१ रथोद्धता-स्वागतोपजातिवृत्तास्यास्य ग्रन्थेऽस्मिँल्लक्षणोदाहरणान्यनुल्लिखितानि, नैव च ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धानि, अतोऽत्र चतुर्दशभेदाना प्रस्तारगत्या निम्नलक्षणान्येव समुद्ध्रियन्तेऽस्माभि —

१.	र	स्वा	स्वा.	स्वा	८	स्वा	स्वा	स्वा	र
२	स्वा	र	स्वा	स्वा	६	र	स्वा	स्वा	र
३.	र	र	स्वा	स्वा	१०	स्वा.	र	स्वा.	र
४	स्वा	स्वा	र	स्वा	११	र	र	स्वा	र.
५.	र	स्वा	र	स्वा	१२	स्वा	स्वा	र.	र.
६	र	र	र	स्वा	१३	र	स्वा	र	र
७.	स्वा	र	र	र	१४.	स्वा	र	र	र

अत्र 'र' कारेण रथोद्धता 'स्वा'शब्देन स्वागतेति च सर्वोध्या ।

८६ अथ अनुकूला

नूपुरयुक्तं कलितसुरावं
पुष्पसुहारं सरससुवक्रम् ।
स्मविराजद्‌सवलयहस्त,
स्यादनुकूला यदि किमिहाऽन्यत् ॥ १८० ॥

यथा–

गोकुलनारीवलयविहारी
गोधनधारी दितिसुतहारी ।
नन्दकुमारस्समुजितमारं
पातु सहारं सुरकुलसारं ॥ १८१ ॥

इति अनुकूला ८६

८७ अथ मोटनकम्

वन्दे वलयद्वयसवलितं
हस्तद्वितयं कलयन्तममुम् ।
गन्धोत्तमपुष्पसुहारभरं
नागस्य सदा प्रियमोटनकम् ॥ १८२ ॥

यथा–

कृष्णं कलये वनितावलये
नृत्ये सरसे ललिते सलये ।
दिव्यैः कुसुमैः कलित मुकुटे
स्वूरय मुनिमिर्मलितं लकुटे ॥ १८३ ॥

इति मोटनकम् ८७.

८८ अथ सुकेशी

बिभ्राणा वलयी सुवर्णचित्री
संराजत्वरसङ्गशोभमानी ।
हाराभ्यां ललितं कुचं दधाना
मायस्तं कुरुते म क सुकेशी ॥ १८४ ॥

यथा–

गोपालं वलये विलासिनीनां
मध्यस्थं कलधारहासिनीनाम् ।

कुर्वन्त वदनेन वशराव,
यस्तासा प्रकटीचकार भास¹ ॥ १८५ ॥

इति सुकेशी ८८

८८ अथ सुभद्रिका

अतनुरचितवाणपञ्चक,
कुसुमकलितहारसङ्गतम् ।
कुचमनुदधती च नूपुर,
मुदमिह तनुते सुभद्रिका ॥ १८६ ॥

यथा–

हृदि कलयतु कोपि वालक,
सुललितमुखलम्वितालक ।
अलिविलसितपङ्कजश्रिय,
परिकलयति य स मत्प्रियम् ॥ १८७ ॥

इति सुभद्रिका ८९.

९० अथ वकुलम्

द्विजवरगणयुगलमिति,
तदनु नगणमपि भवति ।
सुकविफणिपतिविरचित-
मनुकलयत वकुलमिति ॥ १८८ ॥

यथा–

अथय कमलनिचयमिह,
वकुलशयनमनुरचय ।
कुरु मणिहततिमिरगृह-
मिह हरिरुपसरति सखि ¹ ॥ १८९ ॥

इति बकुलम् ९०

अत्रापि प्रस्तारगत्या रुद्रसख्याक्षरस्य अष्टचत्वारिंशदधिक सहस्रद्वय २०४८ भेदा भवन्ति। तत्र कियन्तोऽपि भेदा प्रोक्ता², शेषभेदा प्रस्तार्य सूचनीया इति¹ ।*¹

इत्येकादशाक्षरम् ।

---

१ ख भावम् । २ पक्तिद्वय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ ग्रन्यातरेषु समुपलभ्यमाना शेषभेदा. पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीया¹ ।

अथ द्वादशाक्षरम्

तत्र–

११ आपीडः

यस्मिन् वेदानां सख्याका मा दृश्यन्ते
पादे वर्णाः सूर्ये सम्प्रोक्ता जायन्ते ।
आपीडाख्यं दिव्यं वृत्तं येहि स्वान्ते
सम्प्रोक्तं नागानामीशेनवल्कान्ते ! ॥ ११० ॥

यथा–

कूर्मो नित्यं मामव्यावरयन्त पीनः,
यत्पृष्ठेऽपि कस्मिंश्चित्कोणे सलीनः ।
य सर्वेषां देवानां कार्यार्थं जातः
स्त्रैलोक्ये नानारत्नादाता विख्यातः ॥ १११ ॥

इति आपीडः ११

प्रथमेवान्यत्र विद्याधरः*¹ ।

१२ अथ भुजङ्गप्रयातम्

लघु पूर्वमन्ते भवेद् यत्र कर्णे
रवेः सख्यया यत्र पाऽऽभाति वर्णः ।
तकारत्रयं यत्र मध्ये सुयुक्तं
भुजङ्गप्रयातं तदा भाति वृत्तम् ॥ ११२ ॥

यथा–

वसत्कुन्तलं केलिलोलानुलापं
सदा बल्लवीलालितं नन्दबालम् ।
कपोलोल्लसत्कुण्डलालङ्कृताऽऽस्यं
विलोलाक्षमक्षगुलज्ञम नमामि ॥ ११३ ॥

इति भुजङ्गप्रयातम् १२

१३ अथ लक्ष्मीधरम्

भानुसंख्यामितैरक्षरैर्भासितं
वेदसख्यैस्तथा पक्षिभिः शोभितम् ।
सर्वनागाधिराजेन संभाषितं
तद्धि लक्ष्मीधरं मानसे शोभितम् ॥ ११४ ॥

---

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलम्, परि० २ पद्य ११९ एवं वाणीभूषणम् द्वि प १२६

यथा—

वेणुनादेन समोहयन् गोकुले,
वल्लवीमानस रासकेली व्यधात् ।
य सदा योगिभिर्वन्दितस्त तदा[1],
गोपिकानायक गोकुलेन्द्र भजे ॥ १६५ ॥

इति लक्ष्मीधरम् ६३.

इदमेवान्यत्र स्रग्विणी* इति नामान्तर लभते ।

६४ अथ तोटकम्

यदि वै लघुयुग्मगुरुक्रमत
रविसम्मितवर्ण इह प्रमित. ।
अहिभूपतिना फणिना भणित,
सखि तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥ १६६ ॥

यथा—

अलिमालितमालतिभिर्ललित,
ललितादिनितम्बवतीकलितम् ।
कलितापहर कलवेणुकल,
कलये नलिनामलपादतलम् ॥ १६७ ॥

इति तोटकम् ६४

६५. अथ सारङ्गकम्

जायेत हारद्वयेनाथ शङ्खेन,
यद्वै क्रमात् सूर्यसख्यातवर्णेन ।
सारङ्गक तत्तु सारङ्गनेत्रेण,
सभाषित सर्वनागाधिराजेन ॥ १६८ ॥

यथा—

श्रीनन्दसूनो कथ धृष्ट गोपाल,
गोपीषु धाष्टर्य विधत्से महामाल ।
आस्थाय बाले सहाय सुखस्थस्य,
भीतिर्न ते कसतो गोकुलस्य ॥ १६६ ॥

इति सारङ्गकम् ६५

---

१ ख. हृदा ।

*टिप्पणी—छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्त० का० ७१, एव वृत्तरत्नाकर द्वि० अ० ।

१६ अथ मौक्तिकदाम

पयोनिधिभूपतिमन्त्र विधेहि,
सरांशुविराजितवर्णमयेहि ।
फणीन्द्रविकासितसुन्दरनाम,
ध्रुवा परिभावय मौक्तिकदाम ॥ २०० ॥

यथा–

स्वमायुवसेन विनाशितकंस
कपोलविलोलसनामवतंस ।
समस्तमुनीश्वरमानसहंस
सदा जय भासितयादववंश ॥ २०१ ॥

इति मौक्तिकदाम १६

१७ अथ मोदकम्

वेदविभाविसम परिभावय
भानुविभासितवर्णमिहानय ।
भामिनि ! पिङ्गलनागसुभाषित
मोदकवृत्तमितीह निभालय ॥ २०२ ॥

यथा–

नन्दकुमार विचारगुणाकर
गोपवधूमुखकंजदिवाकर ।
मद्वचनं हितमाशु निशामय,
कुञ्जगृहं ननु याहि[1] मिथामय ॥ २०३ ॥

इति मोदकम् १७

१८ अथ सुन्दरी

कुसुमस्मरशेन समाहिता
ललितनूपुररावविहारिणी ।
कुचयुगोपरिहारविराजिता
हरति कस्य मनो न हि सुन्दरी ॥ २०४ ॥

यथा–

उदयवर्द्धिदिवाकरकर्बुर
ललितवर्तुलवाचविशेषकम् ।

१ ख माधि। २ ख बबुरं।

सकलदिग्रचित विहगारवै,
स रुतमातनुते विविभिक्षुक ॥ २०५ ॥

यथा वा, 'वाणीभूषणे'*१–

असुलभा शरदिन्दुमुखीप्रिया,
मनसि कामविचेष्टितमीदृशम् ।
मलयमारुतचालितमालती-
परिमलप्रसरो हतवासर ॥ २०६ ॥

इति सुन्दरी ९८.

९९ अथ प्रमिताक्षरा

सुसुगन्धपुष्पकृतहारकुचा[१],
सरसेन शखरचितेन यथा ।
वलयेन शोभितकरा कुरुते,
प्रमिताक्षरा रसिकचित्तमुदम् ॥ २०७ ॥

यथा–

हरपर्वत इ(ए)व बभुगिरय,
पलगास्तया जगति हसनिभा ।
यमुनापि देवतटिनीव बभौ,
हिमभासमा जगति सवलिते ॥ २०८ ॥

यथा वा, भूषणे'*२–

अभजद् भयादिव नभो वसुधा,
दधुरेकतामिव समेत्य दिश ।
अभवत् महीपदयुगप्रमिता,
तिमिरावलीकवलिते जगति ॥ २०९ ॥

इति प्रमिताक्षरा ९९

१०० अथ चन्द्रवर्त्म

पक्षिराजमथन कुरु चरणे,
स विधेहि भगण सुखकरणे ।
हस्तमत्र कुरु पिङ्गलकथित,
चन्द्रवर्त्म कविभिर्हृदि मथितम् ॥ २१० ॥

---

१ क रचा ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्-द्वितीय अध्याय, पद्य २५२
　　„　　२　　„　　„　　२५४

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्[1]*–

तरणिजापुलिने नवपल्लवी-
　　परिषदा सह केलिकुतूहलात् ।
द्रुतविलम्बितचारुविहारिणं,
　　हरिमहं हृदयेन सदा वहे ॥ २१६ ॥

इत्यादि रघुवंशमहाकाव्यादिषु च सहस्रशो निदर्शनानि ।

इति द्रुतविलम्बितम् १०१.

१०२. अथ वंशस्थविला

पयोधरं हारयुगेन सङ्गतं,
　　करं तथा पुष्पसुकङ्कणान्वितम् ।
सुरावयुक्तं दधती च नूपुरं,
　　विभाति वंशस्थविला सखे ! पुरः ॥ २१७ ॥

यथा–

विलोलमौलिं तरलावतंसकं,
　　व्रजाङ्गनामानसलोभकारकम् ।
करस्थवंशं परिवीतवालकं,
　　हरिं भजे गोकुलगोपनायकम् ॥ २१८ ॥

इति वंशस्थविला १०२

नपुंसकमिदमन्यत्र*[2] । वंशस्तनितमिति क्वचित् ।

१०३ अथ इन्द्रवंशा

कर्णं सुरूपं धृतकुण्डलद्वयं,
　　पुष्पं सुगन्धं दधती च नूपुरम् ।
वक्षोजसंभूषितहारशोभिनी,
　　स्यादिन्द्रवंशा हृदि मोददायिनी ॥ २१९ ॥

यथा–

कूर्मं स(स)मव्यात् मम य पयोनिधौ,
　　पृष्ठे महापर्वतघोरघर्षणात् ।

---

*टिप्पणी––१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तवक, कारिकाया ७४ उदाहरणम् ।
　　२ 'वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ' छन्दोमंजरी द्वि० स्त० का० ६६

कन्दूविनोदेन सुखासितप्रभान्,
निद्रां जगामासमसीमितेक्षण ॥ २२० ॥

यथा वा–

कम्पायमाना सखि ! सर्वतो दिश,
धर्म्या दधाना भवतीरवावसि ।
कम्पायित सविदधासि मानस,
मां पाहि मन्दस्य सुतं समानय ॥ २२१ ॥

इति इन्द्रवंशा १ ।

१४ अथानयोरुपजातयः

यदीन्द्रवंशाचरणेन सङ्गता[२]
पादोऽपि वंशस्थबिलस्य जायते ।
भेदास्तदा स्युः सुरराजसङ्ख्यका
भागोविताख्यपुपजातिसञ्ज्ञका ॥ २२२ ॥

इति वंशस्थबिलेन्द्रवंशोपजातिः* ।

अनयोरप्येकत्र प्रथमाक्षरं लघु अपरत्र च प्रथमाक्षरं गुरुरिति स्वल्पभेदत्वा-च्चतुर्दशोपजातिभेदा पूर्ववदेव प्रस्ताररचनया भवन्ति । तथा चात्र सर्वत्र स्वल्प-भेदाच्छन्दोभ्यामुपजातयो भवन्तीति उपदिश्यत इति दिक् ।

---

१ ख पुष्पविनोदेन । २ ख सङ्गत ।

*टिप्पणी—१ ग ख प्रती वंशस्थबिलेन्द्रवंशोपजातेरुदाहरणं न विद्यते ।

*टिप्पणी—१ छन्दःकारेण वंशस्थबिलेन्द्रवंशोपजातेर्लक्षणं चतुर्दशभेदाः स्वीकृताः पर तत्र भेदानां लक्ष्योदाहरणादिभिः प्रतिपादनं नैव कृतम् । अतोऽस्माभिस्तत्नामानि सम्पादकेन तत्नामानमपलोदाहरणानि प्रस्तूयन्ते ।

१	वैतालिकी	[उ इ इ इ]	८	वामीत्रिका	[इ इ इ उ]
२	रतारव्यानिकी	[इ उ इ इ]	९	मन्दहासा	[उ इ इ उ]
३	तनुमा	[उ उ इ इ]	१०	शिशिरा	[इ उ इ उ]
४	पुष्पिता	[इ इ उ इ]	११	वैवाणी	[उ उ इ उ]
५	पत्मेवा	[उ इ उ इ]	१२	मञ्जुरा	[इ इ उ उ]
६	कीर्त्मेवी	[इ उ उ इ]	१३	रमणा	[उ इ उ उ]
७	दीपानुरा	[उ उ उ इ]	१४	कुमारी	[इ उ उ उ]

१ वैतालिकी—

व महाचमूनामधिपा समन्ततः,
इ सनह्य सद्य. सुतरामुदायुधा. ।
इ. तस्थुर्विनम्रक्षितिपालसङ्कुले,
इ तस्याङ्गणद्वारि बहि प्रकोष्ठके ॥

[कुमारसम्भव १५।६]

२ रतास्यानिकी—

इ. पद्मै रनन्वीतवधूमुखद्युतो,
व गता न हंसै श्रियमातपत्रजाम् ।
इ दूरेऽभवन् भोजबलस्य गच्छत,
इ शैलोपमावीतगजस्य निम्नगा ॥

[शिशुपालवधम् १२।६१]

३ इन्दुमा—

व चमूप्रभु मन्मथमर्दनात्मज,
व विजित्वरीभिविजयश्रियाश्रितम् ।
इ श्रुत्वा सुराणां पृतनाभिरागत,
इ चित्ते चिर चुक्षुभिरे महासुरा· ॥

[कुमारसम्भव १५।२]

४ पुष्टिदा—

इ श्रुत्वेति वाच वियती गरीयसी,
इ. क्रोधादहङ्कारपरो महासुर ।
व प्रकम्पिताशेषजगत्त्रयोऽपि स-
इ प्राकम्पतोच्चैर्दिवमभ्यधाच्च स ।

[कुमारसम्भव १५।३६]

५ उपमेया [रामणीयकम्]—

व. नितान्तमुत्तुङ्गतुरङ्गहेषितै-
इ रुद्दामदानद्विपबृंहितै शतै ।
व चलद्ध्वजस्यन्दननेमिनि स्वनै-
इ र्बभूव्निरुच्छ्वासमथाकुल नभ ।

[कुमारसम्भव १४।४१]

६ सौरभेयी—

इ सङ्गेन वो गर्भतपस्विन शिशु
व. र्वराक एषोऽन्तमवाप्स्यति ध्रुवम् ।
वं अतस्करस्तस्करसङ्गतो यथा,
इ तद्वो निहन्मि प्रथम ततोप्यमुम ।

[कुमारसम्भव १५।४२]

१०५ अथ जलोद्धतगतिः

अवेहि जगणं ततोऽपि सगणं,
　　विधेहि जगणं पुनश्च सगणम् ।
फणीन्द्रकथिता जलोद्धतगतिः,
　　चकास्ति हृदये कृतातिसुमतिः ॥ २२३ ॥

यथा–

नवीननलिनोपमाननयनं,
　　पयोदरुचिरं पयोधिशयनम् ।
नमामि कमलासुसेवितहरिं,
　　सदा निजहृदा भवाम्बुधितरिम् ॥ २२४ ॥

इति जलोद्धतगतिः १०५

१०६ अथ वैश्वदेवी

कर्णा जायन्ते यत्र पूर्वं नियुक्ताः,
　　वह्नेस्सख्याका य-द्वयेन प्रयुक्ताः ।
बाणार्णैश्छिन्ना वाजिभिश्चापि भिन्ना,
　　नागेनोक्ता सा वैश्वदेवी विभाति ॥ २२५ ॥

यथा–

वन्दे गोविन्दं वारिधौ राजमानं,
　　श्रीलक्ष्मीकान्तं नागतल्पे शयानम् ।
अत्यन्तं पीतं वस्त्रयुग्मं दधानं,
　　पार्श्वे तिष्ठन्त्या पद्मया सेव्यमानम् ॥ २२६ ॥

इति वैश्वदेवी १०६.

---

१३ रमणा—
व　बली बलारातिबलाऽतिशातनं,
इ　दिग्दन्तिनादद्रवनाशनस्वनम् ।
व　महीधराम्भोधिनवारितक्रमं,
व　ययौ रथं घोरमथाधिरुह्य सः ॥
[कुमारसम्भव१५।८]

१४ कुमारी—
इ　किं ब्रूथ रे व्योमचरा महासुरा,
व　स्मरारिसूनुप्रतिपक्षवर्तिनः ।
व　मदीयबाणव्रणवेदना हि सा-
व　ऽधुना कथं विस्मृतिगोचरीकृता ।
[कुमारसम्भव १५।४०]

१७ अथ मन्दाकिनी

इह यदि नगणद्वय भासते
तदनु च रगणद्वय दीयते ।
फणिपमुखसुमेरुमन्दाकिनी
प्रभवति हि तदैव मन्दाकिनी ॥ २२७ ॥

यथा–

सखि ! मम पुरतो मुरारेः कथां
कुरु न कुरु तथा वृथाऽन्यां कथाम् ।
इति मधुरिपुरेति वृन्दावनं
कलय मम तदा शरीरावनम् ॥ २२८ ॥

इति मन्दाकिनी १७

क्वचिदियमेव प्रभेति*¹ नामान्तरं लभते । 'सह धरणि मित्र तथा कार्मुकम्' इत्यादि किराते*² । यथा वा–'अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया' इति माघेऽपि । *³

१८ अथ कुसुमविचित्रा

विरचय मित्र तदनु च कर्णं
पुनरपि तद्वत् कुरु रविवर्णम् ।
धृतिमितपादे विमलतरित्रा
परमपवित्रा कुसुमविचित्रा ॥ २२९ ॥

---

*टिप्पणी–१ वृत्तरत्नाकर: अ ३ श्लो ९२
*टिप्पणी–२ सह धरणि मित्रस्तथा कार्मुकं
मधुरतनु तथैव संवर्मितम् ।
निहितमपि तथैव पश्यन्नसिं
वृषममतिरुपायमो विस्मयम् ॥
[किरातार्जुनीयम् स १८ श्लो १६]

टिप्पणी–३ अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया
मतनुतरतयेव सन्तानकः ।
तरुणपरभृतः स्वनं रागिणा
मतनुत रतये वसन्तानकः ॥
[शिशुपालवधम् स ६ श्लो २]

यथा–

भययुतचित्तो विगतविलम्ब,
कथमपि यातो हरितकदम्बम् ।
तरणिसुतायास्तटभुवि कृष्ण,
स जयति गोपीवसनसतृष्णः ॥ २३० ॥

इति कुसुमविचित्रा १०८.

१०९ अथ तामरसम्

सरससुरूपसुगन्धसशोभ,
कुचयुगसङ्गमसवृत[1]लोभम् ।
रसयुतहारयुगाहितमुक्त,
कलयत तामरस वरवृत्तम् ॥ २३१ ॥

यथा –

विलसति मालतिपुष्पविकास,
न हि हरिदर्शनतो वनवासः ।
सखि ! नवकेतकिकण्टककर्ष,
वनकलितोनुतनूरुहहर्षे ॥ २३२ ॥

इति तामरसम् १०९

११० अथ मालती

कलय नकारमतोपि नायकौ,
तदनु विधारय पक्षिणा पतिम् ।
फणिपतिपिङ्गलनागभाषिता,
कविहृदि राजति मालती मता ॥ २३३ ॥

यथा–

कलयति[2] चेतसि नन्ददारक,
सकलवधूजनचित्त[3]हारकम् ।
निखिलविमोहकवेणुधारक,
दितिसुतसङ्घविनाशकारकम् ॥ २३४ ॥

इति मालती ११०

---

१ ख सभृतम् । २ ख कलयत । ३ ख चीरहारकम् ।

कुत्रचिद् इयमेव यमुना इति नामान्तरं समेते । 'अयि विजहीहि दृढोपगूहनम्' इत्युदाहरणान्तरं मारविस्थिरम्[1]* ।

१११ अथ मणिमाला

आदौ विदधाना हारौ करमेकं
मुक्तां रसवद्भ्यां सम्पूरकाभ्याम् ।
कर्णे रसपुष्पोपेतकुण्डलयुग्मा
छिन्ना रसयुक्तैर्वर्णैर्मणिमाला ॥ २३५ ॥

यथा–

गौरीकृतदेह् श्यामायमिमाल
मूर्ध्ने विधुनात्त कलित पुरकामम् ।
सोमानसकाले[1] सम्पूजितमाले
कामे पारण त्वं सम्प्राप्य शिवासम् ॥ २३६ ॥

इति मणिमाला १११

११२ अथ जलधरमाला

यस्यामादौ पदविरतौ वा कर्णा
पश्चात्प्रोक्ता जिनकरसस्याकर्णा ।
मध्ये विप्रो जलनिधिपदैर्दिष्टा
नागप्रोक्ता जलधरमाला भिन्ना ॥ २३७ ॥

यथा–

कीर्तिं पुष्परमिनवदाभ्यां कृत्वा
तास्यस्थितसा मलयजमूर्ति धृत्वा ।
वक्षःपीठे तव सुचिरं ध्यायन्ती
तिष्ठत्येषा शठविधिरोप पश्यन्ती ॥ २३८ ॥

इति जलधरमाला ११२

---

१ ख सोमे ।

टिप्पणी—१ अयि विजहीहि दृढोपगूहनं
त्यज नवसङ्गमभीरु ! वल्लभम् ।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते
वरतनु ! संप्रवदन्ति कुक्कुटाः ॥

यद्यपि वृत्तमौक्तिककारेण दृढोपगूहनमिदम् न मारवे स्वीकृतं किन्तु वस्तुतः [illegible] मीमे नु मारतुल्यस्थिरम् । [illegible] पीठम् ।

११३ अथ प्रियंवदा

कुसुमसङ्गतकरा रसाहिता,
विमलगन्धकुचहारभूषिता ।
सरुतनूपुरसुशोभिता सदा,
जयति चेतसि सखे ! प्रियंवदा ॥ २३९ ॥

यथा–

व्रजवधूजनमनोविमोहनं,
सरसकेलिषु कलानिकेतनम् ।
सरसचन्दनविलेपचर्चितं,
कलय चेतसि हरिं सदार्चितम् ॥ २४० ॥

इति प्रियंवदा ११३.

११४ अथ ललिता

हारद्वयाञ्चितकुचेन भूषिता,
हस्तस्थितोज्ज्वलसुपुष्पकङ्कणा ।
पादे विरावयुतनूपुराञ्चिता,
चित्ते चकास्ति ललिता विलासिनी ॥ २४१ ॥

यथा–

गोपीषु केलिरससक्तचेतसं,
सूर्यात्मजा विलुलितातिवेतसम् ।
चित्तावमोहकरवेणुधारकं,
वन्दे सदा ललितनन्दधारकम् ॥ २४२ ॥

इति ललिता ११४.

इयमेव अन्यत्र सुललिता इति गणभेदेन उक्तम् । अतएव 'तो भो जरौ सुललिता श्रुतौ यतिः ।' इति वृत्तसारे सयति लक्षणं लक्षितमिति ।

११५ अथ ललितम्

धेहि भकारं तदनु च तगणं,
धारय न वा तदनु च सगणम् ।
बाणविरामं फणिपतिकलितं,
चेतसि वृत्तं कलयत ललितम् ॥ २४३ ॥

यथा–

चेतसि कृष्ण कलयति[1] ललित
गोकुलगोपीजनहृदि वसितम् ।
भावितवर्धं तरलितमुकुट
कारितरासं विनिहतशकटम् ॥ २४४ ॥

इति ललितम् ११५

इदमेव अन्यत्र ललना[2] इत्युक्तम् ।

११६ अथ कामदत्ता

द्विजवर-सगणौ विधेहि पूर्णं
जगणमथ ततोऽपि देहि कर्णम् ।
सरससुकविपिङ्गलेन विता
लसति कविमुखेषु कामदत्ता ॥ २४५ ॥

यथा–

कलपरिमलमञ्जुलालिमाल
मुललितदलमालतीविलासम् ।
वनमिदमलिसंकुलदरसालं
हरिमिह हि विना सुखाय नालम् ॥ २४६ ॥

इति कामदत्ता ११६

११७ अथ वसन्तचत्वरम्

यदा मयूर्गुरुः क्रमेण भासते
पराङ्गुरुकमेन चेद् विभासते ।
फणीन्द्रनागभाषित सुभास्वर
विधेहि मानसं वसन्तचत्वरम् ॥ २४७ ॥

यथा–

मुदा विलोलमौलिनागनागरं
सुदा गदं पिताम्बरदामवरम् ।
सदा विभावयिष्यति त्वमातुरं,
तदा गुणा निमज्जिताऽपि[1] भासुरे ॥ २४८ ॥

इति वसन्तचत्वरम् ११७

---

१ क ... क वलयत । २ क ... विलसति भासुरे ।

[टिप्पणी]—१ ... ११७

११८ अथ प्रमुदितवदना

सरसकविजनाहिता भाविता,
भवति सुकविपिङ्गलेनोदिता ।
सकलरसिकचित्तहृद्या तदा,
प्रमुदितवदना तु नौ रौ यदा ॥ २४९ ॥

यथा–

कलय सखि ! विराजि वृन्दावन,
सहचरि ! कुरु मे शरीरावनम् ।
यदि कथमपि मानसे भावये,
यदुकुलतिलक तदेवानये ॥ २५० ॥

इति प्रमुदितवदना ११८

इयमेव अन्यत्र प्रभा*[१] ।

११९ अथ नवमालिनी

सखि ! नवमालिनी रसविरामा,
ननु कलयालि पूर्वयतियुक्ताम् ।
नजभयकारभावितपदाढ्या,
फणिपतिनागपिङ्गलविभक्ताम् ॥ २५१ ॥

यथा–

इह कलयालि ! नन्दसुतवाल,
नवघनकान्तिनिर्जिततमालम् ।
सरसविलासरासकृतमाल,
मुनिवरयोगिमानसमरालम् ॥ २५२ ॥

इति नवमालिनी ११९

१२० अथ तरलनयनम्

जलधि-नगणमिह रचयत,
रविमित लघुमिह कलयत ।
सुकविफणिपतिरिति वदति,
तरलनयनमिति हि भवति ॥ २५३ ॥

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर अ० ३, का० ६५

यथा–

तव कुसुमनिभहसितमयि,
गलतनुमनुकलयति मयि ।
इति हि सखि ! हरिरनुवदति
परिकलय दृशमयि सुदति ! ॥ २२४ ॥

इति तरलनयनम् १२

अत्र प्रस्तारगत्या द्वादशाक्षरस्य षण्णवत्यधिक सहस्रचतुष्टयं ४०९६ भेदा भवन्ति तेषु कियन्तः प्रदर्शिताः शेषभेदाः सुधीभिः प्रस्तार्य सूचनीया इति[1] ।*

इति द्वादशाक्षरम् ।

अथ त्रयोदशाक्षरम्

तत्र–

१२१ वाराहः

यस्मिन् पादे दृश्यन्ते संयुक्ताः षट्कर्णाः
सूर्याणामेकेनाप्राणाः सख्याका वर्णाः ।
कर्णस्यान्ते यस्मिन् संप्रोक्तश्चैको हारः
सोऽयं नागोक्तो वाराहो वृत्तानां सारः ॥ २२५ ॥

यथा–

कल्पान्तप्रोद्यद्वाराशौ राशौ दृष्ट्वा मग्नं
यः क्षोणीपृष्ठं दंष्ट्राग्रे कृत्वा ससङ्गम् ।
हत्वा दैत्यं दृप्यन्तं सिन्धोर्मध्यादागात्
कुर्यात् कामं[2] सोऽयं सर्वेषां रक्षां वेगात् ॥ २२६ ॥

इति वाराहः १२१

१२२ अथ माया

हारौ कृत्वा स्वर्णसुमेरुद्वययुक्तौ
प्रत्येकं हस्तौ वलयाभ्यामपि सक्तौ ।
मिथ्याचित्तस्यास्य दधाना[3] वरवर्णं
माया सर्वेषां हृदये राजति तूर्णं[4] ॥ २२७ ॥

---

१ ख प्रतौ – पंक्तिद्वयं नास्ति । २ ख कोप । ३ ख दधानां वरवर्णम् । ४ ख तूनम् ।

*टिप्पणी–१ यन्त्रस्तु ग्रन्थशेषभेदाः पञ्चचामरादिग्रन्थे अवलोकनीयाः ।

एतस्या एवान्यत्र श्रुति. नवयतिमहित मगण - तगण - यगण-सगण-गुरुयुत मत्तमयूरमिति गणान्तरेण नामान्तरमुक्तम् । तथा च छन्दोमञ्जर्याम् [द्वितीयस्तबके का ६७] 'वेदै रन्ध्रैर्म्तौ यसगा मत्तमयूरम् ।' इति लक्षणात् ।

यथा–

वन्दे गोप गोपवधूभि कृतरास,
हस्ते वश रावि दधान वरहासम् ।
नव्ये कुञ्जे सविदधान नवकेलि,
लोलाक्ष राधामुखपद्माकरहेलिम् ॥ २५८ ॥

इति माया १२२

यथा वा,

अस्मद्वृद्धप्रपितामहश्रीरामचन्द्रभट्टविरचित कृष्णकुतूहले महाकाव्ये रासवर्णनप्रस्तावे—

रासक्रीडासक्तवचस्कायमनस्का,
सस्कारातिप्रापितनाट्यादिविशेषा ।
वृन्दारण्य तालतलोद्घट्टनवाचा-
मत्यासगाच्चक्रुरिमा मत्तमयूरम् ॥ २५९ ॥

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम् [द्वितीयस्तबके का० ६७]

लीलानृत्यन्मत्तमयूरध्वनिकान्त,
चञ्चन्नीपामोदिपयोदानिलरम्यम् ।
कामक्रीडाहृष्टमना गोपवधूभि,
कसध्वसी निर्जनवृन्दावनमाप ॥ २६० ॥

'गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे,'*[1] त ससारध्वान्तविनाश हरिमीडे*[2]'

---

*टिप्पणी—१　'लीलारब्धस्थापितलुप्ताखिललोका
लोकातीतैर्योगिभिरन्तश्चिरमृग्याम् ।
बालादित्यश्रेणिसमानद्युतिपुञ्जां
गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे ॥ १ ॥
[शङ्कराचार्यकृतगौरीदशकस्तोत्र प० १]

*टिप्पणी—२　स्तोष्ये भक्त्या विष्णुमनादि जगदादि
यस्मिन्नेतत् ससृतिचक्र भ्रमतीत्यम् ।
यस्मिन् दृष्टे नश्यति तत्ससृतिचक्र,
त ससारध्वान्तविनाश हरिमीडे ॥ १ ॥
[शङ्कराचार्यकृतहरिमीडे स्तोत्र प०-१]

यथा–

विलोलद्विरेफावलीना विरावेण,
हिमांशो कराणा च सङ्गेन दावेण ।
वपुर्मे सदा दाहित शीतयस्वालि,
पुरो दर्शयित्वा वपुर्मालतीमालि ॥ २६५ ॥

इति कन्दम् १२४

१२५ अथ पङ्कावलि

भ कुरु तदनु नकारमिहानय,
धेहि जमथ जगण परिभावय ।
शखमिह तदनु भामिनि मानय,
पङ्कसुपरिकलितावलिमानय ॥ २६६ ॥

यथा–

कोमलसुललितमालति[1]मालिनि,
पङ्कजपरिमलसलुलितालिनि ।
कोकिलकलकल[2]कूजितशालिनि,
राजति हरिरिह वञ्जुलजालिनि ॥ २६७ ॥

इति पङ्कावलि १२५

१२६ अथ प्रहर्षिणी

कर्णाभ्या सुललितकुण्डल दधाना,
शखाभ्यामतिसुरसा कुचाढ्यहारा ।
विश्राम ननु रवनूपुरस्य युग्मे,
बिभ्राणा सखि ! जयति प्रहर्षिणीयम् ॥ २६८ ॥

यथा–

यद्दन्ते विलसति भूमिमण्डल त-
न्मालिन्यश्रियमुपयातमुज्ज्वलाभे ।
देवेन्द्रैरभिकलित. स्तवप्रयोगै-
रस्माक वितरतु श स कोलदेह ॥ २६९ ॥

यथा वा,

अस्मद्वृद्धप्रपितामह-महाकविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते कृष्णकुतूहले महाकाव्ये श्रीभगवदाविर्भाववर्णनप्रस्तावे––

---

१ ख. कुन्दकुसुमालिनि । २ ख कोकिलनवकल ।

सत्य सद्वसु वसुदवदेवकीभ्यां
रोहिण्यामुडुनि नभस्य कृष्णपक्षे ।
पजम्ये कटति निशीथनीरवायां
मष्टम्यां निगमरहस्यमाविरासीद् ॥ २७० ॥

इति प्रहर्षिणी १२६

१२७ अथ रुचिरा

पयोधरे कुसुमितहारभूषिता
सुपुष्पिणी सरसविराविनूपुरा ।
रसान्विता सकनकरावकङ्कणा,
चतुर्गति सखि ! रुचिरा विराजते ॥ २७१ ॥

यथा–

कलापिन निजदयितावहारिणं
पयोधर सखि ! कलये विराविणम् ।
हरिं विना मम सकल विषायितं
हरे पुन सकलमिद सुखायितम् ॥ २७२ ॥

इति रुचिरा १२७

१२८. अथ चण्डी

कलय मनुमिह धारय हस्त
तदनु च विरचय सं किल शस्तम् ।
चरणविरतियुतभासुरहारा
त्रिजगति बरसनि राजति चण्डी ॥ २७३ ॥

यथा–

गगनचरणयुतनूपुरशोभा
बहुविधविरचितमानसलोभा ।
हरिगमनमनुगच्छति राधा
गति मनसिजरतमाममबाधा ॥ २७४ ॥

इति चण्डी १२८.

१२९ अथ मञ्जुभाषिणी

करसङ्गिपुष्पयुतकङ्कणान्विता,
रसरूपरावमितनूपुराञ्चिता ।
कुचशोभमानवरहारधारिणी,
कुरुते मुद मनसि मञ्जुभापिणी ॥ २७५ ॥

यथा–

जनितेन मित्रविरहेण दु खिता,
मिलितु तथैव वनिता हरेर्हरित् ।
विधुबिम्बचित्तभवयन्त्रपूजन,
कुसुमैस्तनोति नवतारकामयै. ॥ २७६ ॥

इति मञ्जुभाषिणी १२९

सुनन्दिनी इत्यन्यत्र । अन्यत्रेति शम्भौ । क्वचिदियमेव प्रबोधिता च[1]* ।

१३० अथ चन्द्रिका

कुरु नगणयुग धेहि पादे ततः,
तगणयुगलक गोऽपि चान्ते तत ।
चरणमनु तथा कामवर्णान्विता ,
हयरसविरतिश्चन्द्रिका पूजिता ॥ २७७ ॥

यथा[1]–

कलयत हृदये शैलसधारक,
मुनिजनमहित देवकीदारकम् ।
व्रजजनवनिता-दु खसन्तारक,
जलधररुचिर दैत्यसहारकम् ॥ २७८ ॥

इति चन्द्रिका १३०

यथा वा–

'इह दुरधिगमै किञ्चिदेवागमै ।' इत्यादि किरातार्जुनीये*[2] । क्वचिदियमेव उत्पलिनी इति प्रसिद्धा ।

---

१ ख यथा उदाहरण नास्ति ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका ९९ एव १०२ ।

*टिप्पणी—२　'इह दुरधिगमै किञ्चिदेवागमै
सततमसुतर वर्णयत्यन्तरम् ॥
अमुमतिविपिन वेददिग्व्यापिन
पुरुषमिव पर पद्मयोनि परम् ॥
[किरातार्जुनीयम् स० ५, प० १८]

शशधरवदन राधिकारसाल,
सरसिजनयन पङ्कजालिमालम् ॥ २८४ ॥

इति क्षमा १३३.

इयमेव क्वचिद् गणान्तरेणापि क्षमैव[1]* भवति ।

१३४ अथ लता

कलय नगण विधेहि तत कर,
जगणयुगल च देहि तत परम् ।
चरणविरतौ गुरु कुरु सम्मता,
रसकृतयतिर्मुदा विहिता लता ॥ २८५ ॥

यथा–

कलय हृदये मुदा व्रजनायक,
ललितमुकुट सदा सुखदायकम् ।
युवतिसहित व्रजेन्द्रसुत हरिं,
कनकवसन भवाम्बुनिधेस्तरिम् ॥ २८६ ॥

इति लता १३४

१३५ अथ चन्द्रलेखम्

कुरु न-सगणौ पक्षिराज च युक्त,
रचय रगण कामवर्णैरमुकम् ।
तदनु च पुन कुण्डल धेहि शेष,
कलय फणिना भाषित चन्द्रलेखम् ॥२८७॥

यथा–

नमत सतत नन्दगोपस्य सूनु,
फणिप-दमन दानवोलूकभानुम् ।
कमलवदन राधिकाया रसाल,
तरलनयन पङ्कजालीसुमालम् ॥ २८८ ॥

इति चन्द्रलेखम् १३५

चन्द्रलेखा[2]* इत्यन्यत्र ।

---

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकरस्य (अ० ३ का० ७५) नारायणीटीकायां 'इयं क्षमैव आचार्यो मतभेदेन सञ्ज्ञान्तरार्थं पुनरूचे' ।

*टिप्पणी—२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका १०५

११६ अथ सुद्युतिः

कुरु न-सगणौ पादे तकारौ तथा
कमय वसव स्युः कामवर्णा यथा ।
रसपरिमितैर्वर्णैस्तथा स्याद् यति
फणिपकथिता सद्योमते सुद्युतिः ॥ २८९ ॥

यथा–

वदनवसितैर्मृ कृर्युता सदया
मृसितसमिता सोल्लाससाक्षिदया ।
सखि हरिगृहाद् याति प्रगे राधिका
सकलसुदृशां नित्य मनोबाधिका ॥ २९० ॥

इति सुद्युतिः ११६

११७ अथ लक्ष्मीः

कर्णे विराजितरसकुम्भसमान्विता
गन्धाढ्यपुष्पपुञ्जकरेण शोभिता ।
वक्षोरुहे च विमलहाररोचिनी
लक्ष्मी सदा फलतु ममातुल फलम् ॥ २९१ ॥

यथा–

वन्दे हरिं फणिपतिभोगशायिनं
सर्वेश्वरं सकलजनेष्टदायिनम् ।
पीताम्बरं मणिमुकुटादिभासुरं,
गो-गोपिकानिकरवृत हतासुरम् ॥ २९२ ॥

इति लक्ष्मी ११७

११८ अथ विमलगतिः

जलधिमित नगणमिह कमय
तदनु च गणि लघुमिह रचय ।
फणिपतिगुरुमितमति भणति
विरचय यति विमलगति गुरति । ॥ २९३ ॥

यथा–

अभिनवसजलजलदविमल,
निजजनविहृतसकलशमल[1] ।
कमलसुललितनयनयुगल,
जय ! जय ! सुरनुतपदकमल ॥ २६४ ॥

इति विमलगति १३८

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोदशाक्षरस्य द्विनवत्युत्तर शतमष्टौ सहस्राणि च ८१९२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचन भेदा समुदाहृता, शेषभेदा सुधीभि प्रस्तार्य समुदाहरणीया इत्यल पल्लवेन ।*

इति त्रयोदशाक्षरम् ।

अथ चतुर्दशाक्षरम्

तत्र–

१३९. सिंहास्य

यस्मिन्निन्द्रै सख्याता राजन्ते युक्ता वर्णा,
पादे सूर्याश्वै सख्याका सशोभन्ते कर्णा ।
नागानामीशेनैतत् प्रोक्त सिंहास्य कान्ते !
भूपालाना चित्तानन्दस्थान धेहि स्वान्ते ॥ २६५ ॥

यथा–

यो दैत्यानामिन्द्र वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-
र्भिन्दद् ब्रह्माण्ड व्याकुर्व्योच्चैर्व्यामृद्नादुग्रै ।
दत्तालीकान्युन्मिश्र निर्यद्विद्युद्वृद्धास्य-
स्तूर्णं सोऽस्माक रक्षा कुर्याद्घोर(वीर)सिंहास्य ॥ २६६ ॥

इति सिंहास्य १३९

१४०. अथ वसन्ततिलका

हारद्वय स्फुरदुरोजयुत दधाना,
हस्त च गन्धकुसुमोज्ज्वलकङ्कणाढ्यम् ।
पादे तथा सरुतनूपुरयुग्मयुक्ता,
चित्ते वसन्ततिलका किल चाकसीति ॥ २६७ ॥

---

१ ख समल । २. पक्तित्रय नास्ति क प्रतौ ।

★ टिप्पणी– ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीया ।

११६ अथ सुद्युति

कुरु म-सगणौ पादे लकारौ तथा,
कलय वलयं स्यु: कामवर्णा यथा ।
रसपरिमितैर्वर्णैस्तथा स्याद् यति
फणिपकथिता सद्योमते सुद्युति ॥ २८९ ॥

यथा–

यमुनलहरीभूर्भुवा सद्वया
मृगमदमिता स्तोमासमासादया ।
सखि हरिगृहाद् याति प्रगे राधिका
सकलसुदृशां नित्यं मनोबाधिका ॥ २९० ॥

इति सुद्युति ११६

११७ अथ लक्ष्मी

कर्णे विराजितरसकुम्भसान्विता
गन्धाढ्यपुष्पयुतकरेण शोभिता ।
वक्षोरुहे च विमलहारशोभिनी,
लक्ष्मी सदा फलतु ममातुलं फलम् ॥ २९१ ॥

यथा–

वन्दे हरिं फणिपतिभोगशायिनं
सर्वेश्वरं सकलजनेष्टदायिनम् ।
पीताम्बरं मणिमुकुटाविभासुरं,
गो-गोपिकानिकरवृतं हतासुरम् ॥ २९२ ॥

इति लक्ष्मी. ११७

११८. अथ विमलगति

जलधिमित नगणमिह कलय
तदनु च सरि लघुमिह रचय ।
फणिपतिगुरुभिर्तमिति भवति
विलसु मति विमलगति सुयति । ॥ २९३ ॥

यथा–

अभिनवसजलजलदविमल,
निजजनविहृतसकलशमल[1]।
कमलसुललितनयनयुगल,
जय ! जय ! सुरनुतपदकमल ॥ २६४ ॥

इति विमलगति १३८

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोदशाक्षरस्य द्विनवत्युत्तर शतमष्टौ सहस्राणि च ८१९२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचन भेदा समुदाहृता, शेषभेदा सुधीभि प्रस्तार्य समुदाहरणीया इत्यल पल्लवेन ।*

इति त्रयोदशाक्षरम्।

अथ चतुर्दशाक्षरम्

तत्र–

१३९. सिंहास्य

यस्मिन्निन्द्रे सख्याता राजन्ते युक्ता वर्णा,
पादे सूर्याश्वै सख्याका सशोभन्ते कर्णा ।
नागानामीशेनैतत् प्रोक्त सिंहास्य कान्ते !
भूपालाना चित्तानन्दस्थान धेहि स्वान्ते ॥ २९५ ॥

यथा–

यो दैत्यानामिन्द्र वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-
र्भिद्यद् ब्रह्माण्ड व्याकुर्योच्चैर्व्यामृद्नादुग्रै ।
दत्तालीकान्त्युन्मिश्र निर्यद्विद्युद्वृद्धास्य-
स्तूर्णं सोऽस्माक रक्षा कुर्याद्घोर(वीर)सिंहास्य ॥ २९६ ॥

इति सिंहास्य १३९

१४० अथ वसन्ततिलका

हारद्वय स्फुरदुरोजयुत दधाना,
हस्त च गन्धकुसुमोज्ज्वलकङ्कणाढ्यम् ।
पादे तथा सरुतनूपुरयुग्मयुक्ता,
चित्ते वसन्ततिलका किल चाकसीति ॥ २९७ ॥

---

१ ख समल । २ पक्तित्रय नास्ति क प्रतौ ।

* टिप्पणी– ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीया ।

हस्ताग्रे राजद्विरचितवलयद्वन्द्वा,

स्तुत्या सम्प्रोक्ता वरकविभिरसम्बाधा ॥ ३०३ ॥

यथा -

वन्दे गोपालं व्रजजनतरुणीधीरं,

रासक्रीडायामभिगतयमुनातीरम् ।

देवानां वन्द्यं हृतवरवनिताचीरं,

बालैः संयुक्तं दितिसुतदलने वीरम् ॥ ३०४ ॥

इति असम्बाधा १४२

१४३ अथ अपराजिता

द्विजपरिकलिता करेण विराजिता,

कुचयुगकलिता प्रलम्बितहारिणी ।

भुवननिगदितातिशोभितवर्णिनी,

कृतमुनिविरतिर्जयत्यपराजिता ॥ ३०५ ॥

यथा–

अतिरुचिदशनैः सभातमसां हर,

दितिसुतरुधिरं सुरक्तनखाङ्कुरं ।

जलभृदुडुगणौ सटाभिरुपाहरत्[1],

जयति हरितनुर्भटानपि संहरत्[2] ॥ ३०६ ॥

इति अपराजिता १४३.

१४४ अथ प्रहरणकलिका

रचयत नगणद्वयमथ भगणं,

लघुगुरुसहितं कलयत नगणम् ।

प्रहरणकलिका मुनियतिसहिता,

फणिपतिकथिता कविजनमहिता ॥ ३०७ ॥

यथा –

नम मधुमथन जलनिधिशयन,

सुरगणनमित सरसिजनयनम् ।

इति गदनमतिर्भवति हृदि यदा,

भवजलनिधि[त]स्तरति सखि ! तदा ॥ ३०८ ॥

---

१ ख उपाहरन् । २ ख. संहरन् ।

यथा वा कृष्णकुतूहले—

व्रजयुवतिभिरित्यभिमतवचसि
प्रतिपदममृतद्रवमिव विकिरति ।
मनसिजविशिखप्रपतनविधुरा
स्वविरहदहनप्रशमनमकरोः[1] ॥ ३०९ ॥

इति मधुरमालिका १४४

१४५ अथ वासन्ती

कर्णौ कृत्वा कुण्डलसहितौ गन्धं पुष्पं
हस्ते धृत्वा कङ्कणमथ हारं राजन्तम् ।
स्वर्णेनाढ्यं नूपुरमथ धृत्वा राजन्ती
नागप्रोक्ता राजति कविचित्ते वासन्ती ॥ ३१० ॥

यथा—

वन्दे गोपीमन्मथजनकं कंसारातिं
भूमेः कार्यार्थं नृपु कृतमिथ्याविख्यातिम् ।
रासे वंशीवादननिपुणं कुञ्जे कुञ्जे
लीलालोलं गोकुलवनारीणां पुञ्जे ॥ ३११ ॥

इति वासन्ती १४५

१४६ अथ लोला

कर्णे कुण्डलयुक्ता हस्ते स्वर्णसनाथं
बिभ्राणा वलयाढ्यं हारौ चोज्ज्वलपुष्पौ ।
सध्वानं च दधाना दिव्यं नूपुरयुग्मं
नागोक्ता कविचित्ते कान्ता राजति लोला ॥ ३१२ ।

यथा—

गोपालं कलयेऽहं नित्यं नन्दकिशोरं
वृन्दारण्यनिवासं गोपीमानसचौरम्[2] ।
वंशीवादनसक्तं नम्रे कुञ्जकुटीरे
नारीभिः कृतरासं कालिन्दीवरतीरे ॥ ३१३ ॥

इति लोला १४६

---

१ क करोति । २ क चोर ।

१४७ अथ नान्दीमुखी

द्विजपरिकलिता हस्तयुक् कङ्कणाढ्या,
विरुतविलसितौ नूपुरौ धारयन्ती ।
रसकनकयुत हारमुच्चैर्दधाना,
स्वरविरतियुता भाति नान्दीमुखीयम् ॥ ३१४ ॥

यथा–

नखगलदसृजा पानतो भीषणास्य,
सुरनृपतिमुखैर्देवसंघैरुपास्य ।
भयजनकरवैर्नादयद्दिङ् मुखानि,
प्रकटयतु स व सिंहवक्त्र सुखानि ॥ ३१५ ॥

इति नान्दीमुखी १४७,

१४८ अथ वैदर्भी

कर्णे कृत्वा कनकसुललित ताटङ्क,
सविभ्राणा द्विजमथ वलय हस्ताग्रे ।
दिव्य हारद्वितयमथ दधाना युक्त
वेदैश्छिन्ना जगति विजयते वैदर्भी ॥ ३१६ ॥

यथा–

वन्दे नित्य नरमृगपतिदेह व्यग्र,
दैत्येशोर स्थलदलनविधावत्युग्रम् ।
प्रह्लादस्याभिलषितवरद सृक्काग्रे,
सलिह्यन्त रुधिरविलुलित जिह्वाग्रम् ॥ ३१७ ॥

इति वैदर्भी १४८

१४९. अथ इन्दुवदनम्

धेहि भगण तदनु धारय जकार,
हस्तमथ कारय ततोऽपि च नकारम् ।
हारयुगल तदनु देहि चरणान्ते,
नागकृतमिन्दुवदन भवति कान्ते ! ॥ ३१८ ॥

यथा–

नौमि वनितावितत‌रासरसयुक्त,
गोकुलवधूजनमनोहरणसक्तम् ।

देवपतिपर्वहरसज्जनसुवश,
मूमिवभये निहतदैत्यगणलक्षम् ॥ ३१९ ॥

इति इन्दुवदनम् १४९

रमोमिक्रमन्यत्र* ।

१५ अथ शरभी

कर्णे स्वर्णोज्ज्वलमणितटङ्कयुक्त
सविभ्राणा द्विजमय रत्त नूपुरावयम् ।
हारं पुष्पं वलययुगल धारयन्ती
वेदमिताशा जयति शरभी पिङ्गलोक्ता ॥ १२० ॥

यथा–

वन्दे कृष्णं नवजलधरश्यामलाङ्गं
वृन्दारण्ये व्रजयुवतिभिर्जातसङ्गम् ।
कालिन्दीये सरसपुलिने क्रीडमानं
कालीयाहे प्रथितयशसो धूतमानम् ॥ ३२१ ॥

इति शरभी १५

१५१ अथ अहिधृति

रचय मयुगलं कुरु ततो भगणं,
लघुगुरुसहित कुरु तथा जगणम् ।
मुनिविरतियुता फणिनृपस्य कृति
जगति विजयते सुविमलाऽहिधृति ॥ १२२ ॥*

यथा–

सकलतमूभृतां जलमपेयतरं
विगतवि[ष]मयं रचयितु कृपया ।
पतति तरुवराच्चिरसि मन्दसुतो
भुजगमरसहा विजयतेऽहिधृति ॥ १२३ ॥*

इति अहिधृति १५१

१५२ अथ विमला

रचय म भूपती कुरु तथा भगणं
लघुयसयान्वितं च विरतौ जगणम् ।

१. स्तबकार्थ । २ पूर्ण पद्य नास्ति क प्रतौ ।
*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर म १ पा ८२

फणिपतिभाषिता रविहयैर्विरति-
वरकविमानसेऽतिविमला जयति ॥ ३२४ ॥

यथा–

व्रजजननागरीदधिहृतावतुला,
तरणिसुतातटे हरितनुर्विमला[1] ।
वरवनितादृशा सुसुकृतैककला,
मम विमले सदा भवतु हृद्यचला ॥ ३२५ ॥

इति विमला १५२

१५३. अथ मल्लिका

कुरु गन्धयुग्मसहितं मृगाधिपतिं,
रचयाशु सन्ततमथो नरावपि सम् ।
इह मल्लिका कलयता विलासवतीं,
नवपञ्चकैर्यतियुता मुदो[2] जननीम् ॥ ३२६ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसूनुरिह मे मनोहरण,
जनताप्रसादसुमुखस्तमोहरण ।
भविता सहायकरणो जनानुगत,
करवै कमत्र शरणं वने सुखत ॥ ३२७ ॥

इति मल्लिका १५३

१५४ अथ मणिगणम्

जलधिमित नगणमिह कलयत,
तदनु च लघुयुगमपि रचयत ।
सकलफणिनृपतिविरचितमिति,
निजहृदि कलयत मणिगणमिति ॥ ३२८ ॥

यथा–

भुजयुगलविलसितफणिवलय,
कृतसकलदितिसुतकुलविलय ।
प्रलयसमयभयजनक सलय[3],
वृषगमनमपि सुखमनुकलय ॥ ३२९ ॥

इति मणिगणम् १५४

---

१ पद्यस्य पूर्वार्द्धभाग नास्ति ख. प्रतौ । २ ख मुदा । ३ ख जनसकलय ।

देवपतिसमर्दहरसम्भनसुदक्ष
भूमिवलये मिहतदैत्यगणसक्षम् ॥ ३१६ ॥

इति इन्दुवदनम् ११८

स्त्रोभिक्रमन्यत्र* ।

११ अथ शरभी

कर्ण स्वर्णोज्ज्वलममितहाटङ्कयुक्त
सविभ्राणा द्विममय रस नूपुरावयम् ।
हार पुष्प वसमयुगल धारयन्ती
वेदैर्विख्या जयति शरभी पिङ्गलोक्ता ॥ ३२० ॥

यथा–

वन्दे कृष्णं नवजलधरश्यामलाङ्ग
वृन्दारण्ये व्रजयुवतिभिर्जातसङ्गम् ।
कालिन्दीये सरसपुलिने क्रीडमानं
कालीयाहे प्रथितयशसो मूतमानम् ॥ ३२१ ॥

इति शरभी ११

१२१ अथ अहिधृति

रचय मयुगल कुरु ततो नगण
सगुरुसहितं कुरु तथा नगणम् ।
मुनिविरतियुता फणिनृपस्य कृतिः,
जगति विजयते सुविमलाऽहिधृतिः ॥ ३२२ ॥[१]

यथा–

सकमलगुभृता जलमपेयतर
विगतवि[ध]मर्म रचयितु कृपया ।
पतति तरुवराच्छिरसि मन्वसुते
भुजगमरसहा विजयतेऽहिधृतिः ॥ ३२३ ॥*

इति अहिधृतिः १२१

१२२ अथ विमला

रचय म-भूपती कुरु तथा भमर्थ
मधुवमयार्चितं च विरतौ जगणम् ।

---

* क क्रमान्यत्र। २ पूर्वं पद्य नास्ति क प्रतौ।
टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर अ ३ पृ ८१

यथा–

अयममृतमरीचिर्दिग्वधूकर्णपूर
सपदि परिविधातु कोऽपि कामोव कान्त ।
सरस इव नभस्तोऽत्य-तविस्तारयुक्ता-
दुडुगणकुमुदानि प्रोञ्चकैरुञ्चिनोति ॥ ३३३ ॥

यथा वा, पाण्डवचरिते—

भवनमिव ततस्ते वाणजालैरकुर्वन्,
गजरथहयपृष्ठे वाहुयुद्धे च दक्षा ।
विधृतनिशितखङ्गाश्चर्मणा भासमाना,
विदधुरथ समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ॥ ३३४ ॥

यथा वा, अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मन इव रमणोना रागिणी वारुणीय,
हृदयमिव युवानस्तस्करा स्व हरन्ति ।
भवनमिव मदीय नाथ शून्यो हि देश-
स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा ॥ ३३५ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

निरवधिदिनमाना य विना गोपवध्व-
स्तमभिकमभिसाय वीक्षमाणा ननन्दु ।
स्मितमधुरमपाङ्गालोकन प्रीतिवल्या,
कुसुममिव तदीय वीक्ष्य कृष्णोप्यतुष्यत् ॥ ३३६ ॥

इति मालिनी १५६

१५७ अथ चामरम्

पक्षिराजभूपतिक्रमेण यद् विराजते,
वाणभूमिसख्ययाक्षर च यत्र भासते ।
नागराजभाषित तदेव चारुचामर,
मानसे विधेहि पाठतोऽपि मोहितामरम् ॥ ३३८ ॥

यथा–

नौमि गोपकामिनीमनोविनोदकारण,
लीलयावधूतकसराजमत्तवारणम् ।
कालियाहिमस्तकोल्लसन्मणिप्रकाशित,
नन्दनन्दन सदैव योगिचित्तभासितम् ॥ ३३८ ॥

'अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्दशाक्षरस्य चतुरशीत्यधिकानि त्रिशतानि षोडश-सहस्राणि च भेदास्तेषु कियन्तो भेदाः प्रदर्शिताः शेषभेदाः सुधीभिराकरग्रन्थ-स्वमत्या वा प्रस्तार्य समूहनीया इति दिक् * ।

इति चतुर्दशाक्षरम् ।

अथ पञ्चदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

१२५ लीलाखेलः

यस्मिन् वृत्ते रव्यश्वैः सख्याता दृश्यन्ते कर्णाः
पादे पादे तिथ्या सम्प्रोक्ताः संशोभन्ते वर्णाः ।
हारश्चैकोऽन्ते यस्मिन्नागानामीशेन प्रोक्तं,
लोके वृत्तानां सारं लीलाखेलाख्यं तद्वृत्तम् ॥ १० ॥

यथा

देवैर्वन्द्यं त्रैलोक्यास्थानं देहं खर्वीकुर्वन्
दैत्यानामीशं भूम्याः स्थाने[1] पातालस्थं कुर्वन् ।
स्वाराज्यं देवेशायाऽऽयच्छत् स्वर्याऽऽप समञ्चन्
मामव्याद् गोविन्दो वैरोच्यानाशी[2]'[3] गर्जन् ॥ ३११ ॥

इति लीलाखेलः १२५

यथा वा –

'मा कान्ते पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशे स्वाप्सीः' इति ज्यौतिषिकायां कालपरि-माणपरं उदाहरणमिति कण्ठाभरणे* । लीलाखेलस्य एतस्यैवान्यत्र सारङ्गिका'* इति नामान्तरमुक्तम् ।

१२६ अथ मालिनी

द्विजकरतलयाढ्या नूपुरारावयुक्ता
श्रवणरचितपुष्पप्रोतताटङ्कयुग्मा ।
वसुरचितविरामा सर्वलोकैकवर्णा
फणिपतिपतिकान्ता भासते मालिनीयम् ॥ ३१२ ॥

---

१ पंक्तिरियं नास्ति क प्रतौ । २ ख वातः । ३ ख वैरोचन्याशीः

*टिप्पणी—१ ग्रन्थान्तरेषु प्राप्तशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्याः ।

*टिप्पणी–२ मा कान्ते । पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशे स्वाप्सीः
कान्त वचन युक्त पुण्यं चन्द्र मत्वा रात्रौ चेद् ।
कुत्साम भाटचेतश्चैतौ राहु कूट प्रायाद्
तस्माद्मासान्ते हर्म्यस्यान्ते पर्यंकान्ते कर्तव्या ॥
[कण्ठाभरण]

*टिप्पणी–३ प्राकृतपैङ्गलम्-द्वितीयपरिच्छेद पद्य १२६ ।

यथा–

अयममृतमरीचिर्दिग्वधूकर्णपूर
सपदि परिविधातु कोऽपि कामीव कान्त ।
सरस इव नभस्तोऽस्य·तविस्तारयुक्ता-
दुडुगणकुमुदानि प्रोच्चकैरुच्चिनोति ॥ ३३३ ॥

यथा वा, पाण्डवचरिते—

भवनमिव ततस्ते बाणजालैर्कुर्वन्,
गजरथहयपृष्ठे बाहुयुद्धे च दक्षा ।
विधृतनिशितखड्गाश्चर्मणा भासमाना,
विदधुरथ समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ॥ ३३४ ॥

यथा वा, अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मन इव रमणीना रागिणो वारुणीय,
हृदयमिव युवानस्तस्करा स्व हरन्ति ।
भवनमिव मदीय नाथ शून्यो हि देश-
स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा ॥ ३३५ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

निरवधिदिनमाना य विना गोपवध्व-
स्तमभिकमभिसाय वीक्षमाणा ननन्दु ।
स्मितमधुरमपाङ्गालोकन प्रीतिवल्या,
कुसुममिव तदीय वीक्ष्य कृष्णोप्यतुष्यत् ॥ ३३६ ॥

इति मालिनी १५६[1]

१५७ अथ चामरम्

पक्षिराजभूपतिक्रमेण यद् विराजते,
बाणभूमिसख्ययाक्षर च यत्र भासते ।
नागराजभाषित तदेव चारुचामर,
मानसे विधेहि पाठतोऽपि मोहितामरम् ॥ ३३८ ॥

यथा–

नौमि गोपकामिनीमनोविनोदकारण,
लीलयावधूतकसराजमत्तवारणम् ।
कालियाहिमस्तकोल्लसन्मणिप्रकाशित,
नन्दनन्दन सदैव योगिचित्तभासितम् ॥ ३३८ ॥

यथा वा भूषणे[1]*—

रासलास्यगोपकामिनीघनेन खेलता
पुष्पपुञ्जमञ्जुकुञ्जमध्यगेन दोमता ।
दामनृत्यशालिगोपबालिकाविलासिना
माधवेन आमते सुखाय मन्दहासिना ॥ १३६ ॥

इति चामरम् १२७

एतस्यैव अन्यत्र तूणक *[1] इति नामान्तरम् ।

१२८ अथ भ्रमरावलिका

चरणे विनिधेहि सकार्यमिषूपमितं,
कुरु वर्णमपीषुमिताकरसप्रमितम् ।
फणिनायकपिङ्गलभाषितमुख कमिका
सखि ! भाति कवीन्द्रमुखे भ्रमरावलिका ॥ १४० ॥

यथा—

कलकोकिलकूजितपूजितमू(ल)वनं
घनशालितवीनसरोजवनीपवनम् ।
हिमदीधितिकान्तिपयःपरिधौतमिव
जगदाशु विलोक्य[1] परित्यज मानमिदम् ॥ १४१ ॥

यथा वा भूषणे[2]—

सखि ! सम्प्रति कं प्रति मौनमिदं विहित
मदनेन मनु सघर स्वकरे निहितम् ।
मतिशालिनि का वनमालिनि मानकथा
रतिनायकसायकदुःखमुपैषि[2] मुधा ॥ १४२ ॥

इति भ्रमरावलिका १२८.

भ्रमरावलीति पिङ्गले *

---

१ ख जगदाशु विलोक्य । २ 'मुपैति' वाणीभूषणे ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम् द्वितीयाध्याय प २६१
२ छन्दोमञ्जरी द्वितीयस्तबक कारिका ११०
३ वाणीभूषणम् द्वितीयाध्याय पद्य २६६
४ प्राकृतपैङ्गलम् द्वितीयपरिच्छेद प १२४

१५९. अथ मनोहंसः

प्रथम विधेहि कर जंकारविराजित,
जगण ततो भगणेन कारय भूषितम् ।
विनिधेहि पक्षिपतिं ततस्तिथिजाक्षर,
कुरु हंसमेणविलोचने मनस परम् ।। ३४३ ।।

यथा–

तनुजाग्निना सखि ! मानस मम दह्यते,
तनुसन्धिरुष्णगदारुवत् परिभिद्यते ।
अधर च शुष्यति वारिमुक्तसुशालिवत्,
कुरु मद्गृह कृपया सदा वनमालिमत् ।। ३४४ ।।

यथा वा–

नवमञ्जुवञ्जुलकुञ्जकूजितकोकिले,
मधुमत्तचञ्चलचञ्चरीककुलाकुले ।
समयेतिधीरसमीरकम्पितमानसे,
किमु चण्डि मानमनोरथे न विखिद्यसे ।। ३४५ ।।

इति मनोहंस १५९

१६० अथ शरभम्

जलनिधिकृतमिह विरचय नगण ,
चरणविरतिमनुविरचय सगणम् ।
वरफणिपतिविरचितमतिरुचिर ,
शरभमखिलहृदि विलसति सुचिरम् ।। ३४६ ।।

यथा–

नभसि समुदयति सखि ! हिमकिरण ,
वहति सुलघुलघुमलयजपवनम् ।
त्यजति तिमिरमिदमपि(भि) जननयन ,
द्रुतमनुविरचय मधुरिपुशयनम् ।। ३४७ ।।

इति शरभम् १६०

इदमेवान्यत्र शशिकला*[१] इति नामान्तरेण उक्तम् ।
अथ मणिगुणनिकरस्रजौ छन्दसी, किन्च—
इदमेव हि यदि वसुयति ८ मणिगुणनिकराख्यमीर्यते हि तदा ।
यदि तु रसे ६ विश्राम स्रगिति समाख्या तदा लभते ।। ३४८ ।।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी द्वितीयस्तवक, कारिका १३१

यथा वा भूषणे[1]*—

रासलास्यगोपकामिनीजनेन सेवता
पुष्पपुञ्जमञ्जुकुञ्जमध्यगेन शोभता ।
तालनृत्यशालिगोपबालिकाविलासिना
माधवेन जायते सुखाय मन्दहासिना ॥ १३९ ॥

इति चामरम् ११७.

एतस्यैव प्रथम तूणक **[1] इति नामान्तरम् ।

११८ अथ भ्रमरावलिका

चरणे विनिवेहि सकारमिपूपमितं,
कुरु वर्णमपीपुमिथाकरसंप्रमितम् ।
फणिनायकपिङ्गलभाषितमुत कणिका
सखि ! भाति फणीन्द्रमुखे भ्रमरावलिका ॥ १४० ॥

यथा–

कलकोकिलकूजितपूजितम् (त) वनं
नवजाक्षितवीमसरोजवनीपवनम् ।
हिमदीधितिकान्तिपयःपरिधौतमिदं
जगदाशु विलोक्य[1] परित्यज मानमिदम् ॥ १४१ ॥

यथा वा भूषणे[3]–

सखि ! सम्प्रति क प्रति मौनमिदं विहितं
मदनेन धनुः शरस्करे निहितम् ।
नतिशालिनि का वनमालिनि मानकथा
रतिनामकसायकदुःसमुपैषि[2] वृथा ॥ १४२ ॥

इति भ्रमरावलिका ११८.

भ्रमरावलीति पिङ्गले *

---

१ ख. जगदाशुवि लोचय । २ 'मुपैषि' वाणीभूषणे ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय प १९९
२ छन्दोमञ्जरी द्वितीयस्तबक कारिका ११७
३ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय पद्य २११
४ प्राकृतपैङ्गलम् द्वितीयपरिच्छेद प १३४

१५९. अथ मनोहंसः

प्रथम विधेहि कर जंकारविराजित,
जगण ततो भगणेन कारय भूषितम् ।
विनिधेहि पक्षिपतिं ततस्तिथिजाक्षर,
कुरु हंसमेणविलोचने मनस परम् ॥ ३४३ ॥

यथा–

तनुजाग्निना सखि ! मानस मम दह्यते,
तनुसन्धिरुष्णगदारुवत् परिभिद्यते ।
अधर च शुष्यति वारिमुक्तसुशालिवत्,
कुरु मद्गृह कृपया सदा वनमालिमत् ॥ ३४४ ॥

यथा वा–

नवमञ्जुवञ्जुलकुञ्जकूजितकोकिले,
मधुमत्तचञ्चलचञ्चरीककुलाकुले ।
समयेतिधीरसमीरकम्पितमानसे,
किमु चण्डि मानमनोरथे न विखिद्यसे ॥ ३४५ ॥

इति मनोहंस १५९

१६० अथ शरभम्

जलनिधिकृतमिह विरचय नगण ,
चरणविरतिमनुविरचय सगणम् ।
वरफणिपतिविरचितमतिरुचिर ,
शरभमखिलहृदि विलसति सुचिरम् ॥ ३४६ ॥

यथा–

नभसि समुदयति सखि ! हिमकिरणं ,
वहति सुलघुलघुमलयजपवनम् ।
त्यजति तिमिरमिदमपि(भि) जननयन ,
द्रुतमनुविरचय मधुरिपुशयनम् ॥ ३४७ ॥

इति शरभम् १६०

इदमेवान्यत्र शशिकला*'इति नामान्तरेण उक्तम् ।
अथ मणिगुणनिकरस्रजौ छन्दसी, किञ्च—
इदमेव हि यदि वसुयति ८ मणिगुणनिकराख्यमीर्यते हि तदा ।
यदि तु रसे ६ विश्राम स्रगिति समाख्या तदा लभते ॥ ३४८ ॥

---

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी द्वितीयस्तबक, कारिका १३१

अपि च

मणिगुणनिकरोदाहृतिरिह शरभोदाहृतौ ज्ञेया ।
सगुदाहरणं ज्ञेयम् लक्षणवाक्ये तु शरभस्य ॥ १४९ ॥

यथा वा–

नरकरिपुरवतु निखिलसुरगति
रमितमहिममरसहृजनिवसतिः[1] ।
अनवधिमणिगुणनिकरपरिचित
सरिदधिपतिरिव धृततनुविभवः ॥ ३२० ॥
अयि ! सहचरि ! रुचिरतरगुणमयी
प्रतिभवसतिरनपगतपरिमला ।
स्रगिव निवसति सततमुपमरला ,
सुमुखि ! मुदितदनुजदलनहृदये ॥ १५१ ॥

इति छन्दोमञ्जर्यामुदाहरणद्वयं* यतिभेदेनोक्तम् । प्रकृत तु शरभमेव इति न कश्चिद् विशेष ।

१६१ अथ निशिपालकम्

*भेहि भगणं तदनु भूपतिमथो कुरु
देहि भगण च रगणं कुरु ततः परम् ।
नागनृपपिङ्गलसुभाषितमुदीरितं
वृत्तममलं हृदि निधेहि निशिपालकम् ॥ १५२ ॥

यथा–

गोपतरुणीजनमनोहरणपण्डितं
हस्तयुगधारितसुवेणुपरिमण्डितम् ।
चन्द्रकविराजितविलोलमुकुटं मुदा
नौमि हरिमर्कतनयातटगतं सदा ॥ १५३ ॥

यथा वा भूषणे –

चन्द्रमुखि ! जीवमुखि(वि) ! याति मलयानिले
याति मम चित्तमिव याति मदनानिले ।

---

१ क. तनिविल मुनति । २ नाह 'वाणीभूषणे' ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी द्वितीयस्तबक कारिका १११ ११२
२ वाणीभूषणम् द्वितीयाध्याय पद्य १२६

तापकर-कामशर-शल्यवरकीलित[१],
मामिह हि पश्य जहि कोपमतिशीलितम्[२] ॥ ३५४ ॥

इति निशिपालकम्, १६१.

१६२. अथ विपिनतिलकम्

रचय नगण तदनु धेहि हस्त मुदा,
नगणसहित रगणयुग्ममन्ते सदा ।
रसनवयति फणिपभाषित सुन्दर
विपिनतिलक कलय बाणविध्वक्षरम् ॥ ३५५ ॥

यथा–

नरवरपतेरिव नरा. शशाङ्काशवः,
तिमिरनिकर. सपदि चोरवद् गच्छति ।
अयमपि रवि सखि ! हृताधिकारिप्रभ,
कथयति विधो खगकुल जय वदिवत् ॥ ३५६ ॥

यथा वा–

जयति करुणानिधिरशेषसत्तारक,
कलितललितादिवनितामनोहारक ।
सकलधरणीपकुलमण्डलीपालकः,
परमपदवीकरणदेवकीबालक ॥ ३५७ ॥

इति विपिनतिलकम् १६२

१६३. अथ चन्द्रलेखा

कर्णे ताटङ्कयुग्म पुष्पाढ्यहारौ दधाना,
बिभ्राणा नूपुरस्य द्वन्द्व सुराव सुचित्तम् ।
पादान्ते धारयन्ती वीणा सुवर्णावियुक्ता,
नागोक्ता चन्द्रलेखा सप्ताष्टछेदैरमुक्ता ॥ ३५८ ॥

यथा–

नित्य वन्दे महेश गौरीशरीरार्द्धयुक्तं,
दग्धाऽनङ्ग पुरारिं वेतालसङ्घैरमुक्तम् ।
बिभ्राण चन्द्रलेखा नृत्येषु कृत्ति धुनान,
गङ्गासञ्जातसङ्ग दृष्ट्या त्रिलोकी पुनानम् ॥ ३५९ ॥

इति चन्द्रलेखा १६४.

चण्डलेखा इत्यन्यत्र ।

---

१ तल्पभरशीलितम्, 'वाणीभूषणे' ।　२. शेषमतिसम्भितम् 'वाणीभूषणे' ।

तापकर-कामशर-शल्यवरकीलित[1],
मामिह हि पश्य जहि कोपमतिशीलितम्[2] ॥ ३५४ ॥

इति निशिपालकम् १६१.

१६२. अथ विपिनतिलकम्

रचय नगण तदनु धेहि हस्त मुदा,
नगणसहित रगणयुग्ममन्ते सदा ।
रसनवयति फणिपभाषित सुन्दर
विपिनतिलक कलय बाणविध्वक्षरम् ॥ ३५५ ॥

यथा–

नरवरपतेरिव नरा शशाङ्काशवः,
तिमिरनिकर सपदि चौरवद् गच्छति ।
अयमपि रवि सखि ! हृताधिकारिप्रभ,
कथयति विधो खगकुल जय वदिवत् ॥ ३५६ ॥

यथा वा–

जयति करुणानिधिरशेषसत्तारक,
कलितललितादिवनितामनोहारक ।
सकलधरणीपकुलमण्डलीपालकः,
परमपदवीकरणदेवकीबालक ॥ ३५७ ॥

इति विपिनतिलकम् १६२

१६३ अथ चन्द्रलेखा

कर्णे ताटङ्कयुग्म पुष्पाढ्यहारौ दधाना,
बिभ्राणा नूपुरस्य द्वन्द्व सुराव सुचित्तम् ।
पादान्ते धारयन्ती वीणा सुवर्णैर्वियुक्ता,
नागोक्ता चन्द्रलेखा सप्ताष्टच्छेदैरमुक्ता ॥ ३५८ ॥

यथा–

नित्य वन्दे महेश गौरीशरीरार्द्धयुक्त,
दग्धाऽनङ्ग पुरारिं वेतालसङ्घैरमुक्तम् ।
बिभ्राण चन्द्रलेखा नृत्येषु कृत्ति धुनान,
गङ्गासञ्जातसङ्ग दृष्ट्या त्रिलोकी पुनानम् ॥ ३५९ ॥

इति चन्द्रलेखा १६४

चण्डलेखा इत्यन्यत्र ।

---

१ तल्पमरकीलितम्, 'वाणीभूषणे' । २. कोपमतिसञ्चितम् 'वाणीभूषणे' ।

१६४ अथ चित्रा

कर्णद्वन्द्वं ताटङ्काभ्यां योजितं कारयित्वा
हारौ बिभ्राणा स्वर्णरूपं पुष्पयुक्तं तमेव ।
विप्रयुक्तवर्णेः संयुक्ता कङ्कणौ धारयन्ती,
शोभां धत्ते चित्रां चित्रा शब्दवन्नूपुराभ्याम् ॥ ३६० ॥

यथा–

कालिन्दीकूले केलीलोलं वधू'वृन्दयुक्तं,
वन्दे गोपालं रक्षायां नन्दगोपस्य दक्षम् ।
हस्तद्वन्द्वे धृत्वा वंशीं वैणिकां पूरयन्तं
यत्नेनान् हत्वा देवानां शकटं दूरमन्तम् ॥ ३६१ ॥

इति चित्रा १६४

चित्रमिदमन्यत्र' ।

१६५ अथ केसरम्

कुरु भगणं ततोऽपि च विधेहि नृपतिं,
भगणपयोधरौ तदनु पक्षिणां पतिम् ।
फणिपतिभाषितं विविधभावविताभरं
सुकविमनोहरं हृदि निधेहि केसरम् ॥ ३६२ ॥

यथा–

विरमिह मानसे कलय नन्दबालकं
भवघनभासितं विविधतापहारकम् ।
व्रजवनितारसोदधिनिमग्नमानसं
रविसुतमातटे कलितपीतवाससम् ॥ ३६३ ॥

इति केसरम् १६५

१६६ अथ दुला

प्रथमं धरं रचय भगणमनु कार्ते ।
नगणद्वयं तदनु कुरु मगणमन्ते ।
फणिभाषिता द्वरपरिमितविरामा
कुरुतेऽतिमुद्वि सुकविबुधनिचिरेसा ॥ ३६४ ॥

---

१ क अन्यू ।

टिप्पणी–१ दामोदरात्मजी (?) हिन्दीभाषान्तर वार्तिका १११

यथा—

हृदि भावये विमलकमलनयनान्त ,
जनपावन नवजलधररुचिकान्तम् ।
व्रजनायिकाहृदयमधिजनितकाम ,
वनमालिन सकलसुरकुलललामम् ॥ ३६५ ॥

इति एला १६६.

१६७ अथ प्रिया

कुरु नगणयुग धेहि त भगण तत ,
प्रतिपदविरतौ भासते रगणोऽन्तत. ।
मुनिरचितयति[१]र्नागराजफणिप्रिया ,
सकलतनुभृता मानसे लसति प्रिया ॥ ३६६ ॥

इदमेव हि यदि वसुयति८ रलिरिति सज्ञा तदाप्नोति ।
लक्षणवाक्ये मुनियतिरुदिता वसुकृतयतिश्च यथा ॥ ३६७ ॥

यथा—

कलय दशमुखारि हताखिलदानव ,
मुनिजनमखपालमृषा भुवि मानदम् ।
सरसिजनयनान्त शरासनभञ्जक ,
कपिकुलवरराज सदा प्रियसज्जकम् ॥ ३६८ ॥

इति प्रिया १६७

१६८ अथ उत्सव

पक्षिराज-नगणौ भगण-द्वितय तत.
कारयाशु पदशेषकृतो रगणो मत ।
उत्सव फणिनागकृत सखि ! भासते ,
पङ्क्तिजाक्षरविरामयुत कविमानसे ॥ ३६९ ॥

यथा—

बभ्रमीति हृदय जलधौ तरणिर्यथा ,
दह्यते सखि ! तनुर्नलिनीव हिमागमे ।
वायुलोलकदलीव तनुर्मम वेपते ,
चन्दन शुचि सरोवदिद परिशुष्यति ॥ ३७० ॥

इति उत्सव १६९

---

१ ख यति ।

१११ अथ उडुपचम् ।

भुवनविरचितमिह लघुमुपनय ,
                    तदनु विपुलतलघुमिह विरचय ।
उडुगणमखिलहृदयकृतमदन—
                    मुपिकृतविरतिमनुकुरु सुवदन ! ॥ ३७१ ॥

यथा–

दहनगतमसकनकनिभवसन
                    कटिधृतविरचितरुचिरवररसन ।
सुरकृतनमन जलनिधिनिवसन
                    धमनुविरचय कुसुमनिभहसन ॥ ३७२ ॥

इति उडुपचम् १११

¹अत्रापि प्रस्तारगत्या पञ्चदशाक्षरस्य द्वात्रिंशत्सहस्राणि सप्तशतानि अष्ट षष्ट्युत्तराणि ३२७६८ भेदास्तेषु आद्यन्तसहिता' कियन्त प्रोक्ता', शेषभेदा प्रस्ताय सक्षणीया इति दिक्¹⁴ ।

इति पञ्चदशाक्षरम् ।

अथ षोडशाक्षरम्

तत्र–

१७   रामः

यस्मिन्नष्टौ पादस्थित्या युक्ता सद्रूपस्थे कर्णा,
                    सप्तोमन्ते पादे पादे गुञ्जारे संख्याता वर्णा ।
यस्मिन् सर्वस्मिन् पाद स्याद् वैदर्भैपद्विभाग
                    सर्पाणामीशेन प्रोक्त गन्धछन्द स्यु (स्तु) अष्टौ राम ॥३७३॥

यथा–

दन्दापदैर्बन्धैर्नित्यं यस्य पायात्सोऽर्द राम
                    सदाम्भो यानुस्ते दद सर्वेषां कमानां धाम ।
यन्नीभूत्यार्यन्तं सिन्धा दत्ताभोगो यत्नं येनात्
                    मातुर्मूर्ध्नि बद्धे बिभ्रद् यो धे हत्वे कर्णं मागात् ॥ ३७४ ॥

इदमेवान्यत्र ब्रह्मरूपकम¹⁵इति नामान्तरं मतम् ।

इति राम· १७

१ [illegible] नास्ति क प्रतौ । २ क [illegible] ।

* टिप्पणी—१ [illegible] ।

टिप्पणी—२ [illegible] १०४

१७१ अथ पञ्चचामरम्

शरेण नूपुरेण यत्क्रमेण भाविताक्षर,
वसुप्रयुक्तभेदभाग् भवेच्च षोडशाक्षरम् ।
फणीन्द्रराजपिङ्गलोक्तमुक्तमत्र भासुर,
विधेहि मानसे सदैव चारु पञ्चचामरम् ।। ३७५ ।।

यथा—

कठोरठात्कृतिध्वनत्कुठारधारभीषण,
स्वय कृतप्रतिज्ञया सहस्रबाहुदूषणम् ।
समस्तभूमिदक्षिणे मखे मुनीन्द्रतोषण,
नतो महेन्द्रवासिन भृगुन्तु[1] वशभूषणम् ।। ३७६ ।।

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामह-श्रीरामचन्द्रभट्टमहाकविपण्डितविरचित दशावतारस्तोत्रे जामदग्न्यवर्णने—

अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन-
क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिक्वणत्कुठारभीषण ।
प्रकामवाम जामदग्न्यनाम राम हैहय-
क्षयप्रयत्ननिर्दय व्यय भयस्य जृम्भय ।। ३७७ ।।

इति पञ्चचामरम् १७१

एतस्यैव अन्यत्र नराचम्'*इति नामान्तरम् ।

१७२ अथ नीलम्

वेद-भकारविराजितमद्भुतवृत्तवर,
भामिनि ! भावय चेतसि कङ्कणशोभि करम् ।
पिङ्गलनागसुभाषितमालि विमोहकर,
नीलमिद रसभूमिविभावितवर्णधरम् ।। ३७८ ।।

यथा—

पर्वतधारिणि गोपविहारिणि 'नन्दसुते,
सुन्दरि हारिणि'[2] कसविदारिणि बालयुते ।
पङ्कजमालिनि केलिषु शालिनि मे सुमति-
वेणुविराविणि भूम(भ)रहारिणि जातरति ।। ३७९ ।।

इति नीलम् १७२.

---

१. ख. भृगुरु । '—' २ क प्रतौ नास्ति ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पृ० २७३

१७३ अथ चम्पकमाला

'हारमेरुयक्रमेण यद्विराजते सुकेशि !,
षोडशाक्षरेण यद् विकासितं भवेद् सुवेषि ! ।
पिङ्गलेन भाषितं समस्तनागनायकेन
तद्धि चम्पकमालिका कवीन्द्रमोददायकेन ॥ ३८० ॥

यथा–

आलि ! रासजातलास्यलीलया सुशोभितेन,
गैरिकादिधातुवन्यभूषणानुभूषितेन ।
गोपिकाविमोहिरावपवंशिकाविनोदितेन
मन्मनो हृतं व्रजाटवीषु केलिमोदितेन ॥ ३८१ ॥

यथा वा भूषणे *—

आलि ! याहि मञ्जुकुञ्जगुञ्जितालिमालितेन,
भास्करात्मजाविराजिराजि'तीरकाननेन ।
शोभिते स्थले स्थितेन सङ्गता यदूत्तमेन
माधवेन भाविनी तडित्सतेव नीरदेन ॥ ३८२ ॥

इति चम्पकमाला १७३

एतस्यैवान्यत्र 'चित्रसङ्गम्'* इति नामान्तरम् ।

१७४ अथ मदनललिता

कर्णे कृत्वा कनकरुचिरं ताटङ्कसहितं,
सविभ्राणा द्विजमय पुन' स्वर्णाञ्चितवसया ।
हारी धृत्वा कुसुमकलितौ हस्तेन रुचिरा
वेदै' षड्भिर्मदनललिता छिन्ना रसयति' ॥ ३८३ ॥

यथा–

कालिन्दीये तटभुवि सदा' केलीषु ममित
राधाचित्तप्रणयसदनं गोपेषु (पीषु) मणितम् ।
मविभ्राणं विततरुचिर यद्य करतले
ध्यायेन्नित्यं व्रजपतिसुतं चित्तेऽतिविमले ॥ ३८४ ॥

इति मदनललिता १७४

---

१ क हारमेरुक्रमेण तद्विराजते सुरेश मद्विकासितं भवेत् सुकेशि षोडशाक्षरेण ।
२ क रम्यतीरकाननम । ३ क तटभरितरे ।

टिप्पणी–१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय पद्य १०८
२ छन्दोमञ्जरी द्वितीयस्तबक कारिका १४८

१७५ अथ वाणिनी

कुरु नगणं विधेहि जगणं ततो भकारं,
जगणमथोऽपि रेफयुतमन्तजातहारम् ।
षडधिकपङ्क्तिवर्णकलितं सुवृत्तसारं,
कलयत वाणिनीति कविभिः कृतप्रचारम् ॥ ३८५ ॥

अनवरतं खरांशुतनयाचलज्जलौघे,
तटभुवि'सलुप्ते*'ऽखिलनृणां विनाशिताघे ।
द्विजजनसाधिताऽनुपमसप्ततन्तुभोक्ता,
पशुपजनैर्हरिः सह वनोदनं जघास[2] ॥ ३८६ ॥

इति वाणिनी १७५.

१७६ अथ प्रवरललितम्

यकारं पूर्वस्मिन् रचय मगणं धारयाशु,
नकारं ह्रस्वं च प्रथय रगणं धेहि वासु ।
गुरुं पादस्यान्ते विरचय फणीन्द्रेण गीतं,
सुहास्ये विश्रामं प्रवरललितं नाम वृत्तम् ॥ ३८७ ॥

तडिल्लोलैर्मेघैर्दिशि दिशि महाध्वानवद्भि-
र्गजानीकाकारैरनवरतमापः सृजद्भिः ।
व्रजं भीतं[3] वीक्ष्य द्रुतमचलराजं कराग्रे,
दधद्रक्षां कुर्यात् भवजलनिधावत्युदग्रे ॥ ३८८ ॥

इति प्रवरललितम् १७६

१७७ अथ गरुडरुतम्

द्विजवरमत्र धेहि रगणं तकारं ततः,
कुरु रगणं ततोऽपि रगणं पदान्ते मतः ।
षडधिकपङ्क्तिवर्णकलितं समस्ते पदे,
गरुडरुतं समस्तफणिराजचित्तास्पदे ॥ ३८९ ॥

---

१ ख विलुपिते लुते । २ क वनोदनं भुक्ति । ३ ख छन्न ।

टिप्पणी—१ अत्र पादे नगणमनु जगणोपस्थितिर्युक्ता किन्त्वत्र 'सलुप्ते' इति पाठे यगणो जायते तदयुक्तम् ।

यथा–

मृगगणदाहके वननदीसरःशोषके
प्रसति तपन् विलोलमिजहेतिजिह्वाशते ।
भयभरखिन्न'बिम्बवदनं निरीक्ष्याशु य
दवदहनं पपौ स दिशतान् मनोवाञ्छितम् ॥ ११० ॥

इति मत्तकम् १७७

१७८ अथ चकिता

देहि ममिह स कर्ण हारौ कुण्डलमचले !,
धारय कुसुम पुष्पद्वन्द्वं कामिनि ! तरले ! ।
रूपवलयक पादप्रान्ते स्यादिह चकिता
पद्सु च विरतिः काम्यम्यक्ति स्मरसे' भविता ॥ १११ ॥

यथा–

कामिनि ! सुघने वृन्दारण्ये मन्दय नयनं
भामिनि ! भवने भव्याकारे भावय शयनम् ।
शीतलपवने धन्ये पुण्ये खञ्जननयने
स्वामिह कलये तल्पेऽनल्पे कुञ्जरगमने ॥ ११२ ॥

इति चकिता १७८

१७९ अथ गजतुरगविलसितम्

धारय रौहिणेयमथ पतगवरपति
कारय वह्निमेय-नगणवरगुरुयतिम् ।
षोडशवर्णचारि-गजतुरगविलसितं,
भामिनि ! भावयेवमपि मुनियतिरचितम् ॥ ११३ ॥

यथा

सुन्दरि ! नन्दनन्दनमिह भरमिवलये
मानिनि ! मामवालमपि' न हि न हि कलये ।
भावय भावनीयगुणगणपरिकलितं
चेतसि चिन्तयाशु सखि ! मुनिजनचरितम् ॥ ११४ ॥

इति गजतुरगविलसितम् १७९

क्वचिद् इदमेव ऋषभगजविलसितम् * इति नामान्तरेणोक्तम् ।

---

१ क भिन्न । २ ख सरले । ३ ख मामनोचरनुमिह न कलये ।

टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर: अ ३ का ९१ छन्दोमञ्जरी द्वि स्त का १४१

१८० अथ शैलशिखा

धेहि भकारमत्र खगराजमवेहि तत,
　　कारय न ततोऽपि भगणो भगणेन युत ।
नूपुरमेकसख्यमवधेहि पदान्तगत,
　　शैलशिखाभिध त्वमवधारय नागकृतम् ॥ ३९५ ॥

यथा–

गोपवधूमयूरवनितानवमेघनिभ,
　　दानवसङ्घदारणविधावतिसप्रतिभ ।
तुम्बरुनारदादिकमन सरसीषु गज,
　　वाञ्छितमातनोतु तव गोपपतेस्तनुज ॥ ३९६ ॥

इति शैलशिखा १८०

१८१ अथ ललितम्

कारय भ ततोऽपि रगण विधेहि नगण,
　　पक्षिपति विधारय पुनस्तथैव नगणम् ।
कङ्कणमन्तग कुरु समस्तपादविरतौ,
　　धेहि मन सदैव ललिते फणीश्वरकृतौ ॥ ३९७ ॥

अत्रापि सप्तभिर्नवभि प्रायो विरतिर्भवतीति उपदिश्यते ।

यथा–

गोपवधूमुखाम्बुजविकासने दिनपति,
　　दानवसङ्घमन्तकारिदारणे मृगपति ।
लोकभयापहः सकलवन्द्यपादयुगल,
　　श कुरुता ममापि च विलोलनेत्रकमल ॥ ३९८ ॥

इति ललितम् १८१

१८२ अथ सुकेसरम्

नगण-सगणौ विधेहि जगण तत पर,
　　सगण-जगणौ च नूपुरमथोऽनन्तरम् ।
फणिनृपतिभाषित रसविधूदिताक्षर,
　　कलय हृदये सदा सुखकर सुकेसरम् ॥ ३९९ ॥

यथा–

नरपतिसमूहकण्ठतटघट्टनोद्भवै-
　　रुडुगणनिभै स्फुलिङ्गनिकरैर्भयानक ।
विलसति नृपेन्द्रशत्रुगणधूमकेतुवत्,
　　तव रणविधौ स्थित करतले कृपाणक ॥ ४०० ॥

इति सुकेसरम् १८२

१८३ अथ ललना

प्रथमं कलय करसलमात्मना ह्यपयां[1],
सलनां मगणयुगलवर्ती बमाकमिताम् ।
फणिराजभणितगुण(द)विराजितामतुलां,
कलयाशु सपदि सुजनमानसे यमिताम्[2] ॥ ४०१ ॥

यथा

विदधातु सकलफलममनारत तनुते,
सनकादिनिखिलमुनिनतो यते बनिते ! ।
व्रजराजतनय इह सदा ह्वा कलित
स बराधरमनतनुमहोदधौ फलित ॥ ४०२ ॥

इति ललना १८३

१८४ अथ गिरिवरधृति

धारपरिमितमिह मगणमनु कुरुत
विधुविरचितमथ लघुमपि रचयत ।
फणिपतिरिति किल मधुरमनुवदति
कलयत निजहृदि गिरिवरधृतिरिति ॥ ४०३ ॥

यथा –

विधिसनिचयहृतनिगिलरजमिचर !
निजमुखयुगवसरणविनिहृतसर !।
बिधुपमिहतमय ! दशमुखमुखहर !
दशरथनृपसुत ! जय ! जय ! रघुवर ! ॥ ४०४ ॥

इति गिरिवरधृति १८४

प्रथलयति *दरय यत्र ।

अत्रापि प्रस्तारगत्या गाथायारम्य पञ्चपञ्चिगहृगाणि पञ्चगतानि पद् त्रिशत्तुराराणि ६७५ १ अवाम्नपु विय ता सदिता दापभेदा प्रस्तार्य स्वेच्छया नामानि धारयथ्या (विमाय) सणणीया दशमुखादिप्यते ।[3]

इति पाडशाक्षरम् ।

---

१ क ह्यप लाम् । २ ख वलितम् । ३ वंशिमर्व नास्ति क प्रतौ ।

टिप्पणी—१ ए १८४ी गीतिदामक का १६६

„ —२ पीटमाजरपूनापीतमकन्तारमेदा तत्तमलरितिमरे पर्यालोच्यात ।

अथ सप्तदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

१८५ लीलाधृष्टम्

वृत्ते यस्मिन्नष्टौ पादे कर्णा सयुक्ता सदृश्यन्ते,
हारश्चैक प्रान्ते यस्मिन् वर्णा शैलश्चन्द्रै शोभन्ते ।
सर्वेषा नागाणामीशेनैतत्सप्रोक्त बेहि स्वान्ते,
भूपालाना चित्तानन्दस्थान लीलाधृष्टाख्य कान्ते [1] ॥ ४०५ ॥

यथा–

वारा राशौ सेतु बद्ध्वा लङ्कायामातङ्कौघ दास्यन्,
नानावर्णं सुग्रीवाद्यै लङ्काया[1] भिन्न दुर्गं कुर्वन् ।
सीताचित्ते प्रेमाधिक्यं लोहे कीलैर्ग्राब्णीवोत्कीर्णा,
काकुत्स्थ. कल्याण कुर्याद युष्माक ऋव्यादाब्धि तीर्णं ॥ ४०६॥

इति लीलाधृष्टम् १८५

१८६ अथ पृथ्वी

पयोधरविराजिता करसुवर्णवत्कङ्कणा,
सुगन्धकुसुमोज्ज्वला सरसहारसशोभिनी ।
सुरूपयुतकुण्डला कनकरावसन्नूपुरा,
वसुप्रथितसस्थितिर्जगति भाति पृथ्वी सदा ॥ ४०७ ॥

यथा–

हरिर्भुजगनायक निजगिरिं भवानीपतिं,
गजेन्द्रममराधिपो निजमरालमब्जासन ।
द्विजा विबुधकूलिनी जगति जायमाने नृप [1],
त्वदीययशसोज्ज्वले किल गवेषयन्त्यातुरा ॥ ४०८ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

अनेन नयताऽधुना महदुलूखल शाखिनो,
रथातियुगमन्तरा ककुभयोरिह क्रामता ।
इतीरयति केचन श्रदधुराशु गोपान्हृदा,
पुरो विहरति स्वके शिशुकदम्बके नापरे ॥ ४०९ ॥

इत्यादि शतशो निदर्शनानि काव्येषु ।

इति पृथ्वी १८६

---

१. ख लङ्कायां ।

१८७ अथ मालावती

द्विजविभूसिता पयोधरविराजिता हारिणी
सरसकरयुकसुवर्णवमया लसत्कुण्डला ।
विलसयुतनूपुरा मुनिदिगीशसङ्ख्याक्षरा
भुजङ्गपतिभाषिता जगति भाति मालावती ॥ ४१० ॥

यथा–

वनचरकदम्बकैरपरसि घुसोमाधरै-
करजवदनायुधैर्यक्षिनीरमाच्छादयन् ।
रघुपतिरुपागत: सखि ! निशाचराधीश्वरं
रणभुवि निहत्य वास्यति तवातुल सम्भवम् ॥ ४११ ॥

इति मालावती १८७

मालाधर इति पिङ्गले * नामान्तरम् ।

१८८ अथ शिखरिणी

सुरूप स्वर्णाढ्यं श्रवणमणिताटङ्कयुगलं
सदा सविभ्राणा द्विजमथ सुपुष्पाढ्यवसयौ ।
सुरूपं हस्ताग्रं तदनु वमतो राजति रसै-
श्छिवैश्छिन्ना नागप्रथितमहिमेय शिखरिणी ॥ ४१२ ॥

यथा–

दिशि स्फारीभूतै: कविनिकरगीतैस्तव रण-
स्तवैर्वात्याचक्रैर्द्विगुणितरय: क्षोणितिलक: ।
प्रतापो दावाग्निस्तव खरकरस्पर्धकठिनो
विपक्षक्षोणीन्द्र प्रथितवनमम प्रभवति[1] ॥ ४१३ ॥

यथा वा ममैव पद्यवृत्ते कृष्णकाव्ये—

यदा कंसादीना निधनविषये यादवपुरी
गत: श्रीगोविन्द: पितृभवनतोऽक्रूरसहित: ।
तदा तस्योग्मीलदविरहदहनज्वालगहने
पपात श्रीराधाकमिततदराधारणरति: ॥ ४१४ ॥

---

१ क. प्रवर्ति ।

*टिप्पणी—१ वाहनगँगमम् द्वितीयपरिच्छेद पद्य १७८

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

विना तत्तद्वस्तु क्वचिदपि च भाण्डानि भगवन्,
प्रसादान्ताऽभूवन् प्रतिभवनमित्यद्भुतमभूत् ।
भयोद्यद्वैलक्ष्याऽवितथवचसस्तच्चरणयो-
र्निपेतुस्ता हस्ताहृतवसनमुक्तामणिगणा ॥ ४१५ ॥

यथा वा, रूपगोस्वामिकृत-हंसदूतकाव्ये[1]*—

दुकूलं बिभ्राणो दलितहरितालद्युतिहरं,
जपापुष्पश्रेणीरुचिरुचिरपादाम्बुजतलः ।
तमालश्यामाङ्गो दरहसितलीलाञ्चितमुखः,
परानन्दाभोगः स्फुरतु हृदि मे कोऽपि पुरुषः ॥ ४१६ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्यकृत-सौन्दर्यलहरीस्तोत्रे[2]*—

दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा,
दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे ।
अनेनाऽयं धन्यो भवति न च ते हानिरियता,
वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥ ४१७ ॥'

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशो निदर्शनानि द्रष्टव्यानि ।

इति शिखरिणी १८८

१८९ अथ हरिणी

द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
कुचतटगतं पुष्पं हारं तथा दधती मुदा ।
विरुतललितं सबिभ्राणं[2] पदान्तगनूपुरं,
रसजलनिधिच्छिन्ना नागप्रिया हरिणी मता ॥ ४१८ ॥

यथा–

सपदि कपयः शौर्याविशस्फुरत्करजद्विजा,
गिरिवरतरूनुन्मृद्नन्तस्तथोत्पथगामिनः ।
अहमहमिका कृत्वा वारानिधेरतिलङ्घने[3],
तटभुवि गताः सम्प्रेक्षन्ते मुखानि परस्परम् ॥ ४१९ ॥

---

१. क प्रतौ नास्तीदम्पद्यम् । २ ख सबिभ्राणा । ३. ख. लघते ।

*टिप्पणी—१ श्रीरूपगोस्वामिकृत हंसदूतम् प्रथमपद्यम्
२ शंकराचार्यकृत-सौन्दर्यलहरी पद्य ५७

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हसितवदने दृष्ट्वा चेष्टां सुतस्य सविस्मये
ययतुरथ ते गोपापत्यौ तदद्भुतमन्यत ।
तदनु कतिचिद् बाला मार्गे वनेन सहोचिरे
मृगमनुपद कृष्ण प्राचीविति प्रतिमानुषः ॥ ४२० ॥

यथा वा लक्ष्मलक्षणयुक्त तत्रैव—

प्रहितहृदयोर्वल्लभस्तद्गतिप्रतिमानुषां,
त्रिभुवनपतिप्रत्यासत्तिस्फुरत्पुलकस्पृशाम् ।
शिथिलकबरीबन्धस्रस्तस्रजां हरिणीदृशां
न समरसतः कायप्रायो लघुर्गुरुरप्यभूत् ॥ ४२१ ॥

श्लेषार्थ ऊहनीयः । यथा वा– 'अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे'[१]' इत्यादि रघुवंशे महाकाव्यादिसत्कविप्रबन्धेषु च भूमनिदर्शनानि ।

इति हरिणी १८९

१९ अथ मन्दाक्रान्ता

कर्णौ पुष्पद्वितयसहितौ गन्धबद्धस्तयुक्ता
हारं रूप तदनु वलयं स्वर्णसञ्जातशोभम् ।
संबिभ्राणा विरुतमिलितौ नूपुरौ या पदान्ते
मन्दाक्रान्ता भवति निगमच्छेदयुक्ता रसैश्च ॥ ४२२ ॥

यथा–

सिन्धोष्पारे दशमुखपुरी वानरास्तत्र भूताः
पम्पाशम्पाहतमुतफलश्रीसमेषाम्बुमीकाः ।
वासः केकाकलितसिततटे मादृशामृष्यमूके
दैवो नाम पुनरयमतो भावि किं किं न जाने ॥ ४२३ ॥

टिप्पणी— १ अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे
नृपतिककुदं दत्त्वा यूने सितातपवारणम् ।
मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया सह शिश्रिये
गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिदं हि कुलव्रतम् ॥
[रघुवंश स ३ ७०]

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हृत्वा ध्वान्तस्थितमपि वसुप्रक्षिपत् पक्ष्म[राजि-]
स्पन्दं विन्दन् व्रजति कुहचित् कैश्चनालक्ष्यमाणः।
छिद्राणि द्राक् कलयति शयाशक्यशिक्यस्थभाण्डे[1],
निद्रां भक्त्वा द्रवति जवतस्ताडयत् सुप्तबालात्॥ ४२४॥ (?)

इति मन्दाक्रान्ता १९०

१९१ अथ वंशपत्रपतितम्

कारय भं ततोऽपि रगणं रचय नं-भगणौ,
धेहि नकारमेरुवलयात् तदनु सुललितान्।
व्योमसुधांशुभिः कुरु हयैः तदनु च विरतिं[2],
चेतसि वंशपत्रपतितं रचय फणिकृतम्॥ ४२५॥

यथा–

जानकि ! नैव चेतसि कुथा रजनिचरमतिं,
राघवदूततामुपगतं कलय हृदि निजे।
जल्पति मारुताविति तदा जनकतनयया-
दत्त[3] न मुद्रिकाऽपि कलिता जलपिहितदृशा॥ ४२६॥

यथा वा–

'सम्प्रति लब्धजन्म शनकैः कथमपि लघुनि।' इति किरातार्जुनीये*।

इति वंशपत्रपतितम् १९१

स्त्रीलिङ्गमिति केचित्। वंशवदनम् इति शाम्भवे तस्यैव नामान्तरमुक्तम्।

१९२ अथ नर्दटकम्

कुरु नगणं ततः कलय जं वद भं च ततो,
जगणयुगं ततो रचय कारय मेरुगुरू।
फणिपतिभाषितं मुनिविघूदितवर्णधरं,
कविजनमोहकं हृदि विधारय नर्दटकम्॥ ४२७॥

---

१ ख. भाण्डे। २ ख विरतिं। ३ ख हन्त।

*टिप्पणी—१ सम्प्रति लब्धजन्म शनकैः कथमपि लघुनि,
क्षीणपयस्युपेयुषि भिदां जलधरपटले।
खण्डितविग्रहं बलभिदो धनुरिह विविधाः,
पूरयितुं भवन्ति विभवः शिखरमणिरुचः॥४३॥
[किरातार्जुनीयम् स० ५, प० ४३]

यथा–

अनुसवमूर्च्छया क्षपितदेहलता नमता
नयनजलेन दूषितमुखी[1] तव भूमिसुता ।
रघुवरमुद्रिकां हृदि निधाय सुखातिशयं
मुकुलितलोचना क्षणमभूदमृतस्नपिता ॥ ४२८ ॥

यथा वा श्रीभागवते दशमस्कन्धे वेदस्तुतौ[*] —

जय ! जय ! जह्यजामजितदोषगृहीत[2]गुणाम् । इत्यादि ।

इति नर्दटकम् १९२

अथ कोकिलकम्

मुनिरसवेदैर्विरतिर्यदि कोकिलकं तदेदमेव भवेत् ।

तदुदाहरणं लक्षणवाक्ये श्रवणं सुधीभिरिति ॥ ४२९ ॥

यथा वा छन्दोमञ्जर्याम् *—

जलधररुपेक्षणं मधुरभाषणमोदकरं
मधुसमयागमे सरसकेलिभिरुल्लसितम् ।
भ्रमिसमितद्युति रविसुतावनकोकिलकं
ननु कलयामि तं सखि ! सदा हृदि नन्दसुतम् ॥ ४३० ॥

गणविरचना सैव विरतिकृत एवात्र भेद इति नामान्तरम् ।

इति कोकिलकम् ।

१९३ अथ हारिणी

कर्णे कृत्वा कनकलसितं ताटङ्कसंराजितं
संबिभ्राणा द्विजमय रत्नस्वर्णाचितौ नूपुरौ ।
पुष्पं हारौ सरसवलयं संधारयन्ती मुदा
वेदैः षड्भिर्विरचितयतिः शैलोदिता हारिणी ॥ ४३१ ॥

---

१ क दूषितमुखा । २ क गृहीतगुणाम् ।

* टिप्पणी—१ जय जय जह्यजामजितदोषगृभीतगुणां
त्वमसि यदात्मना समवरुद्धसमस्तभगः ।
अगजगदोकसामखिलशक्त्यवबोधक ते
क्वचिदजयात्मना च चरतोऽनुचरेन्निगमः ॥
[भागवत-दशमस्कन्ध अ० ८७ श्लो० १४]

२ छन्दोमञ्जरी द्वि० स्त० का० १९७ ।

यथा–

बद्ध्वा सिन्धुं नगरमिह मे राम समायात्यय,
रोद्धुं[1] श्रुत्वा दशमुख इति प्रीतोऽभवत्तत्क्षणम् ।
बाह्वोः कण्डूं गमयितुमना पश्चान्नर राघवं,
श्रुत्वाऽवज्ञाकलुषितमना लङ्केश्वरोऽभूत्तदा ॥ ४३२ ॥

इति हारिणी १६३.

१६४. अथ भाराक्रान्ता

आदौ कुर्यान् मगण-भगणौ ततो नगणो मतः,
रेफं दद्यात्तदनुरुचिरं विधेहि करं ततः ।
मेरुं हारं विरचय ततः फणीश्वरभाषिता,
भाराक्रान्ता जलनिधिरसैर्विरामयुता मता ॥ ४३३ ॥

यथा–

सिन्धोर्बन्धं रघुवरकृतं निशम्य दशाननो,
दध्यौ मूर्द्धन्[2] सपदि बहुधा व्यधाच्च विधूननम् ।
शङ्के च्योतन्मणिकपटतो रघूत्तमरागिणी,
सत्यामाख्यां जगति तनुते तदा कमलालया ॥ ४३४ ॥

इति भाराक्रान्ता १६४

१६५ अथ मतङ्गवाहिनी

हारमेरुजक्रमेण जायते यदा विराजिता,
शैलभूमिसख्यकाक्षरैस्तथा भवेद् विकासिता ।
पण्डितावलीविनोदकारिपिङ्गलेन भाषिता,
जायते मतङ्गवाहिनी गुणावलीविभूषिता ॥ ४३५ ॥

यथा–

नौम्यहं विदेहजापतिं शरासनस्य 'भञ्जकं,
वालिजीवहारिणं विभीषणस्य राज्यसञ्जकम् ।
लक्ष्यवेधने तथा सदा शरासनस्य'[3] धारिणं,
रावणद्रुहं कठोरभानुवंशदीप्तिकारणम् ॥ ४३६ ॥

इति मतङ्गवाहिनी १६५

---

१ ख योद्धुम् । २ ख मूर्द्धन. । ३, '–' चिह्नगतोंऽश क प्रतौ नास्ति ।

११६ अथ पथकम्

रचय नगण स तस्यान्ते धेहि पश्चान्मकारं,
तदनु चरणे तस्य द्वन्द्वं कारयाशु विहारम् ।
समुनिविधुभिः पादे छिन्नं पिङ्गलेन प्रयुक्तं,
कलय हृदये सम्यक् स्वच्छं पथकं वृत्तसारम् ॥ ४३७ ॥

यथा–

अयमिह पुरः पारावारः चेतसा गम्यपारः
सपदि सहितः पातः सद्भिर्मणिभो वीचिहस्तः ।
कपिगणमहासेना चेयं पारमुत्प्रेक्षमाणा
रचय मिहिह न्यायं शीघ्रं वानराणां पते [२] तत् ॥ ४३८ ॥

इति पथकम् ११६

११७ अथ वसमुखहरम्

वसुविधिपरिमितनगणमिह विरचय
तदनु च शरपरिमितलघुमपि कलय ।
सकलफणिगणमरपतिरिति हि वदति
सखि ! कलय निगदति वसमुखहरमिति ॥ ४३९ ॥

यथा–

जय ! जय ! रघुवर [१] ! जलधितरणनिपुण !
दशरथसुत ! त्रिभुवनिकरकलितगुण ! [३]
सुरविमतदलवदनकुमकदनकर !
सुरगणनुतचरण ! शमिह मम वितर ॥ ४४० ॥

इति वसमुखहरम् ११७

[३]अत्रापि प्रस्तारगत्या सप्तदशाक्षरस्य एकं लक्षं एकत्रिंशत् सहस्राणि द्विसप्ततिश्च १३१०७२ भेदास्तेषु कियन्तः प्रोक्ताः । शेषभेदाः प्रस्तार्य समुदाहरणीया इत्यलमतिविस्तरेण [३]* ।

इति सप्तदशाक्षरम् ।

---

१ ख सदयमपि । २ क पते । ३ चतुष्पदं नास्ति क प्रती ।

*टिप्पणी १–सप्तदशाक्षरस्यादावतिधृत्यास्तु भेदाः पञ्चमपरिशिष्टेऽवलोकनीयाः ।

अथ अष्टादशाक्षरम्

तत्र–

१६८ अथ लीलाचन्द्र

अश्वै सख्याता यस्मिन् वृत्ते पादे पादे शोभन्ते कर्णा.,
पश्चाद् वेदै सख्याता हारा योगैश्चन्द्रैस्सयुक्ता वर्णा ।
लीलाचन्द्राख्य वृत्त प्रोक्त नागानामीशेनैतत् कान्ते !,
रन्ध्राङ्कैर्वर्णै सविच्छिन्न धेहि स्वान्ते भास्वन्नेत्रान्ते ॥ ४४१ ॥

यथा–

हालापानोद्घूर्णन्नेत्रान्तस्तुच्छीकुर्वत्कैलास भासा,
नीलाम्भोजप्रोद्यच्छोभावत् स्कन्ध द्वन्द्वे सराजद्वासाः ।
माला वक्ष पीठे बिभ्राणो न्यक्कुर्वन्ती कान्त्यालीन् तूर्णं,
तालाङ्कस्सर्वेषा लोकाना कल्याणौघ दद्यात् सम्पूर्णम् ॥४४२॥

इति लीलाचन्द्र १६८

१६६ अथ मञ्जीरा

पूर्व [१] कर्णत्रित्व कारय पश्चाद्धेहि भकार दिव्य,
हार वह्निप्रोक्त धारय हस्त देहि मकार चान्ते ।
रन्ध्रैर्वर्णैर्विश्राम कुरु पादे नागमहाराजोक्त,
मञ्जीराख्य वृत्त भावय शीघ्र चेतसि कान्ते ! स्वीये ॥ ४४३ ॥

यथा–

सिन्धुर्गम्भीरोऽय राजति गन्तार कपयस्तत्पार,
शैले शैले केकी कूजति वातोऽय मलयाद्रेर्वाति ।
लङ्कायां वैदेही तिष्ठति कामोऽय पुरत सज्जास्त्र,
सामग्रीय तावल्लक्ष्मण सर्वं पूर्वकृतस्याधीनम् ॥ ४४४ ॥

यथा वा, भूषणे[१]*–

प्रौढध्वान्ते गर्जद्वारिदधाराधारिणि काले गत्वा,
त्यक्त्वा प्राणानग्रे कौलसमाचारानपि हित्वा यान्ती ।
कृत्वा सारङ्गाक्षी साहसमुच्चै केलिनिकुञ्ज शून्य,
दृष्ट्वा प्राणत्राण भावि कथं वा नाथ ! वद प्रेयस्या ॥४४५॥

इति मञ्जीरा १६९.

---

१ ख पूर्णम् ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २६४

२ अथ चर्चरी

कुण्डलं दधती सुरूपसुवर्णरावरसाहितं
नूपुरं कुचयुग्मसङ्कृतदिव्यहारविभूषिता ।
हस्तयुग्मसुरूपकङ्कणभासिता फणिभाषिता
चर्चरी कविमानसे परिभाति भावुकभामिनी ॥ ४४६ ॥

यथा–

रासकेलिरसोद्धतप्रियगोपवधू ! जगत्पते !
दैत्यसूदन ! भोगिमर्दन ! देवदेव ! महामते !
कंसनाशन ! वारिजासनवन्द्यपाद ! रमापते !
चिन्तयामि विभो ! हरे ! तव पादुके भिदघमु ते ॥ ४४७ ॥

[1]यथा वा अस्मत्तातचरणानां श्रीनन्दनन्दनाष्टके—

मन्दहासविराजितं मुनिवृन्दवन्द्यपदाम्बुजं
सुन्दराधरमन्दराचलधारि चारु ससद्भुजम् ।
गोपिकाकुचयुग्मकुङ्कुमपङ्करूपितवक्षसं
नन्दनन्दनमाश्रये मम किं करिष्यति भास्करिः ॥ ४४८ ॥

[2]यथा वा, तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके—

कल्पपादपवाटिकावृतदिव्यसौधमहार्णवे
रत्नसङ्कुलतान्तरीपसुनीपराजि विराजते
चिन्तितार्थविभागदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगां
मुक्तिपादपवल्लरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ॥ ४४९ ॥

यथा वा भूषणे[3]—

कोकिलाकलकूजितं न शृणोषि सम्प्रति सादरं
मन्यसे तिमिरापहारि सुधाकरं न सुधाकरम् ।
दूरमुज्झसि भूषणं विकलासि चन्दनसारते
कस्य पुण्यफलेन सुन्दरि ! मन्दिरं न सुखायते ॥ ४५० ॥

१-२ नन्दनन्दनाष्टक-सुन्दरीध्यानाष्टकयोरिदं पद्यद्वयं नास्ति ख प्रतौ।
३ वाणीभूषणम् द्वितीयाध्याय पद्य ९९

यथा वा, मार्कण्डेयमहामुनिविरचितचन्द्रशेखराष्टके—[प्रथम पद्यम्]

रत्नसानुशरासन रजतादिशृङ्ग निकेतन,
सिञ्जिनीकृतपन्नगेश्वरमच्युतानलसायकम् ।
क्षिप्रदग्धपुरत्रय त्रिदशालयैरभिवन्दित,
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यम ॥ ४५१ ॥

यथा वा, शङ्कराचार्यकृत-नवरत्नमालिकास्तोत्रे[1]—

कुन्दसुन्दरमन्दहासविराजिताधरपल्लवा-
मिन्दुविम्वनिभाननामरविन्दचारुविलोचनाम् ।
चन्दनागुरुपङ्करूषिततुङ्गपीनपयोधरा,
चन्द्रशेखरवल्लभा प्रणमामि शैलसुतामहम् ॥ ४५२ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रशो निदर्शनानि अनुसन्धेयानि ।

इति चर्चरी २०० इति द्वितीय शतकम् ।

२०१ अथ क्रीडाचन्द्र

यकार रसेनोदित सर्वपादेपु सखेहि युक्त,
तथा धेहि पादे नगाधीशशीतांशु[2]सख्यातवर्णम ।
कवीनामधीशेन नागाधिराजेन सभाषित तत्,
मुदा क्रीडया शोभित चन्द्रसज्ञ हृदा धेहि[3] वृत्तम् ॥ ४५३ ॥

यथा— मुनीन्द्रा पतन्ति स्म हस्त नृपा कर्णयुग्मे तथाधु,
सभाया नियुक्ता दधु कम्पमुच्चैस्तदा स्तम्भसङ्घा ।
सुराणा समूहेन नाश्रावि लोके तथान्योन्यवाच[4]-
स्तदा रामसभिन्नबाणासनाढ्यातपूर्णो[5] त्रिलोके ॥ ४५४ ॥

यथा वा, भूषणे[6][1]—

भ्रमन्ती धनुर्मुक्तनाराचधारानिरुद्धे समस्ते,
नभः प्राङ्गणे पक्षिवाय्वो प्रयाते निरन्ते प्रशस्ते ।

---

१ नवरत्नमालिकाया पद्य क प्रतौ नास्ति । २ 'शीतांशु' क प्रतौ नास्ति । ३ धेहि । ४ ख वाणी । ५ ख सनाद्यातपूर्णे ।

टिप्पणी—१ रा प्रा वि प्र ग्र० स० १४२५० स्थ उपरोक्तपद्य नास्ति, किन्त्वस्य स्थाने निम्नोद्धृत पद्य वर्तते ।

'पदान्यासनम्रीकृतक्षोणिचक्रत्रुटन्मर्मकूर्म
भ्रमत्तुङ्गखड्गाङ्कविक्षेपकौत्रेरवैर च दर्पम् ।
भुजङ्गेऽशनि श्वासवातोच्चलच्चक्रवालाचलेन्द्र',
शिवायास्तु चन्द्रेन्दुचूडामणेस्ताण्डवाडम्बर व ॥२९६॥
[वाणीभूषणम्, द्वि अ प २९८]

तथा चण्डगाण्डीवबाणावलीनीरधारानिरस्त[1]

चमूवाङ्कुराओ यथा न स्थितोऽसौ विपक्षः स्वपक्षः ॥ ४५५ ॥

इति क्रीडाचक्रः २ १

२ २ अथ कुसुमितलता

कर्णौ ताटङ्कप्रथितयशसौ[2] धारयन्ती द्विजं च

प्रोद्यद्रूपावपि कनककलितं कङ्कणं चादधाना ।

पुष्पाढ्यौ हारौ तदनु दधती रावनूपुरौ च

छिन्ना बाणार्णैः कुसुमितलता स्याद् रसैर्वाजिभिश्च ॥४५६॥

यथा–

पूर्णप्रेमार्द्रे हलकमनया[3] भिल्लपातान्नमूल

वासाङ्के गाङ्गं क्षिपति रमणाभागसाङ्कप्रवाहे ।

हर्म्याणां सङ्घे कुसुमिरमितच्चूर्णित भूमितं च

क्रीडार्थं बालैरिव विरचिते[5] कौतुकि सैमराजे ॥ ४५७ ॥

यथा वा–

गौड पिष्टान्नं दधि शकूरं निर्जलं मद्यमम्लम् । इत्यादि वाग्भटे चिकित्साग्रन्थे ।[1]*

इति कुसुमितलता २ २

२ ३ अथ नन्दनम्

रचय नकारयुक्त-जगणं विधेहि परचान्च भं,

कुरु जगणं ततोऽपि रगणं विधेहि रेफं ततः ।

शिवरचितां विधेहि विरतिं तथा हयैर्भासितां

कविजनमानसं कुरु सखे ! सदा ह्यदा नन्दनम् ॥ ४५८ ॥

यथा–

तव यशसा त्रिलोकवलये धवलतामागते

मधुमनिशास्वपि प्रकटितास्वचकोरकैरवचम्पकः ।

जगति पयःप्रवाहमतिभिः सुखं मरालैर्वृतं

सपदि गुहां गता हिमधिया मुनीश्वरा धूर्जटा ॥ ४५९ ॥

---

१ ख विस्मृतो । २ ख यशसो । ३ ख हलकमलया । ४ ख प्रवाहे ।
५ ख विरचितं कौतुकात् ।

टिप्पणी—१ ग्राम्याब्जानूप पिशितमपलं पुष्पकार्क तिलान्न

गौडं पिष्टान्नं दधि सलवणं विज्जलं मद्यमम्लम् ।

नानावस्तूर समशनमथो दुर्गतामम्य दिवा हि

स्वप्नं चाराम्रो यवमधुगरमाम् वर्जयेन्मैथुनं च ॥

[वाग्भट—अष्टाङ्गहृदय अ० १७ श्लो० ४२]

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्¹ *—

तरणिसुतातरङ्गपवनै सलीलमान्दोलित,
मधुरिपुपादपङ्कजरज सुपूतपृथ्वीतलम् ।
मुरहरचित्रचेष्टितकलाकलापसस्मारक,
क्षितितलनन्दन भज सखे ! सुखाय वृन्दावनम् ॥ ४६० ॥

यथा वा, ''अहृत धनेश्वरस्य युधि य समेतमायोधनम्' । इत्यादि भट्टिकाव्ये²* ।

इति नन्दनम् २०३

२०४. अथ नाराच·

रचय न-युगल समस्ते पदे वेदसख्याकृत,
तदनु च कलयाशु पक्षिप्रभु भासमान पदे ।
वसुहिमकिरणप्रयुक्ताक्षरोद्भासमान हृदा,
परिकलय फणीन्द्रनागोक्त-नाराचवृत्त मुदा ॥ ४६१ ॥

यथा—

सुरपतिहरितो गलत्कुन्तलच्छाद्यमान मुख,
सपदि विरहजेन दु खेन मिश्रस्य पाण्डुप्रभम् ।
अनुहरति घनेन सञ्छादित किञ्चिदुद्यत्प्रभ,
समुदितवरमण्डलोऽय पुर शीतरश्मिः प्रिये ! ॥ ४६२ ॥

यथा वा, 'रघुपतिरपि तात वेदो विशुद्धो प्रगृह्य प्रियाम् ।' इत्यदि रघुवशे³* ।

षोडशाक्षरप्रस्तारे नराच , अत्र तु नाराच इत्यनयोर्भेद ।

इति नाराच २०४

मञ्जुला इत्यन्यत्र ।

---

१ पक्तिरिय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छदोमञ्जरी, द्वि० स्तबक, का० १७५ या उदाहरणम्

,, २ अहृत धनेश्वरस्य युधि य समेतमायो धन,
तमहमितो विलोक्य विबुधै कृतोत्तमाऽऽयोधनम् ।
विभवमदेन निह्नुतह्रियाऽतिमात्रसम्पन्नक,
व्यथयति सत्पथादधिगताऽथवेह सपन्न कम् ॥
[भट्टिकाव्य, सर्ग १०, प० ३७]

,, ३ रघुपतिरपि जातवेदोविशुद्धां प्रगृह्य प्रिया,
प्रियसुहृदि विभीषणे सगमय्य श्रिय वैरिणः ।
रविसुतसहितेन तेनानुयात स सौमित्रिणा,
भुजविजितविमानरत्नाधिरूढ प्रतस्थे पुरीम् ॥
[रघुवश, स० १२, प० १४]

२ ५. अथ चित्रलेखा

कर्णे कृत्वा कनकसुललित कुण्डलप्राप्तशोभं
संबिभ्राणा द्विजमथ च करं कङ्कणेन प्रयुक्तम् ।
पुष्पं हारद्वयमथ दधती रावयन्नूपुरौ च,
वेदैरश्वैर्मुनिरचितयतिर्भासते चित्रलेखा ॥ ४६३ ॥

यथा–

श्रीमद्राघव्रयमिह गगने स्वल्पसतापाहितस्य,
छिन्नस्येन्दु कलयति सुषमां मुद्गरे सीसकस्य ।
ताराशोभां विदधति विमतो हारितस्य प्रतापै
स्फोटस्यैषा दिगपि किमु हरे कुङ्कुमैर्भाति कीर्णा ॥४६४॥

इति चित्रलेखा २ ५

२ ६ अथ भ्रमरपदम्

कारय मं ततोऽपि रगणमथ नगणयुगलं
धेहि नकारक तदनु च विरचय करतलम् ।
भावितमक्षरैर्गिरिशरहिमकरपरिमितै
पिङ्गलभाषितं भ्रमरपदमिदमतिललितम् ॥ ४६५ ॥

यथा-

नीलतम पटाधिगतमिव[1] मुकुगणमखिल
मौक्तिकमेव कासनरपतिरतिमलिततरम् ।
कामविगतद्विजपतय इह कलितकर
यच्छति सोऽपि तानमुकलमति निजकरगमै ॥ ४६६ ॥

इति भ्रमरपदम् २ ६

२ ७ अथ शार्दूलललितम्

आदौ म सतत विधेहि तदनु सम सरसिज
तत्पश्चाद् विरचय च कलय सं कर्णं तदनुगम् ।
तस्याग्रे कुरु रूपहस्तमतुलं जानीहि सरसं
मध्यप्रेमभरालसे सुललिते शार्दूलललितम् ॥ ४६७ ॥

---

१ ख मिव ।

यथा–

श्रीगोविन्दपदारविन्दमनिशं वन्देऽतिसरसं,
मायाजालजटालमाकुलमिदं मत्वाऽतिविरसम् ।
वृन्दारण्यनिकुञ्जसञ्चरणतः सञ्जातसुषमं,
[1]दम्भोल्यङ्कुशसध्वजं सरसिजप्रोद्भासमसमम् ॥ ४६८ ॥

इति शार्दूलललितम् २०७.

२०८. अथ सुललितम्

कलय नयुगलं पश्चाद्वक्रं तथातिमनोहरं,
तदनु विरचये कर्णौ पुष्पान्वितौ भगणं ततः ।
वितनु सुललितं पक्षीन्द्रं वा विलासिनीसुन्दरं,
मुनिविरतियुतं वेदैश्छिन्नं हयैश्च विभावितम् ॥ ४६९ ॥

यथा–

त्रिजगति जयिनस्ते ते भावा नवेन्दुकलादयः,
परिणतिमधुराः कामं सर्वे मनोरमतां गताः ।
मम तु तदखिलं शून्यारण्यप्रभं सखि ! जायते,
मुररिपुरहितं तस्माद् भद्रे समाह्वय तं हरिम् ॥ ४७० ॥

इति सुललितम् २०८

२०९ अथ उपवनकुसुमम्

सलिलनिधिपरिमित-नगणमिह विरचय,
तदनु च रसनिगदितलघुमपि कलय ।
कविजनहितसकलफणिपतिकथितमिह,
हृदि कलय सुललितमुपवनकुसुममिति ॥ ४७१ ॥

यथा–

असितवसनवरललितहलमुशलधर !,
निजतनुरुचिविजितपुरमथनगिरिवर ! ।
द्विविदकपिवरकदनकर ! नवरुचिचय !,
जय ! जय ! कुरुनरपतिनगरजनितभय ! ॥ ४७२ ॥

इति उपवनकुसुमम् २०९.

---

१ ख वम्भोल्यङ्कुशकेतनाब्जनुचिरं सच्छोभमसमम् ।

¹अत्रापि प्रस्तारगत्या अष्टादशाक्षरस्य लक्षद्वयं द्वाषष्टिसहस्राणि चतुश्चत्वारिंशदुत्तरं च शत २६२१४४ भेदास्तेषु कियन्तो भेदाः प्रोक्ताः शेषभेदास्तूह्याः सुधीभिरिति दिक्।*

इति अष्टादशाक्षरम्।

अथ एकोनविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२१ अथ नागानन्दः

प्रथमानां सप्ताक्षा यस्मिन् सर्वस्मिन् पादे संदृश्यन्ते कर्णाः
पश्चाद् मार्गे संप्रोक्ता हारा युक्ता रम्यैर्भूम्या प्रोक्ता वर्णाः।
सर्वेषां नागानामीशेनैतत् प्रोक्तं नागानन्दाख्यं वृत्तं,
विश्वेषां भव्यं ख्या समज्ञस्यानन्दानां धारां रात्रौ दिवसम् ॥ ४७३ ॥

यथा—

जैनप्रोक्तानां धर्माणां सर्वेभ्यो लोकेभ्यः शिक्षां संदास्यन्
यज्ञानां हिंसाक्रान्तानां तन्मूलानां वेदानां वा निन्दां कुर्वन्।
सर्वस्मिंस्त्रैलोक्ये भूतानां रक्षारूपां धर्मनिष्ठां स्मन्
कल्याणं कुर्यात् सोऽयं गोविन्दः श्रीहार्दं बौद्धाभिख्यां गृह्णन् ॥४७४॥

इति नागानन्दः २१

२२ अथ शार्दूलविक्रीडितम्

कर्णे कुण्डलपुष्पगन्धममितं हारं च वक्षोरुहे
हस्ते कङ्कणयुग्मसुन्दरतरं पादोल्लसन्नूपुरौ।
रूपाढ्यो रसिको तथैव च यदा तीक्ष्णांशुविच्छेदितं,
श्रीमत्पिङ्गसमापितं विजयते शार्दूलविक्रीडितम् ॥ ४७५ ॥

यथा

ते राजन्नतिचन्द्र²कीर्तितनुमीडिम्भीरपिण्डाकृति
ब्रह्माण्डातिमसत्करण्डनिहितश्वेताण्डजप्रोज्ज्वलम्।
तन्वीमण्डलपाण्डुरद्युतिपुरस्सूर्येन्दुबिम्बोर्मण्डलं
राहोर्भक्षक(स)सण्डमेतदुदयत्यानन्दसाध्यामुखे ॥ ४७६ ॥

---

१ पङ्क्तिरियं नास्ति क प्रतौ। २ ख राजन्ते परिपूर्णकीर्ति।

*टिप्पणी—१ अष्टादशाक्षरवृत्तानां ग्रन्थान्तरेषूपलब्धशेषभेदाः चतुर्थपरिशिष्टे द्रष्टव्याः।

यथा वा, ममैव पाण्डवचरिते अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्—

ज्ञानं यस्य ममात्मजादपि जना. शस्त्रास्त्रशिक्षाधिक,
पार्थः सोऽर्जुनसञ्ज्ञकोऽत्र सकलैः कौतूहलाद् दृश्यताम् ।
श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवची गोधाङ्गुलित्राणवान्,
पार्थस्तूणशरासनादिरुचिरस्तत्राजगाम द्रुतम् ।। ४७७ ।।

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

उन्मीलन्मकरध्वजव्रजवधूहस्तावधूताञ्चल-
व्याजोदञ्चितबाहुमूलकनकद्रोणीक्षणादीक्षणे ।
उद्यत्कण्टककैतवस्फुटजनानन्दादिसख्यामित-
ब्रह्माद्वैतसुखश्चिर स भगवांश्चिक्रीड तत्कन्दुकैः ।। ४७८ ।।

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रश उदाहरणानि प्रत्युदाहरणत्वेन[1] द्रष्टव्यानि ।

इति शार्दूलविक्रीडितम् २११.

२१२. अथ चन्द्रम्

प्रतिपदमिह कुरु नगणत्रितयमथ कलय,
जगणमिह नगणयुगल तदनु च विरचय ।
चरणविरतिमनु रुचिर कुसुममथ वितनु,
सकलफणिनृपतिकृत-चन्द्रमिति शृणु सुतनु ! ।। ४७९ ।।

यथा –

नवकुलवनजनितमन्दमरुदिह वहति,
किरणमनुकलयति विधुस्त्रिजगति सुमहति ।
सपदि सखि ! मम निजहित वचनमनुकलय,
समनुसर वनगतहरिं तनुमतिसफलय ।। ४८० ।।

यथा वा, भूषणे[1]*—

अनुपहतकुसुमरसतुल्यमिदमधरदल-
ममृतमयवचनमिदमालि विफलयसि चल ।
यदपि यदुरमणपदमीश मुनिहृदि लुठति,
तदपि तव रतिवलितमेत्य वनतटमटति ।। ४८१ ।।

इति चन्द्रम् २१२

चन्द्रमाला इत्यस्यैव नामान्तर पिङ्गले*[2] ।

---

१ ख 'प्रत्युदाहरणत्वेन' नास्ति ।

टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३००

टिप्पणी—२ प्राकृतपैंगलम्, परिच्छेद २, पद्य १६०

२१३ अथ चवलम्

द्विजवरगणमिह रचय जलनिधिपरिमितं
तदनु कलय सगणमथ चरणविरतिगतम् ।
सकलकविकुसहृदयतमविलुठनकरण
फणिपतिभणित-चवलमिह शृणु सुखकरणम्[1] ॥ ४८२ ॥

यथा–

भवनमिह कलय सखि ! कनकच्युतमिव विमलं,
गगनतलमपि विगतजलधरमतिधवलम् ।
गतवचनरचनमिदमपि शिखिकुलमलसं
नववपुरिदमव मम कुसुमविशिखशतरसम् ॥ ४८३ ॥

यथा वा भूषणे[१]—

उपगत इह सुरभिसमय इति सुमुखि ! वदे
त्रिभुवनमधि सह पिब मधु वहि रयमपदे ।
कमलमयमनुसर सखि ! तव रभसपरं
प्रियतमगृहगमममुचितमनुचितमपरम् ॥ ४८४ ॥

इति चवलम् २१३

नवला इति पिङ्गले[२] ।

२१४ अथ सम्मुग्धा

कुरु हस्तं स्वर्णविराजत्कङ्कणपुष्पोद्यद्गन्धैर्युक्तं
श्रवणं ताटङ्कसुकम्पप्राप्तरसं हारश्चात्र पश्चात् ।
रसनायुग्मं कनकेमात्यन्तविराजद्वलकाभ्यां प्रान्ते
नवभूवर्णं कथितं नागाधिपतसम्मुग्धास्यं वृत्तं कान्ते ! ॥४८५॥

यथा–

नवसंध्या वह्निप्रभीत्या पश्चिमसिन्धौ मित्रे संमग्ने
नलिनीयं पङ्कजनेत्रं मीलयतीवात्यन्तं शोकेन ।
हरितो यस्याः पतमीयानां विरुतैरुच्चैर्नादं संबध्ना[२]
वरभृत्याश्चाम्बरमुच्चमर्मानुसमूहारक्तं संबध्नु ॥ ४८६ ॥

१ क. सुखकरणम् । २ ख संबध्नु ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम् द्वितीयाध्याय पद्य १ २
„ २ प्राकृतपैङ्गलम् परि २ पद्य १८९

यथा वा*[1]–

जय ! मायामानवमूर्ते दानववशध्वसव्यापारी[1],
बलमाद्यद्रावणहत्याकारण[2]लङ्कालक्ष्मीसहारी[3] ।
कृतकसध्वसन-कर्मशिसन-गो-गोपी-गोपानन्दी[4],
बलिलक्ष्मीनाशन-लीलावामन-दैत्यश्रेणीनिष्कन्दी[5] ॥ ४८७ ॥

इति शम्भु २१४

२१५ अथ मेघविस्फूर्जिता

यकार सदेहि प्रथममथ म देहि पश्चान्नकार,
कर तस्याप्यन्ते रचय रुचिर रेफयुग्म ततोपि ।
गुरु तस्याप्यन्ते कलय ललित षड्रसच्छेदयुक्त,
कुरु च्छन्द सार फणिपकथित मेघविस्फूर्जिताख्यम् ॥ ४८८ ॥

यथा–

विलोलै[6] कल्लोलैस्तरणिदुहितु क्रीडन कारयन्त,
लसद्वश कसप्रभृतिकठिनान् दानवानर्दयन्तम् ।
सुराणा सेन्द्राणा ददतमभय पीतवस्त्र दधान,
सलील विन्यासैश्चरणरचितैर्भूमिभाग पुनानम् ॥ ४८९ ॥

यथा वा, कविराक्षसकृतदक्षिणानिलवर्णने—

उदञ्चत्काबेरीलहरिषु परिष्वङ्गरङ्गे लुठन्त
कुहूकण्ठी कण्ठीरवरवलवत्रासितप्रोषितेभा ।
अमी चैत्रे मैत्रावरुणितरुणीकेलिकङ्केल्लिमल्ली-
चलद्वल्लीहल्लीसकसुरभयश्चण्डि चञ्चन्ति वाता ॥४९०॥

इत्यादि ।

इति मेघविस्फूर्जिता २१५

२१६ अथ छाया

सुरूपाढ्य कर्णं कनकललित ताटङ्कयुग्मान्वित,
द्विज गन्ध स्वर्णं वलययुगल पुष्पाढ्यहारद्वयम् ।
दधाना पादान्ते ललितविरुतप्रोद्भासित नूपुर,
रसै षड्भिश्छिन्ना फणिपकथिता छाया सदा राजते ॥४९१॥

---

१ ख. व्यापारिन् । २ ख हिंसाकारण । ३ सहारिन् । ४ ख गोपानन्दिन् । ५ ख निष्कन्दिन् । ६ ख वधूटी ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३०४

यथा–

भवच्छेदे दक्षं दितिसुतकुलध्वान्तस्य विध्वसने,
सदार्काभं वक्षःस्थलगतलसद्रत्नांशुभिभू षितम् ।
वधूभिर्गोपानां तरणितनयाकुञ्जेषु रासस्पृहं
सदा मन्दादीनाममितसुखदं गोपालवेषं भजे ॥ ४१२ ॥

इति छाया २१६

२१७ अथ सुरसा

कर्णद्वन्द्वं विराजद् कुसुमसुललितं कुण्डलयुगं
सविप्राणां ततोपि द्विजमथ च करं कङ्कणयुतम् ।
स्यात्तथा दिव्यरावा कुसुमविलसिता नूपुरयुता
धीरैरश्वरस बाणविरचितविरतिर्भाति सुरसा ॥ ४१३ ॥

यथा–

गोपालं केलिलोलं व्रजजनतरुणी-रासरसिकं
कालिन्दीये निकुञ्जे पशुपसुतगणैर्वेष्टिततनुम् ।
वंशीरावेण गोपीसुललितमनसां मोहनपरं
कंसादीनामरातिं व्रजपतितनयं नौमि हृदये ॥ ४१४ ॥

इति सुरसा २१७

२१८ अथ फुल्लदाम

कर्णौ स्वर्णाढ्यौ कुसुमरसमयौ रूपरावान्वितौ चेद्
पुष्पोद्यद्रूपौ कनकविरचितं नूपुरं पुष्पशोभम् ।
हारौ रावाढ्यौ विमलयमकगौ कङ्कणेनातिरम्यौ
धस्वल्लोकानां सुकवितमतुलं फुल्लदाम प्रसिद्धम् ॥ ४१५ ॥

यथा–

दीव्यद् देवानां परमधनकरं कामपूरं जनानां
धस्वद्भक्तानां परिकलितकलाकौशलं कामिनीनाम् ।
विद्यामन्दानां परम[1] निलयनं वेदगम्यं पुराणं
पुण्यारण्यानां गहनमहिमिमं नौमि मूर्द्ध ना नितान्तम् ॥४१६॥

इति फुल्लदाम २१८

---

१ 'विद्यामन्दानां चरमं' इति भाति क प्रतौ ।

२१९ अथ मृदुलकुसुमम्

रचय नगणमिह रसपरिमित[1]मनुकलय,
　　शिशिरकिरणरचित कुसुमगणनमपि कुरु ।
सकलभुजगनरपतिकथितमिदमतिशय-
　　सुललितमृदुलकुसुममिति हृदि परिकलय ।। ४९७ ।।

यथा–

अयि ! सहचरि ! निरुपममृदुलकुसुमरचित-
　　मनुकलय सरसमलयजकणलुलितमिति ।
वरविपिनगततरुवरतलकलितशयन-
　　मनुसर सरसिजनयनमनुपमगुणमिह ।। ४९८ ।।

इति मृदुलकुसुमम् २१९

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या एकोनविंशत्यक्षरस्य लक्षपञ्चक चतुर्विंशतिसहस्राणि अष्टाशीत्युत्तर शतद्वय ५२४२८८ भेदास्तेषु कतिपयभेदा प्रोक्ता, शेषभेदाः सुधीभि प्रस्तार्य उदाहरणीया, इत्युपदिश्यते[1]* ।

इत्यूनविंशत्यक्षरम् ।

अथ विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

२२० योगानन्द

यस्मिन् वृत्ते दिक्सख्याता सलग्ना शोभन्तेऽत्यन्त पूर्णा कर्णा-
　　स्तद्वल्लीलालोले पादप्रान्ते विख्याता ख्याप्यन्ते नव्या वर्णा ।
श्रीमन्नागाधीशप्रोक्त विद्वत्सार हारोद्धार धेहि स्वान्ते,
　　तद्वद्वृत्त योगानन्द सर्वानन्दस्थान धैर्याधान कान्ते ! ।।४९९।।

यथा–

वन्देऽह त रम्य गम्य कान्त सर्वाध्यक्ष देव दीप्त धीर,
　　नाथ नव्याम्भोदप्रख्य काम श्रव्य राम मित्र सेव्य वीरम् ।
सर्वाधार भव्याकार दक्ष पाल कसादीना काल बाल,
　　आनन्दाना कन्द विद्यासिन्धु सेवे येन क्षिप्त मायाजालम् ।।५००।

इति योगानन्द २२०

---

१ ख परिगनु । २ पक्तित्रय नास्ति क प्रतौ ।
*टिप्पणी—१ लम्बशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे विलोकनीया ।

२२१ अथ गीतिका

कुरु ह्रस्वसमिसुशक्रकद्रूमपरावसमन्वित
　　　　वरपक्षिराजविराजित नवगन्धयुग्मविभूषितम् ।
कुरु मल्लकोरवधारिणि रसमुग्धसुन्दररूपिणी
　　　　रवयुक्तनूपुरमत्र मेहि विधेहि मामिमि ! गीतिकाम् ॥ ५०१ ॥

यथा–

अयि ! मुञ्च माममवेहि धाममुपेहि कुञ्जगत हरिं
　　　　नवकञ्जधामविलोचनं भयमोचनं भवसन्तरिम् ।
कुरुषे विलम्बमकारण सखि ! साधयाशु मनोरथं
　　　　ननु शिवसेऽतिभृष वृथव जनुर्विचारयसे कथम् ॥ ५०२ ॥

यथा वा–

असमीक्ष-पावक-पाकशासन-वारिजासनसेवया
　　　　गमित जनुर्जनकात्मजापतिरप्यसेव्यत नो मया ।
करुणापयोनिधिरेक एव[1] सरोजदामविलोचन
　　　　स परं करिष्यति दु:खरोप मशेषदुर्गतिमोचन ॥ ५०३ ॥

अथ 'सालतालतमालवञ्जुलकोविदारमनोरमा' इत्यादि । शिको काव्ये च प्रत्युदाहरण[3]मिति ।

इति गीतिका २२१

२२२ अथ गण्डका

हारपुष्पसुन्दरं विधेहि त मनोहरं मनोहरेण
　　　　नागराजकुञ्जरेण भावितं च रेण सत्पयोधरेण ।
अन्तगेन चामरेण राजितं विराजितं च काहलेन
　　　　गण्डकेति यस्य नाम धारितं सुपण्डितेन पिङ्गलेन ॥ ५०४ ॥

यथा–

देव ! देव[2] वासुदेव ! ते पदाम्बुजद्वयं विभावयेम
　　　　नाम पुष्पदाम[4]धामतेजसा सदा हृदा विभारयेम ।
तावदेव सारवस्तु नागमदस्ति किञ्चनात्र धारितेन
　　　　वाजिराजिकुञ्जरादिसाधनेन तेन किं विभावितेन ॥ ५ ५ ॥

---

१ ख एव । २ ख कुञ्जनाथ । ३ ख तदुदाहरणम् ४ ख पुष्पदाम ।

*टिप्पणी– १ एतस्यास्य निदिष्टलक्षणकारिका परिस्फुटा नैवास्ति किन्तु पञ्चचतुर्थमेव भीष्ट तदुदाहरणेनैव परिज्ञायते—'पञ्चस्वपि हारपुष्पयोः(ऽ) नववारमनु क्रमेण यामन तदनु चामर-काहलयो.(ऽ)न्यतम भवेदात् गण्डकावृत्त स्यादिति ।

यथा वा, भूषणे[1]* प्रत्युदाहरणम्—

दृष्टमस्ति वासुदेव विश्वमेतदेव शेष[वक्त्र]क तु[1],
वाजिरत्नभृत्यदारसूनुगेहवित्तमादिवन्नव तु ।
त्वत्पदाब्जभक्तिरस्तु चित्तसीम्नि वस्तुतस्तु सर्वदेव,
शेषकाललुप्तकालदूतभीतिनाशनीह हन्त सैव ॥ ५०६ ॥

क्वचिदियमेव चित्तवृत्तम् इति । केवल वृत्तमात्रमन्यत्र[2]* ।

इति गण्डका २२२.

२२३. अथ शोभा

यकार प्रागस्ते तदनु च मगण कथ्यते यत्र बाले !,
ततोऽपि स्यात् पश्चाद् यदि नगणयुग स्यात्तकारद्वय च ।
ततश्चान्ते हारद्वयमुपरितन कारयाशु प्रकाम,
रसैरश्वैर्विच्छिन्ना मुनिविरतिगता भासते काऽपि शोभा ॥५०७॥

यथा–

रमाकान्त वन्दे त्रिभुवनशरण शुद्धभावैकगम्यं,
विरञ्चे स्रष्टार विजितघनरुचि वेदवाचावगम्यम् ।
शिव लोकाध्यक्ष समरविजयिन कुन्दवृन्दाभदन्त(वदात),
सहस्रार्चीरूप विधृतगिरिवर हार्दकञ्जे वसन्तम् ॥ ५०८ ॥

इति शोभा २२३.

२२४ अथ सुवदना

आदौ मो यत्र बाले ! तदनु च रगणो जङ्घासुघटितः,
पश्चाद्देयो नकारस्तदनु च यगणस्तातेन रचित ।
कार्यौ तत् पार्श्वदेशे तदनु लघुगुरू ज्ञेया सुवदना,
नागाधीशेन नुन्ना नखमितचरणा नव्या सुमदना ॥ ५०९ ॥

यथा–

श्रीमन्नारायण त नमत बुधजना ससारशरण,
सर्वाध्यक्ष वसन्त निजहृदि सदय गोपीविहरणम् ।
कल्याणाना निधान कलिमलदलन वाचामविषय,
क्षीराब्धौ भासमान दमितदितिसुत वेदान्तविषयम् ॥ ५१० ॥

---

१ शेषवक्त्रभाजि 'वाणीभूषणे' ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वि० अ०, पद्य ३०८

२ छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्तबक, का० २०६ एव वृत्तरत्नाकर', अ० ३, का १०३

यथा वा हलायुधभट्टविरचितछन्दोवृत्तौ*—

या पीनाद्रौल्लुङ्ग[1]स्तनजघनघनाभोगालसगतिः
यस्याः कर्णावतंसोत्पलरुचिजयिनी दीर्घे च नयने ।
सीमा सीमन्तिनीनां[2] मखिलजहृदया या च त्रिभुवने
सम्प्राप्ता साम्प्रतं मे नयनपथमसौ दैवात् सुवदना ॥ ५११ ॥

इति सुवदना २२४

२२५ अथ प्लवङ्गमभङ्गमङ्गलम्

यदा लघुगुरुर्निवेश्यते तदा प्लवङ्गमभङ्गमङ्गलं
जरौ जरौ जरौ रसप्रयुक्तमुच्यते भगी सुमङ्गलम् ।
फणीन्द्रपिङ्गलोदितं सुवङ्गहारभूषितं मनोहरं
प्रमाणिका-पदद्वयेन पूर्यते च भव्य पञ्चचामरम् ॥ ५१२ ॥

यथा–

नवीनमेघसुन्दरं भजेम भूपुरन्दरं विभुं वरं
प्रकामधामभासुरं दधानमद्भुताम्बरं[3] दयापरम् ।
विलासिनीभुजान्तरानिरुद्धमुग्धविग्रहं स्मरातुरं
चराचरादिजीवजातपातकापहं जगद्गुरुं[4] परम् ॥ ५१३ ॥

इति प्लवङ्गमभङ्गमङ्गलम् २२५

२२६ अथ शशाङ्कचलितम्

कर्णपयोधरकरौ यदा च भवतो विलासकलिते
न यस्ततः सुतनु ! जः सुहस्तकलितः शशाङ्कचलिते ।
ततोऽपि चेद् भवति जः सुपाणिघटितो वसौ च विरतिः
स्ततौ रसैरपि यतिः कलावति भवेत् पुनः रसमतिः ॥५१४॥

यथा–

कृष्णं प्रणौमि सततं जनेन सहितं सदा शुभरतं
कल्याणकारिचरितं सुरैरभिनुतं प्रमोदमणितम् ।
कंसादिदर्पदमनं च कलाकुतुकिनं विलासभवनं
संसारपारकरणं पयोदमकरं सरोजनयनम् ॥ ५१५ ॥

इति शशाङ्कचलितम् २२६

---

१ मा पीनो भतगुङ्ग 'हलायुधे । २ समाया सीमन्तिनीनां 'हलायुधे । ३ क दधानमुतं वरम् । ४ क चरितम् ।

*टिप्पणी—१ अध्याय ७ कारिकाया २१ उदाहरणम् ।

२२७. अथ भद्रकम्

वेदसुसम्मितमादिगुरु कुरु जोहल कमल प्रिये[1],
अन्तगत कुरु पुण्यसुकङ्कणराजित विजितत्रिये ।
रन्ध्ररमैरपि बाणविभेदितविंशक कुरु वर्णक,
कामकलारसरासयुते निजमानसे कुरु भद्रकम् ॥ ५१६ ॥

यथा–

चेतसि पादयुग नवपल्लवकोमल किल भावये,
मञ्जुलकुञ्जगत सरसीरुहलोचन ननु चिन्तये ।
आनय नन्दसुत सखि! मानय मेदुर रजनीमुख,
कुञ्चितकेशममु परिशीलय कामुक कुरु मे सुखम् ॥ ५१७ ॥

इति भद्रकम् २२७

२२८. अथ अनवधिगुणगणम्

रसपरिमितमिति सरसनगणमिति[1] विरचय,
विकचकमलमुखि! लघुयुगमनुमतमनुनय ।
सुतनु! सुदति! यदि निगदसि बहुविधमनवधि-
गुणगणमनुसर नखलघुमितमनुलवमयि! ॥ ५१८ ॥

यथा–

अनुपमगुणगणमनुसर मुरहरमभिनव-
मभिमतमनुमत[2]मतिशयमनुनयपरमव ।
सकपटयदुवरकरधृतगिरिवरपरमयि,
कुरु मम सुवचनमफलय सखि न हि न हि मयि ॥ ५१९ ॥

इति अनवधिगुणगणम् २२८.

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या विंशत्यक्षरस्य दशलक्षमष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि षट्-सप्तत्युत्तराणि पञ्चशतानि च १०४८५७६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यन्तसहिता विस्तरभीत्या कियन्तो भेदा लक्षिता, शेषभेदाः सुबुद्धिभि प्रस्तार्य सूचनीया इति दिक् ।[1]*

इति विंशाक्षरम् ।

---

१ ख मिह । २ ख मनुगत । ३ पक्तिचतुष्टय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ लब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे समालोकनीया ।

अथ एकविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२२१ अथ ब्रह्मानन्द

यस्मिन् वृत्ते पङ्क्ति स्याद्या द्योमन्तेऽप्यन्त कर्णा प्रान्ते चैकोहार
नागाधीशप्रोक्तोऽसार. सारोद्धारो ब्रह्मानन्दो वृत्तानां सार ।
विश्रामश्च प्रायो यस्मिन् वेद योत्रं शलेन्द्रे धास्त्रैर्वा स्यात् प्रान्ते
विंशत्या वर्णैरेकाग्रै सयुक्तैर्लीलालोले सोऽयं ज्ञेय कान्ते।।२२०॥

यथा–

सर्वं कालव्यालग्रस्त मत्वा स्त्रीषु व्यासङ्ग हित्वा कृत्वा धैर्यं
कामोन्मीये कुञ्जे कुञ्जे भ्राम्यद्भृङ्गे सगीते भ्रातर्मु मत्वा कौयम् ।
श्रीगोविन्द वृन्दारण्ये मेघश्याम गायन्तं वेणुक्वाणैर्मन्द
ब्रह्मानन्द प्राप्याबन्ध ध्यात्वा चेत साफल्य चेहि स्वान्तेऽमन्दम ॥२२१

इति ब्रह्मानन्द २२१.

२१ अथ स्रग्धरा

आदौ मो यत्र बाले ! तदनु च रगण स्याद् प्रसिद्धस्तु यस्यां
पश्चाद् मं चापि नं च त्रिगुणितमपि यं धेहि कान्ते ! विभिन्नम् ।
शैलेन्द्रै सूर्यवाहैरपि च मुनिगणैर् यत्र चेद् विराम
कामव्यासक्तचित्त सुदति ! निगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा ॥२२२॥

यथा ममैव पाण्डवचरिते—

दृष्टेनाथ द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र वत्साम्मनुज
कर्णोपि प्राप्तमानस्सदसि कुरुपतेर्द्रव्ययुद्धार्थमागात् ।
पम्भाराति स्वसूनोरुपरि जलधरैस्सव्यमाचातपत्र
चण्डांशुश्चापि कर्णोपरिमितकिरणानातनोदातिथीयात् ॥२२३॥

यथा वा मत्पितु कङ्कवर्णने—

सङ्ग्रामारम्भचारी विकटभटभुजस्तम्भभूभृद्विहारी
धन्नृक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविक्षोभकारी ।
मातङ्गोत्तुङ्गकुम्भस्थलगलदमलस्थूलमुक्ताप्रहारी
स्फारीभूताङ्कधारी जगति विजयते सङ्गपञ्चाननस्ते ॥ २२४ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

केशिद्वेषिप्रसूश्च क्वचिदथ समये सद्मदासीषु कार्य-
व्यग्रासु प्रग्रहान्तग्रहणचलभुजाकुण्डलोद्ग्रीवमूनु ।
पुत्रस्नेहस्नुतोरस्तनमनणुरणत्कङ्कणक्वाणमुद्यत्-
कम्पस्विद्यत्कपोल दधिकचविगलद्दामबन्ध ममन्थ ॥५२५॥

इति स्रग्धरा २३०.

२३१. अथ मञ्जरी*[1]

कङ्कण कुरु मनोहर तदनु सुन्दर रचय तुम्बुर,
सुन्दरी कलय सुन्दरी तदनु पक्षिणामपि पति तत ।
भावमातनु तत पर सुतनु ! पक्षिण च कुरु सङ्गत,
भावमेव कुरु मञ्जरी [तदनु] जोहल विरचयातत ॥५२६॥
रगणनगणक्रमेण च सप्तगणा भान्ति यत्र सरचिता ।
नव-रस-रसयतिसहिता वदन्ति तज्ज्ञास्तु मञ्जरीमिति ताम् ॥ ५२७ ॥

यथा–

हारनूपुरकिरीटकुण्डलविराजिता वरमनोहर,
सुन्दराधरविराजिवेणुरवपूरिताखिलदिगन्तरम् ।
नन्दनन्दनमनङ्गवर्द्धनगुणाकर परमसुन्दर,
चिन्तयामि निजमानसे रुचिरगोपगोधनधुरन्धरम् ॥ ५२८ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्यणा नवरत्नमालिकायाम्—

दाडिमीकुसुममञ्जरीनिकरसुन्दरे मदनमन्दिरे,
यामिनीरमणखण्डमण्डितशिखण्डके तरलकुण्डे (कुण्डले) ।
पाशमकुशमुदञ्चित दधति कोमले कमललोचने !
तावके वपुषि सन्तत जननि ! मामक भवतु मानसम् ॥५२९॥

इति मञ्जरी २३१

२३२ अथ नरेन्द्र

कुण्डलवज्ररज्जुमुनिगणयुतहस्तविराजितशोभ,
पाणिविराजिशङ्खयुगवलयित-कङ्कणचामरलोभ ।
कामविशोभयोगवरविरतिगचन्द्रविलोचनवर्ण,
पन्नगराजपिङ्गल इति गदति राजति वृत्तनरेन्द्र ॥ ५३० ॥

---

*टिप्पणी—१ मञ्जरीवृत्तस्य लक्षणोदाहरणप्रत्युदाहरणानि नैव सन्ति क प्रतौ ।

अथ एकविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२२८. अथ ब्रह्मानन्दः

यस्मिन् वृत्ते पङ्क्तिः स्याता शोभन्तेऽप्यन्तः कर्णाः प्रान्ते चकोहारः
नागाधीशप्रोक्तोऽपार सारोद्धारो ब्रह्मानन्दो वृत्तानां सारः ।
विश्रामश्च प्रायो यस्मिन् वेदः श्रोत्रे शैलेशैः सत्त्वैर्वा स्यात् प्रान्ते,
विख्याताः वर्णैरेकाग्र संयुक्तैर्लीलालोले सोऽयं प्रेम कान्ते ॥१२०॥

यथा–

सर्वं कालव्यालग्रस्तं मत्वा स्त्रीषु व्यासङ्गं हित्वा कृत्वा धैर्यं
कालीन्दीये कुञ्जे कुञ्जे भ्राम्यद्भृङ्गे सगोले भ्रातुमु मत्वा क्षौमम् ।
श्रीगोविन्दं वृन्दारण्ये मेघश्यामं गायन्तं वेणुक्वाणैर्मन्दं
ब्रह्मानन्दं प्राप्यानन्तं ध्यात्वा चेतः साफल्यं येहि स्वान्तेऽमन्दम् ॥१२१

इति ब्रह्मानन्दः २२८.

२१ अथ स्रग्धरा

आदौ मो यत्र बाले ! तदनु च रगण स्यात् प्रसिद्धस्तु यस्यां
पश्चात् भं चापि नं च त्रिगुणितमपि य येहि कान्ते ! विचित्रम् ।
शैलेशैः सूर्यवाहैरपि च मुनिगणैर्दृश्यते चेद् विरामः,
कामव्यासक्तचित्ते सुदति ! निगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा ॥ १२२ ॥

यथा ममैव पाण्डवचरिते—

तुष्टेनाथ द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र दत्ताम्यनुज्ञ
कर्णोऽपि प्राप्तमानस्तदपि कुरुपतेर्द्रागयुद्धार्थमागात् ।
जम्भारातिः स्वसूनोरपरि जलधरैस्संव्यधादातपत्रं
चण्डांशुस्चापि कर्णोपरिरतिशकिरणानातताना विधीतात् ॥१२३॥

यथा वा मदीयः कृष्णवर्णने—

राजग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूमृद्विहारी
पानुश्रोणीनचेतोमृगमिकरराजानन्दविक्षोभकारी ।
मातम्मातङ्गकुम्भस्थलगलन्मसत्सूक्ष्ममुक्तापहारी
स्मारोमुक्तापहारी जगति विजयते नन्दपञ्चाननस्ते ॥ १२४ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

केशिद्वेषिप्रसूश्च क्वचिदथ रामये राधदासीषु कार्य-
　　व्यग्रासु प्रग्रहान्तग्रहणचलभुजाकुण्डलोद्ग्रीवसूनु. ।
पुत्रस्नेहस्नुतोरुस्तनमनणुरणत्कङ्कणक्वाणमुद्यत्-
　　कम्पस्विद्यत्कपोल दधिकचविगलद्दामबन्ध ममन्थ ॥५२५॥

इति स्रग्धरा २३०.

२३१. अथ मञ्जरी[1]

कङ्कण कुरु मनोहर तदनु सुन्दर रचय तुम्बुर,
　　सुन्दरी कलय सुन्दरी तदनु पक्षिणामपि पतिं तत ।
भावमातनु तत पर सुतनु ! पक्षिण च कुरु सङ्गत,
　　भावमेव कुरु मञ्जरी [तदनु] जोहल विरचयातत ॥५२६॥
रगणनगणक्रमेण च सप्तगणा भान्ति यत्र सरचिता ।
नव-रस-रसयतिसहिता वदन्ति तज्ज्ञास्तु मञ्जरीमिति ताम् ॥ ५२७ ॥

यथा–

हारनूपुरकिरीटकुण्डलविराजिता वरमनोहर,
　　सुन्दराधरविराजिवेणुरवपूरिताखिलदिगन्तरम् ।
नन्दनन्दनमनङ्गवर्द्धनगुणाकर परमसुन्दर,
　　चिन्तयामि निजमानसे रुचिरगोपगोधनधुरन्धरम् ॥ ५२८ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्याणा नवरत्नमालिकायाम्—

दाडिमीकुसुममञ्जरीनिकरसुन्दरे मदनमन्दिरे,
　　यामिनीरमणखण्डमण्डितशिखण्डके तरलकुण्डे (कुण्डले) ।
पाशमकुशमुदञ्चित दधति कोमले कमललोचने !
　　तावके वपुपि सन्तत जननि ! मामक भवतु मानसम् ॥५२९॥

इति मञ्जरी २३१.

२३२ अथ नरेन्द्र

कुण्डलवज्ररज्जुमुनिगणयुतहस्तविराजितशोभ,
　　पाणिविराजिशखयुगवलयित-कङ्कणचामरलोभ ।
कामविशोभयोगवरविरतिगचन्द्रविलोचनवर्ण,
　　पन्नगराजपिङ्गल इति गदति राजति वृत्तनरेन्द्र ॥ ५३० ॥

---

*टिप्पणी—१ मञ्जरीवृत्तस्य लक्षणोदाहरणप्रत्युदाहरणानि नैव सन्ति क प्रतौ ।

मानिनि ! मानकारणमिह[1] जहिहि नन्दय त सखि ! कृष्ण

चिन्तय चिन्तनीयपदमनुमतमाकलयाशु सतृष्णम् ।

मोचय मोचजातमुपगतमपि मा कुरु मानसभङ्ग,

केवलमेव खेम सह सहचरि ! मन्तनु ततनुसङ्गम् ॥ ५३१ ॥

यथा वा–

पङ्कजकोपपानपरमधुकरगीतमनोज्ञतडाग

पञ्चमनादवादपर परभृतकाननसत्परभाग ।

वल्लभविप्रयुक्तकुसपरसमुपोमनवानदुरन्त

किं करवाणि सखि[2] मम सहचरि ! सन्निधिमेति वसन्त । ५३२।

इति नरेन्द्र २१२

२१३ अथ सरसी

सहचरि ! नो यदा भवति सा कथिता सरसी कवीश्वरै

यदि तु नभो जजौ च भवतोपि चरौ समनन्तर परै ।

इह विरती यदा शरविलोचनजे भवतो मुनीश्वरै

शिशिरकरैस्तथा भवति लोचनतो गणमापवाक्षरै ॥ ५३३ ॥

यथा–

नमत सदा जना प्रणतकल्पतरु जगदीश्वरं हरिं,

प्रबलसहृदन्धकारतरणि भवसागरपारसन्तरिम ।

सकलसुरासुरादिजनसेवितपादसरोरुह परं

कमलदलदक्ष चञ्चकमनीयगदाधरसुन्दराम्बरम् ॥ ५३४ ॥

यथा वा–

'तुरगशताकुलस्य परित परमेकतुरङ्गजन्मन ।' इत्यादि माघकाव्ये[1] ।

इति सरसी २१३

सुरतरुरिति अन्यत्र । सिद्धकम * इति क्वचित् ।

---

१ क मानकारिणिमिह । २ ख पञ्चममनादमाकपर । ३ ख सखि

टिप्पणी—१ 'तुरगशताकुलस्य परित परमेकतुरङ्गजन्मन,
प्रमथितभूभृत प्रतिपथ मथितस्य भृश महीभृता ।
परिचलतो बलानुजबलस्य पुर सतत धृतश्रिय
चिरविगतश्रियो जलनिधेश्च तदाभवदन्तरं महत् ॥ ८२ ॥
[शिशुपालवधम्–स ३ प ८२]

२ वृत्तरत्नाकर, नारायणीटीकायाम्–अ ३ का १ ४

२३४. अथ रुचिरा

कुरु नगणं ततो रचय भूमिपतिं दहनं च सुन्दर,
तदनु विधेहि जं त्रिगुणितं ललितं विहगं ततः परम् ।
मुनिमुनिभिर्भवेद्विरतिरप्यतुला सुकला मनोहरा,
सुकविवरैः परा निगदिता रुचिरा परमार्थतो वरा ॥ ५३५ ॥

यथा-

नयनमनोहरं परमसौख्यकरं सखि ! नन्दनन्दनं,
कनकनिभायुकं त्रिजगतीतिलकं मुरलीविनोदनम् ।
भुवनमहोदयं घनरुचिं रुचिरं कलये सदोन्नतं[1],
सुरकुलपालकं श्रुतिनुतं सदयं दयितं श्रियः पतिम् ॥ ५३६ ॥

इति रुचिरा २३४

२३५. अथ निरुपमतिलकम्

सुतनु ! सुदति ! सरसमुनिमितनगणमिह रचय,
शिशिरकरजनयनमितमुपदमपि परिकलय ।
कनककटकवलयकलितकरकमलमुपनय,
फणिपतिभणितमिह निरुपमतिलकमिति कथय ॥ ५३७ ॥

यथा-

जय ! जय ! निरुपम ! दिशि दिशि विलसितगुणनिकर !,
करधृतगिरिवर ! विगणितगुणगणवरसुकर !।
कनकवसनकटकमुकुटकलित ! मिलितललन !,
विजितमदन ! दलितशकट ! सबलदितिजदलन ! ॥ ५३८ ॥

इति निरुपमतिलकम् २३५

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या एकविंशत्यक्षरस्य नवलक्ष सप्तनवतिसहस्राणि द्विसमधिकपञ्चाशदुत्तरं शतं २०९७१५२ भेदा भवन्ति, तेषु भेदसप्तकं प्रोक्तं, शेषभेदाः सुधीभिः स्वबुद्ध्या प्रस्तार्य सूचनीया इति दिक् ।*[1]

इति एकविंशाक्षरम् ।

---

१ ख सदोन्नतिं । २ पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ एकविंशत्यक्षरवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेषु लब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः

अथ द्वाविंशत्यक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२१६ विद्यानन्द

यस्मिन् वृत्ते रुद्रप्रोक्ता कुन्तीपुत्रा नेत्रैर्नेत्रैर्वर्णाः पादप्रान्ते
पक्षमि कर्णविश्राम स्यात् तद्वद् यस्मिन् रम्यः पाण्डो पुत्रैः स्यात् तस्मात् ।
श्रीमन्नागाधीशनाक्त सार वृत्त श्रव्य भव्य नव्य काम्य कान्ते !
बाले ! भीमाभोले ! मुग्धे ! विद्यानन्द दिव्यानन्द सम्यग् मेहि स्वान्ते ॥२३९॥

यथा–

काशीक्षेत्रे गङ्गातीरे चण्डभीरे विश्वेशाङ्घ्रिद्वन्द्वं सम्यग् ध्यात्वा
कृत्वा तत्त मात्रायुक्तप्राणायाम शोध्य मध्यतत्तत्सङ्गं मुक्त्वा ।
मायाजाल सर्वं विश्व मत्वा चित्ते रम्य हर्म्यं पुत्रा किञ्चिन्नैव
न्यस्तस्वकामक्रोधक्रौर्याक्रान्तः भ्रान्त प्रान्ते नाहं देह सोऽहं तत्त्वत् ॥२४०॥

इति विद्यानन्द २१६

२१७ अथ हंसी

यस्यामष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च दिनपतिमित वरवर्णाः,
दण्डाकारा कान्ते ! चञ्चत्करयुगविलसितवलयविभोले ।
तद्वद्दीर्घावन्त्यौ वर्णौ *यतिरिह विलसति वसुभुवनार्णैः
सा विज्ञ या हंसी बाले ! प्रभवति यदि किल नयनमृगार्णा* ॥२४१॥

यथा–

प्रौढध्वान्ते प्रावृट्काले क्षितितलविलसिततरसितकन्दे
कालिन्दीये कुञ्जे कुञ्जे त्वदभिसरणकृत-सरभसवेषा ।
राधा त्वयम्त वायायुक्ता प्रसरति मनसिजविशिखविधूना
वन्यस्रग्भिर्विरचितभूपस्त्वमपि च विहरसि सरसकदम्बे[1] ॥ २४२ ॥

यथा वा–

श्रीकृष्णेन क्रीडन्तीमा क्वचिदपि वनभुवि मनसिजमार्गा
गोपालीनां चन्द्रज्योत्स्नाविशदरजनिगुरुजनितरतीनाम् ।
धर्मं भ्रश्यन्पद्माक्षीनामुपचितरभगविमलतनुभागा
रागश्रीन्यायागच्छन्ती मुखमुपनयति[1] मलयगिरिवात ॥ २४३ ॥

इति हंसी २१७

*चिह्नगतपाठो नास्ति क प्रती । १ १ ४ रातकीडायाचातत्सततनुवनुनवमिव ।

टिप्पणी—१ काशोत्र राक्षपाङ्मुत बर्लोऽसकङ्नाहीर्षिठपर्रोदनलारुण । यतोऽन्मिन्
वाई यदि विरचित'नन्नामे 'गुप्ता वरको यना स्यातदोषपरिहारसकः ।

२३८ अथ मदिरा

आदिगुरुं कुरु सप्तगण सखि ! पिङ्गलभाषितमन्तगुरु,
पक्तिविराजि-यति च तत कुरु सूर्यविभासियति च तत. ।
चिन्तय चेतसि वृत्तमिद मदिरेति च नाम यत प्रथित,
सप्तभकारगुरूपहित बहुभि कविभिर्बहुधा कथितम् ।। ५४४ ।।

यथा–

मा कुरु भाविनि ! मानमये वनमालिनि सन्तति[1]शालिनि हे,
पाणितलेन कपोलतल न विमुञ्चति सम्प्रति किं मनुपे ।
यौवनमेतदकारणक न हि किञ्चिदतोऽपि फल तनुपे,
कुञ्जगत परिशीलय त परिलम्बमिद सखि ! किं कुरुपे ।। ५४५ ।।

इति मदिरा २३८

इयमेव अस्माभिर्मात्राप्रस्तारे पूर्वखण्डे सवयाप्रकरणे मदिराभिसन्धाय सवया इत्युक्ता, सा तत एवावधारणीया ।

२३९. अथ मन्द्रकम्

कारय भ ततोपि रगण ततो नरनरास्ततश्च न-गुरू,
दिग्रविभिर्भवेच्च विरतिर्विलोचनयुगैरपीन्दुवदने ! ।
कल्पय पादमत्र रुचिरं कवीन्द्रवरपिङ्गलेन कथित,
मन्द्रकवृत्तमेतदबले ! सुभाषितमहोदधे सुमथितम् ।। ५४६ ।।

यथा–

दिव्यसुगीतिभि सकृदपि स्तुवन्ति भवये(भुवि ये) भवन्तमभय,
भक्तिभरावनम्रशिरस कृताञ्जलिपुटा निराकृतभवम् ।
ते परमीश्वरस्य पदवीमवाप्य सुखमाप्नुवन्ति विपुल,
भु　स्पृशन्ति न पुनर्मनोहरसुताङ्गनापरिवृता ।। ५४७ ।।

इति मन्द्रकम् २३९

२४०. अथ शिखरम्

मन्द्रकमेव हि वृत्त यदि दशरसयुगविरति भवेत् ।
शिखर तदत्र बाले ! कथित कविपिङ्गलेन तदा ।। ५४८ ।।

---

[1] ख सन्ततिशालिनी ।

अथ द्वाविंशत्यक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२१६ विद्यानन्द

यस्मिन् वृत्ते छन्दप्रोक्ता कुन्तीपुत्रा नेत्रैर्नेत्रैर्वर्णा पादप्रान्ते
पड्भि कर्णविश्राम स्यात् तद्वद् यस्मिन् रम्यै पाण्डो पुत्रै स्यात् तस्यान्
श्रीमन्नागाधीशेनोक्त सारं वृत्त भव्य भव्य नव्य काव्ये कान्ते !
बाले ! लीलालोले ! मुग्धे ! विद्यानन्द दिव्यानन्द सम्यग् धेहि स्वान्ते ॥१३९॥

यथा—

काशीक्षेत्रे गङ्गातीरे धन्यश्रीरे विश्वेशाङ्घ्रिद्वन्द्वं सम्यग् ध्यात्वा
कृत्वा तत्सम्भावायुक्तप्राणायाम शोध्य नश्यत्तत्सङ्ग मुक्त्वा ।
मायाजालं सर्वं विश्व मत्वा चित्ते रम्य हर्म्यं पुत्रा किञ्चिच्चैव
श्चध्वस्तकामक्रोधक्षोभक्रान्त भ्रान्त प्रान्ते माद्य देह शोध्य तत्सत् ॥१४०॥

इति विद्यानन्द २१६

२१७ अथ हंसी

यस्यामष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च दिनपतिमित वरवर्णा
दण्डाकारा कान्ते ! धन्यसुकरयुगविलसितचमरविलोले ।
तद्वद्दीर्घावन्त्यौ वर्णौ *यतिरिह विलसति वसुभुवनार्णे
सा विज्ञ या हंसी बाले ! प्रभवति यदि किल नयनयुगार्णा* ॥१४१॥

यथा—

ग्रीष्मान्ते प्रावृट्काले क्षितितलविलसिततरलितकम्बे
कालिन्दीये कुञ्जे कुञ्जे स्वदभिसरणकृत-सरभसवेषा ।
राधात्यन्तं बाधायुक्ता प्रसरति मनसिजविशिखविधुना
वन्यस्रग्भिर्विरचितभूषस्त्वमपि च विहरसि सरसकदम्बे*¹ ॥ १४२ ॥

यथा वा—

श्रीकृष्णेन क्रीडन्तीनां क्वचिदपि वनभुवि मनसिजभाजां
गोपालीनां धम्मज्योत्स्नाविशदरजनिगृहगमितरतीनाम् ।
चमत्कृतस्तनभारासीनामुपचितरभसविमलतनुभासां
रासक्रीडायासध्वंसी मुहुरुपनयति² मलयगिरिवात ॥ १४३ ॥

इति हंसी २१७

---

*–*चिह्नगतोऽयं पाठो नास्ति क प्रतौ । १ १ क रासक्रीडायासध्वंसमुहुरुपनयमिव ।

टिप्पणी—१ वाराोऽयं तदनन्तरं वर्णद्वयमत्र नाशीर्षकपरिहितव्यम् । यतोऽत्रैव वाते यदि विरचित'पदस्थाने 'गुम्फ्ति' पदयोजना स्यात्तदा दोषपरिहारसंभवः ।

यथा वा–

मन्दाकिनीपुलिनमन्दारदामशतवृन्दारकाञ्चितविभो[1]।
नारायणप्रखरनाराचविद्धपुरनाराधिद्धुक्तवता ।
गङ्गाचलाचलतरङ्गावलीमुकुटरङ्गावनीमतिपटो[2]!
गौरीपरिग्रहणगौरीकृतार्द्ध नव गौरीदृशी श्रुतिगता ॥५५४॥

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामहकविपण्डितमुख्यश्रीमद्रामचन्द्रभट्टकृतनारायणाष्टके-

कुन्दातिभासि शरदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू-
वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।
वन्दारुखिभ्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत-
च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मज भुवनकन्दाकृतिं हृदि भजे ॥ ५५५ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि[3] ।

इति मदालसम् २४२

२४३ अथ तरुवरम्

सहचरि ! रविहयपरिमित सुनगणमिह विरचय,
तदनु छिखिरकरपरिमित कुसुममिह परिकलय ।
कविवरसकलभुजगपतिनिगदितमिदमनुसर,
नवरससुघटित-नरवरसुपठित-तरुवरमिति ॥ ५५६ ॥

यथा–

अवनतमुनिगण ! करधृतगिरिवर ! सदवनपर !,
त्रिभुवननिरुपम ! नरवरविलसित ! सकपटवर ! ।
दमितदितिजकुल ! कलितसकलबल ! सततसदय !,
सम्भसविदलितकरिवर ! जय ! जय ! निगमनिलय ! ॥ ५५७ ॥

अत्र प्रायोऽष्टाष्टरसैर्विरतिरित्युपदेश ।

इति तरुवरम् २४३.

अत्रापि प्रस्तारगत्या द्वाविंशत्यक्षरस्य एकचत्वारिंशल्लक्षाणि चतुर्नवतिसहस्राणि चतुरुत्तर शतत्रय ४१९४३०४ भेदा, तेषु भेदाष्टकमुक्तम् । शेषभेदास्तु शास्त्ररीत्या प्रस्तार्य प्रतिभावद्भिरुदाहर्त्तव्या । इति दिङ्मात्रमुपदिश्यते[1]* ।

इति द्वाविंशत्यक्षरम् ।

---

१ ख विभो । २ख गतिपटो । ३ ख तदुदाहरणम् ।
*टिप्पणी—१ लब्धा शेषभेदा द्रष्टव्या पञ्चमपरिशिष्टे ।

यथा–

कृष्णपदारविन्दयुगनं नमन्ति ननु ये जना गुरुविनं
संसृतिसागरं गुणिपुरं तरन्ति मुदितास्त एव शुचिनं ।
दिव्यपुमीतरङ्गसलिले तटे कृतकुटा स्मरन्ति परमं,
धाम निरन्तरं मनसि तज्जरामपमितं जनुर्न परमम् ॥ २४९ ॥

इति विग्नरम् २४०

मग्नकस्य गणा एव मत्रापि यतिकृत एव परं भेद ।

२४१ अथ अच्युतम्

सलमुग निगमनगणमिह[१]* कुरु पदि-पाणिसमाजितं
तदनु च रचय नमममुवि ! सखि ! पुण्यहारविराजितम् ।
निगमशिशिरकरविरचितयतियोगबद्ध विभावित
कविवरफणिपतिसुभणितमिति[१] मानम कलयाच्युतम् ॥ २५० ॥

यथा–

शमनतिमिरभरभरितविपिनमास्मनव विभावितं
न सखु सहचरि ! विततु विवसितमाश्रयामि सुजीवितम् ।
कनकनिभवसनमरुणनयनमामयाष्ठु मनोहरं
मसृणमणिगणखचिततनुमपि हारयामि तमोहरम् ॥ २५१ ॥

इति अच्युतम् २४१

२४२ अथ मदालसम्

कर्णं अकार रसयुगम विधेहि सखि ! कर्णं ततः कुरु रसं
हारं नकारमथ कर्णं नरेन्द्रमिह हस्त विधेहि च ततः ।
सूर्याश्वसप्तयति कुर्याद् यथाभिरुचि पश्चाद् वसौ च विरति[२]
नेत्रद्वयेन कुरु पादान्तकर्णमिति वृत्तं मदालसमिदम् ॥ २५२ ॥

यथा–

शम्भो ! जय प्रणमदम्भोजनाभविधिवम्भोभिपाणिवरणे
रम्भोरुगाढपरिरम्भोपभोगदिवि रम्भोपगीतसततम् ।
स्तम्भोद्यमप्रणतजम्भोपमाति[३] विधुवम्भोपकल्पिततनो !
रम्भोवरप्रतिमशम्भो ! भयामममविवम्भोभि[४]वर्द्धनमिभो ! ॥ २५३ ॥

१ क सुभाषितमिति । २ क विरति । ३ क जम्भो च माति । ४ क विवम्भोभि ।

टिप्पणी—१ सलयुगनिगममगणमिह सद–अच्युतवृत्ते चतुर्थगणद्वितीय तुर्यगणमर्पाद् चतुर्थपञ्चमाक्षरमत्र 'कुरु' रचयेत्यर्थः ।

यथा वा–

मन्दाकिनीपुलिनमन्दारदामगतवृन्दारकार्च्चितविभो[1]!
नारायणप्रखरनाराचविद्धपुरनाराधिदुष्कृतवता ।
गङ्गाचलाचलतरङ्गावलीमुकुटरङ्गावनीमतिपटो[2]!
गौरीपरिग्रहणगौरीकृतार्द्धं तव गौरीदृशौ श्रुतिगता ॥५५४॥

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामहकविपण्डितमुख्यश्रीमद्रामचन्द्रभट्टकृतनारायणाष्टके-

कुन्दातिभासि शरदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू-
वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।
वन्दारुविभ्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत-
च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मज भुवनकन्दाकृतिं हृदि भजे ॥ ५५५ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि[3] ।

इति मदालसम् २४२

२४३. अथ तरुवरम्

सहचरि ! रविहयपरिमित सुनगणमिह विरचय,
तदनु शिशिरकरपरिमित कुसुममिह परिकलय ।
कविवरसकलभुजगपतिनिगदितमिदमनुसर,
नवरससुघटित-नरवरसुपठित-तरुवरमिति ॥ ५५६ ॥

यथा–

अवनतमुनिगण ! करधृतगिरिवर ! सदवनपर !,
त्रिभुवननिरुपम ! नरवरविलसित ! सकपटवर ! ।
दमितदितिजकुल ! कलितसकलबल ! सततसदय !,
सरभसविदलितकरिवर ! जय ! जय ! निगमनिलय ! ॥ ५५७ ॥

अत्र प्रायोऽष्टाष्टरसैर्विरतिरित्युपदेशः ।

इति तरुवरम् २४३.

अत्रापि प्रस्तारगत्या द्वात्रिंशत्यक्षरस्य एकचत्वारिंशल्लक्षाणि चतुर्नवतिसहस्राणि चतुरुत्तर शतत्रय ४१९४३०४ भेदा, तेषु भेदाष्टकमुक्तम् । शेषभेदास्तु शास्त्ररीत्या प्रस्तार्य प्रतिभावद्भिरुदाहर्त्तव्या । इति दिङ्मात्रमुपदिश्यते[1]* ।

इति द्वात्रिंशत्यक्षरम् ।

---

१ ख विभा ।　२ख गतिपटो ।　३ ख तदुदाहरणम् ।

*टिप्पणी—१ लब्धा शेषभेदा द्रष्टव्या पञ्चमपरिशिष्टे ।

अथ त्रयोविंशाक्षरम्

तत्र पूर्वम्—

२४४ दिव्यानन्दः

कुन्तीपुत्रा यस्मिन् वृत्ते दिकसंख्याता सैका सोमस्ते प्रान्ते चैको हार
रौद्रैर्नेत्रैर्यस्मिन् सर्वैर्वर्णैर्वा सोऽय दिव्यानन्दश्छन्दोग्रन्थे सार ।
विश्राम स्यात् यद्भि कर्णेर्यस्मिस्तद्वत् सार्द्धे¹ पाण्डो पुत्रर्वा स्यात्तस्यान्ते,
बाले ! लीलालोले ! कामक्रीडासक्ते ! पूर्वोक्तं दिव्य वृत्त चेहि स्वान्ते ॥१५८॥

यथा–

वन्दे देव सर्वाधार विश्वाध्यक्षं लक्ष्मीनाथं त क्षीराब्धौ तिष्ठन्त
यो हस्तीन्द्रं भक्त ग्राहग्रस्त मत्वा हित्वाप्त सर्वं स्त्रीवर्गं भासन्तम् ।
प्रास्य सौपर्णे पृष्ठेऽप्यास्तीर्णेऽपि प्राप्तस्त्वन्री वेगादेवोच्चै क्रीडत्
व्यापाद्याम् नक्र² मध्ये वक्त्र सद्यस्त वन्तीन्द्र सदारा मुक्त कुर्वन् ॥१५९॥

इति दिव्यानन्द २४४

२४५ [१] अथ सुन्दरिका

करयुक्तसुपुष्पद्वयजनिता ताटङ्कमनोहरहारधरा
द्विजकर्णविराजत्पदयुगला गण्डेन सुमण्डितकुण्डलका ।
यदि सप्तविभिस्ता यरविरति सर्वैरपि वेदमितैर्विहिता,
किल सुन्दरिका सा फणिभणिता नेत्राग्निकला कविराजहिता ॥१६०॥

यथा–

सखि ! पङ्कजनेत्र मुरहरण बिभ्र कमनीयकलाललितं
वरमौक्तिकहार सुखकरण रम्य रमणीवसये वसितम् ।
तरुणीजनचित्त वरतरुण भव्य भवभीतिविनाशकर
घनकुञ्चितकेश मुनिशरण नित्य कलयेऽखिलदैत्यहरम् ॥ १६१ ॥

इति सुन्दरिका २४५[१]

२४५[२] अथ पद्मावतिका

सुन्दरिकैव हि बाले ! यदि मुनिरसवसुविरामिणी भवति ।
विज्ञापयति तज्ज्ञाः पद्मावतिकेति ममगवहनकमलाम् ॥ १६२ ॥

यथा–

सखि ! नन्दकुमारं तनुजितमारं कुण्डलमण्डितगण्डयुगं
हृतकंसनरेशं रचितसुवेशं कुञ्चितकेशमशेषमुगम् ।

---

१ क मौर्वे । २ क नर्कं ।

यमुनातटकुञ्जे सतिमिरपुञ्जे कारितरासविलासपर,
मुखनिर्जितचन्द्र विगलिततन्द्र चिन्तय चेतसि चित्तहरम् ।। ५६३ ।।

इति पद्मावतिका २४५[२]

२४६ अथ अद्रितनया

सहचरि ! चेन्नजौ भजगणौ भजौ च भवतस्ततो भलगुरू,
शिवविरतिस्तथैव विरति प्रभाकरभवा भवेच्च नियता[1] ।
प्रतिपदमत्र वह्निनयनाक्षरैर्गणय पादमिन्दुवदने !,
जगति जया प्रकाशितनया जनै किल विभाविताऽद्रितनया ।। ५६४ ।।

प्रकारान्तरेणापि लक्षण यथा—

सुदति ! विधेहि न तदनु ज ततोऽपि भगण ततश्च जगण,
तदनु च देहि भ तदनु ज ततोऽपि भगण ततो लघुगुरू ।
कुरु विरति शिवे दिनकरे यति सुरुचिरा विभावितनया,
दहनविलोचनाक्षरपदा विधेहि सुभगे[2] ! मुदाऽद्रितनयाम् ।। ५६५ ।।

यथा–

नयनमनोरम विकसित पलाशकुसुम विलोक्य सरस,
विकचसरोरुहा च सरसी विभाव्य सुभृश मनोऽतिविरसम् ।
गगनतल च चन्द्रकिरणै कर्णैरिव[3] विभावसोस्सुपिहित,
सहचरि ! जीवन न कलये विना सहचर विधेहि विहितम् ।। ५६६ ।।

यथा वा–

'विलुलितपुष्परेणुकपिशप्रशान्तकलिकापलाशकुसुमम् ।।' इत्यादि भट्टिकाव्ये[1]*

इति अद्रितनया २४६

अश्वललितमिदमन्यत्र[2]*, तथाहि—

---

१ ख नियमा। २ ख सुभग। ३. ख करर्णैरिव।

*टिप्पणी—१ 'विलुलितपुष्परेणुकपिश प्रशान्तकलिका-पलाशकुसुम,
कुसुमनिपातविचित्रवसुधं सशब्दनिपतद् द्रुमोत्कशकुनम् ।
शकुननिनादनादिककुब्विलोलविपलायमानहरिण,
हरिणविलोचनाधिवसति बभञ्ज पवनात्मजो रिपुवनम् ।।
[भट्टिकाव्य, स० ८, प १३१]

२ वृत्तरत्नाकर—नारायणीटीका अ० ३, का० १०६ ।

अथ त्रयोविंशाक्षरम्

तत्र पूर्वम्—

२४४ दिव्यानन्द

कुन्तीपुत्रा यस्मिन् वृत्ते दिकसंख्याता सैका शोभन्ते प्रान्ते चैको हारः
रौद्रैर्नेत्रैर्यस्मिन् सर्वैर्वर्णैर्वा सोऽयं दिव्यानन्दश्छन्दोग्रन्थे सारः ।
विश्रामः स्यात् पञ्चभिः कर्णैर्यस्मिंस्तद्वत् सार्द्धैः पाद्यैः पूर्वैर्वा स्यात्तस्यान्ते
बाले ! लीलालोले [कामक्रीडासक्त] पूर्वोक्तं दिव्यं वृत्तं धेहि स्वान्ते ॥१५८॥

यथा–

वन्दे देवं सर्वाधारं विश्वाध्यक्षं लक्ष्मीनाथं तं क्षीराब्धौ तिष्ठन्तं
यो हस्तीन्द्रं भक्तं ग्राहग्रस्तं मत्वा हित्वाप्तं सर्वं स्त्रीवर्गं भासन्तम् ।
प्रास्कन्दः सौपर्णे पृष्ठेऽप्यास्तीर्णेऽपि प्राप्तश्चक्री वेगादेवोच्चैः क्रीडन्
व्यापाद्याथ नक्रं[१] मध्ये वक्त्रं सद्यस्तं दन्तीन्द्रं सत्वारा मुक्तं कुर्वन् ॥१५९॥

इति दिव्यानन्द २४४

२४५ [१] अथ सुन्दरिका

करयुक्तसुपुष्पद्वयसहिता ताटङ्कमनोहरहारधरा
द्विजकर्णविराजत्पदयुगला गन्धेन सुमण्डितकुण्डलका ।
यदि सप्तविभिस्सा सरविरतिः शर्वैरपि चेद्विहृतिर्विहिता
किल सुन्दरिका सा फणिभणिता नेत्राग्निकला कविराजहिता ॥१६०॥

यथा–

सखि ! पङ्कजनेत्रं मुरहरणं विभ्रं कमनीयकलाललितं
वरमौक्तिकहारं सुखकरणं रम्यं रमणीवलये वलितम् ।
तरणीजतटस्थितं वरतरुणं भव्यं भवभीतिविनाशकरं
घनकुञ्चितकेशं मुनिशरणं नित्यं कलयेऽखिलमर्त्यहरम् ॥ १६० ॥

इति सुन्दरिका २४५[१]

२४५[२] अथ पद्मावतिका

सुन्दरिकैव हि बाले ! यदि मुनिरसदशविरामिणी भवति ।
विज्ञापयन्ति तज्ज्ञाः पद्मावतिकेति मदनदहनकमलाम् ॥ १६२ ॥

यथा–

सखि ! नन्दकुमारं हतजितमारं कुण्डलमण्डितगण्डयुगं
हतकंसनरेशं रचितसुवेशं कुञ्चितकेशमशेषसुगम् ।

---

१ ख मैथे। १ ख नर्म।

यमुनातटकुञ्जे सतिमिरपुञ्जे कारितरासविलासपरं,
मुखनिर्जितचन्द्रं विगलिततन्द्रं चिन्तय चेतसि चित्तहरम् ।। ५६३ ।।

इति पद्मावतिका २४५[२]

२४६ अथ अद्रितनया

सहचरि ! चेन्नजौ भजगणौ भजौ च भवतस्ततो भलगुरू,
शिवविरतिस्तथैव विरतिः प्रभाकरभवा भवेच्च नियता[1] ।
प्रतिपदमत्र वह्निनयनाक्षरैर्गणय पादमिन्दुवदने !,
जगति जया प्रकाशितनया जनैः किल विभाविताऽद्रितनया ।। ५६४ ।।

प्रकारान्तरेणापि लक्षणं यथा—

सुदति ! विधेहि न तदनु जं ततोऽपि भगणं ततश्च जगणं,
तदनु च देहि भं तदनु जं ततोऽपि भगणं ततो लघुगुरू ।
कुरु विरतिं शिवे दिनकरे यतिं सुरुचिरां विभावितनया,
दहनविलोचनाक्षरपदां विधेहि सुभगे[2] ! मुदाऽद्रितनयाम् ।। ५६५ ।।

यथा–

नयनमनोरमं विकसितं पलाशकुसुमं विलोक्य सरसं,
विकचसरोरुहा च सरसी विभाव्य सुभृशं मनोऽतिविरसम् ।
गगनतलं च चन्द्रकिरणैः कणैरिव[3] विभावसोस्सुपिहितं,
सहचरि ! जीवनं न कलये विना सहचरं विधेहि विहितम् ।। ५६६ ।।

यथा वा–

'विलुलितपुष्परेणुकपिशप्रशान्तकलिकापलाशकुसुमम् ।।' इत्यादि भट्टिकाव्ये[1]*

इति अद्रितनया २४६

अश्वललितमिदमन्यत्र[2]*, तथाहि—

---

१ ख नियमा । २ ख सुभग । ३ ख करणैरिव ।

*टिप्पणी—१ 'विलुलितपुष्परेणुकपिश प्रशान्तकलिका-पलाशकुसुम,
कुसुमनिपातविचित्रवसुधं सशब्दनिपतद् द्रुमोत्कशकुनम् ।
शकुननिनादनादिककुब्विलोलविपलायमानहरिणं,
हरिणविलोचनाधिवसतिं बभञ्ज पवनात्मजो रिपुवनम् ।।
[भट्टिकाव्य, स० ८, प १३१]

२ वृत्तरत्नाकर—नारायणीटीका अ० ३, का० १०६ ।

पवनविघूतवीचिचपलं विलोकयति जीवितं तनुभृतां,
न पुनरहीयमानमनिशं जरावनितया वशीकृतमिदम् ।
सपदि निपीडनव्यतिकरं यमादिव नराधिपाध्यरपशु
परवनितामवेक्ष्य कुरुते तथापि हतबुद्धिरक्षललितम् ॥ ५६७ ॥

इति प्रत्युदाहरणम्[1] ।

"अत्रापि गणयतिवर्णविन्यासस्तु पूर्ववदेव, नाममात्रे भेदः फलतो न कश्चिद् विशेषः ।"

२४७ अथ मालती

अत्रैव सप्तमगणानन्तरं गुरुद्वयदानेन मालतीवृत्तं भवति । लक्षणं च यथा-

इयमेव सप्तमगणादनन्तरं भवति मालतीवृत्तम् ।
यदि गुरुयुगलोपहिता पिङ्गलनागस्तदाख्याति ॥ ५६८ ॥

यथ –

चन्द्रकचारुचमत्कृतिचञ्चच्चमौलिविजृम्भितचन्द्रकिशोरं
वन्यनवीनविभूषणभूषितनन्दसुतं वनिताधरलोभम् ।
धेनुकदानवदारणदक्षदयानिधि-दुर्गमवेदरहस्य
नौमि हरिं वितिजावलिमालितभूमिभरापनुद[3] सुयशस्यम् ॥ ५६९ ॥

इति मालती २४७

इयमेव अस्माभिः पूर्वखण्डे मालती सवया इत्युक्ता । [सा तत एवावलोकनीया किञ्च—

२४८ अथ मल्लिका

सप्तजगणादनन्तरमपि चेत्लघुगुरुनिवेशनं भवति ।
भाष्यति पिङ्गलनागः सुकविस्तन्मल्लिकावृत्तम् ॥ ५७० ॥

यथा–

घूर्णति मनो मम चम्पककाननकल्पितकेलिरयं पवनं
कथामपि नैव करोमि तथापि वृथा कदनं कुरुते मदनः ।
कलानिधिरेष वसावधि मुञ्चति वह्निकलापमलीकहिमं
विभेहि तथा मतिमेति यथा सखि येन पथा व्रजभूमहिमं[5] ॥ ५७१ ॥

इति मल्लिका २४८

---

१ ख उदाहरणम् । २–२ चिह्नगतोऽयमंशो नास्ति क प्रतौ । ३ ख भरापनुदे । ४ ख हिता । ५ ख व्रजभूमहितः ।

इयमेवास्माभि पूर्वखण्डे मल्लिका सवया इत्युक्ता। सा तत एवावधारणीया।

२४६. अथ मत्ताक्रीडम्

यस्मिन्नष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च मनुमित लघुमिह रचयेत्[1],
पादप्रान्ते चैकं हार विकचकमलमुखि ! विरचय नियतम्।
मत्ताक्रीड वृत्त बाले ! वसुतिथियतिकृतरतिसुखनिवह,
कुन्तीपुत्र वेदैरुक्त निगमनगणमपि विरचय सगणम् ॥ ५७२ ॥

यथा–

नव्ये कालिन्दीये कुञ्जे सुरभिसमयमधुमधुरसुखरस,
रासोल्लासक्रीडारङ्गे युवतिसुभगभुजरचितवरवशम्[2]।
सान्द्रानन्द[3] मेघश्याम मुरलिमधुर[4]रवविमुषितहृरिण,
वृन्दारण्ये दीव्यत्पुण्ये स्मरत परममिह हरिमनवरतम् ॥ ५७३ ॥

इति मत्ताक्रीडम् २४६

२५० अथ कनकवलयम्

सुतनु ! सुदति ! मुनिमितमिह सुनगणमिति ह विरचय,
तदनु विकचकमलमुखि ! सखि ! खलु लघुयुगमुपनय।
दहननयनमितलघुमिह पदगतमपि परिकलय,
कनकवलयमिति कथयति भुजगपतिरिति तदवय[5] ॥ ५७४ ॥

यथा–

कनकवलयरचितमुकुट ! *विधृतलकुट ! निकटवल !,
शमितशकट ! कनकसुपट ! दलितदितिजसुभटदल !।
कमलनयन* ! विजितमदन ! युवतिवलयरचितलय !,
तरलवसन ! विहितभजन ! धरणिधरण ! जय ! विजय ! ॥ ५७५ ॥

इति कनकवलयम् २५०

[1] अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोविंशत्यक्षरस्य त्र्यशीतिलक्षाणि अष्टाशीतिसहस्राणि अष्टोत्तराणि षट्शतानि च ८३८८६०८ भेदा भवन्ति, तेषु अष्टौ भेदा प्रोक्ता, शेषभेदा प्रस्तार्य गणयतिवर्णनामसहितास्समुदाहरणीया इति दिगुपदिश्यते[*]।

इति त्रयोविंशाक्षरम्।

---

१ ख रचये। २ ख परवशम्। ३ क सान्द्रानन्द। ४ ख ललितमधुर। ५ ख च तदवय। ६ पदितत्रय नास्ति क प्रतौ। *–*चिह्नगतोऽयं पाठ क प्रतौ नास्ति।

*टिप्पणी—१ त्रयोविंशत्यक्षरवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेषु लब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्याः।

अथ चतुर्विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्– २२१ रामानन्द

आदित्यैः सस्याता यस्मिन् वृत्ते दिव्ये श्रीनागाख्याते षोमन्तेऽप्यन्त कर्णा
पश्चमि कर्णेहि स्व प्राप्तयदिश्राम स्याद् सत्तरवसाक्ष्ये स्यातास्तद्वत्वर्णा
कामक्रीडाकूतस्फीतं प्राप्तानन्दे मध्याकारे चन्द्रागम्ये नम्ये कान्ते !
वेदर्नैर्यस्मिन् पादे हारा सपरकन्वं रामानन्द वृत्त धेहि स्वान्ते ॥ ५७६ ॥

यथा–

रासोल्लासे गोपस्त्रीभिर्वृन्दारण्ये कालिन्दीय कुञ्जे कुञ्जे गुञ्जद्भृङ्गे
दिव्यामोदे पुष्पाकीर्णे धृत्वा वंशी मन्द मन्द दिव्यैस्तानैः सङ्गायन्तम् ।
कामक्रीडाकूतस्फीत तासामङ्गेऽनङ्ग साङ्ग कुर्वन्तं त काम काम्य
सर्वानन्दं तेजोरूपं विश्वाध्यक्ष वन्दे देवं सासर्व प्रातःसायान्तम् ॥५७७॥

इति रामानन्द २२१

२२२ अथ दुर्मिलका

विनिधाय करं सखि ! पाणितल कुरु रत्नमनोहरबाहुयुगं
सगणं च ततः कुरु पाणितल सखि ! रत्नविराजितपादयुगम् ।
यदि भोगरसैरपि पक्तिविराजित-तत्त्वविभासितवर्णधरा
भवतीह तदा किल दुर्मिलका सखि ! नेत्रविभावसुभासिकला ॥५७८॥

यथा–

गिरिराजसुताकमनीयसमङ्गविभङ्गकर नृकपालधरं
परिभूतमजाजिनवाससमुग्रमृत्युकरं शशिखण्डधरम् ।
परमानन्दभूषित-दीनदयालमवभ्रमबोधतनीभगम
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेषकलाभिनिभासितलम् ॥ ५७९ ॥

यथा वा गूढपदे[१] –

कति सन्ति न गोपकुले वनिता स्मरतापहतास्च विहाय च ता
रतिकेलिकलारसलालसमानसमायतमुज्झितमानरसम् ।
वनमालिनमालि ममस्य नमस्य नमस्य मुधस्य चिरस्य वृथा
भणिता परितापवती भवती युवतो यमसस्वि हासकथा ॥ ५८० ॥

इति दुर्मिलका २२२

टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वि॰ प॰ प॰ ११४

२५३ अथ किरीटम्

पादयुग कुरु नूपुरराजितमत्र कर वररत्नमनोहर-
वज्रयुग कुसुमद्वयसङ्गतकुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानसकल्पितमज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपन्नगराजनिवेदितवृत्तकिरीटमिद परिभावय ॥ ५८१ ॥

यथा–

मल्लिलते मलिनासि किमित्यलिना रहिता भवती वत यद्यपि,
सा पुनरेति शरद्रजनी तव या तनुते धवलानि जगन्त्यपि ।
षट्पदकोटिविघट्टितकुण्डल[१]कोटिविनिर्गतसौरभसम्पदि,
न त्वयि कोऽपि वियास्यति सादरमन्तरमुत्तरनागरससदि ॥ ५८२ ॥

इति किरीटम् २५३

२५४ अथ तन्वी

कारय भ त सुचरितभरिते न कुरु स सखि ! सुमहितवृत्ते,
धेहि भयुग्म नगणसुसहित कारय सुन्दरि ! यगणमिहान्ते ।
भूतमुनीनैर्यतिरिह कथिता द्वादशभिश्च सुकविजनवित्ता,
तत्त्वविरामा भुजगविरचिता राजति चेतसि परमिति तन्वी ॥ ५८३ ॥

यथा–

मा कुरु मान कुरु मम वचन कुञ्जगत भज सहचरि ! कृष्ण,
कारितरास वलयितवनित गोपवधूजनयुवतिसतृष्णम् ।
कोकिलरावैर्मधुकरविरुतै[२] स्फोटितकर्णयुगलपरिखिन्ना,
दाहमुपेता मलयजसलिलैस्सम्प्रतिदेहजशरभरभिन्ना ॥ ५८४ ॥

यथा वा, छन्दोवृत्तौ[१]*द्वादशाक्षरविरति —

चन्द्रमुखी सुन्दरघनजघना कुन्दसमानशिखरदशनाग्रा,
निष्कलवीणा श्रुतिसुखवचना त्रस्तकुरङ्गतरलनयनान्ता ।
निर्मुखपीनोन्नतकुचकलशा मत्तगजेन्द्रललितगतिभावा,
निर्भरलीला निधुवनविषये मुञ्जनरेन्द्र ! भवतु तव तन्वी ॥ ५८५ ॥
इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति तन्वी २५४

---

१ ख कुड्मल । २ क मधुकरविरति ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्र-हलायुधीयटीका अ० ७, कारिकाया २९ उदाहरणम् ।

२११ अथ माधवी

चत्वाक्षरकृतवृत्त यदि वसुभिर्नायकर्घटितम् ।
तरलक्षि ! पिङ्गलभणितं कथितं त्विह माधवीवृत्तम् ॥ ५८६ ॥

यथा–

विलोलविलोचनकोणविलोकितमोहितगोपवधूजनचित्त
मयूरकलापविकल्पितमौलिरपारकलानिधिवाससरित ।
करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसुन्दरकुन्दसुदन्त
सखीमिति कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्त ॥ ५८७ ॥

इति माधवी २११

इदमेवास्माभिः पूर्वखण्डे माधवी सवया इत्युक्ता ।

२१६ अथ तरलनयनम्

वसुमितनभुमिह सहचरि ! विकचकमलमुखि ! विरचय
तदनु भटय सखि ! रसवसुलघुमपि तरलनयन मिह ।
सकलचरणमिति वसुमितसुनगणमनु कुरु सुरमणि
फणिमणिरिह विमुरनुवदति सुरचिरमिति परिकलय ॥ ५८८ ॥

यथा–

कुसुमनिकरपरिकलितमधुरवनविहरणसुनिपुण
सरसयुवतिवलितकरिवरलरवरदलितवितिजगण ।
करधृतगिरिवर विलसितमणिगण मुनिमतमुरहर,
फणिपतिविगणितगुणगण जय जय जय सदवसपर ॥ ५८९ ॥

इति तरलनयनम् २१६

अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्विंशत्यक्षरस्य एककोटिः सप्तषष्टिलक्षाणि सप्त-सप्ततिसहस्राणि षोडशोत्तरं शतद्वयं च १६७७७२१६ भेदास्तेषु भेदषट्कमुक्त्वा इतं शेषभेदा प्रस्तार्य सुधीभिरुदाहरणीया इति दिक् ।

इति चतुर्विंशत्यक्षरम् ।

अथ पञ्चविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

२१७ क्रामानन्दः

यस्मिन् वृत्ते सावित्रा कौन्तेया कान्ता मत्तादप्रान्ते कान्ते ! चैको मुक्ताहारः
विश्राम स्यात् पञ्चभिः कर्णैर्मध्याकारे, सार्धैस्तैरेव स्यात् सोऽयं वृत्तानां सारः ।

---

१ पंक्तित्रयं नास्ति क प्रतौ

*टिप्पणी–१ चतुर्विंशत्यक्षरवृत्तस्य तस्यभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीयाः ।

तत्त्वैरात्मा यस्मिन् वृत्ते वर्णै स्याता [१] छन्दोविद्भि सद्भि ससेव्य सर्वानन्द',
सोऽय नागाधीशेनोक्तो वृत्ताध्यक्ष ससाध्य पुम्भिश्चित्ते काम कामानन्दः।५६०।

यथा–

वन्यै पीतै पुष्पैर्माला सङ्ग्रथ्नत[२] श्रीमद्वृन्दारण्ये गोपीवृन्दे[३] खेलन्तं,
मायूरै पत्रैर्दिव्य छत्र कुर्वन्त वृक्षाणा शाखा धृत्वा हिन्दोले दोलन्तम् ।
वशीमोष्ठप्रान्ते कृत्वा सगायन्त तासा तन्नाम्नान्युक्त्वा गोपीराह्वायन्त,
दक्ष पाद वामे कृत्वा सतिष्ठन्त कात्पेवार्क्षे[४] मूले वन्दे कृष्ण[५]भासन्तम्॥५६१॥

इति कामानन्द' २५७

२५८ अथ क्रौञ्चपदा

कारय भ म धारय स भ निगमनगणमिह विरचय रुचिर,
सञ्चितहारा पञ्चविरामा शरवसुमुनियुतमुरचितविरति ।
क्रौञ्चपदा स्यात् काञ्चनवर्णे गतिवशसुविजितमदगजगमने,
तत्त्वविभेदैर्वर्णविरामा बहुविधगतिरपि भवति च गणने ॥ ५६२ ॥

यथा

या तरलाक्षी कुञ्चितकेशी मदकलकरिवरगमनविलसिता,
फुल्लसरोजश्रेणिकटाक्षा मधुमदमुमुदितसरभसगमना ।
स्थूलनितम्बा पीनकुचाढ्या बहुविधसुखयुतसुरतसुनिपुणा,
सा परिणेया सौख्यकरा स्त्री बहुविधनिधुवनसुखमभिलषता ॥ ५६३ ॥

यथा वा, हलायुधे[१]*

या कपिलाक्षी पिङ्गलकेशी कलिरुचिरनुदिनमनुनयकठिना,
दीर्घतराभि स्थूलशिराभि परिवृतवपुरतिशयकुटिलगति ।
आयतजङ्घा निम्नकपोला लघुतरकुचयुगपरिचितहृदया,
सा परिहार्या क्रौञ्चपदा स्त्री ध्रुवमिह निरवधिसुखमभिलषता ॥ ५६४ ॥
इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति क्रौञ्चपदा २५८

२५९ अथ मल्ली

सगणाष्टकगुरुघटिता शरपक्षकवर्णविलसिता या स्यात् ।
तामिह पिङ्गलनाग कथयति मल्लीमिति स्फुटत ॥ ५६५ ॥

---

१ ख स्यात । २ क सङ्ग्रीथ्नन्त । ३ ख गोपीवृन्दै । ४ ख त तिष्ठन्त तत्कावम्बे । ५ क कृष्णे ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्र-हलायुधीयटीकायां अ० ७, कारिकाया ३० उदाहरणम् ।

यथा–

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर गलमस्तकमाल
परिभूतगजाजिनवाससमुद्यतनृत्यकर विगृहीतकपालम् ।
गरलाशनभूषित-दीनदयासमदभ्रमदोद्धतदानवकाल
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेषकलाभिविलासितभालम् ॥ २१६ ॥

इति मल्ली २४

इयमेव मालावृत्ते मल्लीसवया इत्युक्ता ।

२५ अथ मणिगणम्

सुतनु ! सुदति ! वसुमितमगणमिह विधुमुखि ! सुविरचय
तदनु विकचकमलसदृशमुखि ! सुरभिकुसुममपि कलय ।
गतिवशविदलितमदकलकरिवरगमन इह सुरमणि
मणिगणमिति फणिपतिरपि कथयति विमलमतिरतिरणि[1] ॥ २१७ ॥

यथा–

निगमविदित सततमुदित परमपुरुषसुकृतसुललित
सकलमनुजकलुषदहन सरसयुवतिवसनविधमित ।
विकटगहनदहनकदन पिहितनयन मिलितसचिवस !
कलितधनिविषविधुसुखचय जय जय वलितदितिजवल ॥ २१८ ॥

इति मणिगणम् २५

अथापि प्रस्तारगत्या पञ्चविंशत्यक्षरस्य कोटित्रय पञ्चत्रिंशल्लक्षाणि चतुःपञ्चाशत्सहस्राणि द्वात्रिंशदुत्तराणि चतुःशतानि च ३३५५४४३२ भेदास्तेषु दिगुपदर्शनार्थं भेदचतुष्टयमुक्तं वृत्तान्तराणि च प्रस्तार्य सुधीभिरूह्यानीति शिवम्* ।

इति पञ्चविंशत्यक्षरम् ।

अथ षड्विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमं सर्वगुरुम्–

२६१ गोविन्दानन्दम्

यस्मिन् वृत्ते दिक्संख्याता कर्णा यामे सप्रभा सोमस्तोऽप्यन्ते वामेन्यस्ताकारा
विश्रामाः स्यात् षड्भिः कर्णैः पश्चादन्ते कुन्तीपुत्रैर्नागैस्तेषां लोके व्याख्याता हारा ।
सर्वेषां नागानामीशेनाथ प्रोक्तः सर्वान्यः प्रस्तारः षड्विंशत्याहारैस्तारै
सोऽयं श्रीगोविन्दानन्दच्छन्दस्सारः सर्वाधारः कार्यैर्विद्यैः पारैश्छन्दस्कारैः ॥ २१९ ॥

---

१ क विमलमतिरतिरमणि । २ ख गुरुलित । ३ पङ्क्ति चतुष्टयं नास्ति क [illegible] ।

*टिप्पणी—१ पञ्चविंशाक्षरप्रस्तारस्योपलब्धवृत्तभेदा पञ्चमपरिशिष्टे मोगमीया ।

यथा–

श्रीगोविन्द सर्वानन्दश्चित्ते ध्येयः वित्त मित्र स्वाराज्य स्त्रीवर्ग सर्वो हेय,
वृन्दारण्ये गुञ्जद्भृङ्गे पुष्पै कीर्णे श्रीलक्ष्मीनाथ श्रीगोपीकान्तः शश्वद्गेय।
द्वारे द्वारे व्यर्थं संसारे रे रे रे भ्राम भ्राम काम किं कुर्यास्त्वं क्षाम चेत,
मायाजाल सर्वं चैतत् पश्यच्छ्,न्वन्भ्राम्यन्नानायोनी पूर्वं खिन्नोऽसि त्वं भ्रात
॥ ६०० ॥

इति श्रीगोविन्दानन्द २६१

२६२ अथ भुजङ्गविजृम्भितम्

आदौ यस्मिन् वृत्ते काले[1] मगणयुग-तननगणा रसौ च लगौ ततो-[2]
वस्वीशाश्वच्छेदोपेत चपलतरहरिणनयने विधेहि सुखेन वै।
पादप्रान्त यस्मिन् वृत्ते रसनरनयनविलसित मनोहरण प्रिये!,
नागाधीशेनोक्त प्रोक्त[3] विबुधहृदयसुखजनक भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०१ ॥

यथा–

ध्यानैकाग्रालम्बादृष्टिष्कमलमुखि! लुलितमलकैं करे स्थितमाननं,
चिन्तासक्ता शून्या बुद्धिस्त्वरितगतिपतितरशनातनुस्तनुता गता।
पाण्डुच्छायक्षाम वक्त्र मदजनति रहसि सरसा[4] करोषि न सकथा,
को नामाय रम्यो व्याधिस्तव सुमुखि! कथय किमिद न खल्वसि नातुरा[5]
॥ ६०२ ॥

यथा वा, हलायुधे[*]—

यैं सन्नद्धानेकानीकैर्नरतुरगकरिपरिवृतैं सम तव शात्रव,
युद्धश्रद्धालुब्धात्मान[6]स्त्वदभिमुखमथ गतमिथ पतन्ति धृतायुधा।
तेऽद्य त्वा दृष्ट्वा सग्रामे तुडिगनृपकृपणमनस पतन्ति दिगन्तर,
किं वा सोढुं शक्य तैस्तैर्बहुभिरपि सविषविषम भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०३ ॥

इति प्रत्युदाहरणम्।

इति भुजङ्गविजृम्भितम् २६२

२६३ अथ अपवाह

आदौ म तदनु च कुरु सहचरि! रसपरिमितमिह नगण गण्य,
हस्त सविरचय सखि! विकचकमलमुखि! तदनु च रुचिर कर्णम्।
विश्राम. सुतनु! सुदति! नवरसरसशरपरिमित इह बोभूयात्,
नागो जल्पति फणिपतिरतिशयमिति रतिकृतिधृतिरपवाह स्यात्। ॥ ६०४ ॥

---

१ ख. बाले। २ ख तनो। ३ ख वृत्तं। ४ ख सारसा। ५ ख चातुरा। ६ ख लब्धात्मान।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्रहलायुधटीकाया अ० ७, कारिकाया ३१ उदाहरणम्।

यथा–

श्रीकृष्णं भवभयहरमभिमतफलकरणनिपुणतरमाराध्य
मकमीर्शं दमितदितिजमवजितपरमवनतमुनिवरससाध्यम् ।
सवशं गरुडगमनमहिपतिकृतरुचिरशयनमभयं नव्यं
तं वन्दे कनकवसमतनुरुचिविजितजलदपटममभितं विभ्यम् ॥ १ ५ ॥

यथा वा हनुमायुधे[१]–

श्रीकण्ठं त्रिपुरदहनममृतकिरणधकलकमितशिरसं रुद्रं
भूतेशं हृतमुनिभयमखिलभुवनमितचरणयुगमीशानम् ।
सर्वज्ञं वृषभगमनमहिपतिकृतवलयरुचिरकरमाराध्यं
तं वन्दे भवभयनुदमभिमतफलवितरणगुरुमुमया युक्तम् ॥ १०६ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति मायावकः २६३

२६४ अथ मागधी

अत्रव वसुभगणानन्तरं गुरुद्वयधामेन मागधीवृत्तं भवति । तल्लक्षणं यथा —

भगणाष्टकगुरुयुगला रसयुगवर्णा रसाग्निरासिकला ।
पन्नगपिङ्गलमपिता विज्ञ मा मागधी सुप्रिया ॥ १०७ ॥

यथा –

माधव विधुबिम्बं गगने तव सदनुते मवकाञ्चनरञ्जितवस्त्र
नीरदवृत्तमिद गगनेऽपि च भावयति प्रसभं तव देहमहास्त्रम् ।
इन्द्रशरासनमाशमिद तव यशसि भावयत[१] वनमासतिमासा
मानय मे वचन कुरु सम्प्रति सुन्दर चेतसि भावयतामिह वासाम् ॥१०८॥

इति मागधी २६४

इयमेव च द्वात्रिंशत्कलका मागधी सवया इत्युक्ता पूर्वखण्डे । अत्र तु गुरुद्वयमधिकमिति षट्त्रिंशत्कलति ततो भेदः । वर्णप्रस्तारत्वाच्च षड्विंशत्य इतरमियम् । *अतएव च जातिवृत्तसाङ्कर्येण छन्दःसन्दर्भवैचित्रीमावहतीति सर्वत्र रम्यत्वं भावसीति सन्द शास्त्रेषु ।*

---

१ ख वंशनुते । * चिह्नान्तर्गतोऽयं पाठः क प्रतौ नास्ति ।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहनुमायुधीनायां च ७ कारिकायां १२ उदाहरणम् ।

अथान्त्य सर्वलघु—

२६५ अथ कमलदलम्

सहचरि ! विकचकमलमुखि ! वसुमितसुनगणमिह विरचय,
तदनु सकलपदविशदसुरभिकुसुमयुगमपि परिकलय ।
रसयुगपरिमितपदगतलघुमनुकलय कमलदलमिति,
तदिह मनसि कुरु सुरुचिरगुणवति ! कथयति फणिपतिरपि ॥ ६०९ ॥

यथा–

कलुषशमन ! गरुडगमन ! कनकवसन ! कुसुमहसन ! [जय,
ललितमुकुट ! दलितशकट ! कलितलकुट ! रचितकपट ! जय ।
कमलनयन !][1] जलधिशयन ! धरणिधरण ! मरणहरण ! जय,
सदयहृदय ! पठितसुनय ! विदितविनय ! रचितसमय ! जय ॥ ६१० ॥

इति कमलदलम् २६५.

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या रसलोचनवर्णस्य कोटिषट्कं एकसप्ततिलक्षाणि वसुसहस्राणि चतुष्षष्ट्युत्तराणि अष्टौ शतानि च भेदाः ६७१०८८६४ तेषु भेदपञ्चकमभिहित, शेषभेदा प्रस्तार्य गुरूपदेशत स्वेच्छया नामानि आरचय्य सूचनीया इति सर्वमवदातमिति ।[2]*

इति षड्विंशत्यक्षरम् ।

उक्तग्रन्थमुपसंहरति[3]—

लक्ष्यलक्षणसयुक्त मया छन्दोऽत्र कीर्तितम् ।
प्रत्युदाहरणत्वेन क्वचित् प्राचामुदाहृतम् ॥ ६११ ॥
सुजातिप्रतिभायुक्त सालङ्कार स्फुरद्गुणम् ।
कुर्वन्तु सुधिय कण्ठे वृत्तमौक्तिकमुत्तमम् ॥ ६१२ ॥
सर्वगुर्वादिलघ्वन्तप्रस्तारस्त्वतिदुष्कर ।
इति विज्ञाय वाद्यन्तभेदकल्पनमीरितम् ॥ ६१३ ॥
पञ्चषष्ट्यधिक नेत्रशतक समुदीरितम् ।
त्यक्त्वा लक्षणमित्राणि[4] वर्णवृत्तमिति स्फुटम् ॥ ६१४ ॥
यथामति यथाप्रज्ञमवधार्य मनीषिभि ।
शोधनीय प्रयत्नेन बद्ध सन्त्रोऽयमञ्जलि ॥ ६१५ ॥

---

१ [-] कोष्ठगतोंऽश क प्रतौ नास्ति ।
२ पक्तिचतुष्टयं नास्ति क प्रतौ । ३ ख नास्ति पाठ । ४ ख वृत्तानि ।
*टिप्पणी—१ सम्यक्शेषभेदा. पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्या ।

अथ चैकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिप्रस्तारपिण्डसंख्या—

रसलोचनसप्ताश्वचन्द्रदृग्वेदवह्निभिः ।
आत्मना योजितर्वामगत्या ज्ञेया मनीषिभिः ॥ ६१६ ॥

इत्यस्मत्पितृचरणप्रदीपित पिङ्गलप्रदीपमाख्य'* निर्दिष्टदिशा 'त्रयोदश
टयो द्विचत्वारिंशल्लक्षाणि सप्तदशसहस्राणि षड्विंशत्युत्तराणि सप्तशतानि
१३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारस्य ।

षड्विंशतिः सप्तशतानि चैव तथा सहस्राण्यपि सप्तपंक्तिः ।
लक्षाणि दृग्वेदसुसम्मितानि कोटयस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥६१७॥

इति मदुपदिष्टपूर्वसम्पोक्तपिण्डसंख्या च सिंहावलोकनशालिभिरनुसन्धा
ध्या इति सर्वमनवद्यम् ।

इति श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कविशेखरचन्द्रशेखरभट्टविरचिते
श्रीवृत्तमौक्तिके एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षर
प्रस्तारसंख्यात्मभेदसहितवृत्तनिरूपणं
प्रकरणं प्रथमम् ।

१ न वृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्तिके एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरप्रस्तारे ।

टिप्पणी—१ लक्ष्मीनाथस्य इयमं प्राकृतपैङ्गलवृत्तौ १११ पद्यस्य टीकायाम् ।

द्वितीयं प्रकीर्णक-प्रकरणम्

अथ प्रस्तारोत्तीर्णानि कतिचिद् वृत्तानि वर्णनियमरहितान्यभिधीयन्ते । तत्र प्राचीनाना सग्रहकारिका—

१–४ अथ भुजङ्गविजृम्भितस्य चत्वारो भेदाः

वेदैः पिपीडिका स्यान्नवभि करभश्चतुर्दशभि ।
पणवमिद तु शरैश्चेन्माला इह मध्यगैर्लघुभिरधिकैः ।। १ ।।

इति भुजङ्गविजृम्भितभेदनिरूपणम् १–४*[1]

---

*टिप्पणी—१ ग्रन्थकारेण द्वितीयखण्डस्य द्वादशप्रकरणे विज्ञापितमिद यदस्य द्वितीयखण्डस्य द्वितीयप्रकरणे पिपीलिका-पिपीलिकाकरभ-पिपीलिकापणव-पिपीलिकामालाच्छन्दांसि लक्षणोदाहरणसहितानि निरूपितानि'। परमत्र चतुर्वृत्ताना लक्षणोदाहरणानि क्वचिदपि नैव दृश्यन्ते, केवल त्वत्र प्राचीनसग्रहकारिकैव समुपलभ्यते। कारिकाया पूर्वापरप्रसङ्गरहितत्वात् लक्षणान्यपि न प्रस्फुटीभवन्ति। अत कलिकालसर्वज्ञ-हेमचन्द्राचार्यप्रणीताच्छन्दोनुशासनादेषा चतुर्वृत्तानां लक्षणोदाहरणान्यध प्रस्तूयन्ते। वृत्तान्येतानि सन्ति षड्विंशत्यक्षरात्मक-भुजङ्गविजृम्भितस्यैव भेदरूपाणि।

"मातनौजभ्रा पिपीलिका जणं ।३८५।

[व्या०] मद्वय तगणो नगणचतुष्टय जभरा । जणैरिति अष्टभि पञ्चदशभिश्च यति । यथा–

निष्प्रत्यूह पुण्या लक्ष्मीमविरतमभिलषसि यदि रमयितु सुख च यदीच्छसि,
स्यात् न्यायोन्मीलद्बुद्धे लघुभिरपि सह बहुभिरिह कुरु मा विरोधपद तदा।
विस्फूर्जत्पूत्कार क्रीडाकवलितसकलमृगकुलमजगरं भुजङ्गममुन्मद,
सङ्घात कृत्वा पश्यैता ग्लपितवपुषमनवधिरचितरुजा अदन्ति पिपीलिका ।।३८५।।
एवं नौपरत पञ्च-दश-पञ्चदशलवृद्धाक्रमेण करभ ।।३५।। पणव ।।४०।।
माला ।।४५।।—।।३८६।।

[व्या०] एवैव पिपीलिका चतुर्भ्यो नगणेभ्य परत पञ्चभि, दशभि, पञ्चदशभिश्च लघुभिर्वृद्धा शेषगणेषु तथैव स्थितेषु क्रमेण करभादयो भवन्ति। तेऽत्र पञ्चभिर्वृद्धा-पिपीलिकाकरभ । यथा—

नित्य लक्ष्मच्छायाछद्म कलयतु कथमिव तव
वदनरुचिममृतरुचिरिचर क्षयसयुत,
तुल्य नाब्ज स्फूर्जद्धूलीविधुरितजननयन-
युगमतिमृदुकरचरणस्य निर्मलचारुण ।

द्विकलघुदशकस्यान्ते भगण-गयुग-सगण-गुरुयुगलम् ।
लघुयुगल गुरुयुगल यदि घटित स्यात् त्रिभङ्गिकावृत्तम् ॥ ३ ॥

यथा

स जयति हर इह वलयितविषधर तिलकितसुन्दरचन्द्र
परमानन्द सुखकन्द ।
वृषभगमन डमरुधरण नयनदहन जनितातनुभङ्ग
कृतरङ्ग सज्जनसङ्ग ।
जयति च हरिरिह करधृतगिरिवर विनिहतकसनरेश
परमेश कुञ्चितकेशः ।
गरुडगमन कलुषशमनचरणशरणजनमानसहस
सुवतस पालितवश. ॥ ४ ॥

इति द्वितीयत्रिभङ्गी ५.

६ अथ शालूरम्

कर्णद्विजवरगणमिह रसपरिमितमतिसुरुचिरमनुकलय कर,
शालूरममलमिति विकचकमलमुखि ! सखि ! सहचरि ! परिकलय वरम् ।
नेत्रानलकलमिदमतिशयसहृदय विशदहृदय सुखरसजनकम् ।
नागाधिपकथितमखिलविबुधजनमथितमगणितगुणगणकनकम् ॥ ५ ॥

यथा–

गोपीजनवलयित - मुनिगणसुमहितमुपचितदितिसुतमदहरणं,
व्यर्थीकृतजलधर-करधृतगिरिवर-गतभय-निजजनसुखकरणम् ।
वृन्दावनविहरण - परपदवितरण - विहितविविधरसरभसपर,
पीताम्बरधरमरुणचरणकरमनुसर सखि ! सरसिजनयनवरम् ॥ ६ ॥

इति शालूरम् ६.

इति प्रकीर्णक वृत्तमुक्त सद्वृत्तमौक्तिके ।
प्रस्तारगत्या वृत्तानि शेषाण्यूह्यानि पण्डितैः ॥ ७ ॥

इति प्रकीर्णक-प्रकरणं द्वितीयम् ।

तृतीयं दण्डक-प्रकरणम्

अथ दण्डकाः

तत्र यत्र पादे द्वौ नगणौ रगणाश्च सप्त भवन्ति स दण्डको नाम षड्-विंशत्यक्षरपादस्य वृत्तस्यानन्तरं 'दण्डको नौ र्' [॥७।३३॥]'* इति सूत्रकार-पाठात् सप्तविंशत्यक्षरत्वमेव युक्तं दण्डकस्य । प्रथमं तावदेकाक्षरप्रथमावृत्तिना-मेकैकाक्षरवृद्ध्या प्रस्तारप्रवृत्तिरतः ऊर्ध्वं पुनरेकैकरेफवृद्ध्या प्रस्तारः । तल्लक्षणं यथा—

१ अथ चण्डवृष्टिप्रपातः

नगणयुगलादनन्तरमपि यदि रगणा भवन्ति सप्तैव ।
दण्डक एष निगदितश्चण्डवृष्टिप्रपात इति ॥ १ ॥

यथा–

इह हि भवति दण्डकारण्यदेशे स्थितिः पुण्यभाजां मुनीनां मनोहारिणी
त्रिदशविजयिवीर्यदृप्यद्दशग्रीवलक्ष्मीविरामेण रामेण संसेविते ।
जनकजनभूमिसम्भूतसीमन्तिनीसीमसीतापदस्पर्शपूताश्रमे
भुवननमितविन्ध्यपर्वाभिधानाम्बिकातीर्थयात्रागतानेकसिद्धाकुले ॥ २ ॥

इति चण्डवृष्टिप्रपातः १

२ अथ प्रचितकः

'शेषः प्रचितकः' [७।३६] * इति सूत्रकारोक्तदिशा [चण्डवृष्टिप्रपातात्पूर्वं प्रभिन्नैकरेफस्थानेन प्रस्तारे कृते दण्डकः प्रचितक इति संज्ञां लभते । तदाह

यथा–

यदि ह न-द्वयानन्तरमपि रेफाः स्युर्वसुप्रमिताः ।
प्रचितक इति तत्संज्ञा कथिता श्रीनागराजेन ॥ ३ ॥

यथा–

प्रथमकथितदण्डकः] चण्डवृष्टिप्रपाताभिधानो मुने पिङ्गलाचार्यनाम्नो मतः
प्रचितक इतिततरे दण्डकानामियं जातिरेकैकरेफाभिवृद्ध्या यथेष्टं भवेत् ।
स्वरुचिरचितसंज्ञया तद्विशेषप्रभेदैः पुनः काव्यमन्येपि कुर्वन्तु वागीश्वराः
भवति यदि समानसंख्याक्षरैस्तत्र पादव्यवस्था ततो दण्डकः पूज्यतेऽसौ जनैः ॥ ४ ॥

इति प्रचितकः २

---

१ [–] कोष्ठकान्तर्गतोंऽशो नास्ति क प्रतौ । २ प्रचित इति ततः परं इति हलायुधे ।
*टिप्पणी—१ दण्डको नौ र् ।
२ एतच्चात्र हलायुधटीका ।

३ अथ अर्णादयः

पितृचरणैरिह कथिता प्रतिचरणविवृद्धिरेफा ये ।
दण्डकभेदा पिङ्गलदीपे[1]*ऽप्यर्णादयः स्फुटतः ॥ ५ ॥
तत एव हि ते विबुधैः विज्ञेया रेफवृद्धितः प्राज्ञैः ।
प्रस्तार्य ते विधेया इत्युपदेशः कृतोऽस्माभिः ॥ ६ ॥

अत्रापि समानसंख्याक्षर एव पादो भवतीति ध्येयम् । तत्रार्णो यथा—

जय जय जगदीश विष्णो हरे राम दामोदर श्रीनिवासाच्युतानन्त नारायण,
त्रिदशगणगुरो मुरारे [मुकुन्दासुरारे][1] हृषीकेश पीताम्बर श्रीपते माधव ।
गरुडगमन कृष्ण वैकुण्ठ गोविन्द विश्वम्भरोपेन्द्र चक्रायुधाधोक्षज श्रीनिधे,
बलिदमन नृसिंह शौरे भवाम्भोधिघोरार्णसि त्व निमज्जन्त[2]मभ्युद्धरोपेत्य माम् ७

इत्युदाहरणम्[3]

इत्यर्णादयो दण्डकाः ३.

४ अथ सर्वतोभद्र.

रसपरिमितलघुकान्ते यदि यगणा स्युर्मुनिप्रमिताः ।
दण्डक एष निगदितः पिङ्गलनागेन सर्वतोभद्र. ॥ ८ ॥

यथा–

जय जय यदुकुलाम्भोधिचन्द्र प्रभो वासुदेवाच्युतानन्तविष्णो मुरारे,
प्रबलदितिजकुलोद्दामदन्तावलस्तोमविद्रावणे केसरीन्द्रासुरारे ।
प्रणतजनपरितापोग्रदावानलच्छेदमेघौघनारायण श्रीनिवास,
चरणनख[ज]सुधांशुच्छटोन्मेषनि शेषिताशेषविश्वान्धकारप्रकाश ॥९॥

एतस्यैव अन्यत्र प्रचितक इति नामान्तरम् ।

इति सर्वतोभद्र ४.

---

१ [–] कोष्ठगतोऽशो नास्ति क प्रतौ । २ व्यस्तमज्जन्त । ३ क. इति प्रत्युदाहरणम् ।

*टिप्पणी–१. "अथार्णादय"–प्रतिचरणविवृद्धिरेफाः स्युरर्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दाम-शखादय ।

यदि नगणद्वयान्तरमेव प्रतिचरण विवृद्धिरेफा क्रमात् समधिकरगणास्तदा अर्ण-अर्णव-व्याल-जीमूत-लीलाकर-उद्दाम-शङ्खादयो दण्डका स्युरिति । एतेन नगणयुगल-वसुरेफेण अर्णः । तत परे क्रमाद् रगणवृद्धया ज्ञेया । आदि-शब्दादन्येऽपि रगणवृद्धया स्वबुद्धया नामसमेता दण्डका विधेया इत्युपदिश्यते । (प्राकृतपैंगलम् पृ० ५०८)

५ अथ अशोककुसुममञ्जरी

रगण-जगण क्रमेण हि रन्ध्रगणा यत्र सम्भवन्ता ।
पिङ्गलनागनिगदिता ज्ञेया साऽशोककुसुममञ्जरिका ॥ १० ॥

यथा–

राधिके विलोकयाद्य केलिकाननं पिकावलीविरावराजितं मनोरमं च
सुन्दराङ्गि चारुचम्पकप्रगावली विराजिते विलोलहारमण्डितेऽम्बरं च ।[1]
मद्वचः शृणुष्व ते हितं च वच्मि हे सखि प्रमोदकारणं मनोविनोदनं च
फुल्लनागकेसरादिपुष्परेणुभूषितं भजाम मन्दमन्दमं मनोहरं च ॥ ११ ॥

इति अशोककुसुममञ्जरी ५.

६ अथ कुसुमस्तबकः

सखि ! यत्र रन्ध्र-सगणा सुविपर्यटिता विराजन्ते ।
कुसुमस्तबकं दण्डकमाह तदा तं तु पिङ्गलो नागः ॥ १२ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसुतं कमनीयकलाकलितं करुणावरुणालयमीशहरिं
रजनीशमुखं भवभीतिहरं नवनीतकरं भवसागरपारतरिम् ।
चपलारुचिरांशुकचारुधरं कमलावलिमालितमालि तमालरुचिं
भवमोचन-पङ्कजलोचनरोचनरोचितमाममहं शरणं कलये ॥ १३ ॥

इति कुसुमस्तबकः ६.

७ अथ मत्तमातङ्गः

यत्र स्वेच्छया घटिता भवन्ति विहगाः[2] सरोजाक्षि ! ।
पिङ्गलभुजगाधिपतिः कथयति तं मत्तमातङ्गम् ॥ १४ ॥

यथा–

यामुने सैकते रासलेलामतं गोपिकामण्डलीमध्यगं वेणुवाद्यरतं,
मञ्जुगुञ्जावतंसं जगन्मोहनं चारुहासश्रिया संश्रितं कुण्डलैरञ्चितम् ।
विश्वकेलीकलोल्लाससम्भावितं वासवस्थापदु भूमकं काममापूरकं
कल्पवृक्षस्य मूले स्थितं भक्तिकोलसहाराञ्चितं चेतसा कृष्णचन्द्रं भजे ॥१५॥

इति मत्तमातङ्गः ७.

---

१ ख द्वितीयचरणं ख प्रतौ नास्ति । २ ख मे वच । ३ ख विगहणा ।

८. अ अनङ्गशेखर.

जगण-रगण-क्रमेण च रन्ध्रगणा यत्र लघ्वन्ता (गुर्वन्ता) ।
फणिपतिपिङ्गलभणिता[1] स ज्ञेयोऽनङ्गशेखर कविभि ॥ १६ ॥

यथा–

विलोलचारुकुण्डल स्फुरत्सुगण्डमण्डल सुलोलमौलिकुन्तल स्मरोल्लसन्,
नवीनमेघमण्डलीवपुर्विभासिताम्बरप्रभातडित्समाश्रित स्मित दधत् ।
मयूरचारुचन्द्रिकाचयप्रपञ्चचुम्बितोल्लसत्किरीटमण्डित समुच्छ्वसन्,
विलासिनीभुजावलीनिरुद्धबाहुमण्डल. करोतु व कृतार्थता जनानवन्[2] ॥१७॥

इति अनङ्गशेखर ८

इति दण्डका.

एवमन्येपि नकारद्वयानन्तरमनियतैस्तकारैः दण्डका प्रबन्धेषु दृश्यन्ते । तेऽस्माभिरपि यतत्वादेवोपेक्षिता ग्रन्थविस्तरभयाच्चेह न लक्षिता, इत्युपरम्यते[*] ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके[तृतीय]दण्डकप्रकरणम् ।

---

१. ख भणित । २ ख जनाननवन् ।

*टिप्पणी—दण्डकवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेषु प्राप्तभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

चतुर्थं अर्द्धसम-प्रकरणम्

अथ अर्द्धसमवृत्तानि लक्ष्यन्ते—

चतुष्पदं भवेत् पद्यं द्विधा तच्च प्रकीर्तितम् ।
जातिवृत्तप्रभेदेन छन्दः[शास्त्रविशारदैः ॥ १ ॥
मात्राकृता भवेज्जातिर्वृत्तं वर्णकृतं मतम् ।
तच्चापि त्रिविधं प्रोक्तं समार्द्धं][1] समकं तथा ॥ २ ॥
विषमं चेति तस्यापि लक्ष्यते लक्षणं त्विह ।
चतुष्पदी समा यस्य तत्समं परिकीर्तितम् ॥ ३ ॥
यस्य स्यात् प्रथमः पादस्तृतीयेन समस्तथा ।
द्वितीयस्तु चतुर्थेन भवत्यर्द्धसमं हि तत् ॥ ४ ॥
यस्य पादचतुष्कं स्याद् भिन्नं लक्षणभेदतः ।
तदाहुर्विषमं वृत्तं छन्दःशास्त्रविशारदाः ॥ ५ ॥
समं तत्र मया प्रोक्तमथार्द्धसममुच्यते ।
यथा श्रीनागराजेन भाषितं सूत्रवृत्तिभिः ॥ ६ ॥

तत्र प्रथमं—

१ पुष्पिताग्रा

यदि रसलघुरेफतो यकारो विषमपदे परिभाति पद्मगोक्ता[2] ।
समं इह चरणे च नौ जकारौ रो गुरुरपि चेज्जयतीह पुष्पिताग्रा ॥ ७ ॥

यथा–

सहचरि ! कथयामि ते रहस्यं न तमु कदाचन तद्गृहं प्रयेयाः[3] ।
इह विषमविषमा गिरः सखीनां सकपटचाटुतराः पुरस्सरन्ति ॥ ८ ॥

यथा वा–

प्रसरति पुरतः सरोजमाला तदनु मदान्धमधुव्रतस्य पङ्क्तिः ।
तदनु धृतशरासनो मनोभू–स्तव हरिणाक्षि विलोकनं तु पश्चात् ॥ ९ ॥

इति वा–

विधि विधि परिहासगूढगर्भा पिशुनगिरो गुरुसम्भ्रमं च तावुक ।
सहचरि ! हृदये निधेयमीयं मधुरगुरोचमसारयं विपाकः ॥ १० ॥

---

१ कोष्ठकोऽन्तर्गतः क प्रतौ नास्ति । २ क पद्मगोक्तः । ३ ख. प्रयेयाम् । ४ क मनोहर ।

अथ च–

इह खलु विषम पुरा कृताना, विलसति जन्तुषु कर्मणा विपाक ।
क्व जनकतनया क्व रामजाया, क्व च रजनीचरसङ्गमापवाद ॥ ११ ॥
इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतश. प्रत्युदाहरणानि[1] ।

इति पुष्पिताग्रा १.

२. अथ उपचित्रम्

विषमे यदि सौ सलगा. प्रिये ! भौ च समे भगगा सरसाश्चेत् ।
फणिना भणिल गणित गणै-र्वृत्तमिद कथित ह्युपचित्रम् ॥ १२ ॥

यथा–

नवनीतकर करुणाकर, कालियगञ्जनमञ्जनवर्णम् ।
भवमोचन-पङ्कजलोचन, चिन्तय चेतसि हे सखि ! कृष्णम् ॥ १३ ॥

इति उपचित्रम् २.

३. अथ वेगवती

विषमे यदि सादशनिर्गो, भत्रितय समके गुरुयुग्मम् ।
कविना फणिना भणितेव, वेदय चेतसि वेगवतीयम् ॥ १४ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसुत कमनीय, यादववशधुरन्धरमीशम् ।
सनकादिमुनीन्द्रविचिन्त्य, कुञ्जगत परिशीलय कृष्णम् ॥ १५ ॥

इति वेगवती ३

४. अथ हरिणप्लुता

विषमे यदि सौ सगणो लगौ, सखि ! समे नगणे भभरा कृता: ।
कविना फणिना परिजल्पिता, सुमुखि ! सा गदिता हरिणप्लुता ॥ १६ ॥

यथा–

नवनीरदवृत्तमनोहर[2], कनकपीतपटद्युतिसुन्दर ।
अलिके तिलकीकृतचन्दन-स्तव तनोतु मुद मधुसूदन ॥ १७ ॥

इति हरिणप्लुता ४

५. अथ अपरवक्त्रम्

विषम इह पदे तु नौ रलौ, गुरुरपि चेद् घटित सुमध्यमे ।
सम इह चरणे नजौ जरौ, तदपरवक्त्रमिद भवेन्न किम् ॥ १८ ॥

---

१ ख समुदाहरणानि । २ ख वृन्दमनोहर ।

यथा—

स्फुटमधुरपद प्रपञ्चनै, कथितमिव हृदयं तदैव ते ।
प्रममसममुना तवाननं, न खलु कदापि विलोकयाम्यहम् ॥ १९ ॥

यथा वा, हर्षचरिते [प्रथमोच्छ्वासे]—

तरलयसि दृशं किमुत्सुका-मविरलवासविलासलालसे[१] ।
अवतर कलहंसि वापिकां पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥ २० ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति अपरवक्त्रम् ५

६ अथ सुन्दरी

विषमे यदि सौ भगौ सगौ समके स्भौ रलगा भवन्ति चेत् ।
घनपीनपयोधरे ! तदा कथिता नागनृपेण सुन्दरी ॥ २१ ॥

यथा—

अयि मानिनि ! मानकारणं ननु तस्मिन्न विलोकयाम्यहम् ।
कुरु सम्प्रति मे वचोऽमृतं प्रियगेहं व्रज किं विलम्बसे ॥ २२ ॥

यथा वा—

अथ तस्य विवाहकौतुकं ललितं बिभ्रत एव पार्थिव ।
वसुधामपि हस्तगामिनी-मकरोदिन्दुमतीमिवापराम् ॥ २३ ॥*[१]

इति रघुवंशादिमहाकाव्येषु ज्ञातव्य प्रत्युदाहरणानि[२] ।

इति सुन्दरी ६

७ अथ भद्रविराट्

यस्मिन् विषमे तजौ रगौ चेद्, म सो ज समके गुरू भवेताम् ।
तद्वै कथितं कवीन्द्रवर्यै—स्तज्ज्ञैर्भद्रविराडिति प्रसिद्धम् ॥ २४ ॥

यथा—

मधुवेणुविरावमोहितास्ता, गोप्यः स्वं वसनं च न स्मरेयुः[३] ।
प्रायेण[४] निवारिता जनौघै-र्यान्तस्म्ये कृतनिश्चया बभूवुः ॥ २५ ॥

इति भद्रविराट् ७

---

१ मधुरमानसवासलालिते हर्षचरिते । २ ख प्रत्युदाहरणानि । ३ ख. स्मरति ४ ख ह्यर्थेन ।

* टिप्पणी—१ रघुवंश स ८ पद्य १

८ अथ केतुमती

विषमे सजौ सखि ! सगौ चेद्, भ. रासके रनौ गुरुयुगाभ्याम् ।
मिलितौ यदैव भवतस्तौ, केतुमतीति सा भवति वृत्तम् ॥ २६ ॥

यथा–

यमुनाविहारकलनाभि, कालियमौलिरत्ननटनाभि ।
विदितो जनेन परमेश, केवलभक्तितस्तु भुवनेश. ॥ २७ ॥

इति केतुमती ८

९ अथ वाङ्मती

यद्युग्मयोः रजौ रजौ कृतौ च, जरौ जरौ च युग्मयोर्गसगतौ वा ।
हारशङ्खकक्रमैरयुग्मतश्च, समानयोर्विपर्ययेण वाङ्मतीयम् ॥ २८ ॥

यथा–

काञ्चनाभ-वाससोपलक्षितश्च, मयूरचन्द्रिकाचयैर्विराजितश्च ।
नन्दनन्दन पुनातु सन्ततं च, मनोविनोदन प्रकामभासुरश्च ॥ २९ ॥
अत्र समयो पादयो पादान्तगुरुत्वमवधेयम् ।

इति वाङ्मती ९

१० अथ षट्पदावली

वाङ्मत्येव हि सुकले, विपरीता भवति चेद् बाले ! ।
कथयति पिङ्गलनागस्तामिता षट्पदावली रुचिराम् ॥ ३० ॥
ऊह्यमुदाहरणम् ।

इति षट्पदावली १०.

इत्यर्द्धसमवृत्तानि कथितान्यत्र कानिचित् ।
सुधीभिरूह्यान्यान्यानि प्रस्तार्य स्वमनीषया ॥ ३१ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिके [चतुर्थं] अर्द्धसमप्रकरणम् ।

यथा—

स्फुटमधुरवचःप्रपञ्चने कलितमिदं हृदय सदैव ते ।
असमसमधुना तवाननं न खलु कदापि विलोकयाम्यहम् ॥ १९ ॥

यथा वा हर्षचरिते [प्रथमोच्छ्वासे]—

तरलयसि दृशं किमुत्सुका-मविरलवासविलासमानसे[1] ।
अवतर कलहंसि वापिकां, पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥ २० ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति अपरवक्त्रम् ५

६ अथ सुन्दरी

विषमे यदि सौ लगौ लगौ समके स्भौ रलगा भवन्ति चेत् ।
घनपीनपयोधरे ! तदा कथिता नागनृपेण सुन्दरी ॥ २१ ॥

यथा–

अयि मानिनि ! मानकारणं ननु तस्मिन्न विलोकयाम्यहम् ।
कुरु सम्प्रति मे वचोऽमृतं प्रियगेहं व्रज किं विलम्बने ॥ २२ ॥

यथा वा–

अथ तस्य विवाहकौतुकं ललितं बिभ्रत एव पार्थिवः ।
वसुधामपि हस्तगामिनी-मकरोदिन्दुमतीमिवापराम् ॥ २३ ॥*[1]

इति रघुवंशादिमहाकाव्येषु शतशः प्रत्युदाहरणानि ।

इति सुन्दरी ६

७ अथ भद्रविराट्

यस्मिन् विषमे तजौ रगौ चेद् भः सौ च समके गुरू भवेताम् ।
तद्वै कथितं कवीन्द्रवर्गै—स्तज्ज्ञैर्भद्रविराडिति प्रसिद्धम् ॥ २४ ॥

यथा–

यद्वेणुविरावमोहितास्ता गोप्यः स्वं वसनं च न स्मरेयुः[3] ।
द्वार्येव[4] निवारिता ममोघै-र्व्यथितप्रे कृतनिश्चया बभूवुः ॥ २५ ॥

इति भद्रविराट् ७

---

१ ख अनुपमानवासमानसे हर्षचरिते । २ ख प्रत्युदाहरणानि । ३ ख स्मरन्ति । ४ ख द्वार्येव ।

*टिप्पणी—१ रघुवंश स० ८ पद्य १

यथा–

यमुनातटे विहरतीह, सरसविपिने मनोहरे।
रासकेलिरभसेन सदा, व्रजसुन्दरीजनमनोहरो हरि ॥ ८॥

इति सौरभम् २

३ अथ ललितम्

न-युग च हस्तयुगल च, सुमुखि ! चरणे तृतीयके।
भवति सुकविविदित ललित, कथित तदेव भुवने मनोहरम् ॥ ९॥

यथा–

व्रजसुन्दरीसहचरेण[1], मुदितहृदयेन गीयते।
सुललितमधुरतर हरिणा, करुणाकरेण सतत मुरारिणा ॥ १०॥

इति ललितम् ३.

४ अथ भाव

षट्सख्याता हारा, पादेषु त्रिष्वेवम्।
अन्ते कान्त यस्मिन्, भ-त्रय-ग-द्वितय[2] वद भावम् ॥ ११॥

यथा-

राधामाधायैना, चित्ते बाधा त्यक्त्वा।
कल्पान्ते य क्रीडेत्, त किल चेतसि भावय नित्यम् ॥ १२॥

इति भाव ४

५ अथ वक्त्रम्

कदाचिदर्द्धसमक, वक्त्र च विषम भवेत्।
द्वयोस्तयोरुपान्तेषु, वृत्त तदधुनोच्यते ॥ १३॥

तत्र वक्त्रम्–

युग्म्या वक्त्र सगौ स्याता, सागराद् य[3]स्त्वनुष्टुभि।
स्यात सर्वगणैरेतत्, प्रसिद्ध तद्बलायुधे ॥ १४॥

यथा–

मुखाम्भोज सदा स्मेर, नेत्र नीलोत्पल फुल्लम्।
गोपिकाना मुरारातेश्चेतोभृङ्ग जहारोच्चै ॥ १५॥

इति वक्त्रम् ५

---

१. ख सप्रुदयेन। २ क भत्रयगद्वितयम। ३ चतुर्थाक्षरादनन्तर यगणो देय इत्यर्थ।

पञ्चमं विषमवृत्त-प्रकरणम्

अथ विषमवृत्तानि

मिश्रचिह्नचतुष्पादमुद्दिष्टं विषमं मया ।
अथैषामीं तदेवात्र सोदाहरणमुच्यते ॥ १ ॥

तत्र प्रथमम्—

१ उद्गता

सजसा लघु प्रथमतस्तु नसजगुरुकाणि युग्मतः ।
स्युस्तथनु भनभा गयुता सजसा जगौ चरमतश्पदोद्गता ॥ २ ॥

यथा—

विससास गोपरमणीषु, तरलितमना स्फुटे हृदि ।
वंशमधरतले कलयन् वनिताजनेन निभृतं निरीक्षितः ॥ ३ ॥

इति उद्गता १

अथोद्गताभेदः

सजसा लघु प्रथमतस्तु नसजगुरुकाणि युग्मतः ।
स्युस्तथनु भनभजा गयुताः, सजसा जगौ च खलु तुर्यतो भवेत् ॥ ४ ॥

तृतीयचरणे वा स्याद् भेदः समुपलभ्यते । ततो भारवि-माघाद्यैः उद्गते यमुदीरिता । यथा—

अथ वासवस्य वचनेन रुचिरवदनस्त्रिलोचनम् ।
क्लान्तिरहितमभिराधयितुं विधिवत्तपांसि विदधे धनञ्जयः ॥ ५ ॥*१

यथा वा माघे*

तव धर्मराज इति नाम कथमिति वदन्तु पठ्यते ।
भौमदिनमभिदधत्यथवा भृशमप्रशस्तमपि मङ्गलं जनाः ॥ ६ ॥

इति उद्गताभेदः १

२ अथ सौरभम्

प्रथमं द्वितीयमथ तुर्य-मिह समसमुद्गता पण्डिताः ।
सौरभं यदि तृतीयपदे रनभा गुरुरपीह दृश्यते ॥ ७ ॥

---

*टिप्पणी—१ किरातार्जुनीयम्, स. १२ पद्य १ ।
„ २ शिशुपालवधम् स. १५, पद्य १७ ।

पदचतुरूर्ध्वम्—प्रथमचरणे अष्टौ वर्णा, द्वितीयचरणे द्वादशाक्षरवर्णा, तृतीयचरणे षोडश वर्णा., चतुर्थचरणे च विंशतिवर्णा भवन्ति। अस्मिन् वृत्ते गुरुलघुनियमो नास्ति।

आपीड — [प्र.च] लघु ६, गुरु २। [द्वि च] लघु १०, गुरु २।
[तृ च] लघु १४, गुरु २। [च च.] लघु १८, गुरु २।

प्रत्यापीड — [प्र च] गुरु २, लघु ६। [द्वि च] गुरु २, लघु १०।
[तृ च] गुरु २, लघु १४। [च च] गुरु २, लघु १८।

प्रत्यापीड— [प्र च] ग २, ल ४, ग २। [द्वि.च] ग २ ल ८, ग २।
[तृ च] ग २. ल १२, ग २। [च च] ग २, ल १६, ग २।

मञ्जरी— [प्र च] १२ वर्णा। [द्वि च] ८ वर्णा।
[तृ च] १६ वर्णा। [च च] २० वर्णा।

लवली— [प्र च] १६ वर्णा। [द्वि च] १२ वर्णा.।
[तृ च] ८ वर्णा। [च च] २० वर्णा।

अमृतधारा—[प्र च] २० वर्णाः। [द्वि च] १६ वर्णा।
[तृ.च] १२ वर्णा.। [च च] ८ वर्णा।

उपस्थितप्रचुपितम्— [प्र च] म स ज, भ ग ग। [द्वि.च] स न.ज.र ग
[तृ च] न न स [च च] न न न ज य

वर्द्धमानम्— [प्र च.] म स ज भ ग ग [द्वि.च] स.न.ज र ग
[तृ च.] न न स.न न स. [च च] न न ज य

शुद्धविराट्वृषभ – [प्र च] म स ज भ ग ग [द्वि च.] स न ज र ग
[तृ च] त ज र [च च.] न न न ज य

६ अथ पथ्यावक्त्रम्

अपि च–

युजोश्चतुर्थतो येन (जेन) पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम् ।
[एवमन्येऽपि भेदास्तु विज्ञेया गणभेदत ॥ १६ ॥]

यथा–

रासकेलिसतृष्णस्य कृष्णस्य मधुवासरे ।
आसीद् गोपमृगाक्षीणां पथ्यावक्त्रं मधुश्रुति ॥ १७ ॥

इति पथ्यावक्त्रम् ६

एवमन्यान्यपि गणविभेदात् श यानि वक्त्रवृत्तानि ।

यदुक्तं–

पञ्चमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्विचतुर्थयो ।
गुरुषष्ठं तु पादानां शेषेष्वनियमो मत ॥ १८ ॥
अत श्रीकालिदासश्च स्वप्रबन्धे समुज्जगौ ।
तथान्येऽपि कवीन्द्राश्च स्वनिबन्धे बबन्धिरे ॥ १९ ॥

यथा–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगत पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ ॥ २० ॥*[1]

किञ्च–

प्रयोगे प्रायिकं प्राहु केऽप्येतद् वक्त्रलक्षणम् ।
लोकेऽनुष्टुबिति ख्यातिस्तस्याष्टाक्षरता कृता ॥ २१ ॥
तथा नानापुराणेषु नानागणविभेदत ।
वृत्तमष्टाक्षरं वक्त्रं विषमाख्यां प्रयाति हि ॥ २२ ॥
एवं तु विषमं वृत्तं दिङ्मात्रमिह कीर्तितम् ।
शेषमाकरतो ज्ञेयं सुधीभिर्भावनापरै ॥ २३ ॥
पदचतुरूर्ध्वं च वृत्तं मात्रासमकमेव च ।
उपस्थितप्रचुपित-मथान्यदपि वृत्तकम् ॥ २४ ॥
हम्मायुषे प्रसिद्धत्वादत्र [नास्युप] योगित ।
तदग्रन्थगौरवभीत्या च मयका न प्रपञ्चितम्** ॥ २५ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके द्वितीये वृत्तपरिच्छेदे
विषमवृत्तप्रकरणं पञ्चमम् ।

[–] कोष्ठगतांशो नास्ति क प्रतौ ।

टिप्पणी–१ रघुवंश स १ प १

*टिप्पणी–२ पदचतुरूर्ध्वादि वृत्तानां लक्षणानि श्रीहम्मायुषरचित-छन्द सूत्रटीकानुसारेण संक्षेपतोऽत्रोपन्यस्यन्ते–

पदचतुरुर्ध्वम्—प्रथमचरणे अष्टौ वर्णा, द्वितीयचरणे द्वादशाक्षरवर्णा, तृतीयचरणे षोडश वर्णा, चतुर्थचरणे च विंशतिवर्णा भवन्ति। अस्मिन् वृत्ते गुरुलघुनियमो नास्ति।

आपीड — [प्र.च] लघु ६, गुरु २। [द्वि च] लघु १०, गुरु २।
[तृ च.] लघु १४, गुरु २। [च च.] लघु १८, गुरु २।

प्रत्यापीड.— [प्र च] गुरु २, लघु ६। [द्वि च] गुरु २, लघु १०।
[तृ च] गुरु २, लघु १४। [च च] गुरु २, लघु १८।

प्रत्यापीडः— [प्र च] ग २, ल ४, ग २। [द्वि.च] ग २ ल ८, ग २।
[तृ च] ग २ ल १२, ग २। [च च] ग २, ल. १६, ग २।

मञ्जरी— [प्र च] १२ वर्णा। [द्वि च] ८ वर्णा।
[तृ च] १६ वर्णा। [च च] २० वर्णा।

लवली— [प्र च] १६ वर्णा। [द्वि च] १२ वर्णा.।
[तृ च] ८ वर्णा। [च च] २० वर्णा।

अमृतधारा— [प्र च.] २० वर्णा.। [द्वि च] १६ वर्णा.।
[तृ.च] १२ वर्णा.। [च च] ८ वर्णा।

उपस्थितप्रचुपितम्— [प्र च] म स ज भ ग ग। [द्वि च] स न.ज र ग
[तृ च] न न स [च च] न न न ज य

वर्द्धमानम्— [प्र च.] म स ज भ ग ग [द्वि.च] स.न.ज र ग
[तृ च.] न न स.न न स. [च च] न न न ज य

शुद्धविराट्वृषभ – [प्र च] म.स ज भ ग ग [द्वि च.] स न ज र ग
[तृ च] त ज र [च च] न न न ज य

षष्ठं वैतालीयप्रकरणम्

१ अथ वैतालीयम्

विषमे रससंख्यकाः कलाः समकेऽष्टौ न समा पृथक्कृताः ।
न समात्र पराश्रया कला वैतालीयेऽस्य र-लग-गाः ॥ १ ॥
विषमे रसमात्राः स्युः समे चाष्टौ कलास्तथा ।
वैतालीयं भवेद् वृत्तं तयोरन्ते रलौ गुरुः ॥ २ ॥

यथा–

तव तन्वि ! कटाक्षवीक्षितैः प्रखरद्भिः श्रवणान्तगोचरैः ।
विशिखैरिव तोदनकोटिभिः प्रहृतः प्राणिति दुष्करं नरः ॥ ३ ॥

अस्य च भूयांसि सप्रपञ्चमुदाहरणप्रत्युदाहरणानि पिङ्गलवृत्तौ सन्ति तानि तत एवावसेयानि । [नैषधकाव्ये च द्वितीये सर्गे सन्ति तानि तत एवावसेयानि]

इति वैतालीयम् १

२ अथ औपच्छन्दसकम्

तथैवान्तेऽधिके गुरौ स्यादौपच्छन्दसकं कवीन्द्रहृद्यम् ।
फणिभाषितमुत्तमं रसालं पठनीयं कविपण्डितैरुदारैः ॥ ४ ॥

यथा–

परममनिरीक्षणानुरक्तं स्वयमत्यन्तनिगूढचित्तवृत्तिम् ।
अनवस्थितमर्थलुब्धमाराद् विपरीतं विजहीहि मित्रमेवम् ॥ ५ ॥

इति औपच्छन्दसकं वैतालीयम् २

३ अथ आपातलिका

आपातलिका कथितेयं भाद् गुरुकावथ पूर्ववदन्यत् ॥ ६ ॥

यथा–

पिङ्गलकेशी कपिलाक्षी वाचाला या विकटोन्नतदन्ती ।
आपातलिका पुनरेषा नृपतिकुलेऽपि न मान्यमुपैति ॥ ७ ॥

इति आपातलिका ३

४ अथ नलिनम्

विषमपदः स्यान्नलिनाख्यम् ॥ ८ ॥

---

१ क पुरौ । २ कोष्ठकान्तर्गतः नास्ति क प्रतौ ।

[व्या०] विषमैरेव चतुर्भिरापातलिकापदैर्नलिनाख्य वैतालीयमित्यर्थः ।
यथा–

कुञ्चितकेशी नलिनाक्षी, स्थूलनितम्बा रुचिकान्ता ।
पद्मसुहस्ता रुचिरौष्ठी, गोष्ठीरसिका परिणेया ॥ ९ ॥

इति नलिनाख्य वैतालीयम्

५. अथापर नलिनम्

समचरणैरपि चान्यदुदीते ॥ १० ॥

[व्या०] समैरेव चतुर्भिरापातलिकापादैरपर नलिन भवतीत्यर्थ ।
यथा–

पङ्कजलोचनमम्बुददेह, बालविनोद-सुनन्दितगेहम् ।
पद्मजशम्भुकृतस्तुतिमीश, चिन्तय कृष्णमपारमनीषम् ॥ ११ ॥

इति अपर नलिनाख्य वैतालीयम् ५

६ अथ दक्षिणान्तिका वैतालीयम्

द्वितीयलस्यान्त्ययोगतः, पदेषु सा स्याद् दक्षिणान्तिका ॥ १२ ॥

[व्या०] द्वितीयलघोरन्त्येन–तृतीयेन योगतश्चतुर्षु पादेषु यत्र सा दक्षिणान्तिका इत्यर्थः । अतएव शुद्धवैतालीयस्य विषमपदैर्दक्षिणान्तिका, समपदैरुत्तरान्तिका इति शम्भुरप्याह ।
यथा–

ववौ मरुद्दक्षिणान्तिको, वियोगिनीप्राणहारक ।
प्रकम्पिताशोकचम्पको, वसन्तजोऽनङ्गबोधक ॥ १३ ॥

यथा वा, ममप्रत्युदाहरणम्[१]—

नमोऽस्तु ते रुक्मिणीपते, जगत्पते श्रीपते हरे ।
भवाम्बुधेस्तारयाशु मा, विधेहि सन्मति शुभाम् ॥ १४ ॥

इति दक्षिणान्तिका वैतालीयम् ६

७ अथ उत्तरान्तिका वैतालीयम्

शुद्धवैतालीयस्य समपदैरुत्तरान्तिका ॥ १५ ॥
यथा–

सहसा सादितकसभूपति, धृतगोवर्द्धनशैलमुद्धुरम् ।
यमुनाकुञ्जविहारिण हरिं, यदुवीर कलयाम्यहर्निशम् ॥ १६ ॥

इति उत्तरान्तिका वैतालीयम् ७.

८ अथ प्राच्यवृत्ति

तुर्यस्य तु शेषयोगत , प्राच्यवृत्तिरिह युग्मपादयो ॥ १७ ॥

---

१. ख. ममै(वो)दाहरणम् ।

[व्या०] [चतुर्थलकारस्य येवल-पञ्चमेन योगतः प्राच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयं युग्मपादयोः-समपादयोरित्यर्थ ।][1]

यथा- वृत्तायुधे—*[1]

विपुलार्थसुवाचकाक्षराः कस्य नाम न हरन्ति मानसम् ।
रसभावविशेषपेशला प्राच्यवृत्ति कविकाव्यसम्पदः ॥ १८ ॥

यथा वा वृत्तद्युमणे—

स्वगुणैरनुरञ्जितप्रजः प्राच्यवृत्तिपरिपालने रत ।
रणभूमिषु भीमविक्रमो विन्ध्यवनृपतिर्जयत्यसौ ॥ १९ ॥

यथा वा मम[1] प्रत्युदाहरणम्—

कति सन्ति न गोपबालका कामकेलिकलनासुकोविदाः ।
अपि माधव ! एव केवलं चेतनां मनु[2] परिक्षिणोति मे ॥ २० ॥

इति प्राच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयम् ८

९ अथ उदीच्यवृत्तिर्वैतालीयम्

उदीच्यवृत्तिस्त्वयुग्मयो भवति युतीयस्याद्ययोगतः ॥ २१ ॥

[व्या] अयुग्मयो -प्रथमतृतीययोः पादयोः तृतीयस्य लघोरादन-द्वितीयेन योगात् उदीच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयम् । यथा—

यथा- वृत्तायुधे [2]

अबाधकमनूर्जिताक्षरं, श्रुतिदुष्टं श्रुतिकष्टमक्रमम् ।
प्रसादरहितं च नेष्यते कविभि काव्यमुदीच्यवृत्तिभि ॥ २२ ॥

यथा वा ममापि उदाहरणम्—

अबन्धकमतिनिन्दितं परं परमेशं परमार्थवेदनम् ।
अनाकलितवैभवं विभं जगतां बन्धममारतं भजे ॥ २३ ॥

इति उदीच्यवृत्तिर्वैतालीयम् ९

१० अथ प्रवृत्तकं वैतालीयम्

प्रवृत्तक पदमिरेतयो ॥ २४ ॥

[व्या] उदीच्यवृत्ति-प्राच्यवृत्त्योर्युगपत्प्रवृत्तम् । पर्व सर्व युग्मपादे पञ्चमेन पूर्वं संयुज्यते अयुग्मपादे तृतीयेन पूर्वमित्यर्थ ।

---

१ [-]कोष्ठकान्तर्गतांशस्य स्थाने समपादयोरित्यर्थं इत्येव एवास्ति क. प्रतौ ।
२ ख ममैवोदाहरणम् । २ ख मनु ।
*टिप्पणी—१ छन्द-शास्त्र-वृत्तायुधटीका प ४ का १७ उदाहरणम्
२ " " " १८

यथा, हलायुधे*[1]—

जयो भरतवंशस्य[1], श्रूयतां श्रुतमनोरसायनम् ।
पवित्रमधिकं शुभोदयं, व्यासवक्त्रकथितं प्रवृत्तकम् ॥ २५ ॥

प्रत्युदाहरणम्—

हरिं भजत रे जना परं, श्रूयतां परमधर्म्ममुत्तमम् ।
न काल इह कालयत्यसौ, सर्वघस्मरघनाघनद्युति[2] ॥ २६ ॥

इति प्रवृत्तकं वैतालीयम् १०

११ अथ अपरान्तिका

अस्य युग्मरचिताऽपरान्तिका ॥ २७ ॥

[व्या] अस्य–प्रवृत्तकस्य समपदकृता–समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादै रचिताऽपरान्तिका ।

यथा, हलायुधे*[2]—

स्थिरविलासनतमौक्तिपेशला[3], [कमलकोमला][4]ङ्गी मृगेक्षणा ।
हरति कस्य हृदयं न कामिनं, सुरतकेलिकुशलाऽपरान्तिका ॥ २८ ॥

यथा वा, सुल्हणे—

तुङ्गपीवरघनस्तनालसा, चारुकुण्डलवती मृगेक्षणा ।
पूर्णचन्द्रवदनाऽपरान्तिका, चित्तमुन्मदयतीयमङ्गना ॥ २९ ॥

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

चारुकुण्डलयुगेन मण्डितो, बर्हिबर्हकृतमौलिशेखरः ।
ब्रूत भो पनसपिप्पलादयो, नन्दसूनुरिह नावलोकितः ॥ ३० ॥

इति अपरान्तिका ११.

१२ अथ चारुहासिनी

अयुक्कृता चारुहासिनी ॥ ३१ ॥

[व्या०] प्रवृत्तकस्यैव विषमपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादैर्विरचिता चारुहासिनी नाम वैतालीयम् । किं तल्लक्षणम् ? चतुर्दशमात्रत्वं तृतीयेन च द्वितीययोगः ।

---

१. इव भरतभूभृताम् । २. ख द्युति । ३ कावली 'हलायुधे' । ४. कोष्ठगतोंऽशो नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्रहलायुधटीका अ० ४, का ३९ उदाहरणम् ।
२ ,, ,, ,, ,, ,, ४१ उदाहरणम् ।

यथा, हलायुध प्राह[*][1]—

ममाङ्प्रसूतकस्तवीथितिः, स्मरोल्लसितगण्डमण्डला ।
कटाक्षमसिता च कामिनी, मनो हरति चारुहासिनी ॥ ३२ ॥

यथा वा वृत्तरत्नाकरटीकायां सुल्हण प्रोवाच—

न कस्य चेत क्षम मयं करोति सा सुन्दराकृति ।
विविधभावयोगसम्भृता विलासिनी चारुहासिनी ॥ ३३ ॥

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

सुवृत्तमुक्तावलीधरं प्रतप्तचामीकराम्बरम् ।
मयूरपिच्छविराजितं, नमाम्यहं नन्दनन्दनम् ॥ ३४ ॥

इति चारुहासिनी वैतालीयकम् १२

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वैतालीयप्रकरणं पञ्चमम् ।

---

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहलायुधटीकायां अ० ४ कारिकायां ४० उदाहरणम्

सप्तमं यतिनिरूपण—प्रकरणम्

अथाभिधीयते चात्र यतिर्विच्छेदसञ्ज्ञिता ।
विरामधृतिविश्रामावसानपदरूपिणी ॥ १ ॥
समुद्रेन्द्रियभूतेन्द्ररसपक्षदिगादय ।
साकाक्षत्वादिमे शब्दा यस्या सम्बन्धमाश्रिता ॥ २ ॥
तस्यास्तु लक्षण सम्यगुच्यते मृसमौक्तिके ।
आलोच्य मूलशास्त्राणि सोदाहरणमञ्जसा ॥ ३ ॥
यति सर्वत्र पादान्ते श्लोकस्यार्द्धे विशेषत ।
समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके ॥ ४ ॥
क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ तथैव च ।
अत्र पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ॥ ५ ॥
पूर्वान्तवत् स्वर सन्धौ क्वचिदेव परादिवत् ।
द्रष्टव्यो यतिचिन्तायां यणादेश परादिवत् ॥ ६ ॥
नित्य प्राक्पदसम्बन्धाश्चादय प्राक्पदान्तवत् ।
परेण नित्यसम्बन्धा प्रादयश्च परादिवत् ॥ ७ ॥

'यति सर्वत्र पादान्ते' इत्यादि कारिकाचतुष्टय यथास्थान व्याकरिष्याम । तत्र—यति सर्वत्र सर्ववृत्तेषु इत्यर्थ, पादान्त एव भवति । यथा—

[विशुद्धज्ञानदेहाय शिवाय गुरवे नम । इत्यादि।

तस्यैव प्रत्युदाहरण यथा][1]—

नमस्तस्मै महादेवाय शशाङ्कार्द्धमौलये । इति ।

'श्लोकस्यार्द्धे विशेषत.' इत्यत्र सन्धिकार्याभाव, स्पष्टविभक्तिकत्व च विशेषतो भवति । तद्यथा—

नमस्यामि सदोद्भूतमिन्धनीभूतमन्मथम् ।
ईश्वराख्य पर ज्योतिरज्ञानतिमिरापहम् ॥

अत्रेश्वरमित्यस्य मकारेण सयोगो न कर्त्तव्य । समासे तस्यैव प्रत्युदाहरण। यथा—

सुरासुरशिरोरत्नस्फुरत्किरणमञ्जरी—
पिञ्जरीकृतपादाब्जद्वन्द्व वन्दामहे शिवम् ॥ इति ।

'समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके' तत्र व्यक्तविभक्तिक समासान्तर्भूतमव्यक्तविभक्तिकम् । यथा—

---

१ [-] क प्रतौ नास्ति कोष्ठगोंऽशः ।

यथा हलायुध प्राह*[1]—

मनाकप्रसृतदन्तदीधिति· स्मरोल्लसितगण्डमण्डला ।
कटाक्षललिता च कामिनी मनो हरति चारुहासिनी ॥ ३२ ॥

यथा वा वृत्तरत्नाकरटीकायां सुल्हण· प्रोवाच—

न कस्य चेत समन्मथ करोति सा सुन्दराकृति· ।
विभिन्नवाक्योक्तिसम्मिता विलासिनी चारुहासिनी ॥ ३३ ॥

यथा वा मम प्रत्युदाहरणम्—

सुवृत्तमुक्तावलीधरं प्रतप्तचामीकराम्बरम् ।
मयूरपिच्छैर्विराजितं, नमाम्यहं नन्दनन्दनम् ॥ ३४ ॥

इति चारुहासिनी वैतालीयकम् १९

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वैतालीयप्रकरणं षष्ठम् ।

---

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहलायुधटीकायां अ ४ कारिकायां ४० उदाहरणम्

पूर्वान्तवत् स्वर सन्धौ क्वचिदेव परादिवत्। अस्यायमर्थः—योऽयं पूर्वपरयोरेकादेशः स्वरः सन्धौ विधीयते। स क्वचित् पूर्वस्यान्तवद् भवति, क्वचित् परस्यादिवद् भवति। तथा च पाणिनि स्मरति–'अन्तादिवच्च' [पा०सू० ६।१।८५] इति। तत्र पूर्वान्तवद्भावे यथा स्यात्। यथा–

स्यादस्थानोपगतयमुनासङ्गमे चाभिरामा[1]।

इत्यादि। तथा–

जम्भारातीभकुम्भोद्भवमिव दधत सान्द्रसिन्दूररेणुम्।

इत्यादि। तथा-

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तये।
स्वानुभूत्येकमानाय नम शान्ताय तेजसे॥

इत्यादि।

परादिवद्भावे यथा–

स्कन्ध विन्ध्याद्रिमूर्द्धा निकषति [महिषस्याहितोऽसूनहार्षीत्।

इत्यादि। तथा–

शूल शूल तु गाढ प्रहर हर हृषीकेश][2] केशोऽपि वक्त्र—
श्चक्रेणाऽकारि किं ते।

इत्यादि।

अत्र हि स्वरूपस्य परादिवद्भावे व्यञ्जनमपि तदभक्तत्वात् तदादिवद् भवति।
'यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ' इत्यन्तादिवद्भावे विधावपि सम्बध्यते। तेन–

अस्या वक्त्राब्जमवजितपूर्णेन्दुशोभ विभाति।

इत्येवंविधा यति[र्न]भवति। यथा वा स्वर सन्धौ–

राकाचन्द्रादधिकमबलावक्त्रचन्द्र विभाति।

तथा शेषेऽपि, यथा–

रामातरुणिमोद्दामानङ्गरङ्गप्रसङ्गिनी।

इत्यादि[3] उन्नेयम्। 'यणादेश यणादिवत्' भवतीति शेष। यथा—

विततजलतुषारास्वादुशुभ्राशुपूर्णा-
स्वविरलपदमाला श्यामलामुल्लिखन्त.।

इत्यादि।

'नित्यं प्राक्पदसम्बन्धाश्चादय' प्राक्पदान्तवत्।' तेभ्य पूर्वा यतिर्न कर्त्तव्या इत्यर्थ।

---

१ ख. नाभिरामा। २ कोष्ठगतोंऽश ख. प्रतौ नास्ति। ३ ख इत्याद्यन्त्यवद्।

यस्यास्तनके मनकचनयास्नानपुष्पोदकेषु । इत्यादि

व्यक्ताव्यक्तविभक्तित इति । यतिः सर्वत्रपादान्ते इत्यनेन सम्बध्यते ।

यथा–

वधीकृतजगत्कालं कण्ठेकालं नमाम्यहम् ।
महाकालं कलाशेषं शशिलेखाशिखामणिम् ॥

अपि च–

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे ।
त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तम्भाय शम्भवे ॥

क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ यतिर्भवेत् ।
यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ॥ ५ ॥

इति । चतुरक्षरा यतिर्भवति । यथा–

पर्याप्तं तप्तचामीकरकटकतटे श्लिष्टशीतेतरांशौ ।

इत्यादि । यथा वा–

उन्मीलन्नीलपङ्केरुहरुचिररुचो देवदेवस्य विष्णोः ।

इत्यादि । तथा–

कूजत्कोयष्टिकोलाहलमुखरभुवः प्रान्तकुल्यान्तवेशाः ।

इत्यादि । तथा–

वैरिञ्चानां[1] सघोच्चारितरुचिरऋचां चाननानां चतुर्णाम् ।

इत्यादि ।

समुद्रादौ इति किम् ? पादमध्येऽपि यतिः । पदान्ते तु माऽभूत् । तद्यथा–

प्रणमत भवबन्धक्लेशनाशाय नारा
यणचरणसरोजद्वन्द्वमानन्दहेतुम् ।

इत्यादि ।

पूर्वोत्तरभागयोरेकाक्षरत्वे तु पदमध्ये यतिर्दुष्यति ।

यथा–

एतस्या गण्डमण्डल-ममल गाहते चन्द्रकलाम् ।

इत्यादि । यथा–

एतस्या राजति मुखमिदं पूर्णचन्द्रप्रकाशम् ।

इत्यादि । तथा–

सुरासुरशिरोनिघृष्टचरणारविन्दः शिवः ।

इत्यादि

---

१ क भैरवीनां । २ ख माहतिपङ्कजाम् ।

पूर्वान्तवत् स्वरः सन्धौ क्वचिदेव परादिवत् । अस्यायमर्थः—योऽयं पूर्वपरयोरेकादेशः स्वरः सन्धौ विधीयते । स क्वचित् पूर्वस्यान्तवद् भवति, क्वचित् परस्यादिवद् भवति । तथा च पाणिनि स्मरति–'अन्तादिवच्च' [पा०सू० ६।१।८५] इति । तत्र पूर्वान्तवद्भावे यथा स्यात् । यथा–

स्यादस्थानोपगतयमुनासङ्गमे चाभिरामा[1] ।

इत्यादि । तथा–

जम्भारातीभकुम्भोद्भवमिव दधत सान्द्रसिन्दूररेणुम् ।

इत्यादि । तथा -

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तये ।
स्वानुभूत्येकमानाय नम शान्ताय तेजसे ।।

इत्यादि ।

परादिवद्भावे यथा–

स्कन्ध विन्ध्याद्रिमूर्द्धा निकषति [महिषस्याहितोऽसूनहार्षीत् ।

इत्यादि । तथा–

शूल शूल तु गाढ प्रहर हर हृषीकेश][2] केशोऽपि वक्त्र—
श्चक्रेणाऽकारि किं ते ।

इत्यादि ।

अत्र हि स्वरूपस्य परादिवद्भावे व्यञ्जनमपि तदभक्तत्वात् तदादिवद् भवति ।
'यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ' इत्यन्तादिवद्भावे विधावपि सम्बध्यते । तेन–

अस्या वक्त्राब्जमवजितपूर्णेन्दुशोभ विभाति ।

इत्येवंविधा यति[र्न]भवति । यथा वा स्वर सन्धौ–

राकाचन्द्रादधिकमबलावक्त्रचन्द्र विभाति ।

तथा शेषेऽपि, यथा–

रामातरुणिमोद्दामानङ्गरङ्गप्रसङ्गिनी ।

इत्यादि[3] उन्नेयम् । 'यणादेश परादिवत्' भवतीति शेष । यथा—

विततजलतुषारास्वादुशुभ्रांशुपूर्णा-
स्वविरलपदमाला श्यामलामुल्लिखन्त. ।

इत्यादि ।

'नित्यं प्राक्पदसम्बन्धाश्चादय प्राक्पदान्तवत् ।' तेभ्य पूर्वा यतिर्न कर्त्तव्या इत्यर्थ ।

---

१ ख नाभिरामा । २ कोष्ठगतोंऽश ख प्रतौ नास्ति । ३ ख इत्याद्यन्त्यवद् ।

तेन संस्कृते यतिरक्षायां गुण । यतिभङ्गेन दोषोऽपीति तेषामाशय ।

अतएव मुरारिः*[1]—

याच्ञादैत्यपराचि यस्य कलहायन्ते मिथस्त्व वृणु,
त्व वृणित्यभितो मुखानि स दशग्रीव. कथ वर्ण्यताम् ।।

इत्यादि ।

जयदेवोऽपि*[2]–

भाव शृङ्गारसारस्वतमयजयदेवस्य विष्वग् वचासि ।

इति । एवमन्येऽपि–

कोष्ठीकृत्य जगद्धन कति वराटीभिर्मुद यास्यति ।

इत्यादि, महाकवीनां स्वरसादिति दिक् । अपि च—

[3]यतिभङ्गो नामधातुभागभेदे भवेद् यथा ।
पुनातु नरकारिश्चक्रभूषितकराम्बुज' ।। १२ ।।

दिविषद्वृन्दवन्द्य वन्दे गोविन्दपदद्वयम् ।
स्वरसन्धौ तु न श्रीशोऽस्तु भूत्यै भवतो यथा ।। १३ ।।

न स्याद्विभक्तिभेदे भात्येष राजेति कुत्रचित् ।
क्वचित्तु स्याद् यथा देवाय नमश्चन्द्रमौलये ।। १४ ।।

चादयो न प्रयोक्तव्या विच्छेदात् परतो यथा ।
नम कृष्णाय देवाय च दानवविनाशिने ।। १५ ।।

---

*टिप्पणी—१ 'सतुष्टे तिसृणा पुरामपि रिपौ कण्डूलदोर्मण्डली-
क्रीडाकृत्तपुन प्ररूढशिरसो वीरस्य लिप्सोर्वरम् ।
याच्ञादैत्यपराञ्चि यस्य कलहायन्ते मिथस्त्व वृणु,
त्वां वृणित्यभितो मुखानि स दशग्रीव' कथ वर्ण्यताम् ।।
[मुरारिकृत-मनर्घराघवम् अक–३, प० ४१]

२ 'साध्वी माध्वीकचिन्ता न भवति भवत शर्करे कर्कशासि,
द्राक्षे द्रक्ष्यन्ति के त्वाममृतमृतमसि क्षीरनीर रसस्ते ।
माकन्द क्रन्द कान्ताधर धर न तुलां गच्छ यच्छन्ति भाव,
यावच्छृङ्गारसार शुभमिव जयदेवस्य वैदग्ध्यवाच ।।
[जयदेवकृत-गीतगोविन्द –स० १२, प० १२]

३ देवेश्वरकृत-कविकल्पलताया शब्दस्तवकच्छन्दोऽभ्यासप्रकरणे ।

यथा

स्वादु स्वच्छं सलिलमपि च प्रीतये कस्य न स्यात् ।

इत्यादि ।

नित्यं प्राक्पदसम्बन्धा इति किम् ? अन्येषां पूर्वपदान्तवद्भावो माऽभूत् । तद्यथा–

मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्याः ।

इत्यादि ।

'परेण नित्यसम्बन्धाः' प्राग्वच्च परादिवत् । तेभ्यः परा यतिर्न भवतीत्यर्थः । तद्यथा–

दुःखं मे प्रक्षिपति हृदये दुस्सहस्त्वद्वियोगः ।

इत्यादि ।

परेण नित्यसम्बन्धा' इत्यादि किम् ? कर्मप्रवचनीयसंज्ञकेभ्यः प्रादिभ्यः परापि यतिर्यथा स्यादिति । तत्र यथा–

प्रिय प्रति स्फुरत्पादे मन्दायन्ते न खल्विति ।
क्षमाधि महद्भिन्नानि भवन्ति महतामपि ।

इत्यादि ।

यच्च तु चादीनां प्रादीनां चैकाक्षराणामनेकाक्षराणां वा पदान्ते यतावादिवद्भाव इष्यते, न तु अनेकाक्षराणां पदमध्ये यतौ । तत्र हि पदमध्येऽपि च चामीकरादिरिव यतेरप्यनुज्ञातत्वात् । तत्र चादीनां यथा–

प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृतभ्रूविलासम् ।

इत्यादि ।

प्रादीनामपि यथा–

दूरारूढः प्रमोदं हसितमिव तथा वृष्टमारात् सखीभिः ।

इत्यादि ।

एवं माधुर्यसंपत्तिनिमित्तं यतिबन्धनम्[1] ।
न विना यतिसौन्दर्यं काव्यं भव्यतरं भवेत् ॥ ८ ॥
भरतादिमुनीन्द्रैरप्येवमेवाभिधीयते ।
तथाऽन्येऽपि कवीन्द्रास्तु यतिं मन्यन्त्यनुत्तमाम् ॥ ९ ॥

अन्यैरप्युक्तम्—

एवं यथा पयोदाग्रे सुधियो नापजायते ।
तथा यथा मधुरतानिमित्तं यतिरिष्यते ॥ १० ॥

इति । किञ्च—

पिङ्गले नागदेवस्य संस्मृते यतिमिच्छतः ।
श्वेतमाण्डव्य[2]मुख्यैस्तु मुनिभिर्नानुमन्यते ॥ ११ ॥

---

१ ख यतिबन्धनम् । २ ख श्वेतमाण्डव्य

अष्टमं गद्यनिरूपण—प्रकरणम्

अथ गद्यानि

वाङ्मयं द्विविधं प्रोक्तं पद्यं गद्यमिति क्रमात् ।
तत्र पद्यं पुरा प्रोक्तं गद्यं सम्प्रति गद्यते ॥ १ ॥
असवर्णं सवर्णं च गद्यं तत्रासवर्णकम् ।
त्रिविधं कथितं तच्च कवीन्द्रैर्गद्यवेदिभिः ॥ २ ॥
चूर्णकोत्कलिकाप्रायवृत्तगन्धिप्रभेदतः ।

तत्र—

अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं चूर्णकं विदुः ॥ ३ ॥
तद्धि वैदर्भरीतिस्थं गद्यं हृद्यतरं भवेत् ।
आविद्धं ललितं मुग्धमिति तच्चूर्णकं त्रिधा ॥ ४ ॥

तत्र—

दीर्घवृत्ति-कठोरार्णमाविद्धं परिकीर्तितम् ।
स्वल्पवृत्तं कठोरार्णं ललितं कीर्त्यते बुधैः ॥ ५ ॥
मुग्धं मृद्वक्षरं प्रोक्तमवृत्त्यत्यल्पवृत्ति वा ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं दीर्घवृत्त्युत्कटाक्षरम् ॥ ६ ॥
वृत्त्येक[१]देशसम्बद्धं वृत्तगन्धि पुनः स्मृतम् ।
अथात्र क्रमतश्चैषामुदाहरणमुच्यते ॥ ७ ॥

तत्र प्रथमं यथा—

१ शुद्धचूर्णकम्

स हि खलु त्रयाणामेव जगतां गतिः परमपुरुषः पुरुषोत्तमो दृप्तसमस्तदैत्य-दानवभरेण भङ्गुराङ्गीमिमामवनिमवलोक्य करुणरसामृतपरिपूर्णार्द्रहृदयस्तथा भुवो भारमवतारयितुं रामकृष्णस्वरूपेण यदुकुलेऽवततार । यः प्रसङ्गेनापि स्मृतोऽभ्यर्चितः प्रणतो वा गृहीतनामा पुंसः संसारसागरपारमवलोकयति ।

इति शुद्धचूर्णकम् १

१[१] अथ आविद्धं चूर्णकम्

यथा—

दलदलि[२]सहकारमञ्जरीविगलन्मकरन्दबिन्दुसन्दोहसन्दानितमन्दानिलवीज्यमानदशदिगाभोगसुरभिसमयः समुपाजगाम । इत्यादि ।

इति आविद्धं चूर्णकम् १[१]

---

१ ख वृत्तैकदेशः । २ ख दरदलित ।

एकस्वरोपसर्गेण विच्छेदः श्रुतिसौख्यहृत्¹ ।
यथा पिनाकपाणि प्रणमामि स्मरशासनम् ॥ १६ ॥

इत्यादि कविकल्पलतायां वाग्भटमण्डनेन देवेश्वरेणाभ्यधायि ।
छन्दोमञ्जर्यां *तु–

यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते ।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया ॥ १७ ॥

इति सामान्यलक्षणमुक्तम् । किञ्च—

क्वचिच्छन्दस्यास्ते यतिरभिहिता पूर्वकविभिः
पदान्ते सा शोभां व्रजति पदमध्ये त्यजति च ।
पुनस्तत्रैवासौ स्वरविहितसन्धिः श्रयति तां
यथा कृष्णः पुष्यात्स्वतुलमहिमा मां करुणया ॥ १८ ॥

इति छन्दोगोविन्दे गङ्गादासेनाप्युक्तमित्युपरम्यते । इति सर्वमङ्गलम् ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके द्वितीयपरिच्छेदे
यतिनिरूपण-प्रकरणं सप्तमम् ।

---

१ क ख सौख्यकृत् ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी प्रथमस्तबक प० १२ ११ ।

२ 'गोविन्दे' इत्यस्य स्थाने 'मञ्जर्यां' इति पाठ एव समीचीनोऽस्ति गङ्गादास कर्तृत्वात् ।

अष्टमं गद्यनिरूपण—प्रकरणम्

अथ गद्यानि

वाङ्मयं द्विविधं प्रोक्तं पद्यं गद्यमिति क्रमात् ।
तत्र पद्यं पुरा प्रोक्तं गद्यं सम्प्रति गद्यते ।। १ ।।
असवर्णं सवर्णं च गद्यं तत्रासवर्णकम् ।
त्रिविधं कथितं तच्च कवीन्द्रैर्गद्यवेदिभिः ।। २ ।।
चूर्णकोत्कलिकाप्रायवृत्तगन्धिप्रभेदतः ।

तत्र—

अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं चूर्णकं विदुः ।। ३ ।।
तद्धि वैदर्भरीतिस्थं गद्यं हृद्यतरं भवेत् ।
आविद्धं ललितं मुग्धमिति तच्चूर्णकं त्रिधा ।। ४ ।।

तत्र—

दीर्घवृत्ति-कठोरार्णमाविद्धं परिकीर्तितम् ।
स्वल्पवृत्तं कठोरार्णं ललितं कीर्त्यते बुधैः ।। ५ ।।
मुग्धं मृद्वक्षरं प्रोक्तमवृत्त्यत्यल्पवृत्ति वा ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं दीर्घवृत्त्युत्कटाक्षरम् ।। ६ ।।
वृत्त्येक[1]देशसम्बद्धं वृत्तगन्धि पुनः स्मृतम् ।
अथात्र क्रमतश्चैषामुदाहरणमुच्यते ।। ७ ।।

तत्र प्रथमं यथा—

१ शुद्धचूर्णकम्

स हि खलु त्रयाणामेव जगतां गतिः परमपुरुषः पुरुषोत्तमो दृप्तसमस्तदैत्य-दानवभरेण भङ्गुराङ्गीमिमामवनिमवलोक्य करुणरसामृतपरिपूर्णार्द्रहृदयस्तथा भुवो भारमवतारयितुं रामकृष्णस्वरूपेण यदुकुलेऽवततार । यः प्रसङ्गेनापि स्मृतोऽभ्यर्चितः प्रणतो वा गृहीतनामा पुंसः संसारसागरपारमवलोकयति ।

इति शुद्धचूर्णकम् १

१[१] अथ आविद्ध चूर्णकम्

यथा—

दलदलि[2]सहकारमञ्जरीविगलन्मकरन्दबिन्दुसन्दोहसन्दानितमन्दानिलवीज्य-मानदशदिगाभोगसुरभिसमयः समुपाजगाम । इत्यादि ।

इति आविद्ध चूर्णकम् १[१]

---

१ ख मूर्त्तैकदेश । २ ख दरदलित ।

१[२] अथ ललितं चूर्णकम्

यथा–

सत्ताभिराम माभिजितकाम रामणीयकधाम भानुवंशसौन्दर्यशौर्यादिगुणग्रामाभिराम भक्तजनपरिपूरितकाम सकललोकविश्रामधाम वामदेवाभिनन्द्यपौरुष राम जय जय ।

इत्यादि ।

॥ इति ललितं चूर्णकम् १[२] ॥

मुग्धमपि द्विविधम् । अवृत्ति अल्पवृत्ति चेति । तत्र–

१[३] अवृत्तिमुग्धं चूर्णकम्

यथा–

यत्र च नायिकानां नयने कमलमयमिव, वदने परिपूर्णचन्द्रमण्डलमयमिव हस्ते मृणालमयमिव जघने कदलीस्तम्भमयमिव विराजितं भवनकुलम् ।

इत्यादि ।

इत्यवृत्तिमुग्धं चूर्णकम् १[३]

१[४] अथ अल्पवृत्तिमुग्धं चूर्णकम्

यथा

कमलमिव चन्द्रबिम्बमिव मुखं, कुसुमचापमिव कामपाशमिव भ्रूयुगलं मीनवृन्दमिव खञ्जरीटयुगलमिव नीलोत्पलमिव [illegible]मिव नयनयुगलं, कोकयुग्ममिव सिन्दूरसमूहकमिव पुष्पगुच्छकमिव कनककलशयुगलमिव पयोधरयुगलम् ।

इत्यादि ।

इत्यल्पवृत्तिमुग्धं चूर्णकमिदम् १[४]

२ अथोत्कलिकाप्रायम्

यथा–

[illegible] सङ्कुलमणिमयमण्डपकोटिकुम्भितशोभितकोशल [illegible] निर्मितकल्पकमण्डपगोपुरप्रभासित तारापथिवृन्दगगनस्पर्शिसौधजालमयताराविकासविराजितभवनसमूहकिरणावलितबन्ध भ्रमत्कमनीयकार्तिकेय [illegible] कामिनीकुचविलसमानसामन्तसमानाधिराज मुकुटरत्नरागद्विगुणिताभिनवसमयूखानवरतकनकपीतवागसम्मानसन्तोषिताखिलयाचक वयनिकर्णवाक्पीयूषप्रयाणकालकोलाहलसमुच्छल [illegible] पापाधिपाधिपाविता शेषभुवनमण्डल मयदूरभेरीभांकाररसम्मिश्रितसन्तर्पणलातिघनघनस्वरघघुरु घघुरुस्वरसमुल्लसत्कम्पमानसकलफणिपतिफणालिकायमितविसृतमिरा [illegible] स्वलायप्रसरखरखुरगमुरमुरो [illegible] वीरारातिकायकुम्भिसमन्तातसमुद्भूतगिरि [illegible] भिरस्त्रसमस्तप्रपूरुहस्पृहप्रतिनृपतिविभासितभीताशेषभूपालरमसालयाम चतुर्दशविद्या

---

१ क चरणे । २ क कोटरेषु । ३ [illegible]

निधानदानपथातीतसुरद्रुमकथासमारम्भरम्भादिविबुधनारीगणोद्गीयमानकमनीय - कीर्त्तिभरभरणीयजनप्रवृद्धकृपापारावारवारणेन्द्रसमानसारसादितारातियुवतिवचो-वर्णदत्तकर्णकर्णबलिदीयमानोपमानमानवतीमानापमानोदनविशारदशारदेन्दुकुला-वदातकीर्त्तिप्रीणिताशेषजनहृदयानुरूपसमरसीमव्यापादितारातिवर्गचक्रवर्त्तिमहा - महोग्रप्रतापमार्त्तण्डममरविजयी महाराजाधिराज समाज्ञापयत्यशेषसामन्तगणान्। इत्यादि ।

यथा वा –

प्रणिपातप्रवणप्रधानाशेषसुरासुरादिवृन्दसौन्दर्यप्रकटकिरीटकोटिनिविष्टस्पष्ट-मणिमयूखच्छटाच्छुरितचरणनखचक्रविक्रमोद्दामवामपादाङ्गुष्ठनखरशिखरखण्डित-ब्रह्माण्डभाण्डविवरनिस्सरत्क्षरदमृतकरप्रकरभास्वरसुरवाहिनीप्रवाहपवित्रीकृत - विष्टपत्रयकैटभारे क्रूरतरससारापारसागरनानाप्रकारावर्त्तविवर्त्तमानविग्रह मामनुगृहाण । इत्यादि ।

इत्युत्कलिकाप्राय गद्यम् २.

३ अथ वृत्तगन्धि गद्यम् ।

यथा–

समरकण्डूलनिविडभुजदण्डमण्डलीकृतकोदण्डसिञ्जिनीटङ्कारोज्जागरितवैरि-नागरजनसस्तुतानेकविरुदावलीविराजमानमानोन्नतमहाराजाधिराज जय जय । इत्यादि ।

यथा वा, मालतीमाधवे[1]*—

गतोऽहमवलोकितालिलितकौतुक[1] कामदेवायतनम् । इत्यादि ।

यथा वा, कादम्बर्याम्—

पातालतालुतलवासिषु दानवेषु । इत्यादि ।

हरद्रवजितमन्मथो गुह इवाप्रतिहतशक्ति । इत्यादि ।

यथा वा–

जय जय जनार्दन सुकृतिजनमनस्तडागविकस्वरचरणपद्म पद्मनयन पद्मिनी-विनोदराजहंसभास्वरयश पटलपूरितभुवनकुहर हरकमलासनादिवृन्दारकवृन्दवन्द-नीयपादारविन्द द्वन्द्वनिर्मुक्त[2] योगीन्द्रहृदयमन्दिराविष्कृतनिरञ्जनज्योति स्वरूप नीरूप विश्वरूप स्वर्नाथनाथ जगन्नाथ मामनवधिदु खव्याकुल रक्ष रक्ष ।

इति वृत्तगन्धिगद्यम् ३

---

१ ख जानितकौतुक । २ ख द्वन्द्व द्वन्द्वनिर्मुक्त ।

*टिप्पणी—१ मालतीमाधवम्, प्रथमाङ्के विंशतिपद्यानन्तर गद्यभाग ।

ग्रन्थान्तरे तु प्रकारान्तरेण चतुर्विधमेव गद्यं तल्लक्षणमुपलक्षितं विचक्षणैः ।

यथा–

वृत्तवर्णोज्झितं गद्यं मुक्तकं वृत्तगन्धि च ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं कुलकं च चतुर्विधम् ॥ ८ ॥

तत्र–

आद्यं समासरहितं वृत्तभागयुतं परम् ।
अन्यं दीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकम् ॥ ९ ॥

तत्र मुक्तकं यथा—

गुरुर्वचसि पृथुरुरसि । इत्यादि ।

वृत्तगन्धि—'समरकण्डूल' इत्यादिनैवोदाहृतम् ।

उत्कलिकाप्रायं तु—व्यपगतघनपटलममलजलनिधिसदृशमम्बरतलं विलोकयते मज्जन् पूर्णपुण्यश्यामलं शार्वरं समस्तमायतं । इत्यादि ।

यथा वा प्राकृते चापि—

पणिसविसुभरपि[1] सिवसरविदलिदसमरपरिगदपवरपरबलहृणिदमअगलहत्थ हृसिवसभलजभणिह्विसरिससमत्तुसमूहससुहिमवैरिणमरणाभरीणिवह जय महाराय चक्कवट्टि करुणाभरा । इत्यादि ।

कुलकम् यथा–

गुणरत्नसागर जगदेकनागर कामिनीमदनजनविसरञ्जन करुणापरायणमारा यमनरपस्मरणसमासादितपुरुषार्थचतुष्टयप्रार्थनीयगुणगण शरणागतरक्षणविचक्षण जय जय । इत्यादि ।

इति श्रीकविशेखरचन्द्रशेखरविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके
पञ्चाशिकयमकप्रथम प्रकरणम् ॥८॥

---

१ ख गुरुवञ्चति । २ ख गुणरञ्जि ।

नवमं विरुदावली-प्रकरणम्

[प्रथम कलिकाप्रकरणम्]

अथ विरुदावली

अथाऽत्र विरुदावल्या सोदाहरणमुच्यते ।
लक्षण लक्षिताशेष-विशेषपरिकल्पनम् ॥ १ ॥

तत्र–

गद्य-पद्यमयी राजस्तुतिर्विरुदमुच्यते ।
तदावली समाख्याता कविभिर्विरुदावली ॥ २ ॥

किञ्च–

कलिकाभिस्तु कलिता विरुदावलिका मता ।
सवर्णा कलिका प्रोक्ता विरुदाढ्या मनोहरा ॥ ३ ॥

तत्र च

द्वादशार्द्धकला कार्या. चतु षष्टिकलावधि ।
तद्भेदाश्चात्र कथ्यन्ते लक्ष्यलक्षणसयुता ॥ ४ ॥
द्विगा रादिश्च मादिश्च नादिर्गलादिरेव च ।
मिश्रा मध्या द्विभङ्गी च त्रिभङ्गी कलिका नव ॥ ५ ॥

तत्र–

१ द्विगाकलिका

चतुर्भिस्तुरगै निजैर्द्विगा मैत्री हयद्वये ।

यथा–

जय जय वीर ! क्षितिपति हीर !

इत्यादि । एव चरणचतुष्टय बोद्धव्यमत्र । ग्रन्थविस्तरभयादस्मिन् प्रकरणे सर्वत्र पादमाद्‌-मुदाह्रियते ।

इति द्विगाकलिका १

२ अथ रादिकलिका

वेदै पञ्चकलै कार्या मैत्र्यर्द्धे रादिका कला ॥ ६ ॥

यथा –

कामिनीकलितसुख यामिनीरमणमुख ।

इत्यादि ।

इति रादिकलिका २

३ अथ मात्रिकलिका

अष्टभि षट्कलैर्मादिर्गैर्भ्यर्द्धे विरतिर्मता ।

यथा–

भूमीमानो प्रभवसि भुवने बहुलारम्भ
सततसदा नोभवता बहुमानोज्ज्वलतरवम्भ ।

इत्यादि ।

इति मात्रिकलिका ३

४ अथ मात्रिकलिका

सानुप्रासस्तु नो मात्रि—

यथा–

दमितशकट कमितसकूट
भमितमुकुट रचितकपट ।

इत्यादि ।

इति मात्रिकलिका ४

५ अथ नसादिकलिका

—गाथा नसादिरुच्यते ॥ ७ ॥

यथा–

धीरवर हीररव
चीरहर तीरचर ।

इत्यादि

इति नसादिकलिका ५

६ अथ मिश्राकलिका

तिसतगुरुकमिश्रा—

नसयोर्मिलितत्वगुरुकरहितस्तो मिश्रा । यथा–

क्षीरनीरविवेकधीर सकुरवीर
गोपिकाचीरहर हरे जय जय ।

इति मिश्राकलिका ६

७. अथ मध्याकलिका

—मध्या कलिकयोर्येवि ।

मध्ये गद्य कलावापि गद्ययो रसपद्ययो.[1] ॥ ८ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—मध्याकलिका तावत् द्विभेदा, तथा पादावन्ते च कलिका तयोः कलिकयोर्मध्ये यदि गद्य भवतीत्येको भेद ।१। तथा असवर्णयोर्मैत्रीरहितयोर्गद्ययोर्मध्ये वा कला-कलिका भवतीत्यपरो भेदः ।२। इत्येव द्विभेदा मध्याकलिका भवति । ऊह्यमुदाहरणम् ।

इति मध्याकलिका ७

८ अथ द्विभङ्गी कलिका

द्वितुर्यौ मधुरश्लिष्टौ षड्गा लान्ताश्चतुर्गुरु ।
अत्र भङ्गान्तयोर्मैत्री षड्भङ्गा स्याद् द्विभङ्गिका ॥ ९ ॥

यथा–

रङ्गरक्त सङ्गसक्त
चण्डचक्र दण्डशक्र
चन्द्रमुद्र सान्द्रभद्र
विष्णो जिष्णो !

इत्यादि ।

इति द्विभङ्गी कलिका ८

९, अथ त्रिभङ्गी कलिका

तत्र–

त्रिभिर्भङ्गैस्त्रिभङ्गी स्यान्नवधा सा तु कथ्यते ।
विदग्ध-तुरगौ पद्म-हरिणप्लुत-नर्त्तका ॥ १० ॥
भुजग-त्रिगते सार्द्धं वरतन्वा द्विपादिका ।
युग्मार्णभङ्गौ व्यावृत्तौ तनौ भौ मिश्रितौ तत ॥ ११ ॥

तत्र–

९[१] विदग्ध-त्रिभङ्गी कलिका

विदग्धे—

यथा–

सदीपितशर-मन्दीकृतपर-नन्दीश्वरपद-भावन-पावन ।

इत्यादि ।

इति विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ९ [१]

९[२] अथ तुरगत्रिभङ्गी कलिका

—तुरगे तद्वत् तभला शेषगो गुरु ।

---

१ क ख. रसवर्णयो ।

यथा–

चण्डीपतिप्रवण-पण्डीकृतप्रबल-खण्डीकृताहितविभो ।

इत्यादि ।

इति तुरगत्रिभङ्गी कलिका ६[२]

६[३] अथ पद्मत्रिभङ्गी कलिका

त्रिभङ्गीभिः पदैः पद्मत्रिभङ्गी—

यथा–पद्मावतीत्रिभङ्गीस्वरूपकलाबयोऽत्र स्वयमा पूर्वकवि समुदाहृतास्तास्तत एव द्रष्टव्या ।*

इति पद्मत्रिभङ्गी कलिका [६]३

६[४] अथ हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका

—हरिणप्लुते ॥ १२ ॥

षष्ठभङ्गा त्रिरावृत्ता नगणा[1]मिलितौ च भौ ।

यथा–

प्रतिनत-देवाराधित बहुविधसेवासाधित
सुरवरदेवासि प्रिय-दायक   ायक !

इत्यादि ।

इति हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका ६[४]

६[५] अथ नर्तकत्रिभङ्गी कलिका

हरिणो नगणान्तस्थैर्नर्तकः—

[स्या] हरिणप्लुत एव नगणानन्तरं यदि नगण-नगण-नगणतो भवेत् तदा नर्तकी भवतीति शेषः । यथा–

मनसिजकल्पाराधित बहुबलभूपाबाधित
बहुतरभूपालम्भक निजकुलरम्भक ।

इत्यादि ।

इति नर्तकत्रिभङ्गी कलिका ६[५].

६[६] अथ भुजङ्गत्रिभङ्गी कलिका

—भुजगे पुनः ॥ १३ ॥

त्र्यावृत्ता नगणा जाता युग्मे तुर्ये च भङ्गिनः ।
क्वचित्तुर्ये न भङ्गः स्यात् मिलितौ मगणौ ततः ॥ १४ ॥

---

१ क नगणा ।

*टिप्पणी—११ १७ ४२ पृष्ठे द्रष्टव्या ।

यथा–

दम्भारम्भामितबल जम्भालम्भाधिकबल
जम्भासम्भावितरण-मण्डित पण्डित ।

क्वचित्तुर्ये न भङ्ग, इति समुदाह्रियते । यथा–

जम्भारातिप्रतिबल-दम्भावाधानतदल
सम्भारासादनचण-दारणकारण ।

इति भुजगत्रिभङ्गी कलिका ६[६]

६[७]. अथ त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

तृतीये कृतभङ्गा त्रिर्मनना भौ च वल्गिता ।
त्र्यावृत्तास्तनभा भोऽन्ते ललितात्रिगता द्वये ॥ १५ ॥

[ग १०] अस्यार्थ — त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका तावद् द्विविधा, यत्र मनना –मगण-नगण-नगणास्त्रयो गणास्त्रिवारत्रय भवन्ति, अन्ते भौ–भगणद्वय, तृतीये च वर्णे भङ्ग. सा वल्गिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका । यस्या च त्र्यावृत्तास्तनभा –तगण-नगण-भगणास्त्रयो गणा भवन्ति, एतस्यान्ते भो–भगण एक एव भवति । परन्तु द्वये–द्वितीये वर्णे भङ्ग सा ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका इति द्वैविध्यम् । क्रमेण यथा–

६[७-१] अथ वल्गिता त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

बाणाली-हतरिपुगण तालाली-तत-शरवण
मालाली वृततनुवर-दायक नायक !

इत्यादि ।

इति वल्गिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

[६[७-२]. अथ ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

नाकाधिपसमनायक पाकाधिकसुखदायक
राकाधिपमुखसायक सुन्दर !

इति ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका
एव त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका द्विविधोवाहृता ६[७] *]

६[८] अथ वरतनुत्रिभङ्गी कलिका

षष्ठभङ्गा वरतनुस्त्र्यावृत्ता नयना लघु ।
भौ च—

यथा–

अविकलताराविपमुख अधिगतनारायणसुख
बहुविधपारायणपर पण्डित मण्डित !

---

*[-] कोष्ठगतोंश क प्रतौ नास्ति ।

इत्यादि । किञ्च–

—भङ्गान्तसंयुक्ता छविरेषैव कथ्यते ॥ १६ ॥

यथा–

चतुरिमचञ्चद्गुणगण विपमदुरन्तप्रणचय
मधुरिमचन्द्रस्तवकित कुङ्कुमभूषित ।

इत्यादि ।

इति द्विविधा वरतनुत्रिभङ्गी कलिका ६[८].

६[९] अथ द्विपादिका नामभङ्गा कलिका

द्विपादिका च कलिका सप्तविधा परिकीर्तिता ।
तथावृत्ता सा तु विज्ञे या छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ १७ ॥

तत्र–

मुग्धा प्रगल्भा मध्या च शिथिला मधुरा तथा ।
तरुणी चेत्यमी भेदा द्विपदाया उदीरिताः ॥ १८ ॥

तत्र–

६[९–१] मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मतसा मतसाश्चैव युग्मभङ्गा मयुग्मकम् ।
मुग्धा स्यात्—

यथा–

कम्पादेशाकम्पित चम्पाघोशासम्भित
चन्दन नन्दन !

इत्यादि ।

इति मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[९–१]

६[९–२] अथ प्रगल्भा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

—मद्वये कर्णौ चेत् प्रगल्भा तथा मता ॥ १९ ॥

[व्या] मद्वये– मगणद्वयपश्चात्ते पादेऽस्मिन्नेव चेत् कर्णौ भवतस्तदा मुग्धैव प्रगल्भा मता इत्यर्थः । यथा–

देवाधीशाराधक सेवाशेषासाधक
भूमीमानो

इत्यादि ।

इति प्रगल्भा-द्विपादिका-द्विभङ्गी कलिका ६[९ २]

८[८-२] अथ मध्या द्विगादिका द्विभङ्गी कलिका

उक्ता मभौ समौ मध्या भौ नलौ वा भनौ जलौ ।
ननसा लद्वय वापि शेषे वा नजना लघू ॥ २० ॥

[व्या०] अस्यार्थ —मध्यायास्तावत् चत्वारो भेदा लक्ष्यन्ते । यथा—मभौ–मगण-भगणौ, अथ च समौ–सगण-मगणौ, ततो भौ–भगणद्वय यत्र भवति, एतादृशी मध्या उक्ता–कथिता इत्यर्थ । इति प्रथमो भेद ।

यथा–

नित्य नृत्य कलयति कालो केलीमञ्चति चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्याया. प्रथमो भेद ।१।

अथ मध्याया द्वितीयो भेद

[व्या०] 'नलौ वा भनौ जलौ' इति । यत्र नलौ–नगणलघू, अथ च भनौ–भगणनगणौ, ततश्च जलौ —जगणलघू भवत । इति द्वितीयो भेद ।

यथा–

रणभुवि अञ्चति रणभुवि चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्याया द्वितीयो भेद ।२।

अथ मध्याया तृतीयो भेद

[व्या०] 'ननसा लद्वय वापि' इति । ननसा –नगण-नगण-सगणा , अथ च लघुद्वय भवति यत्र स तृतीयो भेद । यथा—

अतिशयमधिरणमञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्याया तृतीयो भेद ।३।

अथ मध्यायाश्चतुर्थो भेद

[व्या०] 'शेषे वा नजना लघू' इति । शेषे–चतुर्थे भेदे नजना –नगण-जगण-नगणा:, अथ च लघू–लघुद्वय यत्र भवति स चतुर्थो भेद । यथा–

अतिशयमञ्चति रणभुवि ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाश्चतुर्थो भेद ।४।

एवं मध्याया प्रस्तकीर्णाश्चत्वारो भेदाः सलक्षणाः समुदाहृत्य प्रदर्शिताः ।

इति मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[१-३]

६[१-४] अथ शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मुग्धाया भद्वये विप्रा यदि सा शिथिला मता ।

[व्या०] मुग्धायाः-प्रथमोक्तायाः भद्वये-भगणद्वयस्थाने प्रावेशन्यायेन यदि विप्र-चतुर्लघ्वात्मको गणो भवति तदा सा शिथिला मता भवतीत्यर्थः ।

यथा-

केलीरङ्गारम्भित-नारीसङ्गासम्भित मनसिज ।

इत्यादि ।

इति शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[१-४]

६[१-५] अथ मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

द्रुपावृत्ता ममसा सान्ता भद्वयं मधुरा मता ॥ २१ ॥

[व्या०] भभरयं द्रुपावसानं पूर्वत्र सकल सम्बद्धम् । तथा च ममसाः-मगण मगणसगणवर्जित् द्रुपावृत्ता, सान्तो सान्ता-सगणान्ता भवन्ति । अथ च भद्वय-भगणद्वयं भवति तदा मधुरा मता-सम्मता भवतीत्यर्थः । यथा-

तारापाराधिकमुख-पारावाराशयसुख-दायक नायक ।

इत्यादि ।

इति मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[१-५]

६[१-६] अथ तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मधुरा भद्वये कर्णौ तरुणी समनन्तरम् ।

[व्या०] एतत्पादः-मधुरायाः मगणमगणसगणान्तायाः भद्वये-भगणद्वयस्थाने पूर्वोक्तन्यायेन यदि कर्णौ भवतस्तदा तरुणी भवति ।

ताराहारागतमुख पारावारागतसुख-पाता-धाता ।

इत्यादि ।

इति तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[१-६]

इति द्विपादिका कलिका युग्मभङ्गिनो भेदाः प्रोक्ता इति शेषः ।

इति विरुदावल्यामवान्तर-द्विभङ्गी-त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरणं प्रथमम् ।

[विरुदावल्यां द्वितीय चण्डवृत्त-प्रकरणम्]

अथाभिधीयते चण्डवृत्त विरुदमुत्तमम् ।

शुद्धादिभेदसहित कलिका-कल्पनान्वितम् ॥ १ ॥

[व्या०] आदिपदेन सकीर्णा गभितमिश्रिता गृह्यन्ते तांश्च यथास्थानमुदाहरिष्याम । अथ महाकलिकारूप चण्डवृत्तम्, तच्च द्विविध–सलक्षण-साधारणभेदेन ।

तत्र–

उक्तलक्षणसम्पूर्णं सलक्षणमुदीरितम् ।
अन्यत् साधारण प्रोक्त चण्डवृत्त द्विधा बुधै ॥ २ ॥

अथ परिभाषा

तत्र–

मधुर-श्लिष्ट-सश्लिष्ट-शिथिल-ह्रादिभेदत ।
सयोगा पञ्चह्रस्वाच्च दीर्घाच्च दशधा मता ॥ ३ ॥
अनुस्वारविसर्गौ तु न दीर्घव्यवधायकौ ।
स्वस्ववर्गान्त्यसयुक्ता मधुरा इतरे पुन ॥ ४ ॥
श्लिष्टा सरेफशिरस सश्लिष्टास्त्वन्ययोगिन ।
यमात्रयुक्ता इत्युक्ता शिथिला ह्रादिनस्त्वमी ॥ ५ ॥
हृशेखरा साम्यमत्र नणयो खषयोस्तथा ।
जययोर्बवयोरह् [1] सच्चयो [2] सशयोरपि ॥ ६ ॥
ह्यप्ययो [3] र्भवध्वयोश्चैव क्षच्छयोरित्सवर्णयो ।
शषयो रसच्छयोश्चैव क्षस्ययोरपि वर्णयो ॥७॥
श्लिष्टसश्लिष्टयोरुक्तौ सग्राह्या मधुरेतरा ।
इत्येपा परिभाषाऽत्र राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ८ ॥

इति परिभाषा

अथ चण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य व्यापकस्य व्याप्यव्यापकभावेन पुरुषोत्तमादि–कुसुमान्त चतुस्त्रिंशति ३४ प्रभेदा भवन्ति । तेषा चोद्देशक्रमोऽनुक्रमणिकाप्रकरणे स्फुटतर वक्ष्यमाणत्वान्नेह प्रपञ्च्यते ।

---

१. ख. जययो वपयोरह् । २ ख सच्चयो । ३ क त्यययो ।

एव मध्याया भसकीर्णादिश्चत्वारो भेदा' सलक्षणा' समुदाहृत्य प्रदर्शिता' ।

इति मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[१-३]

६[१-४] अथ शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मुग्धाया मद्वये विप्रो यदि सा शिथिला मता ।

[व्या] मुग्धाया–प्रथमोक्तायाः मद्वये–मगणद्वयस्थाने पादेऽभ्यासेन यदि विप्र–चतुर्लघ्वात्मको गणो भवति तदा सा शिथिला मता भवतीत्यर्थ ।

यथा–

केसीरङ्गारञ्जित–नारीसङ्गासञ्जित मनसिज ।

इत्यादि ।

इति शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[१-४]

६[१-५] अथ मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

द्वधावृत्ता भभसा सान्ता मद्वयं मधुरा मता ॥ २१ ॥

[व्या] भभरयं द्वधावृतत्वं पूर्ववत् सर्वत्र संबद्धम् । तथा च भभसा –भगण-भगणसगणाश्चेत् द्वधावृत्ता सन्तो सान्ता–सान्ता भवन्ति । अथ च मद्वयं–मगणद्वयं भवति तदा मधुरा मता–सम्मता भवतीत्यर्थः । यथा–

तारादाराधिकमुख–पारावाराधमसुख–दायक मामक ।

इत्यादि ।

इति मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[१-५]

६[१-६] अथ तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मधुरा मद्वये कर्णो तरुणी सममन्तरम् ।

[व्या] अन्तायाः–मधुरायाः भभगणभगणसगणान्तायाः मद्वये–मगणद्वयस्थाने पूर्वोक्ताभ्यासेन यदि कर्णो भवतस्तदा तरुणी भवति ।

ताराहारागतमुख पारावारागतसुख-पाता-दाता ।

इत्यादि ।

इति तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[१-६]

इति द्विपादिका कलिका युग्मभङ्गिनो भेदा' प्रोक्ता इति शेष' ।

इति विरुदावल्यामद्यावसर–द्विभङ्गी-त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरण प्रथमम् ।

[विरुदावल्यां द्वितीय चण्डवृत्त-प्रकरणम्]

अथाभिधीयते चण्डवृत्त विरुदमुत्तमम् ।
शुद्धादिभेदसहित कलिका-कल्पनान्वितम् ॥ १ ॥

[व्या०] आदिपदेन सकीर्णा गभितमिश्रिता गृह्यन्ते तांश्च यथास्थानमुदाहरिष्याम.। अथ महाकलिकारूप चण्डवृत्तम्, तच्च द्विविध–सलक्षण-साधारणभेदेन ।

तत्र–

उक्तलक्षणसम्पूर्णं सलक्षणमुदीरितम् ।
अन्यत् साधारण प्रोक्त चण्डवृत्त द्विधा बुधै ॥ २ ॥

अथ परिभाषा

तत्र–

मधुर-श्लिष्ट-सश्लिष्ट-शिथिल-ह्लादिभेदत ।
सयोगा पञ्चह्रस्वाच्च दीर्घाच्च दशधा मता ॥ ३ ॥
अनुस्वारविसर्गौ तु न दीर्घव्यवधायकौ ।
स्वस्ववर्गान्त्यसयुक्ता मधुरा इतरे पुन ॥ ४ ॥
श्लिष्टा सरेफशिरस सश्लिष्टास्त्वन्ययोगिन ।
यमाश्रयुक्ता इत्युक्ता शिथिला ह्लादिनस्त्वमी ॥ ५ ॥
हशेखरा साम्यमत्र नणयो खषयोस्तथा ।
जययोर्बवयोरह [1] सच्चयो [2] सशयोरपि ॥ ६ ॥
ह्यप्ययो [3] र्भवध्वयोश्चैव क्षच्छयोरित्सवर्णयो ।
शपयो रसच्छयोश्चैव क्षख्ययोरपि वर्णयो ॥७॥
श्लिष्टसश्लिष्टयोरुक्तौ सग्राह्या मधुरेतरा ।
इत्येषा परिभाषाऽत्र राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ८ ॥

इति परिभाषा

अथ चण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य व्यापकस्य व्याप्यव्यापकभावेन पुरुषोत्तमादि–कुसुमान्त चतुस्त्रिंशति ३४ प्रभेदा भवन्ति । तेषा चोद्देशक्रमोऽनुक्रमणिकाप्रकरणे स्फुटतर वक्ष्यमाणत्वान्नेह प्रपञ्च्यते ।

---

१ ख. जययो बवयोरह. । २ ख सच्चयो । ३ क त्यथयो ।

तत्र प्रथमम्–

१ पुरुषोत्तमचण्डवृत्तम्

एवं सर्वत्र–

द्विसप्तौ तुर्याष्टमौ दीर्घौ त्रि-षष्ठौ सगणौ च म ।
पुरुषोत्तमचण्ड स्यात्—

[व्या.] अस्यार्थ:—यत्र चतुर्थाष्टमौ वर्णौ द्विसप्तौ-तदेकाधिकसंख्यकौ च, तृतीय-षष्ठौ च दीर्घौ भवत: । तत्र गणनियममाह—'सगणौ' इति । सगणौ भवत: । ततश्च म–मगणो भवति तद् पुरुषोत्तमाख्यं महाकविकाव्यं चण्डवृत्तं भवति । सप्ताक्षरमिदं वृत्तम् । अस्मिन् प्रकरणे सर्वत्र विरामाद्यमेव मयाऽत्रोपदिश्यते । यथा–

क्षितिजार्हन आतप्रभ ।

इत्यादि ।

इति पुरुषोत्तमचण्डवृत्तम् १

२ अथ तिलकं चण्डवृत्तम्

—सादौ नौ शेषगौ च नौ ॥ ९ ॥

मधुरो दशमो वर्णस्तिलकम्—

[व्या.] अयमर्थ: — यत्र सादौ–सगणस्यादिभूतौ नौ–नगणौ यत्र च सगणस्य शेषतो-ऽन्ते च वर्तमानौ नगणावेव भवत: । अन्यभूतस्य सगणस्यावसानयोर्नगणौ भवत इति फलितोऽर्थ: । किञ्च—दशमो वर्णो मधुर:—स्वधर्मास्वसंयुक्त: परतवर्णो भवति । तत्तिलकं नाम चण्डवृत्तस्यावान्तरो भेद इति । पञ्चदशाक्षरमिदं पदम् । यथा–

विषमविशिखगणगञ्जितपरवश ।

इत्यादि । यथा वा–

मनसकमलरुचिसञ्जनपद्धपद
नटनपटिमहृतकुण्डलिपतिमद
मधुकुसुमफुल्लसुन्दररुचिभर
भनतहिदुपमितसम्पुरपटधर
तरणिसुहितृतटमञ्जुलनटवर
नयननटनचितखञ्जनपरिकर
मुरतटगतहरिचन्दनपरिमल
पशुपयुवतिगणनन्दन नरवर
नयमन्मधुरदृगञ्चलमभिमसित
मुखपरिमलभरसम्पसदभिवृत

शरदुपमितशशिमण्डलवरमुख
कनकमकरमयकुण्डलकृतमुख
युवतिहृदयशुकपञ्जरनिभ(ज)भुज
परिहितविचकिलमञ्जर(ञ्जुल)शिरसिज
सुतनुवदनविधुचुम्बनपटुतर
दनुजनिविडमदडुम्बनरणखर

धीर !

रणति हरे[1] तव वेणी नार्यो दनुजाश्च कम्पिता खिन्ना. ।
वनमनपेक्षितदयिता करवालान्प्रोज्झ्य धावन्ति ।

कुङ्कुमपुण्ड्रक गुम्फितपुण्ड्रक-
सकुलकङ्कण कण्ठगरङ्गण

देव !

सारङ्गाक्षीलोचनभृङ्गावलिपानचारुभृङ्गार ।
त्वा मङ्गलश्रृङ्गार श्रृङ्गाराधीश्वर स्तौमि ।

विरुदमिद तिलकम् २.

३. अथ अच्युत चण्डवृत्तम्

—वाऽच्युत पुन ।

[व्या०] अत्राय शब्दार्थश्चकार । तेन अच्युताख्य चण्डवृत्तमुच्यत इत्युक्त भवति । लक्षण गणनियमपूर्वकमाह—

नयौ चेत् पञ्चमो दीर्घ षष्ठ श्लिष्टपरो नजौ ॥ १० ॥

सर्वशेषे—

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र नयौ–नगणयगणौ चेद् भवत, किञ्च पञ्चमो वर्णो यत्र दीर्घो भवति, षष्ठो वर्ण श्लिष्टपर –श्लिष्ट पर स सप्तमो यस्य स तादृशो भवति । एव चत्वारो-ऽष्टौ वा पादा यथेष्ट भवन्ति । सवशेषे नजौ–नगण-जगणौ भवत सोऽच्युताख्यश्चण्डवृत्तस्या-वान्तरो भेद इति । चतुर्विंशत्यक्षरमिद पदम् । यथा–

प्रसरदुदार-द्युतिमरतार-प्रगुणितहार-स्थिरपरिवार ।

इत्यादि । शेषेषु—

कृतरणरग । इत्यादि ।

यथा वा—

जय जय वीर स्मररसधीर द्विजजितहीर प्रतिभटवीर
स्फुरदुप(रु)हार-प्रियपरिवारच्छुरितविहार-स्थिरमणिहार

---

१. क. हते ।

तादृक्क्रीडाण्डकोटीवृतजलकुडवा यस्य वैकुण्ठकुल्या ,
कर्त्तव्या तस्य का ते स्तुतिरिह कृतिभि प्रोक्ष्य लीलायितानि ॥

अपि च–

निविडतरतुरापाडन्तरीणोष्मसपद्[1]-
विघटनपटुखेलाडम्बरोर्मिच्छटस्य ।
सगरिमगिरिराजच्छत्रदण्डायितश्री-
र्जगदिदमघशत्रोः सव्यबाहू[2]र्धिनोतु ॥

अभ्रमुपतिमदमर्द्दिपदक्रम
विभ्रमपरिमललुप्तसुहृच्छ्रम
दुष्टदनुजदलदर्पविमर्द्दन
तुष्टहृदयसुरपक्षविवर्द्धन
दर्प्पकविलसितसर्गनिरर्गल
सर्पतुलितभुजकर्णगकुण्डल[3]
निर्मलमलयजचर्चितविग्रह
नर्म्मलसितपरिवर्जितविग्रह[4]
दुष्करकृतिभरलक्षणविस्मित-
पुष्करभवभयमर्द्दनसुस्मित
वत्सलहलधरतर्क्कितलक्षण
वत्सरविरहितवत्ससुहृद्गण
गर्जितविजयिविशुद्धतरस्वर-
तर्जितखलगण दुर्जनमत्सर
धीर !

तव मुरलीध्वनिरसरीकामाम्बुधिवृद्धिशुभ्राशु ।
अचटुलगोकुलकुलजाधैर्याम्बुधिपानकुम्भजो जयति ।

धृतगोवर्द्धन सुरभीवर्द्धन
पशुपालप्रिय रचितोपक्रिय
वीर !

भुजङ्गरिपुचन्द्रकस्फुरदखण्डचूटाङ्कुरे,
निरङ्कुशदृगञ्चलभ्रमिनिवद्धभृङ्गभ्रमे ।

---

१ गोवि सम्यग् । २. गोवि. सत्यबाहु । ३. गोवि. कुड्मल । ४ गोवि. नर्मल-
सितहृतसपविनिग्रह ।

प्रकटितरास स्तवकितहास स्फुटपटवास-स्फुरितविलास
ध्वनदलिजाल-स्तुतवनमाल व्रजकुलपाल प्रणयविशाल
प्रविलसदंस भ्रमदवतंस क्वणदुरुवंश-स्वनहृतहंस
प्रशमितदाव प्रणयिषु सावहितमसितभाव स्तनितविराव
स्तनघनरागश्रितपरभाग क्षतहरियाग त्वरितमृगाग
कुसरससग'
वीर !

स्थिरविनियमितवीते धीरताहारिगीते
प्रियजनपरिवीते कुङ्कुमालेपपीते ।
कलितनवकुटीरे काञ्च्युदञ्चत्कटीरे
स्फुरतु रसगभीरे गोष्ठवीरे रतिर्मे ॥

अम्बाविनिह्नुतचुम्बामसतर
बिम्बाधरमुखसम्बाधक जय !
देव !

दृष्ट्वा ते पदनसकोटिकान्तिपूर
पूर्णिमामपि शशिनो धृतदुरापम् ।
निर्विण्णो मुरहर मुख्यरूपदर्पे
कन्दर्पे स्फुटमशरीरतामयासीत् ॥

इति अच्युतं चण्डवृत्तम् ३

४ अथ वर्धितञ्चण्डवृत्तम्

—यदि शिलष्टा द्वि-नव-द्वादशा अपि ।
वर्धितो भगणा भोम —

[व्या.] एतदुक्तं भवति यदि द्वि-नव-द्वादश अपि वर्णाः शिलष्टाः—संयोगपरस्थाः स्युस्तदा वर्धित इति नाम चण्डवृत्तं भवतीति । तत्र च गणनियममाह—भगणा—भगण-नगणभगणाः अथ च भो—भगणः ततो म—लघुरित्यर्थः । गणोक्ताक्षररचितं पदं सोत्कृष्टा यत्र विभिवेष्टितं भवति तद् वर्धिताख्यं चण्डवृत्तम् । यथा—

दुर्जयपरबलगर्वमपजित ।

इत्यादि ।

यथा वा श्रीगोविन्दविरुदावल्याम्—

यस्या ब्रह्माण्डभाण्डे सरसिजनयन स्पर्द्धमाक्रीडमानि
स्थाणुर्भस्म च लेलापुरसितमहिना तानि येन व्ययोजि ।

---

१ गोवि इत्यत्रतन्न नास्ति ।

खलिनीडुम्बक मुरलीचुम्बक
जननीवन्दक - पशुपीनन्दक
वीर ।

अनुदिनमनुरक्त पद्मिनीचक्रवाले,
नवपरिमलमाद्यच्चञ्चरीकानुकर्षी ।
कलितमधुरपद्म कोऽपि गम्भीरवेदी,
जयति मिहिरकन्याकूलवन्याकरीन्द्र ।

इति सविरुद समग्रोदाहरणम् ।

इति रणश्चण्डवृत्तम् ५.

६. अथ वीरश्चण्डवृत्तम्

—मभौ नौ वीरश्चण्डके ॥ १२ ॥
आद्यवर्णात्तु चत्वारो वर्णा स्युर्मधुरेतरा. ।

[व्या०] अस्यार्थं —यत्र मभौ–मगणभगणौ, अथ च नौ–नगणौ भवत । किञ्च, आद्यवर्णात्–प्रथमाक्षरात् चत्वारो वर्णाः मधुरेतरा – केवल श्लिष्टा एवेत्यर्थः । तत् वीरचण्डकाख्य चण्डवृत्त भवति । इदमपि द्वादशाक्षरमेव पदम् । अत्रापि पदविन्यास पूर्ववदेव । बाहुल्येन द्वादशपदमिद भवति, तथा दृष्टत्वादिति । यथा–

युद्धक्रुद्धप्रतिभटजयपर ।

इत्यादि ।

एतस्यैव अन्यत्र वीरभद्र इति नामान्तरम् । यथा–

उद्यद्दिव्य द्युतिपरिचितपट
सर्प्पत्सर्प्पस्फुरदुरुभुजतट
स्वस्थस्वस्थत्रिदशयुवतिनुत
रक्षद्दक्षप्रियसुहृदनुसृत
मुग्धस्निग्धव्रजजनकृतसुख
नव्यश्रव्यस्वरविलसितमुख
हस्तन्यस्तस्फुटसरसिजवर
सज्जद्गर्ज्जत्खलवृषमदहर
युद्धक्रुद्धप्रतिभटलयकर
वर्णस्वर्णप्रतिमतिलकधर
रुष्यत्तुष्यद्युवतिषु कृतरस
भक्तव्यक्तप्रणय मनसि वस
वीर !

पतङ्गदुहितुस्तटीवनकुटीरकेलिप्रिये
परिस्फुरतु मे मुहुस्त्वयि मुकुन्द गुढा रतिः ।

इति विरुदमिदं वर्णितम् ४

५ अथ रणदण्डकवृत्तम्

—त्रि-पञ्च-नव-सप्तमा ॥ ११ ॥
मादिरेकादशान्तर्वैव विश्लिष्टा जो रो जरौ लघु ।
सर्वशेषे रणाख्ये स्यात्—

[यथा] इदमाकृतम् । अत्र त्रि-पञ्च-नव-सप्तमा वर्णाः मादिरेकादशान्तर्वेति च षड्वर्णा विश्लिष्टा भवन्ति । तत्र गणनियममाह—'जो रो जरौ लघु' जो-जगण रो-रगण भवतीति शेषः । अत्र च जरौ—जगणरगणौ एव भवतः ततः सर्वशेषे पदे चैको लघुर्भवति । तत् रणाख्यं दण्डकं महाकविकाव्यवाक्यदर्शनं भवति । द्वादशाक्षरमिदं पदम् । चतुर्दशाक्षरं वाक्यं पदं भवति । विरामाभावेऽपि एकैकस्याधिकस्य षष्ठोर्ध्वमावित्याक्रम । पदविन्यासस्तु स्वेच्छया भवतीत्युपदेशः । तथा वाक्यपदे विरामाद्यपि लघुराखानमतः—जगण भगणौ क्रमशो भवन्तीति वा । यथा—

प्रगल्भविक्रम प्रसर्पिसत्क्रम ।

इत्यादि ।

प्रपन्नवर्द्धनक प्रसन्नगर्द्धनक ।

इत्युत्तरम्[३] ।

एतस्य वाक्यस्य समग्र इति नामान्तरम् । तथोदाहृतमपि श्रीरूपस्वामिभिः श्रीगोविन्द विरुदावल्याम् । यथा—

अनिष्टखण्डन[४] स्वभक्तमण्डन
प्रयुक्तयन्त्रन प्रपन्ननन्दन
प्रसन्नचन्द्रक स्फुरद्दृढमण्डल
श्रुतिप्रसम्बक भ्रमत्कदम्बक
प्रविष्टकन्दरप्रकृष्टसुन्दर
स्वविष्ठसुन्दरक-प्रसर्पवन्धुरक[५]
देव ।

वृन्दारकतरवीते वृन्दावनमण्डले वीर ।
मन्दितया मधवृन्दं सुन्दरवृन्दारिका रमय ।

---

१ क सप्तमोर्ध्वमावित्याशयः । २ ख. ग । ३ क इत्यन्तम् । ४ गोवि परिष्वङ्ग । ५ गोवि स्वविष्ठितिन्दुरप्रसर्पवन्धुर ।

खलिनीडुम्बक मुरलीचुम्बक
जननीवन्दक - पशुपीनन्दक
वीर ।
अनुदिनमनुरक्त. पद्मिनीचक्रवाले,
नवपरिमलमाद्यच्चञ्चरीकानुकर्षी ।
कलितमधुरपद्म कोऽपि गम्भीरवेदी,
जयति मिहिरकन्याकूलवन्याकरीन्द्र ।

इति सविरुद समग्रोदाहरणम् ।

इति रणश्चण्डवृत्तम् ५.

६. अथ वीरश्चण्डवृत्तम्

—मभौ नौ वीरचण्डके ॥ १२ ॥
आद्यवर्णात्तु चत्वारो वर्णा स्युर्मधुरेतरा. ।

[व्या०] अस्यार्थं —यत्र मभौ—मगणभगणौ, अथ च नौ—नगणौ भवत । किञ्च, आद्यवर्णात्—प्रथमाक्षरात् चत्वारो वर्णा. मधुरेतरा – केवल क्लिष्टा एवेत्यर्थः । तत् वीरचण्डकाख्य चण्डवृत्त भवति । इदमपि द्वादशाक्षरमेव पदम् । अत्रापि पदविन्यास पूर्ववदेव । बाहुल्येन द्वादशपदमिव भवति, तथा दृष्टत्वादिति । यथा—

युद्धक्रुद्धप्रतिभटजयपर ।

इत्यादि ।

एतस्यैव अन्यत्र वीरभद्र इति नामान्तरम् । यथा—

उद्यद्विद्युद्द्युतिपरिचितपट
सर्प्यत्सर्प्यस्फुरदुरुभुजतट
स्वस्थस्वस्थत्रिदशयुवतिनुत
रक्षद्दक्षप्रियसुहृदनुसृत
मुग्धस्निग्धव्रजजनकृतसुख
नव्यश्रव्यस्वरविलसितमुख
हस्तन्यस्तस्फुटसरसिजवर
सज्जद्गर्ज्जत्खलवृषमदहर
युद्धक्रुद्धप्रतिभटलयकर
वर्णस्वर्णप्रतिमतिलकधर
रुष्यत्तुष्यद्युवतिषु कृतरस
भक्तव्यक्तप्रणय मनसि वस
वीर !

प्रघुरपरमहर्षे काममाचम्यमाने
प्रभसमकरचन्द्रे धावदवाक्रान्तकुक्षौ ।
प्रमहुर जगदण्डाहिण्डिहिन्डोमह्रासे
स्फुरतु तव गभीरे केलिसिन्धौ रतिर्मे ।
उद्गीर्णसारुण्य विस्तीर्णकारुण्य
गुञ्जालतापिञ्छपुञ्जावतंसापिञ्छ ।
धीर !

उचित पशुपत्यलंक्रियायै नितरां नन्दितरोहिणीयशोद ।
तव गोकुलकेलिसिन्धुरस्मा भगवद्दीपयति स्म कीर्तिचन्द्र ।
इति वीरचण्डोदाहरणमिदम् ।

इति वीरचण्डवृत्तम् ।६।

७ अथ शाकचण्डवृत्तम्

भौ रो स पञ्चम श्लिष्टो दीर्घौ नवम-सप्तमौ ॥ १३ ॥
द्वितीयो मधुरः शाके—

[व्या] प्रथमार्थं—शाके-शाकाख्ये चण्डवृत्ते प्रथमं भौ-भगणौ अथ च रो-रगण ततो सो लघु । किञ्च-पञ्चमो वर्ण श्लिष्ट-संयुक्तो भवति नवमसप्तमौ दीर्घौ भवत द्वितीयो मधुर-परसवर्णो वर्णो यत्र भवतीत्यर्थः । तत् शाकनामकं चण्डवृत्तं भवति । अग्रे-ऽर्थं वर्ण विन्यासः पूर्ववत् । यथा—

सञ्चितचन्द्र-मुखाभिराम ।

इत्यादि ।

इति शाकचण्डवृत्तम् । ७ ।

८ अथ मातङ्गखेलितं चण्डवृत्तम्

—अथ मातङ्गखेलितम् ।
विश्लिष्टौ वा मधुरौ बाणदशमौ रौ यतौ यदि ॥ १४ ॥
बाणे मङ्गलम्[1] मैत्री च प्रथमाष्टमषष्ठका ।
तृतीयश्चात्र दीर्घा स्यु —

[व्या] इदमधानुसन्धेयम्— अथ मातङ्गखेलित-मातङ्गखेलिताभिधानं चण्डवृत्तं लक्ष्यत इति शेष । अथ बाणे बाणाः । तथा च मम आचरणयो बाण—पञ्चम दशमश्चेति द्वौ वर्णौ विश्लिष्टौ मधुरौ-परसवर्णौ च भवत । तथा रौ-रगणौ अथ च यतौ-यगणतपू यदि

1 क बाणेमङ्गुरम ।

भवतस्तथा चाणे–पञ्चमे भङ्गश्च–मैत्री च यदि भवति, तथा प्रथमाष्टमषष्ठकाः वर्णास्तृतीयश्च वर्णश्चेच्चत्वारोऽत्र वर्णा दीर्घा स्युस्तदा मातङ्गखेलिताभिधानं चण्डवृत्तं भवति। दशाक्षरं पदमिदम्। अत्र पदविन्यासः स्वेच्छया विधेयः। यथा–

साधितानन्तसारसामन्त।

इत्यादि। यथा वा–

नाथ हे नन्द-गेहिनीशन्द
पूतनापिण्डपातने चण्ड
दानवे दण्डकारकाखण्ड-
सारपौगण्डलीलयोद्दण्ड
गोकुलालिन्दगूढ गोविन्द
पूरितामन्द-राधिकानन्द
वेतसीकुञ्ज-माधुरीपुञ्ज
लोकनारम्भजातसंरम्भ-
दीपितानङ्गकेलिभागङ्ग-
गोपसारङ्ग-लोचनारङ्ग-
कारिमातङ्गखेलितासङ्ग-
सौहृदाशङ्कयोषितामङ्क-
पालिकालम्ब चारुरोलम्ब-
मालिकाकण्ठ कौतुकाकुण्ठ
पाटलीकुन्दमाधवीवृन्द-
सेवितोत्तुङ्गशेखरोत्सङ्ग
मा सदा हन्त पालयानन्त
वीर !

स्फुरदिन्दीवरसुन्दर सान्द्रतरानन्दकन्दलीकन्द।
मा तव पदारविन्दे नन्दय गन्धेन गोविन्द॥

कुन्ददशन मन्दहसन[1]
बद्धरसन रुक्मवसन[2]
देव !

प्रपन्नजनतातमःक्षपणशारदेन्दुप्रभा-
प्रजाम्बुजविलोचना स्मरसमृद्धिसिद्धौषधि।

---

१ क. 'मन्दहसन' नास्ति। २ गोवि. रुक्मवसन रम्यहसन।

कानना रण्य-काकलीशब्द-
पाटवाकृष्ट-गोपिकादृष्ट
चातुरीजुष्ट-राधिकातुष्ट
कामिनीलक्ष-मोदने दक्ष
भामिनीपक्ष[1] माममुं रक्ष,
देव !

अजर्जरपतिव्रताहृदयवज्रभेदोद्धुरा,
कठोरतरमानिनी[2]-निकरमानमर्मच्छिद[3]।
अनङ्गधनुरुद्धतप्रचलचिल्लिचापच्युता,
क्रियासुरघविद्विषस्तव मुदं कटाक्षेषव ।

सविरुदमिदमुत्पलम् ।९।

१०. अथ गुणरतिश्चण्डवृत्तम्

—सो नो, लश्च दीर्घं तृतीयकम् ।

गुणरत्याख्य—

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र स –सगणः नो–नगण ततो लश्च–लघुर्भवति । अत्र चतुर्दशाक्षर-पदविन्यासस्य अन्यत्रापि दृष्टत्वात् सनलानामावृत्तिरवगन्तव्या, तेन प्रकृतोद्दृवणिका सिद्धिर्भवति । किञ्च, तृतीयक–तार्तीयमक्षर दीर्घं भवति । तद् गुणरत्याख्य चण्डवृत्त भवति । चतुर्दशाक्षर पदम् । पदविन्यासः पूर्ववदेव । यथा–

विदिताखिलसुख
सुख(ष)माधिकमुख ।

इत्यादि । यथा वा–

प्रकटीकृतगुण शकटीविघटन
निकटीकृतनवलकुटीवर वल-
पटलीतटचर नटलील मधुर
सुरभीकृतवन सुरभीहितकर
मुरलीविलसित-खुरलीहृतजग-
दरुणाधर नव-तरुणायतभुज[4]
वरुणालयसमकरुणापरिमल
कलभायितबल-शलभायितखल

---

१ गोवि भाविनीपक्ष । २ गोवि. कठोरपरवणिनी । ३. गोवि मर्मच्छिद । ४ गोवि करुणायतभुज ।

एत्र पदान्तरमपि बोद्धव्यम् ।

इति कल्पद्रुम ।११।

१२. अथ कन्दलश्चण्डवृत्तम्

कन्दले पञ्चम. श्लिष्टो द्वितीये मधुरोऽनु भौ ॥ १७ ॥

[व्या०] कन्दले–कन्दलाख्ये चण्डवृत्ते पञ्चमो वर्ण श्लिष्टो भवति । द्वितीयो वर्णो मधुर –परसवर्णो भवति । तत्र गणनैयत्यमाह—अत्रास्मिन् भौ–भगणौ एव स्त. । षडक्षरमेव पदम् । तत्कन्दलाभिधान चण्डवृत्त भवतीति । यथा–

पण्डितवर्द्धन ।

इत्यादि ।

इति कन्दलः ।१२।

१३. अथ अपराजितश्चण्डवृत्तम्

षडष्टदशमा दीर्घा द्वितीयो मधुरो यदि ।
अपराजितमेतत्तु भसजाश्च गुरुर्लघु ॥ १८ ॥

[व्या०] एतदुक्त भवति । यत्र षडष्टदशमा –षष्ठाष्टमदशमा वर्णा दीर्घा भवन्ति । द्वितीयो वर्णो यदि मधुर –परसवर्णो भवति । यदि च भसजा –भगणसगणजगणा भवन्ति । अथ च गुरुस्ततो लघुश्चेद् भवति । तदेतत् अपराजिताख्य चण्डवृत्त भवति । एकादशाक्षरं पदम् । यथा–

गञ्जितपरवीर धीर हीर ।

इत्यादि ।

इति अपराजितम् ।१३।

१४ अथ नर्त्तनश्चण्डवृत्तम्

चतु सप्तमकौ श्लिष्टौ सौ रो लौ यदि नर्त्तनम् ।
अष्टमो मधुर —

[व्या०] अस्यार्थ —यदि चतु सप्तमकौ वर्णौ श्लिष्टौ भवत, अष्टमो वर्णो मधुर –परसवर्णो भवति । किञ्च, यदि सौ–सगणौ स्याताम् । अथ च रो–रगण , ततो लौ–लघुद्वय स्यात् तदा नर्त्तन–नर्त्तनाख्य चण्डवृत्त भवति । इदमप्येकादशाक्षर पदम् । यथा–

भुवनत्रयशत्रुप्रमर्द्दय ।

इत्यादि ।

इति नर्त्तनम् ।१४।

१५. अथ तरलसमस्तश्चण्डवृत्तम्

—श्लिष्ट-सश्लिष्टमधुरा यदि ॥ १९ ॥

षड्‌त्रिपञ्चमका यो म सगणो लघुयुग्मकम् ।
तरलसमस्तमित्याहु—

[व्या.] एवमुक्तं भवति । यदि षड्‌त्रिपञ्चमका–षष्ठतृतीयपञ्चमा वर्णाः स्निग्ध-संश्लिष्ट-मधुराः स्युः । तत्र गणनियममाह—यो–यगणः, मो–मगणः, सगणः पुनस्तस्मात् ततो लघुयुग्मकं–लघुयुगलं च यदि भवति तदा तरलसमस्तमिति नामकं गन्धवृत्तमाहुराचार्याः । एकारलाकारमेव पदम् । यथा–

निरस्तघनद्युपिधराधर

इत्यादि ।

इति तरलसमस्तम् ।१५।

१६ अथ वेष्टनगन्धवृत्तम्

—दीर्घौ षट्‌पञ्चमौ यदि ॥ २० ॥
वेष्टने सप्तमः स्निग्धो नयौ लघुचतुष्टयम् ।

[व्या.] अयमर्थः—वेष्टने–वेष्टनाख्ये गन्धवृत्तभेदे यदि षट्‌पञ्चमौ–षष्ठपञ्चमौ वर्णौ दीर्घौ स्याताम् । सप्तमश्च वर्णः स्निग्धो भवेत् । गणनियममाह—नयौ–नगणयगणौ स्तः, ततो लघुचतुष्टयं यत्र भवति । यकारे च पद भवति । तद् वेष्टनाभिधानं गन्धवृत्तं भवतीति । यथा–

भमयभयारातिविलहर ।

इत्यादि ।

इति वेष्टनम् ।१६।

१७ अथ अस्खलितगन्धवृत्तम्

तरौ भभावस्खलिते षष्ठपञ्चमसप्तमाः ॥ २१ ॥
संश्लिष्टा दीर्घ आद्यः स्यात्—

[व्या.] कोऽर्थः ? उच्यते—अस्खलिते–अस्खलिताभिधाने गन्धवृत्ते यदि तरौ–तगणरगणौ स्याताम् । भभ च भभौ–भगणभगणौ स्तः । किञ्च षष्ठपञ्चमसप्तमा–तृतीयपञ्चमषष्ठ सप्तमा वर्णास्तेत् संश्लिष्टा अनवयोगिनः स्युः । आद्य–प्रथमो वर्णश्चेद् दीर्घः स्यात् तदा अस्खलिताभिधानं गन्धवृत्तं भवति । रकारमेव पदं भवति । यथा–

भावदगुरुयुगप्रणय ।

इत्यादि ।

इति अस्खलितम् ।१७।

१८ अथ मत्तस्खलितगन्धवृत्तम्

—दीर्घौ वेदतुर्यपञ्चमौ ।
शिथिलो मधुरो यत्र द्वितीयो मत्तमङ्गिना ॥ २२ ॥
एतत् मत्तस्खलितम्—

[व्या०] इदमत्रानुसन्धेयम् । अत्र पल्लविताख्ये चण्डवृत्ते तुर्यपञ्चमौ वर्णौ चेद् दीर्घौ भवतः । द्वितीयो वर्ण शिथिलो मधुरो वा भवति । तत्र प्रायेण मधुर एव श्रुतिसौख्यकृत् । संज्ञ गणनैयत्यमाह—भतनद्विजा—भगण-तगण नगण-द्विजगणा क्रमेण यत्र भवन्ति । एतत पल्लविताभिधानमिदं चण्डवृत्त भवति । त्रयोदशाक्षरमिदं पद भवति । यथा–

रञ्जितनारीजननवमनसिज।

इत्यादि । मधुरद्वितीयवर्णोदाहरणमिदम् ।

शिथिलद्वितीयवर्णोदाहरण, यथा–

वल्लवलीलासमुदयपरिचित
पल्लवरागाधरपुटविलसित
वल्लभगोपीप्रवणित मुनिगण-
दुर्लभकेलीभरमधुरिमकण
मल्लविहाराद्भुततरुणिमधर
फुल्लमृगाक्षीपरिवृतपरिसर
चिल्लिविलासार्पितमनसिजमद
मल्लिकलापामलपरिमलपद
रल्लकराजीहृन्सुमधुरकल
हल्लकमालापरिचितकचकुल
धीर !
जय चारुहास कमलानिवास
ललनाविलास परिवीतदास
वीर !

वल्लवललनावल्ली-करपल्लवशीलितस्कन्धम् ।
उल्लसित परिफुल्ल भजाम्यह कृष्णकङ्केल्लिम् ।

इति पल्लवितम् ।१८।

११ अथ समग्र चण्डवृत्तम्

—जो र समग्र श्लिष्टपञ्चमम् ।
तृतीय मधुर सर्व-कलान्ते ल —

[व्या०] अस्यार्थ —जो—जगण रो—रगणश्चेति गणद्वय आद्ये इत्यमित्युपदेशः । तथा च द्वादशाक्षरपदमिदं समग्र—समग्राख्य चण्डवृत्तं भवति । किंविशिष्ट ? श्लिष्टपञ्चम—श्लिष्ट,—सरेफशिरस्क पञ्चमो वर्णो यत्र । किञ्च, तृतीयमक्षर मधुर—परसवर्ण यत्र । सर्वकलान्ते–

कुन्तललुठदुरुरङ्ग
कुङ्कुमरुचिलसदम्बर
लङ्घिमपरिमलडम्बर
नन्दभवनवरमङ्गल-
[मञ्जुलघुसृणसुपिङ्गल
हिङ्गुलरुचिपदपङ्कज
सञ्चितयुवतिसदङ्गज][1]
सन्ततमृगपदपङ्किल
सतनु मयि कुशलङ्किल
वीर ।

गिरितटीकुनटीकुलपिङ्गले खलतृणावलिसञ्ज्वलदिङ्गले ।
प्रखरसङ्गरसिन्धुतिमिङ्गिले मम रतिर्वलतां व्रजमङ्गले ।

जय चारुदाम-ललनाभिराम
जगतीललाम रुचिहारिवाम[2]
वीर ।

उन्दितहृदयेन्दुमणि. पूर्णकल कुवलयोल्लासी ।
परित शार्वरमथनो विलसति वृन्दाटवीचन्द्र ।

इति तुरग ।२०।

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य विंशति. शुद्धा प्रभेदा ।

अथ सङ्कीर्णा

तत्र–

२१. पङ्केरुह चण्डवृत्तम्

पङ्केरुह नयौ षष्ठे भङ्गो मैत्री च दृश्यते ।। २४ ।।
सा चेत् कवर्गरचिता यथा लाभमनुक्रमात् ।
तथैव षष्ठो मधुर स्वरभेदेऽपि तद्भिदा ।। २५ ।।

[व्या०] एतस्यार्थ —यत्र नयो–नगणयगणौ भवत । तथा षष्ठे वर्णे भगो मैत्री च दृश्यते । किञ्च, सा मैत्री चेत् कवर्गेण यथालाभमनुक्रमात् रचिता स्यात । तथा षष्ठो वर्णो मधुर–परसवर्णो यदि स्यात् तदा पङ्केरुह नाम चण्डवृत्त भवति । किञ्च, स्वरभेदेपि–इकारादिस्वर-भेदेपि सति तद्भिदा पङ्केरुहभेदो भवतीति बोद्धव्यम् । षडक्षरमेव पदम् । पदविन्यासोपि पूर्व-वदिति बोद्धव्यम् ।

---

१ [-] कोष्ठगतोंश नास्ति क प्रतौ । २ गोवि रुचिहृतवाम ।

कुन्तललुठदुरुरङ्ग
कुङ्कुमरुचिलसदम्बर
लङ्घिमपरिमलडम्बर
नन्दभवनवरमङ्गल-
[मञ्जुलघुसृणसुपिङ्गल
हिङ्गुलरुचिपदपङ्कज
सञ्चितयुवतिसदङ्गज][1]
सन्ततमृगपदपङ्किल
सतनु मयि कुशलङ्किल
वीर !

गिरितटीकुनटीकुलपिङ्गले खलतृणावलिसञ्ज्वलदिङ्गले ।
प्रखरसङ्गरसिन्धुतिमिङ्गिले मम रतिर्वलता व्रजमङ्गले ।

जय चारुदाम-ललनाभिराम
जगतीललाम रुचिहारिवाम[2]
वीर !

उन्दितहृदयेन्दुमणिः पूर्णकल कुवलयोल्लासी ।
परित शार्वरमथनो विलसति वृन्दाटवीचन्द्र ।

इति तुरगः ।२०।

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य विंशति शुद्धा प्रभेदा ।

अथ सङ्कीर्णा

तत्र—

२१. पङ्केरुह चण्डवृत्तम्

पङ्केरुह नयौ षष्ठे भङ्गो मैत्री च दृश्यते ।। २४ ।।
सा चेत् कवर्गरचिता यथा लाभमनुक्रमात् ।
तथैव षष्ठो मधुर स्वरभेदेऽपि तद्भिदा ।। २५ ।।

[व्या०] एतस्यार्थ —यत्र नयो–नगणयगणौ भवत । तथा षष्ठे वर्णे भगो मैत्री च दृश्यते । किञ्च, सा मैत्री चेत् कवर्गेण यथालाभमनुक्रमात् रचिता स्यात । तथा षष्ठो वर्णो मधुर—परसवर्णो यदि स्यात् तदा पङ्केरुह नाम चण्डवृत्त भवति । किञ्च, स्वरभेदेपि–इकारादिस्वर-भेदेपि सति तद्भिदा पङ्केरुहभेदो भवतीति बोद्धव्यम् । षडक्षरमेव पदम् । पदविन्यासोपि पूर्ववदिति बोद्धव्यम् ।

---

१ [-] कोष्ठगतोंश नास्ति क प्रतौ । २ गोवि रुचिहृतवाम ।

कृपय सपङ्कं
किल मयि धीर !

उत्तुङ्गोदयशृङ्गसङ्गमजुषा विभ्रत्पतङ्गत्विषा,
वासस्तुङ्ग[1]मनङ्गसङ्गरकलाशौटीर्यपारङ्गत ।
स्वान्त रिङ्गदपाङ्गभङ्गिभिरल गोपाङ्गनाना किल[2],
भूयास्त्व पशुपालपुङ्गव दृशोरव्यङ्ग रगाय मे ।।

बिलसदलिकगतकुङ्कुमपरिमल
कटितटधृतमणिकिङ्किणिवरकल
नवजलधरकुललङ्घिमरुचिभर
मसृणमुरलिकलभङ्गिमधुरतर
धीर !

अवतसितमञ्जुमञ्जरे तरुणीनेत्रचकोरपञ्जरे ।
नवकुङ्कुमपुञ्जपिञ्जरे रतिरास्ता मम गोपकुञ्जरे ।

पङ्केरुह सविरुदमिदम् । २१ ।

अथ सितकञ्जादयश्चण्डवृत्तस्य चत्वारो भेदा लक्ष्यन्ते । तत्र—

एतावेव गणौ यत्र भङ्गो मैत्री च पूर्ववत् ।
क्रमेण चादिवर्गैस्तु रचिता सापि पूर्ववत् ।। २६ ।।

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र एतौ—नगणयगणौ एव—पूर्वोक्तौ गणौ भवत । किञ्च, भङ्गो मैत्री च पूर्ववत्, षष्ठाक्षर एव भवतीत्यर्थ । एतच्च षष्ठवर्णस्य मधुरत्वमपि लक्षयतीति बोद्धव्यम् । पूर्ववद् इत्यनेनैवोपस्थापितत्वात । किञ्च, सापि मैत्री चादि-चतुर्भिर्वर्गै पूर्ववत् यथालाभ रचिता चेद् भवति । अपि शब्दात् स्वरान्तरेणाभेदेपि सति तदा तत्तद्भेदो भवतीत्यपि बोद्धव्यम् । षडक्षरमेव पदम् । पदविन्यासोऽपि पूर्ववदेवेति च ।।२६।।

तद्भेदचतुष्टयमाह सार्द्धेन श्लोकेन—

सितकञ्ज तथा पाण्डूत्पलमिन्दीवर तथा ।
अरुणाम्भोरुहञ्चेति ज्ञेय भेदचतुष्टयम् ।। २७ ।।
विरुदेन सम चापि चण्डवृत्तस्य पण्डितै ।

[व्या०] सितकञ्ज, पाण्डूत्पल, इन्दीवर, अरुणाम्भोरुह चेति सविरुदचण्डवृत्तस्य भेदचतुष्टय पण्डितै —अधीतछन्द शास्त्रनिपुणमतिभिर्ज्ञेयमित्युपदिश्यते ।

उदाहरणमेतेषा क्रमेणैवोच्यतेऽधुना ।। २८ ।।

---

१. गौवि स्तुल्य ।　२. गौवि गिलन् ।

[व्या०] एतेषां सितकञ्जादिभेदानाम्, क्रिये स्पष्टम् । तत्र–

२२ सितकञ्जकाञ्चनवृत्तम्

जय कपचञ्चल्
धृतिसमुदञ्च
न्मधुरिमपञ्च
स्तबकितपिञ्छ-
स्फुरित विरिञ्च-
स्तुत गिरिगञ्ज
व्रजपरिगुञ्ज
न्मधुकरपुञ्ज
मृतमृदुकिञ्ज
द्विपदहिगञ्ज
प्रतति पु सञ्ज
प्रवरमसञ्ज
मरुबसिपिञ्ज
प्रथमित[3]गुञ्जा
ममहर गुञ्जा
प्रिय गिरिकुञ्जा
मित रतिसञ्जा
गर नवकञ्जा
ममकर मञ्जा
मिमहर मञ्जी
रमरमपञ्ज ।
परिमलसञ्जी
वितनपञ्जा
धुगवरसञ्जा
रणमितपञ्जा
मनमद धीर ।

---

१ मोचि. गिरिकुञ्ज । २ मोचि. रसमञ्ज- । ३ मोचि प्रथमित ।

कर्णिकारकृतकर्णिकाद्युति कर्णिकापदनियुक्तगैरिका ।
मेचका मनसि मे चकास्तु ते मेचकाभरण भारिणी[1] तनु ।

मदनरसङ्गत सङ्गतपरिमल
युवतिविलम्बित लम्बितकचभर
कुसुमविटङ्कित टङ्कितगिरिवर
मधुरससञ्चित सञ्चितनरवर[2]
वीर ।

भ्रूमण्डलताण्डवितप्रसूनकोदण्डचित्रकोदण्ड ।
हृतपुण्डरीकगर्भं मण्डय मे[3] पुण्डरीकाक्ष ।

सविरुद सितकञ्जमिदम् ।२२।

२३. अथ पाण्डुत्पलञ्चण्डवृत्तम्

जय जय दण्ड-
प्रिय कचखण्ड-
ग्रथितशिखण्ड-
स्रज शशिखण्ड-
स्फुरणसपिण्ड-
स्मितवृतगण्ड
प्रणयकरण्ड
द्विजपतितुण्ड
स्मररसकुण्ड
क्षतफणिमुण्ड
प्रकटपिचण्ड-
स्थितजगदण्ड
चवणदणुघण्ट
स्फुटरणघण्ट
स्फुरदुरुशुण्डा-
कृतिभुजदण्डा-
हतखलचण्डा-
सुरगण पण्डा-

१. गोवि. भाविनी । २ गोवि. पवितरिय नास्ति । ३. गोवि- मम ।

वनितविलण्डा
जितखल भण्डो
रदमित गण्डी
कृतनवडिण्डो

।

गण कलकुण्डी[1]
कृतकलकण्ठी
कुल मणिकण्ठी
स्फुरितसुकण्ठी
प्रिय वरकण्ठी
रवरण धीर ।

वन्दी कुण्डलिभोगकाण्डमिभयोरुद्दण्डदोर्दण्डयो',
स्निग्धं दर्पणविभ्रमहम्बरेण निबिडनीलप्रसूनोज्ज्वल' ।
निर्धूतोत्पदमम्बरस्मिघटया लुब्धधिया मामक
कामं मण्डय पुण्डरीकनयन स्वं हन्त हृन्मण्डलम् ।
कन्दर्पकोदण्ड-दर्पत्रिमोहण्ड
दुर्मल्लिकाण्डीर संजुष्टमाण्डीर
धीर !
त्वमुपेन्द्र कलिन्दनन्दिनी-तटकुञ्जावनगन्धसिन्धुर ।
जय सुन्दरकान्तिकन्दल[2] स्फुरदिन्दीवरवृन्दबन्धुभि ।
सविरुदं पाण्डुत्पलमिदम् ।२१।

२४ अथ इन्दीवरम्

जय जय हन्त
प्रिय दभिहृन्त
मंजुरिमसान्त
पितमगदन्त
मं[ ]वुल वसन्त
प्रिय सितदन्त
[स्फुरितविमन्त
प्रसरदुदन्त]

---

१ नौपि कुण्डी । २ पंक्तिद्वयं नास्ति क. प्रतौ ।

प्रभवदनन्त-
प्रियसख सन्त-
स्त्वयि रतिमन्त.
स्त्वमुदहरन्त ।[1]
प्रभुवर नन्दा-
त्मज गुणकन्दा-
सितनवकन्दा-
कृतिधर[2] कुन्दा-
मलरद तुन्दा-
त्तभुवन वृन्दा-
वनभवगन्धा-
स्पदमकरन्दा-
न्वितनवमन्दा-
रकुसुमवृन्दा-
र्चितकच वन्दा-
रुनिखिलवृन्दा[3]-
रकवरवन्दी-
डित विधुसन्दी-
पितलसदिन्दी-
वरपरिनिन्दी-
क्षणयुग नन्दी-
श्वरपतिनन्दी-
हित जय वीर !

स्मितरुचिमकरन्दस्यन्दि वक्त्रारविन्द,
तव पुरपरहृसान्विष्ट गन्ध मुकुन्द ।
विरचित[4]पशुपालीनेत्रसारङ्गरङ्ग,
मम हृदयतडागे सङ्गमङ्गीकरोतु ।
अम्बरगतसुरविनतिविलम्बित
तुम्बरुपरिभविमुरलिकरम्बित

[–] १. पंक्तिचतुष्टय नास्ति क. प्रतौ । २. गोवि. धृतिधर । ३ ख. पंक्तिरियं नास्ति । ४. गोवि. परिचित ।

शम्बरमुखमृगनिकरकुटुम्बित
सम्भ्रमवशमिलितयुवतिविचुम्बित
धीर !

यमुनाकुटुम्बदुहितु: कदम्बसम्बाधवन्धुरे पुलिने ।
पीताम्बर कुरु केलिं त्वं वीर ! नितम्बिनीघटया ॥

सविरतमिदमिन्दीवरम् ।२७।

२८ अथ अरुणाम्भोरुहम्दण्डकवृत्तम्

जय रससम्पद् विरचितदम्भ
स्मरकृतकम्प प्रियजनदम्भ
प्रणमितकम्प-स्फुरदनुकम्प
द्युतिजितशम्प-स्फुटनवचम्प
श्रितकचगुम्फ श्रुतिपरिरम्भ
स्फुरितकदम्ब स्तुतमुख बिम्ब
प्रिय रविबिम्बो-दयपरिजृम्भो
न्मुखजलदम्भो रुहमुख सम्भो
दृमटमुख सम्भो-धरवरकुम्भो
पमकुचबिम्बो-ष्ठयुवतिचुम्बो-
त्कूट परिरम्भोत्सुक कुरु शं मो
स्तकितवसम्भो-जितमिलदम्भो-
धरसुभिलम्बो-द्धुर नतदम्भो
रपिविलसदम्भो -निगरिमसम्भा
वितमुखचुम्बा हितमव सम्पा
कमनघि सम्पादय ममि त पा
किममनुकम्पाभवमिह धीर !

विम्बे वल्लवरत्नसुस्तटभवे फुल्लाटवीमध्यगे
वल्लीमण्डपभाजि मन्मथविरस्तम्बेरमाडम्बर ।
कुर्वन्नब्जमपुञ्जगञ्जनमति श्यामाङ्गकान्तिश्रिया
लीलापाङ्गतरङ्गितेन तरसा मां कृष्ण सन्तर्पय ।

---

१ गोवि परिमिलदम्भो । २ ख पृम्भा; गोवि. सम्भा ।

अम्बुजकिरणविडम्बक सज्जनपरिचलदम्बक
चुम्बितयुवतिकदम्बक कुन्तललुठितकदम्बक
वीर !

प्रेमोद्वेलितवल्गुभिर्वलयितस्तव वल्लवीभिर्विभो !
रागोल्लासितवल्लकीविततिभि. कल्याणवल्लीभुवि ।
सोल्लुण्ठ मुरलीकलापरिमल[1] मल्लारमुल्लासयन्,
बाल्येनोल्लसिते दृशौ मम तल्लिलीलाभिरुत्फुल्लय ।

सविजदमिवमरणाम्भोरुहम् ।२५।

एते कादिपञ्चवर्गोत्थापिता पञ्चचण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य सङ्कीर्णा प्रभेदा ।

अथ गर्भिताः

तत्र प्रभेदा —

२६ फुल्लाम्बुजञ्चण्डवृत्तम्

षष्ठे भङ्गश्च मैत्री च नयावेव गणौ यदि ।
अन्तस्थस्य तृतीयेन यदि मैत्रीकृता भवेत् ।। २६ ।।

स्वरोपस्थापिता श्लिष्टा रमणीयतरा क्वचित् ।
फुल्लाम्बुज तदुद्दिष्ट चण्डवृत्त सुपण्डितै ।। ३० ।।

[व्या०] कोऽयं ? उच्यते—यदि नयावेव–नगणयगणावेव गणौ स्त । षष्ठे वर्णे भङ्गो मैत्री च यदि अन्तस्थस्य यवर्गस्य तृतीयेन लकारेण कृता भवेत् । सापि क्वचित् स्वरोपस्थापिता श्लिष्टा च स्यात् । तदा एतद्देशादूतमिव नामत फुल्लाम्बुज इति प्रसिद्ध सुपण्डितैश्चण्डवृत्तमुद्दिष्ट–कथितमित्यर्थ । यथा–

व्रजपृथुवल्ली[2]-परिसरवल्ली-
वनभुवि तल्लीगणभृति मल्ली-
मनसिजभल्ली-जितशिवमल्ली-
कुमुदमतल्लीजुषि गत झिल्ली-
परिषदि हल्ली-सकसुखझिल्ली[3]-
रस परिफुल्ली-कृतचलचिल्ली-

१ गोवि. कलाभिरमल । २. गोवि पल्ली । ३. गोवि. झल्ली ।

जितरतिमल्लीभव भर वल्ली
ललितक कल्या-तनुधरतुल्या
हृधरसकुल्या-भद्रुतिसबल्या
प्रभयम कल्याणचरित धीर ।

गोपी सम्भृतचापल चापलताविभया भृशा भ्रमयन् ।
विलस यशोदावत्सल वत्सलसद्धेमुसवीत ।

[1]*वल्लवसमनालीलाचलयित
पल्लवरचना मल्लीविलसित
वल्लभकमनाखेलासमुदित
तल्लवघटना भीमासकवृत ।

तव चरणाम्बुजमनिश विभावये नन्दगोपाल ।
मोपासनाय वृन्दावनभुवि यद् रेणुरञ्चिता धरणी ।*

सविवर्त फुल्लाम्बुजमिदम् ।२६।

---

१ * *टिप्पणी—एतद् तात्पर्यतास्य स्थाने निम्नाङ्को वर्तते बोधिन्वविक्लावस्याम् । परञ्च वृत्तमौक्तिककृता चायमत्र पल्लवितव्यक्तवृत्तस्य शिथिलतीर्णवर्णोद्धरणक्रमेण स्वीकृतः स च २११ पृष्ठेऽवलोकनीयो विद्वद्भिः ।

वल्लवलीलासमुदयसमुचित
पल्लवरागाचरपुटविलसित
वल्लभगोपीप्रचरित मुनिगरण
दुर्लभकेलीभरमधुरिमकृष्ण
मल्लविहाराद्भुतवसीमवर
फुल्लमृणालीपरिवृतपरिसर
चिक्लिविलासापितमनसिजमद
मल्लिकलापामलपरिमलपद
रसकराजीहृततुमधुरकल
हरलवमालापरिवृतकञ्चुस
धीर ।

वल्लवललनावल्ली-करपल्लवचीचितस्कन्धम् ।
चल्लसित परिवृत्त वचाम्बुज कुम्भकञ्चु स्लिम् ॥

२७. अथ चम्पकाञ्चण्डवृत्तम्

द्वितीयो मधुरो यत्र श्लिष्टः क्वापि भवेद् यदि ।
भनौ षडक्षरं चैतत् स्वेच्छातः पदकल्पनम् ॥ ३१ ॥

चम्पकं चण्डवृत्तं स्यात्—

[व्या०] अस्यार्थः —'यत्र द्वितीयो वर्णो मधुरः–परसवर्णो भवेत् । क्वापि–कुत्रचित् यदि श्लिष्टोपि स्यात् ।' तत्र गणनियममाह— भनौ–भगणनगणौ गणौ भवेताम् । षडक्षरं चैतत् पदम् । किञ्च, पदकल्पनं स्वेच्छातो यत्र भवति तदेतच्चम्पकं नाम चण्डवृत्तं स्यात् । यथा—

सञ्चलदरुण[१]-सुन्दरनयन
कन्दरशयन वल्लवशरण
पल्लवचरण मञ्जुलघुसृण-
पिञ्जलमसृण चन्दनरचन
नन्दनवचन खण्डितशकट
दण्डितविकट-गर्वितदनुज
पर्वितमनुज रक्षितधवल
लक्षितगवल पन्नगदलन
सन्नगकलन बन्धुरवलन
सिन्धुरचलन[३] कल्पितसदन[४]-
जल्पितमदन[५] मञ्जुलमुकुट
वञ्जुललकुट-रञ्जितकरभ
गञ्जितशरभ-मण्डलवलित
कुण्डलचलित-सन्दितलपन
नन्दिततपन-कन्यकसुषम
धन्यककुसुम[६]-गर्भक धरण[७]-
दर्भकशरण तर्णकवलित
वर्णकललित श वरवलय
डम्बर कलय
देव ।

१-१. ख प्रतौ नास्ति पाठः । २. गोवि. सचलदरुणचञ्चलकरुणसुन्दरनयन । ३. क. चदन । ४. गोवि. मदन । ५ गोवि. सदन । ६. गोवि. सन्यकफुसुम । ७ गोवि. विरण ।

दानवघटाखर्विने धातुविधिने जगच्चित्रे ।
हृदयानन्दधरित्रे रतिरास्तां वल्लवीमित्रे ।
रिङ्गतुरङ्ग-तुरङ्गगिरिशृङ्ग
भृङ्गरुचमङ्ग-सङ्गपतरङ्ग
धीर !

त्वमत्र वज्राङ्कुरमण्डलीनां रम्भावशिष्टानि गृहाणि कृत्वा ।
पूर्णान्यकार्षीर्विजयसुन्दरीभिर्नाटकोपुण्डकमण्डपानि ॥

सविस्तरं धम्मकमिदम् ।२७।

२८. अथ बन्धुरसञ्चयवृत्तम्

—बन्धुर नगणा भवि ।
पञ्चमो मधुरस्तत्र पद मुनिमित मतम् ॥ ३२ ॥

[व्या०] प्रथमत—यदि नगणा—नगणनगणनगणनगणाः स्युः । किञ्च तत्र पदे पञ्चमो वर्णो मधुरः—परसवर्णो भवति । पदमपि मुनिभिः—सप्तभिर्वर्णैर्मितं—परिमितं यत्र तत् बन्धुरं—बन्धुरादप्यतिमञ्जुलं बन्धुरवृत्तं मतं—सम्मतमित्यर्थः । परकल्पनं तु पूर्ववत् । यथा—

जय जय सुन्दर विहसित मन्दर
विजितपुरन्दर निजगिरिकन्दर
रतिरसधन्धर मणियुतकन्धर
गुणमणिमन्दिर भुवि बलदिन्दिर
गतिजितसिन्धुर परिजनबन्धु
पशुपतिजनदम क्षितकितचन्दन
विविधकृतमन्दन पृथुहरिचन्दन
परिवृतजनदम[1]-मधुरिमनिन्दन
मधुवन वन्दित-कुसुमसुगन्धित
वनवररञ्जित रविरमसञ्जित[2]
शिखिदलकुण्डल-महुकरमण्डित
नवसितखण्डल-ग्रथितदमखण्डन
रतिरणपण्डित वरतनुमण्डित
मदनपन्थमिदत दरालविमण्डित
धीर !

[1] वर्णितमिदं नास्ति ग०-प्रतौ । [2] क० कर्णरिवमञ्जन- । [3] ग०... रविकरतमितरुचिर ।

निनिन्द निजमिन्दिरा वपुरवेक्ष्य यासा श्रिय,
विचार्य गुणचातुरीमचलजा च लज्जा गता ।
लसत्पशुपनन्दिनीततिभिराभिरानन्दित,
भवन्तमतिसुन्दर व्रजकुलेन्द्र वन्दामहे ।

रसपरिपाटी स्फुटतरुवाटी
मनसिजघाटी प्रियनतशाटी[1]-
हर जय वीर ।

सम्भ्रान्तै सषडङ्गपातमभितो वेदैर्मुदा वन्दिता,
सीमन्तोपरि गौरवादुपनिषद्देवीभिरर्प्यपिता ।
आनम्र प्रणयेन च प्रणयतो तुष्टामना[2]विकृतो[3],
मूर्ध्नी ते मुरलीरुतिमुररिपो शर्माणि निर्मातु न ।

सविरुद वञ्जुलमिदम् ।२८।

२९. अथ कुन्दञ्चण्डवृत्तम्

द्वितीयषष्ठौ मधुरौ श्लिष्टौ वा क्वापि तौ यदि ।
स्यातां भजौ तदा कुन्दम्—

[व्या०] एतदुक्तं भवति । यदि द्वितीयषष्ठौ वर्णौ मधुरौ–परसवर्णौ क्वापि पदे श्लिष्टौ वा, तौ वर्णौ स्याताम् । अथ च भजौ–भगणजगणौ भवत, तदा कुन्दं इति नाम चण्डवृत्तं भवति । षडक्षरमिदं पदम् । पदविन्यासस्तु पूर्ववत् । यथा–

नन्दकुलचन्द्र लुप्तभवतन्द्र
कुन्दजयिदन्त दुष्टकुलहन्त
रिष्टसुवसन्त मिष्टसदुदन्त
सदलितमल्लि-कन्दलितवल्लि-
गुञ्जदलिपुञ्ज-मञ्जुतरकुञ्ज-
लब्धरतिरङ्ग हृद्यजनसङ्ग-
शर्मलसदङ्ग हर्षकृदनङ्ग
मत्तपरपुष्ट-रम्यकलघुष्ट
गन्धभरजुष्ट पुष्पवनतुष्ट
कृत्तखलक्ष[4] युद्धनयदक्ष

---

१. गोवि. प्रियनयशाटी- । २. गोवि हृष्टात्मना । ३. गोवि. भिष्टुता । ४. गोवि. पक्ष ।

मल्लिकाषट्पदा [षट्पदीविशिपदा] [1]
पिष्टनवतृष्णा तिष्ठ हृदि कृष्ण
धीर ।
तव कृष्ण केलिमुरली हितमहित च स्फुटं विमोहयसि ।
एवं सुधोर्मिमुद्गृह्य विश्वविश्रमेणापर ध्वनिना ।

सभीतवत्सेयनिस्तार कल्याणकारुण्यविस्तार
पुष्पेषुकोदण्डटङ्कार विस्फारमञ्जरीझङ्कार
धीर !
रङ्गस्थले साण्डवमण्डलेन[2] निरस्य मल्लोत्तमपुण्डरीकान् ।
कंसद्विप चण्डमखण्डयद् यो हृत्पुण्डरीके स हरिस्तवास्तु ।

सविवरं कुन्दमिदम् ।२१।

१० अथ वकुलभासुरच्छन्दवृत्तम्

—अथो[3] वकुलभासुरम् ॥ ३३ ॥
चतुर्भिस्तुरगैः विप्रैः पद यमादिसुन्दरम् ।
रसेन्दुधाम सान्मात—

[व्या.] अस्यार्थः — अथ-कुसुमाकरानन्तरं वकुलभासुरं इति नामकं वर्णवृत्तं कथ्यत इति शेषः । यत्र चतुर्भिः-चतुःसंख्याकैः विप्रैः-नगणैर्विरचितैः चतुर्भिरेव तुरगैः-चतुष्कलैः द्विजगण-कर्ण-भगण-[4] सगणैरेवातिसुन्दरं-अतिरमणीयं रसेन्दुधाम-षोडशमात्रं पदं भवति । तत्र पदं तत्त्वमितिर् षोडश-विषमकार्यविचारणाविधि विधेयमित्युपदेशः । किञ्च सोल्लासं-उल्लासमेव प्रलाल परावर्तनं तेन सहितं शृङ्खलायमकभावेन पठितमित्यर्थः । तदीदृशं वकुलभासुरं वर्णवृत्तं सविवरं भवतीति वाक्यार्थः । यथा—

जय जय वंशीवाद्यविशारद
शारदरसरीतहृतपरिमादक
मादककलितसोमसम्भारक
भारकसिद्धवधूपुविहारक
हारकभावरचाभितकुण्डल[5]
कुण्डलसित[6]गोवर्धनभूषित
भूषितभूषणविभ्रम[7]विग्रह
विग्रहसञ्चितसवभूषभासुर

१ [ ] क. ख. नास्ति पाठः । २ गोवि. मण्डलेन । ३ क. अथ । ४ क. तगणसगणै- । ५. गोवि. यथाभिमतकुण्डल । ६. गोवि. कुण्डलसत् । ७ गोवि. विभूषण- ।

भासुरकुटिलकचार्पितचन्द्रक
चन्द्रकदम्ब[1]रुचाभ्यधिकानन
काननकुञ्जगृहस्मरसङ्गर
सङ्गरसोद्धुरबाहुभुजङ्गम
जङ्गमनवतापिञ्छनगोपम
गोपमनीषितसिद्धिषु दक्षिण
दक्षिणपाणिगदण्डसभाजित
भाजितकोटिशशाङ्कविरोचन
रोचनया कृतचारुविशेषक
शेषकमलभवसनकसनन्दन-
नन्दनगुण मा नन्दय सुन्दर
[2]सुन्दर मामव भीतिविनाशन[2]
वीर !

भवत प्रतापतरणावुदेतुमिह लोहितायति स्फीते ।
दनुजान्धकारनिकरा. शरण भेजुर्गुहाकुहरम् ॥

पुलिनधृतरङ्ग-युवतिकृतसङ्ग
मदनरसभङ्ग-गरिमलसदङ्ग
धीर !

पशुषु कृपा तव दृष्ट्वा दुष्ट[3]महारिष्टवत्सकेशिमुखा ।
दर्पं विमुच्य भीता पशुभाव भेजिरे दनुजा ॥

सविरुद वकुलभासुरमिदम् ।३०।

३१. अथ वकुलमङ्गलञ्चण्डवृत्तम्

—अन्तो वकुलमङ्गलम् ॥ ३४ ॥

चतुर्भिर्भगणैरेव हयैर्यत्र पद भवेत् ।
रसेन्दुकलक तत्र तृतीये शृङ्खलास्थिता ॥ ३५ ॥

[व्या०] कोऽर्थं ? उच्यते । अन्त -वकुलभासुरानन्तर वकुलमङ्गल-वकुलमङ्गलाख्य चण्डवृत्तमुच्यत इति शेष ॥३४॥

यत्र चतुर्भि —चतु सख्याकै केवलैरादिगुरुकै -भगणैरेव हयै —चतुष्कलै रसेन्दुकलक-षोडशमात्र पद भवेत् । किञ्च, तत्र—तस्मिन्पदे तृतीये अर्थात् तृतीये भगणे शृङ्खलास्थिता चेद्-

---

१ गोवि चन्द्रकलाप- । २-२. गोवि. पक्तिरिय नास्ति । ३ गोवि. नम ।

मल्लुकचपला [बहुविधिविपला] [1]
पिष्टनततृष्ण तिष्ठ हृदि कृष्ण
धीर !
तव कृष्ण केशिमुरली हितमहित च स्फुटं विमोहयति ।
एवं सुधोर्मिसुहृदा विपयिपमेमापरं ध्वनिना ।

सभीतदैतेयनिस्तार कल्याणकारुण्यविस्तार
पुष्पेषुकोदण्डटङ्कार-मिस्फारमञ्जरीझङ्कार
धीर !
रङ्गस्यस साण्डवमण्डनेन [2] निरस्य मल्लोत्तमपुण्डरीकान् ।
कसद्विप चण्डमसञ्जयद् यो हृत्पुण्डरीके स हरिस्तवास्तु ।

सविरुदं कुम्भमिदम् ।२१।

१ अथ बकुलभासुरदण्डवृत्तम्

—अथो [3] बकुलभासुरम् ॥ ३३ ॥
चतुर्भिस्तुरगैर्मिश्रैः पदं यत्रातिसुन्दरम् ।
रसेन्दुमात्रं सोल्लासं—

[व्या०] अस्यार्थः—अथ-कुम्भानन्तरं बकुलभासुरं इति नामकं दण्डवृत्तं कथ्यत इति शेषः । यत्र चतुर्भिः—चतुःसंख्याकैः मिश्रैः—क्रमविरहितैः चतुर्भिस्तुरगैः—चतुष्कलैः द्विगुरु-सर्व-लघु-रूपैरेवातिसुन्दरं—अतिरमणीयं रसेन्दुमात्रं—षोडशमात्रं पदं भवति । तच्च पदं पञ्चभिर्मिश्रैः षोडश-विंशत्यादिमात्राधिकं विधेयमित्युपदेशः । किञ्च सोल्लासं—उल्लासनमेव उल्लासः परावर्तनं तेन सहितं शृङ्खलाबन्धन्यायेन पठितमित्यर्थः । तदीदृशं बकुलभासुरं दण्डवृत्तं सविरुदं भवतीति वाक्यार्थः । यथा—

जय जय वंशीवाद्यविशारद
शारदसरसीरुहपरिमावक
भावकभिवलोचनसञ्चारण
चारणसिद्धवधूधृतिहारक
हारकलापरवाञ्चितकुण्डल [4]
कुण्डलसित [5] गोवर्धनभूषित
भूषितभूषणविभ्रम [6] विग्रह
विग्रहलम्भितलसवृषभासुर

१ [ ] क. ख. नास्ति पाठः । २ मोथि मण्डलेन । ३ क. अथ । ४ क. लसल्ललनन- । ५ मोथि रवाञ्चितकुण्डल । ६ मोथि कुण्डलसत् । ७ मोथि विभूषण- ।

३२. अथ मञ्जर्यां कोरकश्चण्डवृत्तम्

मञ्जरी चात्र पूर्वं श्लोको लेखस्तदनन्तरम् ।
कोरकाख्य चण्डवृत्त पदसख्यानखैर्यदि ॥ ३६ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—अभिधीयते इत्यर्थः । प्रथमतो मञ्जरी तत कलिका भवतीति लौकिकाना प्रसिद्धे । तत्र चतुर्भि भगणै. शुद्धैराद्यन्तयमकाङ्कितं कोरकाख्य चण्डवृत्त । यदि पदस्य आद्यन्तयोर्यमकाङ्कितं –यमकेन अङ्कितं सयमकैरिति यावत्, शुद्धैः–शृङ्खलारहितैश्चतुर्भि भगणै –आदिगुरुकैर्गणै पदम् । अथ च पदसख्या यदि नखै –विंशत्या भवति, तदा कोरकाख्य चण्डवृत्त भवति । शृङ्खलाराहित्यमेवात्र पूर्वस्माद् भेद गमयतीति ॥३६॥

तत्र प्रथम मञ्जरी, यथा–

नवशिखिशिखण्डशिखरा[1] प्रसूनकोदण्डचित्रशस्त्रीव ।
क्षोभयति कृष्ण वेणी श्रेणीरेणीदृशा भवत ॥

कोरकम्, यथा–

मानवतीमदहारिविलोचन
दानवसञ्चयघूकविरोचन
डिण्डिमवादिसुरालिसभाजित
चण्डिमशालिभुजार्गलराजित
दीक्षितयौवतचित्तविलोभन-
वीक्षित सुस्मितमार्दवशोभन
पर्वतसम्भृति[2]निर्धुतपीवर-
गर्वतम परिमुग्धशचीवर[3]
रञ्जितमञ्जुपरिस्फुरदम्बर
गञ्जितकेशिपराक्रमडम्बर
कोमलताङ्कितवागवतारक
सोमललाममहोत्सवकारक
हृसरथस्तुतिवासितवशक
कसवधूश्रुतिनूतनवतसक
रङ्गतरङ्गितचारुदृगञ्चल
सङ्गतपञ्चशरोदयचञ्चल
लुञ्चितगोपसुतागणशाटक
सञ्चितरङ्गमहोत्सवनाटक
तारय मामुरुससृतिशातन

---

१. क शिखण्डिशिखरा. । २. गोवि. पर्वतसघृति- । ३. ख. शशीवर ।

भवति तदा बकुलभासुराभिधानं षष्ठवृत्तं सविस्तरं भवतीति वाक्यार्थः। सर्वविन्यासादपौष्कर पूर्ववदेव। षोडशमात्मभुजयत्र समाने। परं तु बकुलभासुरमध्यमप्रत्यन्तसमासमेव बकुलभासुरात् भेदं बोधयतीत्ययमेव सुधीभिरिति दिव्यम् ॥१५॥
यथा–

त्वं जय केशव केशवसंस्तुत
वीर्यविलक्षण लक्षणशोभित
केलिषु नागर नागरणोद्धत
गोकुलनन्दन नन्दनतिव्रत
सान्द्रसुदर्पक दर्पकमोहन
हे सुषमासमभामवतीगण
मानविनाशक रासकलाश्रित
सस्तनगौरवगौरवधूवृत[1]
कुञ्जगशोभित शोभितयौवत
रूपभराधिकराधिकयार्चित
नीरविलम्बित लम्बितघोषक
केलिकलालस[2]लालसलोचन
घोषवधारुणवारुणवारण
मुक्तिदलोकन लोकनमस्कृत
गोपसभाजक भाजकधर्मद
हन्त कृपालय पालय मामपि
देव ![3]

पलायनं फेनिलवक्त्रतां च कम्पं च भीतिं च मूर्तिं च कृत्वा।
अपवर्गदातापि शिशुपालमौले त्वं धार्मिकाणामपवर्गदोऽसि ॥

प्रणयभरित मधुरचरित
भजनसहित पशुपमहित
देव !

अनुभूय विक्रम ते युधि सम्या कोविदीकरणम्।
हित्वा[5] किम भगवन्द्र प्रपलायांचक्रिरे दनुजाः।

सविस्तरं बकुलभासुरभिदम् ॥११॥

१ ख हृत। २ गोवि केलिकुलालस-। ३ गोवि वीर। ४ गोवि परामर्श।
५ गोवि निरस्य।

३२. अथ मञ्जर्या कोरकश्चण्डवृत्तम्

मञ्जरी चात्र पूर्वं श्लोको लेखस्तदनन्तरम् ।
कोरकाख्य चण्डवृत्त पदसस्यानखैर्यदि ।। ३६ ।।

[व्या०] अस्यार्थः—अभिधीयत इत्यर्थ. । प्रथमतो मञ्जरी तत कलिका भवतीति लौकिकाना प्रसिद्धे । तत्र चतुर्भि भगणे शुद्धैराद्यन्तयमकाङ्कितै- कोरकाख्य चण्डवृत्त । यदि पदस्य आद्यन्तयोर्यमकाङ्कितैः-यमकेन अङ्कितै. सयमकैरिति यावत्, शुद्धै –शृङ्खलारहितैश्चतुर्भि भगणै –आदिगुरुकैर्गणै पदम् । अथ च पदसंख्या यदि नखं –विंशत्या भवति, तदा कोरकाख्यं चण्डवृत्त भवति । शृङ्खलाराहित्यमेवात्र पूर्वस्माद् भेदं गमयतीति ।।३६।।

तत्र प्रथम मञ्जरी, यथा–

नवशिखिशिखण्डशिखरा[1] प्रसूनकोदण्डचित्रशस्त्रीव ।
क्षोभयति कृष्ण वेणी श्रेणीरेणीदृशा भवत' ।।

कोरकम्, यथा–

मानवतीमदहारिविलोचन
दानवसञ्चयघूकविरोचन
डिण्डिमवादिसुरालिसभाजित
चण्डिमशालिभुजार्गलराजित
दीक्षितयौवतचित्तविलोभन-
वीक्षित सुस्मितमार्दवशोभन
पर्वतसम्भृति[2] निर्धुतपीवर-
गर्वतम परिमुग्धशचीवर[3]
रञ्जितमञ्जुपरिस्फुरदम्बर
गञ्जितकेशिपराक्रमडम्बर
कोमलताङ्कितवागवतारक
सोमललाममहोत्सवकारक
हसरथस्तुतिशासितवशाक
कसवधूश्रुतिनुन्नवतसक
रङ्गतरङ्गितचारुदृगञ्चल
सङ्गतपञ्चशरोदयचञ्चल
लुञ्चितगोपसुतागणशाटक
सञ्चितरङ्गमहोत्सवनाटक
तारय मामुरुससृतिशातन

१. क शिखण्डिशिखरा. । २. गोवि. पर्वतसभृति- । ३. ख. शशीवर ।

धारय लोचनमम सनातन
धीर !

सुरगदनुसुताङ्गनाभवेदे दधान
कुलिशघटितटङ्काडम्बविस्फूर्जितानि ।
सगुरुविकटदंष्ट्रो मु(मृ)ष्टकेयूरमुद्र
प्रथयतु पटुतां च केशवो वामबाहुः ।
माधव विस्फुर दानवनिष्ठुर
यौवतरञ्जित सौरभसञ्चित
धीर !

पलितकरणी यथा प्रभो भुजङ्गस्यकरणी च मां गता ।
सुभगंकरणी कृपा शुभैर्न तवाढ्य करणी च मध्यभूत् ॥

सविस्तरः कोरकोऽयम् ।३३।

३४ अथ गुच्छकदण्डकवृत्तम्

नसौ ततो जसौ क्रमात् प्रयोजितौ बुधा यदा ।
तदा तु दण्डवृत्तकं विभावयन्तु गुच्छकम् ॥ ३७ ॥

[व्या] अयमर्थः —हे बुधाः ! यदा नसौ-नगणसगणौ प्रथ च जसौ-जगणसगणौ एतादृश नसौ-जसगणद्वयम् क्रमात्-प्रतिपदं प्रयोजितौ भवतः, तदा तु गुच्छकं नाम दण्डवृत्तं विभावयन्तु-कुर्वन्तु । कमोऽयमत्र स्वार्थे कः ॥३७॥ विशेष–

षोडशात्र पदे भागा पदान्यपि च षोडश ।
सानुप्रासानि यमकैरङ्कितानि च गुच्छके ॥ ३८ ॥

[व्या] सुगमम् । यथा–

जय जलदमण्डलीद्युतिनिवहसुन्दर
स्फुरदमलकौमुदीमृदुहसितबन्धुर
प्रमदहरिणलोचनावदनशशिचुम्बक
प्रबलतर सम्भ्रमद्युतिविभवदम्भक
स्मरसमरचातुरीनिचयवरपण्डित
प्रणयमधुराधिकापटिमभरमण्डित
व्रजयुवतिसमंसिका हृतपशुपयौवत
स्थिरसमरमाधुरीकुसुमजितदैवत

---

१ पोथि मधुरतर । २ क. वीथिका ।

ग्रथितशिखिचन्द्रकस्फुटकुटिलकुन्तल
श्रवणतट[1]सञ्चरन्मणिमकरकुण्डल
प्रथित तव[2] ताण्डवप्रकटगतिमण्डल
द्विजकिरणधोरणीविजितसिततण्डुल
स्फुरित तव दाडिमीकुसुमयुतकर्णक[3]
छदनवरकाकलीहृतचटुलतर्णक
[4]प्रकटमिह मामके हृदि वससि माधव
स्फुरसि ननु सतत सकलदिशि मामव[4]
धीर !

पुनागस्तवकनिवद्धकेशजूट,
कोटीरीकृतवरकेकिपक्षकूट ।
पायान्मा मरकतमेदुर स तन्वा,
कालिन्दीतटविपिनप्रसूनधन्वा ।[5]
गर्गप्रिय जय भर्गस्तुत रस
सर्गस्थिरनिज-वर्गप्रवणित
धीर !

दनुजवधूवैधव्यव्रतदीक्षाशिक्षणाचार्य ।
स जयति विदूरपाती मुकुन्द तव श्रृङ्गनिर्घोष ।
सविरुद गुच्छाख्य चण्डवृत्तम् ।३३।

३४. अथ कुसुमञ्चण्डवृत्तम्

चतुर्भिर्नगणैर्यत्र पद यमकित भवेत् ।
अनन्तनेत्रप्रमित कुसुम तत्प्रकीर्तितम् ।। ३९ ।।

[व्या०] अनन्त–शून्य नेत्र–द्वय ताभ्यां प्रमित–गणित पद यत्र तत्, विंशतिपदमित्यर्थः । शेष सुगमम् ।।३९।।

यथा–

कुसुमनिकरनिचितचिकुर[6]
नखरविजितमणिजमुकुर
सुभटपटिमरमितमथुर
विकटसमरनटनचतुर

१. गोवि. श्रवणतट- । २ गोवि. प्रथिततव- । ३. गोवि स्फुरितवरदाडिमीकुसुमयुग-कर्णक । ४-४ गोवि. पक्तिद्वय नास्ति । ५. क नत्वा । ६. गोवि. रचितचिकुर ।

[विरुदावल्या तृतीय त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरणम्]

---

१. अथ दण्डकत्रिभङ्गी कलिका

अथ त्रिभङ्गीकलिकासु दण्डकत्रिभङ्गीकलिकागर्भित तद्गतैव[1] लक्ष्यते। तद्भङ्गाना[2] वाहुल्यादेवास्या कलिकाया दण्डकत्रिभङ्गीति सज्ञा।

अथाऽस्या लक्षण सम्यक् सोदाहरणमुच्यते।
भङ्गवाहुल्यतश्चास्या सज्ञाप्यान्वर्थिका[3] भवेत् ॥१॥

यथा–

नगणयुगलादनन्तरमिह चेद् रगणा भवन्ति रन्ध्रमिता।
विरुदावल्या कलिका कथितेय दण्डकत्रिभङ्गीति ॥ २ ॥

[व्या०] रन्ध्राणि–नव कथिता इत्यत्र तदित्यध्याहार। भङ्गबहुत्वाच्चास्या दण्डक-त्रिभङ्गी सज्ञेति फलितोऽर्थं। अत्र च पदरचनाया पदविन्यास स्वेच्छया भवतीति सिहाव-लोकनरीत्यावगन्तव्यम्। यथा–

चित्र मुरारे सुरवैरिपक्ष-
स्त्वया समन्तादनुबद्धयुद्ध।
अमित्रमुच्चैरविभिद्य भेद,
मित्रस्य कुर्वन्नमित[4] प्रयाति ॥

श्रितमघजलधेर्वहित्र चरित्र सुचित्र विचित्र
फणित्र समित्र पवित्र लवित्र रुजाम्।
जगदपरिमितप्रतिष्ठ पटिष्ठ बलिष्ठ गरिष्ठ
[5]अदिष्ठ सुनिष्ठ लघिष्ठ दविष्ठ[5] धियाम्।
निखिलविलसितेऽभिराम सराम मुदा मञ्जुदाम-
त्रभाम ललाम धृतामन्दधाम नये।
मधुमथनहरे मुरारे पुरारेरपारे ससारे
विहारे सुरारेरुदारे च दारे प्रभुम्।
स्फुरितमिनसुतातरङ्गे विहङ्गेशरङ्गेण गङ्गे-
ऽष्टभङ्गे भुजङ्गेन्द्रसङ्गे सदङ्गेन भो।

---

१. ख. अन्तर्गतैव। २. क. तद्भानां। ३. ख. सज्ञाप्यान्वर्थिकी। ४. गोवि. कुर्वन्नमृत। ५-५ गोवि. वरिष्ठ अविष्ठ सुनिष्ठ दविष्ठं।

विसरिखरखरीमिधान्त मयान्तं सकामं विभान्तं
निशान्तं च कान्त प्रशान्तं कृतान्तं द्विपाम् ।
मधुजहर मधाम्मनस्त मुदम्बु नुदन्तं दुमन्त
हसन्त 'भजन्तु चरन्तु' भवन्तं सदा ।
वीर !

पीत्वा सिन्धुकणं मुकुन्द भवतः सौन्दर्यसिन्धोः सकृत्
कन्दर्पस्य वशं गता विमुमुहुः के वा न साध्वीगणाः ।
दूरे राण्यमयभित्रस्मितकला भ्रूवल्लरीताण्डव
क्रीडापाङ्गतरङ्गितप्रभृतयः कुर्वन्तु ते विभ्रमाः ॥

चारुतट रासभट
गोपभट पीतपट
पद्मकर दैत्यहर
कुञ्जचर धीरवर
नर्ममय कृष्ण जय
नाथ !

संसाराम्भसि दुस्तरोर्मिगहने गम्भीरतापत्रयी
कुम्भीरेण गृहीतमुग्रपतिना क्रोशन्तमन्तर्भयात् ।
चीत्रेणाद्य सुदर्शनेन त्रिभुवनभ्रान्तिप्रियाकारिणा
चिन्तासन्ततितस्त्वमुद्धर हरे भक्तिप्रदस्त्वीश्वरम् ।

इति सविस्तरा चण्डवृत्तिभङ्गी कलिका ।१।

२ अथ सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका

अथापरा सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका लक्ष्यते । यथा-

युग्मे भङ्गस्तनौ च्युतौ भौ चान्ते यत्र मिलितौ ।
नसुमस्य परे ह्रस्व[3] पदे सा स्यात् त्रिभङ्गिका ॥ ३ ॥
विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा कलिकाऽतिमनोहरा ।
माधान्ताधी पद्ययुक्ता—

[व्या०] एतत् सूत्रं भवति । यत्र पदे—यस्यां कलिकायां वा युग्मे—द्वितीयाक्षरे भङ्गो भवति । तथा तनौ—तगणनगणौ स्तः । तौ च च्युतौ—चारणयुक्तौ स्तः । अन्ते—तथा पदान्ते मिलितौ—

---

१ गोपि वसन्तं भवन्तं । २ गोपि मलिना । ३ ख भवेद् मम । ४ ख तगणयान्ते ।

सलग्नौ भो–भगणौ च यदि स्त । यत्र चैवविध वसुसख्य पद भवेत्, सा विदग्धपूर्वा–विदग्ध-शब्दपूर्वा सम्पूर्णा प्रथमलक्षितलक्षणविलक्षणा अतिमनोहरा विदग्धत्रिभङ्गीकलिका स्यात् इत्यन्वय । अष्टपदत्वमेव पूर्वोक्ताया सकाशात् वैलक्षण्यं स्फुटमेव लक्षयति । एतदेव चास्या सम्पूर्णत्वमिति । किञ्च, आद्यन्तयो कलिकाया इति शेष, आशी पद्ययुक्ता–आशी पद्याभ्या युक्ता आशीर्वादयुक्तपद्याभ्या सयुक्ता इत्यर्थ । आद्यन्तपदसाहित्य च तत्कलिकायुक्तेषु पूर्वोक्तेषु सर्वेषु चण्डवृत्तेषु ज्ञेय सुधीभिरित्युपदेशरहस्य, अग्रेपि तथैव वक्ष्यमाणत्वादिति । इयमेव च खण्डावलीति व्यपदिश्यते, तथा चाग्रे तथैव लक्षयिष्यमाणत्वादिति । यथा–

उद्वेलत्कुलजाभिमानविकचाम्भोजालिशुभ्राशव[1]
केलीकोपकषायिताक्षिललनामानाद्रिदम्भोलयः ।
कन्दर्पज्वरपीडितव्रजवधूसन्दोहजीवातवो,
जीयासुर्भवतश्चिर यदुपते स्वच्छा कटाक्षच्छटा ॥[2]

चण्डीप्रियनत चण्डीकृतबलरण्डीकृतखलवल्लभ वल्लव
पट्टाम्बरधर भट्टारक बकहुट्टाक ललितपण्डितमण्डित
नन्दीश्वरपति-नन्दीहितभर सदीपितरससागर नागर
अङ्गीकृतनवसङ्गीतक वर-भङ्गीलवहृतजङ्गमलङ्घिम
गोत्राहितकर गोत्राहितदय गोत्राधिपधृतिशोभनलोभन
वन्यास्थितवहुकन्यापटहर धन्याशयमणिचोर मनोरम
शम्पारुचिपट सम्पालितभव-कम्पाकुलजन फुल्ल समुल्लस
उर्वीप्रियकर खर्वीकृतखल दर्वीकरपतिगर्वितपर्वत
वीर !

पिष्ट्वा सङ्ग्रामपट्टे पटलमकुटिले[3] दैत्यगोकण्टकाना,
क्रीडालोठीविघट्टै स्फुटमरतिकर नैचिकीचारकाणाम्[4] ।
वृन्दारण्य चकारखिलजगदगदङ्कारकारुण्यकारो[5],
य सञ्चारोचित व सुखयतु स पटु कुञ्जपट्टाधिराज ।

पिच्छलसद्घननीलकेश
चन्दनचर्चितचारुवेश
खण्डितदुर्जनभूरिमाय,
मण्डितनिर्मलहारिकाय ।
वीर !

---

१. क शुभ्राशन । २. गोवि पद्यं नास्ति । ३ क पटलमकुलिते । ४ गोवि चारुकाणाम् । ५ गोवि कारुण्यधार ।

गीर्वाण स्फुटमखिलं विवर्द्धयन्त,
निर्वाण दनुजघटासु संघटय्य ।
कुर्वाणं व्रजनिलय निरन्तरोद्यत्
पर्वाणं मुरमथनं स्तुवे भवन्तम् ॥

द्वितीया सम्पूर्णा सविरुदा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ।२।

एते चण्डवृत्तस्य गर्भितान्तर्गता प्रभेदाः ।

अथ मिश्रिता

तत्र–

१ मिश्रकलिका

—मिश्रिता चाथ कथ्यते ॥ ४ ॥
आद्यन्तासौ-पद्ययुक्ता पद्याभ्यां चापि संयुता ।
मध्यतः कलिका कार्या सवर्णैर्मनजैर्गणैः ॥ ५ ॥
बिरुदेनान्विता चापि रमणीयतरा मता ।
षट्पदा सापि विज्ञेया छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ६ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—अथ-विदग्धत्रिभङ्गीकलिकानन्तरं मिश्रिता मिश्रकलिका कथ्यते-उच्यत इत्यर्थः । तां विशिनष्टि—कलिकाया आद्यन्तयोरासौ-पद्याभ्यां युक्ता तथा आद्यन्तयोरेव पद्याभ्यां च संयुता मध्यतस्तयोरित्यर्थः, कलिका कार्या । कलिकां विशिनष्टि सवर्णं वर्णो लघुः[1] तत्सहितैः मनजैः–मगणनगणजगणैरन्विता संयुक्ता इत्यर्थः ॥४-५॥

तथा बिरुदेन चाप्यन्विता । अतएवातिरमणीयतरा मता-सम्मता । सापि च छन्दःशास्त्रविशारदैः षट्पदा विज्ञेया इत्युपदिश्यत इति वाक्यार्थः । बिरुदसाहित्यं च विदग्धत्रिभङ्गीकलिकालक्षणकारिकायामप्यवसेयं सुधीभिरिति शिवम् ॥६॥

अत्र चादौ आसौ-पद्यं ततो पद्यं ततश्च षट्पदीकलिका तदनन्तरमपि पद्यं ततो बिरुदं अनन्तरमपि पद्यमेव । ततोपि बिरुदं चीरं सम्बोधनोपलक्षितं तदन्ते आसी पद्यम्, इति क्रमेणोक्तलक्षणोपलक्षिता मिश्रा कलिका कार्या इति फलितोऽर्थः ।

यथा–

उदञ्चदतिमञ्जुलस्मितसुधोर्मिभीसास्पद
तरङ्गितवराङ्गनास्फुरदनङ्गरङ्गाम्बुधे ।
दृगिन्दुमणिमण्डलीसलिलनिर्झरस्यन्दनो
मुकुन्द मुखचन्द्रमास्तव तनोतु शर्म्मातुलम् ।[2]

---

१ क लघ्वः । २ चीरं तनोति शर्माणि न ।

दुष्टदुर्दमारिष्टकण्ठीरवकण्ठविखण्डनखेलदष्टापद नवीनाष्टापदविस्पर्द्धिपदाम्बरपरीत गरिष्ठगण्डशैलसपिण्डवक्ष पटु पाटव—

दण्डितचटुलभुजङ्गम
कन्दुकविलसितलङ्गिम
भण्डिल[1] विचकिल[2] मण्डित
सङ्गरविहरणपण्डित
दन्तुरदनुजविडम्बक
कुण्ठितकुटिलकदम्बक ।

खचिताखण्डलोपलविराजदण्डजराजमणिम[य][3] कुण्डलमण्डितमञ्जुलगण्डस्थलविशङ्कटभाण्डीरतटीताण्डवकलारञ्जितसुहृन्मण्डल

नन्दविचुम्बित-कुन्दनिभस्मित
गन्धकरम्बित शन्दविवेष्टित
तुन्दपरिस्फुर-द्दण्डकडम्बर ।

[4]दुर्जनभोजेन्द्रकण्टककण्ठकन्दोद्धरणो[4]द्दामकुद्दाल विनम्रविपद्दारुणध्वान्तविद्रावणमार्तण्डोपमकृपाकटाक्ष शारदचन्द्र[5]मरीचिमाधुर्यविडम्बितुण्डमण्डल

लोष्ठीकृतमणि-कोष्ठीकुलमु[नि-
गोष्ठीश्वर मधुरोष्ठीप्रिय पर-
मेष्ठी][6]ष्ठित परमेष्ठीकृतनर
धीर !

उपहितपशुपालीनेत्रसारङ्गतुष्टि,
प्रसरदमृतधाराधोरणीधौतविश्वा ।
पिहितरविसुधाशु प्राशुतापिञ्छरम्या,
रमयतु वकहन्तु[7] कान्तिकादम्बिनी व ।

इति मिश्रकलिका ।३।

अथ चण्डवृत्तस्य मिश्रित प्रभेद । एवमन्येपि ।

इति विरुदावल्यां चण्डवृत्तमेव दण्डकत्रिभङ्गचाद्यवान्तरत्रिभङ्गीकलिका प्रकरण तृतीयम् ।३।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके सलक्षण चण्डवृत्तप्रकरण समाप्तम् ।१।

---

१. ख तण्डिल । २ क विचकित । ३ गोवि मणिम[य]नास्ति । ४ गोवि कुर्जनभोजेन्द्रकटककदम्बोद्धरणो । ५. गोवि. शारदावण्ड- । ६ [-] कोष्ठगतोंशो नास्ति क प्रतौ । ७ क. ख. वहकंतु ।

गीर्वाणं स्फुटमखिलं विवर्द्धयन्तं
निर्वाणं दनुजभटासु सघटय्य ।
कुर्वाणं प्रणमिलय निरन्तरोद्यत्
पर्वाणं मुरमथन स्तुवे भवन्तम् ॥

द्वितीया सम्पूर्णा सविरुदा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ।२।

एते चण्डवृत्तस्य गर्भितान्तर्गता प्रभेदाः ।

अथ मिश्रिता

तत्र–

१ मिश्रकलिका

—मिश्रिता चाथ कथ्यते ॥ ४ ॥
आद्यन्तयोः पद्ययुक्ता गद्याभ्यां चापि संयुता ।
मध्यतः कलिका कार्या सदण्डभनजैर्गणैः ॥ ५ ॥
विरुदेनान्विता चापि रमणीयतरा मता ।
षट्पदा सापि विज्ञेया छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ६ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—अथ-विदग्धत्रिभङ्गीकलिकानन्तरं मिश्रिता मिश्रकलिका कथ्यते-उच्यत इत्यर्थः । तां विशिनष्टि—कलिकाया आद्यन्तयोराद्यौ पद्याभ्यां युक्ता तथा आद्यन्तयोरेव पद्याभ्यां च संयुता मध्यतस्तयोरित्यर्थः, कलिका कार्या । कलिकां विशिनष्टि तस्य दण्डो लघु¹ तत्सहितैः भगणैः-भगणनगणजगणगणैरन्विता संयुक्ता इत्यर्थः ॥४ ५॥

तथा विरुदेन चाप्यन्विता । अतएवातिरमणीयतरा मता-सम्मता । साऽपि च छन्दःशास्त्रविशारदैः षट्पदा विज्ञेया इत्युपदिश्यत इति वाक्यार्थः । विरुदसाहित्यं च विदग्धत्रिभङ्गीकलिकासकलकलिकानामप्यवधेयं सुधीभिरिति शिवम् ॥६॥

अत्र चादौ गाथीपद्यं ततो गद्यं ततश्च षट्पदीकलिका तदनन्तरमपि पद्यं ततो विरुदं तदनन्तरमपि पद्यमेव । ततोऽपि विरुदं वीरं सम्बोधनोपलक्षितं सर्वान्ते चाद्यं पद्यम् इति क्रमेणोक्तलक्षणोपलक्षिता मिश्रा कलिका कार्या इति फलितोऽर्थः ।

यथा–

उदञ्चदतिमञ्जुलस्मितसुधोर्मिलीलास्पद
तरङ्गितवराङ्गनास्फुरदनङ्गरङ्गाम्बुधे ।
दृगिन्दुमणिमण्डलीसलिलनिर्झरस्यन्दनो
मुकुन्द मुखचन्द्रमास्तव तनोतु धर्मांशुमम् ।²

---

१ क लघु । २ गौडि. तनोति धर्मांनि न ।

दुष्टदुर्दमारिष्टकण्ठीरवकण्ठविखण्डनखेलदष्टापद नवीनाष्टापदविस्पर्द्धिपदाम्बरपरीत गरिष्ठगण्डशैलसपिण्डवक्ष पट्ट पाटव—

दण्डितचटुलभुजङ्गम
कन्दुकविलसितलङ्गिम
भण्डिल[1] विचकिल[2] मण्डित
सङ्गरविहरणपण्डित
दन्तुरदनुजविडम्बक
कुण्ठितकुटिलकदम्बक ।

खचिताखण्डलोपलविराजदण्डजराजमणिम[य][3] कुण्डलमण्डितमञ्जुलगण्डस्थलविशङ्कटभाण्डीरतटीताण्डवकलारञ्जितसुहृन्मण्डल

नन्दविचुम्बित-कुन्दनिभस्मित
गन्धकरम्बित शन्दविवेष्टित
तुन्दपरिस्फुर-दण्डकडम्बर ।

[4]दुर्जनभोजेन्द्रकण्टककण्ठकन्दोद्धरणो[4]द्दामकुद्दाल विनम्रविपद्दारुणध्वान्तविद्रावणमार्तण्डोपमकृपाकटाक्ष शारदचन्द्र[5]मरीचिमाधुर्यविडम्बितुण्डमण्डल

लोष्ठीकृतमणि-कोष्ठीकुलमु[नि-
गोष्ठीश्वर मधुरोष्ठीप्रिय पर-
मेष्ठी][6] डित परमेष्ठीकृतनर
धीर ।

उपहितपशुपालीनेत्रसारङ्गतुष्टि,
प्रसरदमृतधाराधोरणीधौतविश्वा ।
पिहितरविसुधांशु प्रांशुतापिञ्छरम्या,
रमयतु वकहन्तु[7] कान्तिकादम्बिनी व ।

इति मिश्रकलिका ।३।

अथ चण्डवृत्तस्य मिश्रित प्रभेद । एवमन्येपि ।

इति विरुदावल्यां चण्डवृत्तमेव दण्डकत्रिभङ्ग्याद्यवान्तर-
त्रिभङ्गीकलिका प्रकरण तृतीयम् ।३।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके सलक्षण चण्डवृत्तप्रकरणं समाप्तम् ।१।

---

१. ख तण्डिल । २ क. विचकित । ३ गोवि मणिम[य]नास्ति । ४ गोवि दुर्जनभोजेन्द्रकटककदम्बोद्धरणो । ५. गोवि. शारदाचण्ड- । ६ [-] कोष्ठगतोंशो नास्ति क प्रतौ । ७ क. ख वहकतु ।

[विरुदावल्यां साधारणमत दण्डवृत्तं चतुर्थप्रकरणम्]

अथ साधारणं दण्डवृत्तम्

तत्र–

स्वेच्छया तु कलान्यास साधारणमिदं मतम् ।
न च सप्तदशादूर्ध्वं न वर्णनियमादपि ॥ १ ॥
क्रियते यैर्गणैरारम्भस्तैरेव सकला कला ।
प्रस्वादिवर्णसंयोगेऽप्यत्र चरणस्य लाघवम् ॥ २ ॥

[व्या०] अस्यार्थः —स्वेच्छया इत्यादि सुगमम् । तत्राक्षरनियममाह—न चेति । न च सप्तदशवर्णादूर्ध्वं न वा वर्णनियमादपि कला कार्या इति शेषः । किञ्च नियमान्तरमाह—क्रियत इति । आद्यात्-वर्णात् यैरेव गणैः कलाप्रारम्भः क्रियते तैरेव सकला अपेक्षिता कला कर्त्तव्या इति शेषः । अपि च 'प्रस्वादीति' प्रस्वेति आदिग्रहणेन-ग्र-प्र स्त-स्म-स्य-क्वेत्यादीनां संयुक्तानां वर्णानां संयोगेऽपि सति अत्र दण्डकारम्भे तत्प्रकरणस्थले वा पूर्वपूर्वचरणस्य लाघवं-लघुत्वं भवमन्तव्यमित्युत्सर्गः ।

तत्र अक्षरे यथा–

अङ्कुण रिङ्कुण ।

इत्यादि । संयुक्ते यथा–

प्रणयप्रवण ।

इत्यादि । एवं गणान्तरेऽपि बोद्धव्यम् ।

चतुर्वर्णे सर्वलघौ यथा–

विधुमुख कृतसुख ।

इत्यादि । एवं प्रस्तारान्तरेऽपि सर्वसाधारणस्थले स्वेच्छातः कलान्यासोऽवगन्तव्यः ।

मात्रावृत्ते यथा–

चतुष्कलद्वयेनापि कला जगणवर्जिता ।

[व्या०] कर्त्तव्या इति शेषः । यथा—

तारापतिमुख तारायितमुख ।

इत्यादि ।

प्रस्तारद्वितयेऽप्येवं कलान्यासः स्वतः स्मृतः ॥३॥

[व्या०] स्वतः–स्वेच्छातो भवतीति स्मृत इत्यर्थः ॥३॥

साधारणमतं चैतद् दिङ्मात्रमिह दर्शितम् ।
विशेषस्तत्र तत्रापि बोद्धव्यो विस्तारशङ्कया ॥ ४ ॥

[व्या०] तत्र तत्रापीति–तत्तत्प्रस्तारेषु इत्यर्थः ॥४॥

इति विरुदावल्यामवान्तरं साधारणमतं दण्डवृत्त-प्रकरणं चतुर्थम् ।४।

१ अथ साप्तविभक्तिकी कलिका

स्तुतिर्विधीयते विष्णो. सप्तभिस्तु विभक्तिभि ।
यत्र सा कलिका सद्भिर्ज्ञेया साप्तविभक्तिकी ।। १ ।।
अथोच्यते विभक्तीना लक्षण कविसम्मतम् ।
तत्तद्गणोपनिहित यथाशास्त्रमतिस्फुटम् ।। २ ।।
भसौ तु घटितौ यत्र प्रथमा सा प्रकीर्तिता ।
नयाभ्या तु द्वितीया स्यात् तृतीया ननसा लघु ।। ३ ।।
त्रिभिस्तैस्तु चतुर्थी स्यात् यत्र यौ पञ्चमी तु सा ।
ताभ्या तु षष्ठी विज्ञेया यत्र सौ सप्तमी तु सा ।। ४ ।।
विहाय प्रथमा ज्ञेया सर्वा साधारणे मते ।
स्थितास्तु गणसाम्येन स्वेच्छयैव यत.[1] कला ।। ५ ।।
उदाहरणमेतासा क्रमतो वृत्तमौक्तिके ।
कथ्यते कविसन्तोषहेतवे* हरिकीर्त्तनं ।। ६ ।।

[व्या०] सुलभार्यास्तु कारिका इति न व्याख्यायन्ते । क्रमेणोदाहरणानि, यथा–

य स्थिरकरुण-स्तर्जितवरुणः ।
तर्पितजनक सम्मदजनक ।। १ ।।
प्रणतविमाय जगुरनपायम् ।
घनरुचिकाय सुकृतिजना यम् ।। २ ।।
सुजनकलितकथनेन प्रबलदनुजमथनेन ।
प्रणयिषु रतमभयेन प्रकटरतिषु किल येन ।। ३ ।।
यस्मै परिध्वस्तदुष्टाय चक्रु स्पृहा माल्यदुष्टाय[2] ।
दिव्या स्त्रिय केलितुष्टाय कन्दर्परङ्गेण पुष्टाय ।। ४ ।।
धृतोत्साहपूराद् द्युतिक्षिप्तसूरात् ।
यतोऽरिर्विदूराद् भय प्राप शूरात् ।। ५ ।।
यस्योज्ज्वलाङ्गस्य सञ्चार्यपाङ्गस्य ।
वेणुर्ललामस्य हस्तेऽभिरामस्य ।। ६ ।।
स्मितविस्फुरिते-ऽजनि यत्र हिते ।
रतिरुल्लसिते सदृशा ललिते ।। ७ ।।
इति सप्तविभक्तय ।*

- चिह्नान्तर्गतोमशो नास्ति ख. प्रतौ । १. ख यता । २. गोवि. जुष्टाय ।

*अथ सम्बुद्धिः

तमौ [सु] घटितौ यत्र तत्सम्बोधनमीरितम् ।
एवं सम्बोधमात्रेय विभक्तिः सप्तकीर्तिता ॥ ७ ॥

यथा–

स त्वं जय ! जय ! दुष्टप्रतिभय !
भक्तस्थितदय[1] ! सुप्तव्रजभय ! ॥ ८ ॥
वीर !
मित्रकुलोदित नर्मसुमोदित
रञ्जितराधिक शर्मभराधिक ।

विरुदमिदम्—

वीर !
हसोत्तमामिमतपिता सेवकचक्रेषु वर्धितोत्सेका ।
मुरजयिन[2] कल्याणी करुणाकल्लोलिनी जयति ।

इति साप्तविभक्तिकी कलिका ।१।

२ अथ अक्षमयी कलिका

अकारादि-क्षकारान्त-मातृकारूपधारिणी ।
विष्णो स्तुतिपरा सेयं कलिकाऽक्षमयी मता ॥ ८ ॥
यत्र स्युस्तु*रगा सर्वे गणा यगणवर्जिता ।
मातृकावर्णघटिता क्रमात् मगमठ स्तुतौ ॥ ९ ॥

[अथ] अस्यार्थः— यत्राक्षमयी भगवत स्तुतौ सर्वे तुरगाः—चतुष्कला सर्व-द्विगण-भगण-सगणाः, जगणवर्जिता गणाः क्रमात् मातृकावर्णेषु यथायथं घटिताश्चेत् स्युस्तदा पूर्वोक्तविशेषण-विशिष्टा सैषं अक्षमयी कलिका मता-सम्मता इति पूर्वश्लोकेन सम्बन्धः । मात्रावृत्ते तु 'चतुष्कल-रूपेणापि जगणपञ्चवर्जिता' इत्यत्रैव उक्तत्वात् अक्षमयीमात्रावृत्तमेवेति पुष्पितः समुल्लासः । सर्वत्र च मात्रावृत्तेष्वेव जगणस्य हेयत्वेन निर्देशात्त्व । यथा—

मधुरेश ! माधुरीमय माधव मुरलीमतलस्मिकामुग्ध ।
मम मदनमोहन मुधा मर्दय मनसो महामोहम् ॥
अच्युत जय जय आर्त्तकृपामय ।
इन्द्रमदार्दन ईतिविघातन ॥ १ ॥
उज्ज्वलविभ्रम ऊर्जितविक्रम ।
ऋद्धिपुरोधपुर ऋमुदयापर ॥ २ ॥

---

१ गोवि. भक्तस्थितदय । २ गोवि. मुरोद्धर । * *चिह्नान्तर्गतोऽशो नास्ति क प्रतौ ।

लृदिवकृपेक्षित लॄवदलक्षित ।
एधितवल्लव ऐन्दवकुलमव ॥ ३ ॥
ओज स्फूर्जित औग्र्यविवर्जित ।
अस्रविसङ्कट अष्टापदपट ॥ ४ ॥

इति षोडशस्वरावय ।

अथ कावय पञ्चवर्गा.

कङ्कणयुतकर खण्डितखलवर[1] ।
गतिजितकुञ्जर घनघुसृणाकर[2] ॥ ५ ॥
ङुतमुरलीरत चलचिल्लीलत ।
छलितसतीशत जलजोद्भवनत[3] ॥ ६ ॥
झषवरकुण्डल ञोङ्कयितदल ।
टङ्कितभूधर ठसमाननवर[4] ॥ ७ ॥
डमरघटाहर ढक्कितकरतल ।
णग्वरधृताचल तरलविलोचन ॥ ८ ॥
थूत्कृतखञ्जन दनुजविमर्द्दन ।
धवलावर्द्धन नन्दसुखास्पद ॥ ९ ॥
पङ्कजसमपद फणिनुतिमोदित ।
बन्धुविनोदित भङ्गुरितालक ॥ १० ॥
मञ्जुलमालक—

इति कादिपञ्चवर्गा ।

अथ यादय.

—यष्टिलसद्भुज
रम्यमुखाम्बुज ललितविशारद ॥ ११ ॥
वल्लवरञ्जद शर्म्मदचेष्टित ।
षट्पदवेष्टित सरसीरुहधर ॥ १२ ॥
हलधरसोदर क्षणदगुणोत्कर ॥ १३ ॥

इति यादय ।

वीर ।

---

१. क. खलधर । २. गोवि. घनघुसृणाम्बर । ३. गोवि. जलजोद्भवनुत । ४. गोवि. ठनिभाननवर ।

कर्णे कल्पितकर्णिकः कलिकया कामायितः कान्तिभिः
कान्तानां किलकिञ्चितं किसलयं कीनाशधिः कीर्तिभिः ।
कुर्वन् कूर्दनकानि केशरितया कैशोरधाम् कोटिश
कोपीकौकुसकसकुष्टकुलिक[1] कृष्णः क्रियात् काङ्क्षितम् ।
सौरीतटचर गौरीव्रतपर
गौरीपटहर चौरीकृतकर ।
धीर !
प्रेमोरुहृदृहिण्डक कसकटसुभटेन्द्रकण्ठकुट्टाक ।
कुरु कौकुमपट्टाम्बर भट्टारक ताण्डव बुद्धिं[2] मे ॥
इति पञ्चमी कलिका ।२।

३ अथ सर्वलघुकलिका

अथ सर्वलघुं कलिकाद्वयं पुनरपीह भण्यते । तत्र–

भगणैर्पञ्चभिर्यत्र सप्तभिर्वापि तैः पुनः ।
क्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णैः षोडशभिस्तथा ॥ १० ॥
प्रस्तारद्वयमन्त्यं स्याल्लघुभिः सकलाक्षरैः ।
तत्सर्वलघुकं प्रोक्तं कलिकाद्वयमुत्तमम् ॥ ११ ॥

[व्या०] अस्यायमर्थः —अत्र पञ्चभिः–पञ्चसंख्याकैर्भगणैः–भिन्नपूर्वमेकं पदं अत्र, च पुनः भगणैः सप्तभिरपि तैरेव पञ्चभिर्भगणैः —क्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णैः षोडशभिर्वा पदं भवति । तावदेव सप्तदशाक्षरमपि पदं कर्तव्यम् । एतदूर्ध्वं तु न कर्तव्यमित्येवोपदेशः । न च सप्तदशा-द्यूर्ध्वमित्यत्रैव निषेधस्य उक्तत्वात् । स्वेच्छया कलाभ्यासस्तु सप्तदशवर्णपर्यन्तमेव तावदत्र मते चमत्कारकारी नतदूर्ध्वमिति प्रस्तारान्त्येऽपि सर्वलघुभिस्समस्तैर्वर्णैर्यदन्त्यं प्रस्तारान्त्यं भवति तत् सर्वलघुकमुत्तमं कलिकाद्वयं भवतीत्यर्थः ।

तत्र पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका यथा–

गोपस्त्रीविधुदामोदसयितवपुषं नन्दगोपादिकेभि-
म्युद्दानन्दैकहेतुं धनुजमतमयोद्दामदावाग्निधामम् ।
ईषद्धास्याम्बुधाराविकिरणभृतसद्वम्धुषितसद्धागं
चित्तं श्रीकृष्ण मेऽद्य श्रय शरणमहो दुःखदाहोपशान्त्यै[3] ।
चरणकमलदलजठरकटक[4]
रजकदलन वदागतपरकटक

---

१ गोवि कौपीनीगुरवंसकण्टकुलिकः । २ क० वृद्धि । ३ गोवि पूर्वपद्य नास्ति ।
४ गोवि० चरक धरटक ।

नटनघटनलसदगवरकटक
सकनकमरकतमयनवकटक ॥ १ ॥

इति पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका ।

अथ षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका

कपटरुदितनटदकठिनपदतट-
विघटितदधिघट निविडितसुशकट
रुचितुलितपुरटपटलरुचिरपट-
घटितविपुलकट[1] कुटिलचिकुरघट ।
रविदुहितृनिकटलुठदजठरजट-[2]
विटपनिचितवटतटपटुतरनट-
निजविलसितहठविचटितसुविकट-
चटुलदनुजभट[3] जय युवतिषु शठ ।
वीर !

स्फुटनाटयकडम्बदण्डित-द्रढिमोड्डामर[4]दुष्टकुण्डली ।
जय गोष्ठकुटुम्बसवृतस्त्वमिडाडिम्बकदम्बडुम्बक ॥

रशनमुखर सुखरनखर
दशनशिखर-विजितशिखर ।
वीर !

विवृतविविधबाधे भ्रान्तिवेगादगाधे,
धवलित[5]भवपूरे मज्जतो मेऽविदूरे ।
अशरणगणबन्धो हा![6] कृपाकौमुदीन्दो,
सकृदकृतविलम्ब देहि हस्तावलम्बम् ॥

नामानि प्रणयेन ते सुकृतिना तन्वन्ति तुण्डोत्सव,
धामानि प्रथयन्ति हन्त जलदश्यामानि नेत्राञ्जनम् ।
सामानि श्रुतिशष्कुली मुरलिकाजातान्यलकुर्वते,
कामा निर्वृतचेतसामिह विभो ! नाशापि न शोभते ॥

इति षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका ।३।

---

१. गोवि. विपुलघट । २. गोवि जरठजट । ३ गोवि. चटुलदनुजघट । ४. क. घटितोडामर । ५. गोवि बलवति । ६. गोवि. हे ।

अथ सर्वासु कलिकासु स्थितानां विरुदानां युगपदेव लक्षणमुच्यते—

वसुषट्पङ्क्तिरविभिर्मनुभिश्चापि सर्वतः ।
कलिकासु कविः कुर्याद् विरुदानां तु कल्पनम् ॥ १२ ॥

[व्या] अस्यार्थः—सर्वासु कलिकासु वस्वादिभिः पञ्चभिः संख्यासंकेतैरष्टकारोत्तरैरपि कविर्विरुदानां कल्पनं कुर्यात् । तथा हि—कस्यांचित् कलिकायामष्टकलिकं विरुदं कस्यांचित् षट्कलिकं विरुदं अपरस्यां दशकलिकं विरुदं अन्यस्यां च द्वादशकलिकं विरुदं कस्यांचित् कलिकायां चतुर्दशकलिकं विरुदम् । कुत्रापि चकारोपादिष्टं च विरुदमितमिति क्रमेण सर्वत्र विरुदकल्पनं कविना कार्यमित्युपदिश्यते ॥१२॥

किञ्च—

वीर-वीरादिसंबुद्धया कलिका विरुदादिकम् ।
तत्र भूपतितत्तुल्यवर्णनेषु प्रयोजयेत् ॥ १३ ॥
संस्कृतप्राकृतभाषाभ्यां शौर्यवीर्यदयादिभिः ।
कीर्तिप्रतापप्राधान्यैः कुर्वीत कलिकादिकम् ॥ १४ ॥

[व्या] युग्मम् ॥१३ १४॥

अपि च—

गुणालङ्कारसहितं सरसं रीतिसंयुतम् ।
अभ्यानुप्रासस[म्पन्न]डम्बर¹ शोभितं द्वयोः ॥ १५ ॥

[व्या] द्वयोः—कलिकाविरुदयोरित्यर्थः ॥१५॥

कलिकाश्लोकविरुदत्रिकं त्रिंशत्त्रिकावधि ।
पञ्चत्रिंकोर्ध्वं विरुदावली कविभिरिष्यते ॥ १६ ॥

[व्या] अस्यार्थः—अस्यां कारिकायां सम्पूर्णां विरुदावलीं लक्षयति—विरुदावली तावत् कलिकाश्लोकविरुदैस्त्रिभिः सम्पद्यते । तत्र कलिकाश्लोकविरुदानामिति त्रिकं पञ्चत्रिंशो-र्ध्वं-पञ्चत्रिंशत्, पञ्चदश तदूर्ध्वं एतदारभ्य इत्यर्थः । कियदवधीत्यपेक्षायामुच्यते—त्रिंशत्त्रिकाव-धि-अर्थात्त्रिंशदवधिकमेव क्रियते तदा समग्रा विरुदावली भवति । एतादृशी विरुदावली कविभिरिष्यते कस्तु मतमत इत्यर्थः । यथा मुख्यास्थाने तु महती विरुदावली स्यात् । तथा च पञ्चदशादारभ्य त्रिंशत्त्रिकं भवतिस्तस्मात्ते तत्पर्यन्तं सति महती विरुदावली भवतीति । तदेवात्तथा व्याख्यातमस्माभिरिति सर्वं समञ्जसम् ॥१६॥

क्वचित्तु कलिकास्थाने केवलं गद्यमिष्यते ।
पदमाद्यन्तयोरादौ प्रधानं सुमनोहरम् ॥ १७ ॥
त्रिचतुःपञ्चकलिका श्लोकास्तावन्त एव हि ।

¹ क. अभ्यानुप्रासडम्बरं ।

[व्या०] इति, सार्द्धेन श्लोकेन विरुदावलीलक्षणे कस्यचिन्मत उपन्यस्यति । क्वचित्तु–कस्याश्चित् कलिकाया–कलिकास्थाने गद्यमेवोभमत्र केवल सविरुदं वा भवतीतीष्यते । किञ्च, आद्यन्तयो –कलिकाविरुदयोः, आशी प्रधान–आशीर्वादोपलक्षित पद्यमतिसुमनोहर भवतीति च[१] ॥१७॥

[व्या०] कियन्त्य कलिका, कियन्तश्च श्लोकाः कार्या इत्यपेक्षायामुच्यते – त्रिचतुःपञ्चकलिकाः स्वेच्छया कर्त्तव्या । श्लोका अपि तावन्त एव हि स्वेच्छयैव विधेया इत्युपदेश[२] ।

एतत् सर्वं यथास्थानमस्माभि समुदाहृतम् ॥ १८ ॥

[व्या०] सुगमम् ॥१८॥

विरुदावलीपाठफलमुपदिशति––

रम्यया विरुदावल्या प्रोक्तलक्षणयुक्तया ।
स्तूयमान प्रमुदित श्रीगोविन्द[३] प्रसीदति ॥ १९ ॥

श्री[४]

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके विरुदावली-
प्रकरणं नवमम् ॥९॥

---

१. ख 'च' नास्ति । २. ख. इत्युपेक्षायामुच्यते । ३. गोवि. वासुदेव । ४ ख, 'श्री' नास्ति ।

दशमं खण्डावली-प्रकरणम्

अथ खण्डावली

माध्वीपद्य यदाद्यन्तयो[1] स्यात् खण्डावली स्वतो ।
विनैव विरुद नानागणभेदैरनेकधा ॥ १ ॥

तत्र–

१ अथ तामरसं खण्डावली

पदे चेद् रगणः सौ च लघुद्वयनिवेशनम् ।
तदा तामरसं नाम साधारणमते भवेत् ॥ २ ॥

[व्या] अनयोः कारिकयोरयमर्थः । यदा कलिकाया आद्यन्तयोः विरुदं विनैव माध्वी पद्य भवति तदा नानागणभेदैरनेकधा असौ खण्डावली स्यादित्यन्वयः । किञ्च तत्र पदे चेद् रगणो भवति, अथ च सौ–सगणौ भवतः ततो लघुद्वयनिवेशन–लघुद्वयस्थापनं चेत्–स्यात्तदा साधारणमते स्वेच्छाकल्पितविन्यासलक्षणे तामरस इति नाम खण्डावली भवतीति वाक्यार्थः । १–२॥

यथा–

कलक्वणितघण्टिकाविकलनागरीसागरी
भवद्विपमधामकद्विगुणवल्गुभ्रद्युति ।
पतङ्गतनयातटी-वनभटी भवद्विग्रह
नवीनघनमण्डलीरचिरमाविरास्तां मह ॥
देव !

जय वल्लीरसोल्लास ! जय वृन्दावनप्रिय ! ।
जय कृष्ण ! कृपाशील ! जय लीलासुधाम्बुधे ! ॥
वीर !

छन्दसामपि दुर्गमधाम्नय
मिन्दुबिम्बसमाननमानन !
मन्दहासविकस्वरसुन्दर !
कुन्दकोरकदन्तरुचिव्रज !

---

१ क यदाद्यन्तयो ।

सुन्दरीजनमोहनमन्मथ
चन्दनद्रवरज्यदुर स्थल
नन्दनालयगीलितसद्गुण-
वृन्द कच्छपरूपसमुद्धृत-
मन्दराचलबाहुभुजार्गल-
कन्दलीकृतसारसमर्थ पु-
रन्दरेण चिर परिवेपित [१]
नन्दिनाथसमञ्चितदिव्यक-[२]
लिन्दशैलसुताजलजन्यर-
विन्दकाननकोपकदम्वमि-
लिन्दगावक निर्जरनायक
वृन्दया सह कल्पितकौतुक
दन्दशूकफणावलिगञ्जन
चन्द्रिकोज्ज्वलनिर्गलितामृत-
विन्दुदुर्दिनसूनृतसार मु-
कुन्ददेव कृपाल[३]दशि (दृशि) त्वयि
किं दुरापमिहास्ति ममेश्वर
किं दयावरुणालय दुर्जन-
निन्दयापि जगत्त्रयवल्लभ !
कन्दनीलिमदेहमह कुरु-
विन्दखण्डजपाकुसुमस्फुरद्
इन्द्रगोपकबन्धुरिताधर
चन्द्रकाद्भुतपिञ्छशिरस्तद-
रिन्दम स्वमतिं दससे यदि
विन्दते सुखमेव[४]जनस्तव
वन्दिवद्गुणगानकर ध्रुव-
मिन्दयन् विदितो गरुडध्वज
नन्दयन्निजयासनयानय
नन्दगोपकुमार जयीभव ।
देव !

१. ख. परिषेवित । २. ख विल्क । ३. ख. कृपालु । ४. ख. मेव ।

जय नीपावलीवास जय वेणुसुधाप्रिय ।
जय वल्लवसौभाग्य जय ब्रह्मरसायन ।
धीर !

पशुपवसनावल्लीवृन्दे धिया करपल्लवे
विपुलपुलकश्रेणि[1]स्फीतस्फुरत्कुसुमोद्गम ।
तपनतनयातीरे तीरे समागतसम्भ्रम
प्रसयतु मम क्षेमं कश्चिन्नव[2] कमलेक्षणम्[3] ॥१॥

इति तामरसं नाम खण्डावली ।१।

२ अथ मञ्जरी खण्डावली

नरेन्द्रवर्जिता यत्र रचिता स्युस्तुरङ्गमाः ।
प्रान्तस्थपदसंयुक्ता मञ्जरी सा निगद्यते ॥ २ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—यत्र-यस्यां मञ्जर्यां नरेन्द्रेण-जगणेन वर्जिता-रहिताः तुरङ्गमाः चतुर्मात्रात्मकगणाः रचिता यदि स्युः । किञ्च प्रान्तस्थाभ्यां पदाभ्यां संयुक्ता चेद् भवति तदा सा मञ्जरीति नाम्ना प्रसिद्धा खण्डावली निगद्यते छन्दोविद्भिरिति शेषः ॥२॥

यथा–

पिशङ्गसिचयाञ्चितं चटुलनैचिकीचारकं
चमत्कृतधृतवल्लवीश्चसुकिता[4]नमामि तमम् ।
नवप्ररुचिरचन्द्रिकाभरणचुम्बिचूडाम्बरं
तमालदलमेचकं सुचिरमाविरास्तां महः ॥
देव !

जय लीलासुधासिन्धो ! जय लीलाविमन्दिरम्[5] ।
जय राधैकसौहार्द जय कन्दर्पविभ्रम ॥
धीर !

जय जय जम्भारि भुजस्तम्भा-
कलिताहम्मा-वाहितजम्भा
मुदचष्टम्भा-प्रहसरम्भा[7]
जय निर्दम्भा-सादितरम्भा
नपुकुचकुम्भा-वरपरिरम्भा
निधुवनपुम्भा-प्रारम्भा

---

१ ख. मेघी । २ ख कमलेक्षणः । ३ ख नारदं । ४ ख कुलुकिता । ५. ख. मन्दिरः । ६. वाहितकुम्भा । ७. ख प्रहसरंभा ।

धिकसुखसम्भा-वनविश्रम्भा-
भाषणसम्भारैरिह सम्भा-
वय न सम्भावितमुज्जृम्भा-
म्बुजसदृशम्भाषणमधुरम्भा-
रत्यालम्भा-ग्यायतनम्भा-
कमुख सम्भालयत[१] किम्भा-
लाक्षरसम्भावनया देव !

कुमारपत्रपिञ्छेन विराजत्कुन्तलश्रियम् ।
सुकुमारमह वन्दे नन्दगोपकुमारकम् ॥

वीर !

नित्य यन्मधुमन्थरा मधुकरायन्ते सुधास्वादित-
स्तन्माधुर्यधुरीणतापरिणते प्राय परीक्षाविधिम् ।
कर्त्तुं स्वाङ्घ्रिसरोरुह करपुटे कृत्वा मुहु सलिहन्,
दोलान्दोलनदोलिताखिलतनु पायाद् यशोदार्भक ॥

इति मञ्जरी खण्डावली ।२।

इत्थ खण्डावलीना तु भेदा सन्ति सहस्रश ।
साकल्येन मया नोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ॥४॥
सुकुमारमतीनां च मार्गदर्शनतो भवेत् ।
विज्ञानमिति मत्वैव मया मार्गः प्रदर्शित ॥५॥
सहस्रेण मुखेनैतद् वक्तु शेषोऽपि न क्षमः ।
कथमेकमुखेनाहमशेष वाङ्मय ब्रुवे ॥६॥

श्री

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके खण्डावलीप्रकरणं दशमम् ।१०।

श्रीः

---

१. ख. वत्सुक सम्भालय ।

एकादशं दोष-प्रकरणम्

अथ दोषाः

अथैतयोर्निरूप्यन्ते दोषाः कविसुखावहाः ।
यान्विदित्वैव सुकविः काव्यं कर्तुमिहार्हति ॥१॥

[व्या०] अथेति । विरुदावली-खण्डावली-कथनानन्तरमेतयोः—विरुदावली-खण्डावली-भेदयोर्दोषा निरूप्यन्ते । शेषं सुगमम् ॥१॥

तान् आह—

अमैत्री निरनुप्रासो दौर्बल्यं च कलाहतिः ।
असाम्प्रतं हतौचित्यं विपरीतयुतं पुनः ॥ २ ॥
विसृष्टान्तं स्खलत्तालं ममदोषांश्च वेत्ति यः ।
कुर्याच्चैतत् तमोलोके उलूकोऽसौ भवेन्नरः ॥ ३ ॥

[व्या] अस्यार्थः—अमैत्री—अक्षरमैत्रीराहित्यं । निरनुप्रासः—अनुप्रासाभावः । दौर्बल्यं—लघुवर्णता इति पिङ्गलेन व्याख्यातं । कलाहतिः—प्रथमपदे पूर्वपर्वस्थानेऽन्यपर्वपाठः । यथा—

कमलवदन सुविमलतम ।
रञ्जितरण सञ्जितगुण ।

अयुक्तवर्णनं—हतौचित्यं । स्वल्पमुदाहरणम् । विलम्बवर्णस्थाने मधुरवर्णस्थितिः, मधुरस्थाने वा विलम्बस्थापनं विपरीतयुतं । विसृष्टान्तं—न्यूनाधिकविसर्गादिवर्णानां प्रथनम् । स्खलत्तालं—यतिभङ्गं तत्तदनुसारात् अन्यानि यथाहृतानि । इत्येतानष्टदोषान् यः कविः न वेत्ति—न जानाति अविज्ञाय च यदि एतत्—पूर्वोक्तं विरुदावली-खण्डावलीलक्षणं यो नरः—कविः काव्यं कुर्यात् तदा तमोलोके पापान्धकारावृतलोके असौ उलूकः—दिवान्धपक्षी भवेदित्यर्थः । तस्मात् दोषज्ञाने ज्ञाते पुनः तद्वैपरीत्ये महदभिव्यं इत्यत्र विशेषो ज्ञेयोऽस्माभिः । इति सर्वं निर्मलं मङ्गलम् ।

लक्ष्मीनाथतनूजेन चन्द्रशेखरसूरिणा ।
छन्दःशास्त्रे विरचितं वार्त्तिकं वृत्तमौक्तिकम् ॥

इति दोषनिरूपण-प्रकरणमेकादशम् ॥११॥

द्वादशं अनुक्रमणी - प्रकरणम्

प्रथमखण्डानुक्रमणी

रविकर-पशुपति-पिङ्गल-शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्बन्धात् ।
सद्वृत्तमौक्तिकमिद चक्रे श्रीचन्द्रशेखर सुकवि. ॥१॥

अथाऽभिधीयते चाऽत्राऽनुक्रमो वृत्तमौक्तिके ।
अत्र खण्डद्वय प्रोक्त मात्रा-वर्णात्मक पृथक् ॥ २ ॥

तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमेऽनुक्रमः स्फुटम् ।
प्रोच्यते यत्र विज्ञाते समूहालम्बनात्मकम् ॥ ३ ॥

ज्ञान भवेदखण्डस्य[1] खण्डस्य[2] छन्दसोऽपि च ।
मङ्गलाचरण पूर्वं ततो गुरुलघुस्थिति ॥ ४ ॥

तयोरुदाहृति पश्चात् तद् विकल्पस्य कल्पनम् ।
काव्यलक्षणवैलक्ष्ये अनिष्टफलवेदनम् ॥ ५ ॥

गणव्यवस्थामात्राणा प्रस्तारद्वयलक्षणम् ।
मात्रागणाना नामानि कथितानि तत स्फुटम् ॥ ६ ॥

वर्णवृत्तगणाना च लक्षण स्यात् तत परम् ।
तद्देवता च तन्मैत्री तत्फल चाप्यनुक्रमात् ॥ ७ ॥

मात्रोद्दिष्ट च तत्पश्चात्तन्नष्टस्याथ कीर्त्तनम् ।
वर्णोद्दिष्ट ततो ज्ञेय वर्णनष्टमत परम् ॥ ८ ॥

वर्णमेरुश्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्त्तिता ।
मात्रामेरुश्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्त्तिता ॥ ९ ॥

ततो वृत्तद्वयस्थस्य गुरोर्ज्ञान लघोरपि ।
वर्णस्य मर्कटी पश्चात् मात्रायाश्चापि मर्कटी ॥ १० ॥

तयो फल च कथित षट्प्रकार समासत ।
ततस्त्वेकाक्षरादेश्च षड्विंशत्यक्षरावधे. ॥ ११ ॥

प्रस्तारस्यापि सख्याऽत्र पिण्डीभूता प्रकीर्त्तिता ।
ततो गाथादिभेदाना कलासख्या प्रकीर्त्तिता ॥ १२ ॥

---

१ ख भवेदखण्डलस्य । २. ख. 'खण्डस्य' नास्ति ।

गाथोदाहरणं पश्चात् सप्रभेदं सलक्षणम् ।
विगाथा च तथा ज्ञेया ततो गाहू प्रकीर्त्तिता ॥ १३ ॥
अथोद्गाथा गाहिनी च सिंहिनी च ततः परम् ।
स्कन्धकं चापि कथितं सप्रभेदं सलक्षणम् ॥ १४ ॥
इति गाथाप्रकरणं प्रथमं वृत्तमौक्तिके ।
द्वितीयं षट्पदस्याथ द्विपथा तत्र संस्थिता ॥ १५ ॥
सलक्षणा सप्रभेदा रसिका स्यात् ततः परम् ।
अथ रोला समाख्याता गन्धाणा स्यात् ततः परम् ॥ १६ ॥
चौपैया च ततः प्रोक्ता ततो घत्ता प्रकीर्त्तिता ।
घत्तानन्दमतः काव्यं सोल्लासं सप्रभेदकम् ॥ १७ ॥
षट्पदं च ततः प्रोक्तं सप्रभेदमतः परम् ।
काव्यषट्पदयोश्चापि दोषाः सम्यक् निरूपिताः ॥ १८ ॥
प्राकृते संस्कृते चापि दोषाः कविसुखावहाः ।
द्वितीयं षट्पदस्यैतत् प्रोक्तं प्रकरणं त्विह ॥ १९ ॥
अथ रड्डाप्रकरणं तृतीयं परिकीर्त्यते ।
तत्र पज्झटिकाछन्दोऽडिल्लाछन्दस्तत परम् ॥ २० ॥
ततस्तु पादाकुलकं चौबोला छन्द एव च ।
रड्डाछन्दस्ततः प्रोक्तं भेदाः सप्तैव चास्य तु ॥ २१ ॥
रड्डाप्रकरणं चैव तृतीयमिह कीर्तितम् ।
पद्मावतीप्रकरणं चतुर्थमथ कथ्यते ॥ २२ ॥
तत्र पद्मावती पूर्वं ततः कुण्डलिका भवेत् ।
गगनाङ्गं ततः प्रोक्तं द्विपदी च ततः परम् ॥ २३ ॥
ततस्तु झुल्लणा-छन्द खञ्जा-छन्दस्तत परम् ।
शिखाछन्दस्ततश्च स्यात् मालाछन्दस्ततो भवेत् ॥ २४ ॥
ततस्तु चुलियाला स्यात् सोरठा तदनन्तरम् ।
हाकलीर्मधुभारश्चाऽऽभीरश्च स्यादनन्तरम् ॥ २५ ॥
अथ दण्डकला प्रोक्ता ततः कामकला भवेत् ।
रुचिराख्यं ततश्छन्दो दीपकश्च ततः स्मृतम् ॥ २६ ॥
सिंहावलोकितं छन्दस्ततश्च स्यात् प्लवङ्गमः ।
अथ लीलावतीछन्दो हरिगीत ततः स्मृतम् ॥ २७ ॥

हरिगीत[1] ततः प्रोक्त मनोहरमत. परम् ।
हरिगीता तत प्रोक्ता यतिभेदेन या स्थिता ॥ २८ ॥

अथ त्रिभङ्गी छन्द स्यात् ततो दुर्मिलका भवेत् ।
हीरच्छन्दस्तत प्रोक्तमथो जनहर मतम् ॥ २९ ॥

तत स्मरगृह छन्दो मरहट्ठा तत स्मृता ।
पद्मावतीप्रकरण चतुर्थमिह कीर्त्तितम् ॥ ३० ॥

सवैयाख्य प्रकरण पञ्चम परिकीर्त्यते ।
तत्र पूर्वं सवैयाख्य छन्द स्यादतिसुन्दरम् ॥ ३१ ॥

भेदास्तस्यापि कथिता रससख्या मनोहराः ।
ततो घनाक्षर वृत्तमतिसुन्दरमीरितम् ॥ ३२ ॥

पञ्चम तु प्रकरण सवैयाख्यमिहोदितम् ।
अथो गलितकाख्य तु **षष्ठ प्रकरण** भवेत् ॥ ३३ ॥

पूर्वं गलितक तत्र ततो विगलित मतम् ।
अथ सङ्गलित ज्ञेयमत· सुन्दर-पूर्वकम् ॥ ३४ ॥

भूषणोपपद तच्च मुखपूर्वं तत स्मृतम् ।
विलम्बितागलितक समपूर्वं ततो मतम् ॥ ३५ ॥

द्वितीय समपूर्वं चापर सङ्गलित तत ।
अथापर गलितक लम्बितापूर्वक भवेत् ॥ ३६ ॥

विक्षिप्तिकागलितक ललितापूर्वक तत ।
ततो विषमितापूर्वं मालागलितक तत ॥ ३७ ॥

मुग्धमालागलितकमथोद्गलितक भवेत् ।
षष्ठ गलितकस्यैतत् प्रोक्त प्रकरण शिवम् ॥ ३८ ॥

रन्ध्रसूर्यदिवसख्यात (७९) मात्रावृत्तमिहोदितम् ।
सप्रभेद वसुद्वन्द्व-शतद्वय-(२८८) मुदीरितम् ॥ ३९ ॥

तथा **प्रकरण** चात्र रससख्य[2] प्रकीर्त्तितम् ।
मात्रावृत्तस्य खण्डोऽय **प्रथम.** परिकीर्तितः ॥ ४० ॥

इति प्रथमखण्डानुक्रमणिका ।

---

१ हरगीतं ख । २ क रससख्या ।

द्वितीयखण्डानुक्रमणी

अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णवृत्तस्य च क्रमात् ।
वृत्तानुक्रमणी स्पष्टा क्रियते वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
आरभ्यैकाक्षरं वृत्तं षड्विंशत्यक्षरावधि ।
तत्तत्प्रस्तारगत्याऽत्र वृत्तानुक्रमणी स्थिता ॥ २ ॥
तत्र श्रीनामकं वृत्तं प्रथमं परिकीर्तितम् ।
ततः इः कथितं वृत्तं द्वौ भेदावत्र कीर्तितौ ॥ ३ ॥
एकाक्षरे द्व्यक्षरे तु पूर्वं कामस्ततो मही ।
ततः सारं मधुश्चेति भेदाश्चत्वार एव हि ॥ ४ ॥
त्र्यक्षरे चात्र ताली स्यान्नारी चापि शशी ततः ।
ततः प्रिया समाख्याता रमणः स्यादनन्तरम् ॥ ५ ॥
पञ्चालश्च मृगेन्द्रश्च मन्दरश्च ततः स्मृतः ।
कमलं चेति चात्र स्युरष्टौ भेदाः प्रकीर्तिताः[1] ॥ ६ ॥
अथातो द्विगुणा भेदाश्चतुर्वर्णादिषु स्थिताः ।
यथासम्भवमेतेषामाद्यास्तानुक्रमात् स्फुटम् ॥ ७ ॥
वृत्तानुक्रमणी सेयमङ्कसंकेततः कृता ।
प्रतिप्रस्तारविस्तारं षड्विंशत्यक्षरावधि ॥ ८ ॥

तत्र—

चतुर्वर्णप्रभेदेषु तीर्णा कन्याऽपि चाप्यतः ।
धारी[2] ततस्तु विख्याता नगाणी च ततः परम् ॥ ९ ॥
शुभं चेति समाख्यातामत्र भेदचतुष्टयम् ।
शेषभेदा न संप्रोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ॥ १० ॥
प्रस्तारगत्या ते भेदाः षोडशैव व्यवस्थिताः ।
सुधीभिरबुधाः प्रस्तार्य यथाशास्त्रमशेषतः ॥ ११ ॥
अथ पञ्चाक्षरे[3] पूर्वं सम्मोहा वृत्तमीरितम् ।
हारी ततः समाख्याता ततो हंसः प्रकीर्तितः ॥ १२ ॥

---

१ ख. भेदाः क्रमात् स्थिताः । २ ख. धारी । ३ ख. पञ्चाक्षरे ।

प्रिया तत. समाख्याता यमक तदनन्तरम् ।
प्रस्तारगत्या चैवाऽत्र भेदा द्वात्रिंशदीरिता (३२) ॥ १३ ॥
षडक्षरेऽपि पूर्वं तु शेषाख्य वृत्तमीरितम् ।
तत स्यात्तिलका वृत्त विमोह तदनन्तरम् ॥ १४ ॥
विजोहे'त्यन्यत ख्यात चतुरसमत परम् ।
पिङ्गले चउरसेति स्त्रीलिङ्ग परिकीर्तितम् ॥ १५ ॥
मन्थान च तत प्रोक्त मन्थानेत्यन्यतो भवेत् ।
शङ्खनारी तत प्रोक्ता सोमराजीति चान्यतः ॥ १६ ॥
स्यात् सुमालतिका चात्र मालतीति च पिङ्गले ।
तनुमध्या तत प्रोक्ता ततो दमनक भवेत् ॥ १७ ॥
प्रस्तारगत्या चाप्यत्र भेदा वेदरसैर्मता (६४) ।
अथ सप्ताक्षरे पूर्वं शीर्षाख्य वृत्तमीरितम् ॥ १८ ॥
तत समानिका वृत्त ततोऽपि च सुवासकम् ।
करहञ्चि तत प्रोक्त कुमारललिता तत ॥ १९ ॥
ततो मधुमती प्रोक्ता मदलेखा ततः स्मृता ।
ततो वृत्त तु कुसुमतति स्यादतिसुन्दरम् ॥ २० ॥
प्रस्तारगतिभेदेन वसुनेत्रात्मजेरिता[2] (१२८) ।
भेदा सप्ताक्षरस्यान्या ऊह्या प्रस्तार्य पण्डितैः ॥ २१ ॥
अथ वस्वक्षरे पूर्वं विद्युन्माला विराजते ।
तत प्रमाणिका ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ॥ २२ ॥
तुङ्गावृत्त तत प्रोक्त कमल तदनन्तरम् ।
माणवकक्रीडितक ततश्चित्रपदा मता ॥ २३ ॥
ततोऽनुष्टुप् समाख्याता जलद च तत स्मृतम् ।
अत्र प्रस्तारगत्यैव रसबाणयुगैर्मता. (२५६) ॥ २४ ॥
भेदा वस्वक्षरे शेषा सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ।
नवाक्षरेऽथ पूर्वं स्याद् रूपामाला मनोरमा ॥ २५ ॥
ततो महालक्ष्मिका स्यात् सारङ्ग तदनन्तरम् ।
सारङ्गिका पिङ्गले तु पाइन्त तदनन्तरम् ॥ २६ ॥

---

१. ख. विड्गोहे । २. क. वसुनेत्रात्मतेडिता ।

पादस्ता पिङ्गले तु स्यात् कमलं तदनन्तरम् ।
[बिम्बवृत्तं ततः प्रोक्तं तोमरं तदनन्तरम्][1] ॥ २७ ॥
भुजगशिशुसृतावृत्तं मणिमध्यं ततः स्मृतम् ।
भुजङ्गसङ्गता च स्यात् ततः सुललितं स्मृतम् ॥ २८ ॥
प्रस्तारगत्या भावास्य नेत्रचन्द्रशरैरपि (५१२) ।
भेदा नवाक्षरे शिष्टाः सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ॥ २९ ॥
अथ पङ्क्त्यर्णके पूर्वं गोपालः परिकीर्तितः ।
संयुतं कथितं पश्चात् ततश्चम्पकमालिका ॥ ३० ॥
क्वचिद् रुक्मवती सेयं क्वचिद् रूपवतीति च ।
ततः सारवती च[2] स्यात् सुषमा तदनन्तरम् ॥ ३१ ॥
ततोऽमृतगतिः प्रोक्ता मत्ता स्यात्तदनन्तरम् ।
पूर्वमुक्ताऽमृतगतिः सा चेद् यमकिता भवेत् ॥ ३२ ॥
प्रतिपाद्य ततोऽप्येषा त्वरिताऽनन्तरं गतिः ।
मनोरमं ततः प्रोक्तमन्यच्च च मनोरमा ॥ ३३ ॥
ततो ललित-पूर्वं तु गतीति समुदीरितम् ।
प्रस्तारान्त्यं सर्वलघुवृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ॥ ३४ ॥
प्रस्तारगत्या भेदाः स्युः तस्याकाशारमसङ्ख्यकाः (१०२४) ।
दशाक्षरेऽपरे भेदाः सूच्याः प्रस्तार्य पण्डितैः ॥ ३५ ॥
अथ रुद्राक्षरे[3] पूर्वं मालतीवृत्तमीरितम् ।
ततो बन्धुः समाख्यातो ह्यन्यत्र दोधकं भवेत् ॥ ३६ ॥
ततस्तु सुमुखीवृत्तं शालिनी स्यादनन्तरम् ।
वातोर्मी तदनु प्रोक्ता छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ३७ ॥
परस्परं चैतयोश्चेत् पादा एकत्रयोजिताः ।
तदोपजातिनामानो भेदास्ते च चतुर्दश ॥ ३८ ॥
ततो दमनकं प्रोक्तं चण्डिका तदनन्तरम् ।
सेनिका श्रेणिका चेति तथा नामान्तरं क्वचित् ॥ ३९ ॥
नाममात्रे परं भेदः फलतो न तु किञ्चन ।
इन्द्रवज्रा ततः प्रोक्ता ततश्चोपेन्द्रपूर्विका ॥ ४० ॥

---

१ [ ] कोष्ठगतोंऽशो नास्ति क ख प्रतौ। २ ख. ततः सारवती च नास्ति। ३ ख. रुद्राक्षरैः। ४ ख तु।

उपजातिस्तत प्रोक्ता पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना ।
भेदाश्चतुर्दशैतस्या विज्ञेया. पिण्डतो बहिः ॥ ४१ ॥

ततो रथोद्धतावृत्त स्वागतावृत्ततस्तथा ।
भ्रमरान्ते विलसिताऽनुकूला च ततो भवेत् ॥ ४२ ॥

ततो मोट्टनक[1] वृत्त सुकेशी च ततो भवेत् ।
तत सुभद्रिकावृत्त बकुलं कथित तत ॥ ४३ ॥

रुद्रसस्याक्षरे भेदा वसुवेदखनेत्रकैः (२०४८) ।
प्रस्तारगत्या जायन्ते शिष्टान् प्रस्तार्य सूचयेत् ॥ ४४ ॥

अथ रव्यक्षरे पूर्वमापीड कथितोऽन्यत ।
विद्याधरस्ततश्च स्यात् प्रयातं भुजगादनु ॥ ४५ ॥

ततो लक्ष्मीधर वृत्तमन्यत्र स्त्रग्विणी तत. ।
तोटक स्यात् तत सारङ्गक मौक्तिकदामत ॥ ४६ ॥

मोदक सुन्दरी चापि तत स्यात् प्रमिताक्षरा ।
चन्द्रवर्त्मं ततो ज्ञेयमतो द्रुतविलम्बितम् ॥ ४७ ॥

ततस्तु वशस्थविला क्वचित् क्लीबमिद भवेत् ।
क्वचित्तु वशस्तनितमिन्द्रवशा ततो भवेत् ॥ ४८ ॥

अनयोरपि चैकत्रपादानां योजन यदि ।
तदोपजातयो नाम भेदा स्युस्ते चतुर्दश ॥ ४९ ॥

सर्वत्रैव स्वल्पभेदे भवन्तीहोपजातय. ।
वृत्ताभ्यामल्पभेदाभ्यामुपदेशः पितुर्मम ॥ ५० ॥

ततो जलोद्धतगतिर्वैश्वदेवी ततो मता ।
मन्दाकिनी ततो ज्ञेया तत कुसुमचित्रिता ॥ ५१ ॥

ततस्तामरस वृत्त ततो भवति मालती ।
कुत्रचिद् यमुना चेति मणिमाला ततो भवेत् ॥ ५२ ॥

ततो जलधरमाला स्यात् ततश्चापि प्रियवदा ।
ततस्तु ललिता सैव सुपूर्वान्यत्र लक्षिता ॥ ५३ ॥

---

१ ख मोटनकम् ।

ततोऽपि ललितं वृत्तं ललनेत्यपि च क्वचित् ।
कामदत्ता ततः प्रोक्ता ततो वसन्तचत्वरम् ॥ ५४ ॥
प्रमुदितवदना-मन्दाकिन्योर्भेदो न वास्तवो घटितः ।
नामान्तरेण भेदो गणतो भणितो न चोद्दिष्टः ॥ ५५ ॥[1]
प्रमुदितावदूर्ध्वं[2] वदने[3] वदनाऽन्यत्र च प्रभा ।
विख्याता कविमुख्यैस्तु ततः स्याज्जलमालिनी ॥ ५६ ॥
सर्वान्त्य नयनात् पूर्वं तरल वृत्तमीरितम् ।
अत्र प्रस्ताररीत्या तु भेदा द्व्यक्षरे स्थिताः ॥ ५७ ॥
रसरन्ध्रखवेदैस्तु (४०९६) ज्ञेयाः सूच्याः[4] सुबुद्धिभिः ।
त्रयोदशाक्षरे पूर्वं वाराहः कथितो मया ॥ ५८ ॥
मायावृत्तं ततस्तु स्यात् क्वचिन्मत्तमयूरकम् ।
ततस्तु तारकं वृत्तं कन्द पङ्क्तावली तथा ॥ ५९ ॥
ततः प्रहर्षिणीवृत्तं रुचिरा तदनन्तरम् ।
चण्डीवृत्तं ततः प्रोक्तं ततः स्यान्मञ्जुभाषिणी ॥ ६० ॥
शाम्भी सुनन्दिनी चैव चन्द्रिका तदनन्तरम् ।
क्वचिदुत्पलिनीवृत्तं चन्द्रिकैवोच्यते बुधैः ॥ ६१ ॥
कलहंसस्ततश्च स्यात् सिंहनादोऽप्ययं क्वचित् ।
ततो मृगेन्द्रवदनं क्षमा पश्चात् ततो लता ॥ ६२ ॥
ततस्तु चन्द्रलेखाख्यं चन्द्रलेखेत्यपि क्वचित् ।
ततश्च सुद्युतिः पश्चाल्लक्ष्मीवृत्तं मनोहरम् ॥ ६३ ॥
ततो विमल पूर्वं तु गतीतिरुचिरं भवेत् ।
प्रस्तारास्य वृत्तमेतद् भाषितं कविपुङ्गवैः ॥ ६४ ॥
प्रस्तारगत्या विज्ञेया भेदाः कामाक्षरे बुधैः ।
नेत्रग्रहेन्दुवसुभिः (८१९२) ज्ञेयान् प्रस्तार्य सूचयेत् ॥ ६५ ॥
अथ मन्वक्षरे पूर्वं सिंहास्यः कथितो बुधैः ।
ततो वसन्ततिलकं ततश्चक्रं प्रकीर्तितम् ॥ ६६ ॥
असम्बाधा ततश्च स्यात् ततः स्यादपराजिता ।
कलिकान्त प्रहरणं वासन्ती स्यादनन्तरम् ॥ ६७ ॥

---

१ पद्यं नास्ति क. प्रतौ । २ ख. प्रमुदितवदनस्यान्ते । ३ ख. वाम्ने । ४ ख. ज्ञेयास्तुद्वाराः ।

लीला नान्दीमुखी तस्माद् वैदर्भी तदनन्तरम् ।
प्रसिद्धमिन्दुवदनं स्त्रीलिङ्गमिदमन्यत ॥ ६८ ॥

ततस्तु शरभी प्रोक्ता ततश्चाहिवृतिः स्थिता ।
ततोऽपि विमला ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ॥ ६९ ॥

ततो मणिगणं वृत्तमन्त्य मन्वक्षरे भवेत् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा वेदाष्टतो गुणा[१] ॥७० ॥

रसेन्दुप्रमिताश्चापि(१६३८४) विज्ञेया कविशेखरैः ।
यथासम्भवसम्प्रोक्ता शेषास्तूह्या. स्वबुद्धित ॥ ७१ ॥

लीलाखेलमथो वक्ष्ये वृत्तं पञ्चदशाक्षरे ।
सारङ्गिकेति यन्नाम पिङ्गले प्रोक्तमुत्तमम् ॥ ७२ ॥

ततस्तु मालिनीवृत्तं तत. स्याच्चारु चामरम् ।
तूणकं चान्यतश्चापि भ्रमरावलिका तत. ॥ ७३ ॥

भ्रमरावली पिङ्गले स्यान् मनोहंसस्ततस्तत ।
शरभं वृत्तमन्यत्र मता शशिकलेति च ॥ ७४ ॥

मणिगुणनिकरं स्रगिति च भेदौ द्वावस्य यतिकृतौ भवत ।
तत्प्रागेवाभिहितं वृत्तद्वयमस्य शरभतो न भिदा ॥ ७५ ॥

ततस्तु निशिपालाख्यं विपिनातिलकं तत ।
चन्द्रलेखा तत प्रोक्ता चण्डलेखाऽपि चान्यत. ॥ ७६ ॥[२]

ततश्चित्रा समाख्याता चित्रं चान्यत्र कीर्तितम् ।
ततस्तु केसरं वृत्तमेला स्यात्तदनन्तरम् ॥ ७७ ॥

तत प्रिया समाख्याता यतिभेदादलिः पुन ।
उत्सवस्तु तत प्रोक्तस्ततश्चोडुगणं मतम् ॥ ७८ ॥

प्रस्तारगत्या सम्प्रोक्ता भेदा पञ्चदशाक्षरे ।
वसुशास्त्राश्वनेत्राग्निप्रमिता (३२७६८) कविपण्डितै ॥७९॥

प्रस्तार्य शेषभेदास्तु कृत्वा नामानि च स्वत ।
अस्मदीयोपदेशेन सूचनीया सुबुद्धिभि ॥ ८० ॥

अथ प्रथमतो राम प्रस्तारे षोडशाक्षरे ।
ब्रह्मरूपकमित्यस्य नाम प्रोक्तं च पिङ्गले ॥ ८१ ॥

---

१ क गुण । २. ख पद्य नास्ति ।

नराचमिति यन्नाम ततः स्यात् पञ्चचामरम् ।
ततो नील समाख्यात ततः स्याच्चञ्चलाभिधम् ॥ ८२ ॥
इदमेवान्यतश्चित्रसङ्गमित्येव भाषितम् ।
ततस्तु मदनाद्यूर्ध्वं ललिता स्यादनन्तरम् ॥ ८३ ॥
वाणिनीवृत्तमाख्यात प्रवरललितं तत ।
अनन्तर तु गरुडरुत स्याच्चकिता तत ॥ ८४ ॥
चकितैव यतिविभेदात् क्वचिदपि गजतुरगविलसितं भवति ।
क्वचिदिदमेव ऋषभगजविलसितमिति नाम संचरते ॥ ८५ ॥
तत शैलशिखावृत्तं ततस्तु ललित मतम् ।
तत सुकेसरं वृत्तं ललना स्यादनन्तरम् ॥ ८६ ॥
ततो गिरिधृति कृत्वाप्यचनामन्तर धृतिः ।
प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदा स्युः षोडशाक्षरे ॥ ८७ ॥
रसाग्निपञ्चेषुरस (६५५३६) मिता प्रख्यातबुद्धिभिः ।
प्रस्तार्य सुध्याख्या येऽपि भेदा इत्युपदिश्यते ॥ ८८ ॥
अथ सप्तदशे वर्णप्रस्तारे वृत्तमीर्यते ।
लीलाधृष्ट प्रथमतस्ततः पृथ्वी प्रकीर्तिता ॥ ८९ ॥
ततो मालावतीवृत्तं मालाधर इति क्वचित् ।
तत शिखरिणीवृत्तं हरिणीवृत्ततस्तथा ॥ ९० ॥
मन्दाक्रान्ता वंशपत्रपतितं पतिता क्वचित् ।
शम्भौ तु वंशदलमेतन्नाम प्रकीर्तितम् ॥ ९१ ॥
ततो नर्दटकं वृत्तं यतिभेदात्तु कोकिलम् ।
ततस्तु हारिणीवृत्तं भाराक्रान्ता ततो भवत् ॥ ९२ ॥
मतङ्गवाहिनीवृत्तं तत स्यात् पद्मकं तथा[1] ।
ततश्चाद्दाम्बुराहरमिति वृत्तं समीरितम् ॥ ९३ ॥
प्रस्तारगत्या भेदा स्युरत्र सप्तदशाक्षरे ।
नेत्राश्वव्योमचन्द्राग्निचन्द्रैः (१३१०७२) परिमिताः परे ॥ ९४ ॥
भेदाः सुबुद्धिभिस्तूह्या प्रस्तार्य स्वमनीषया ।
अथाष्टादशवर्णानां प्रस्तारे प्रथमं भवत् ॥ ९५ ॥

---

१ ख तत ।

लीलाचन्द्रस्ततश्च स्यान्मञ्जीरा चर्चरी तत ।
क्रीडाचन्द्रस्ततश्च स्यात् तत. कुसुमितालता ॥ ९६ ॥
ततस्तु नन्दन वृत्त नाराच स्यादनन्तरम् ।
मञ्जुलेत्यन्यत. प्रोक्ता चित्रलेखा ततो भवेत् ॥ ९७ ॥
ततस्तु भ्रमराच्चापि पदमित्यतिसुन्दरम् ।
शार्दूलललितं पश्चात् ततः सुललित भवेत् ॥ ९८ ॥
अनन्तर चोपवनकुसुम वृत्तमीरितम् ।
अत्र प्रस्तारगतितो भेदा. ह्यष्टादशाक्षरे ॥ ९९ ॥
वेदश्रुत्यवनीनेत्ररसयुग्मैः(२६२१४४)मिता मताः ।
शेषा स्वबुद्धया प्रस्तार्य विज्ञेया स्वगुरूक्तित ॥ १०० ॥
अथ प्रथमतो नागानन्दश्चैकोनविंशके ।
शार्दूलानन्तर विक्रीडित वृत्तं तत स्मृतम् ॥ १०१ ॥
ततश्चन्द्र समाख्यात चन्द्रमालेति च क्वचित् ।
ततस्तु धवल वृत्त धवलेति च पिङ्गले ॥ १०२ ॥
तत शम्भुः समाख्यातो मेघविस्फूर्जिता तत ।
छायावृत्त ततश्च स्यात् सुरसा तदनन्तरम् ॥ १०३ ॥
फुल्लदाम ततश्च स्यान्मृदुलात् कुसुम तत ।
प्रस्तारगत्या भेदाश्चैकोनविंशाक्षरे कृता ॥ १०४ ॥
वस्वष्टनेत्रश्रुतिदृग्भूतै (५२४२८८) परिमिता परे ।
भेदाः प्रस्तार्य वोद्धव्या. स्वबुद्धया शुद्धबुद्धिभि ॥ १०५ ॥
अथ विंशाक्षरे पूर्व योगानन्द[१] समीरित ।
ततस्तु गीतिकावृत्त गण्डका तदनन्तरम् ॥ १०६ ॥
गण्डकैव क्वच्चित्रवृत्तमन्यत्र वृत्तकम् ।
शोभावृत्त तत प्रोक्त तत सुवदना भवेत् ॥ १०७ ॥
प्लवङ्गभङ्गाच्च पुनर्मङ्गल वृत्तमुच्यते ।
तत शशाङ्कचलित ततो भवति भद्रकम् ॥ १०८ ॥
ततो गुणगण वृत्तमन्त्य स्यादतिसुन्दरम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रत्या भेदा रसमुनीषुभि ॥ १०९ ॥

---

१. क. ख नागानन्द ।

नराचमिति यन्नाम तत स्यात् पञ्चचामरम् ।
ततो नील समाख्यात ततः स्याच्चञ्चलाभिधम् ॥ ८२ ॥

इदमेवान्यतश्चित्रसङ्गमित्येव भाषितम् ।
ततस्तु मदनादूर्ध्वं ललिता स्यादनन्तरम् ॥ ८३ ॥

वाणिनीवृत्तमाख्यातं प्रवरललितं ततः ।
अनन्तरं तु गरुडरुत स्याच्चकिता ततः ॥ ८४ ॥

चकितैव यतिविभेदात् क्वचिदपि गजतुरगविलसित भवति ।
क्वचिदिदमेव ऋषभगजविलसितमिति नाम लभते ॥ ८५ ॥

ततः शैलशिखावृत्तं ततस्तु ललितं मतम् ।
ततः सुकेसरं वृत्तं ललना स्यादनन्तरम् ॥ ८६ ॥

ततो गिरिधृतिः कुम्भाप्यथानन्तरं धृतिः ।
प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदाः स्युः षोडशाक्षरे ॥ ८७ ॥

रसाग्निपञ्चेषुरसैः (६५५३६) मिताः प्रस्तारबुद्धिभिः ।
प्रस्तार्य सूच्याख्याता येपि भेदास्तूपदिश्यते ॥ ८८ ॥

अथ सप्तदशे वर्णप्रस्तारे वृत्तमीर्यते ।
लीलापृष्टं प्रथमतस्ततः पृथ्वी प्रकीर्तिता ॥ ८९ ॥

ततो मालावतीवृत्तं मालाधर इति क्वचित् ।
ततः शिखरिणीवृत्तं हरिणीवृत्ततस्तथा ॥ ९० ॥

मन्दाक्रान्ता वंशपत्रपतितं पतिता क्वचित् ।
शम्भौ तु वंशवदनमेतन्नाम प्रकीर्तितम् ॥ ९१ ॥

ततो नर्दटकं वृत्तं यतिभेदात्तु कोकिलम् ।
ततस्तु हारिणीवृत्तं भाराक्रान्ता ततो भवेत् ॥ ९२ ॥

मतङ्गवाहिनीवृत्तं ततः स्यात् पद्मकं तथा[1] ।
[illegible]मिति वृत्तं समीरितम् ॥ ९३ ॥

प्रस्तारगत्या भेदाः स्युरत्र सप्तदशाक्षरे ।
नेत्राश्वव्योमचन्द्राग्निचन्द्रैः (१३१०७२) परिमिताः परे ॥९४॥

भेदा गुरुद्भिरूह्याः प्रस्तार्य स्वमनीषया ।
यथाष्टादशवर्णानां प्रस्तारे प्रथमं भवेत् ॥ ९५ ॥

---

१ ख तथ ।

अथ तत्त्वाक्षरे पूर्वं रामानन्दोऽथ दुर्मिला ।
किरीटं तु ततः प्रोक्तं ततस्तन्वी प्रकीर्तिता ॥ १२४ ॥
ततस्तु माधवीवृत्तं तरलानयनं ततः ।
अत्र प्रस्तारभेदेन भेदाः षड्भूमियुग्मकैः ॥ १२५ ॥
सप्तर्षिमुनिशास्त्रेन्दु(१६७७७२१६)मिताः स्युरपरे पुनः ।
गुरूपदेशमार्गेण सूचनीया मनीषिभिः ॥ १२६ ॥
अथ पञ्चाधिके विंशत्यक्षरे पूर्वमुच्यते ।
कामानन्दस्ततः क्रौञ्चपदा मल्ली ततो भवेत् ॥ १२७ ॥
ततो मणिगणं वृत्तमिति वृत्तचतुष्टयम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा नेत्राग्निसिन्धुभिः ॥ १२८ ॥
वेदपञ्चेषुवह्निभ्यामपि(३३५५४४३२)स्युरपरेपि च ।
छन्दःशास्त्रोक्तमार्गेण सूचनीयाः स्वबुद्धितः ॥ १२९ ॥
षड्भिरभ्यधिके विंशत्यक्षरेऽप्यथ गद्यते ।
श्रीगोविन्दानन्दसंज्ञं वृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ॥ १३० ॥
ततो भुजङ्गपूर्वं तु विजृम्भितमिति स्मृतम् ।
अपवाहस्ततो वृत्तं मागधी तदनन्तरम् ॥ १३१ ॥
ततश्चान्त्यं भवेद् वृत्तं कमलाऽनन्तरं दलम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रत्या भेदाः सम्यग् विभाविताः ॥ १३२ ॥
वेदशास्त्रवसुद्वन्द्वखेन्द्वश्वरससूचिताः ।(६७१०८८६४) ।
प्रस्तार्यं शास्त्रमार्गेणापरे सूच्याः स्वबुद्धितः ॥ १३३ ॥
एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कीर्तितम् ।
यथालाभं वर्णवृत्तमन्यदूह्यं महात्मभिः ॥ १३४ ॥
रसलोचनमुन्यश्वचन्द्रनेत्राब्धिवह्निभिः ।
शशिना योजितैरङ्कैः(१३४२१७७२६)पिण्डसङ्ख्या भवेदिह ॥ १३५ ॥
भेदेष्वेतेषु चाद्यन्तसहितैः भेदकल्पनैः ।
पञ्चषष्ठ्यधिकं नेत्रशतकं (२६५) वृत्तमीरितम् ॥ १३६ ॥
द्वितीये खण्डके वर्णवृत्ते सवृत्तमौक्तिके ।
वृत्तानुक्रमणी रूपमाद्यं प्रकरणं त्विदम् ॥ १३७ ॥
प्रकीर्णकप्रकरणं द्वितीयमथ कथ्यते ।
प्रस्तारोत्तीर्णवृत्तानि कानिचित्तत्र वच्महे ॥ १३८ ॥

वसुवेदखबाणग्रहच (१०४८५७६) मिता स्युश्चापरे¹ बुधैः ।
प्रस्तार्य बुद्धया ससूच्या छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ११० ॥

अथैकविंशत्यक्षरेऽस्मिन् ब्रह्मानन्दावमन्तरम् ।
स्रग्धरा मञ्जरी च स्यान्नरेन्द्रस्तदनन्तरम् ॥ १११ ॥

ततस्तु सरसीवृत्तं क्वचित् सुरतरुर्भवेत् ।
सिद्धक चान्यतः प्रोक्तं रुचिरा तदनन्तरम् ॥ ११२ ॥

ततश्च स्यान्निरुपमतिलकं वृत्तमग्यगम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा नन्त्रेपुचन्द्रकैः ॥ ११३ ॥

मुनिरःप्रशनेनैश्च (२०९७१५२) विज्ञेया कविशेखरैः ।
प्रस्तार्यन्निरसमुन्नेयं भेदजातं सुबुद्धिभिः ॥ ११४ ॥

अथ प्रथमतो विद्यामन्दवृत्तमुदीरितम् ।
द्वाविंशत्यक्षरे हंसीवृत्तं स्यात्तदनन्तरम् ।
ततस्तु मदिरावृत्तं मन्द्रकं तदनन्तरम् ॥ ११५ ॥
तदेव यतिभेदेन शिखरं परिकीर्तितम् ।
ततः स्यादच्युतं वृत्तं मदालसमनन्तरम् ॥ ११६ ॥
ततस्तरुवरं वृत्तमन्यं भवति सुन्दरम् ।
प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदा वेदखबह्निभिः ॥ ११७ ॥

वेदग्रहेन्दुवेदैश्च (४१९४३०४) भवन्तीति विनिश्चितम् ।
तथैवान्येपि ये भेदास्ते प्रस्तार्य स्वबुद्धितः ॥ ११८ ॥
सूचनीयाः कविवरैः छन्दःशास्त्रविशारदैः ।
अथात्र त्र्यधिके विंशत्यक्षरे पूर्वमुच्यते ॥ ११९ ॥
दिव्यानन्दः सर्वगुरुस्ततः सुन्दरिका भवेत् ।
ततस्तु यतिभेदेन सैव पद्मावती भवेत् ॥ १२० ॥
ततोऽद्रितनया प्रोक्ता सैवाश्वललितं क्वचित् ।
ततस्तु मालतीवृत्तं मल्लिका स्यादनन्तरम् ॥ १२१ ॥
मत्ताक्रीडं तत प्रोक्तं कनकाद्वलयं ततः ।
प्रस्तारगतितो भेदास्त्रयोविंशाक्षरे स्थिताः ॥ १२२ ॥
वसुव्योमरसवसुरामावृद्वसुवह्मिवसुभिर्मिताः (८३८८६०८) ।
शेषभेदाः सुधीभिस्तु सूच्याः प्रस्तार्य शास्त्रतः ॥ १२३ ॥

---

१ क चापरे ।

अथ तत्त्वाक्षरे पूर्वं रामानन्दोऽथ दुर्मिला ।
किरीट तु तत प्रोक्त ततस्तन्वी प्रकीर्तिता ॥ १२४ ॥
ततस्तु माधवीवृत्त तरलाक्षयन तत ।
अत्र प्रस्तारभेदेन भेदा षड्भूमियुग्मकै. ॥ १२५ ॥
सप्तर्षिमुनिशास्त्रेन्दु(१६७७७२१६)मिता स्युरपरे पुन ।
गुरूपदेशमार्गेण सूचनीया मनीषिभि ॥ १२६ ॥
अथ पञ्चाधिके विंशत्यक्षरे पूर्वमुच्यते ।
कामानन्दस्तत क्रौञ्चपदा मल्ली ततो भवेत् ॥ १२७ ॥
ततो मणिगण वृत्तमिति वृत्तचतुष्टयम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा नेत्राग्निसिन्धुभि ॥ १२८ ॥
वेदपञ्चेषुवह्निभ्यामपि(३३५५४४३२)स्युरपरेपि च ।
छन्द शास्त्रोक्तमार्गेण सूचनीया स्वबुद्धित ॥ १२९ ॥
षड्भिरभ्यधिके विंशत्यक्षरेऽप्यथ गद्यते ।
श्रीगोविन्दानन्दसज्ञ वृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ॥ १३० ॥
ततो भुजङ्गपूर्वं तु विजृम्भितमिति स्मृतम् ।
अपवाहस्ततो वृत्त मागधी तदनन्तरम् ॥ १३१ ॥
ततश्चान्त्य भवेद् वृत्त कमलाऽनन्तर दलम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रत्या भेदा सम्यग् विभाविता ॥ १३२ ॥
वेदशास्त्रवसुद्वन्द्वखेन्द्वश्वरससूचिता ।(६७१०८८६४) ।
प्रस्तार्यं शास्त्रमार्गेणापरे सूच्या स्वबुद्धित ॥ १३३ ॥
एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कीर्तितम् ।
यथालाभ वर्णवृत्तमन्यदूह्य महात्मभि ॥ १३४ ॥
रसलोचनमुन्यश्वचन्द्रनेत्राब्धिवह्निभि ।
शशिना योजितैरङ्कै (१३४२१७७२६)पिण्डसख्या भवेदिह ॥ १३५ ॥
भेदेष्वेतेषु चाद्यन्तसहितै भेदकल्पनै ।
पञ्चषष्ठ्यधिक नेत्रशतक (२६५) वृत्तमीरितम् ॥ १३६ ॥
द्वितीये खण्डके वर्णवृत्ते सवृत्तमौक्तिके ।
वृत्तानुक्रमणी रूपमाद्य प्रकरण त्विदम् ॥ १३७ ॥
प्रकीर्णकप्रकरण द्वितीयमथ कथ्यते ।
प्रस्तारोत्तीर्णवृत्तानि कानिचित्तत्र चक्ष्महे ॥ १३८ ॥

मालती पिपीलिका चाथ ततस्तु करभः स्मृतः ।
अनन्तरं च पणव मालास्यात्तदनन्तरम् ॥ १३९ ॥

द्वितीयाऽस्य विभङ्गी स्यात् शालूरं तदनन्तरम् ।
इति प्रकीर्णकं नाम द्वितीयं वृत्तमौक्तिके ॥ १४० ॥

प्रोक्तं प्रकरणं चाथ तृतीयमिदमुच्यते ।
दण्डकानां प्रकरणं क्रमप्राप्तं मनोरमम् ॥ १४१ ॥

तत्र–

चण्डवृष्टिप्रपातस्तु प्रथमं परिकीर्तितः ।
ततः प्रचितकश्चाथ ततोऽप्यर्णादयो मताः ॥ १४२ ॥

ततस्तु सर्वतोभद्रस्ततश्चाऽशोकमञ्जरी ।
कुसुमस्तबकश्चाथ मत्तमातङ्ग एव च ॥ १४३ ॥

अनङ्गशेखरश्चेति तृतीयं परिकीर्तितम् ।
अथार्द्धसमकं नाम चतुर्थं परिकीर्त्यते ॥ १४४ ॥

पुष्पिताग्रा भवेत्तत्र प्रथमं वृत्तमुत्तमम् ।
ततश्चैवोपचित्रं स्यादथ वेगवती भवेत् ॥ १४५ ॥

हरिणाऽनन्तरं चापि प्लुता संपरिकीर्तिता ।
ततश्चापरवक्त्रं स्यात् सुन्दरी च ततो मता ॥ १४६ ॥

अथ भद्रविराट् वृत्तं तत केतुमती स्थिता ।
ततस्तु वाङ्मतीवृत्तमथ स्यात् षट्पदावली ॥ १४७ ॥

इत्यर्द्धसमकं नाम तुर्यं प्रकरणं मतम् ।

अथोच्यते प्रकरणं विषमं वृत्तमौक्तिके ॥ १४८ ॥
पञ्चमं यत्र पूर्वं स्यादुद्गता वृत्तमुत्तमम् ।
ततस्तु सौरभं वृत्तं ललितं तदनन्तरम् ॥ १४९ ॥

अथ भावस्ततो वक्त्रं पथ्यावृत्तमतः स्मृतम् ।
ततश्चानुष्टुभं वृत्तमष्टाक्षरतया कृतम् ॥ १५० ॥

इत्थं विषमवृत्तानां प्रोक्तं प्रकरणं त्विह ।

अथ षष्ठं प्रकरणं वैतालीयं प्रकीर्त्यते ॥ १५१ ॥
वैतालीयं प्रथमतस्तत्र वृत्तं निगद्यते ।
ततश्चौपच्छन्दसिकमापातलिकमेव च ॥ १५२ ॥

द्विविध नलिनाख्य च तत स्याद् दक्षिणान्तिका ।
अथोत्तरान्तिका पश्चात् [प्राच्यवृत्तिरुदीरिता ॥ १५३ ॥
उदीच्यवृत्तिस्तत्पश्चात् प्रवृत्तकमतः परम् ।
अथापरान्तिका पश्चा][1]च्चारुहासिन्युदीरिता ॥ १५४ ॥
वैतालीय प्रकरण षष्ठमेतदुदीरितम् ।
यतिप्रकरण चाथ सप्तमं परिकीर्त्यते ॥ १५५ ॥
यतीना घटन यत्र सोदाहरणमीरितम् ।
अथ **गद्यप्रकरणमष्टम वृत्तमौक्तिके** ॥ १५६ ॥
नानाविधानि गद्यानि गद्यन्ते यत्र लक्षणै ।
तत्र तु प्रथम शुद्ध चूर्णक गद्यमुच्यते ॥ १५७ ॥
अथाऽऽविद्ध चूर्णक तु ललित चूर्णक तत ।
ततस्तूत्कलिकाप्राय वृत्तगन्धि तत· स्मृतम् ॥ १५८ ॥
ग्रन्थान्तरमत चात्र लक्षित गद्यलक्षणे ।
इति गद्यप्रकरणमष्टम परिकीर्तितम् ॥ १५९ ॥
विरुदावलीप्रकरण नवमं चाथ कथ्यते ।

तत्र–

द्विगाद्या च त्रिभङ्ग्यन्ता कलिका नवधा पुरा ॥ १६० ॥
ततस्त्रिभङ्गी कलिका [2]नोधा साऽपि[2] प्रकीर्तिता ।
विदग्धाद् या द्विपाद्यन्ता सापि षोढा तत स्मृता ॥ १६१ ॥
मुग्धादिका तरुण्यन्ता मध्ये मध्या चतुर्विधा ।
अवान्तरप्रकरण कलिकाया प्रकीर्तितम् ॥ १६२ ॥
अथातो व्यापक चण्डवृत्त विरुदमीरितम् ।
सलक्षण तथा साधारण चेति द्विधैव तत् ॥ १६३ ॥
ततोऽस्य परिभाषा स्यात् तद्भेदाना व्यवस्थिति. ।

तत्र–

पुरुषोत्तमाख्यं प्रथम ततस्तु तिलक भवेत् ॥ १६४ ॥
अच्युतस्तु तत. प्रोक्तो वर्द्धितस्तदनन्तरम् ।
ततो रणः समाख्यातस्तत. स्याद् वीरचण्डकम् ॥ १६५ ॥

---

१. [–] कोष्ठगतोंशो क. प्रतौ नोपलभ्यते । २-२. 'नवधा सा' इति मुद्र ।

अन्यत्र वीरमत्र स्यात् ततः शाकः प्रकीर्तितः ।
मातङ्गखेलितं पश्चादमोत्पलमुदीरितम् ॥ १६६ ॥
ततो गुणरतिः प्रोक्ता ततः कल्पद्रुमो भवेत् ।
कन्दलश्चाथ कथितस्ततः स्यादपराजितम् ॥ १६७ ॥
नर्त्तनं तु ततः प्रोक्तं तरत्पूर्वं समस्तकम् ।
वेष्टनास्यं चण्डवृत्तं ततश्चास्खलितं मतम् ॥ १६८ ॥
अथ पल्लवितं पश्चात् समग्रं तुरगस्तथा ।
पङ्केरुहं ततः प्रोक्तं सितकञ्जमतः परम् ॥ १६९ ॥
पाण्डूत्पलं ततश्च स्यादिन्दीवरमतः परम् ।
अरुणाम्भोरुहं पश्चादथ फुल्लाम्बुजं मतम् ॥ १७० ॥
चम्पकं तु ततः प्रोक्तं वञ्जुलं तदनन्तरम् ।
ततः कुन्दं समाख्यातमथो बकुलभासुरम् ॥ १७१ ॥
अनन्तरं तु बकुलमङ्गलं परिकीर्तितम् ।
मञ्जरी कोरकश्चाथ गुच्छः कुसुममेव च ॥ १७२ ॥
अवान्तरमिदं चापि प्रोक्तं प्रकरणं त्विह ।
अथ त्रिभङ्गी कलिका दण्डकाख्या प्रकीर्तिता ॥ १७३ ॥
विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा त्रिभङ्गी कलिका ततः ।
ततस्तु मिश्रकलिका कथिता वृत्तमौक्तिके ॥ १७४ ॥
अवान्तरं प्रकरणं तृतीयमतिसुन्दरम् ।
इत्थं सलक्षणं चण्डवृत्तप्रकरणं कृतम् ॥ १७५ ॥
ततः साधारणमतं चण्डवृत्तमिहोदितम् ।
साधारणमतं चैकदेशतः प्रोक्तमत्र हि ॥ १७६ ॥
अवान्तरप्रकरणं साधारणमते स्थितम् ।
चतुर्थं विरुदावल्यां[1] विशेषं कविपण्डितैः ॥ १७७ ॥
ततस्तत्रैव कलिका ज्ञेया सप्तविभक्तिकी ।
अनन्तरं चाक्षमयीकलिका कथिता त्विह ॥ १७८ ॥
ततस्तु सर्वलघुकं कलिकाद्वयमीरितम् ।
ततश्च विरुदानां तु युगपल्लक्षणं कृतम् ॥ १७९ ॥

---

१ ख विरुदावल्यो । २. ख. कलिका* ।

ततस्तु विरुदावल्या' सम्पूर्णं लक्षण कृतम् ।
विरुदावलीप्रकरण नवम वृत्तमौक्तिके ॥ १८० ॥

अथ खण्डावली तत्र पूर्वं तामरस भवेत् ।
ततस्तु मञ्जरी नाम भवेत् खण्डावली त्विह ॥ १८१ ॥

खण्डावलीप्रकरण दशम परिकीर्तितम् ।
अथानयोस्तु दोषाणा निरूपणमुदीरितम् ॥ १८२ ॥

एकादश प्रकरणमिदमुक्तमतिस्फुटम् ।
तत खण्डद्वयस्यापि प्रोक्ताऽनुक्रमणी क्रमात् ॥ १८३ ॥

एतत् प्रकरण चात्र द्वादश परिकीर्तितम् ।
वृत्तानि यत्र गण्यन्ते तथा प्रकरणानि च ॥ १८४ ॥

पूर्वखण्डे षडेवात्र प्रोक्त प्रकरण स्फुटम् ।
द्वितीयखण्डे चाप्यत्र रविसख्यमुदीरितम् ॥ १८५ ॥

अवान्तर प्रकरण चतु सख्य प्रकीर्तितम् ।
सम्भूय चात्र गदित रसेन्दुमितमुत्तमम् ॥ १८६ ॥

उभयो खण्डयोश्चापि सम्भूयैव प्रकाशितम् ।
द्वाविंशति'प्रकरण रुचिर वृत्तमौक्तिके ॥ १८७ ॥

मात्सर्यमुत्सार्य मुदा सदा सहृदयैरिदम् ।
अन्तर्मुखै प्रकरण विज्ञैरालोक्यता मम ॥ १८८ ॥

इति खण्डद्वयानुक्रमणीप्रकरण द्वादशम् ।१२।

---

१ ख नेत्रद्वय ।

याते दिव सुतनये विनयोपपन्ने,
श्रीचन्द्रशेखरकवौ किल तत्प्रवन्ध ।
विच्छेदमाप भुवि तद्वचसैव सार्द्ध,
पूर्णीकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ॥ ८ ॥

श्रीवृत्तमौक्तिकमिद लक्ष्मीनाथेन पूरित यत्नात् ।
जीयादाचन्द्रार्क जीवातुर्जीवलोकस्य ॥ ९ ॥

श्री

इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणि-छन्द शास्त्र[1]परमाचार्य-सकलोपनिषद्रहस्यार्णव-कर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कवि[2]-चन्द्रशेखरभट्टविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके वर्णवृत्ताख्यो द्वितीय. परिच्छेद ।२।

श्रीः

समाप्तश्चाय वार्त्तिके द्वितीय. खण्ड.[3] ।

श्रीकृष्णायानन्तशक्तये नम. । श्रीरस्तु ।

समाप्तमिदं श्रीवृत्तमौक्तिक नाम पिङ्गलवार्त्तिकम् ।

शुभमस्तु ।

सवत् १६६० समये श्रावनवदि ११ रवौ शुभदिने लिखित शुभस्थाने अर्गलपुरनगरे लालमनिमिश्रेण । शुभम् । इदं ग्रन्थसख्या ३८५०॥

---

१ ख. छन्द शास्त्रे । २. ख. कविशेखरश्री । ३. ख. द्वितीयखण्ड ।

सकलशास्त्रपरमाचार्यश्रीलक्ष्मीनाथभट्टप्रणीतो

वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धारः

प्रथमो विश्रामः

श्रीगणेशाय नमः

प्रणम्य जगदाधारं विश्वरूपिणमीश्वरम् ।
श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्त्तिके वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
प्रस्तारं समालोच्य नष्टोद्दिष्टादिदुष्करम् ।
श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन सुकरीक्रियतेतराम् ॥ २ ॥

अथात्र तत्र छन्दःशिक्षकपरीक्षार्थं कौतुकार्थञ्च मात्राणामुद्दिष्टमुच्यते । तत्र लघोर्गुरुविभेदभिन्नेषु षट्कलप्रस्तारगणेषु क्व कतिमं रूपम् इति लिखित्वा पृष्टे रूपमुद्दिष्टं प्रथमप्रत्ययस्वरूपं, तत्प्रकारमाह सार्द्धेन श्लोकेन ।

दद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयतः ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थिताम् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उर्वरितैश्च तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्टं विजानीयात् ।

दद्यादिति । तस्मिन् लिखिते रूपे पूर्वयुगाङ्कान् दद्यात् । तत्र च लघोरुपर्येव गुरोस्तु उभयतः—उपर्यधश्चेत्यर्थः । अथ पश्चादन्त्याङ्के—शेषाङ्के गुरुशीर्षस्थिताम् अङ्कान् विलुम्पेत् । तथा कृते सति उर्वरितैश्च अङ्कैः मात्राणामुद्दिष्टं जानीयात् । एवं दृष्टं भवति । षट्कलप्रस्तारे यावदेको गुरुः द्वौ लघू एको गुरुश्च एवंरूपो गणः ऽ।।ऽ कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकारं गणं लिखित्वा पूर्वयुगेन समाना अङ्कास्ते दातव्याः २ ३ १३ (५) मात्रिकमायां प्रथमोऽङ्को देयः, ततः पूर्वयुगाङ्काभावादुत्सर्गसिद्धो द्वितीयोऽङ्कस्तथा । तदनन्तरं पूर्वाङ्कद्वयमेकीकृत्य तत्सदृशकोऽङ्कोऽग्रे देयः । एवं च पूर्वयुगसमानाङ्कास्त्रिपञ्चादिदेया इति पूर्वयुगक्रमार्थः । अथ गुरोरुपर्यधश्चाङ्को देयो द्विकलत्वात् । एतच्च गुरुशीर्षपदा-लभ्यते । एवं तेषु अङ्केषु अन्त्याङ्के—चरमाङ्के लघोस्वरूपे १३ मात्रात्मको गुरुशीर्षस्थिताम् अङ्कान्स्तान् विलुम्पेत् । ते च अत्र तथा च लघोश्चारमपि चरमेऽङ्के नष्टाङ्के लुप्ते सति उर्वरितैरङ्कैश्चतुर्भिश्चतुर्थे स्थाने लिखित्वा तत्समानाङ्क-स्थानको यद्गणः इति जानीयात् । तदेतन्मात्राणामुद्दिष्टम् । उद्दिष्टस्य गणस्य स्थानमात्राज्ञानमादिति भावः ।

एव चाष्टभेदविभिन्नो पञ्चकलप्रस्तारे—द्वौ लघू, एको गुरु, एको लघुश्च इत्येवरूपो गण ।।ऽ। कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कस्तदनु द्वितीयलघोरुपरि द्वितीयाङ्कस्ततो गुरोरुपरि तृतीयाङ्कस्तदध. पञ्चमाङ्कस्तदनु लघोरुपरि अष्टमाङ्कश्च देयः। अतोऽन्त्याङ्के-अष्टमाङ्के ८ गुरुशिरोऽङ्कस्तृतीयोऽङ्को ३ लोप्योऽवशिष्ट' पञ्चमाङ्को भवति। तस्मात् पञ्चमो गणस्तादृशो भवतीति एव जानीयादिति।

तथा च पञ्चभेदे चतुष्कलप्रस्तारे जगण ।ऽ। कुत्रास्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कस्तदनु गुरोरुपरि द्वितीयाङ्कस्तदवस्तृतीयाङ्क शेषो लघोरुपरि पञ्चमाङ्को देय । अत शेषे पञ्चमाङ्के ५ गुरुशिरोऽङ्को द्वितीयो लोप्य । अवशिष्टस्तृतीयाऽङ्को भवति। तस्मात् तृतीयस्थाने जगणो वर्त्तत इति जानीयादिति।

एवञ्च सप्ताष्टकलादिकेषु समस्तेषु प्रस्तारेषु प्रथमे शेषे च गणे शङ्कैव नावतरीतर्त्तीति। द्वितीयस्थानादारभ्य उपान्त्यस्थानपर्यन्त प्रश्ने कृते प्रोक्तप्रकारेण उद्दिष्ट बोद्धव्यमतिविशुद्धबुद्धिभिरित्यास्ता विस्तारेण इत्युपरम्यते। इति शिवम्।

श्रीनागराजाय नम.

प्रस्तारविस्तारणकौतुकेन प्रस्तारयन्त पतगाधिराजम्।
मध्येसमुद्र प्रविशन्तमन्तर्भजामि हेतु भुजगाधिराजम्॥

अथ मात्रा-वर्णोद्दिष्टौ वक्तव्ये तत्र प्रस्तारमन्तरेणोद्दिष्टादीनामशक्यकथनत्वात् समस्तप्रस्तारस्य वसुधावलयेऽप्यसमावेशात् केचन प्रस्तारा प्रस्तुतोपयोगिनो लिख्यन्ते। एव अन्येपि षड्विंशत्यक्षरपर्यन्त प्रस्ताराः बोद्धव्या सुबुद्धिभि।

द्विकलप्रस्तारो यथा—

ऽ	१
।।	२

त्रिकलप्रस्तारो यथा—

।ऽ	१
ऽ।	२
।।।	३

चतुष्कलप्रस्तारो यथा—

ऽऽ	१
।।ऽ	२
।ऽ।	३
ऽ।।	४
।।।।	५

पञ्चकलप्रस्तारो यथा–

।ऽऽ	१
ऽ।ऽ	२
।।।ऽ	३
ऽऽ।	४
।।ऽ।	५
।ऽ।।	६
ऽ।।।	७
।।।।।	८

षट्कलप्रस्तारो यथा—

ऽऽऽ	१
।।ऽऽ	२
।ऽ।ऽ	३
ऽ।।ऽ	४
।।।।ऽ	५
।ऽऽ।	६
ऽ।ऽ।	७
।।।ऽ।	८
ऽऽ।।	९
।।ऽ।।	१०
।ऽ।।।	११
ऽ।।।।	१२
।।।।।।	१३

मात्राणामुद्दिष्ट द्वितीय

१ ३
। ऽ
३

मात्राणामुद्दिष्ट प्रथमप्रत्यय

१ ३ ५ ८
। । ऽ
२ १३

मोपो नवाङ्क ६

इति श्रीमत्प्रशस्तसमस्तपारविश्वमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्र-
चूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-षड्दर्शनीपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके दुष्करोद्धारे मात्राप्रस्तारो-
द्दिष्टनष्टसमुद्धारो नाम प्रथमो विश्रामः ॥ १ ॥

द्वितीयो विश्रामः

अथ मात्राणामदृष्ट रूप नष्ट द्वितीयप्रत्ययस्वरूपम् । तच्च षट्कलप्रस्तारे प्रस्तारान्तरे वा अमुकस्थाने कीदृश इति प्रश्नोत्तरमध्यर्द्धेन श्लोकद्वयेनाह—

अथ मात्राणां नष्ट यददृष्ट पृच्छ्यते रूपम् ॥ ५२ ॥
यत्कलकप्रस्तारो लघवः कार्याश्च तावन्तः ।
दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्कं लोपयेदन्त्ये ॥ ५३ ॥
उर्वरितोर्वरितानामङ्कानां यत्र लभ्यते भागः ।
परमात्रा च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ५४ ॥

अथेति । पूर्वार्द्धं अवतारिकयैव व्याख्यातप्रायम् ॥ ५२ ॥

यत्कलकप्रस्तार कृत तत्कलकप्रस्तारकृते तावन्त एव लघव कार्याः । चकारोऽवधारणार्थ । तत्र च दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् । यथा— । । । । । । तत पृष्ठाङ्क अन्त्ये—शेषे लोपयेत् ॥ ५३ ॥

एव चोर्वरितोर्वरिताना अवशिष्टानामङ्काना यत्र यत्राङ्के भागो लभ्यते स स एवाङ्क शेषाङ्के लोपयितु शक्यते । स. पुनस्तदग्र स्थितकल परमात्रा च गृहीत्वा गुरुतामुपागच्छेत्—गुरुर्भवतीत्यर्थ । गुरुत्वे चाऽग्र स्थितकलाया अपि सग्रहोऽर्थाद् भवतीति । अन्यथा लघुगुरुरित्येव ब्रूयादिति ॥ ५४ ॥

अनेन व्याख्यानेनाव्युत्पन्नतम शिष्यो बोधयितु न शक्यत इति स्फुटीकृत्य सोदाहरण विलिख्यते । यथा—

षट्कलप्रस्तारे द्वितीयस्थाने कीदृशो गण ? इति प्रश्ने, पूर्वोक्ताङ्कसहिता लघुरूपा. षट्कला स्थापनीया । पूर्वयुगलसदृशा अङ्का देया । तत शेषाङ्के त्रयोदशे १३ पृष्ठाङ्कलोपे द्वितीयाङ्क २ लोपे सति एकादशावशिष्टा ११ भवन्ति । तत्राव्यवहिताष्टलोपे शेषकलाद्वयेन एको गुरुर्भवति । अवशिष्टाङ्क त्रय भवति । तत्र च पञ्चलोपाशक्यत्वात् परमात्रा गृहीत्वा गुरुर्भवतीत्युक्तत्वाच्च त्रिलोपे ३ तृतीयचतुर्थाभ्यामपरो गुरुर्भवति । शेषाङ्को नावशिष्यत इति । प्रथम लघुद्वयमेव । तथा चादौ लघुद्वयमनन्तर गुरुद्वयमित्येतादृशो । । ऽ ऽ द्वितीयो गणो भवतीत्यर्थ । एवमन्यत्रापि ।

यद्यप्याद्यन्तयोस्सन्देहाभावस्तथापि प्रथमे कीदृशो गण ? इति प्रश्ने, गुरु-त्रयात्मक प्रथम गण लिखित्वा तत्रोपर्यध क्रमेण पूर्वयुगाङ्का एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-

पञ्चकलप्रस्तारो यथा-

। ऽ ऽ	१
ऽ । ऽ	२
। । । ऽ	३
ऽ ऽ ।	४
। । ऽ ।	५
। ऽ । ।	६
ऽ । । ।	७
। । । । ।	८

षट्कलप्रस्तारो यथा—

ऽ ऽ ऽ	१
। । ऽ ऽ	२
। ऽ । ऽ	३
ऽ । । ऽ	४
। । । । ऽ	५
। ऽ ऽ ।	६
ऽ । ऽ ।	७
। । । ऽ ।	८
ऽ ऽ । ।	९
। । ऽ । ।	१०
। ऽ । । ।	११
ऽ । । । ।	१२
। । । । । ।	१३

मात्राणामुद्दिष्टं द्वितीयस्य

१	२
।	ऽ
	३

मात्राणामुद्दिष्टं प्रथमप्रस्तरस्य

१	३	५	८
	।	।	ऽ
२			१३

लोपो नवाङ्कः ९

इति श्रीमत्सकलसमयचारविचक्षणसकलाम्नायमौलमानमानससरोजस्तरीकसत्सूरिकथक-चूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके दुष्करोद्धारे मात्राप्रस्तारो-द्दिष्टनष्टसमुद्धारो नाम प्रथमो विश्रामः ॥ १ ॥

तृतीयो विश्रामः

अथ तथैव क्रमप्राप्त वर्णानामुद्दिष्टमाह—द्विगुणानिति श्लोकेन ।

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि लघुशिर स्थितानङ्कान् ।
एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्ट विजानीत ।। ५५ ।।

वर्णानामुपरिप्रसृताना इति अध्याहार्यम् । तथा च तेषामुपरि द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा ततो लघुशिर स्थितानङ्कान् सयोज्येति शेष । तथा च त-सयुक्त अङ्क एकेनाधिकेन अङ्केन पूरयित्वा-एकीकृत्य वर्णोद्दिष्ट विजानीत शिष्या इति शेष ।। ५५ ।।

एवमुक्त भवति । एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिप्रस्तारेषु प्रतिप्रस्तारमाद्य-भेदे लघ्वाभावादुद्देश सर्वथा नास्त्येव । अतो द्वितीयभेदादारभ्य उपान्त्यभेद-पर्यन्त उद्देशो भवतीति तत्प्रकारबोधनार्थं शिष्यानभिमुखीकृत्य प्रस्तारा निर्द्धार-पूर्वक वर्णोद्दिष्टमुच्यते । तथा च—

एकाक्षरप्रस्तारे भेदद्वय भवति । तत्र प्रथमभेदस्य उद्देशासम्भवात् । द्वितीय-भेदे च एकलघुरूपे द्वितीयाक्षराभावादेकमेवाङ्क तस्मिन् दत्त्वा तदुपरि एक-मङ्कमधिक दत्त्वा द्वितीयभेदमुद्दिशेत् । इत्येकाक्षरप्रस्तार ।

द्व्यक्षरप्रस्तारे भेदचतुष्टय ४ भवति । तत्र द्वितीये एको लघुरेकोगुरुरित्येव भेदे । ऽ, प्रथमे लघावेकोऽङ्को, द्वितीये गुरौ द्वितीयोऽङ्को दातव्य , तदनु लघोरुपरि एकमधिक दत्त्वा द्वितीयभेद उद्दिशेत् । एव तृतीये एको गुरुरेको लघुरित्येव भेदे ऽ।, प्रथमे गुरावेकोऽङ्को, द्वितीये लघौ द्वितीयोऽङ्कोऽन्त्यस्ततो लघोरुपरि स्थिते द्वितीयेऽङ्के एकमधिक दत्त्वा तृतीय भेदमुद्दिशेत् । एवमेव लघुद्वयात्मके ।। चतुर्थे भेदे प्रथमे लघौ प्रथमाङ्क दत्त्वा, द्वितीयेऽपि लघौ द्वितीयमङ्क विधाय तयोरुपरिस्थयो प्रथमद्वितीयाङ्कयोर्मेलने कृते जाते त्रिके एकाङ्क अधिक दत्त्वा तस्य चतुष्टय सम्पाद्य चतुर्थं भेदमुद्दिशेदिति । इति द्व्यक्षरप्रस्तार ।

त्र्यक्षरप्रस्तारे तु भेदाष्टक ८ भवति । तत्र एको लघु द्वौ गुरू चेति गण कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते पृष्ठ गण । ऽऽ लिखित्वा तत्र प्रथमे लघौ प्रथमाङ्को दातव्य , द्वितीये गुरौ तद्द्विगुणो द्वितीयोऽङ्को दातव्य , तृतीये गुरौ तद्द्विगुण-श्चतुर्थाऽङ्को दातव्य । अत्र सर्वत्र प्रथमादिपदेन वर्णो लक्ष्यते, ततो लघोरुपरि योऽङ्कस्तस्मिन्नेकमधिक दत्त्वा तेन सह एकीकृत्य द्व्यङ्को भवति तस्मात् द्वितीयो यगणास्त्र्याक्षरप्रस्तारे गणो भवतीत्येव वेदितव्यम् ।

त्रयोदशाकारा देयाः । यथा— ऽ ऽ ऽ तत्र शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि १३ गुरुशीर्षस्था ये अङ्का एकपञ्चाष्टरूपास्तैर्भावितो द्वादशाङ्को लोप्यस्तथा च लुप्ते तस्मिन् प्रथमो गणस्तादृशो भवतीति वेदितव्यम् ।

अथ च त्रयोदशस्थाने कीदृशो गणः ? इति प्रश्ने, पूर्व[व]देव लघूनामुपर्यङ्कान् दत्त्वा शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि पृष्ठाङ्कलोपे अवशिष्टाङ्काभावाच्च गुरुकल्पना । यतो लघव एवावशिष्यन्ते इति । । । । । ।

चतुर्दशादिप्रश्ने चाङ्कलोपासम्भवादसत्यत्वमात्र वाच्यम् । तदधिकप्रस्तारा-भावादित्यं च मात्राप्रस्तारे सर्वत्रैव शेषाङ्कसमसंख्यागणा भवन्तीत्यपि निरूप्यते । इति गुरुमुखादवगतार्थो लिखित इति शिवम् ।

मात्राणां नष्टम्

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।
		।	।	ऽ	ऽ

द्वितीयः प्रत्ययः

इति श्रीसकलभुवनभास्वरचारित्रमकरन्दास्वादमत्तमानसमधुकरीकाननभूरिक-लकचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-समस्तशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे मात्रा-प्रस्तारनष्टगणसमुद्धारो नाम द्वितीयो विभागः ॥ २ ॥

तृतीयो विश्रामः

अथ तथैव क्रमप्राप्तं वर्णानामुद्दिष्टमाह—द्विगुणानिति श्लोकेन ।

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि लघुशिर स्थितानङ्कान् ।
एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्टं विजानीत ॥ ५५ ॥

वर्णानामुपरिप्रसृताना इति अध्याहार्यम् । तथा च तेषामुपरि द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा ततो लघुशिर स्थितानङ्कान् सयोज्येति शेष । तथा च त-सयुक्तं अङ्क एकेनाधिकेन अङ्केन पूरयित्वा-एकीकृत्य वर्णोद्दिष्टं विजानीत शिष्या इति शेष ॥ ५५ ॥

एवमुक्त भवति । एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिप्रस्तारेषु प्रतिप्रस्तारमाद्य-भेदे लघ्वाभावादुद्देश सर्वथा नास्त्येव । अतो द्वितीयभेदादारभ्य उपान्त्यभेद-पर्यन्त उद्देशो भवतीति तत्प्रकारबोधनार्थं शिष्यानभिमुखीकृत्य प्रस्तारा निर्द्धार-पूर्वक वर्णोद्दिष्टमुच्यते । तथा च—

एकाक्षरप्रस्तारे भेदद्वय भवति । तत्र प्रथमभेदस्य उद्देशासम्भवात् । द्वितीय-भेदे च एकलघुरूपे द्वितीयाक्षराभावादेकमेवाङ्क तस्मिन् दत्त्वा तदुपरि एक-मङ्कमधिक दत्त्वा द्वितीयभेदमुद्दिशेत् । इत्येकाक्षरप्रस्तार ।

द्व्यक्षरप्रस्तारे भेदचतुष्टय ४ भवति । तत्र द्वितीये एको लघुरेकोगुरुरित्येव भेदे । ऽ, प्रथमे लघावेकोऽङ्को, द्वितीये गुरौ द्वितीयोऽङ्को दातव्य , तदनु लघोरुपरि एकमधिक दत्त्वा द्वितीयभेद उद्दिशेत् । एव तृतीये एको गुरुरेको लघुरित्येव भेदे ऽ।, प्रथमे गुरावेकोऽङ्को, द्वितीये लघौ द्वितीयोऽङ्कोऽन्त्यस्ततो लघोरुपरि स्थिते द्वितीयेऽङ्के एकमधिक दत्त्वा तृतीय भेदमुद्दिशेत् । एवमेव लघुद्वयात्मके ॥ चतुर्थे भेदे प्रथमे लघौ प्रथमाऽङ्क दत्त्वा, द्वितीयेऽपि लघौ द्वितीयमङ्क विधाय तयोरुपरिस्थयो प्रथमद्वितीयाङ्कयोर्मेलने कृते जाते त्रिके एकाङ्क अधिक दत्त्वा तस्य चतुष्टय सम्पाद्य चतुर्थं भेदमुद्दिशेदिति । इति द्व्यक्षरप्रस्तार ।

त्र्यक्षरप्रस्तारे तु भेदाष्टक ८ भवति । तत्र एको लघु. द्वौ गुरू चेति गण कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते पृष्ठं गण । ऽ ऽ लिखित्वा तत्र प्रथमे लघौ प्रथमाङ्को दातव्य , द्वितीये गुरौ तद्द्विगुणो द्वितीयोऽङ्को दातव्य , तृतीये गुरौ तद्द्विगुण-श्चतुर्थाऽङ्को दातव्य । अत्र सर्वत्र प्रथमादिपदेन वर्णो लक्ष्यते, ततो लघोरुपरि योऽङ्कस्तस्मिन्नेकमधिक दत्त्वा तेन सह एकीकृत्य द्व्यङ्को भवति तस्मात् द्वितीयो यगणाख्याक्षरप्रस्तारे गणो भवतीत्येव वेदितव्यम् ।

एवं चात्रैव प्रथमं लघुद्वयं ततो गुरुरित्येवं गण ।।ऽ कस्मिन् स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकारं गणं १, २ लिखित्वा प्रथमे लघावेकाङ्कं दत्त्वा १, द्वितीयेऽपि तद्‌द्विगुणं द्व्यङ्कं २ विधाय तृतीये गुरौ तद्‌द्विगुणं चतुर्थमङ्कं कृत्वा ४ ततो लघ्वोरुपरिस्थयोः प्रथमद्वितीयाङ्कयोः संयोगकृतत्रयं भवति ३ तस्मिन्नेकेऽधिके दत्ते सति चतुरङ्को भवति ४ । ततश्चतुर्थस्सगणात्र्यक्षरप्रस्तारे गणो भवतीति ज्ञेयम् । एवमन्यत्र । इति त्र्यक्षरप्रस्तारः ।

अथ चतुरक्षरप्रस्तारे षोडश भेदा १६ भवन्ति । तत्र द्वौ गुरू एको लघुरेको गुरुश्चेत्येवंरूपो गणः कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते तं पृष्ठं गणं लिखित्वा ऽऽ।ऽ तत्र प्रथमगुरोरुपरि प्रथमाङ्को १ देयः ततो द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा, तदनु द्वितीयगुरोरुपरि द्वितीयोऽङ्को देयः तृतीयो लघौ चतुरङ्कः चतुर्थो गुरौ अष्टमाङ्को देयः ८ । इति द्वैगुण्यम् । ततो लघोरुपरिस्थचतुर्थोऽङ्कस्य एकेन पूरयित्वा तस्य पञ्चात्वं विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति विज्ञातव्यम् । इत्युद्दिष्टं वर्णप्रस्तारे प्रथमप्रत्ययस्वरूपं विजानीत शिष्या इति ।

अत्र सर्वत्र गणशब्देन तत्तद्‌भेदो भण्यते । यथा चात्रैव प्रथमं लघुद्वयमनन्तरं एको गुरुरित्येवमाकारको गणः कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकारं गणं लिखित्वा ।।।ऽ तत्र प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कं दत्त्वा ततोऽपि द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा तदनु द्वितीयलघोरुपरि तद्‌द्विगुणं द्वितीयमङ्कं विलिख्य तृतीये लघौ तद्‌द्विगुणं चतुरङ्कं विधाय चतुर्थे गुरावष्टमाङ्कं तद्‌द्विगुणं दत्त्वा एवं द्विगुणत्वं सम्पादयेत् । लघुशिरःस्थितान् एक-द्वि-चतुरङ्कान् एकीकृत्य जातं सप्ताङ्कं ७ एकेन चाधिक्येन पूरयित्वा तस्याष्टत्वं विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति ज्ञेयम् । इत्युद्दिष्टं विस्पष्टं विजानीत शिष्याः । इति चतुरक्षरप्रस्तारः ।

किञ्च—

विपरीतप्रस्तारोद्दिष्टे क्रियमाणे लघुशिरःस्थितान् अङ्कान् त्यक्त्वा गुरुशिरःस्थितान् इति पाठस्तत्रोद्दिष्टप्रकारः सुगमः । एवञ्च सर्वप्रत्ययेषु पाठविपर्ययः कार्य इत्युपदिश्यते । एवञ्च ते सर्वेऽपि प्रत्यया विपरीता भवन्तीति रहस्यान्तरम् । एवमग्रेऽप्यपि प्रस्तारेषु तत्तद्‌भवस्थानावस्थानं बोद्धव्यमिति विद्वद्‌भिः । इति संक्षेपः । इति सर्वमवदातम् ।

एकाक्षरप्रस्तारो यथा—

ऽ	१
।	२

द्व्यक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ	ऽ	१
।	ऽ	२
ऽ	।	३
।	।	४

त्र्यक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	३
।	।	ऽ	४
ऽ	ऽ	।	५
।	ऽ	।	६
ऽ	।	।	७
।	।	।	८

चतुरक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	ऽ	३
।	।	ऽ	ऽ	४
ऽ	ऽ	।	ऽ	५
।	ऽ	।	ऽ	६
ऽ	।	।	ऽ	७
।	।	।	ऽ	८
ऽ	ऽ	ऽ	।	९
।	ऽ	ऽ	।	१०
ऽ	।	ऽ	।	११
।	।	ऽ	।	१२
ऽ	ऽ	।	।	१३
।	ऽ	।	।	१४
ऽ	।	।	।	१५
।	।	।	।	१६

वर्णाना उद्दिष्ट तथैव प्रथम ।

[इति] श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारप्रस्तारे विस्तारप्रकार· ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-
चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्द शास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मी-
नाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करो-
द्धारे वर्णप्रस्तारोद्दिष्टगणसमुद्धारो नाम
तृतीयो विश्राम· ॥ ३ ॥

चतुर्थो विश्रामः

अथ क्रमप्राप्तं तत्रैव वर्णानां नष्टमाह—'नष्टे पृष्ठे' इति श्लोकेन ।

नष्टे पृष्ठे भागः कर्तव्यः पृष्ठसंख्यायाः ।
समभागे लं कुर्याद् विषमे त्वेकमानयेद् गुरुकम् ॥ १६ ॥

नष्टे—अदृष्टरूपे पृष्ठे सति पृष्ठसंख्यायाः—पृष्ठायाः संख्यायाः भागः कर्तव्यः—विधेयः । तत्र समभागे सति लं—लघु कुर्यात् विषमेऽवशिष्टे सतीति शेषः । एकं दत्त्वा तस्यापि भागं कृत्वा गुरुकमानयेत्—गुरुं विलेखेदित्यर्थः । एवं कृते सति प्रकृतप्रस्तारस्थितादृष्टरूपगणस्वरूपसिद्धिर्भवतीति भावः ॥ १६ ॥

इदमत्रानुसन्धेयम्—

अत्र तावद् भागो नाम नष्टाङ्कस्य यावत्संख्यापूरणम् । तथाहि सोदाहरणमुच्यते । यथा—

चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो गणः किमाकारः ? इति प्रश्ने षडङ्कमार्गं कृत्वा तदर्धं त्रयं ३ स्थापनीयम् । अत्र च समो भागः उभयकोटिसाम्यात् । अतः एको १ गुरुर्लेख्यः । अनन्तरं अवशिष्टस्य त्रयस्य विषमत्वात् एकं १ दत्त्वा चतुष्टयं सम्पाद्य तस्य भागं कृत्वा द्वयं २ स्थापनीयम् । तदा एको गुरुर्लेख्यः, ततो द्वयोर्भागं कृत्वा एकं १ स्थापनीयम् । तदा एको १ लघुर्लेख्यः । ततोऽप्यवशिष्टे विषमे एकं १ दत्त्वा द्वित्वं सम्पाद्य तस्यापि भागं कृत्वा एकमेव स्थापनीयम् । तदा एको गुरुर्लेख्यः । एवञ्च प्रथमं लघुरनन्तरं गुरुस्ततो लघुरन्ते गुरुरेवमाकारश्चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो । ऽ । ऽ गणः इति बोद्धव्यम् ।

तथा चात्रैव सप्तमस्थाने किमाकारको गणः ? इति प्रश्ने सप्तमस्य विषमत्वात् पूर्वमेको गुरुर्लेख्यः । ततः सप्तसु एकं दत्त्वा अष्टौ कृत्वा विभागकार्यस्तेन अवशिष्टाश्चत्वारः । अयं च समो भागस्ततः एको १ लघुर्लेख्यः । पुनश्चतुष्टयस्यावशिष्टस्य भागं कृत्वा द्वयं समं स्थापनीयम् । अतः एको लघुरेव लेख्यः । अनन्तरं अवशिष्टस्य एकाङ्कस्य विषमीभूतत्वाद् गुरुरेव लेख्यः । एवञ्च प्रथमं गुरुरनन्तरं लघुस्ततोऽपि लघुरेव चरमे च गुरुरेवं ऽ । । ऽ आकारश्चतुरक्षरप्रस्तारे सप्तमो गणः इति च विज्ञेयम् । एवं पुनः पुनरपि समे विभजनीये लघुर्लेख्यः । विषमे एकं दत्त्वा भागे कृते गुरुर्लेख्यः । प्रकृते च समाधायिको गणः

ायातीति षड्विंशतिवर्णप्रस्तारपर्यन्तं विषमस्थलेषु एकैक दत्वा गुरुर्लेख्य
ति सक्षेपः । सर्वमिदमतिमञ्जुलवञ्जुलवर्णनष्टमिति शिवम् ।

वर्णाना नष्टम्

I S I S ६
S I I S ७

तथैव द्वितीयप्रत्ययः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-
मणिसाहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्यश्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारवर्णप्रस्तार-
नष्टगणसमुद्धारो नाम चतुर्थो विश्राम. ॥ ४ ॥

पञ्चमो विश्राम

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपवर्णमेरुमाह—श्लोकद्वयेन कोष्ठानिति ।

> कोष्ठानेकाधिकान् वर्णे कुर्यादाद्यन्तयो पुन ।
> एकाङ्कमुपरिस्थाङ्कद्वयैरन्यान् प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥
> वर्णमेरुरयं सर्वगुर्वादिगणवेदकम ।
> प्रस्तारसंख्याज्ञानञ्च फलं तस्योच्यते बुधै ॥ ५८ ॥

तत्र च क्रमाद् एकाधिकान् कोष्ठान् वर्णैरक्षरैरुपलक्षितान् पुनराद्यन्तयो- रेकाङ्क च कुर्याद् विलिख्य रचयेत् । ततश्च मध्यस्थकोष्ठकस्योपरि स्थिताङ्क द्वयैरेकीकृतैरित्यर्थ । अन्यान् शून्यान् कोष्ठान् प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥

एवं कृते सत्ययं वर्णमेरुर्मेरुरिव भवतीति ज्ञेय । तस्यैवप्रकारेण विरचि तस्य मेरोर्बुधै—अधीतछन्द-शास्त्रै भाष्यवार्तिककारादिभिरिति यावत् । सर्व गुर्वादी येषामवविधानां गणानां वेदक-ज्ञापकं प्रबोधकमिति यावत् प्रस्तार संख्याज्ञानं च यतो भवतीति उभयमपि फलविशेषणम् । तथा च तत्तत्स्थितस्य कोष्ठगत-तत्तद्वर्णप्रस्तारसंख्याज्ञापकं फलं उच्यते-प्रकाश्यत इत्यर्थ ॥५८॥

अस्य निर्गलितार्थस्त्वेवं समुल्लसति—

एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरपर्यन्त स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरव कत्येकादि गुरव, कति सर्वलघव, कति वा प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते वर्णमेरुणा प्रत्युत्तरं देयम् । तत्र एकाक्षरादिक्रमेण यावदिष्ट कोष्ठकान् विरचय्य आद्यावन्ते च कोष्ठे प्रथमाङ्को दातव्य । ततो मध्यस्थकोष्ठके च तदीयशिर:कोष्ठकद्वयाङ्क शृङ्खला- बन्धन्यायेन एकीकृत्य परं शून्यं कोष्ठक एकीकृताङ्के पूरयेत् । एवं अन्यत्रापि पूरणीये कोष्ठके कोष्ठानामुपरिस्थितकोष्ठद्वयाङ्कयुक्तबन्धन्यायेन पूरणं विधेयं इति संक्षेप । एवं पूरितेषु कोष्ठेषु एकाक्षरप्रस्तारे आदावेकगुर्वात्मकस्तदन्ते च एकलघ्वात्मक संकेत इति ।

द्व्यक्षरप्रस्तारे तु सर्वगुरुरादौ त्रिगुरु-द्विगुरुर्वाभावात् स्थानद्वयेप्येक- गुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

त्र्यक्षरप्रस्तारे चादौ सर्वगुरुस्त्रिगुरोरन्यभावसम्भवात् स्थानत्रये द्विगुरु स्थान त्रये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

चतुरक्षरप्रस्तारेपि सर्वगुरुरादौ च चतुर्गुरोरन्यत्राभावात् स्थानचतुष्के त्रिगुरु: स्थानषट्के द्विगुरु स्थानचतुष्टये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

एवमनया प्रणालिकया सुधीभि षड्विंशत्यक्षरप्रस्तारपर्यन्त अङ्कसञ्चार-प्रकार समुन्नेय ।

किञ्चात्र तत्तत्पङ्क्तिकोष्ठगततत्तद्वर्णप्रस्तारपिण्डसख्यापि तत्तत्पङ्क्ति-स्थिताङ्कै समुल्लसतीति वर्णमेरुरय मेरुरिवादिभागसकुचितान्तविस्ताररूपो विभातीति श्रीगुरुमुखादवगतो वर्णमेरुलिखनक्रमप्रकार प्रकाशित इति शिवम् ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन रायभट्टात्मजन्मना ।
कृतो मेरुरय वर्णप्रस्तारस्यातिसुन्दर ॥

अस्य स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् ।

वर्णमेरुर्यथा तृतीयः

१ १
१ २ १
१ ३ ३ १
१ ४ ६ ४ १
१ ५ १० १० ५ १
१ ६ १५ २० १५ ६ १
१ ७ २१ ३५ ३५ २१ ७ १
१ ८ २८ ५६ ७० ५६ २८ ८ १
१ ९ ३६ ८४ १२६ १२६ ८४ ३६ ९ १

नववर्णमेरुरयम् । एव अग्रेपि समुन्नेय सुधीभि ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्द शास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकाक्षराद् षड्विंशत्यक्षरावधिवर्णप्रस्तारमेरूद्धारो नाम पञ्चमो विश्राम ॥५॥

षष्ठो विश्राम

अथ मेरुगर्भां चतुर्वर्णप्रत्ययस्वरूपां वर्णानां पताकामाह—श्लोकत्रयेण दत्त्वेत्यादि।

> दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कैर्योजयेत्परान्।
> अङ्कं पूर्वं यो वै भृतस्तत्र पङ्क्तिसञ्चारः ॥५९॥
> अङ्काः पूर्वं भृता येन तमङ्कं भरणं त्यजेत्।
> अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत् ॥६०॥
> प्रस्तारसंख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना।
> पताका सर्वगुर्वादिविवेचिकेयं विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

तत्र पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-चतुरष्टादीन् अङ्कान् प्रथमं दत्त्वा पूर्वाङ्कैरेकद्वित्रिभिरपरान् त्र्यादीन् अङ्कान् योजयेत् मिश्रयात् भरणं कुर्यादिति यावत्। किञ्च य एवाङ्कः पूर्वं भृत-पूरितः ततस्तस्मादेव अङ्कात् वै-नियमेन पङ्क्तिसञ्चारः विधेय इति शेषः ॥ ५९ ॥

अङ्का इति। नियमान्तरं च येन-अङ्केन पूर्वमङ्का भृताः-पूरिताः तमङ्कं पुनर्भरणं त्यजेत् प्रयोजनाभावात्। किञ्च, अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं पुनर्न साधयेत्—न स्थापयेदित्यर्थः ॥ ६० ॥

पताकाप्रयोजनमाह—

प्रस्तारेति। एवं प्रस्तारसंख्यया क्रमादङ्कविस्तारकल्पना भवतीति शेषः। एतादृशी चेयं पताका विशिष्य-विशिष्टां कृत्वा तु-अवधारणे, सर्वगुर्वादिसर्वसम्पन्नविवेचिका-ज्ञापिका विज्ञातव्यैवेति वाक्यार्थः ॥ ६१ ॥

एवमुक्तं भवति—

भो शिष्याः! उद्दिष्टसंख्या अङ्का देयाः। पूर्वाङ्कैः परभरणं कुर्यात् पूरयितव्यम्। पङ्क्तेः प्रधानाङ्कस्य पश्चात् स्थिता पूर्वाङ्का भरणं पूरणम्। एकस्याधिकस्य अङ्कस्य प्राप्तौ सा पङ्क्तिरेव तदङ्कभरणे त्यज्यत इत्यवधेयम्।

एवञ्च मेरुवत्प्रस्तारसंख्यया पताकाङ्का वर्धयितव्याः। तथाहि—

चतुर्वर्णप्रस्तारे एक-द्वि-चतुरष्टाङ्का देयाः। यथा—१।२।४।८। अत्र कार्यस्य पूर्वाङ्कासम्भवात् द्वितीयाङ्कादारम्य पंक्तिः पूर्यते। तत्र

पूर्वाङ्का एकाङ्क एव प्रस्तारादिभूत सर्वगुरुरूप, तस्य परे द्वितीयादय ते च अव्यवहितानतिक्रमेण पूर्यन्ते । तथा च एकेन द्वाभ्या मिलित्वा त्र्यङ्को भवति स. द्वितीयाङ्काधस्तात् स्थापनीय । तत एकेन अष्टभिश्च मिलित्वा नवाङ्को भवति स पञ्चमाङ्काध स्थात् स्थापनीय । तत पक्तिपरित्याग:। मेरौ त्रिगुरुणा रूपाणा चतु सख्यादर्शनादिति भाव । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे प्रथम रूप सर्वगुरु ब्रूयात् । द्वि-त्रि-पञ्च-नवस्थानस्थानि चतूरूपाणि त्रिगुरूणि जानीयादिति । एवमङ्कचतुष्टय साधयित्वा, ततश्चतुरङ्कस्य अधस्तात् पूरित-पक्तिस्था पराङ्कमिलिता षडङ्का देया । तत्र प्रथम पूरित एवेति त्यज्यते । ततो द्वाभ्या चतुर्भिर्मिलित्वा षष्ठोऽङ्को ६ भवति, स चतुरङ्काधस्तात् स्थापनीय । ततः त्रिभि चतुर्भि सम्भूय सप्तमोऽङ्को भवति, स च षडङ्काधस्तात् स्थापनीय । एव च पञ्चभिश्चतुर्भिर्मिलित्वा जायमानो नवाङ्को न स्थापनीय' । 'अङ्कश्च पूर्वं य' सिद्धस्तमङ्क नैव साधयेत्' इत्युक्तत्वात् सिद्धस्य साधनायोगादिति युक्ति-सिद्धत्वाच्च इति । ततो द्वाभ्या अष्टभिर्मिलित्वा दशाङ्को भवति, स च सप्ताङ्का-धस्तात् स्थापनीय. । ततश्च त्रिभिरष्टभिर्मिलित्वा एकादशाङ्को भवति, स च दशाङ्काधस्तात् स्थापनीय । तत पञ्चभिरष्टभिर्मिलित्वा त्रयोदशाङ्को भवति, स चान्त एकादशाङ्काधस्तात् स्थापनीय इति । तत पङ्क्तिपरित्याग । मेरु-मख्यापरिमाणदर्शनादिति पूर्ववद् हेतुरिति भाव । एतेन च चतुर्वर्णप्रस्तारे चतु-षट्-सप्त-एकादश-त्रयोदशस्थानस्थानि षड्रूपाणि द्विगुरूणि जानीयादिति । एवमङ्कषट्क पूर्ववदेव साधयित्वा, ततोऽष्टाङ्काधस्तात् पूरितपक्तिस्था पराङ्क-मिलताश्चत्वारोऽङ्का देया तथा च चतुर्भिरष्टभि सम्भूय द्वादशाङ्को भवति, स चाष्टमाङ्काधस्तात् स्थापनीय । तत षड्भिरष्टभिश्च सभूय चतुर्दशाङ्को भवति, स तु द्वादशाङ्काधस्तात् स्थापनीय । तत सप्तभिरष्टभिश्च सभूय पञ्चदशाङ्को भवति, सोऽपि चतुर्दशाङ्काधस्तात् स्थापनीय । ततोऽपि पक्तिपरित्याग । मेरावेकगुरूणा चतुस्सख्यादर्शनादिति भाव । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे अष्टमद्वादश-चतुर्दश-पञ्चदशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुरूणि ब्रूयादिति । एव अङ्कचतुष्टय साधयित्वा, ततो दशभिरष्टभिस्तु , प्रस्ताराधिकाङ्कसभवात्षष्टादशाङ्कसञ्चार । तर्हि षोडशाङ्क सर्वलघुरूप १६ क्वास्तामित्यपेक्षायामष्टमाङ्काग्रे दीयतो सर्व-लघुज्ञानार्थमिति सम्प्रदाय । तथा च प्रथमाङ्कचरमाङ्कयो सदृशन्यायेन अवस्थान भवतीति ज्ञेयम् ।

पताकाप्रयोजन तु मेरौ चतुर्वर्णप्रस्तारस्य एक रूप चतुर्गुरूपलक्षितम् । सर्वगुर्वात्मक चत्वारि त्रिगुरूणि रूपाणि, षड् द्विगुरूणि रूपाणि, चत्वारि एक-गुरूणि रूपाणि, एक सर्वलघ्वात्मक रूपमस्ति ।

षष्ठो विश्राम

अथ मेरुगर्भां चतुर्थप्रत्ययस्वरूपां वर्णानां पताकामाह—श्लोकत्रयेण दत्त्वेत्यादि ।

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कै योजयेत्परान् ।
अङ्कः पूर्वं यो वै भृतस्तत पंक्तिसञ्चार ॥५९॥
अङ्का पूर्वं भृता येन तमङ्कं भरणे त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव स्थापयेत् ॥६०॥
प्रस्तारसंख्यया चयमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेयं विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

तत्र पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-चतुरष्टादीन् अङ्कान् प्रथमं दत्त्वा पूर्वाङ्कैरेकद्वाभिरपरान् त्र्यादीन् अङ्कान् योजयेत् बिभृयात् भरणं कुर्यादिति यावत् । किञ्च य एवाङ्कः पूर्वं भृत-पूरितः ततस्तस्मादेव अङ्कात् वै-नियमेन पंक्तिसञ्चार विधेय इति शेष ॥ ५९ ॥

अङ्का इति । नियमान्तरं च येन-अङ्केन पूर्वमङ्का भृता-पूरिताः तमङ्कं पुनर्भरणे त्यजेत् प्रयोजनाभावात् । किञ्च, अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं पुनर्न स्थापयेत्—न स्थापयेदित्यर्थः ॥ ६० ॥

पताकाप्रयोजनमाह—

प्रस्तारेति । एवं प्रस्तारसंख्यया अङ्काङ्कविस्तारकल्पना भवतीति शेषः । एतादृशी चेयं पताका विशिष्य-विशिष्टां कृत्वा तु-अवधारणे सर्वगुर्वादिवर्णसम्बन्धवेदिका-ज्ञापिका विज्ञातव्येति वाक्यार्थः ॥ ६१ ॥

एवमुक्तं भवति—

भो शिष्याः ! उद्दिष्टसदृशा अङ्का देयाः । पूर्वाङ्कैः परभरणं कुर्यात् पूरयितव्यः । पंक्तौ प्रधानाङ्कस्य पश्चात् स्थिताः पूर्वाङ्का भरणं पूरणम् । एकस्याधिकस्य अङ्कस्य प्राप्तौ सा पंक्तिरेव तदङ्कभरणे त्यक्तव्या इत्यवधेयम् ।

एवञ्च मेरुस्थप्रस्तारसंख्यया पताकाङ्का वर्द्धयितव्याः । तथाहि—

चतुर्वर्णप्रस्तारे एक-द्वि-चतुरष्टाङ्का देयाः । यथा—१।२।४।८। अत्र प्रथमाङ्कस्य पूर्वाङ्काऽसम्भवात् द्वितीयाङ्कादारभ्य पंक्तिः पूर्यते । तत्र

सप्तमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपमेवात्र [मात्रा]मेरुमाह—एकाधिककोष्ठानामि
दिना सार्द्धेन श्लोकचतुष्टयेन—

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पक्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्कं पूर्वभागे तु ॥६२॥
एकाङ्कमयुक्पक्तेः समपक्ते पूर्वयुग्माङ्कम् ।
दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पक्तिप्रपूर्तिः स्यात् ॥६३॥
आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थैः ।
उपरिस्थितेन कोष्ठं विषमाया पूरयेत् पक्तौ ॥६४॥
समपक्तौ कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय ।
उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिसंस्थैर्वामस्थितैरङ्कैः ॥६५॥
मात्रामेरुरयं प्रोक्तः पूर्वोक्तफलभागिति ।

तत्र क्रमादेकैकेनाधिकेन कोष्ठेनोपलक्षिताना कोष्ठाना मध्ये द्वे द्वे पक्ती स
समाने कार्ये–लिखनीये इत्यर्थ । तासा–सर्वासा पक्तीना अन्तिमकोष्ठेषु एका
प्रथमाङ्क यावदित्य दद्यात् इत्यन्वय । अथ च सर्वासा पक्तीना पूर्वभागे
अङ्कविन्यास उच्यत इति शेष ॥ ६२ ॥

एकाङ्कमिति । तत्रायुक्पक्ते –विषमपक्तेरादिमकोष्ठे–प्रथमकोष्ठे एका
प्रथमाङ्क समपक्तेरादिमकोष्ठे–प्रथमकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्क एकान्तरित प्रथम
यावत् पक्तिप्रपूर्त्ति –पूरण स्यात्–भवति तावद् दद्यात्–विन्यसेद् इत्यर्थ ॥ ६३

तदेवाह—

आद्याङ्केनेति । ततश्च सर्वत्र विषमाया पङ्क्तौ उपरिस्थितेन आद्याङ्के
प्रथमाङ्केन वामभागस्थै. तदीयै शीर्षाङ्कैश्च कोष्ठशून्यमिति शेष प्रपूरये
साङ्क कुर्यादित्यर्थ. ॥ ६४ ॥

किञ्च—

समपङ्क्ताविति । समपङ्क्तौ चाद्याङ्क अपहाय–त्यक्त्वा उपरिस्थिताङ्
तदुपरिसस्थैः वामभागस्थितैरङ्कैश्च शून्यानां कोष्ठाना पूरण विधेयमि
शेष. ॥ ६५ ॥

तत्र षोडशभेदाभिन्ने चतुर्वर्णप्रस्तारे कतमस्थाने सर्वगुर्वात्मकं कतमस्थाने च त्रिगुर्वात्मकं कतरस्थाने द्विगुर्वात्मकं कतमस्थाने च एकगुर्वात्मकं वृत्तं वा सर्वलघ्वात्मकं रूपमस्ति कति वा प्रस्तारसङ्ख्येति प्रश्ने कृते पताकया उत्तरं दातव्यमिति ।

पताकाज्ञानप्रकारमिति श्रीगुरुमुखादवगतो वर्णपताकालिखनप्रकारः प्रकाशित इति दिगुपदर्शनम् । उत्तरत्र च षड्विंशतिवर्णपर्यन्तं पताकाविरचनप्रकारः समूह्यः सुधीभिः ग्रन्थविस्तरभयान्नेहास्माभिः प्रपञ्च्यत इति शिवम् ।

अथ चतुर्वर्णपताकायां तु सिद्धाङ्कान् पिङ्गलोद्योताख्यायां प्राकृतपिङ्गलसूत्रवृत्तौ श्रीयज्ञेश्वरः श्लोकाभ्यां सङ्ग्रहाह । यथा—

एक-द्वि-त्रि-शराङ्काश्च वेदर्तु-भूमि दिक्-शिवाः ।
कामाब्ध-सूर्य-मनवस्तिथि-श्रोणीशसम्मिताः ॥१॥
सिद्धाङ्काः स्युश्चतुर्वर्णपताकानुक्रमे स्फुटम् ।
पञ्चकोष्ठे लिखेदङ्कान् शेषानेव लिखेदिति ॥ २ ॥

तथान् प्रस्तारान्तरपताकाङ्कान् एवं क्रमात् कोष्ठवर्धनपूर्वकक्रमात् लिखित-विन्यसेदित्यर्थः ।

अथ अङ्कविन्यासक्रमस्तु श्रीगुरुमुखादेवावगन्तव्य इति सर्वं मङ्गलम् ।

चतुर्वर्णपताका यथा प्रत्ययकारम्—

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
		११		
		१३		

इति श्रीमत्सकलकलाधरविश्वम्भरमहाराजमोचनामारमानसकन्दलीकासनागारिकाककुम्भ-
मणि-श्रीमत्त्रयीवर्णितसार-भट्ट-व्यासमहाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मजविरचिते
श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिकदुष्करोद्धारे वर्णपताकानिरूपणं
नाम षष्ठो विश्रामः ॥६॥

———

सप्तमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपमेवात्र [मात्रा]मेरुमाह—एकाधिककोष्ठानामित्यादिना सार्द्धेन श्लोकचतुष्टयेन—

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पक्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्क पूर्वभागे तु ॥६२॥
एकाङ्कमयुक्पक्तेः समपक्ते पूर्वयुग्माङ्कम् ।
दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पक्तिप्रपूर्तिः स्यात् ॥६३॥
आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थैः ।
उपरिस्थितेन कोष्ठं विषमायां पूरयेत् पक्तौ ॥६४॥
समपक्तौ कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय ।
उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिसंस्थैर्वामस्थितैरङ्कैः ॥६५॥
मात्रामेरुरयं प्रोक्तः पूर्वोक्तफलभागिति ।

तत्र क्रमादेकैकेनाधिकेन कोष्ठेनोपलक्षिताना कोष्ठाना मध्ये द्वे द्वे पक्ती समे-समाने कार्ये-लिखनीये इत्यर्थ । तासा-सर्वासा पक्तीना अन्तिमकोष्ठेषु एकाङ्क-प्रथमाङ्क यावदित्थ दद्यात् इत्यन्वय । अथ च सर्वासा पक्तीना पूर्वभागे तु अङ्कविन्यास उच्यत इति शेष ॥ ६२ ॥

एकाङ्कमिति । तत्रायुक्पक्ते -विषमपक्तेरादिमकोष्ठे-प्रथमकोष्ठे एकाङ्क-प्रथमाङ्क समपक्तेरादिमकोष्ठे-प्रथमकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्क एकान्तरित प्रथमाङ्क यावत् पक्तिप्रपूर्त्ति -पूरण स्यात्-भवति तावद् दद्यात्-विन्यसेद् इत्यर्थ ॥ ६३ ॥

तदेवाह—

आद्याङ्केनेति । ततश्च सर्वत्र विषमाया पङ्क्तौ उपरिस्थितेन आद्याङ्केन-प्रथमाङ्केन वामभागस्थै तदीयै. शीर्षाङ्कैश्च कोष्ठशून्यमिति शेष प्रपूरयेत्-साङ्क कुर्यादित्यर्थ ॥ ६४ ॥

किञ्च—

समपङ्क्ताविति । समपङ्क्तौ चाद्याङ्क अपहाय-त्यक्त्वा उपरिस्थिताङ्कै -तदुपरिसस्थै वामभागस्थितैरङ्कैश्च शून्याना कोष्ठाना पूरण विधेयमिति शेष. ॥ ६५ ॥

उक्तं मात्रामेरुमुपसंहरति—मात्रामेरुरयमित्यर्द्धेन ।

भो शिष्याः ! पूर्वोक्तफलभागयं मात्रामेरुरिति प्रकारेणोक्तः । यथा वर्णमेरोः फलं तथा मात्रामेरोरपीत्यर्थः ।

अयमत्रोक्तं भवति । द्विमात्रादि-निरवधिकमात्रापंक्तिपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरवः कत्येकादिगुरवः, कति सर्वलघवः कति वा प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते मात्रामेरुणा प्रत्युत्तरं देयम् ।

तत्र च क्रमेणैव एकैकेनाधिके कोष्ठेनोपलक्षितानां कोष्ठकानां मध्ये द्वे द्वे कोष्ठे पर्यन्त पङ्क्ती समे-सदृशे लिखनीये । तत्र प्रथमे कोष्ठद्वयं । तथा द्वितीयेऽपि कोष्ठद्वयमेव । तृतीये कोष्ठत्रयं । चतुर्थेऽपि कोष्ठत्रयमेव । पञ्चमे चत्वारि । षष्ठेऽपि चत्वार्येव । अत्र कोष्ठपूर्वेण कोष्ठाङ्कं पङ्क्तिश्च सम्भवे सद्भावात् एककलाया प्रस्तारो नास्तीति प्रथमं न कोष्ठकल्पना । अतः कोष्ठद्वया-रिभकैव आद्यो पंक्तिरिति प्रथम इत्युक्तिरिति समञ्जसम् ।

एवञ्च कोष्ठपंक्तिषु प्रमोषः, क्रमेणाङ्कान् लिखेत् । तत्र च शेषकोष्ठे प्रथमाङ्को देयः । तत्र तत्र च कोष्ठद्वयमध्ये आद्यावुपरिकोष्ठे च एकस्योऽङ्को देयः । उपरिस्थितस्योपरिस्थिताङ्काभावात् तत्सर्वशिरसैकस्याङ्कन सहितं कृत्वा द्वितीयकोष्ठे द्वितीयाङ्को देयः इति । तृतीयकोष्ठे तु उपरिस्थिताङ्कसहितं कृत्वा अर्थात् शिरःस्थेनाङ्कद्वयेन मिलितं कृत्वा यतस्त्रिरूपोऽङ्कस्समायाति । तथा चार्थात् शिरःस्थेनाङ्क न सह प्रथमो द्वितीयेऽप्यस्ये मेमनीय ।

यद्वा आद्यद्वयमथो मिलतीम तु प्रक्रिया । तथा च प्रथमकोष्ठद्वयस्य पूरित त्वात् द्वितीयादारभ्याङ्का दातव्या । तत्र द्वितीये द्वय तृतीये पुनरेकं चतुर्थे त्रयम् पञ्चमे पुनरेकं षष्ठे चत्वारि, सप्तमे पुनरेकं, अष्टमे पञ्च नवमे पुनरेकं दशमे षट् एकादशे पुनरेकं द्वादशे सप्तमेति प्रक्रियया अङ्का देयाः । एवमाद्ये । तदथ कोष्ठेऽन्त्यकोष्ठे च पूर्वे मध्यस्थशून्यकोष्ठे चैषा प्रक्रिया पूरणीया । कोष्ठशिरः—कोष्ठस्थाङ्क परकोष्ठस्थाङ्कौ द्वावङ्कौ चैकीकृत्य मध्यकोष्ठे-शून्यकोष्ठे मेलितोऽङ्को देयः । एवं सर्वत्र निरवधिकत्वात् यावदिच्छं कोष्ठकं विरच्य मात्रामेरुः पूर्वोक्तरूपः कर्तव्य इति ।

अयं अयोदयमात्रामेरुलिखनप्रकारः श्रीगुरुमुखादवगतः प्रकाशित इत्यु परम्यते ।

अत्रेदं अनुसन्धेयम् । समविषमसंख्या द्वि-त्रि-मात्रादिप्रस्तारमारभ्य निरवधि कमात्राप्रस्तारपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति समकले लघवः, कति च गुरवः, कति

विषमकले लघव, कति च गुरव, कति वोभयत्र प्रस्तारसङ्ख्येति प्रश्ने कृते मात्रा-मेरुणा प्रत्युत्तर देयम्।

तत्र द्विकले समप्रस्तारे एकः सर्वगुरु, द्वितीयो द्विकलात्मक सर्वलघुरिति द्विभेद प्रस्तारसकेत।

त्रिकले विषमप्रस्तारे द्वावेककलकावेकगुरुकौ चान्ते त्रिकलात्मक सर्वलघु-रिति द्विभेद प्रस्तारसकेत।

समकले चतुष्कलप्रस्तारे चादौ द्विगुरुः स्थानत्रये च एकगुरुर्द्विकलश्चान्ते चतुष्कलात्मक सर्वलघुरिति पञ्चभेदः प्रस्तारसकेत।

विषमकले पञ्चकलप्रस्तारे त्रयो गणा एकलघव, चत्वारो गणास्त्रिलघव., स्थानत्रये द्विगुरु', स्थानचतुष्टये चैकगुरुरन्ते च पञ्चकलात्मक सर्वलघु-रित्यष्टभेदः प्रस्तारसकेतः।

समकले षट्कलप्रस्तारे आदौ सर्वगुरु, षड्गणा द्विकला, पञ्चगणाश्चतु-ष्कला, स्थानषट्के द्विगुरु, स्थानपञ्चके चैकगुरुरन्ते च षट्कलात्मक सर्वलघुरिति त्रयोदशभेद प्रस्तारसङ्केत इति।

एवमनेन प्रकारक्रमेण यावदित्थ मात्रामेरौभीष्टमात्राप्रस्तारे लघुगुर्वादि-प्रकारप्रक्रिया-अवगन्तव्या।

अथवा पूर्वरूपप्रश्ने यावदित्थ यावत्कलकप्रस्तारमात्रामेरु कोष्ठकैर्विरच्य समकलप्रस्तारे वामत क्रमेण द्वौ चत्वार, षडष्टावनेन प्रकारेण गुरुज्ञानम्। विषमकलप्रस्तारे तु एक-त्रि-पञ्च-सप्तानेन प्रकारक्रमेण लघुज्ञानम्। अन्ते च सर्वत्र लघुरिति। उभयत्रापि एक द्वौ त्रय पञ्चेत्याद्यनया सारण्या दक्षिणतो व्युत्क्रमेण-शृङ्खलाबन्धन्यायेन तत्तत्प्रभेदज्ञानम्।

किञ्चात्र वामभागे सर्वत्रैकैकाङ्कस्थले सर्वगुरुज्ञान भवतीति विज्ञातव्य-मित्युपदेशरहस्यम्। इति शिवम्। सर्वत्राऽत्र च दक्षिणभागे शृङ्खलाबन्धन्यायेन अग्रिमाङ्कपिण्डोत्पत्तिर्भवतीति रहस्यान्तरमिति च।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन रायभट्टात्मजन्मना।
कृतो मेरुरय मात्राप्रस्तारस्यातिदुर्गम॥

अस्य स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम्।

तथैव तृतीयप्रत्ययः मात्रामेरुः । मात्रामेरुर्यथा –

वि० १	।			१			
स० २	ऽ			१	१		
वि० ३	।ऽ			२	१		
स० ४	ऽऽ		१	३	१		
वि० ५	।ऽऽ		३	४	१		
स० ६	ऽऽऽ		१	६	५	१	
वि०	।ऽऽऽ		४	१	६	१	
स०	ऽऽऽऽ	१	१	१५	७	१	
वि०	।ऽऽऽऽ	५	२	२१	८	१	
स०	ऽऽऽऽऽ	१	१५	३५	२८	९	१
वि०	।ऽऽ ऽऽ	६	३५	५६	३६	१	१

एकादशमात्रामेरुरयम् । एवं मग्रेऽपि समूह्येयः ।

इति श्रीमत्प्रयागभट्टात्मजसकलविद्याधरसार्वभौमसमस्तमानसकल्पतरुकवितार्किक-
चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-कलाश्रीरामभट्टाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ
भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे
एकमात्राविनिरचितमात्राप्रस्तारमेरूद्धारो
नाम सप्तमो विश्रामः ॥७॥

अष्टमो विश्रामः

अथ मेरुगर्भी चतुर्थप्रत्ययस्वरूपामेव मात्राणा पताकामाह—अथेत्यादि अर्द्धेन श्लोकद्वयेन—

> अथ मात्रापताकापि कथ्यते कवितुष्टये ॥६६॥
> दत्त्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्त्तेन लोपयेदन्त्ये ।
> अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततोऽभवत् पक्तिसञ्चार ॥६७॥
> एकैकाङ्कस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।
> द्वित्र्यादीना विलोपे तु पक्तिर्द्वित्र्यादिबोधिनी ॥६८॥

अथेति । मात्रामेरुकथनानन्तर मात्राणा पताकापि कवितुष्टये-कवीना सन्तोषार्थं कथ्यते-उच्यत इत्यर्थ ॥ ६६ ॥

तत्प्रकारमाह—

दत्त्वेति । तत्र उद्दिष्टवत्-उद्देशक्रमवत् अङ्कान्-एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् दत्त्वा-लिखित्वा, ततो वामावर्त्तेन-वामभागत अन्त्ये-त्रयोदशाङ्के लोपयेत् पूर्वमङ्कमिति शेष । अवशिष्टो वै योऽङ्क लोपे सतीति शेष । ततोऽङ्कात् पक्तिसञ्चारो भवेदिति-जानीयादित्यर्थ ॥६७॥

अपराङ्कलोपेन प्रकारमाह—

एकैकाङ्कस्येति । एकैकाङ्कस्य लोपे तु अन्त्य इति शेष । एकगुरोर्ज्ञान भवेत् । द्वित्र्यादीना अङ्काना विलोपे तु पक्ति द्वित्र्यादिगुरुबोधिनी भवतीति शेष ॥ ६८ ॥

अयमर्थ —उद्दिष्टसदृशा अङ्का स्थाप्या । ते यथा—१, २, ३, ५, ८, १३ । एकः द्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदशाद्या । ततो वामावर्त्तेन पर लोपयेत्-सर्वान्तिम अङ्क तत्पूर्वेणाङ्केन लोपयेदित्यर्थ । तत एकेनाङ्केन अन्तिमाङ्कलोपे कृते सति एकगुरुरूपज्ञान भवति । द्वाभ्या अन्तिमाङ्के लोपे सति द्विगुरुरूपज्ञान भवति । त्रिभिरन्तिमाङ्कलोपे सति त्रिगुरुरूपज्ञान भवतीत्यादि ज्ञेयम् । एव कृते मात्रापताका सिद्ध्यति ।

तत्र षट्कलप्रस्तारे यथा—उद्दिष्टसमाना अङ्का एकद्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदशरूपा स्थापनीया । तत सर्वापेक्षया परस्त्रयोदशाङ्क तत्पूर्वोऽष्टमाङ्क, तेनाष्टमाङ्केन त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति अवशिष्टा. पञ्च । तस्य पञ्चमाङ्कस्य

तथैव तृतीयप्रत्ययः मात्रामेरुः । मात्रामेरुर्यथा –

वि० १	I	१					
स० २	S	१	१				
वि० ३	IS	२	१				
स० ४	SS	१	३	१			
वि० ५	ISS	३	४	१			
स० ६	SSS	१	६	५	१		
वि०	ISSS	४	१	६	१		
स०	SSSS	१	१०	१५	७	१	
वि०	ISSSS	५	२	२१	८	१	
स०	SSSSS	१	१५	३५	२८	९	१
वि०	ISS SS	६	३५	५६	३६	१	१

एकादशमात्रामेरुरयम् । एवं अग्रेऽपि समुन्नेयः ।

इति श्रीमत्प्रसन्ननयनवरनारचितसमकरस्वास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-
चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-श्रीमद्वात्स्यवरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ
भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे
एकमात्रादिनिरवधिकमात्राप्रस्तारमेरूद्धारो
नाम सप्तमो विश्रामः ॥७॥

षट्कलप्रस्तारे द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-षष्ठ-सप्तम-नवमस्थानस्थानि रूपाणि द्विगुरूणि ब्रूयादिति ।

तथा च त्रिलोपे त्रिगुरुक रूप भवतीति, त्रिपञ्चाष्टलोपे भागो नास्तीति, द्वि-त्रि-पञ्चलोपोऽप्यष्टात्मको वृत्त एवेति, पञ्च-द्वयेकलोपोऽप्यष्टलोपात्मको वृत्त एवेति । एक-द्वि-त्रिलोपोपि वृत्त इति प्रकारेण जायमाना अङ्का न स्थापनीया कृतप्रस्तारसमाप्तेरिति भाव. ।

ननु प्रथम रूप सर्व गुर्वात्मक कुत्रास्तीत्यपेक्षाया एक-त्र्यष्टभिर्मिलित्वा जातैर्द्वादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकोऽवशिष्ट, स आद्ये स्थाने त्रिगुर्वात्मक रूप भवतीति विज्ञातव्यमिति । चरम रूप तु अष्टमाङ्काग्रे उद्दिष्टाङ्काऽऽकारत्वेन स्थापितमेवास्ति । तथा चात्रापि प्रथमाङ्कचरमाङ्कयो पूर्वोक्तन्यायेनाऽवस्थान भवतीति वेदितव्यम् ।

पताकाप्रयोजन तु मेरौ षट्कलप्रस्तारस्यैक प्रथम रूप त्रिगुरूपलक्षित सर्वगुर्वात्मक, षड्द्विगुरूणि रूपाणि, पञ्चैकगुरूणि रूपाणि, एक सर्वलघ्वात्मक रूपमस्ति ।

तत्र त्रयोदशभेदभिन्ने षट्कलप्रस्तारे कुत्र स्थाने सर्वगुर्वात्मक, कतमस्थाने द्विगुर्वात्मक, कतरस्थाने चैकगुर्वात्मक, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मक, कति वा प्रस्तारसख्येति प्रश्ने कृते पताकयोत्तर दातव्यमिति पताकाज्ञानफलमिति । श्रीगुरुमुखादवगतो मात्रापताकालिखनप्रकार प्रकाशित । एवमन्यत्रापि निरवधिकमात्राप्रस्तारेषु पञ्चसप्ताष्टकलाना यथाक्रम मात्रापताकाविरचनप्रकार समुन्नेय सुधीभि, ग्रन्थविस्तारभयान्नेहास्माभि प्रपञ्चित इति शिवम् ।

अत्रापि पिङ्गलोद्योताख्याया सूत्रवृत्तौ सार्द्धेन श्लोकेन षण्मात्रापताकाया सिद्धाङ्का सगृहीता । यथा–

> एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुन्यड्काश्च त्रयस्तथा ।
> पञ्चाष्ट-दिक्-शिवेनाः स्यु तथाष्टौ च त्रयोदश ॥
> षण्मात्रिकापताकायामङ्कानुक्रमणी स्मृता ।

इति । इहापि च पक्त्या विन्यासक्रमो गुरुमुखादवगन्तव्य ।

किञ्च–

> एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुनि-वह्नि-शरस्तथा ।
> वसु-दिग्-रुद्र-सूर्याष्टक्रमादङ्कान् समालिखेत् ॥
> पञ्चमात्रापताकायामङ्कानुक्रमणी मता ।

तत्पूर्वं त्रिविद्यमानत्वात् प्रष्टमाङ्कलोपात् परकलया सह गुरुभावाच्च पञ्चमाङ्कात् एकगुरुपंक्तिक्रमो विधेय इति । तत्र च पञ्चमस्थाने प्रादौ चतुर्लघुकमस्ते चैक-गुरुकमेवं ।।।। ऽ प्राकार रूपमस्तीति ज्ञानपताकाफलम् । एवमन्यत्रापि गुरुभावो ज्ञातव्यः ।

तथा पञ्चभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति प्रष्टावशिष्यन्ते ते तु पञ्चाधो लेख्याः । तथा त्रिभिस्त्रयोदशाङ्कावयवं लुप्ते सति दशावशिष्यन्ते ते च प्रष्टाधो लेख्याः । तथा द्वाभ्यां द्वाभ्यां त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकादशावशिष्यन्ते तेऽपि दशाधो लेख्य । तथा एकेन त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति द्वादशावशिष्यन्ते त एकादशाधो लेख्या । अत्र सर्वत्र पूर्व एव हेतुरुह्येय ।

अतएव मेरावेकगुरुकचतुर्लघुकरूपगुरुस्थानानि प्रस्तारगत्या पञ्चैव भवन्तीति नाये पंक्तिसञ्चारः । एतेन षट्कलप्रस्तारे पञ्चमाष्टमदशमैकादश द्वादशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुरुकाणि भूयादिति । एवं मङ्कपञ्चमके एक-गुरुकमुक्तम् ।

अथ द्विगुरूणि रूपाणि उच्यन्ते—तत्र द्वाभ्यामङ्काभ्यां मन्तिमाङ्कलोपे कृते सति द्विगुरुक रूपमिति । पञ्चाष्टभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति भावाभावात् तद्भावाभावर्तस्यैस्त्रिभिस्तदप्रस्थैरष्टभिश्च भार्तैरेकादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति द्वावशिष्येते द्वयोस्तत्पूर्वत्र स्थितमानत्वात् । तत्रैकादशाङ्कलोपात् परकलया सह गुरुभावाच्च द्वितीया मारभ्य द्विगुरुकपंक्तिसञ्चारो भवतीति । तथा च द्वितीयस्थाने प्रथम द्विलघुकं ततो द्विगुरुकं ।।ऽऽ एवमाकारकं रूपमस्तीति पूर्ववदेव पताकाफलमुपैतीति ।

एवमन्यत्रापि प्रस्तारान्तरे गुरुभावोऽवगन्तव्य । तथा च द्वाभ्यां प्रष्टभिश्च भार्तैर्दशभिः त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति त्रयोऽवशिष्यन्ते ते द्वयधो लेख्याः । तत एकेन प्रष्टभिश्च भार्तैर्नवभिः त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति चत्वारोऽवशिष्यन्ते ते च त्रयो लेख्याः । तत पञ्चभिस्त्रिभिश्च भार्तैरष्टभिस्त्रयोदशाङ्कावयवलोपात् प्रवशिष्टः पञ्चमाङ्को वृत्त एवेति न स्थाप्यते । पञ्चाङ्कस्य पूर्वं प्र सिद्धत्वमङ्क नैव साधयेदिति । वर्णपताकातो प्रनुवृत्तिरित्यादिति । तत पञ्चभि द्वाभ्यां च भातो सप्तभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति सप्तावशिष्यन्ते ते तु चतुरधो लेख्या । द्विभिलोपे पञ्चमारभ्यको वृत्त एवेति न स्थापनीयः अनुवृत्तसिद्धयादि निषिद्धत्वादिति । तत एकेन त्रिभिश्च भार्तैश्चतुर्भिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति नवावशिष्यन्ते तेऽपि सप्ताधो लेख्या । एवं च पूर्ववद् हेतुद्वय । अतश्च मेरौ द्विगुरुक-द्विलघुकरूपस्थानानि प्रस्तारगत्या षडेव भवन्तीति नाथ पंक्तिसञ्चारः ।

ो षट्कलप्रस्तारे द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-षष्ठ-सप्तम-नवमस्थानस्थानि रूपाणि द्विगुरूणि ब्रूयादिति ।

तथा च त्रिलोपे त्रिगुरुक रूप भवतीति, त्रिपञ्चाष्टलोपे भागो नास्तीति, द्वि-त्रि-पञ्चलोपोऽप्यष्टात्मको वृत्त एवेति, पञ्च-द्वये कलोपोऽप्यष्टलोपात्मको वृत्त एवेति । एक-द्वि-त्रिलोपेपि वृत्त इति प्रकारेण जायमाना शङ्का न स्थापनीया कृतप्रस्तारसमाप्तेरिति भाव ।

ननु प्रथम रूप सर्व गुर्वात्मक कुत्रास्तीत्यपेक्षाया एक-त्र्यष्टभिर्मिलित्वा जातैर्द्वादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकोऽवशिष्ट, स आद्ये स्थाने त्रिगुर्वात्मक रूप भवतीति विज्ञातव्यमिति । चरम रूप तु अष्टमाङ्काग्रे उद्दिष्टाङ्काऽऽकारत्वेन स्थापितमेवास्ति । तथा चात्रापि प्रथमाङ्कचरमाङ्कयो पूर्वोक्तन्यायेनाऽवस्थान भवतीति वेदितव्यम् ।

पताकाप्रयोजन तु मेरौ षट्कलप्रस्तारस्यैक प्रथम रूप त्रिगुरूपलक्षित सर्वगुर्वात्मक, षड्द्विगुरूणि रूपाणि, पञ्चैकगुरूणि रूपाणि, एक सर्वलघ्वात्मक रूपमस्ति ।

तत्र त्रयोदशभेदभिन्ने षट्कलप्रस्तारे कुत्र स्थाने सर्वगुर्वात्मक, कतमस्थाने द्विगुर्वात्मक, कतरस्थाने चैकगुर्वात्मक, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मक, कति वा प्रस्तारसख्येति प्रश्ने कृते पताकयोत्तर दातव्यमिति पताकाज्ञानफलमिति । श्रीगुरुमुखादवगतो मात्रापताकालिखनप्रकार प्रकाशित । एवमन्यत्रापि निरवधिकमात्राप्रस्तारेषु पञ्चसप्ताष्टकलाना यथाक्रम मात्रापताकाविरचनप्रकार समुन्नेयः सुधीभि, ग्रन्थविस्तारभयान्नेहास्माभि प्रपञ्चित इति शिवम् ।

अत्रापि पिङ्गलोद्योताख्याया सूत्रवृत्तौ सार्द्धेन श्लोकेन षण्मात्रापताकाया सिद्धाङ्का सगृहीता । यथा—

> एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुन्यङ्काश्च त्रयस्तथा ।
> पञ्चाष्ट-दिक्-शिवेनाः स्यु तथाष्टौ च त्रयोदश ॥
> षण्मात्रिकापताकायामङ्कानुक्रमणी स्मृता ।

इति । इहापि च पक्त्या विन्यासक्रमो गुरुमुखादवगन्तव्य ।

किञ्च—

> एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुनि-वह्नि-शरस्तथा ।
> वसु-दिग्-रुद्र-सूर्याष्टक्रमादङ्कान् समालिखेत् ॥
> पञ्चमात्रापताकायामङ्कानुक्रमणी मता ।

इति सार्द्धेन श्लोकेन सूत्रवृत्तौ पञ्चमात्रापताकायां सिद्धाङ्कानुक्रमणिका सङ्गृहीता इति ।

अत्राप्यङ्कविन्यासक्रमः पूर्ववदेव । इत्थं सप्ताष्टनवसु कलासु पताकान् समुन्नयेत् । दिङ्मात्रमुक्तमस्माभिः ग्रन्थविस्तरशङ्कया इति सर्वमनवद्यम् ।

पञ्चमात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८
	३		९	
	४		१०	
	६		११	
	७		१२	

षण्मात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८	१३
	३		८		
	४		१०		
	६		११		
	७		१२		
	९				

इति श्रीमद्भगवच्चरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकायमाणसूरिकुल-
कमलकुमुदबन्धु-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-
भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे मात्रा-
पताकोद्धारो नामाष्टमो विश्रामः ॥ ८ ॥

नवमो विश्रामः

अथ वृत्तजातिसमार्द्धसमविषमपद्यस्थगुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारमाह 'पृष्ठे' इति श्लोकेन ।

पृष्ठे वर्णच्छन्दसि कृत्वा वर्णांस्तथा मात्राः ।
वर्णाङ्केन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते ॥ ६६ ॥

तत्राऽमुकसंख्याक्षरप्रस्तारेऽमुके छन्दसि कति गुरवः, कति च लघव इति प्रश्ने कृते गुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारप्रक्रिया प्रकाश्यते ।

तत्रोद्भावितचतुष्पदे वर्णप्रस्तारच्छन्दसि समवृत्ते पृष्ठे सति वर्णान्-तत्रस्थ वर्णान् गुरुलघुरूपतया समुदायमापन्नान् मात्रा -कला कृत्वा, तथा गुरुलघुरूपसमुदायतयैव कलारूपतामापद्येत्यर्थः । तत कलाया इति जात्या एकवचनं । अतः कलानां मध्यत इत्यवधेयम् । वर्णाङ्केन पृष्ठस्य वृत्तस्य वर्णसंख्याङ्केन लोपे लोपावशिष्टकलासंख्यया गुरवोऽवशिष्यन्ते, तत्तद्वृत्तगतगुरून् जानीयादित्यर्थः । गुरुज्ञाने सति परिशेषादवशिष्टवृत्ताक्षरसंख्यया लघूनपि जानीयादित्यर्थः ॥ ६६ ॥

अत्र समवृत्तस्यैकपादज्ञानेनैव चतुर्णामपि पादानामुट्टवणिका विधाय लिखनेन गुरुलघुज्ञानं भवतीत्यनुसन्धेयं सुधीभिः । यथा–

समवृत्ते एकादशाक्षरप्रस्तारे षोडशमात्रात्मके रथोद्धतावृत्तपादे 'रात्परैर्नर-लगै रथोद्धता' इत्यत्र ऽ।ऽ, ।।।, ऽ।ऽ, ।ऽ वर्णाः ११, मात्रा १६ षोडशकलासु पिण्डरूपासु संख्यातासु वृत्तस्यैकादशवर्णसंख्याया लुप्तायां सत्यामवशिष्ट-पञ्चगुरवः षड्लघवः परिशेषाद् विज्ञेयाः । इति समवृत्तस्थगुरुलघुज्ञानप्रकारः । एवं पादचतुष्टयेऽपि पादसाम्यात् विंशतिर्गुरवः चतुर्विंशतिर्लघवश्च भवन्तीति ज्ञेयम् । एवं प्रस्तारान्तरेऽपि समवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानमूह्यं सुधीभिरित्युपदिश्यते ।

एवञ्च षट्त्रिंशदक्षरायाम्—

गोकुलनारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरिः पायाद् ॥

इत्यस्या देहीसमाख्याया गाथाजातौ सप्तपञ्चाशत् संख्यातासु पिण्डरूपासु कलासु षट्त्रिंशदक्षरलोपे कृते सति एकविंशतिगुरवोऽवशिष्यन्ते । पारिशेष्यात् पञ्चदश लघवोऽपीति च ज्ञेयम् । इति गाथाजातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उट्टवणिका यथा—

SII SSS IIS SSS ISI SSS
IIS SII SSI III SSI SSS

पूर्वार्द्धे ३० मात्रा, उत्तरार्द्धे २७ मात्रा । मात्रा ५७, अक्षर ३६ ।

एवमेवापरास्वपि जातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीय इत्युपदेशः ।

एवमेव अर्द्धसमवृत्तेऽपि प्रथम-तृतीयविषमपादे द्वितीयचतुर्थसमपादे च—

सहचरि कथयामि ते रहस्य
न खलु कदाचन सद्गृहं प्रभेयाः ।
इह विध-विषमागिरः सखीनां
सकपटचाटुतराः पुरस्सरन्ति ॥

इति पुष्पिताग्राभिधाने छन्दस्य[ष्ट]षष्टिकलात्मके ६८ पिण्डे छन्दोक्षर संख्यां पञ्चाशदात्मिकां ५० मुञ्चेत् । एवं लोपे सति अष्टादश १८ गुरवोऽत्र शिष्यन्ते परिशेषात् द्वात्रिंशत्स्वथलोऽपि ३२ तत्र वर्तन्त इत्यर्द्धसमवृत्तस्य गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उट्टवणिका यथा—

III III SIS ISS [१२]
III ISI ISI SIS S [१३]
III III SIS ISS [१२]
III ISI ISI SIS S [१३]

१८ गुरु ३२ लघु, अक्षर ५० ।

एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तस्थगुरुलघुज्ञानप्रकारः । एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तेषूदाहरणमूह्य इत्युपदिश्यते ।

तथा च भिन्नचिह्नचतुष्पादे विषमवृत्तेऽपि

विलसास गोपरमणीषु
तरणितनयातटे हरिः ।
वंशममरवसे कलयन्
वनिताजनेन निभृतं निरीक्षितः ।

इत्युद्गताभिधाने छन्दसि सप्तपञ्चाशत् ५७ कलात्मके पिण्डे छन्दोऽक्षर संख्यां चत्वारिंशदात्मिकां ४१ मुञ्चेत् । एवमक्षरसंख्यायां मुक्तायां तस्यां चतुर्दशगुरवोऽत्रावशिष्यन्ते । परिशेषात् त्रयोविंशत्स्वथलोऽपि २३ विज्ञेया । इति विषमवृत्तस्य गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उद्ववणिका यथा—

IIS	ISI	IIS	I		[१०]
III	IIS	ISI	S		[१०]
SII	III	SII	S		[१०]
IIS	ISI	IIS	ISI	S	[१३]

मात्रा ५७ अक्षर ४३ ।

एवमन्येष्वपि विषमवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीय. सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तरभयान्नेहास्माभि प्रपञ्च्यत इति सर्वं चतुरस्रम् ।

वृत्तस्थगुरुलघूना युगपज्ज्ञान न जायते येषाम् ।
तेषा तदवगमार्थे सुकरोपायो मया रचित ॥ १ ॥

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्द शास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिकदुष्करोद्धारे वृत्तजातिसमार्द्धसमविषमसमस्तप्रस्तारेषु तत्तद्वृत्तस्थगुरुलघुसख्याज्ञानप्रकारसमुद्धारो नाम नवमो विश्राम. ॥ ९ ॥

दशमो विश्रामः

अथ पञ्चमप्रत्ययस्वरूपा वर्णमर्कटीमाह—'मर्कटी लिख्यते' इत्यादिना श्लोकषट्केन—

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा ।
कोष्ठमक्षरसख्यात पङ्क्ती रचय षट् तथा ॥ ७० ॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु ।
अपरायां तु द्विगुणानक्षरसख्येषु तेष्वेव ॥ ७१ ॥
आदिपक्तिस्थितं रङ्कैर्विभाव्य परपक्तिगान् ।
अङ्कांश्चतुर्थपक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२ ॥
पूरयेत् षष्ठपञ्चम्यावर्द्धैस्तुर्याङ्कसम्भवैः ।
एकीकृत्य चतुर्थस्य-पञ्चमस्थाङ्कान् सुधीः ॥ ७३ ॥

उट्टवणिका यथा—

SII SSS IIS SSS ISI SSS

IIS SII SSI III SSI SSS

पूर्वार्द्धे ३० मात्रा उत्तरार्द्धे २७ मात्रा । मात्रा ५७ अक्षर ३६ ।

एवमेवापरास्वपि जातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीय इत्युपदेशः ।

एवमेव अर्द्धसमवृत्तेऽपि प्रथम-तृतीयविषमपादे द्वितीयचतुर्थसमपादे च—

सहचरि कथयामि ते रहस्य,
न खलु कदाचन तद्गृहं व्रजेथा ।
इह विट-विषमागिरः सखीनां
सकपटचाटुधरा पुरस्सरन्ति ॥

इति पुष्पिताग्राभिधाने अन्त्यस्य[ष्ट]षष्टिकलात्मके ६८ पिण्डे छन्दोक्षर संख्यां पञ्चाशदात्मकां ५० मुञ्चेत् । एवं शेषे सति अष्टादश १८ गुरवोऽत्र शिष्यन्ते परिशेषात् द्वात्रिंशल्लघवोऽपि ३२ तत्र वर्तन्त इत्यर्द्धसमवृत्तस्य गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उट्टवणिका यथा—

III III SIS ISS [१२]
III ISI ISI SIS S [१३]
III III SIS ISS [१२]
III ISI ISI SIS S [१३]

१८ गुरु १२ लघु, अक्षर ५० ।

एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तस्य गुरुलघुज्ञानप्रकारः । एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तेषूदाहरणमूह्य इत्युपदिश्यते ।

तथा च भिन्नभिन्नचतुष्पादे विषमवृत्तेऽपि

विलसासु सोपरमणीषु
तरणितनयातटे हरिः ।
मधुमधुरवसे कलयन्
वनिताजनेन निभृतं निरीक्षितः ।

इत्युद्गताभिधाने छन्दसि सप्तपञ्चाशत् ५७ कलात्मके पिण्डे छन्दोऽक्षर संख्यां एकचत्वारिंशदात्मिकां ४१ मुञ्चेत् । एवमक्षरसंख्यायां मुक्तायां तस्यां चतुर्दशगुरवोऽवशिष्यन्ते । परिशेषात् षड्विंशल्लघवोऽपि २६ विज्ञेया । इति विषमवृत्तस्य गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उट्टवणिका यथा—

IIS ISI IIS I [१०]
III IIS ISI S [१०]
SII III SII S [१०]
IIS ISI IIS ISI S [१३]

मात्रा ५७ अक्षर ४३।

एवमन्येष्वपि विषमवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीय सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तरभयान्नेहास्माभि. प्रपञ्च्यत इति सर्वं चतुरस्रम्।

वृत्तस्थगुरुलघूना युगपज्ज्ञान न जायते येषाम्।
तेषा तदवगमार्थे सुकरोपायो मया रचित ॥ १॥

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे वृत्तजातिसमार्द्धसमविषमसमस्तप्रस्तारेषु तत्तद्वृत्तस्थगुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारसमुद्धारो नाम नवमो विश्रामः ॥ ९॥

दशमो विश्रामः

अथ पञ्चमप्रत्ययस्वरूपा वर्णमर्कटीमाह—'मर्कटी लिख्यते' इत्यादिना श्लोकषट्केन—

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा।
कोष्ठमक्षरसंख्यात पङ्क्ती रचय षट् तथा ॥ ७०॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु।
अपरायां तु द्विगुणानक्षरसंख्येषु तेष्वेव ॥ ७१॥
आदिपक्तिस्थितै रङ्कैर्विभाव्य परपक्तिगान्।
अङ्कांश्चतुर्थपक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२॥
पूरयेत् षष्ठपञ्चम्यावङ्कैस्तुर्याङ्कसम्भवैः।
एकीकृत्य चतुर्थस्य-पञ्चमस्याङ्ककान् सुधीः ॥ ७३॥

कुर्यात् तृतीयपंक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरितान् ।
वर्णानां मर्कटी सेयं पिङ्गलेन प्रकाशिता ॥ ७४ ॥
वृत्तं भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोऽपि ।
प्रस्तारस्य षडेते ज्ञायन्ते पंक्तितः क्रमशः ॥ ७५ ॥

तत्र एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिवर्णवृत्तप्रस्तारेषु तत्तद्वर्णवृत्तप्रस्तारे कति कति प्रभेदाः कियन्त्यः कियन्त्यो मात्राः कियन्तः कियन्तो वर्णाः, कति कति गुरवः कति कति च लघवः ? इति महाप्रश्ने कृते वर्णमर्कटिकया वक्ष्यमाण स्वरूपया प्रत्युत्तरं देयमिति ।

वर्णमर्कटीविरचनप्रकारो लिख्यते—

मर्कटीति । भो शिष्य ! वर्णप्रस्तारस्य एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कृतस्येति शेषः । मतिवर्गभा-मतिदुष्करा मर्कटीव मर्कटी-तन्तुजालैरिव विरचिता षड्जालपंक्तिस्तावल्लिख्यते-विरच्यत इति प्रतिज्ञा । तत्र वा स्वेच्छया प्रस्तार संख्यातं-कोष्ठं रचय तथा षट्संख्याविशिष्टाः पंक्तीश्च रचय-कुरु इत्यर्थः ॥७०॥

अथ प्रथमां वृत्तपंक्तिं साधयति—

प्रथमायामिति । तत्र प्रथमायां-प्रथमपंक्तौ वृत्तपंक्ताविति यावत् सर्वकोष्ठेषु पूर्वविरचितेषु प्रथमादीन्-प्रथमादीन् एकद्विन्यादीन् अङ्कान् १ २ ३ यावदिष्टं दद्यात्-विन्यसेत् । एवं कृते प्रथमवृत्तपंक्तिः सिद्ध्यति ।

अथ द्वितीयां प्रभेदपंक्तिं साधयति—

अपरायामिति । चकार-समस्तार्थः । तत्र अपरायां तु द्वितीयायां प्रभेद पंक्ताविल्यर्थः । प्रस्तारसक्येषु-तत्प्रस्ताराक्षरसंख्येषु तेष्वेव विन्यस्तेषु कोष्ठेषु द्विगुणान्-द्विचतुरष्टादिक्रमेण द्विगुणानङ्कान् २ ४ ८ यावदिष्टमित्यस्य सर्व त्रानुवृत्तिः दद्यात् इति पूर्वेणैव अन्वयः ॥ ७१ ॥ एवं कृते द्वितीयाप्रभेदपंक्तिः सिद्ध्यति ।

अथ क्रमप्राप्तामपि तृतीयां मात्रापंक्तिमुल्लंघ्य तन्मूलभूतां चतुर्थी वर्ण पंक्तिं साधयति—

आदिपंक्तिस्थितैरिति । आदिपंक्तिस्थितैः-प्रथमपंक्तिस्थितैः वृत्तपंक्तिस्थितैः रेकद्विन्यादिभिरङ्कैः परपंक्तिगतान्-द्वितीयपंक्तिस्थितान् द्विचतुरष्टादिक्रमेण स्थितानङ्कान् विभाज्य-गुणयित्वा तत्तत्तद्गुणितैः-द्वयष्टचतुर्विंशत्यादिभिरङ्कैः २ ८ २४ चतुर्थपंक्तिस्थकोष्ठकान् पूरयेदित्यन्वयः । अपि एवार्थे । अपि चारित पूरयेदेवेत्यर्थः । ७२ ॥ एवं कृते चतुर्थी वर्णपंक्तिः सिद्ध्यति ।

अथ षष्ठ-पञ्चमपक्त्यो पूरणोपायमुपदिशति—

पूरयेदिति । षष्ठपञ्चम्यौ पङ्क्ती कर्मीभूते तुर्याङ्कसम्भवै-चतुर्थ्यां पक्ति-स्थिताङ्कोत्पन्नैरर्द्धैरेकचतुर्द्वादिशादिभिरङ्कै १ ४ १२ पूरयेत् । एव कृते षष्ठपञ्चम्यौ गुरुलघुपक्ती सिद्धयतः । अत्र पक्त्योर्व्यत्यय छन्दोऽनुरोधेन कृत, फलतस्तु न कश्चिद् विशेषोऽङ्कसाम्यादिति पक्तिद्वय सिद्धम् ।

अथोर्वरिता तृतीया मात्रापक्ति साधयति—

एकीकृत्येति उत्तरार्द्धपूर्वार्द्धाभ्याम् । तत्र सुधी.–अङ्कमेलनकुशलो गणक चतुर्थपक्तिस्थितान् द्वयष्टचतुर्विशत्यादिकान् अङ्कान् पञ्चमपक्तिस्थितान् एकचतुर्द्वादशादिकानङ्काश्च, अत्र चकारोऽध्याहार्य, एकीकृत्य-मेलयित्वा त्रि-द्वादश-षट्त्रिशदादिरूपतामापद्येति यावत् उर्वरितान्-तृतीयपक्तिस्थितकोष्ठकानपि त्रि-द्वादश-षट्त्रिशदादिरूपैर्मेलितैरङ्कै ३ १२ ३६ पूरितान् कुर्यादि-त्यन्वय । अत्राप्यपि एवार्थ । अविचारित पूरितान् कुर्यादेवेत्यर्थ । एव कृते तृतीयामात्रापक्ति सिद्धयति ।

फलितार्थमाह—परमार्द्धेन 'वर्णाना' इति ।

सोऽय पूर्वोक्तप्रकारेण घटिता वर्णाना मर्कटीव मर्कटी-अङ्कजालरूपिणी पिङ्गलेन-श्रीनागराजेन प्रकाशिता-प्रकटीकृता ॥ ७४ ॥

एव विरचनप्रकारेण पक्तिषट्क साधयित्वा वर्णमर्कटीफलमाह—

वृत्तमिति । वृत्त वृत्तानि-एकाक्षरादीनि 'एकवचन तु जात्यभिप्रायेण' भेदः-प्रभेद वृत्ताना प्रभेदा इत्यर्थ । पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देश । मात्रा-तत्तद्-वृत्तमात्रा, वर्णा -तत्तद्वृत्तवर्णाः, गुरव – तत्तद्वृत्तगुरवः, तथा च लघवोऽपि-तत्तद्वृत्तलघव इत्यर्थ. । प्रस्तारस्येति सम्बन्धे षष्ठी । एते वृत्तादय षट्-षट्-सख्याविशिष्टाः पक्तित -षट्पक्तित क्रमत -क्रमाद् ज्ञायते-हृदयङ्गमता आपद्यन्त इत्यर्थ ॥ ७५ ॥

श्रीलक्ष्मीनाथकृतो मर्कटिकाया प्रकाशोऽयम् ।
तिष्ठतु बुधजनकण्ठे वरमुक्ताहारभूषणप्रख्य ॥

अस्याः स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् । इत्यल पल्लवेनेति ।

वर्णमर्कटी यथा—

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
प्रभेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	१०२४	२०४८	४०९६	८१९२
मात्राः	३	१२	३६	९६	२४०	५७६	१३४४	३०७२	६९१२	१५३६०	३३७९२	७३७२८	१५९७४४
वर्णाः	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६	२०४८	४६०८	१०२४०	२२५२८	४९१५२	१०६४९६
गुरवः	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८
लघवः	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८

इति त्रयोदशवर्णा मर्कटी । एवमन्यापि वर्णमर्कटी समुन्नेया । पञ्चमः प्रत्ययो वर्णमर्कटिकाख्यः ।

इति श्रीमत्प्रशस्तप्रशस्तकलाधिकारलब्धप्रतिष्ठाश्रीमल्लक्ष्मीनाथभट्टसूनु-
मणि-चन्द्रशेखरभट्टात्मजाचार्य-साहित्याचार्यशर्म-श्रीमल्लक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धारे एकाक्षरादि-
षड्विंशत्यक्षरावधिवर्णप्रस्तारेषु वर्णमर्कटीप्रस्तारोद्धारो
नाम दशमो विश्रामः ॥ १० ॥

एकादशो विश्रामः

श्रीनागराजमानम्य सम्प्रदायानुमानत ।
श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्त्तिके वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
वर्णमर्कटिकामुक्त्वा मात्रामर्कटिकामपि ।
दुष्करा दुष्करोद्धारे सुकरा रचयाम्यहम् ॥ २ ॥

अथ पचमप्रत्ययस्वरूपामेव मात्रामर्कटीमाह—'कोष्ठान्' इत्यादिना 'नष्टोद्दिष्ट' इत्यन्ते एकादशश्लोकेन—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पक्तिषट्कं,
कुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः ।
तेषु द्वयादीनादिपक्तावथाङ्का-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्क सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पक्षपङ्क्तावथाऽपि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा ततस्तान्,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपक्तिस्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥

प्रथमे द्वितीयमङ्क द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
दत्त्वा वाणद्विगुण तद्द्विगुण नेत्रतुर्ययोर्दद्यात् ॥ ७८ ॥

एकीकृत्य तथाऽङ्कान् पञ्चमपक्तिस्थितान् पूर्वान् ।
दत्त्वा तथैकमङ्क कुर्यात्तेनैव पञ्चम पूर्णम् ॥ ७९ ॥

दत्त्वा पञ्चममङ्क पूर्वाङ्कानेकभावमापाद्य ।
दत्त्वा तथैकमङ्क षष्ठ कोष्ठ प्रपूरयेद् विद्वान् ॥ ८० ॥

कृत्वैक्य चाङ्कानां पञ्चमपक्तिस्थितानां च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्क द्वित्वैक पूरयेत् मुने कोष्ठम् ॥ ८१ ॥

एव निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यम् ।
प्रकृतानुपयोगवशान् न कृतोऽङ्काना च विस्तार ॥ ८२ ॥

एव पञ्चमपक्ति कृत्वा पूर्णां प्रथममेकाङ्कम् ।
दत्त्वा पञ्चमपक्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥

एकैकस्य तथाङ्कानां पञ्चमषष्ठस्थितान विद्वान ।
कुर्याच्चतुर्थपंक्ति पूर्णां नागाक्रमा नूनम् ॥ ८४ ॥
वृत्तं प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पंक्तितः पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥
नष्टोद्दिष्ट युग्मम् मेरुद्वितय तथा पताका च ।
मर्कटिकापि च तद्वत् कौतुकहेतोर्निबद्ध्यते तज्ज्ञैः ॥ ८६ ॥

तत्र च एकमात्रादिभिरवधिकमात्राप्रस्तारेषु च तत्तज्जातिप्रस्तारे कति कति प्रभेदाः कियन्त्यः कियन्त्यो मात्राः कियन्तः कियन्तो वर्णाः कति कति लघवः कति कति गुरवः ? इति महाप्रश्ने कृते मात्रामर्कटिकया वक्ष्यमाणस्वरूपया प्रत्युत्तरं दातव्यमिति मात्रामर्कटीविरचनप्रकारो लिख्यते—

कोष्ठानिति । तत्र-तावन्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः-मात्रामर्कटीसिद्ध्यर्थं पंक्ति-षट्कं यथा स्यात्तथा मात्रासम्मितान्-मात्राभिः परिमितान् मात्राणां संख्यया संयुक्तानिति यावत् कोष्ठान् कुर्यात्-विरचयेदित्यर्थः । तेषु-कोष्ठेषु आदिपङ्क्तौ-प्रथमपङ्क्तौ वृत्तपङ्क्तौ इति यावत् द्व्याद्यान्-द्वितीयादीन् द्वितीय-तृतीय चतुर्थ-पञ्चम षष्ठादीनङ्कान् २ ३ ४ ५ ६ इत्यादीन् क्रमेण यावदित्थं प्रथम दद्यात्-विन्यसेत् । किं कृत्वा? अथ चेत्यर्थः । सर्वकोष्ठेषु-षट्स्वपि कोष्ठेषु आद्याङ्क-प्रथमाङ्कं त्यक्त्वा-परित्यज्य । अत्र सर्वकोष्ठेषु प्रथमाङ्कत्यागो न सर्वथा सर्वकोष्ठत्यागपरः किन्तु षष्ठगुरुप्रथमपंक्तिकोष्ठत्यागपर इति प्रतिभाति । तत्र गुरोरभावादेवेति मूमः । अतस्च सम्प्रदायात् पञ्चसु कोष्ठेषु प्रथमाङ्कविन्यासः कर्तव्यः । अन्यथा वक्ष्यमाणाङ्कविन्यासमङ्गापत्तेरिति भावः ॥ ७६ ॥

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति प्रथमा वृत्तपंक्तिः सिद्ध्यति ॥ १ ॥

अथ द्वितीयां प्रभेदपंक्तिं साधयति—

दद्यादिति । अपरत्र-प्रथमपंक्तिसिद्धयनन्तरं पक्षपङ्क्तावपि-द्वितीयपंक्तावपि आद्याङ्क-प्रथमाङ्कं त्यक्त्वा-परित्यज्य प्रथमाङ्कस्य पूर्वाङ्काभावात् द्वितीयकोष्ठादारभ्य प्रथमाङ्कमिदत्यं प्रथमाङ्कं गृहीत्वा पूर्वयुग्माङ्कतुल्याम् उद्देशक्रमानुसारेण एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट त्रयोदशादीन् अङ्कान् १ २ ३ ५ ८ १३ इत्युत्तमान् अन्यानेव क्रमतो यावदित्थं दद्यात्-विन्यसेदित्यर्थः ।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति द्वितीयाप्रभेदपंक्तिः सिद्ध्यति ।२।

अथ तृतीयां मात्रापंक्तिं साधयति—

पूर्वस्थाङ्कैरिति । पूर्वस्थाङ्कैः-प्रथमपंक्तिस्थिताङ्कैः ततो द्वितीयपंक्ति पूरणानन्तरं तां द्वितीयां प्रत्येकं-प्रतिकोष्ठं तावयित्वा-गुणयित्वा इत्यर्थः । मित्र

पक्तिस्थकोष्ठान्-तृतीयपक्तिस्थितकोष्ठान् पूर्णान् कुर्यात्। अतश्चात्रैकचतुर्नव-विंशति-चत्वारिंशदष्टसप्तत्यादिभिरङ्कैः १, ४, ९, २०, ४०, ७८ तृतीय पक्तिस्थितकोष्ठान् पूरितान् कुर्यादित्यर्थ । अत्र नेत्रमख्या रौद्रीति विज्ञातव्या। पाठान्तरे—अग्निपर्यायत्वात् स एवार्थ। एवमन्यत्रापि। शालिनीछन्दसि ॥७७॥

एवमङ्कविन्यासे कृते सति तृतीया मात्रापक्तिः सिद्धयति ॥३॥

अथ क्रमप्राप्ता चतुर्थी वर्णपक्तिमुल्लध्य चतुर्थ-षष्ठपक्त्यो युगपदेव साधनार्थं तन्मूलभूता प्रथम तावत् पञ्चमपक्ति साधयति—

प्रथमे इति। तत्र षट्स्वपि प्रथमपक्तिषु प्रथमकोष्ठस्य त्यक्तत्वात्, द्वितीय-कोष्ठकमेवात्र प्रथम कोष्ठकम्। अत तस्मिन् प्रथमे कोष्ठके द्वितीयमङ्क, तद-पेक्षायाः द्वितीयकोष्ठके च पञ्चमाङ्क च दत्त्वा, ततो बाणद्विगुण-पञ्चद्विगुण दश १०, तद्द्विगुण-दशद्विगुण विंशतिश्च २०, तौ—द्वावङ्कौ नेत्रतुर्ययो तदपेक्षयैव तृतीयचतुर्थयो कोष्ठकयो दद्यात्-विन्यसेदित्यर्थ ॥७८॥

तथा चात्र पञ्चमपक्तौ प्रथमकोष्ठ विहाय द्वि-पञ्च-दश-विंशतिभिरङ्कैः २, ५, १०, २० कोष्ठचतुष्टय पूरयित्वा अग्रिमैतत्पञ्चमकोष्ठपूरणार्थं उपाया-न्तरमाह—

एकीकृत्येति। तथा च—इति आनन्तर्यार्थे। तत पञ्चमपक्तिस्थितान् पूर्वान् पूर्वाङ्कान्-द्वयादीन् चतुष्कोष्ठस्थान् एकीकृत्य—मेलयित्वा, तथा ततोऽपीत्यर्थ। तस्मिन्नेकीकृताङ्के एकमधिक दत्त्वा निष्पन्ने एतेनाङ्केन अष्टात्रिंशता ३८ अङ्केनैव पञ्चम पूर्वापेक्षाया पञ्चम कोष्ठक पूर्णं कुर्यात् ॥७९॥

अथास्य षष्ठकोष्ठपूरणोपायमाह—

त्यक्त्वेति। विद्वान्-अङ्कमेलनकुशलो गणक पूर्वाङ्कान्-द्वितीयादीन् एक-भावमापाद्य-एकीकृत्य सयोज्येति यावत्। ततः पिण्डीकृतेषु एतेषु अङ्केषु पञ्चमाङ्क प्रथमाङ्कवत् त्यक्त्वा। तथा पुनरित्यर्थ। एकमङ्कमधिक दत्त्वा पूर्ववज्जातेन तेन एकसप्तत्या ७१ षष्ठ कोष्ठ प्रपूरयेदिति ॥८०॥

अथ तथैवास्यसप्तमकोष्ठपूरणोपायमाह—

कृत्वेति। पञ्चमपक्तिस्थिताना द्वयादीना एकसप्तत्यन्ताना षण्णामङ्का-नामैक्य-पिण्डीभाव कृत्वा तेषु पूर्ववत् पञ्चदशाङ्क त्यक्त्वा। ततस्तेष्वपि चैक हित्वा मुने कोष्ठ-सप्तम कोष्ठ त्रिंशदधिकेन शताङ्केन १३० पूरयेत्। इति सप्तमकोष्ठकपूरणप्रकार ॥ ८१ ॥

एवमङ्कसप्तकेन द्वि-पञ्च-दश-विंशत्यष्टत्रिंशदेकसप्तति त्रिंशदधिकैकशतक्रमेण २, ५ १० २० ३८ ७१ १३० पञ्चमपङ्क्तौ कोष्ठसप्तकं पूरयेदिति। एवं चात्रत्ये पूरणीये सप्तमकोष्ठे अन्त्यपार्श्वे द्व्यादीनामङ्कानां एकीभावं कृत्वा यथासम्भवं ततदङ्कं त्यक्त्वा तेष्वपि यथासम्भवं एकादिकं हित्वा सप्तमकोष्ठकं पूरयेदिति संक्षेपः।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति चतुर्थपञ्चमपंक्तिगर्भा पञ्चमी लघुपंक्तिः सिद्धयति। ननु अस्यां पङ्क्तावग्रिमकोष्ठाऽङ्कसञ्चारः क्रियतां इत्याकांक्षायां प्रकृतानुपयोगादङ्कबाहुल्याद् ग्रन्थविस्तरशङ्कया न क्रियत इत्याह—

एवमिति। सुगमम् ॥ ८२ ॥

अथ पञ्चमपंक्तिपूरणमुपसंहरन् षष्ठगुरुपंक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति—

एवमिति। एवं पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चमपंक्ति पूर्णां कृत्वा तत्र गुरुस्थानीयं प्रथमं कोष्ठं विहाय अग्रिमकोष्ठं-प्रथमं प्रथमतः एकाङ्कं दत्त्वा पूरणीयम्। अथ-अनन्तरं पञ्चमपंक्तिस्थितै द्वितीयादिभिरङ्कैः पूर्वस्थापितैरेव प्रतिकोष्ठं षष्ठीं प्रपूरयेदिति। तथा च षष्ठपङ्क्तौ ० १ २ ५ १० २० ३८ ७१ १३० शून्यैक-द्वि-पञ्च-दश-विंशति-अष्टत्रिंशदेकसप्तति-त्रिंशदधिकैकशताङ्कविन्यस्ता बृत्सन्तु इति ॥ ८३ ॥

एवमङ्कविन्यासे कृते सति षष्ठी गुरुपंक्ति सिद्धयति ॥ ६ ॥

अथोर्वरितचतुर्थवर्णपंक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति—

एकीकृत्येति। विद्वान्-अङ्कमेलनकुशलो गणकः तथा पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चम षष्ठपंक्तिस्थितान् द्व्येकादीन् अङ्कान् प्रतिकोष्ठं एकीकृत्य-संयोज्य मात्राख्या-श्रीपिङ्गलनागोक्तमार्गेण चतुर्थपंक्तिवर्त्तिसमस्तकोष्ठकस्यां पूर्णां-अविचारितमेव पूर्णं कुर्यादिति। अत्रत्यप्रथमकोष्ठे असंयुक्तः पञ्चमकोष्ठस्थप्रथमाङ्कः एकस्तस्य लभ्यो देय इति रहस्यम् ॥ ८४ ॥

तथा चतुर्थपङ्क्तौ १ ३ ७ १५ ३० ५८ १०९, २०१ एक-त्रि-सप्त पञ्चदश त्रिंशद्-अष्टपञ्चाशत्-नवाधिकशतैकोत्तरद्विशताङ्का विन्यस्ता बृसन्त इति।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति चतुर्थी वर्णपंक्तिः सिद्धयतीति ॥ ४ ॥

एवं निरन्तरप्रकारेण पंक्तिषट्कं साधयित्वा मात्रामर्कटीफलमाह—

वृत्तमिति। वृत्त-वृत्तानि एकमात्रादिभिरवधिकमात्राजातय। एकवचनं [जात्यभिप्रायेण। प्रभेदजातीनां प्रभेदा इत्यर्थः। पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देशः।

मात्रा –तत्तज्जातिमात्रा , वर्णाः–तत्तज्जातिवर्णा तथा–त्तत इत्यर्थ. । लघुगुरू– तत्तज्जातिलघवस्तत्तज्जातिगुरवश्चेत्यर्थ । एते वृत्तादय षट्प्रकारा· पूर्णप्रस्तारस्य समुदिता षट्पक्तितो निश्चित विभान्ति–प्रकाशन्त इत्यर्थ ॥ ८५ ॥

ननु एतत्करण आवश्यकमनावश्यक वा ? इति परामर्श छान्दसिकपरीक्षारूपत्वात् केवल कौतुकमात्राधायकत्वाच्च अस्य करण अनावश्यकमेवेत्याह–

नष्टोद्दिष्टमिति । यथा नष्टोद्दिष्टादिकं कौतुकावह तथैव तद्विरचनमपीत्यर्थ इति सर्वमवदातम् ॥ ८६ ॥

मात्रामर्कटी यथा–

वृत्तम्	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
प्रभेदाः	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८९	१४४
मात्रा·	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	८९०	१५८४
वर्णा	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५		
लघव	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५		
गुरव	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०		

इति एकादशमात्रामर्कटी । एव अन्येऽपि मात्रामर्कटी समुन्नेया । तथैव मात्रामर्कटिकाख्य पचम प्रत्यय ।

[वृत्तिकृत्प्रशस्ति]

श्रीमत्पिङ्गलनागेन प्रोक्तो यो मर्कटीक्रमः ।
विविच्य स मया प्रोक्तः शिष्यानुग्रहहेतवे ॥ १ ॥
मुनीभभूपतिमिते १६८७ वैक्रमेऽब्दे प्रमाथिनि ।
कार्तिकेऽसितपञ्चम्यां लक्ष्मीनाथो व्यरीरचत् ॥ २ ॥
वार्त्तिके दुष्करोद्धारमुदारं शास्त्रसम्प्रियम् ।
पश्य सारं स्फुटार्थं च कवीनां कौतुकावहम् ॥ ३ ॥

इति श्रीमत्सकलजनवन्दितचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसरायभट्टात्मजसूरिकुल-
चूडामणि-साहित्यसर्वस्वकर्णधार-छन्दःशास्त्रपारावार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकमात्रादिविविधवृत्त-
मात्राप्रस्तारेषु सप्तकमात्रादिवर्णप्रस्तारोद्धारो
नामैकादशो विश्रामः ॥ ११ ॥

समाप्तश्चायं वृत्तमौक्तिकवार्त्तिके दुष्करोद्धारः ।

शुभमस्तु । श्रीनाथप्रभवाय नमः ।

संवत् १६८ समये भाद्रपदसुदि ३ भौमे शुभदिने धर्मपुरस्थाने लिखितं लालमणि-
मिश्रेण । शुभं भूयात् । श्रीविट्ठलाय नमः ।

महोपाध्यायश्रीमेघविजयगणिसन्दृब्ध

वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोधः

[उद्दिष्टादिप्रकरणव्याख्या]

[मङ्गलाचरणम्]

प्रणम्य फणिना नम्यं सम्यक् श्रीपार्श्वमीश्वरम् ।
उद्दिष्टादिषु सूत्रार्थं कुर्वे श्रीवृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥

अथ वृत्तमौक्तिके उद्दिष्ट नष्ट वर्णतो मात्रातो वा विव्रियते—

दत्वा पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयतः ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उद्धरितैश्च तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्टं विजानीयात् ।

षड्भिः पदैः सूत्र तद्व्याख्या—

केनापि नरेण लिखित्वा दत्त । ऽ । ऽ । इद कतमत् रूपम् ? इति प्रश्ने उद्दिष्ट ज्ञेयम् । तत्र पूर्वयुगलाङ्का प्रत्येक धार्या । पूर्वयुगलाङ्का इति सज्ञा अङ्कानाम् । तत्कथम् ? इति चेत्, मात्रोद्दिष्टे १।२।३।५।८।१३।२१।३४।५५।८६ इति । अत्र १ मध्ये २ योजने ३ । पुन ३ मध्ये पूर्वाङ्क २ मेलने ५ । पुन ५ मध्ये स्वपूर्वाङ्क ३ मेलने ८ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ५ मेलने १३ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ८ क्षेपणे २१ । तस्मिन्नपि स्वपूर्वाङ्क १३ एकीकरणे ३४ । तन्मध्ये स्वपूर्वाङ्क २१ क्षेपे ५५ । अत्रापि स्वपूर्वाङ्क ३४ योगे ८६ इत्येव योजनारीतिः । पूर्वं पूर्वमेलनाज्जातत्वात् पूर्वयुगाङ्का इति सज्ञाभाज । तद्धरणरीति —

१	२	५	८	२१
।	ऽ	।	ऽ	।
	३		१३	

एव लघोरुपरि एक अङ्कन्यास गस्य-गुरोस्तु उभयत -उपरि अधश्च पार्श्वद्वयेऽपि अङ्कधरणम् । एतत् कृत्वा अन्त्याङ्के २१ रूपे गुरोरुपरिस्था अङ्का २।८ मेलने १०, एते २१ मध्यात् विलुम्पयेत्-पराकुर्यात्, उद्धरितोऽङ्क ११ एव निश्चित ज्ञात सप्तमात्रे मात्राच्छन्दसि एकादश रूपमिदम् । ईदृश ।ऽ।ऽ। अन्यत्रापि ।

३ तृतीयम् । तुर्येऽपि १ ३ ८ प्राग्वत् ८ मध्यात् १ । ३ गुरुशीर्षस्थ ४
ऽ ऽ ।
२ ५
लोपे शेष ४ तुर्यं रूपम् । पञ्चमेऽपि १ २ ३ ८ इत्यत्र गुरुह
। । ऽ ।
५
३ लोपे अन्त्याङ्क ८ मध्ये शेषं ५ इति [पञ्चम रूपम्] । षष्ठे १ २
। ऽ
३
अन्त्याङ्क ८ मध्यत गुरुशिरःस्थ २ लोपे शेष ६ [इति षष्ठं रूपम्] । स
१ ३ ५ ८ तत्र अन्त्याक ८ मध्यात् गुरुशीर्षस्थ १ लोपे शेष ।
ऽ । । ।
२
सप्तम रूपम् ।

एव षट्कले मात्राच्छन्दसि १ ३ ८ अत्रान्त्याङ्कः १३ तत
ऽ ऽ ऽ
२ ५
स्थिताङ्क १।३।८ एषा लोपे शेष १ प्रथम

प्राग्वत् ३।८ एव ११ तेषा १३ मध्याल्लोपे शेषं २
१ २ ५ ८ अन्त्याङ्क १३ तत २।८ एव १० ...२
। ऽ । ऽ
३ १३

१ २ ५ १३ २१ ५५ अत्र गुरुशीर्षस्थाङ्क सर्वमेलने ८३
। ऽ ऽ । ऽ ऽ
३ ८ ३४ ८९
८९ मध्ये शेष ६ रूपमिद दशकले छन्दसि ।

पुव्व जुयल सरि अका दिज्जसु, गुरु सिर अक सेस मेटिज्जसु ।
उवरिल अक लेखि कहुआण, तें परि धुअ उद्दिट्ठा जाण ॥
[प्राकृतपैङ्गलम्, परि १, पद्य ३९]

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कं गुरुशीर्षाङ्कं विलुप्य शेषाङ्के ।
यच्छेषरितोऽवशिष्टे शिष्टैरुद्दिष्टमुद्दिष्टम् ॥

[वाणीभूषणम् परि० १ पद्य ३१]

मत्त मत्त युग अंक, लघु सिर गुरुतर हू धरो ।
ओर अंक सरवक, सब्बहि घाट उद्दिष्ट कहू ॥

लघो: शीर्षे एवाङ्क: कार्य: गुरो: शीर्षे तथा तर इति भाषाविशेषात् तले अधोऽपि अङ्क: कार्य: । यथा—पञ्चकले प्रस्तारे १ २ ५ समानत्वाङ्के ८

। ऽ ऽ

३ ८

ततः गुरुशीर्षस्थाङ्का: २ ५ .. ७ सप्तम रूपम् ।

१ २ ५ ८ २१ गुरु सिर अंकियामने १० ते २१ मध्ये ऋण शेषं ११

। ऽ । ऽ ।

३ ११

संख्या प्राप्ता इति एकादशमिदं रूपमिति छन्दोरत्नावलीग्रन्थे ।

१ २ ३ ५ ८ १३ २१ अथ प्रश्न:—सप्तकलप्रस्तारे एकादशं

। । । । । । । ११

। ऽ । ऽ ।

रूपं कीदृशम् ? इति तदा प्राप्तं ।ऽ।ऽ। इदम् ।

इति मात्रोद्दिष्टस्वरूपव्याख्या पूर्णा ।

मात्रानष्ट-प्रकरणम्

अथ मात्रानष्ट यथा—

> यत्कलकः प्रस्तारो लघवः कार्याश्च तावन्त ।
> दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्टाङ्क लोपयेदन्त्ये ॥ [॥ ५३ ॥]
> उद्वरितोद्वरितानामङ्कानां यत्र लभ्यते भागः ।
> परमात्राञ्च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ [॥ ५४ ॥]

अस्यार्थ —यावत्य कलाः प्रस्तारे एककलस्य एक एव लघु । ईदृश द्वि-कलस्य द्वे रूपे, आदौ एक एव गुरुः ऽ ईदृश., द्वितीयरूपे लघुद्वयम् ॥ ईदृशम् । अत्र पृच्छानवकाशात् न इष्टरूपलाभ, असम्भवात् । त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रीणि रूपाणि । चतु कले पञ्चरूपाणि १।२।३।५ इति पूर्वयुगाङ्कात् । पञ्चकले अष्ट-रूपाणि १।२।३।५।८ इति पूर्वयुग्माङ्कात् । षट्कले १३ रूपाणि तावत् एव पूर्व-युग्माङ्कात् । सप्तकले २१ रूपाणि तथैव ।

एव कलाप्रमाणा लघवो लेख्या, यथा—सप्तकले मात्राच्छन्दसि इष्ट एकादश रूप कीदृश ? इति, मुखेन केनचित् पृष्टम्, तदा सप्तैव लघव ।।।।।।। अनया रीत्या लेख्या । तेषामुपरि १।२।३।५।८।१३।२१ एते धार्या । अत्र पृष्टे इष्टाङ्क ११, तस्य २१ मध्याल्लोपे शेष १।२।३।५।८।१३।१० इति । तदा दश-मध्ये त्रयोदश न पतन्तीति भागाभाव, तदा ८ अङ्क १३ मध्ये पात्य, एव अष्टाद्य कलामाकृष्य त्रयोदशाद्यो गुरु स्थाप्य, दशाद्य एका कलाऽवशिष्टा, अष्टकस्य लोप परमात्राग्रहेण गुरुभावात् । अथ त्रिकस्य कला पञ्चके न गृह्यते, मुख्यैककस्य द्विकेन गृह्यते तदा ऽऽऽ। ईदृश नवमरूपतापत्ते । यद्वा त्रिकस्य कला पञ्चके न गृह्यते १।२ अनयो कलाद्वय लघुरूपमेव ध्रियते तदा दशम रूप ईदृश स्यात् ।।ऽऽ, तेन पञ्चकाऽध कला एका भिन्नैव रक्ष्या, अग्रे द्वितीयाङ्कस्य त्रिके कलाग्रहेण त्रिकाद्यो गुरु, मुख्यैककलाशेषात्, एव ।ऽ।ऽ। ईदृश एकादश रूप व्यवस्थितम् । द्विकाष्टकयोर्लोप 'उवरिल अकलोपके लेख' इति वचनात् । यदुक्त छन्दोरत्नावल्याम्—

> सव लघु सिर ध्रुव अक, प्रश्नहीन शेषाङ्क धरि ।
> पर लघु ले लिख वङ्क उवरि भाग जह जह परइ ॥

यद्वा, दशाना भागस्त्रयोदशे प्राप्यते 'दश एके दश' शेषं ३ विषमत्वात् परस्य-अन्यस्य त्रयोदशात् पूर्वस्य अष्टकस्य कलाग्रहेण त्रयोदशस्थानजातत्रिकाद्यो

ग व्यष्टकलोपः, तथाधो स पञ्चके त्रिकस्य भागे शेषं २ इति समत्वात् पञ्चाधो म ऽ। द्विकस्य त्रिके भागाप्तौ शेषं १ इति विषमाङ्कत्वात् गुरु द्विकस्य कलाग्रहात् द्विकलोपः, मुख्यैकाधो यथास्थितो लघुरेव, एवं । ऽ । ऽ । इत्येका दश व्यवस्थित सप्तकले।

अथ बालबोधाय इयमेव व्याख्या विस्तरतः —

प्रथम त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रिलघुकरण तस्य न्यासः १ २ ३ तदुपरि
। । ।

पूर्वयुगाङ्कदानम्। तत्र पृष्टं प्रथमरूपं त्रिकले कीदृग् ? इति, एवं इष्ट एकस्य तत् त्रिकात् अन्त्याङ्कात् पराङ्कतं-मुख्यमिति यावत् शेषं १। २। २ 'उद्धरितोद्धरितानां मङ्कानां यत्र लभ्यते भागः' इति वचनात् द्विकस्य द्विकेन भागे पर द्विकाधो ग पूर्वस्य द्विकस्य कलाग्रहात् तस्य लोपः शेषं । ऽ इति प्रथम रूपम्। पृष्टे द्वितीये, अन्त्यत्रिकात् २ लोपे शेषं १। २। १ अत्र अन्त्यैकस्य भाग लाभो द्विके तदधो ग मुख्यैककलाग्रहात् तस्य लोपः, अन्त्यैकाधो स ऽ। इति द्वितीय रूपम्। तृतीय सर्वलघुकमेव।

अथ चतुःकले १ २ ३ ४ अत्र पृष्टे १ लोपे शेष १। २। ३। ४
। । । ।

त्रिकस्य भाग चतुष्के प्राप्य तदधो ग त्रिकस्य कलाग्रहात् त्रिकलोपः, द्विकेपि मुख्यैकस्य भाग तेन द्विकाधो गः, एककस्य लोपः जातं ऽ ऽ प्रथमम्। पृष्टे २ लोपे शेषं १। २। ३। ३ त्रिके-त्रिकस्य भागे परत्रिकाधो ग पूर्वत्रिकलोपः कलाग्रहात् शेषे द्विके एकस्य भागाप्तौ कलाङ्कसाम्यादपि पूर्वरूपापत्तिः, तेन नैकस्यापि लोपः लघुद्वयं।। ऽ द्वितीयम्। पृष्टे ३ लोपे शेष १। २। ३। २ एवं द्विकस्य अन्त्यस्य भागस्त्रिके तदधो ग पूर्वद्विकस्य कलाग्रहाल्लोपः एवं । ऽ। तृतीयम्। पृष्टे ४ लोपे सर्वं १। २। ३। १ एकस्य भागोऽत्र त्रिके एवमन्त्यैकाधो ग त्रिकेऽपि शेषाभावादधो गः, 'त्रिम एकं ३ लघु १ तस्य भागः द्विके तदधो ग एकलोपः अत्र मुख्यैकस्य भागो द्विके तदधो ग कलापूर्ते त्रिके चान्त्यैकके च प्रत्येकं कला मुख्यैककलोपः, ऽ।। तुर्यम्। पञ्चमं लघुसकलरूपम्।

पञ्चकले १ २ ३ ५ ८ अत्र पृष्टे १ लोपशेष १ २ ३ ५, ७
। । । । ।

अत्र सप्तके पञ्चकस्य भागः, तेन सप्ताधो ग पञ्चकस्य लोपः, द्विकस्य त्रिके भाग तदधो ग द्विकलोप मुख्यैकाधः कला स्थितैव। ऽ ऽ प्रथमम्। पृष्टे २ लोपे शेषं १ २, ३ ५ ६ षट्के पञ्चकस्य भागे

प्रडधो ग, पञ्चकलोप, त्रिके-त्रिकलस्य द्वितीयरूपस्य गुर्वधिकत्वे तादृरूप्यात् द्विकस्य भाग पूर्वरूपे कृत तेनात्र द्विके एकस्य भागे द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप, त्रिकाध कला, द्वितीय ऽ । ऽ रूपम् । पृष्टे ३ लोपे शेष १, २, ३, ५, ५, पञ्चकेन पञ्चकस्य भागे परपञ्चकाधो ग., पूर्वपञ्चकलोप, शेष कलात्रयमङ्कत्रय चेति साम्यात् ५, ५ इति समभागाच्च प्रत्येक लघवस्त्रय, एव । । । ऽ तृतीयम् । पृष्टे ४ लोपे शेष १, २, ३, ५, ४, अत्र चतुष्के पञ्चकभागो न प्राप्य, पञ्चके चतु कस्य भागात् पञ्चकाधो ग, त्रिकस्य कलाग्रहाल्लोप, चतु काध. कला, एव कलात्रये सिद्धे शेषमङ्कद्वय कलाद्वय चेति साम्याल्लघुद्वय कार्यमिति न विचार्यं द्वाभ्या कलाभ्या गुरुसिद्धेर्गु रु स्थाप्य । पञ्चकलेऽष्टरूपात्मके तुर्यरूपे लघ्वन्ते गुरुद्वयेनापि कलापूर्त्ते इति एकस्य द्विके भागात् द्विकाधो ग', मुख्यैकलोपः, एव ऽ ऽ । तुर्यम् । पृष्टे ५ लोपे शेष १, २, ३, ५, ३, अत्र त्रिकस्यान्त्यस्य पञ्चके भागात् पञ्चकाधो ग, अन्त्यत्रिकाधो ल, पूर्वत्रिकलोप, अत्रापि समकलाङ्कत्वे गुरुरिति न कार्य पूर्वरूपापत्ते, अर्द्धोपरि लघूनामेव वृद्धे । तेन लघुद्वय । । ऽ। पञ्चमम् । पृष्टे ६ लोपे शेष १, २, ३, ५, २, अत्र पञ्चकस्य त्रिके भागो नेति द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप, पञ्चाधो ल, अन्त्यद्विकाधो ल, मुख्यैकाधोऽपि ल, तेन । ऽ । । षष्ठम् । पृष्टे ७ लोपे शेष १, २, ३, ५, १, अत्र पूर्वरूपे द्विकस्य त्रिके भागलाभात् त्रिकाधो ग, उक्त. सप्तमे पुना रूपे द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोपः त्रि-पञ्च अन्त्यैकानामध प्रत्येक लघुत्रय, ऽ । । । सप्तमम् । पर सर्वलमष्टमम् ।

षट्कले १, २, ३, ५, ८, १३, इह पृष्टे १ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, १२,
। । । । । ।

अत्र १२ मध्ये ८ भागे द्वादशाधो ग, अष्टकलोप, एव पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चकाधो ग, त्रिकलोप., द्विके मुख्यैकस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप सर्वत्रकलाग्रहात् ऽऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ११, अत्रापि ११ मध्येऽष्टभागात् तत्कलाग्रहे ११ अधो ग, ८ लोप', पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चाधो ग, त्रिकलोप', शेषाङ्ककलासाम्यात् । । ऽ ऽ द्वितीयम् । पुन. पृष्टे ३ लोपेऽन्त्यदशाधो ग, अष्टाना भागे तत्कलाग्रहात् त्रिकाधो ग, द्विकस्य कलाग्रहात् पञ्चाधो ल, मुख्यैकाधो ल, एव । ऽ । ऽ तृतीयम् । पुन पृष्टे ४ लोपे शेष ९, अन्ते तत्राप्यष्टकलाग्रहादधो ग, द्विके एकस्य भागात् कलाग्रहे द्विकाधो ग, त्रिकाधो ल,, परस्य अष्टकस्य लोपात् पञ्चाधो ल, भागासम्भवात्, एव ऽ । । ऽ चतुर्थम् । पृष्टे ५ तस्य १३ मध्यात् लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ८, पूर्वाष्टककलाग्रहात् पराष्टकाधो ग, पूर्वाष्टकलोप', शेषे कलाङ्कसाम्यात्

चतस्रः कला एव । अथाथ पञ्चके त्रिकभागात् द्विके एकस्य भागात् कलाग्रहणादि क्रियते तदा पूर्वरूपापत्तिः सा तु सर्वथापि निषिद्धा 'उवरिल ग्रंक लोपिकें लेख' इति वचनात् ।।।।ऽ पञ्चमम् । षष्ठे पृष्टे १३ मध्यात् ६ लोपे अन्ते ७ तदष्टानां भागो नाप्यः किन्तु सप्तानां भागोऽष्टके तेनाष्टाधो ग., सप्ताधो ल. पञ्चकस्य लोपोऽष्टकेन कलाग्रहात् द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो ग. द्विकलोप मुख्यैकाधो ल., एव ।ऽऽ। षष्ठम् । पृष्टे ७ तल्लोपेऽन्ते ६ तदधो ल., अष्टके षट्कस्य भागात् अष्टाधो ग. पञ्चके लोपात् द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग, एकस्य कलाग्रहात् एकस्य लोपः, त्रिकाधो लः एव ऽ।ऽ। सप्तमम् । पृष्टे ८ तल्लोपेऽन्ते ५ तदधो ल. पञ्चकस्य अष्टके कलाग्रहात् अष्टाधो ग., पञ्चकस्य अग्रस्थस्य भागसामाभाव शेषे कलाङ्कसाम्यात् अधः प्रत्येक लघवः ।।।ऽ। अष्टमम् । पृष्टे ९ लोपे शेषं १, २ ३ ५, ८ ४ चतुष्कस्य अष्टसु भागात् चतुष्काधो ल अष्टाधोऽपि ल पञ्चके त्रिकभागात् तत्कलाग्रहेण पञ्चाधो ग. त्रिकलोप द्विके एकस्य भागात् तत्कलाग्रहे द्विकाधो ग एकस्य लोपः एव ऽऽ।। नवमम् । *अत्र पञ्चकस्य कला माष्टके क्षेप्या पूर्वरूपापत्तेः गुरुणां स्यादभागसम्भारात्* पश्चिमभागे लघूनामाधिक्याच्च । पृष्टे १० लोपे शेषं १ २ ३ ५, ८ ३ तदा त्रिकस्यान्त्यस्य अधो लः अष्टाधोऽपि लः त्रिकस्य पञ्चके भागात् पञ्चाधो ग. त्रिकलोपः शेषं १।२ कलाङ्कसाम्याल्लघुद्वय ।।ऽ।। दशमम् । पृष्टे ११ लोपे प्राप्त २ तदधो ल द्विकस्य त्रिके भागात् कलाग्रहे त्रिकाधो ग., द्विकलोप शेषं १ ५ ८ एषु प्रत्येक लः एव ।ऽ।।। एकादशम् । पृष्टे द्वादशे १२ लोपे, शेष १ २ ३ ५, ८ १ अत्र द्विकेन मुख्यैकाधः कलाग्रहात् द्विकाधो गः मुख्यैक-लोपः शेष ३ ५ ८ १ एषामधो लघवः, एवं ऽ।।।। द्वादशम् । परं सर्वलघुकम् ।

सप्तकले १ २ ३ ५ ८ १३ २१ अत्र पृष्टे १ लोपे शेषं १ २ ३ ५,

। । । । । । ।

८ १३ २० अत्र विंशतौ १३ भागप्राप्तिः तेन विंशाधो ग., १३ लोपः, अष्टाधो गः पञ्चलोपः त्रिकाधो गः द्विकलोप मुख्यैककला स्थितैव एवं ।ऽऽऽ प्रथमम् । पृष्ट २ लोपे शेषं १९ तदधो ल. १३ लोपात् अष्टाधो ग. पञ्चलोपात् त्रिके द्विककलाग्रह प्रथमरूपे अत्र द्विके मुख्यैककलाग्रहात् द्विकाधो गः एकलोपः, त्रिके कला एव ।ऽऽ द्वितीयम् । पृष्टे ३ लोपे अन्ते १८ तदधो ल., १३ भागात् १३ लोपः अष्टाधो गः पञ्चककलाग्रहात् तल्लोपः शेषं समकलाङ्कत्वात् ३ लघवः ।।। ऽतृतीयम् । पृष्टे ४ लोपे शेषं १७ तदधो ल. १३ लोपः पञ्चाधो गः त्रिककलाग्रहात् अष्टाधो लः द्विकाधो गः मुख्यस्य कला स्थिता ऽऽ।ऽ तुर्यम् ।

पृष्टे पञ्चलोपे शेषमन्ते १६, तदधो ग., १३ कलाग्रहात् लोप, अष्टाधो ल., पञ्चकेऽधो ग, त्रिके कलाग्रहाल्लोप, शेषे समकलाङ्कत्वाल्लघुद्वय।।ऽ।ऽ पञ्चमम्। पृष्टे ६ तल्लोपे शेषमन्ते १५, तदधो ग., अष्टाधो ल, पञ्चाधो लः, त्रिकाधो ग., द्विकस्य कलाग्रहात् मुख्याध कला एव, एव।ऽ।।ऽ षष्ठम्। पृष्टे ७ तल्लोपेऽन्ते १४, तदधो ग, १३ न्यूनत्वात् लोप ८।५।३ अधो ल, द्विकाधो गः, मुख्यकलाग्रहात लोप ऽ।।।ऽ सप्तमम्। पृष्टे ८ लोपे शेषमन्ते १३, पूर्वं १३ अधो गः, समभागबलात् पूर्वं १३ लोप, एव कलाद्वय, शेषपञ्चाङ्काः पञ्चकला चेति साम्यात् पञ्च लघव एव।।।।।ऽ अष्टमम्। पृष्टे ९ लोपे शेषमन्ते १२, तेन भागः पूर्वं १३ मध्ये, यदुक्त **वाणीभूषणे**—

> नष्टे कृत्वा कला सर्वा पूर्वयुग्माङ्कयोजिता।
> पृष्ठाङ्कहीनशेषाङ्क येन येनैव लुप्यते॥
> परा कलामुपादाय तत्र तत्र गुरुर्भवेत्।
> मात्राया नष्टमेतत्तु फणिराजेन भाषितम्॥
>
> (वाणीभूषणम्, परि १, पद्य ३२-३३)

तेन १३ अधो ग., १२ अधो ल, अष्टकस्य लोपः कलाग्रहात् एव पञ्चाधो गः, त्रिकभागेन कलाग्रहात् द्विकाधो ग, मुख्यलोपात्, एव ऽऽऽ। नवमम्। पृष्टे सप्तकले छन्दसि दशम रूप कीदृग्? इति, तदा १ २ ३ ५ ८ १३ २१ एव
। । । । । । ।
कला कृत्वा पूर्वयुग्माङ्कयोजिता पृष्टाङ्क १०, ते २१ मध्यात् अपकृष्टा. शेष ११, तेषां १३ मध्ये भागात् तदधो ग, ११ अधो लः, अष्टकलोप, पञ्चाधो ग, त्रिककलाग्रहात्, शेष कलाङ्कयोः साम्याल्लघुद्वय।।ऽऽ। दशम रूपम्। पृष्टे ११ तस्य लोपे १०, तत १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग, अष्टलोप, त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो ग द्विकलोप, एव रूप।ऽ।ऽ। एकादशम्। पृष्टे १२ तल्लोपे शेष ९ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग, ९ अधो ल, अष्टलोप, द्विके मुख्यैकस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यलोप त्रिकपञ्चकयो अधो ल प्रत्येक, एव ऽ।।ऽ। द्वादशम्। पृष्टे १३ तल्लोपे शेष ८ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग, ८ अधो ल, पूर्वाष्टकलोप, शेष समाङ्ककलाभावात् १, २, ३, ५ एषामधो लघव प्रत्येक, ।।।।ऽ। त्रयोदशम्। पृष्टे १४ तस्य २१ मध्याल्लोपे शेष ७, तस्य १३ मध्ये भागे शेष ६ इति परात्-सप्तमात् न्यूनता इति हेतो १३ अधो ल, सप्ताधोऽपि ल, अष्टके पञ्चकभागात् अष्टाधो ग, पञ्चकलोप, त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप, मुख्यैकाध कला,।ऽऽ।। चतुर्दशम्। पृष्टे १५ लोपे

शेषं ६ तदधो ल, १३ अधोऽपि प्राग्सिद्धत्वात् ल एव अष्टके पञ्चकभागादष्टाधो ग पञ्चकलोपे द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग त्रिकाधो ल, एवं ऽ।ऽ।। पञ्चदशम् । पृष्टे १६ तल्लोपे शेषं ५ तस्य १३ मध्ये भागे शेषं ८ तदधो ल, पञ्चाधो ल, अष्टके पञ्चकभागात् अष्टाधो ग पूर्वपञ्चलोपे शेषे समकलाङ्कत्वात् अधोऽपि लघवः, ।।।ऽ।। षोडशम् । पृष्टे १७ तल्लोपे शेषं ४ तदधो ल तस्य १३ मध्ये भागे शेषं ९ अथ परोक्तः पूर्वस्याष्टकादधिक इति हेतो तस्याप्यधो ल पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चाधो ग, त्रिकलोपे द्विके मुख्यैकभागात् द्विकाधो ग मुख्यकलोपे ऽऽ।।। सप्तदशम् । पृष्टे १८ तल्लोपे शेषं ३ तदधो ल तस्य १३ मध्ये भागे शेषं १० तदधो ल, अष्टकादधिका १० इति अष्टकाधो ल, पञ्चके त्रिकभागात् पञ्चाधो ग, त्रिकलोपे शेषे समकलाङ्कत्वात् लघुद्वय ।।ऽ।।। अष्टादशम् । पृष्टे १९ तल्लोपे शेषं २ तस्य १३ मध्ये भागे शेषं ११ तस्य अष्टमध्ये भागाभावात् अष्टकस्य पञ्चके भागाभावात् सर्वत्र ५ ८ ११ २ एषु लघव द्विकस्य त्रिकेऽभावात् त्रिकाधो ग द्विकलोपे मुख्याधो ल। एवं ।ऽ।।।। एकोनविंशम् । अथ पृष्टे २० तस्य २१ मध्यात्लोपे शेषं १ तत्र १३ मध्यात् भागे शेषं १२ तस्य माष्टसु भाग अष्टानां न पञ्चके भाग, पञ्चकस्य न त्रिके इति सर्वत्र लघव पञ्चस्वङ्केषु द्विके मुख्यैकभागात् द्विकाधो ग एकस्य लोप एवं ऽ।।।।। विंशतितमं रूपम् । परत सर्वलघुकम् इति भाव्यम् । एवं सर्वत्र मात्राच्छन्दसि इष्टज्ञानम् ।

एककले—

।	१

द्विकले द्वे—

ऽ	१
। ।	२

त्रिकले त्रीणि—

। ऽ	१
ऽ ।	२
। । ।	३

चतुष्कले पञ्च—

ऽ ऽ	१
। । ऽ	२
। ऽ ।	३
ऽ । ।	४
। । । ।	५

पञ्चकले अष्ट—

। ऽ ऽ	१
ऽ । ऽ	२
। । । ऽ	३
ऽ ऽ ।	४
। । ऽ ।	५
। ऽ । ।	६
ऽ । । ।	७
। । । । ।	८

षट्कले अष्ट—

S S S १
I I S S २
I S I S ३
S I I S ४
I I I I S ५
I S S I ६
S I S ७
I I S I ८
S S I I ९
I I S I I १०
I S I I I ११
S I I I I १२
I I I I I I १३

षट्कल पूर्णम्।

सप्तकले एकविंशति—

I S S S १
S I S S २
I I I S S ३
S S I S ४
I I S I S
I S I I S
S I I I S
I I I I I S
S S S I
I I S S I
I S I S I
S I I S I
I I I I S I
I S S I I
S I S I I
S I I

IS I I I I १९
S I I I I I २०
I I I I I I I २१

सप्तकल पूर्णम्।

अष्टकले चतुस्त्रिंशत्—

S S S S १
I I S S S २
I S I S S ३
S I I S S ४
I I I I S S ५
I S S I S ६
S I S I S ७
I I I S I S ८
S S I I S ९
I I S I I S १०
I S I I I S ११
S I I I I S १२
I I I I I I S १३
I S S
१४
१५
१६
१७
१८
१९
२
२१
२

ऽऽ I I I I	१
II ऽ I I I I	११
Iऽ I I I I I	१२
ऽI I I I I I	१३
II I I I I I I	१४

षट्कलं पूर्णम् ।

नवकले पञ्चपञ्चाशत्—

I ऽ ऽ ऽ ऽ	१
ऽ I ऽ ऽ ऽ	२
II I ऽ ऽ ऽ	३
ऽ ऽ I ऽ ऽ	४
II ऽ I ऽ ऽ	५
Iऽ I I ऽ ऽ	६
ऽI I I ऽ ऽ	७
II I I I ऽ ऽ	८
ऽ ऽ ऽ I ऽ	९
II ऽ ऽ I ऽ	१
Iऽ I ऽ I ऽ	११
ऽI I ऽ I ऽ	१२
II I I ऽ I ऽ	१३
Iऽ ऽ I I ऽ	१४
ऽI ऽ I I ऽ	१५
II I ऽ I I ऽ	१६
ऽऽ I I I ऽ	१७
II ऽ I I I ऽ	१८
Iऽ I I I I ऽ	१९
ऽI I I I I ऽ	२
II I I I I I ऽ	२१
ऽ ऽ ऽ ऽ I	२२
II ऽ ऽ ऽ I	२३
Iऽ I ऽ ऽ I	२४
ऽI I ऽ ऽ I	२५
II I I ऽ ऽ I	२६
Iऽ ऽ I ऽ I	२७
ऽI ऽ I ऽ I	२८
II I ऽ I ऽ I	२९
ऽऽ I I ऽ I	३
II ऽ I I ऽ I	३१
Iऽ I I I ऽ I	३२
ऽI I I I ऽ I	३३
II I I I I ऽ I	३४
Iऽ ऽ ऽ I I	३५
ऽI ऽ ऽ I I	३६
II I ऽ ऽ I I	३७
ऽऽ I ऽ I I	३८
II ऽ I ऽ I I	३९
Iऽ I I ऽ I I	४
ऽI I I ऽ I I	४१
II I I I ऽ I I	४२
ऽऽ ऽ I I I	४३
II ऽ ऽ I I I	४४
Iऽ I ऽ I I I	४५
ऽI I ऽ I I I	४६
II I I ऽ I I I	४७
Iऽ ऽ I I I I	४८
ऽI ऽ I I I I	४९
II I ऽ I I I I	५
ऽऽ I I I I I	५१
II ऽ I I I I I	५२
Iऽ I I I I I I	५३
ऽI I I I I I I	५४
II I I I I I I I	५५

नवकलं पूर्णम् ।

दशकले नवाशीति—

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	१
II ऽ ऽ ऽ ऽ	२
Iऽ I ऽ ऽ ऽ	३
ऽI I ऽ ऽ ऽ	४

II I I S S S	५
IS S I S S	६
SI S I S S	७
II I S I S S	८
SS I I S S	९
II S I I S S	१०
IS I I I S S	११
SI I I I S S	१२
II I I I I S S	१३
IS S S I S	१४
SI S S I S	१५
II I S S I S	१६
SS I S I S	१७
II S I S I S	१८
IS I I S I S	१९
SI I I S I S	२०
II I I I S I S	२१
SS S I I S	२२
II S S I I S	२३
IS I S I I S	२४
SI I S I I S	२५
II I I S I I S	२६
IS S I I I S	२७
SI S I I I S	२८
II I S I I I S	२९
SS I I I I S	३०
II S I I I I S	३१
IS I I I I I S	३२
SI I I I I I S	३३
II I I I I I I S	३४
IS S S S I	३५
SI S S S I	३६
II I S S S I	३७
SS I S S I	३८
II S I S S I	३९
IS I I S S I	४०
SI I I S S I	४१
II I I I S S I	४२
SS S I S I	४३
II S S I S I	४४
IS I S I S I	४५
SI I S I S I	४६
II I I S I S I	४७
IS S I I S I	४८
SI S I I S I	४९
II I S I I S I	५०
SS I I I S I	५१
II S I I I S I	५२
IS I I I I S I	५३
SI I I I I S I	५४
II I I I I I S I	५५
SS S S I I	५६
I I S S S I I	५७
IS I S S I I	५८
SI I S S I I	५९
II I I S S I I	६०
IS S I S I I	६१
SI S I S I I	६२
II I S I S I I	६३
SS I I S I I	६४
II S I I S I I	६५
IS I I I S I I	६६
SI I I I S I I	६७
I I I I I I S I I	६८
IS S S I I I	६९
SI S S I I I	७०
II I S S I I I	७१
SS I S I I I	७२
II S I S I I I	७३
IS I I S I I I	७४
SI I I S I I I	७५
II I I I S I I I	७६

ऽ ऽ ऽ । । । ।	७७	। । । ऽ । । । । ।	८४
। । ऽ ऽ । । । ।	७८	ऽ ऽ । । । । । ।	८५
। ऽ । ऽ । । । ।	७९	। । ऽ । । । । । ।	८६
ऽ । । ऽ । । । ।	८०	। ऽ । । । । । । । ।	८७
। । । । ऽ । । । ।	८१	ऽ । । । । । । । ।	८८
। ऽ ऽ । । । । ।	८२	। । । । । । । । । ।	८९
ऽ । ऽ । । । । ।	८३	दशकलं सम्पूर्णम् ।	

इष्टाङ्केन विलोमेन पृष्टरूपमिहोच्यते ।
प्राचां वाचा नष्टमिहमनाकूल्यं न बोधितम् ॥ १ ॥

उपान्त्यतोऽन्त्येऽभ्यधिके लघो न
साम्येऽपि गो सत्तु ततोऽन्त्यहानौ ।
पश्चाद्गुरोर्लोपमनङ्ककस्य
क्रमाङ्कसाम्ये समयो निमेयाः ॥ २ ॥

शेषाङ्कपूर्वापरयोरथो गः
स्थाप्योऽत्र वृद्धस्य न एकशेषे ।
न पूर्वरूपं पुनरेव कार्यं
यो यत्र लुप्येदिति तद्विचार्यम् ॥ ३ ॥

पृष्टं पञ्चकले पञ्चमं १ २ ३ ५ ८ तथा पृष्टं पञ्चमं तस्य अन्त्येऽष्टके
। । । । ।
लोपे शेषमन्ते ३ तस्याद्यो लः, उपान्त्यात् हीनत्वात् शेषाङ्का १ २ ३ ५, अत्र त्रिकस्य पञ्चके भाग वृद्धत्वात् तदधो गः, पश्चात् त्रिकस्य लोपः, शेष १।२ क्रमाणां अङ्कानां च साम्यात् प्रत्येकं लघवः, इति । । ऽ । पञ्चमं रूपम् । अथात्र एकात् त्रिकस्य वृद्धत्वाच्च गुरुर्दीयते तदा तु पञ्चकले तुर्यरूपापत्तिः । अत्र हि प्रथमरूपत्रये त्रिकवत् न्यस्ते प्रान्त्यगुरुत्वम् । पञ्चकलत्वाच्छन्दस त्रिकस्य पूर्व पूर्णत्वात् अग्रे तदतिक्रमे चतुष्कल स्यात् पूर्वस्य द्वितीयरूपप्राप्तिस्तद्भंगश्च दोषश्च । अथ यो नरः पूर्वरूपं न जानाति तस्य का गतिः ? इति चेत् तेन पुरा विचार्यं यत् पञ्चकले सर्वरूपाण्यष्ट तर्हि त्रिरूपव्यतिक्रान्ते पूर्वविकल्पा न युक्ता । अस्य यावत् कलच्छन्दसः स्वपूर्वच्छन्दस ५१ परस्य यावत् रूपाणि दर्शं तावति रूपे अर्धं प्रान्त्यगुरुता च । यथा– अत्र पञ्चकले स्वपूर्वचतुष्कलात् पञ्चरूपात्मकात् रूपत्रयमधिकमिति त्रिरूपीं यावदर्धेऽन्त्यगुरुता च ।

पूर्वं-पूर्वंत्रिकलरूपतापि । तत्र गुर्वाधिक्य परार्द्धे लघूनामाधिक्य प्रान्तलघुता च । यथा, त्रिकलत चतु कले रूपद्वयाधिक्य तेन प्रथमरूपद्वये न गुरुत्व, शेषद्वये चान्तलघुत्व, पञ्चम तु चतुर्लम् । पञ्चकलेपि प्रथमत्रिरूपीत्रिकलस्य पश्चात् पञ्चरूपी चतु कलस्य तत्रापि प्रान्तलघुता । पञ्चसु रूपेष्वपि द्विकलाद् रूपद्वयं प्रान्तगुरुक तस्याप्यग्रे एक लघु । ततोऽपि रूपद्वय त्रिकलवत् प्रान्तलघुद्वय चतु-कलापेक्षया पञ्चम, पञ्चकलापेक्षयाऽष्टम सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलात् षट्कले पञ्चरूपाधिक्य, पञ्चापि रूपाणि चतु कलवत् प्रान्ते एकगुरोरधिकस्य दानात् कलापूर्ति, पञ्चमे रूपे एको गुरुरन्ते शेष लघुचतुष्टयम् ।

परतोऽष्टरूपाणि पञ्चकलवत् प्रान्ते एकलघुनाऽधिकानि । तत्राप्यष्टमे प्रान्ते एकगुरु शेष लघुपञ्चक, अष्टाष्वपि रूपत्रय त्रिकलवत् प्रान्ते गुरुलघुभ्यामधिक षट्सप्तमाष्टरूप, पर रूपपञ्चक चतु कलवत् प्रान्ते लघुद्वयाधिक इत्यादौ विचार एव बलवान् ।

एव पृष्टे पञ्चकले षष्ठरूपे तदा प्रान्त्याष्टमध्ये ६ लोपे शेष १, २, ३, ५, २, अन्त्यद्विकाधो ल, तस्य पञ्चके भागात् उपान्त्यादूनत्वाच्च पञ्चकेपि द्विकस्य भागे लब्ध २ शेष १ तेन पञ्चकाधोपि ल, त्रिकाधो ग, द्विकलोप, तुर्ये पञ्चमे च रूपे पञ्चकाधो ग, त्रिकलोप. । पञ्चकले हि त्रिकलवत् त्रिरूपी गुरुणान्तेऽधिका इद पृष्ट षष्ठ रूप इति विचारात् लब्धस्य द्विकस्य त्रिके भागाच्च, मुख्यैकाध कला । ऽ। । इति षष्ठ रूपम् । यथा उपान्त्ये-अन्त्यस्य भागे उपान्त्याधो ग, अन्त्याधो ल, उपान्त्यपूर्वस्य लोप, तथा द्विकस्य पञ्चके शेष १ तस्य त्रिके भागेपि सभवति त्रिकाधो ग, पञ्चकस्थानीयद्विकाधो ल, पूर्वद्विकलोप, मुख्याधो ल । इति रूपनिर्णय ।

पञ्चकले सप्तमेपि अन्त्याष्टके सप्तलोपे शेष १ तदधो ल शेषैकस्यापि पञ्चके भागे शेष पूर्णम् । अग्रे त्रिकस्य द्विके भागाभाव वृद्धत्वात्, मुख्यैकस्य द्विके भागात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप; त्रिकाधो ल, इति ऽ। । । सप्तमम् ।

यो यस्मात् पूर्वपूर्वोऽङ्कस्तावद्रूपेषु चान्त्यगः ।
तत्पर प्रान्त-लान्येव स्वत पूर्वाङ्कसख्यया ।। ४ ।।

एव सप्तकले पृष्टे एकादशे रूपे अन्त्याङ्के २१ मध्ये ११ पाते शेष १० तस्य उपान्त्याङ्के १३ मध्ये भाग प्राप्त, तत्र अष्टकस्य कलाग्रहात् १३ स्थानीयत्रिकाधो ग, अष्टकलोपः, दशाधो ल, द्विकस्य त्रिके भाग, तेन त्रिकाधो ग., द्विकलोपः, मुख्यैकाधो ल, पञ्चकाधो ल, एव । ऽ । ऽ । इत्येकादशरूपसिद्धि ।

ननु अत्र पञ्चके त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य भागात् पञ्चकाद्यो ग पूर्वत्रिक-लोपः, अग्रे १,२ अनयोरेव कलाद्वयमिति कथं न क्रियते ? इति चेत् न दशम-रूपापत्तेः । परस्य १० अङ्कस्य पूर्वस्मिन् १३ अङ्के भागाधिकारात् पूर्वत्रिके भागलेन सम्भवति तदाऽग्रे विधिर्युक्तः । यद्यपि त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य परस्य पूर्वस्मिन् पञ्चके भागसम्भवः परं मध्येष्टकलोपेन व्यवधानाभावे विधिर्घटते ।

यद्यपि सप्तकले दशमे रूपे प्रथमेव विधिर्दृश्यते तथापि सप्तकले पूर्वपूर्व पञ्चकल तस्याष्टरूपाणि प्रथमतोऽभितिक्रान्तानि शेष ९।१०।११ इति षट्कलस्य तृतीय रूपं प्रश्ने प्राप्तं, तच्च ।ऽ।ऽ इत्याभिति तत्कृतापत्तेरानीयमवाप्रस्तार ।

षट्कलेपि तादृग् रूपं चतुष्कले स्वपूर्वपूर्वे तृतीयरूपे ।ऽ। इदृशे प्राप्ते गुरु-दानात् सिद्धम् । चतुष्कलेपि द्विकलवत् रूपद्वये प्राप्ते गुरुणाधिकेप्यतीते त्रिकलस्य प्रथम रूप प्राप्तं चतुष्कलापेक्षया तृतीयं तत्राग्रे सर्वोरधिकारात् प्राप्ते ।ऽ। इदृशस्यैव सिद्धेः ।

स्वपूर्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे गोऽन्त्यः स्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे ।
लोऽन्त्यो विभिन्त्येति विशेषमेवं, छन्दोविदा पृष्टमिहेऽप्टरूपम् ॥

नट्ठ सव्व कला कारिज्जसु, पुव्व जुयल सरि अंका दिज्जसु ।
पुच्छिअस अक मेटावहु सेस उवरिअ अंक लोपि के सेस ॥
जत्थ जत्थ पाविज्जइ भाग एह कई फुर पिंगलनाग ।
परमत्ता लेइ गुरुताइ जत सेसेहु तत लेसेहु भाइ ॥

नष्टाङ्के कल्पयेत् भाग समभागे लघुर्भवेत् ।
तत्पक विषमे भागे कार्येस्तत्र गुरुर्भवेत् ॥

[वाणीभूषणम्, परि १ पद्य १४]

अथ झिलमिली [झाम्मली] प्रस्तार

गुरु पढम दिज्जु ठामं लहुया परि ठवहु अण्णकुद्देण ।
सरिसा सरिसा पंती उव्वरिया गुरु-लहू देहु ॥

इति मात्रानष्टं न्यास ।

वर्णोद्दिष्ट-नष्ट-प्रकरणम्

अथ वर्णोऽ[? द्दि]ष्टरूपज्ञानमाह—

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि लघुशिरःस्थितानङ्कान् ।
अङ्केन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्टं विजानीयात् [॥ ५५ ॥]

अस्यार्थं सोदाहरण । यथा, ।ऽ।ऽ इद चतुरक्षरे छन्दसि कतम रूपम् ? इति, उद्दिष्टे द्विगुणा अङ्का उपरि देया १ २ ४ ८ इति न्यासे लघूपरि १,४
। ऽ । ऽ
मेलने ५, तत्र सैककरणे षष्ठ रूप इत्युद्देश्यम् ।

उद्दिष्टे वर्णोपरि दत्त्वा द्विगुणक्रमेणाङ्कम् ।
एक लघुवर्णाङ्के दत्त्वोद्दिष्ट विजानीयात् ॥

[वाणीभूषणम्, परि० १. पद्य ३४]

इ[? न]ष्टज्ञानमपि आह—

नष्टे पृष्टे भागः कर्त्तव्य. पृष्टसख्यायाः ।
समभागे ल कुर्याद् विषमे दत्त्वैकमानयेद् गुरुकम् [॥ ५६ ॥]

यथा चतुरक्षरे छन्दसि षष्ठ रूप कीदृशम् ? इति पृष्टे षण्णा भागोऽर्द्धं त्रय एव समभागात् लघु प्राप्त, पुनस्त्रयाणामर्द्धकरणाभावात् सैककरणे ४, तदर्द्धं २ एव गुरु प्राप्त., द्वयस्यार्द्धं १ एव लघु प्राप्त, तस्याप्यर्द्धाऽसम्भवात् सैककरणे २ तदर्धे १ एव गुरुप्राप्ति । जात ।ऽ।ऽ एव इ(? न)ष्टरूपज्ञानम् ।

इति वर्णोद्दिष्टनष्टप्रकरणम् ।

वर्णमेरु-प्रकरणम्

वर्णमेरुमाह—

> कोष्ठामेकाधिकान् वर्णं कुर्यादाद्यन्तयो पुन ।
> एकाङ्कमुपरिस्थाङ्क द्वयैरन्यान् प्रपूरयेत् [॥ ५७ ॥]
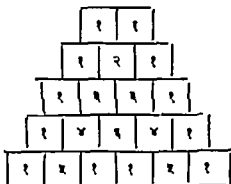
यस्य छन्दसो यावन्तो वर्णास्तावन्त कोष्ठा एकेनाधिका कर्तव्या । तत्रापि आद्यन्तकोष्ठद्वये एकाङ्कन्यासः, तत पुन उपरिस्थाङ्कयो कोष्ठयोर्मीलनेन विचाल-स्थकोष्ठपूरणं कार्यम् । यथा—द्विकवर्णच्छन्दसो द्वे रूपे—एकं गुरुकं १, एकं लघुकं च २ एवं कोष्ठद्वयम् । द्विवर्णच्छन्दसोपि चत्वारि रूपाणि—ऽऽ, ।ऽ, ऽ।, ।।, इति । एकं सर्वगुरुकं द्वे रूपे एकगुरुके, एकं सर्वलघुकं एवं उपरितनकोष्ठद्वयाङ्को १।१ तयोर्मेलने द्वाविति मध्यकोष्ठे द्विकन्यास । त्रिवर्णच्छन्दसोऽष्टरूपाणि—एकं सर्वगुरु ऽऽऽ, त्रीणि द्विगुरूणि २ ३ ५, त्रीणि एकगुरूणि ४ ६ ७ एकं सर्व लघु, मध्ये कोष्ठद्वये ३।३ न्यास उपरिस्थ १।२ मेलने जात । चतुर्वर्णच्छन्दसि षोडशरूपाणि—एकं सर्वगुरु आद्य चत्वारि एक गुरूणि ८ १२, १४, १५, षट् द्विगुरूणि ४ ६ ७, १० ११ १३ चत्वारि त्रिगुरूणि २ ३ ५, ९, एकं सर्वलघु, एवं षोडशरूपा । विचालकोष्ठत्रये १।३ मेलने ४ प्रथम-मध्य कोष्ठपूरणं उपरितन ३।३ मेलने ६ द्वितीयमध्यकोष्ठे तृतीयेपि १।३ मेलने ४ इति एवमग्रेपि ।

'वर्णमेरुरय' इत्यादि स्पष्टम् ।। ५८ ॥

इति वर्णमेरु ।

द्वयक्षरे छन्दसि ४ रूपाणि—एक सर्वगुरुरूप, द्वे रूपे एक गुरुके, एक सर्वलघु। त्र्यक्षरे छन्दसि ८ रूपाणि—१ सर्वगुरु, त्रीणि एकगुरूणि, त्रीणि द्विगुरूणि, एक सर्वलघु । चतुर्वर्णे छन्दसि १६ रूपाणि—४ एकगुरु, द्विगुरु ६, त्रिगुरु ४, एक सर्वगुरु, एक सर्वलघु । पञ्चवर्णे छन्दसि ३२ रूपाणि । षड्वर्णे ६४ रूपाणि । सप्ताक्षरे १२८ रूपाणि । अष्टाक्षरे २५६ रूपाणि । ९ वर्णे ५१२ रूपाणि । दशाक्षरे छन्दसि १०२४ रूपाणि।

इति वर्णमेरु-प्रकरणम् ।

वर्णपताका-प्रकरणम्

वर्णपताकामाह—

> वस्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कैर्योजयेत्परान् ।
> अङ्कः पूर्वं यो वै भृतस्ततः पङ्क्तिसञ्चारः ॥ [॥ ५९ ॥]
> अङ्का पूर्वं भृता येन तमङ्कं भरणे त्यजेत् ।
> अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत् ॥ [॥ ६० ॥]
> प्रस्तारसङ्ख्यया चरमाङ्कविस्तारकल्पना ।
> पताका सर्वगुर्वादिविशेषविवेकेन विशिष्यतु ॥ [॥ ६१ ॥]

पूर्वयुगाङ्का वर्णच्छन्दसि १।२।४।८।१६।३२।६४ इत्यादयः तदवर्णन्यासश्चैषम् ।

१	२	४
१	२	४
	३	

अथ तान् यथायोगं पूर्वाङ्कैर्योजयेत् तदा यथोऽयस्तमी अङ्कश्रेणिर्जायते । प्रथम एकवर्णच्छन्दसि रूपद्वयमेव तत्र २ पङ्क्तिस्थापना । द्विवर्णे मध्यस्था एका पङ्क्तिः । त्रिवर्णे मध्यस्थं पङ्क्तिद्वयं । चतुर्वर्णे मध्यस्थं पङ्क्तित्रयम् । पञ्चवर्णे मध्यस्थ पङ्क्तिचतुष्टयम् ।

आदौ एक वर्णे ऽ गुरु । लघुरन्येति रूपद्वयम् । द्विवर्णे १।२ इत्यनयोर्योजने ३ द्विकाय । अत्र पूर्वं अङ्कः भृतः ततः पङ्क्तिसञ्चारः, एकैव द्विकाधापङ्क्तिः परतः सिद्धोऽङ्कस्तस्य साधना नास्तीति । तत्र एकं रूपं सर्वग प्रथमं द्वे रूपे द्वितीय-तृतीयरूपे एकगुरुके तुर्यं सर्वलम् । एवं द्विवर्णच्छन्दसः चत्वार्येव रूपाणि भवन्ति ।

त्रिवर्णे छन्दसि १।२ योजने ३ द्विकाध, पुन २।४ मेलने ६ परतः सिद्धोऽङ्क, पुन २।३ योजने ५, पुन ४।३ योजने ७, पुनः ४।३ योगे ७ शेषाङ्काभावात् । एव एक रूप सर्वग, द्वितीय-तृतीय-पञ्चमानि रूपाणि एकेन गुरुणा ऊनानि त्रीणि रूपाणि द्विगुरूणि, ४, ६, ७ रूपाणि गुरुद्वयोनानि एक गुरूणि त्रीणि, एक अष्टम सर्वलघुकमिति अग्रेपि मन्तव्यम् ।

सुखेन अग्रेपि करणज्ञानाय विधि.–

१	२	४	८	१६
१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
		११		
		१३		

१।२ योजने ३, पुन ४।२ योजने ६, पुनः ८।४ योजने १२, द्वितीया कोश-श्रेणि, १६ त्याग सिद्धाङ्कत्वात् । अस्याः श्रेणेरप्यध २।३ योजने ५, पुन ४।३ योजने ७, पुनः ८।६ योजने १४ तृतीया श्रेणि । तस्या अध ४।५ योजने ९, पुन ४।६ योजने १०, पुन ८।७ योजने १५ तुर्याश्रेणि । ६।५ योजने ११, पुन ६।७ योजने १३, एव श्रेणिद्वय एककोशम् । एव एक रूप सर्वग प्रथमपङ्क्तौ । द्वितीयपङ्क्तौ २।३।५।९ चत्वारि रूपाणि एक गुरुणा ऊनानि त्रिगुरूणि । [तृतीयपङ्क्तौ] ४।६।७।१०।११।१३ इति षड्रूपाणि द्विगुरूणि । [चतुर्थपङ्क्तौ] ८।१२।१४।१५ एतानि एकगुरूणि । [पञ्चमपङ्क्तौ] षोडश सर्वलघु, एव षोडशरूपाणि ।

१	२	४	८	१६	३२

३	६	१२	२४
५	७	१४	२८
९	१	१५	३०
१७	११	२	३१

१३	२२
१८	२३
१९	२६
२१	२७
२५	२९

पञ्चवर्णे छन्दसि १।२ योजने ३ द्विकाघः, २।४ योजने ६ चतुष्काध, ८।४ योजने १२ अष्टाध १६।८ योजने २४ द्वितीयश्रेणि । ततश्च २।३ योजने ५, पुन ४।३ योजने ७ पुन ८।६ योजने १४ पुन १६।१२ योजने २८ तृतीय श्रेणि । ४।५ योजने ९ पुन ४।६ योजने १० पुन ८।७ योजने १५, पुन १६।१४ योगे ३० तुर्यश्रेणि । ८।९ योजने १७ ४।७ योजने ११ पुन ८।१२ योजने २० पुन १६।१५ योजने ३१ पञ्चमश्रेणि । ६।७ योजने १३ पुन ७।११ योजने १८ पुन ८।११ योजने १९ पुन १०।११ योजने २१, पुन १०।१५ योजने २५, पुन ८।१४ योजने २२ पुन ८।१५ योजने २३ पुन १२।१४ योजने २६ पुन १२।१५ योजने २७ पुन १४।१५ योजने २९ एवं पताकया सर्वगुर्वादिज्ञापनम् ।

एकं सर्वगुरुरूप । २।३।५।९।१७ पंचरूपाणि चतुर्गुरूणि । ४।६।७।१०।११। १३।१८।१९।२१।२५ एतानि त्रिगुरूणि । ८।१२।१४।१५।२०।२२।२३।२६।२७। २९ एतानि द्विगुरूणि । १६।२४।२८।३०।३१ एतानि एकगुरूणि । ३२ एकं सर्वलघुरूपम् ।

पूर्वाङ्कै उपरितनै पार्श्वस्थैर्वा पङ्क्त्यन्तरेष्युपरिस्थैरङ्काना योजना स्यात् १।२ इत्यादय, साम्ये योज्या २।३ इत्यादय, उपरितनैः ३।४ इत्यादय, पक्त्यन्तरस्थैर्योगो भाव्य । येन येन अङ्केन मीलितेन य अङ्क रूपस्य पताकाया भूतस्तमङ्क पुनर्जायमान न पूरयेत्, यावद्रूपं प्रस्तारस्तावद्रूपै कोषभरणमिति ज्ञेयम् ।

उद्दिट्ठा सरि अका दिज्जसु, पुव्व अक परभरण करिज्जसु ।
पाउल अक मढ परितिज्जसु, पत्थर सख पताका किज्जसु ॥

द्विवर्णपताका

१ २ ४

१	२	४
	३	

SS	(१)
IS	(२)
SI	(३)
II	(४)

द्विवर्णे एक सर्वगुरु, द्वे रूपे एकगुरुके द्वितीय-तृतीये, तुर्यं सर्वलघुकम् ।

त्रिवर्णपताका

१ २ ४ ८

१	२	४	८
	३	६	
	५	७	

SSS	(१)	SSI	(५)
ISS	(२)	ISI	(६)
SIS	(३)	SII	(७)
IIS	(४)	III	(८)

एक सर्वगुरु, द्विगुरु २।३।५, एकगुरु ४,६,७ रूपाणि, अष्टम सर्वलम् ।

चतुर्वर्णपताका

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१	१५	
		११		
		१३		

ऽऽऽऽ	(१)	ऽऽऽ।	(९)
।ऽऽऽ	(२)	।ऽऽ।	(१०)
ऽ।ऽऽ	(३)	ऽ।ऽ।	(११)
।।ऽऽ	(४)	।।ऽ।	(१२)
ऽऽ।ऽ	(५)	ऽऽ।।	(१३)
।ऽ।ऽ	(६)	।ऽ।।	(१४)
ऽ।।ऽ	(७)	ऽ।।।	(१५)
।।।ऽ	(८)	।।।।	(१६)

षोडशके प्रस्तारे एकं सर्वगुरुरूपम् २।३।५।९ एतानि त्रि-गुरूणि ४ ६ ७ १० ११ १३ एतानि द्विगुरूणि, ८।१२।१४।१५ एतानि एकगुरूणि १६ एकं सर्वलघुरूपम् ।

पञ्चवर्णपताका

१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१	१५	३	
	१७	११	२	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

पञ्चवर्णपताका

श्री	ग									
१	१									
५	२	३	५	९	१७					
१०	४	६	७	१०	११	१३	१८	१९	२१	२५
१०	८	१२	१४	१५	२०	२२	२३	२६	२७	२९
५	१६	२४	२८	३०	३१					
१	३२									
ऐ	धा									

एकद्वयोर्योगे ३, द्विचतुरोर्योगे ६, चतुरष्टयोर्योगे १२, अष्टषोडशयोगे २४। ऊर्ध्वाध २।३ योगे ५, चतुस्त्रियोगे वक्रत्वे ७, ८।६ योगे १४, १६।१२ योगे २८। १।३।५ योगे ९, ४।६ योगे १०, ८।७ योगे १५, १६।१४ योगे ३०।; ४।६।७ योगे १७, १।३।७ योगे ११, ८।१२ योगे २०, [११।२० योगे ३१; ६।७ योगे १३, ७।११ योगे १८, ९।१० योगे १९, १०।११ योगे २१,१०।१५ योगे २५।] ८।१४ योगे २२,१५।८ योगे २३,१२।१४ योगे २६, १५।१२ योगे २७, १५।१४ योगे २९।

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ (१)
। ऽ ऽ ऽ ऽ (२)
ऽ । ऽ ऽ ऽ (३)
। । ऽ ऽ ऽ (४)
ऽ ऽ । ऽ ऽ (५)
। ऽ । ऽ ऽ (६)
ऽ । । ऽ ऽ (७)
। । । ऽ ऽ (८)
ऽ ऽ ऽ । ऽ (९)
। ऽ ऽ । ऽ (१०)
ऽ । ऽ । ऽ (११)
। । ऽ । ऽ (१२)
ऽ ऽ । । ऽ (१३)
। ऽ । । ऽ (१४)
ऽ । । । ऽ (१५)
। । । । ऽ (१६)
ऽ ऽ ऽ ऽ । (१७)
। ऽ ऽ ऽ । (१८)
ऽ । ऽ ऽ । (१९)
। । ऽ ऽ । (२०)
ऽ ऽ । ऽ । (२१)
। ऽ । ऽ । (२२)
ऽ । । ऽ । (२३)
। । । ऽ । (२४)
ऽ ऽ ऽ । । (२५)
। ऽ ऽ । । (२६)
ऽ । ऽ । । (२७)
। । ऽ । । (२८)
ऽ ऽ । । । (२९)
। ऽ । । । (३०)
ऽ । । । । (३१)
। । । । । (३२)

इति वर्णपताका-प्रकरणम्।

मात्रामेरु-प्रकरणम्

अथ मात्राछन्दो मेरुमाह—

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पङ्क्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्कः पूर्वभागे तु ॥६२॥

एककलच्छन्दस ऊर्ध्वं अधिककोष्ठानां द्विकल त्रिकलादीनां द्वे द्वे समे पङ्क्ती कार्ये । कोऽर्थः ? द्विकल-त्रिकलयोः समे पङ्क्ती द्वयोरपि चतुःकोष्ठात्मिके कार्ये । एवं चतुःकलपञ्चकलयोः षट्कोष्ठात्मिके । त्रयोदशकल-एकविंशतिकलयोः अष्टकोष्ठात्मिके कृत्वा अन्त्यकोष्ठे एकाङ्क एव धार्यः । पूर्वभागे तु पुनः अयुग्पङ्क्तौ १ । ३ । ५ । ७ इत्यादिकायां प्रथमकोष्ठेषु सर्वत्र एककं स्थाप्यं समपङ्क्तौ २ । ४ । ६ । ८ इत्यादिकायां पूर्वभागे प्रथमकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्काः । इह मात्राच्छन्दसि १ । २ । ३ । ५ । ८ । १३ । २१ इत्याद्या योज्याः । एतत्तु दुर्बोधम् । सर्वपङ्क्तिषु आद्यौ पूर्वयुग्माङ्का देयाः । त्रिकलाद्यपेक्षया अयुग्पङ्क्तीनां द्वितीयकोष्ठे एककं समपङ्क्तीनां द्वितीयकोष्ठे २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ इत्यादयः स्थाप्याः यावत् पङ्क्तिः पूर्यते । आद्य एककलचतुःकोष्ठापेक्षया २ । ४ । ६ । ८ एतासु पङ्क्तिषु एककः इति ।

आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैरर्धभागस्थैः ।
उपरिस्थितेन कोष्ठं विषमायां पूरयेत् पङ्क्तौ ॥६३॥
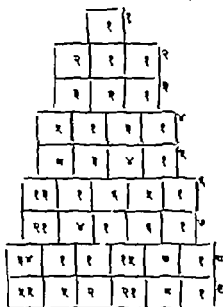
यथा द्वाभ्या एककाभ्या मेलने जात २ । अग्रे अन्तकोष्ठे एक • सिद्ध एव इति द्वितीया पक्ति । अस्या प्रथमकोशे त्रिकस्त विहाय कोशभरण एव तृतीय-पङ्क्तौ । विषयामा द्वितीयपङ्क्तिगतः द्विक तदुपरि वामस्थित एकः, एव १।२ मीलने जाता ३, मध्यकोशे, अन्तकोशे पुन एक सिद्ध एव । प्रथमकोशे तु 'एकाङ्कमयुग्पङ्क्ते ।' इति सूत्रणात् एकाङ्क स्थाप्य एव, तस्याप्यादौ पूर्व-युग्माङ्क पञ्चकः सकोशभरणेन ग्राह्य. । एव प्राप्त चतुकले पञ्चरूपाणि एक सर्वग, त्रीणि एकगुरूणि, एक अन्ते सर्वलघुरूपम् ।

एव पञ्चकलमेरुकोशेषु द्विकलेन समकोशत्वात् चतुकलस्य १।३ एतौ सयोज्य उपान्त्ये ४ अन्ते एक सिद्ध एव । ततः द्विकलपक्तिग द्विक त्रिकलपक्तिग एकञ्च सयोज्य त्रिक स्थाप्य, तस्याप्यग्रेऽष्टक पूर्वयुग्माङ्क । एव च त्रीणि रूपाणि द्विगुरूणि, चत्वारि एक गुरूणि । कानि कानि ? इत्याशङ्का पताकया निरस्या । अत्र मेरौ लग-त्रियावत् रूपसख्यैव ।

षट्कले तु चतुकलस्यैक, पञ्चकलस्य चतुक च सयोज्य उपान्त्ये पञ्चक, अन्त्ये तु एक. सिद्ध एव, चतुकलगतत्रिक तथा पञ्चकलगतत्रिक सयोज्य जाता ६ । ततोप्याद्यकोशे एकक षट्कलत्वात् आदौ सर्वगुरुकैकरूपज्ञानाय ततोप्यादौ १३ युग्माङ्क । एवञ्च एक रूप त्रिगुरुक, षट्रूपाणि द्विगुरुकाणि, पञ्चरूपाणि एकगुरुकाणि, एकमन्त्य सर्वलघुकम् । एव सर्वाणि १३ रूपाणि ।

सप्तकलके पञ्चकलस्य त्रिक, षट्कलस्यैक सयोज्य आदौ ४, तस्याप्यादौ २१ युग्माङ्क । चतुकात् परकोशे पञ्चकलगत चतुक षट्कलगत षट्क सयोज्य १०, तत पर पञ्चकलगत एक षट्कलगत पञ्चक सयोज्य षट्, ततोऽन्ते एक सिद्ध एव । एव च चत्वारि रूपाणि त्रिगुरूणि, दशरूपाणि द्विगुरूणि, षट्रूपाणि एकगुरूणि, एक सर्वलघु, एव २१ सर्वरूपाणि ।

अष्टकलके समपङ्क्तित्वात् एक सर्वगुरुरूप तदङ्क १, तस्यादौ ३४ युग्माङ्क, एकस्य कोशादग्रेतनकोशे षट्कलपक्तिगत षट्क, सप्तकलपक्तिगत चतुक सयोज्य १०, तदग्रे षट्कलगत पञ्चक सप्तकलगतदशक १० योगे १५ धरण, तदग्रे षट्कलगत एक सप्तकलगत षट्क सयोज्य ७, अन्ते चैक । एव च एक सर्वगुरु, दशरूपाणि त्रिगुरुकाणि, १५ रूपाणि द्विगुरूणि, सप्त एकगुरूणि, एक सर्वल, इति ३४ रूपाणि ।

एव नवकले उपरितनपक्तिगत ४।१ योगे ५, पुन १०।१० योगे २०, पुन ६।१५ योगे २१, पुन. १।७ योगे ८ इति ५५ रूपाणि । इति मात्रामेरु ।

माात्रामेरु-कर्त्तव्यता—

सिर अंके तसु सिर पर अंके उवरल कोट्ठ पुरहु तिस्सके ।
मत्तामेरु अंक सचारि बुज्झइ बुज्झइ अम दुइ चारि ॥
[प्राकृतपैङ्गलम् परि १ पद्य ४७]

दुई दुई कोठा सरि लिहहु पढम अंक तसु अंत ।
तसु माझिहि पुणु एक्कु सउ, पढमे बे वि मिलंत ॥

२ S	१	१							२
३ IS	२	१							३
४ SS	१	३	१						५
५ ISS	३	४	१						८
६ SSS	१	६	५	१					१३
७ ISSS	४	१	६	१					२१
८ SSSS	१	१	१५	७	१				३४
९ ISSSS	५	२	२१	८	१				५५
१० SSSSS	१	१५	३५	२८	९	१			८९
११ ISSSSS	६	३५	५६	३६	१०	१			१४४
१२ SSSSSS	१	२१	७	८४	४५	११	१		२३३
१३ ISSSSSS	७	५६	१२६	१२	५५	१२	१		३७७
१४ SSSSSSS	१	२८	१२६	२१	१६५	६६	१३	१	६१०
१५ ISSSSSSS	८	८४	२५२	३३	२२	७८	१४	१	९८७

अयुगपङ्क्तौ पूर्वभागे एकाङ्कं दद्यात् समकोष्ठकपङ्क्तिद्वयमध्ये प्रथम-पंक्तेः आदिमकोष्ठे द्वयमर्प्य । समकोष्ठकपङ्क्तिद्वयमध्ये द्वितीयपङ्क्तेराद्यकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्कं दद्यात् ।

एककलो लघुरेव । द्विकले २ रूपे–एक गुरु, एक लघु इति । त्रिकले त्रीणि रूपाणि–द्वे रूपे एक गुरुके, एक सर्वलघुरूपम् । चतु कले ५ रूपाणि–एकं सर्वगुरुक, त्रीणि एकगुरुणि, एक सर्वलघु । पञ्चकले ८ रूपाणि–रूपत्रय द्विगुरुक, रूपचतुष्टय एकगुरुक, एक सर्वलघु ।

अथ मात्रासूचीमेरुः

अक्खर मखे कोट्ठ करु, आइ अत पढमक ।
सिर दुइ अके अवर भरु, सूई मेरु णिस्सक ॥

[प्राकृतपैङ्गलम् परि १, पद्य ४४]

१. ।	०	१	१						
२ S	१गु	१ल	२						
३. । S	० ३	२गु	१ल	३					
४ S S	१ ५	३ गु	१ल	५					
५ ।SS	० ८	३ द्वि गु	४ गु१	१	८				
६. SSS	१ १३	६ द्विगु १३	५ गु१	१	१३				
७ ।SSS	० २१	४	१०	६	१	२१			
८ SSSS	१ ३४	१०	१५	७	१	३४			
९ ।SSSS	० ५५	५	२०	२१	८	१	५५		
१० SSSSS	१ ८९	२१	३५	२३	९	१	८९		
११. ।SSSSS	० १४४	६	३५	५६	३६	१०	१	१४४	
१२ SSSSSS	१ २३३	२१	७०	८४	४५	११	१	२३३	
१३ ।SSSSSS	० ३७७	७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१	३७७
१४ SSSSSSS	२८ ६१०	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	६१०	

मात्रासूचीमत्र सेमनागगदरसंवादे जानीयात् ३०००२७७० ।

एककलस्य एक रूप-सर्वलघु तदेव । द्विकलस्य द्वे रूपे-एक गुरु ऽ रूप द्वितीय सर्वलघुम् । त्रिकलस्य रूपाणि ३ द्वे एकगुरुके एकं त्रिलघुकम् । चतुष्कले-एकं सर्वगुरु त्रीणि द्विगुरूणि एकं सर्वलघु एवं ५ । पञ्चकले च त्रीणि द्विगुरूणि चत्वारि एकगुरूणि एकं सर्वलघु एवं ८ । षट्कले-एकं सर्वगुरुरूप षट् रूपाणि द्विगुरूणि पञ्चरूपाणि एकगुरूणि एकं सर्वलघु, एवं १३ । सप्तकले-चत्वारि त्रिगुरूणि दश द्विगुरूणि, षट् एकगुरूणि एकं सर्वलघु एवं सर्वाणि २१ । अष्टकले-एकं सर्वगुरु दश त्रिगुरूणि १५ द्विगुरूणि सप्त एकगुरूणि, एकं सर्वलघु, एवं सर्वाणि ३४ ।

१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१

अत्र १० एक दशा इति । तत पुनर्दशानां नवभिर्गुणने ९० तत्र द्वाभ्यां भागे ४५ तत ४५ अष्टगुणे ३६० तत्र ३ भागे लब्ध १२० तेषां सप्तगुणत्वे ८४० तत्र ४ भागे लब्ध २१० तेषां षड्गुणत्वे १२६० तत्र पञ्चभिर्भागे लब्ध २५२, तेषां पञ्चगुणत्वे १२६० लब्ध तत्र षड्भिर्भागे २१०, तेषां चतुर्गुणत्वे ८४० सप्तभिर्भागे लब्धं १२० तेषां त्रिगुणत्वे ३६०, तत्र ८ भाग लब्धं ४५ तेषां द्विगुणत्वे ९० तत्र ९ भाग लब्ध १० तत्राप्येकगुणने तदेव १० तत्र दशेन भागे लब्धं १। तत्र मेरङ्का सिद्धा १।१०।४५।१२०।२१०।२५२।२१०।१२०।४५।१०।१ इति ।[¤]

इति मात्रामेरु-प्रकरणम् ।

[illegible]

मात्रापताका-प्रकरणम्

अथ मात्रापताका—

दत्त्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्तेन लोपयेदन्त्ये ।
अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततोऽभवत् पङ्क्तिसञ्चार ॥६७॥

अत्र उद्दिष्टाङ्का. १।२।३।५।८ इत्यादय, प्रागुक्तास्तेषु द्विकापेक्षया वामस्थ एक तयोर्योगे ३ इति त्रिके पक्तित्याग., द्विकाधस्त्रिक तदध. ४, तदध ६, तदध. ७, तदध ९ । पुनः, उद्दिष्टाङ्क' ५ द्विकत्रिकयोर्योगे जात , तदध. ८ उद्दिष्टाङ्कस्तस्य पक्तित्याग । पञ्चकाध स्थितेः तदधोऽध १०।११।१२, पुन. पक्तौ १३, एव षट्कलस्य पताका । तस्या त्रिक-पचञ्कयो एकस्य चतु कस्य उद्दिष्टे लोपात्–अदर्शनात् त्रिषु गुरुषु प्रथमरूपस्थेषु एकस्यैव लोप । एतावता २।३।४।६।७।९ रूपाणि द्विगुरूणि, पञ्चकादनन्तर उद्दिष्टे ६।७ अङ्कयोर्लोपात् द्विगुरुलोपेन जातानि ५।८।१०।११।१२ रूपाणि एकगुरूणि इत्यर्थः, एक १३ सर्वलघुरूपम् । एव सर्वत्र पताका प्रागेव न्यासेन दर्शिता–उदाहृता दशमात्रिकस्य ८९ पूर्णरूपै ।

चतु कले न्यास.

१	२	५
	३	
	४	

पञ्चकलपताका

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

विषमकले पञ्चकलस्य अष्टरूपाणि । तत्र १।२।४ रूपाणि द्विगुरूणि, ५।३।६।७ रूपाणि त्रिकस्य एकस्य लोपात् एकगुरुलोपेन एकगुरुकाणि ।

चतुष्कले एकं सर्वगुरुकं २।३।४ रूपाणि एकलोपात् एकगुरूणि पञ्चमं सर्वलघु । इति पताकाकरणम् ।

समाङ्कमात्रायां विषमे तु लोपं प्राप्तोऽङ्कः परोद्दिष्टाङ्कान् स्थाप्य एकलोपे । सप्तकले तत एव मुक्तस्त्रिकः पञ्चकान् त्रिकान् परेपि पताका सप्तदशान्ता अष्टकषोडशवर्जा उद्दिष्टत्रिकान् ४।९ इत्यङ्कद्वयमेव त्रिगुरुक-एकलघुरूपज्ञापकम् । उद्दिष्टपञ्चकान् ३।६।७।१० इत्यादीनि रूपाणि द्विगुरुक-त्रिलघुरूपाणि । पुनः त्रयोदशोद्दिष्टाङ्कान् ८।१६।१८।१९।२० एकगुरु-पञ्चलघुरूपाणि । एकं २१ रूपं सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलेऽपि १।२।४ द्विगुरु-एकलघूनि, ५।३।६।७ एकगुरु-त्रिलघूनि, ८ सर्वलघु ।

मात्रापताका

उद्दिट्ठा सरि अंका थिप्पहु वामावत्ते परलइ लुप्पहु ।
एक लोपे एक गुरु जाणहु दुइ तिण्णि लोपे दुइ तिण्णि जाणहु ।
मत्तपताका णिगम गावइ जे पाइअ तापर हि मेलावइ ॥

[प्राकृतपैङ्गलम् परि. १ पद्य ४५]

चतुष्कले ५ भेद

१	२	५
	३	
	४	

द्वि-त्रि-चतुर्थानि एकगुरूणि

पञ्चकले ८ भेद

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

१।२।४ रूपत्रयं द्विगुरु

५।३।६।७ एकगुरु

अष्टमं सर्वलघु

षट्कले पताका

१	२	५	१३
	३	८	
	४	१०	
	६	११	
	७	१२	
	९		

षट्कले १ एक सर्वगुरु

२।३।४।६।७।९, द्विगुरूणि

पञ्चाष्टदशादीनि ५।८।१०।११।१२। एकगुरूणि

त्रयोदश सर्वलघु

सप्तकलपताका

१	२	५	१३	२१
	४	३	८	
	९	६	१६	
		७	१८	
		१०	१९	
		११	२०	
		१२		
		१४		
		१५		
		१७		

सप्तकले १।२।४।९ रूपाणि त्रिगुरूणि ।

५।३।६।७।१०।११।१२।१४।१५।१७, रूपाणि द्विगुरूणि ।

१३।८।१६।१८।१९।२० रूपाणि एकगुरूणि ।

२१ एक सर्वलघुरूपम् ।

१ २, ३ ५, ८ १३ २१, ३४ ५५ ८९

१	२	५	१३	३४	८९
	३	८	२१	५५	
	४	१	२३	६८	
	६	११	२६	७४	
	७	१२	३१	८१	
	९	१६	३२	८४	
	१४	१८	३३	८६	
	१५	१९	४२	८७	
	१७	२	४७	८८	
	२२	२१	५		
	३५	२४	५२		
	३६	२५	५३		
	३८	२७	५४		
	४१	२८	६		
	५६	३	६१		
		१७	६५		
		१९	६६		
		४	६७		
		४१	७१		
		४४	७३		
		४५	७४		
		४६	७५		
		४८	७८		
		४९	७९		
		६	८		
		५७	८२		
		५८	८३		
		५९	८६		
		६१			
		६२			
		६४			
		६६			
		७			
		७२			
		७७			

दशमात्रिकस्य पताका

उद्दिष्टवदङ्का देया । १।२।३।५।८। १३।२१।३४।५५।८९, अत्र १।२ मेलने ३ इति त्रिकस्य लोपोऽस्ति ३।५ मेलने ८ तस्य लोप । ८।१३ मेलने २१ तस्लोपः, २१।३४मेलनेऽ५५तस्लोप । ते लुप्ताङ्का द्वितीयपङ्क्तौ प्रथम पंक्तेरध स्थाप्या ।

२।३।४।६ इत्यादि चतुगु रूकाणि रूपाणि ।

५।८।१०।११।१२ इत्यादीनि त्रिगुरुकाणि रूपाणि ।

१३।२१।२६।२९ इत्यादीनि द्विगुरूणि ३४।५५।६८।७४ इत्यादि एकगुरूणि ८९ सर्वलघु ।

इति मात्रापताका-प्रकरणम् ।

गुरु लहु मत्ता जुयलं, वेय वेय ठाविज्जे गुरु-लहुय ।
तिय पिच्छे इम ठाविज्जइ, अद्ध गुरु अद्ध लहुयाइ ॥

वर्णमर्कटी

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८
मात्रा	३	१२	३६	९६	२४	५७६	१३४४
वर्ण	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६
लघु+	१	४	१२	३२	८	१९२	४४८
गुरु	१	४	१२	३२	८	१९२	४४८

+ अत्र लघुसंख्या वृत्तमौक्तिके षष्ठपंक्त्यनुक्ता युक्ता च ।

आदिपंक्तिस्थित एकः तेन द्वितीयपंक्तिगः द्विकः गुणितः जातः २, एवं तुर्यपंक्तिगः द्विकः स्थितः । आदिपङ्क्तिगद्विकेन तदधः ४ गुण्यते जातं ८ एवं त्रिकेन अष्टगुणने २४ चतुष्केण षोडशगुणने ६४, पञ्चकेन ३२ गुणने १६० षट्केन ६४ गुणने ३८४ सप्तकेन १२८ गुणने ८९६ जातं तुर्यपंक्तिभरणम् । तुर्यपंक्तिस्थाङ्कानां अर्धेन पञ्चमीं षष्ठीं च पंक्तिं पूरयेत् । तुर्यपंक्तिस्थं अङ्कं पञ्चमपंक्तिस्थाङ्केन योज्यते तदा तृतीयपंक्तिस्था अङ्का जायन्ते ।

इति वर्णमर्कटीकरणम् ।

मात्रामर्कटी-प्रकरणम्

अथ मात्रामर्कटीमाह—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पंक्तिषट्कं,
कुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः ।
तेषु द्व्यादीनादिपङ्क्तावथाङ्का-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं सर्वकोशेषु दद्यात् [।। ७६ ।।]

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पक्षपंक्तावथापि ।
पूर्वस्याङ्कैर्भावयित्वा ततस्ता,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपंक्तिस्थकोष्ठान् [।। ७७ ।।]

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९
भेदा	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५
मात्रा	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५
वर्णा	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५
लघव	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५
गुरव	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०

आद्याङ्कं एककं मुक्त्वा द्वितीयपङ्क्तौ द्व्यादीन्–द्व्यादिभिरेव भावयित्वा–गुणयित्वा, नेत्रशब्देन अत्र हरनेत्राणि त्रीणीति तृतीया पंक्तिं पूरयेत्, तदङ्का ४।९।२०।४०।७८।१४७।२७२।४९५ इय तृतीया पंक्ति ।

तुर्यां पंक्तिं विमुच्य पञ्चमी पंक्तिं वक्ति—प्रथमे द्वितीयमङ्कं, द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि दत्त्वा बाणद्विगुणं तद्द्विगुणं नेत्र (३) तुर्य (४) योः दद्यात् । द्विकस्य द्विकेन गुणकारकरणापेक्षया प्रथमकोश, द्विकाधस्तन वर्णाङ्कापेक्षया त्रिकाधस्तन कोश, तत्र द्विक ततोऽग्रे द्वितीयकोष्ठे पञ्चमाङ्कं दत्त्वा तत. नेत्र-(३) तुर्य (४) कोशयो. बाणा –पञ्च, तद्द्विगुण–दशक, पुन तद्द्विगुण–विंशति २० दद्यात् ।

गुरु लहु मात्रा जुत्तं, बेम बेम ठाविज्जे गुरु-लहुयं ।
तिस पिच्छे इम ठाविज्जइ, अद्ध गुरु अद्ध लहुयाइ ॥

वर्णमर्कटी

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८
मात्रा	३	१२	३६	९६	२४	५७६	१३४४
वर्ण	२	८	२४	६४	१६	३८४	८९६
लघु+	१	४	१२	३२	८	१९२	४४८
गुरु	१	४	१२	३२	८	१९२	४४८

+ मम लघुतस्था वृत्तमौक्तिके षष्ठपङ्क्तावुक्ता गुरुता च ।

आदिपङ्क्तिस्थित एकं तेन द्वितीयपंक्तिगः द्विकः गुणितः जातं २, एवं तुर्यपङ्क्तिगः द्विकः सिद्धः । आदिपंक्तिगद्विकेन तदधः ४ गुण्यते जातं ८, एवं त्रिकेण अष्टगुणने २४ चतुष्केण षोडशगुणने ६४ पञ्चकेन ३२ गुणने १६०, षट्केन ६४ गुणने ३८४ सप्तकेन १२८ गुणने ८९६ जातं तुर्यपंक्तिभरणम् । तुर्यपंक्तिस्थाङ्कानां अर्धेन पञ्चमी षष्ठी च पंक्तिं पूरयेत् । तुर्यपंक्तिस्थं अङ्कं पञ्चमपंक्तिस्थाङ्केन योज्यते तदा तृतीयपंक्तिस्था अङ्का जायन्ते ।

इति वर्णमर्कटीकरणम् ।

मात्रामर्कटी-प्रकरणम

अथ मात्रामर्कटीमाह—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पंक्तिषट्क,
फुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतो ।
तेपु द्व्यादीनादिपङ्क्तावथाङ्का-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्क सर्वकोशेपु दद्यात् [।। ७६ ।।]

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
त्यक्त्वाऽऽद्याङ्क पक्षपक्तावथापि ।
पूर्वस्याङ्कैर्भावयित्वा ततस्तां,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपंक्तिस्थकोष्ठान् [।। ७७ ।।]

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९
भेदा	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५
मात्रा	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५
वर्णा	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५
लघव	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५
गुरव.	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०

आद्याङ्क एकक मुक्त्वा द्वितीयपङ्क्तौ द्व्यादीन्–द्व्यादिभिरेव भावयित्वा–गुणयित्वा, नेत्रशब्देन अत्र हरनेत्राणि त्रीणीति तृतीया पंक्ति पूरयेत्, तदङ्का ४।९।२०।४०।७८।१४७।२७२।४९५ इय तृतीया पंक्ति ।

तुर्यां पंक्ति विमुच्य पञ्चमी पंक्ति वक्ति—प्रथमे द्वितीयमङ्क, द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि दत्त्वा बाणद्विगुण तद्द्विगुण नेत्र (३) तुर्य (४) यो: दद्यात् । द्विकस्य द्विकेन गुणकारकरणापेक्षया प्रथमकोश, द्विकाधस्तन वर्णाङ्कापेक्षया त्रिकाधस्तन कोश, तत्र द्विक ततोऽग्रे द्वितीयकोष्ठे पञ्चमाङ्क दत्त्वा तत. नेत्र-(३) तुर्य (४) कोशयो: बाणा–पञ्च, तद्द्विगुण–दशक, पुन तद्द्विगुण–विंशति २० दद्यात् ।

एकीकृत्येति । २।५।१०।२० एतान् अङ्कान् सम्मील्य जाते ३७ अङ्के एक मङ्कं दत्त्वा ३८ गुणकारापेक्षया पञ्चमपङ्क्तौ पञ्चम कोष्ठं पूर्णं कुर्यात् [॥७९॥]

त्यक्त्वा पञ्चममिति । २।१०।२०।३८ एव ७० एकं समापि दत्त्वा ७१ पञ्चमपङ्क्तौ षष्ठं कोष्ठं पूरयेत् [॥ ८० ॥]

कृत्वैक्यमिति । २।५।१०।२०।३८।७१ एषां ऐक्ये-मेलने जातं १४६ तम पञ्चदशाङ्कं १५ एक न हित्वा षोडशोनत्वे १३० पञ्चमपङ्क्तौ सप्तमकोष्ठं मुनि (७) प्रमितं पूरयेत् [॥८१॥]

एवमिति । स्पष्टार्थम् [॥८२॥]

एवमिति । अनया रीत्या पञ्चमपंक्ति पूरयित्वा प्रथमं गुणकारापेक्षया प्रथमकोष्ठे द्विकाधस्तने एकाङ्कं दत्त्वा पञ्चमपंक्तिस्थैरङ्कैः षष्ठी पंक्ति पूरयेत् [॥८३॥]

एकीकृत्येति । पञ्चमपंक्तिस्थरङ्कं षष्ठपंक्तिस्थाङ्कानां मीलनेन चतुर्थ पंक्ति पूर्णां कुर्यात् । यथा—१।२ योग ३ पुन ५।२ योगे ७ पुन ५।१० मीलने १५ पुन २०।१० मीलने ३० इत्यादि क्रमम् [॥८४॥]

अथ मात्रामर्कटी

छह छह कोठा पंती धार एकक कला लिखि लेहु विचार ।
बीए आइहि पढमा पंती दोसरि पुव्व जुअल मिलंती ॥
पढम बेवि गुणि अंका लिज्जसु छट्ठइ पंती तिहि भरि दिज्जसु ।
चौथी अंका पुव्व हि देख्खहु तीसरि सिर पर तहि करि लिखहु ॥
तीसरि धम छह मासे अंका वांचे पंचमि भरहु निसंका ।
पच इक्कहु ताहि समानहि चौथी लिपहु सिधामहु मानहि ॥

सोरठा

सिहि सामर परजन्त इहि विहि कइ पिंगल ठिमउ ।
धक भरण मह मत्त पढम भेय मवि मनि भरहु ॥

दोहा

वित्त भेय गुरु लघु सहित पत्थार कमा वहुन्न ।
णिग्गमक इम कहरि कहिम जिद्द गहर उवमंत ॥

मात्रामर्कटी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	वृ.
१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	भे.
०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	गु
१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	ल
१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५	व
१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	मा

१ एक तृतीयपक्तिस्थ, द्विक तुर्यपक्तिस्थ एकीकृत्य पञ्चमपक्तौ त्रिक। एव २।५ ऐक्ये ७, तथा ५।१० ऐक्ये १५, १०।२० ऐक्ये ३०, पुन ३८।२० ऐक्ये ५८, पुन. ३८।७१ ऐक्ये १०९, पुन. ७१।१३० ऐक्ये २०१, पुन तृतीयपक्तिस्थ १३० तत्र तुर्यपक्तिस्थ २३५ ऐक्ये ३६५; एव पञ्चमीपक्ति पूरणीया।

द्वयोर्द्विगुणत्वे ४, त्रिकस्य त्रिगुणत्वे ९, चतुष्कस्य पञ्चगुणत्वे २०, पञ्चाना अष्टगुणत्वे ४०, त्रयोदशाना षड्गुणत्वे ७८, सप्ताना २१ गुणे १४७, अष्टाना ३४ गुणे २७२, नवाना ५५ गुणने ४९५ इति षष्ठी पक्ति। प्रथमद्वितीय-पक्तिभ्या निष्पन्ना।

चतुर्थीपक्तिस्तृतीयपक्तिसमा पर पूर्णाध एक, तत २। ५।१०।२०।३८। ७१।१३०। अथ तृतीयपक्तिस्थ १३० तस्याध तुर्यपड्क्तौ २३५।

वृत्त प्रभेदो मात्रा च, वर्णा लघुगुरू तथा।
एते षट् पक्तित. पूर्ण—प्रस्तारस्य विभान्ति वै [॥ ८५ ॥]

अत एव लघूना वर्णाना सख्याङ्का: पञ्चम्या पड्क्तौ न्यस्ता। गुरव षष्ठ्याम्। वर्णमर्कट्या लघुन्यास षष्ठपक्तौ, गुरुन्यास पञ्चमपड्क्तौ वर्णेषु गुर्वादित्वात्। मात्रामर्कट्या लघुसख्या पञ्चम्या युक्ता लघ्वादित्वात्। तत्रापि अष्टमकोष्ठे २३५ भरण, अनुक्तमपि २।५।१०।२०।३८।७१।१३० एषा ऐक्ये २७६, तत्र ४० हीनकरण, न्यासे ५ अङ्कादुपरि तिर्यक् १५ ततोऽप्युपरि पड्क्तौ तिर्यक्कोशे ४० सद्भावात्। एव शेष २३६ ततोऽपि सप्तमकोशभरणवत् एकोनत्वे २३५ लघवो नवकलच्छन्दसि।

एकीकृत्येति । २।५।१०।२० एतान् अङ्कान् सम्मील्य जाते ३७ अङ्के एकं अङ्कं दत्त्वा ३८ गुणकारापेक्षया पञ्चमपङ्क्तौ पञ्चम कोष्ठं पूर्णं कुर्यात् [॥७९॥]

त्यक्त्वा पञ्चममिति । २।१०।२०।३८ एवं ७० एकं तत्रापि दत्त्वा ७१ पञ्चमपंक्तौ षष्ठ कोष्ठं पूरयेत् [॥ ८० ॥]

कृत्वैक्यमिति । २।५।१०।२०।३८।७१ एषां ऐक्ये-मेलने जातं १४६ तत्र पञ्चदशाङ्कं १५ एकं च हित्वा षोडशोनत्वे १३० पञ्चमपङ्क्तेः सप्तमकोष्ठं मुनि (७) प्रमितं पूरयेत् [॥८१॥]

एवमिति । स्पष्टार्थम् [॥८२॥]

एवमिति । अनया रीत्या पञ्चमपङ्क्तिं पूरयित्वा प्रथमं गुणकारापेक्षया प्रथमकोष्ठे द्विकायस्तने एकाङ्कं दत्त्वा पञ्चमपङ्क्तिस्थैरङ्कैः षष्ठीं पंक्तिं पूरयेद् [॥८३॥]

एकीकृत्येति । पञ्चमपंक्तिस्थैरङ्कैः षष्ठपंक्तिस्थाङ्कानां मीलनेन चतुर्थ पंक्तिं पूर्णां कुर्यात् । यथा—१।२ योगे ३ पुन ५।२ योगे ७ पुन ५।१० मीलने १५, पुन २०।१० मीलने ३० इत्यादि ज्ञेयम् [॥८४॥]

अथ मात्रामर्कटी

छह छह कोठा पंती पार एकक कमा सिरि लेहु विचार ।
बीए माइहि पढमा पंती दोसरि पुव्व जुयल सिम्मंती ॥
पढम सेसि गुणि अंका लिज्जसु, घडइ पंती तिहि भरि दिज्जसु ।
चौथी अंका पुव्व हि देय्यहु तीसरि सिर पर तहि करि लेखहु ॥
तीसरि सम छह भासे अंका बांचे पंचमि भरहु निसंका ।
पंच इकट्ठहु ताहि समानहि चौथी लिखहु लियामइ थानहि ॥

सोरठा

सिहि सामर परजन्त इहि विहि कइ पिगल ठियउ ।
अक भरण यह मत्त, पडम भेय भणि भणि भरहु ॥

दोहा

बिल भेय गुरु लघु सहित मक्कर कमा कहन्त ।
पिगलक इम बकरि कहिय, जिहु मदद उरजंत ॥

मात्रामर्कटी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	वृ.
१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	भे
०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	गु
१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	ल
१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५	व
१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	मा

१ एक तृतीयपक्तिस्थ, द्विक तुर्यपक्तिस्थ एकीकृत्य पञ्चमपक्तौ त्रिक । एव २।५ ऐक्ये ७, तथा ५।१० ऐक्ये १५, १०।२० ऐक्ये ३०, पुन ३८।२० ऐक्ये ५८, पुन ३८।७१ ऐक्ये १०९, पुन ७१।१३० ऐक्ये २०१, पुन तृतीयपक्तिस्य १३० तत्र तुर्यपक्तिस्थ २३५ ऐक्ये ३६५, एव पञ्चमीपक्ति पूरणीया ।

द्वयोर्द्विगुणत्वे ४, त्रिकस्य त्रिगुणत्वे ९, चतुष्कस्य पञ्चगुणत्वे २०, पञ्चाना अष्टगुणत्वे ४०, त्रयोदशाना षड्गुणत्वे ७८, सप्ताना २१ गुणे १४७, अष्टाना ३४ गुणे २७२, नवाना ५५ गुणने ४९५ इति षष्ठी पक्ति । प्रथमद्वितीय-पक्तिभ्या निष्पन्ना ।

चतुर्थीपक्तिस्तृतीयपक्तिसमा पर पूर्णाघ एक, तत २। ५।१०।२०।३८। ७१।१३०। अथ तृतीयपक्तिस्थ १३० तस्याध तुर्यपङ्क्तौ २३५ ।

वृत्त प्रभेदो मात्रा च, वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट् पक्तित· पूर्णा—प्रस्तारस्य विभान्ति वै [॥ ८५ ॥]

अत एव लघूना वर्णाना सख्याङ्का· पञ्चम्या पङ्क्तौ न्यस्ता । गुरव षष्ठ्याम् । वर्णमर्कट्या लघुन्यास षष्ठपक्तौ, गुरुन्यास पञ्चमपङ्क्तौ वर्णेषु गुर्वादित्वात् । मात्रामर्कट्या लघुसख्या पञ्चम्या युक्ता लघ्वादित्वात् । तत्रापि अष्टमकोष्ठे २३५ भरण, अनुक्तमपि २।५।१०।२०।३८।७१।१३० एषा ऐक्ये २७६, तत्र ४० हीनकरण, न्यासे ५ अङ्कादुपरि तिर्यक् १५ ततोप्युपरि पङ्क्तौ तिर्यक्कोशे ४० सद्भावात् । एव शेष २३६ ततोऽपि सप्तमकोशभरणवत् एकोनत्वे २३५ लघवो नवकलच्छन्दसि ।

अत्र उद्दिष्टादिवत् सर्वे प्रत्ययाः चतुर्विंशतिर्ज्ञेया। प्रस्तार १ नष्ट २ उद्दिष्ट ३ लगक्रिया ४, सङ्ख्या ५, अध्वा ६ मेरु ७ पताका ८ मर्कटी ९, समपाद १० अर्धसमपाद ११ विषमपादता १२। एते वर्णमात्राभ्यां चतुर्विंशतिः। कौतुकहेतु —

		वृत्तभेदाः			वृत्तभेदाः
१	[एकाक्षरे]	२	१४	[चतुर्दशाक्षरे]	१६ ३८४
२	[द्व्यक्षरे]	४	१५	[पञ्चदशाक्षरे]	३२ ७६८
३	[त्र्यक्षरे]	८	१६	[षोडशाक्षरे]	६५ ५३६
४	[चतुरक्षरे]	१६	१७	[सप्तदशाक्षरे]	१,३१ ०७२
५	[पञ्चाक्षरे]	३२	१८	[अष्टादशाक्षरे]	२ ६२ १४४
६	[षडक्षरे]	६४	१९	[एकोनविंशाक्षरे]	५ २४ २८८
७	[सप्ताक्षरे]	१२८	२०	[विंशाक्षरे]	१० ४८ ५७६
८	[अष्टाक्षरे]	२५६	२१	[एकविंशाक्षरे]	२० ९७,१५२
९	[नवाक्षरे]	५१२	२२	[द्वाविंशाक्षरे]	४१ ९४ ३०४
१	[दशाक्षरे]	१ ०२४	२३	[त्रयोविंशाक्षरे]	८३ ८८ ६०८
११	[एकादशाक्षरे]	२ ०४८	२४	[चतुर्विंशाक्षरे]	१ ६७,७७ २१६
१२	[द्वादशाक्षरे]	४,०९६	२५	[पञ्चविंशाक्षरे]	३ ३५,५४ ४३२
१३	[त्रयोदशाक्षरे]	८ १९२	२६	[षड्विंशाक्षरे]	६ ७१ ०८ ८६४

[वृत्तिकृत्प्रशस्तिः]

कोटचस्त्रयोदश-द्वाचत्वारिंशल्लक्षका नगा. ।
भू सहस्राणि पड्विंशत्यग्रा सप्तशती पुन ॥ १ ॥

प्रस्तारपिण्डसख्येय विवृता वृत्तमौक्तिके ।
बोधनात् साधनाल्लभ्या येपा नालस्यवश्यता ॥२॥

उद्दिष्टादिषु वृत्तमौक्तिकमिति व्याख्यातवान् श्वेतसिक्,
श्रीमेघाद्विजयाख्यवाचकवरः प्रौढ्या तपाम्नायिक. ।
यत्सम्यग्विवृत्त न वाऽनवगमान्मिथ्यावृत सज्जनै-
स्तत्सशोध्य शुभ विधेयमिति मे विज्ञप्तिमुक्तालता ॥३॥

समित्यर्षाश्वभू १७५५ वर्षे, प्रौढिरेषाऽभवच्छ्रिये ।
भान्वादिविजयाध्यायहेतुत सिद्धिमाश्रिता ॥ ४ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध

श्रीरस्तु । वाचकपाठकानाम् ।

३ डगण ४ मात्रा ५ भेद—

१ ऽऽ (गुरुयुग्म)[1] कर्ण सुरतलता गुरुयुगल कर्णसमान रसिक रसलग्न, सुमतिसमन्वित मनोहर[2] मदनहित[3]

२ ।।ऽ (गुर्वन्त) करतल कर[4] पाणि कमल हस्त प्रहरण भुजदण्ड, बाहु रत्न शस्त्र पद्मासरण, भुजाभरण

३ ।ऽ। (गुरुमध्य) पयोधर[5] भूपति[6] नायक गजपति नरेन्द्र कुच वाचक स्तन, गोपाल रज्जु पवन

४ ऽ।। (आदिगुरु) पदचरण वसु पितामह तात पद-पर्याय दहन बलभद्र मञ्जुनूपुर रति[7]

५. ।।।। (सर्वलघु) विप्र द्विज जाति शिखर पंचसर, काम द्विजवर

तथा गज रथ[8] तुरंगम और पदाति ये सब चतुष्कल के वाचक हैं।

---

१ चतुर्मात्रिक ऽऽ के और ।।।। के पर्याय वाणीभूषण में प्राप्त नहीं है।

२ मनोहर के स्थान पर प्राकृतपैंगल में 'मनहरण' है।

३ प्राकृतपैंगल में ऽऽ चतुर्मात्रिक में सुवर्ण अधिक है।

४ 'करपल्लव' को भी ।।ऽ चतुर्मात्रिक वृत्तजातिसमुच्चयकार ने माना है। वाग्वल्लभकार ने पदाकृति भी स्वीकार किया है।

५ वृत्तजातिसमुच्चय में पयोधर के वाची स्तन स्तनभार भी स्वीकृत हैं जब कि स्तनादि का प्रयोग वृत्तमौक्तिककार ने कुचवाची शब्दों में किया है। वाग्वल्लभ में पयोभृत् पयोद जलद जलधर वारिद भी स्वीकृत है।

६ भूपति के पर्यायों में वृत्तजातिसमुच्चय में नराधिप पार्थिव भूमिनाथ राजन् और सामन्त भी स्वीकृत है। प्राकृतपैंगल में नरपति जनपदनायक अधिक है। वाणीभूषण में मनुजपति अधिक है। प्रा पै और वाणीभूषण में गजपति और चक्रवर्ती अधिक है जब कि प्रा पै वृत्तजातिसमुच्चय और वाणीभूषण द्वारा समर्थित वसुधाधिप अधिक है। वाग्वल्लभ में मनुजपति जनाधीश तुरगपति और अर्थ अधिक हैं।

७ प्राकृतपैंगल में चतुर्मात्रिक ऽ।। में नूपुर भी स्वीकृत है जब कि प्राकृतपैंगल वृत्तमौक्तिकादि में द्विमात्रिक ऽ में स्वीकृत एवं प्रयुक्त है। वाग्वल्लभ में दहन बलभद्र मञ्जुनूपुर और रति धाम है एवं पिता हलायुध और पावक अधिक है।

८. वृत्तजातिसमुच्चय में चतुष्कलवाची गजादि के निम्नशब्द स्वीकृत हैं—करि, कुञ्जर गज मातङ्ग वारण वारणेन्द्र हस्तिन् तुरग हरि, योध स्यन्दन। जब कि वृत्तमौक्तिककार ने गजातिरिक्त कुञ्जर पर्यायों को ।ऽऽ पंचमात्रिक स्वीकार किया है।

४ ढगण ३. मात्रा भेद, ३—

१. । ऽ ध्वज[1], चिह्न, चिर, चिरालय, तोमर, पत्र, चूतमाला[2], रस, वास, पवन, वलय, तुम्बुरु,

२. ऽ । करताल, पटह[3], ताल, सुरपति आनन्द, तूर्य निर्वाण, सागर[4]

३. । । । भाव[5], रस, ताण्डव और भामिनी के पर्यायवाची शब्द

५. णगण २ मात्रा, भेद २—

१. ऽ नूपुर, रसना, चामर, फणि, मुग्धाभरण, कनक, कुण्डल, वक्र, मानस, वलय, कंकण, हारावली, ताटंक, हार, केयूर[6]

२. । । सुप्रिय, परम[7]

एक लघु के नाम निम्न प्रकार हैं—

शर, मेरु, दण्ड, कनक, शब्द, रूप, रस, गन्ध, काहल, पुष्प, शंख, तथा बाण[8]।

---

१ वृत्तजातिसमुच्चय मे । ऽ त्रिकलवाची निम्न शब्द और अधिक है—कदलिका, ध्वजपट, ध्वजपताका, ध्वजाग्र, पताका, वैजयन्ती । वाग्वल्लभ मे पटच्छदन अधिक है।

२ वाणीभूषण मे चूतमाला के स्थान पर चूडमाला है। वाग्वल्लभ मे चूतभवा, स्रक्, आम्रमाला है।

३. वृत्तमौक्तिककार ने तूर्य और पटह को ऽ । त्रिकलवाची माना है, जब कि वृत्तजातिसमुच्चयकार ने तूर्य और पटह को । । । त्रिकलवाची माना है।

४ प्राकृतपैंगल मे 'छन्द' ऽ । त्रिकलवाची अधिक है। वाग्वल्लभकार ने सखा, अय, आय· अधिक स्वीकार किये है और सुरपति के स्थान पर स्व·पति तथा आनन्द के स्थान पर नन्द पर्याय स्वीकार किये है।

५ वृत्तमौक्तिक मे भाव और रस । । । त्रिकलवाची स्वीकृत है, और रस । एककलवाची भी। जब कि वृत्तजातिसमुच्चय मे । । भाव और रस । । द्विमात्रिक स्वीकृत है। वाग्वल्लभ में । । । मे कुलभाविनी भी स्वीकृत है।

६. वृत्तजातिसमुच्चय मे ऽ द्विमात्रिक मे निम्न शब्द भी स्वीकृत है—कटक, पद्मराग, भूषण, मणि, मरकत, मुक्ता, मौक्तिक, रत्न, विभूषण, हारलता। वाणीभूषण मे 'मञ्जरी' भी स्वीकृत है। वाग्वल्लभ मे अङ्गद, मञ्जीर, कटक भी स्वीकृत हैं।

७ प्राकृतपैंगल मे सुप्रिय, परम के स्थान पर निजप्रिय, परमप्रिय है।

८ लघुवाचक । शब्दों मे प्राकृतपैंगल मे 'लता' और वाणीभूषण एव वाग्वल्लभ में स्पर्श भी स्वीकृत है।

इस पद्धति से मगणादि ८ गणों के पर्याय निम्नलिखित होते हैं—

१ मगण – हर

२ यगण – इन्द्रासन, सुनरेन्द्र अधिप कुञ्जरपर्याय रत्न मेघ ऐरावत, तारापति।

३ रगण – सूर्य वीणा विराट् मृगेन्द्र अमृत विहग यक्ष-पर्याय कोकिल, मत्त सुर्भगम।

४ सगण – करतल कर, पाणि कमल हस्त, प्रहरण भुजदण्ड बाहु रत्न वज्र गजाभरण, भुजाभरण

५. तगण – हीर।

६. जगण – पयोधर, भूपति, नायक गजपति नरेन्द्र कुच वाचक शब्द, गोपाल रसु, पवन।

७ भगण – वसुचरण पवन पितामह, तात पद-पर्याय पक्ष बलभद्र चंचा-पुपल रति।

८. नगण – भाव रस ताण्डव और भामिनी के पर्यायवाची शब्द।

द्वितीय परिशिष्ट

(क) मात्रिक-छन्दों का अकारानुक्रम

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
अ	
अजय*	२३
अतिफुल्लनम् (टि.)	३३
अन्ध*	२१
अनुहरिगीतम् (टि)	४०
अरिल्ला	२७
अहिवर*	१४
आ	
आभीर	३६
इ	
इन्दु (रोला)*	१७
इन्दु (षट्पद)*	२३
उ	
उत्तेजा*	२१
उद्गलितकम्	५५
उद्गाथा	११
उद्दम्भ*	२१
उन्दुर*	१४
उपफुल्लणम् (टि.)	३३
उल्लालम्	२०
ऋ	
ऋद्धि*	९
क	
कच्छप*	१४
कण्ठ*	२१

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
कनकम्*	२३
कमलाकर*	२३
कमलम् (रोला)*	१७
,, (षट्पद)*	२३
कम्पिनी*	१६
करतल*	१७
करतलम्*	२३
करभ*	१४
करभी (रड्डा)	२९
कर्ण*	२३
कलरुद्राणी*	१६
कलश*	१२
कान्ति*	९
कामकला	३७
काली*	१६
काव्यम्	१९
कीर्ति*	९
कुञ्जर*	२३
कुण्डलिका	३१
कुन्द (रोला)*	१७
कुन्द (षट्पद)*	२३
कुम्भ*	१२
कुररी*	९
कुसुमाकर*	२४
कूर्म*	२३

* चिह्नित छन्द गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षटपद के भेद है।
(टि)—टिप्पणी मे उद्धृत छन्द।

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
कृष्णः□	२१
कोकिल (रोला)□	१७
,, (षट्पद)□	२१
क्षमा□	६
क्षीरम्□	११
ख	
खञ्जा	१४
खरः□	२१
ग	
गगनम् (स्कन्धक)□	१२
(षट्पद)□	२४
गगनाङ्गणम्	१२
गन्धः□	२१
गणेशः□	१७
गन्धानकम्	१७
गम्भीरा□	१६
गरुडः□	२१
गलितकम्	५
गाथा	६
गाहिनी	११
,, (वि.)	१
गाहू	११
ग्रीष्मः□	२१
गौरी□	६
घ	
घत्ता	१६
घत्तानन्दः	१६
घनाक्षरम्	४६
च	
चक्री□	६
चन्दनम्□	२१
चमरः□	१७
चलः□	१४

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
चारुसेना (रड्डा)	१
चूर्णी□	६
चुलियाला	१५
चौबोला	२८
चौपैया	१८
छ	
छाया□	६
ज	
जङ्गमः□	२१
जनहरणम्	४४
झ	
झुल्लणा (वि.)	११
झुल्लणा	१२
त	
तालङ्किनी (रड्डा)	१
ताटङ्कः (स्कन्धक)□	१२
ताटङ्कः (रोला)□	१७
,, (काव्य)□	२१
,, (षट्पद)□	२१
ताटङ्का□	१६
तुरगः□	२१
तिलका□	१४
त्रिभङ्गी	४२
द	
दण्डः□	२१
दण्डकला	१७
दम्भः□	२१
दर्पः□	२१
दाता□	२१
दिव्यतः□	२१
दीपः□	२४
दीपकम्	१८
दुर्मिलका	४२
दृप्तः□	२१

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
देही	९
दोहा	१४
द्युतिष्टम्	२३
द्विपदी	३२
ध	
धवल	२३
धात्री	९
ध्रुव	२३
न	
नगरम्	१२
नन्द	१२
नन्दा (रड्डा)	२९
नर (दोहा)	१४
,, (स्कन्धक)	१२
,, (षट्पद)	२४
नवरङ्ग	२४
नील	१२
प	
पज्झटिका	२७
पद्मावती	३१
पयोधर. (दोहा)	१४
,, (षट्पद)	२३
परिधर्म	२१
परिवृत्ताहीरकम् (टि.)	४४
पादाकुलकम्	२७
प्लवङ्गमः	३९
प्रतिपक्ष	२१
ब	
बन्ध	२१
बलभद्र.	२१
बलि	२३
बली	२१
बाल	२१

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
बिडाल	१४
बुद्धि. (गाथा)	९
,, (षट्पद)	२३
बृहन्नर.	२३
ब्रह्मा	१२
भ	
भद्र	१२
भद्रा (रड्डा)	३०
भूपाल	१२
भूषणगलितकम्	५१
भृङ्ग	२१
भ्रमर (दोहा)	१४
,, (काव्य)	२१
,, (षट्पद)	२४
भ्रामरः	१४
म	
मण्डूक	१४
मत्स्य (दोहा)	१४
,, (षट्पद)	२३
मद	२३
मदकर	२३
मदकल. (स्कन्धक)	१२
,, (दोहा)	१४
मदनः (स्कन्धक)	१२
, (काव्य)	२१
,, (षट्पद)	२३
मदनगृहम्	४५
मदिरा सवया	४७
मधुभार	३६
मन्त्रहरिगीतम् (टि)	४०
मन्थान	२१
मनोहर	२४
मनोहरहरिगीतम्	४१
मयूर	२१

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
मरहट्ठा	४६
मराल (दोहा)□	१४
,, (काव्य)□	२१
मर्कट (दोहा)□	१४
(काव्य)□	२१
,, (षट्पद)□	२३
मल्लिका सवैया	४८
मत्ती सवैया	४८
महामाया□	६
महाराष्ट्र□	२१
,, भ्रमर□	२१
माधवी सवैया	४८
माधवी सवैया	४८
मानस□	२३
मानी□	६
मालती सवैया	४७
माला	१४
मालागलितकम्	५५
मुग्धगलितकम्	५५
मुग्धमालागलितकम्	५५
मृगेन्द्र□	२१
मेघ□	१७
मेघकर□	२३
मेरु□	२३
मोह□	२१
मोहिनी (रड्डा)	१
र	
रञ्जनम्□	२३
रड्डा	२९
रत्नम्□	२४
रसिका	१५
,, (वि.)	१६
राजसेना (रड्डा)	६
राजा□	२१
राम□	२१
रामा□	६
रुचिरा	१७
रुद्र□	१७
रेखा□	१६
रोला	१५
ल	
लक्ष्मी□	६
लघुविपरीतम् (वि.)	४
लघु हीरकम् (वि.)	४४
लज्जा□	६
ललितागलितकमपरम्	५३
ललितागलितकम्	५४
लीलावती	१९
व	
वचन□	१२
वलित□	२१
वलिताङ्ग□	२१
वसन्त□	२१
वसु□	२४
वानर□	१४
वारण (स्कन्धक)□	१२
(षट्पद)□	२३
वासिता□	६
विक्षिप्तागलितकम्	५३
विगलितकम्	५
विपाचा	३
विजय (काव्य)□	२१
,, (षट्पद)□	२३
विद्या□	६
विधि□	२३
विमति□	१२
विलम्बितगलितकम्	५२
विरता□	६

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
विषमितागलितकम्	५४
वीर	२३
वैताल	२३
व्याघ्र	१४
श	
शक्र	२१
शङ्ख	२४
शब्द	२४
शम्भु (रोला)	१७
,, (काव्य)	२१
शर (स्कन्धक)	१२
,, (षट्पद)	२३
शरभ (दोहा)	१४
,, (स्कन्धक)	१२
,, (काव्य)	२१
शरभ (षट्पद)	२३
शल्य	२४
शशी (स्कन्धक)	१२
,, (षट्पद)	२३
शारद	२३
शार्दूल (दोहा)	१४
,, (षट्पद)	२३
शिखा	३४
शिव	१२
शुद्ध	१२
शुनक	१४
शुभङ्कर	२३
शेखर (स्कन्धक)	१२
,, (षट्पद)	२४
शेष (रोला)	१७
,, (स्कन्धक)	१२
,, (काव्य)	२१
,, (षट्पद)	२३
शोभा	९

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
श्येन	१४
श्वा	२३
ष	
षट्पदम्	२३
स	
सङ्कुलितकम्	५२
,, अपरम्	५३
समगलितकम्	५२
समगलितकमपरम्	५३
समर (काव्य)	२१
,, (षट्पद)	२३
सरित्	१२
सर्प	१४
सहस्रनेत्र	२१
सहस्राक्ष	१७
सारंग (स्कन्धक)	१२
,, (षट्पद)	२३
सारस	२३
सारसी	९
सिद्धि (गाथा)	९
,, (षट्पद)	२३
सिंह (काव्य)	२१
,, (षट्पद)	२३
सिंहविलोकित	२८
सिंहिनी	१२
सिंही (टि.)	१०
सुफुल्लन (टि.)	३३
सुन्दरगलितकम्	५१
सुधार	२३
सुहीरम् (टि.)	४३
सूर्य (काव्य)	२१
,, (षट्पद)	२३
सोरठा	३५

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
स्कन्ध ◻	५१
स्कन्धकम्	१२
स्निग्ध ◻	१२
स्नेह ◻	१९

ह

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
हर ◻	२१
हरि ◻	२१
हरिगीतम्	१६
हरिगीतकम्	४
हरिगीता	४१
हरिगीता अपरा	४१
हरिण ◻	२१
हरिणी ◻	६
हाकलि	१५
हीरम् (षट्पद) ◻	२४
	४१
(टि.)	४१
हंसी (गाथा) ◻	६
,, (रसिका) ◻	१६

(ख) वर्णिक-छन्दों का अकारानुक्रम

संकेत– ( ) वृत्तमौक्तिक मे दिया हुआ नाम-भेद, अ=अर्द्धसम छन्द, द=दण्डक छन्द, प्र=प्रकीर्णक छन्द, वि=विषमवृत्त, वै=वैतालीय वृत्त, टि=टिप्पणी मे उद्धृत छन्द।

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
अ	
अचलधृति (गिरिवरधृति)	१३४
अच्युतम्	१६६
अद्रितनया (अश्वललितम्)	१६६
अनङ्गशेखर (द.)	१८७
अनवधिगुणगणम्	१५६
अनुकूला	८६
अनुष्टुप्	६६
,,	१६४
अपरवक्त्रम् (अ.)	१८६
अपराजिता	११५
अपरान्तिका (वै.)	१६६
अपवाह	१७७
अमृतगति	७४
अमृतधारा (टि. वि.)	१६५
अर्णव (द)	१८५
अलि (प्रिया)	१२७
अशोककुसुममञ्जरी (द.)	१८६
अश्वललितम् (अद्रितनया)	१६६
असम्बाधा	११४
अहिधृति	११८
आ	
आख्यानिकी (टि. भद्रा)	८३
आपातलिका (वै)	१६६
आपीड (विद्याधर)	८८
आपीड (टि. वि)	१६५
आर्द्रा (टि.)	८१
इ	
इः	५७
इन्द्रवज्रा	८०
इन्द्रवंशा	६३
इन्दुमा (टि.)	६४
इन्दुवदनम् (इन्दुवदना)	११७
इन्दुवदना (इन्दुवदनम्)	११८
उ	
उडुगणम्	१२८
उत्तरान्तिका (वै)	१६७
उत्पलिनी (चन्द्रिका)	१०६
उत्सव	१२७
उद्गाता (वि.)	१६२
उद्गताभेद (वि.)	१६२
उदीच्यवृत्ति (वै.)	१६८
उपचित्रम् (अ.)	१८६
उपजाति	८१
उपमेया (टि.)	६४
उपवनकुसुमम्	१४६
उपस्थितप्रचुपितम् (टि. वि.)	१६५
उपेन्द्रवज्रा	८०
ऋ	
ऋद्धि (टि)	८१
ऋषभगजविलसितम् (गजतुरगविलसितम्)	१३२
ए	
एला	१२६

वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या
ज	
जलदम्	६६
जलधरमाला	१००
जलोद्धतगति	९७
जाया टि.	८१
त	
तन्वी	१७३
तनुमध्या	६५
तरलनयनम्	१०३
,,	१७४
तरुवरम्	१६७
त्वरितगति.	७४
तामरसम्	९९
तारकम्	१०६
ताली (नारी)	५९
तिलका	६३
तीर्णा (कन्या)	६१
तुङ्गा	६८
तूणकम् (चामरम्)	१२२
तोटकम्	८९
तोमरम्	७१
द	
दक्षिणान्तिका (वै)	१९७
दमनकम्	६५
,,	७८
दशमुखहरम्	१४२
दिव्यानन्द	१६८
द्रुतविलम्बितम्	९२
दुर्मिलका	१७२
द्वितीयत्रिभङ्गी (प्र.)	१८२
दोधकम् (बन्धु)	७६
ध	
धवलम् (धवला)	१५२
धारी	६१
न	
नगाणिका	६१
नन्दनम्	१४६
नर्दटकम् (कोकिलकम्)	१३९
नराचम् (पञ्चचामरम)	१२९
नरेन्द्र	१६१
नलिनम् (वै)	१९६
नलिनमपरम् (वै)	१९७
नवमालिनी	१०३
नागानन्द	१५०
नान्दीमुखी	११७
नाराच (मञ्जुला)	१४७
नारी (ताली)	५९
निरुपमतिलकम्	१६३
निशिपालकम्	१२४
नीलम्	१२९
प	
पङ्कावली	१०७
पञ्चचामरम् (नराचम्)	१२९
पञ्चालम्	६०
पथ्यावक्त्रम् (वि	१९४
पदचतुरूर्ध्वम् टि (वि.)	१९५
पद्मकम्	१४२
पद्मावर्तिका	१६८
प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्	१५८
पाइत्तम् (पाइत्ता)	७१
पिपीडिका टि. (प्र.)	१८१
पिपीडिकाकरभ टि. (प्र)	१८१
पिपीडिकापणव टि (प्र)	१८२
पिपीडिकामाला टि. (प्र.)	१८२
पुष्टिदा टि	९४
पुष्पिताग्रा (अ)	१८८
पृथ्वी	१३५
प्रचितक (द.)	१८४, १८५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
मन्दहासा टि.	९४
मन्दाकिनी (प्रभा)	९८
मन्दाक्रान्ता	१३८
मनोरमम् (मनोरमा)	७५
मनोहस	१२३
मल्लिका	६८
,,	११९
,,	१७०
मल्ली	१७५
महालक्ष्मिका	७०
मही	५८
मागधी	१७८
माणवकक्रीडितकम्	६९
माधवी	१७४
माया टि.	८१
माया (मत्तमयूरम्)	१०४
माला टि.	८१
मालती	७६
मालती (सुमालतिका)	६५
,, (यमुना)	९९
,,	१७०
मालावती (मालाधर)	१३६
मालिनी	१२०
मृगेन्द्र	६०
मृगेन्द्रमुखम्	११०
मृदुलकुसुमम्	१५५
मेघविस्फूर्जिता	१५३
मोटनकम्	८६
मोदकम्	९०
मौक्तिकदाम	९०
य	
यमकम्	६३
यमुना (मालती	१००
योगानन्द	१५५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
र	
रताख्यानिकी (टि.)	८४
रथोद्धता	९४
रमण	५९
रमणा (टि.)	९४
रामः (ब्रह्मरूपकम्)	१२८
रामा (टि.)	८१
रामानन्दः	१७२
रुक्मवती (चम्पकमाला)	७३
रुचिरा	१०८
,,	१६३
रूपामाला	७०
रूपवती (चम्पकमाला)	७३
ल	
लक्ष्मी	११२
लक्ष्मीधरम् (स्रग्विणी)	८८
लता	१११
ललना	१३४
ललितम् (ललना)	१०१
ललितम् (वि.)	१३३
,,	१९३
ललितगति	७५
ललिता (सुललिता)	१०१
लवली टि (वि)	१९५
लीलाखेल (सारङ्गिका)	१२०
लीलाचन्द्र	१४३
लीलाधृष्टम्	१३५
लोला	११६
व	
वक्त्रम् (वि)	१९३
वर्धमानम् टि. (वि)	१९५
वसन्तचत्वरम्	१०२
वसन्ततिलका	११३
वाड्मती (अ)	१९१

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
सारङ्गिका (लीलाखेल)	१२०	सुवदना	१५७
सारवती	७३	सुवासकम्	६६
सिद्धकम् (सरसी)	१६२	सुषमा	७४
सिंहनाद (कलहंस)	११०	सेनिका (चण्डिका)	७९
सिंहास्यः	११३	सेनिका	७६
सुकेशी	८६	सोमराजी (शङ्खनारी)	६४
सुकेसरम्	१३३	सौरभम् (वि.)	१९२
सुद्युतिः	११२	सौरभेयी द्वि.	९४
सुन्दरिका	१६८	सयुतम् (संयुता)	७३
सुन्दरी	९०	स्रग् (शरभम्)	१२३
,, (अ.)	१९०	स्रग्विणी (लक्ष्मीधरम्)	८९
सुनन्दिनी (मञ्जुभाषिणी)	१०९	स्वागता	८४
सुभद्रिका	८७	**ह**	
सुमालतिका (मालती)	६५	हरिणप्लुता (अ.)	१८९
सुमुखी	७६	हरिणी	१३७
सुरतरु (सरसी)	१६२	हारिणी	१४०
सुरसा	१५४	हारी	६२
सुललितम्	७२	हंस	६२
,,	१४९	हंसी	१६४
सुललिता (ललिता)	१०१	हंसी द्वि (विपरीताख्यानिका)	८१

वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या
मध्या कलिका	२१२
मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका	२१७
मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका	२१८
मातङ्गखेलित चण्डवृत्तम्	२२६
मादिकलिका	२१२
मिश्रकलिका	२१२
मिश्रकलिका	२५८
मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका	२१६
र	
रणश्चण्डवृत्तम् (समग्रम्)	२२४
रादिकलिका	२११
ल	
ललिता त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका	२१५
व	
वञ्जुलश्चण्डवृत्तम्	२४६
वरतनु-त्रिभङ्गी कलिका	२१५
वल्लितश्चण्डवृत्तम्	२२२
वलिगता त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका	२१५
विदग्ध-त्रिभङ्गी कलिका	२१३
विदग्ध त्रिभङ्गी कलिका सम्पूर्णा	२५६
वीरश्चण्डवृत्तम् (वीरभद्रम्)	२२५
वीरभद्र चण्डवृत्तम् (वीर·)	२२५
वेष्टन चण्डवृत्तम्	२३२
श	
शाकश्चण्डवृत्तम्	२२६
शिथिला द्विपादिका द्विभगी कलिका	२१८
स	
समग्र (रण)	२२४
समग्र चण्डवृत्तम्	२३३
सर्वलघुकलिका	२६४
साप्तविभक्तिकी कलिका	२६१
सितकञ्ज चण्डवृत्तम्	२३८
ह	
हरिणप्लुत-त्रिभङ्गी कलिका	२१४

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
अमैत्री निरनुप्रासो	२७२	आदौ म प्रोक्त	६२
अयुक्कृता	१९९	आदौ म तदनु	१७७
अयुजि पदे नव-	३०	आदौ म सतत	१४८
अलसा प्राकृते	१	आदौ मो यत्र	१५७
अवान्तर प्रकरण	२८८, २८६	आदौ मो यत्र	१६०
अवान्तरमिव	२८८	आदौ यस्मिन् वृत्ते	१७७
अवेहि जगण	६७	आदौ विदधाना	१००
अश्वाना सख्याका	१५०	आदौ षट्कल-	१६
अश्वै सख्याता	१४३	आदौ षट्कलं	५२
अष्टभि षट्कले	२१२	आद्याङ्केन तवीर्यं	६
असमपदे	३०	आद्यन्ताशी पद्य-	२५८
असम्बाधा ततश्च	२८०	आद्यन्ते कृत-	६७
असवर्णं सवर्णं	२०७	आद्यं समास-	२१०
अस्य युग्मरचिता	१९९	आद्यवर्णास्तु	२२५
अहिपतिपिङ्गल-	१९	आपातलिका	१९६
		आरभ्यैकाक्षर वृत्त	२७६
आ		आर्षी पद्यं यदा-	२६८
आदाय गुरु-	२१		
आदावादिगुरु	३९	**इ**	
आदिनायुलवेद-	४३	इति गाथा प्रकरण	२७४
आदिगुरुर्भगणो	४	इति गाथाया	९
आदिगुरु कुरु	१६५	इति पिंगलेन	५
आदिगुरुर्वसु-	३	इति प्रकीर्णक-	१८३
आदित्यै सख्याता	१७२	इति भेदाभिधाः	९०, २४
आदिपमितस्थितं	७	इत्थ खण्डावलीनां	२७१
आदिभकार	७२	इत्थ विषम-	२८६
आदिभकारो	७३	इत्यर्द्धसमकं	२८६
आदिरथान्त	६२	इत्यर्द्धसमवृत्तानि	१९१
आदिरेकादश-	२२४	इदमेव हि यदि	१२३, १२७
आदिशेषशोभि	७९	इदमेवान्यत	२८२
आदौ कुर्यान्मगण-	७४, १४१	इन्द्रासनमय	३
आदौ टगणसमु-	३२	इयमेव यदि	४१
आदौ तगण.	७४	इयमेव वेदचन्द्रैः	४१
आदौ त्रयस्तुरङ्गा	२०	इयमेव सप्त-	१७०
आदौ पिपीलिका	२८६	इह यदि नगण-	९८

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
कलहंसस्ततश्च	२८०
कल्पद्रुमे लगौ	२३०
कलिकाभिस्तु	२११
कलिका श्लोक-	२६६
कारय भ ततो	१३३,१३९,१४८,१६५
कारय भं त	१७३
कारय भं भ	१७५
काव्यषट्पदयो	२५
कीर्त्ति सिद्धिर्मानी	९
कुण्डलकलित-	११४
कुण्डलवज्ररज्जु-	१६१
कुण्डल दधति	१४४
कुन्तीपुत्रा. यस्मिन्	१६८
कुन्द करतल-	१७
कुरु गन्धयुग्म-	११९
कुरु चरणे	७६
कुरु नकारमयौ	९२
कुरु नगण-	६९
कुरु नगण	११०, १२६, १३१, १६३
कुरु नगण तत	१३९
कुरु नगणयुगं	१०९, १२७
कुरु नसगणौ	१११ ११२
कुरु हस्तसगि-	१५६
कुरु हस्त स्वर्ण-	१५२
कुर्यात् पंक्ति-	७
कुसुमरूप-	९०
कुसुमसङ्गतकरा	१०१
कृत्वा पादे नूपुरौ	७७
कृत्वैष चाङ्कान्तां	८
कोष्ठानेकाधिकान्	६
कोष्ठान् मात्रा-	७
क्रियते मैर्गणै-	२६०
क्रियते सगण	५९
क्वचित्तु कलिका-	२६६
क्वचित्तु पद-	२०१
क्वचिद् रुक्मवती	२७८

ख

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
खण्डावली प्रकरण	२८९

ग

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
गगनविधुमति-	४४
गगनं शरभो	१२
गणव्यवस्था-	२७३
गणोद्दवर्णिका	२५
गण्डकैव क्वचित्	२८३
गद्यपद्यमयी	२११
गाथोदाहरण	२७४
गाहिनी स्याद्	८
गुणालङ्कार-	२६६
गुरुयुग्म किल	३
गुरुलघुकृत-	२७
गुरो पूर्वस्यान्ते	२
गो चेत् कामो	५८
ग्रन्थान्तरमतं	२८७

च

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
चकितैव यति-	२८२
चण्डवृष्टिप्रयात-	२८६
चतुरधिका इह	२०
चतुर्भिर्नगणै-	२५३
चतुर्भिर्भगणै-	२४९
चतुर्वर्णप्रभेदेषु	२७६
चतुर्भिस्तुरगै	२११, २४८
चतुष्कलद्वये-	२६०
चतुष्पद भवेद्	१८८
चतु सप्तमकौ	२३१
चम्पक चण्डवृत्तं	२४५
चम्पक तु ततः	२८८
चरणे प्रथमं	३९

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
ततोऽद्रितनया	२८४
ततो नर्दटक	२८२
ततोऽनुष्टुप्	२७७
ततोऽपि ललित	२८०
ततो भुजङ्गपूर्वं	२८५
ततो मणिगण	२८१, २८५
ततो मधुमती	२७७
ततो महालक्ष्मिका	२७७
ततो मालावती	२८२
ततोऽमृतगति.	२७८
ततो मोट्टनक	२७६
ततो रथोद्धता	२७६
ततो लक्ष्मीधर	२७६
ततो ललित-	२७८
ततो विमलपूर्वं	२८०
ततो वृत्तद्वयस्य-	२७३
ततोऽस्य परिभाषा	२८७
तत प्रहर्षिणी	८०
तत. प्रिया समा-	२८१
तत शम्भु समा-	२८३
ततः शैलशिखा	२८२
तत समानिका	२७७
तत. साधारणमतं	२८८
तत· स्मरगृह	२७५
तत्र पद्मावती	२७४
तत्र मात्रावृत्त-	२७३
तत्र श्रीनामकं	२७६
तत्रैवान्तेऽधिके	१६६
तत्याक्षरकृत-	१७४
तथा नानापुराणेषु	१६४
तथा प्रकरण चात्र	२७५
तदेव यतिभेदेन	२८४
तद्धि संदर्भ-	२०७
तनौ तु घटितौ	२६२
तयो फल च	२७३
तयोरुदाहृति	२७३
तस्यास्तु लक्षण	२०१
ताटकहार-	४
तालङ्कि्नीति	३०
तिलतन्दुलवन्	२१२
तुङ्गा वृत्त तत	२७७
तुरगैकमुपधाय	३८
तुरगो हरिणो	२१
तुर्यस्य तु शेष-	१६७
तृतीये कृतभङ्गा	२१५
त्यक्त्वा पंचम-	८
त्रयोदशगुरु-	१७
त्रयोदशैव भेदाना	१७
त्रिचतु पञ्च-	२६६
त्रिदशकला	१४
त्रिभिस्तैस्तु	२६१
त्रिभिर्भङ्गैस्त्रिभङ्गी	२१३
त्रिंशद्गुरवो	१२
त्रिंशद्वर्णा लक्ष्मीं	६
त्र्यक्षरे चात्र	२७६
त्र्यावृत्ता मभला	२१४

द

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
दहनगणनियम-	२३
दहनमिह	७२, ७५
दहनपितामह-	४
दहनमित	७८
दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान्	६
दत्त्वोद्दिष्टवद्	६
दद्यात् पूर्वं	५
दद्यादङ्कान् पूर्वं	७
दिव्यानन्द सर्व-	२८४
दीर्घयुतिकठोरा-	२०७
दीर्घं सयुक्तपर	१
दुस्थीभूतमिम	२६०

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
नित्य प्रावपद-	२०१
निष्कामतुच्छीकृत-	२९०
नूपुरमुच्चै	८६
नूपुररसना-	३
नेत्रोक्ता. मा.	७०
प	
पक्षिभासि	६१
पक्षिराजद्वय	६४
पक्षिराजनगणौ	१२७
पक्षिराजभूपति-	१२१
पक्षिराजभासिता	६६
पक्षिराजमथन	९१
पञ्चम तु प्रकरण	२७५
पञ्चम तु यत्र	२८६
पञ्चम लघु	१९४
पञ्चषष्ट्यधिक	१७९
पञ्चालश्च मृगेन्द्रश्च	२७६
पदचतुरूर्ध्वं	१९४
पदवृत्तो भवेत्	२५
पदे चेद् रगण.	२६८
पयोधरविरा-	१३५
पयोधरे कुसुमित-	१०८
पयोधर कुण्डल-	८०
पयोधर हार-	९३
पयोनिधिभूपति-	९०
परस्पर चैतयो-	२७८
पाइक्ता पिङ्गले	२७८
पाण्डूत्पल ततश्च	२८८
पादयुग कुरु	१७३
पादे द्विज देहि	६४
पादे यत्यनुरोधात्	२१
पादे या म प्रोक्ता	५९
पादेषु तो	६०
पिङ्गलकविकथिता	१९
पिङ्गले जयदेवश्च	२०४
पितृचरणैरिह	१८५
पुनरैन्द्राधिप-	४
पुष्पिताग्रा भवेत्	२८६
पूरयेत् षष्ठ-	७
पूर्वखण्डे पडेवात्र	२८९
पूर्ववदेव हि	३०
पूर्वान्तिवत्	२०१
पूर्वार्द्धे च परार्द्धे	११
पूर्वं कथिता	५४
पूर्वं कर्णत्रितय	१४३
पूर्वं गलितक	२७५
पूर्वं द्वितीयचरणे	५४
पूर्वं पादे मगणेन	७७
पूर्वं म स्यात्	८५
पृथिवीजल-	४
पृष्ठे वर्णच्छन्दसि	७
प्रकीर्णकप्रकरण	२८५
प्रतिपक्ष परिधर्मौ	२१
प्रतिपदमिह	१५१
प्रतिपाद सदो-	२७८
प्रथमत इह	१८२
प्रथमद्वितीय-	३५
प्रथमनकार	६४
प्रथममिह वसु	५२
प्रथमा करभी	२९
प्रथमायामाद्यावीन्	७
प्रथमे द्वादशमात्रा	९
प्रथमे द्वितीय-	७
प्रथम कर	१२६
प्रथमं कलय	१३४
प्रथम कुरु टगण	४६
प्रथम वसु	१९, ४२
प्रथम द्विजसहित	४५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
प्रथमं द्वितीय	११२
प्रथमं विरहि	१२३
प्रमुदितवदना	२८
प्रमुदितापूर्व	९८
प्रयोगे प्रायिक	११४
प्रवृत्तकं पदृभि	११८
प्रस्तारगतिभेदेन	२७७
प्रस्तारपस्या चात्र	२७८
प्रस्तारपस्या चान्यात्र	२७७
प्रस्तारपस्या तै	२७६
प्रस्तारपस्या भवः	२७८, २८२
प्र स्तारपस्या विज्ञेया	२८
प्रस्तारपस्या सम्प्रोक्ताः	२८१
प्रस्तारइम	२६४
प्रस्तारस्तु द्विधा	२
प्रस्तारसङ्ख्यया	६
प्रस्तारस्यापि	२७१
प्रस्तार्यमेव	२८१
प्राकृते संस्कृते	२७४
प्रिया तत समा-	२७७
प्रोक्त प्रकरणं	२८६
प्लवङ्गमङ्गल	२८१
फ	
फुल्लदाम ततश्च	१८३
ब	
बन्धो भ्रमरोऽपि	९१
बालमुनितर्क-	६६
बाणे,मङ्गल	१२६
बिम्बाधा दच्चो	११४
बिम्बाणा बलयो	८६
भ	
भवबाधक	१७८
भद्रितपद्रबिका-	७६
भद्रितयाचित-	७३
भद्रितयाचित	६६
भरतामिमुनी	८४
भसौ तु भवितौ	२११
भानुसक्यांमितै	८८
भिसविभूचतुष्पाद	११२
भुजयविमती	२११
भुजगाभिसुता	२७८
भुजगविरचित-	१२८
भूपतिनायक-	४
भूषणोपमया	२७१
भृत्योदासोमाभ्यां	३
भेदा खरबरे	२७७
भेदाश्चतुर्दशं	८१
भेदास्तस्यापि कथिता	२७१
भेदाः पुनुर्दिशिः	२८२
भेदा स्यु भूमि-	९१
भेदेष्वेतेषु	२८१
भेन यत तेन	६६
भो यदि सुन्दरि	६
भ ञुच तगु	१०७
भ्रमरभ्रामर	१४
भ्रमरावली चिन्हुले	२८१
म	
मयतो वस्त्रिकार्य	४
मदनरतिसय्	४
मञ्जरी चात्र	२२१
मणिगुणनिकरो	१२४
मणिगुणनिकर	२८१
मतङ्ग वाहिनीवृत्तं	२८२
मतला मतला	२१६
मत्ताक्रीडं सतः	१८४
मदिरा मालती	४७
मधुरालिमध	२११

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
मधुरा भद्वये	२१८
मधुरो दशमो	२२०
मधुरो युग्म-	२३४
मन्थान च तत	२७७
मन्द्रकमेव हि	१६५
मन्दाक्रान्ता वश-	२८२
मर्कटी लिख्यते	७
मस्त्रिगुरुरादि-	४
मात्राकृता भवे-	१८८
मात्राप्रस्तारे	३
मात्रामेरुरय	६
मात्रावृत्तान्युक्त-	५७
मात्रोद्दिष्ट च	२७३
मात्सर्यमुत्सार्य	२८६
मायावृत्त ततस्तु	२८०
मालाभिख्यमेव	५५
मित्रद्वयेन	५
मिश्रारिम्या	५
मुग्धपूर्वकमेव	५५
मुग्धमालागलितक	२७५
मुग्धादिका तरुण्यन्ता	२८७
मुग्धा प्रगल्भा	२१६
मुग्धाया भद्वये	२१८
मुग्ध मृद्वक्षरं	२०७
मुनिपक्षाभ्यां	८
मुनिबाणकला	८
मुनिरन्ध्रखनेत्रै-	२८४
मुनिरसवेदै-	१४०
मोदक सुन्दरी	२७९
मोहो बली तत	२१

य

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
यकार पूर्वस्मिन्	१३१
यकार रसैनोदित	१४५
यकार सवेहो	१५३
यकारः प्रागस्ते	१५७
यति सर्वत्र-	२०१
यतीनां घटन	२८७
यत्कलकप्रस्तारो	५
यत्र स्वेच्छा	१८६
यत्राष्टौ डगणा	४२
यथामतिर्यथा	१७९
यथा यथास्मिन्	२०
यदा लघुर्गुरु	१०२, १५८
यदा स्तो यकारौ	६४
यदि दोहादलविरति-	३५
यदि योगडगण-	३१
यदि रसलघु-	१८८
यदि रसविधु-	३७
यदि वै लघु-	८९
यदि स द्वितया-	६३
यदि ह् नद्वयानन्तर	१८४
यदीन्द्रवशा	६४
यद्गोमण्डलचण्ड-	२९०
यद्यपि दीर्घं	२
यद्ययुग्मयो	१९१
यस्मिन् कर्णौ	६१
यस्मिन् तकार	६२
यस्मिन्नष्टौ पाद-	१२८
यस्मिन्नष्टौ पूर्व	१७१
यस्मिन्निन्द्रै सख्याता	११३
यस्मिन् पादे दृश्यन्ते	१०४
यस्मिन् विषमे	१९०
यस्मिन् वेदानां	८८
यस्मिन् वृत्ते दिक्	१५५, १७६
यस्मिन् वृत्ते पक्ति	१६०
यस्मिन् वृत्ते रश्चर्वे	१२०
यस्मिन् वृत्ते रुद्र-	१६४
यस्मिन् वृत्ते सावित्रा	१७४

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
वर्णमेरुस्य	२७३	विषमपदैः	१६६
वर्णवृत्तगणानां	२७३	विषमे पदेषु	३०
वर्णा दीर्घा यस्मिन्	६४	विषमे यदि	१८६
वल्लकी राजते	५६	विषमे यदि सौ	१८६, १६०
वसुपक्षवरि-	१३	विषमे रसमात्राः	१६६
वसुवेदक्षचन्द्रै-	२८४	विषमे रसलघवकाः	१६६
वसुव्योमरस-	२८४	विषमेषु पञ्चदश-	३०
वसुमित लघु-	१७४	विषमेषु वेद-	२६
वसुपद्यमित-	२६६	विषमे सजौ	१६१
वस्वष्टनेत्रश्रुति-	२८३	विषमोऽग्निविधु-	२६
वह्नि संख्याका मा	७३	विषम चेति	१८८
वाङ्मत्येव हि	१६१	विषम शरविधु-	२८
वाङ्मय द्विविध	२०७	विहाय प्रथमा	२६१
वाणिनीवृत्तमा-	२८२	वीणाविराट्-	४
वानरकच्छौ	१४	वृत्तवन्धोज्झित	२१०
वारणजङ्गमसरभा	२३	वृत्तानुक्रमणी	२७६
विक्षिप्तिकागलितक	२७५	वृत्ते यस्मिन्नष्टौ	१३५
विजयवलिकर्ण-	२३	वृत्त प्रभेदो	८
विज्ञोहेत्यन्यत'	२७७	वृत्तं भेदो मात्रा	७
वितरणपूर्वा	२५६	वृत्यैकवेश-	२०७
वितरणपूर्वा सम्पूर्णा	२८८	वेदग्रहेन्दुवेद-	२८४
वितरणे तुरगे	२१३	वेदगणविरचित-	३७
विधिप्रहरण-	४	वेदपञ्चेषु वह्नि-	२८५
विधेहि ज	६१	वेदभकार-	१२६
विनिधाय कर	१७२	वेदयुग्मगुरुन्	२३
विपरीतस्थित-	५३	वेदविभाषित	६०
विरचय विप्र	६८	वेदशास्त्रवसु-	२८५
विरुदावली प्रकरण	२८७	वेदश्रुत्यवनी-	२८३
विरुदेन सम	२३७	वेदष्टने सप्तम'	२३२
विरुदैनाग्विता	२५८	वेदसुसम्मित-	१५६
विलोकनीया	८१	वेदैं पिपीलिका	१८१
विशृङ्खल स्खलत्ताल	२७२	वैतालीय प्रकरण	२८७
विषम द्वष्ट पदे	१८६	वैतालीय प्रथम-	२८१
विषमचरणेषु	२८	वैनतेयो यदा	७०

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
सश्लिष्टा दीर्घ-	२३२	सुन्दरिकैव	१६८
संस्कृत-प्राकृत-	२६६	सुप्रियपरसौ	३
सरसकविजना-	१०३	सुरतलता	३
सरससुरूप-	६६	सुरूपं स्वर्णाढ्य	१३६
सर्वगुर्वादि-	१७६	सुरूपाढ्य कर्णं	१५३
सर्वत्र पञ्चम	६६	सुसुगन्धपुष्प-	६१
सर्वत्रैव स्वल्प-	२७६	सूचनीयाः कवि-	२८४
सर्वशेषे	२२१	सोदाहरणमेतावद्	५६
सर्वस्या गाथायाः	६	सोरट्ठाख्य तत्तु	३५
सर्वान्त्य नयनात्	२८०	स्तुतिर्विधीयते	२६१
सर्वे लगणा अरिला	२७	स्फुटतरमेते	१४
सर्वे वर्णा दीर्घा	६७	स्यात् सुमालतिका	२७७
सर्वैरङ्कैः सम'	२६	स्वरोपस्थापिता	२४३
सलक्षणा सप्रभेदा	२७४	स्वर्णशङ्खवलय	८४
सलघुगनिगम	१६९	स्वेच्छया तु कला	२६०
सलिलनिधि-	१४६	**ह**	
सर्वैयाख्य प्रकरण	२७५	हताक्रुष्टाक्षरै	२६
सहचरि चेतनो	१६६	हरशशिसूर्या	३
सहचरि नो यदा	१६२	हरिणानन्तर	२८६
सहचरि रविहय-	१६७	हरिगीत तत	२७५
सहचरि विकच-	१७६	हलायुधे	१६४
सहस्रेण मुखेनैतद्	२७१	ह शेखरा	२१६
सा चेत् कथमं-	२३५	हारद्वय मेरु-	८०
सात्त्विकभावा	३	हारद्वय स्फुरद्	११३
साधारणमत	२६०	हारद्वयाचित-	१०१
सितकञ्ज तथा	२३७	हारपुष्पसुन्दर	१५६
सिद्धिर्बुद्धि करतल-	२३	हारभूषितकुचा	८४
सिंहावलोकित	२७४	हारमेरुल-	१३०, १४१
सुकुमारमतीनां	२७१	हारमेदमत्र	६८
सुजातिप्रतिभा-	१७६	हारौ कृत्वा स्वर्ण-	१०४
सुतनु सुदति	१६३, १७१, १७६	ह्रस्वयोर्स्व-	२१६
सुदति विधेहि	१६६		

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
आबद्धशुद्ध-	२३२
आलि याहि मञ्जु-	१३०
आलि रासजात-	१३०
आलोक्य वेदस्य	८०
इ	
इन्द्राद्यं देवेन्द्रं	१२८
इह कलयालि	१०३
इह खलु विषम.	१८६
इह दुरधिगमै	१०६
इह हि भवति	१८४
उ	
उचितः पशुपत्य-	२२६
उत्तुङ्गोदयभृङ्ग-	२३७
उत्फुल्लाम्भोज- (टि.)	१८२
उदञ्चत्कावेरी	१५३
उदञ्चदलिमञ्जु-	२५८
उदयदर्द्धदिवाकर-	६०
उद्गीर्णतारुण्य	२२६
उद्यद्विद्यु द्युति-	२२५
उद्भिन्नतर-	२३०
उद्वेजयत्यगुलि- (टि.)	८२
उद्वेलत्कुलजा-	२५७
उन्मिलद्वयेन्दु-	२३५
उन्मीलन्मकर-	१५१
उन्मीलच्छील-	२०२
उपगत इह	१५२
उपवनमध्या-	११
उपहितपशुपाली-	२५६
उरसि कृतमाल	३६
उरसि विलसिता	४०, ४१
ए	
एकस्वरोप-	२०६
एतस्या गण्डमण्डल-	२०२
एतस्या राजति	२०२
एव यया ययौ-	२०४
क	
कठोरठात्कृति-	१२६
कण्ठे राजद्	६७
कति सन्ति न	१७२, १६८
कनकवलय-	१७१
कन्दर्पकोदण्ड-	२४०
कपटदलितनट-	२६५
कपोलकण्डू (टि.)	८२
कमनीयवपु	६३
कमलमिवचन्द्र (ग.)	२०८
कमलवदन-	२७२
कमलाकरलालित-	३७
कमलार्पित	५४
कमलेषु सलुलि-	७१
कमल ललिता-	६६
कम्पायमाना	६४
कलकाल	५८
कसादीनां कालः	६३
करकलितकपाल	४५
करयुगधृतवशं-	३२
करयुगधृतवशी	३१
कर्णिकारकृत	२३६
कर्णे कल्पितकर्णिक	२६४
कलकोकिल-	१२२
कलक्वणितवशिका-	२६८
कलपरिमल-	१०२
कलयत हृदये	१०६, ११०
कलयति चेतसि	६६
कलय दशमुखारिं	१२७
कलय भाव	७५
कलय सखि	१०३
कलय हृदये	१११

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
गोकुलनारी	६, ८६
गो गोपालाना	७३
गोपतरुणी-	१२४
गोपवधूमयूर-	१३३
गोपवधूमुखा-	१३३
गोपस्त्रीविद्युदा-	२६४
गोपालानां रचित	७१
गोपालं कलये	८६, ११६
गोपाल कृतरास	६७
गोपाल केलिलोल	१५४
गोपिकामानसे	६४
गोपिके तव	८४
गोपिकोद्भव-	६१
गोपीचित्ताकर्षे	६१
गोपीजनचित्ते	७४
गोपीजनवल-	१८३
गोपीषु केलिरस-	१०१
गोपी सभूलचापल-	२४४
गोप वन्दे गोपिका-	७८
गोवृन्दे सञ्चारी	५८
गौढ पिष्टाम्न (टि.)	१४६
गौरीकृतदेह	१००
गौरीवर भस्म-	२
गौरीविरचित-	१४
ग्रथय कमल-	८७
ग्रहिलहृदयो	१३८

घ

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
घूर्णन्ने श्रान्ते	१४६

च

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
चञ्चलकुन्तल	६०
चण्डभुजदण्ड- (टि)	३३
चण्डीपतिप्रवण-	२१४
चण्डीप्रियनत	२५७
चतुरिमचञ्चद्	२१६
चन्दनर्चचित	२३०
चन्द्रकचित-	५४
चन्द्रकचारु-	४७, १७०
चन्द्रमुखि	१२४
चन्द्रमुखीसुन्दर-	१७३
चन्द्रवदनकुन्द-	४३
चन्द्रवर्त्मपिहित	९२
चन्द्रार्कौ ते राम	७७
चमूप्रभु मन्मथ (टि)	९५
चरणचलनहत-	२६४
चरण शरण भवतु	३१
चलत्कुन्तल	८८
चाद्यो न	२०५
चारुकुण्डल-	१९९
चारुतट	२५६
चित्र मुरारे	२५५
चिरमिह मानसे	१२६
चूतनवपल्लव- (टि)	३३
चेतसि कृष्ण	१०२
चेतसि पादयुग	१५९
चेत स्मरमहित	१८

छ

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
छवसामपि	२६८

ज

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
जगतीसभाव-	२५४
जनकुलपाल (टि)	५६
जनितेन मित्र-	१०९
जम्भारातिं-	२१५
जम्भारातीभकुम्भो-	२०३
जय कचचञ्चद्	२३८
जय गतशङ्क	२३६
जय चारुदाम	२३५
जय चारुहास	२३३
जय जय जगदीश	१८५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
दानवघटालवित्रे	२४६
दिक्पालाद्यन-	२०३
दितिजार्दन	२२०
दितिसुतकदन	६७
दितिसुततिवह	१६
दिवाकराद् (टि)	८३
दिविषद्वृन्द-	२०५
दिव्यसुगीतिभि	१६५
दिव्ये दण्डवरस्वसु-	२४२
दिशि दिशि परि-	१८८
दिशि दिशि विलसति	२८
दिशि स्फारीभूतं	१३६
दीव्यद् देवानां	१५४
दुकूलं बिभ्राणो	१३७
दुःखं मे प्रक्षिपति	२०४
दुर्जनभोजेन्द्रकण्ट- (ग.)	२५६
दुर्जयपरबल-	२२२
दुष्टदुर्दमारिष्ट- (ग)	२५६
दूराल्ढ प्रमोद	२०४
दृशा द्राघी यस्या	१३७
दृष्टमस्ति वासुदेव	१५७
दृष्ट्वा ते पदनख	२२२
देवकूलिनि	६२
देव देव वासुदेव	१५६
देवाधीशा-	२१६
देवैर्वन्द्य त्रैलोक्या-	१२०

ध

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
धुनोति सन्तो मम	४८, १७०
धूतासुराधीश	६४
धृतगोवर्द्धन	२२३
धृतिमवधारय	५१
धृतोत्साहप्रराद्	२६१
ध्यानैकाग्रा	१७७

न

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
न कस्य चेत	२००
नखगलदसृजां	११७
न जामदग्न्य. (टि.)	६६
नन्दकुमार	६२, ९०
नन्दकुलचन्द्र	२४७
नन्दनन्दनमेव	५५
नन्दविचुम्बित-	२५६
नभसि समुद-	१२३
नमत सततं	१११
नमत सदा जना	१६२
नमस्तुङ्गशिरो-	२०२
नमस्यामि	२०१
नमामि पङ्कजानन	५२
नमोऽस्तु ते	१९७
नयनमनोरसं	१६६
नयनमनोहर	१६३
नरकरिपु-	१२४
नरपतिसमूह-	१३३
नरवरपते	१२५
नर्त्तितशर्करं-	२२८
नवकोकिला- (टि.)	४०
नवजलद-	६६
नवनीतकर	१८६
नवनीतचोर	११०
नवनीरद-	१८६
नवबकुलवन-	२५१
नवमञ्जुलवञ्जुल-	१२३
नवशिखिशिखण्ड-	१५१
नवसन्ध्यावह्नि-	१५२
नवीननलिनो-	९७
नवीनमेघसुन्दरं	१५८
नव्ये कालिन्दीये	१७१
न स्याद् विभक्ति-	२०५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
प्रिय प्रतिस्फुरत्	२०४
प्रेमोद्वेल्लितवल्गु-	२४३
प्रेमोरुहट्टहिण्डक	२६४
प्रौढध्वान्ते	१४३, १६४
फ	
फुल्लपङ्कजकानन	६६
ब	
बम्भ्रमीति हृदय	१२७
बली बलाराति-(टि.)	६७
बाणालीहत	२१५
बुद्धीनां परिमोहन	२२८
ब्रह्मभवाविक-	५२
ब्रह्मा ब्रह्माण्डभाण्डे	२२२
भ	
भययुतचित्तो	६६
भवच्छेदे दक्ष	१५४
भवजलधितारिणि	५०
भवत प्रताप-	२४६
भवनमिव	१२१
भववावाहरण	१६
भव्याभि केकाभि	७०
भालविराजित-	४७
भिदुरमानस-	६२
भुजगपरिवारित-	४१
भुजङ्गरिपुचन्द्र-	२२३
भुजयुगल-	११६
भुवनत्रय-	२३१
भूमीभानो	२१२
भ्रमन्ती धनु-	१४५
भ्रू मण्डलताण्डवित	२३६
म	
मतिभव	५८
मदनरसगत	२३६
मधुरेश माधुरी-	२६२
मन इव रमणीनां	१२१
मनमानसमभि-	३२
मनसिजरूपा-	२१४
मनाक्प्रसूल-	२००
मन्दाकिनीपुलिन-	१६७
मन्दायते न खलु	२०४
मन्दहासविरा-	१४४
मम दह्यते	७२
मम मधुमथन	११५
मलयजसारा-	२३२
मल्लिकानव-(टि.)	४०
मल्लिमालती-	५०
मल्लिलते मलिना	१७३
महाचमूना-(टि.)	६५
मा कान्ते पक्ष-(टि.)	१२०
मा कुरु मानं	१७३
मा कुरु मानिनि	१६५
मागधविद्यु दिय	४८
माधवमासि	७४
माधवविद्यु दिय	१७८
माधवविस्फुर-	२५२
मानवतीमदहारि-	२५१
मानसमिह मम	३२
मानिनि मान-	१६२
मायामीनोऽव्वतु	७७
मित्रकुलोदित	२६२
मुकुटविराजित-	२०
मुखान्तवेणाक्षि-	८१
मुखाम्भोज	१६३
मुण्डाना माला-	६५
मुदा विलोलमौलि-	१०२
मुदे नोऽस्तु	५६
मुनीन्द्रा. पतन्ति	१४५
मृगगणवाहके	१३२

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
व	
ववनवलितै'	११२
वध्वा सिन्धु	१४१
वनचरकदम्ब-	१३६
वन्दे कृष्ण	५८
वन्दे कृष्ण नव-	११८
वन्दे गोप गोप-	१०५
वन्दे गोपाल	६२, ११५
वन्दे गोपीमन्मथ-	११८
वन्दे गोविन्द	६७
वन्दे देव सर्वा-	१६८
वन्दे नन्दनन्दन-	५५
वन्दे नित्य नर-	११७
वन्देऽरविन्दनयन	१२
वन्दे हरिं फणिपति-	११२
वन्देऽह त रम्य	१५५
वन्द्यं पीतं. पुष्पैः	१७५
वरजलनिधि-	४४
वरमुकुट-	६८
वरमुक्ताहार	४२
वल्लवनारी-	७२
वल्लवललनालीला-	२४४
वल्लवललनावल्ली-	२३३
वल्लवलीला-	२३३
वल्लवीनयन-	८५
ववौ मरुद्	१९७
वशीकृतजगत्-	२०२
वागर्थाविव	१६४
वारां राशौ सेतु	१३५
विकचनलिनगत	३४
विकृतभयानक-	३६
विगलितचिकुर-	५१
विततजलतुषारा-	२०३
विदधातु सकल-	१३४
विदिताखिलसुख	२२९
विधुमुख	२६०
विना तत्तद्वस्तु	१३७
विनिहतकस	६४
विपुलार्थ-	१६८
विबुधतरङ्गिणि	६६
विभूतिसित	५३
विमल कमल	१०६
विरहगरल- (टि)	४४
विलसस गोप-	१९२
विलसति मालति-	६६
विलसदङ्गरुचि- (टि.)	४४
विलसदलिकगत-	२३७
विलुलितपुष्प- (टि.)	१६६
विलोलचारु-	१८७
विलोलद्विरेफा-	१०७
विलोलमौलि-	६१, ६८
विलोलमौलि	६३
विलोलवत्स	६०
विलोलविलोचन-	४८, १७४
विलोलं कल्लोलं	१५३
विवृतविविधबाधे	२६५
विशिखनिचय-	१३४
विशुद्धज्ञान-	२०१
विषमविशिख-	२२०
विषमशरकृत	६७
वीरवर हीरख	२१२
वृन्दारकतरुवीते	२२४
वृन्दारण्ये कुसुमित-	७४
वेणु करे कलयता	५४
वेणुवर ताप-	६६
वेणुनादेन	८६
वेणुरन्ध्र-	६८
वेणुविराजित	६६

वृत्त-नाम	पृष्ठ-संख्या
सपदि कपय·	१३७
समरकण्डूल- (ग)	२०९
स मानसा (टि.)	८१
सम्प्रतिलब्धजन्म-(टि.)	१३९
सम्भ्रान्तै. सषडङ्ग-	२४७
सम्वलविचकिल-	२३४
सरसमति	७५
सरसचरण-	१०८
सरोजसस्तरादि-	८०
सर्वकालव्याल-	१६०
सर्वजनप्रिय	२२८
सर्वमह जाने	७३
सहचरि कथ-	१८८
सह शरधि- (टि.)	९८
सहसा सावित-	१९७
स हि खलु त्रयाणा (ग.)	२०७
साधितानन्त-	२२७
साघ्वीमाध्वीक- (टि.)	२०५
सारङ्गाक्षीलोचन-	२२१
सावज्ञमुन्मील्य (टि)	९६
सिन्धुर्गम्भीरोऽय	१४३
सिन्धुना पृष्ठा	७६
सिन्धोर्बन्ध	१४१
सिन्धोष्पारे	१३८
सुजनकलित-	२६१
सुन्दरि नन्दनन्दन	१३२
सुन्दरि नभसि	११४
सुरनतपद-	४५
सुरपतिहरितो-	१४७
सुरासुरशिरो-	२०१, २०२
सुवृत्तमुक्ता-	२००
सौरीतटचर	२६४
ससाराम्भसि	२५६
स्कन्ध विन्ध्याद्रि-	२०३
स्तोष्ये भक्त्या (टि)	१०५
स्थितिनियतिमतीते	२२२
स्थिरविलास	१९९
स्फुरदिन्दीवर-	२२७
स्फुटनाटघकडम्व-	२६५
स्फुटमधुर-	१९०
स्मितरुचिमकरन्द-	२४१
स्मितविस्फुरिते	२६१
स्यादस्यानीप-	२०३
स्वगुणैरनु-	१९८
स्वबाहुवलेन	९०
स्वादुस्वच्छ	२०४
स्वान्ते चिन्ता	८५
ह	
हृतदूषणकुल	३८
हरव्रवजित-	२०९
हरपर्वत एव	९१
हरिणीनयनावृत	२३०
हरि भजत	१९९
हरिरुपगत इति	२७
हरिर्भुजग-	१३५
हसितवदनै	१३८
हा तातेति क्रन्दित- (टि)	१०६
हारनूपुर-	१६१
हारशङ्खकुण्डलेन (टि.)	७९
हालापानोद्‌घूर्ण-	१४३
हृत्वा ध्वान्तस्थितमपि	१३९
हृदि कलयत	७९
हृदि कलयतु	८७
हृदि भावये	१२७
हैयङ्गवचौर	४२
हसोत्तमाभिलषिता	२६२

चतुर्थ परिशिष्ट

क मात्रिक छन्दों के लक्षण एवं नाम भेद

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची—

	ग्रन्थ-नाम	ग्रन्थकार
१	वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट
२	छन्दःसूत्र	पिङ्गल
३	नाट्यशास्त्र	आचार्य भरत
४	बृहत्संहिता	वराहमिहिर
५	स्वयम्भूछन्द	स्वयम्भू
६	कविदर्पण	अज्ञात
७	वृत्तजातिसमुच्चय	कवि विरहाङ्क
८	सुवृत्ततिलक	क्षेमेन्द्र
९	प्राकृतपैङ्गल	हरिहर (?)
१०	छन्दोनुशासन	हेमचन्द्राचार्य
११	छन्दोनुशासन-स्वोपज्ञटीका	"
१२	वाणीभूषण	दामोदर
१३	वृत्तरत्नाकर	केदारभट्ट
१४	वृत्तरत्नाकर नारायणीटीका	नारायणभट्ट
१५	छन्दोमञ्जरी	गङ्गादास
१६	वृत्तमुक्तावली	श्रीकृष्णभट्ट
१७	वाग्वल्लभ	दु:खभञ्जन
१८	जयदेवच्छन्द	जयदेव
१९	छन्दोनुशासन	जयकीर्ति
२०	रत्नमञ्जूषा	अज्ञात जैन कवि
२१	गाथालक्षण	नन्दिताढ्य
२२	छन्दोविचिति	जनाश्रय

संकेत— छन्दनाम = वृत्तमौक्तिक के क्रमानुसार है। मात्रासंख्या = छन्द के प्रत्येक चरण की मात्रायें। लक्षण—ट = ६ मात्रा ठ = ५ मात्रा ड = ४ मात्रा ढ = ३ मात्रा ण = २ मात्रा ग = दो मात्रा ल = १ मात्रा। सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क = ऊपर सूचित सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची की क्रम-सूचक संख्या है। छन्द-नाम एवं लक्षण के आगे के अंक यह सूचित करते हैं कि इन-इन अंकों के ग्रन्थों में भी यह छन्द इसी नाम से स्वीकृत है और नाम भेद के आगे के अंक यह सूचित करते हैं कि इन इन ग्रन्थों में इसी लक्षण का छन्द इस नाम से प्रकथित है। जिन ग्रन्थों का इन ग्रन्थों में उल्लेख नहीं है उनके अंक यहाँ नहीं दिए गए हैं।

छन्द-नाम	मात्रा-सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
गाथा	[१२, १८, १२ १५; ङ- ७, ग, इसमे छठा 'ङ' जगण होता है या चार लघु होते हैं। इसके विषम गणों मे अर्थात् १, ३, ५, ७ 'ङ' मे जगण निषिद्ध है। चतुर्थ चरण मे छठा 'ङ' केवल एक लघु होता है।]	१, ५, ६, ७, ९, १०, १२, १४, १६, १७, २१, आर्या– १०, १४, १७, १८, १९, २०, २२.
विगाथा	[१२, १५, १२, १८]	१, ९, १२, १४, १६, १७, २१; उद्गीति– ५, ६, १०, १४, १७, १८, १९, २१
गाहू	[१२, १५, १२, १५]	१, ९, १४, गाथिका– १६, गाहू– २१, उपगीति– ५, ६, ७, १०, १२, १४, १७, १८, १९, २१.
उद्गाथा	[१२, १८, १२, १८]	१, ९, १४, १६, १७ २१; गीति– ५, ६, ७, १०, १२, [illegible] १८, १९, २०, २१ [illegible]
गाहिनी	[१२, १८ [illegible]	
सिंहिनी	[१२, [illegible]	
स्कन्धकम्	[१२, [illegible]	
दोहा	[१३, १ [illegible] और [illegible] और [illegible] में ८, [illegible]	

छन्द-नाम	मात्रा-सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	लघु हो, द्वितीय चरण मे 'ड. ड. ड.' तीसरा 'ड' चार लघुरूप मे हो, तृतीय और पञ्चम चरण मे 'ढ. ड. ड. ड.' अन्त मे दो लघु आवश्यक हैं; चतुर्थ चरण में 'ड. ड. ढ' और अन्तिम चार चरण दोहा-लक्षणानुसार होते हैं।]	
करभी रड्डा	[१३, ११, १३, ११ १३, दोहा]	१, ७, ६; फलभी– १४.
नन्दा रड्डा	[१४, ११, १४, ११, १४, दोहा]	१, ६, १४, मोदनिका– ७.
मोहिनी रड्डा	[१६, ११, १६, ११, १६, दोहा]	१, ६, १४.
चारुसेना रड्डा	[१५, ११, १५ ११, १५, दोहा]	१, ६, १४, चारुनेत्रा– ७.
भद्रा रड्डा	[१५, १२, १५. १२, १५, दोहा]	१, ६, १४.
राजसेना रड्डा	[१५, १२, १५, ११, १५, दोहा]	१, ६, १४
तालकिनी रड्डा	[१६ १२, १६ ११, १६, दोहा]	१, ६, १४, राहुसेनिका– ७.
पद्मावती	[३२; चतुष्पदी, ढ- ८, ये 'ड' ऽऽ, ।।ऽ, ऽ।।, ।।।। रूप मे होने चाहियें। जगण का निषेध है।]	१, ६, १२, १४, १६; पद्मावतिका– १७.
कुण्डलिका	[दोहा-काव्य-मिश्रित]	१, ६, १२, १४, १६, १७, प्राकृतपिङ्गलानुसार दोहा-उल्लाला-मिश्रित.
गगनाङ्गणम्	[२५ मात्रा, २० वर्ण, चतुष्पदी, ट. ढ ड. ढ ड ल. ग.]	१, १२, १७, गगनाङ्ग–६, १६, मदनान्तक– १४.
द्विपदी	[२८, ट ढ. ढ. ड. ड ग.]	१, ६, १२, १४, १६, ५ के अनुसार २६ मात्रा द्विपदी, एवं ६, १०, १६, २१ के अनुसार २८ मात्रा चतुष्पदी; द्विदला– १७, माण्डीरक्रीडनस्तोत्र की टीका मे १२ मात्रा, चतुष्पदी माना है।
झुल्लणा	[३७, द्विपदी, गणनियमरहित]	१, झुल्लन– ६, १६.
खञ्जा	[४१, द्विपदी, ढ- ६, रगण, 'ड' चार लघ्वात्मक हो]	१, ६, १२, १४, १६, खञ्जिका– १७, खजक– ५, ६; १० के अनुसार २३ मात्रा चतुष्पदी है।

छन्द-नाम	मात्रा-सख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
दीपक	[१०, चतुष्पदी, ड, लघु २, जगण]	१, ६ १२, १४, १६, १७.
सिंहविलोकित	[१६, चतुष्पदी, सगण और ४ लघु का यथेच्छ प्रयोग]	१, १२, १६, १७; सिंहावलोक– ६, १४.
प्लवङ्गम	[२१, चतुष्पदी, ट. ठ. ड जगण, गुरु]	१, ६, १२, १६, १७.
लीलावती	[३२, चतुष्पदी, लघु गुरु वर्ण-नियम रहित, ड- ८, 'ड' मे सगण, ४ लघु जगण, भगण, गुरुद्वय का प्रयोग अपेक्षित है]	१, ६, १२, १६; लीलावतिका– १७.
हरिगीतम्	[२८; चतुष्पदी, ठ ट ठ. ठ ठ, गुरु]	१, १२, १६, हरिगीतक– १७.
हरिगीतकम्	[३०, चतुष्पदी, ठ. ट ठ ठ. ठ गुरुद्वय]	१,
मनोहर-हरि गीतम्	२८, चतुष्पदी, ठ. ट ठ. ठ. ठ गुरु, विराम पर 'ठ' गुर्वंत अपेक्षित है, यति १६, १२ पर है]	१,
हरिगीता	[२८, चतुष्पदी, ठ ट. ठ. ठ. ठ गुरु, विराम ६, ७, १२ पर अपेक्षित है]	१, ६.
अपरा हरि-गीता	[२८, चतुष्पदी, ठ. ट. ठ. ठ. ठ. गुरु, विराम १४-१४ पर अपेक्षित है]	१,
त्रिभगी	[३२, चतुष्पदी, ड- ८, जगण निषिद्ध है]	१, ६, १२, १६, १७
दुर्मिलका	[३२, चतुष्पदी, ड- ८,]	१, १२, दुर्मिला– ६, १६, १७,
हीरम्	[२३, चतुष्पदी, ट. ट. ट. रगण, 'ट' एक गुरु और ४ लघु-रूप होना चाहिए।]	१ ६, १६, हीरक– १२, १७.
जनहरणम्	[३२, चतुष्पदी; ड- ८, जिसमे २८ लघु और अन्त मे सगण हो]	१, १६, जलहरण– ६, १२, १७.

छन्द नाम	मात्रा-संख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
अपर लम्बिता-गलितकम्	[२२, चतुष्पदी, ड. ड. ड. ड. ड. गुरु, प्रथम और तृतीय चरण मे जगण नहीं,]	१, लम्बितागलितकम्–७, १०.
विक्षिप्तिका-गलितकम्	[२५; चतुष्पदी; प्रथम और तृतीय चरण मे ठ. ठ. ठ. ठ ठ, द्वितीय और चतुर्थचरण मे ड ठ. ठ ठ ठ ग. होता है।]	१, विच्छित्तिर्गलितकम्–१०.
ललिता-गलितकम्	[२४; चतुष्पदी; ड- ६,]	१, ७, १०
विषमिता-गलितकम्	[२५, चतुष्पदी; प्रथम और द्वितीय चरण मे ठ. ड. ड ड. ड. ड, तृतीय एव चतुर्थ चरण मे ड ड ड. ड ड. ड ग. होता है।]	१, विषमागलितक– १०,
मालागलितकम्	[४६; चतुष्पदी, ट. ड- १०, अर्थात् १ ३, ५, ७, ९. वां 'ड' जगण, २, ४, ६, ८ वा 'ड' चार लघ्वात्मक, और १० वां 'ड' सगण होना चाहिये]	१, १०.
मुग्धामाला-गलितकम्	[३८, चतुष्पदी, ट. ड- ८]	१, मुग्धगलितकम्– ५, १०
उद्गलितकम्	[३०, चतुष्पदी, ट. ड- ६;]	१, उद्गाता– ७, उग्रगलितकम्– ५, १०

छन्द नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
अपर लम्बिता-गलितकम्	[२२, चतुष्पदी; ड. ड. ड. ड. ड. गुरु, प्रथम और तृतीय चरण मे जगण नहीं,]	१, लम्बितागलितकम्-७, १०.
विक्षिप्तिका-गलितकम्	[२५; चतुष्पदी; प्रथम और तृतीय चरण मे ठ. ठ. ठ. ठ ठ, द्वितीय और चतुर्थचरण मे ड ठ. ठ. ठ ठ ग होता है।]	१, विच्छित्तिर्गलितकम्–१०
ललिता-गलितकम्	[२४, चतुष्पदी; ड- ६,]	१, ७, १०
विषमिता-गलितकम्	[२५, चतुष्पदी, प्रथम और द्वितीय चरण मे ठ. ड ढ ड ड. ड, तृतीय एव चतुर्थ चरण मे ड ड ड. ड. ड. ड ग. होता है।]	१; विषमागलितक– १०,
मालागलितकम्	[४६; चतुष्पदी, ट. ड- १०, अर्थात् १ ३, ५, ७, ९, वां 'ड' जगण, २, ४, ६, ८ वा 'ड' चार लघ्वात्मक, और १० वा 'ड' सगण होना चाहिये]	१, १०.
मुग्धामाला-गलितकम्	[३८, चतुष्पदी, ट. ड- ८]	१; मुग्धगलितकम्– ५, १०.
उद्गलितकम्	[३०, चतुष्पदी; ट. ड- ६;]	१, उद्गाता– ७, उग्रगलितकम्– ५, १०

क (२) गाथादि छन्द-भेदों के लक्षण एवं नाम-भेद

गाथा स्कन्धक, दोहा रोला रसिका काव्य एवं षट्पद नामक छन्दों के प्रस्तार-क्रम से भेद लक्षण एवं नाम-भेद निम्नलिखित ग्रन्थों में ही प्राप्त हैं—

गाथा प्रस्तार भेद

प्रस्तार क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत पैंगल	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ	भाषाशब्द और कवि दर्पण
१	२७	३	३	लक्ष्मीः	लक्ष्मी	लक्ष्मी	लक्ष्मीः	कमला
२	२६	५	३१	ऋद्धिः	ऋद्धि	ऋद्धिः	ऋद्धि	ललिता
३	२५	७	३२	बुद्धिः	बुद्धि	बुद्धि.	बुद्धि	लीला
४	२४	९	३३	लज्जा	लज्जा	लज्जा	लज्जा	ज्योत्स्ना
५	२३	११	३४	विद्या	विद्या	विद्या	विद्या	रम्भा
६	२२	१३	३५	क्षमा	क्षमा	क्षमा	क्षमा	माधवी
७	२१	१५	३६	देही	देही	गौरी	देही	लक्ष्मी
८	२	१७	३७	गौरी	गौरी	देही	गौरी	विद्युत्
९	१९	१९	३८	धात्री	धात्री	रात्री	धात्री (रात्री)	माला
१	१८	२१	३९	चूर्णा	चूर्णा	चूर्णा	चूर्णा	हंसी
११	१७	२३	४	छाया	छाया	छाया	छाया	चन्द्रलेखा
१२	१६	२५	४१	कान्ति	कान्ति	कान्तिः	कान्तिः	जाह्नवी
१३	१५	२७	४२	महामाया	महामाया	महामाया	महामाया	बुद्धि
१४	१४	२९	४३	कीर्ति	कीर्ति	कीर्ति	कीर्तिः	कामी
१५	१३	३१	४४	सिद्धि	सिद्धिः	सिद्धा	सिद्धा	कुमारी
१६	१२	३३	४५	मानी	मानिनी	मानी	मानिनी (मनोरमा)	मैना
१७	११	३५	४६	रामा	रामा	रामा	रामा	सिद्धि
१८	१	३७	४७	विश्वा	गाहिनी	गाहिनी	गाहिनी	ऋद्धि
१९	९	३९	४८	वासिता	विश्वा	विश्वा	विश्वा	कुमुदिनी
२	८	४१	४९	शोभा	वासिता	वासिता	वासिता	वरुणी
२१	७	४३	५	हरिणी	शोभा	शोभा	शोभा	पद्मिनी
२२	६	४५	५१	चक्री	हरिणी	हरिणी	हरिणी	वीणा
२३	५	४७	५२	कुररी	चक्री	चक्री	चक्री	ब्राह्मी (वाणी)
२४	४	४९	५३	हंसी	सारसी	सारसी	सुरसी	वाग्दर्भी
२५	३	५१	५४	सारसी	कुररी	कुररी	कुररी	मञ्जरी
२६	२	५३	५५	×	सिंही	सिंही	सिंही	गौरी
२७	१	५५	५६	×	हंसी	हंसी	हंसी (हंसपदा)	×

स्कन्धक प्रस्तार-भेद

प्रस्तार-क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृतपैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	३०	४	३४	नन्द	नन्द	×	×
२	२९	६	३५	भद्र	भद्र	×	×
३	२८	८	३६	शिव	शेष	नन्द.	नन्द
४	२७	१०	३७	शेष	सारंग	भद्र.	भद्र
५	२६	१२	३८	सारङ्ग	शिव	शेष	शेष
६	२५	१४	३९	ब्रह्मा	ब्रह्मा	सारंग	सारङ्ग
७	२४	१६	४०	वारण	वारण	शिव	शिव
८	२३	१८	४१	वरुण	वरुण	ब्रह्म	ब्रह्मा
९	२२	२०	४२	मदन	नील	वारण	वारण
१०	२१	२२	४३	नील	मदन	वरुण	वरण
११	२०	२४	४४	तालाङ्क	तालाङ्क	नील	नील
१२	१९	२६	४५	शेखर.	शेखर	मदन	निशाङ्क
१३	१८	२८	४६	शर	शर	तालङ्क	मदन
१४	१७	३०	४७	गगनम्	गगनम्	शेखर.	ताल
१५	१६	३२	४८	शरभ	शरभ.	शर	शेखर
१६	१५	३४	४९	विमति	विमति	गगनम्	शर
१७	१४	३६	५०	क्षीरम्	क्षीरम्	शरभ	गगनम्
१८	१३	३८	५१	नगरम्	नगरम्	विमति	सरभ
१९	१२	४०	५२	नर	नर	क्षीरम्	विमति
२०	११	४२	५३	स्निग्ध	स्निग्ध	नगरम्	क्षीरम्
२१	१०	४४	५४	स्नेहलु	स्नेह	नर	नगरम्
२२	९	४६	५५	मदकल	मदकल	स्निग्ध	नर.
२३	८	४८	५६	भूप	भूपाल	स्नेहनम्	स्निग्धम्
२४	७	५०	५७	शुद्ध	शुद्ध	मदकल	स्नेह
२५	६	५२	५८	कुम्भ	सरित्	लोभ	मदकल
२६	५	५४	५९	सरि	कुम्भ	शुद्ध	भूपाल
२७	४	५६	६०	कलश	कलश	सरित्	शुद्ध
२८	३	५८	६१	शशी	शशी	कुम्भ	सरित्
२९	२	६०	६२	+	+	कलश	कुम्भ
३०	१	६२	६३	+	+	शशधर	शशी

दोहा प्रस्तार भेद

प्रस्तार क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ	गाथा-लक्षण
१	२३	२	२५	+	+	+	भ्रमर	+
२	२२	४	२६	भ्रमरः	भ्रमरः	भ्रमरः	भ्रामरः	भ्रमर
३	२१	६	२७	भ्रामरः	भ्रामरः	भ्रामरः	शरभ	भ्रामर
४	२०	८	२८	शरभः	शरभः	शरभ	श्येन	शरभ
५	१९	१०	२९	श्येन	श्येन	श्येनः	मण्डूकः	[illegible]
६	१८	१२	३०	मण्डूकः	मण्डूक	मण्डूकः	मर्कटः	मकरन्द
७	१७	१४	३१	मर्कटः	मर्कटः	मर्कटः	करभ	मर्कटः
८	१६	१६	३२	करभः	करभ	करभ	नरः	नरः
९	१५	१८	३३	मदकलः	नरः	नरः	मरालः	मराल
१०	१४	२०	३४	पयोधरः	मराल	मराल	मदकल	मदकल
११	१३	२२	३५	चलः	मदकलः	मदकलः	पयोधरः	पयोधरः
१२	१२	२४	३६	नरः	पयोधरः	पयोधरः	चल	+
१३	११	२६	३७	मराल	चलः	चल	वानरः	+
१४	१०	२८	३८	त्रिकल	वानरः	वानरः	त्रिकल	+
१५	९	३०	३९	वानरः	त्रिकल	त्रिकल	कच्छप	+
१६	८	३२	४०	कच्छपः	कच्छप	कच्छपः	मत्स्यः	+
१७	७	३४	४१	मत्स्यः	मत्स्य	मत्स्य	शार्दूल	+
१८	६	३६	४२	शार्दूल	शार्दूलः	शार्दूलः	अहिवरः	+
१९	५	३८	४३	अहिवरः	अहिवरः	अहिवरः	व्याघ्र	+
२०	४	४०	४४	व्याघ्र	व्याघ्र	व्याघ्र	विडाल	+
२१	३	४२	४५	उन्दुरः	विडालः	विडाल	श्वा	+
२२	२	४४	४६	शुनक	शुनक	श्वा	कुक्कुर(उन्दुर)	+
२३	१	४६	४७	विडाल	उन्दुरः	उन्दुरः	सर्प	+
२४	०	४८	४८	सर्प	सर्प	सर्प	उरगवरः	+

रोला-प्रस्तार-भेद

प्र.क्र.	लघु	गुरु	मात्रा	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	लघु	गुरु	मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	६६	०	६६	रसिका	रसिका	६६	०	६६	लोहाङ्गिनी	लोहाङ्गी
२	६४	१	६६	हंसी	हसी	५८	४	६६	हसी	हंसिनी
३	६२	२	६६	रेखा	रेखा	५०	८	६६	रेखा	रेखा
४	६०	३	६६	तालाङ्का	तालङ्किनी	४२	१२	६६	तालङ्किनी	तालाङ्की
५	५८	४	६६	कम्पिनी	कम्पिनी	३४	१६	६६	कम्पी	कम्पी
६	५६	५	६६	गम्भीरा	गम्भीरा	२६	२०	६६	गम्भीरा	गम्भीरा
७	५४	६	६६	काली	काली	१८	२४	६६	काली	काली
८	५२	७	६६	कलरुद्राणी	कलरुद्राणी	१०	२८	६६	कलरुद्राणी	कलरुद्राणी

रसिका-प्रस्तार-भेद

प्र.क्र.	गुरु	लघु	मात्रा	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	प्रथम-चरणे गुरु	लघु	मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	१३	७०	९६	कुन्द	कुन्द	११	२	२४	कुन्द	कुन्द
२	१२	७२	९६	करतल	करतल	१०	४	२४	करताल	कर्णासल
३	११	७४	९६	मेघ	मेघ	९	६	२४	मेघ	मेघ
४	१०	७६	९६	तालाङ्क	तालाङ्क	८	८	२४	तालङ्क	तालाङ्क.
५	९	७८	९६	रुद्र	कालरुद्र	७	१०	२४	काल	कालरुद्र.
६	८	८०	९६	कोकिल	कोकिल.	६	१२	२४	रुद्र	कोकिल
७	७	८२	९६	कमलम्	कमलम्	५	१४	२४	कोकिल	कमल.
८	६	८४	९६	इन्दु	इन्दु.	४	१६	२४	कमल	चन्द्र·
९	५	८६	९६	शम्भु	शम्भु	३	१८	२४	इन्द्र	शम्भु
१०	४	८८	९६	चमर	चामर	२	२०	२४	शम्भु	चामर·
११	३	९०	९६	गणेश	गणेश्वर	१	२२	२४	चामर	गणेश्वर
१२	२	९२	९६	शेष	सहस्राक्ष	०	२४	२४	गणेश्वर	+
१३	१	९४	९६	सहस्राक्ष	शेष					

रसिका छन्द के केवल प्रथम चरण के ही वाग्वल्लभ के मतानुसार ११ भेद होते हैं और वृत्तरत्नाकर के टीकाकार नारायणभट्ट के मतानुसार १२ भेद होते हैं। वाग्वल्लभ और नारायणी टीका के अनुसार अवशिष्ट द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ चरण २४ मात्रा सहित यथेष्ट गुरु, लघु निर्मित होते हैं।

काव्य प्रस्तार-भेद

प्रभेद	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत पैंगल	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका
१		९६	९६	शक्र	शक्र	शक्र
२	१	९४	९५	शम्भु	शम्भुः	शम्भु
३	२	९२	९४	सूर्य	सूर्य	सूर्यः
४	३	९०	९३	गण्डः	गण्डः	गण्डः
५	४	८८	९२	स्कन्ध	स्कन्ध	स्कन्ध
६	५	८६	९१	विजय	विजयः	विजय
७	६	८४	९०	तालाङ्क	दर्प	दर्प
८	७	८२	८९	दर्प	तालाङ्क	ताराङ्क
९	८	८०	८८	समर	समरः	समरः
१०	९	७८	८७	सिंह	सिंहः	सिंह
११	१०	७६	८६	शेष	शेष.	शीर्ष
१२	११	७४	८५	उत्तेजाः	उत्तेजा	उत्तेज
१३	१२	७२	८४	प्रतिपक्षः	प्रतिपक्ष	कवि
१४	१३	७०	८३	परिधर्म	परिधर्मः	रक्षः
१५	१४	६८	८२	मराल	मराल	प्रतिधर्मः
१६	१५	६६	८१	दण्ड	मृगेन्द्र	मराल
१७	१६	६४	८०	मृगेन्द्र	दण्ड	मृगेन्द्र
१८	१७	६२	७९	मर्कटः	मर्कटः	दण्ड
१९	१८	६०	७८	मदनः	मदन	मर्कट
२०	१९	५८	७७	राष्ट्र	महाराष्ट्र	मधुकर
२१	२०	५६	७६	वसन्त	वसन्तः	वासन्त
२२	२१	५४	७५	कच्छः	कच्छः	कच्छः
२३	२२	५२	७४	मयूरः	मयूरः	मयूरः
२४	२३	५०	७३	बन्ध	बन्ध	बन्ध
२५	२४	४८	७२	भ्रमर	भ्रमरः	भ्रमरः
२६	२५	४६	७१	भिन्नमहाराष्ट्र	द्वितीयो महाराष्ट्र	भिन्नमहाराष्ट्रः
२७	२६	४४	७०	बलभद्रः	बलभद्रः	बलभद्र
२८	२७	४२	६९	राजा	राजा	राजा
२९	२८	४०	६८	वलित	वलित	वलित
३०	२९	३८	६७	राम	राम	मधुप
३१	३०	३६	६६	मन्थान	मन्थान	मन्थान

प्र क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
३२	३१	३४	६५	मोह·	वली	वली
३३	३२	३२	६४	वली	मोह·	मोह
३४	३३	३०	६३	सहस्रनेत्र.	सहस्राक्ष	सहस्राक्षः
३५	३४	२८	६२	बाल	बाल	बाल
३६	३५	२६	६१	दृप्त	दृप्त	दर्पित
३७	३६	२४	६०	शरभ	शरभ	सरभ
३८	३७	२२	५९	दम्भ	दम्भ.	दम्भः
३९	३८	२०	५८	दिवस	ग्रह	उद्दम्भ
४०	३९	१८	५७	उद्दम्भ	उद्दम्भ	वलिताक.
४१	४०	१६	५६	वलिताक	वलिताक	तुरग
४२	४१	१४	५५	तुरग	तुरङ्ग.	हार
४३	४२	१२	५४	हरिण	हरिण	हरिण
४४	४३	१०	५३	अन्ध	अन्ध	अन्ध
४५	४४	८	५२	भृङ्ग	भृङ्ग	भृङ्ग.

षट्पद-प्रस्तार-भेद

प्र क्र	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
१	७०	१२	८२	अजय.	अजय.	अजय.
२	६९	१४	८३	विजय	विजय	विजय
३	६८	१६	८४	बलि	बलि	बलि
४	६७	१८	८५	कर्ण.	कर्ण	वर्ण
५	६६	२०	८६	वीर	वीर	वीर
६	६५	२२	८७	वैताल	वैताल	वेताल
७	६४	२४	८८	बृहन्नर	बृहन्नल·	बृहन्नल·
८	६३	२६	८९	मर्क	मर्कट	मर्कट
९	६२	२८	९०	हरि	हरि	हरि.
१०	६१	३०	९१	हर	हर	हर
११	६०	३२	९२	विधि	ब्रह्मा	ब्रह्मा
१२	५९	३४	९३	इन्दु	इन्दु	इन्दु·
१३	५८	३६	९४	चन्दनम्	चन्दनम्	चन्दनम्
१४	५७	३८	९५	शुभङ्कर·	शुभङ्करः	शुभङ्कर

काव्य प्रस्तार-भेद

प्र. क.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत पैंगल	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका
१	०	९६	९६	शक्र	शक्र	शक्र
२	१	९४	९५	शम्भु	शम्भुः	शम्भुः
३	२	९२	९४	सूर्यः	सूर्य	सूरः
४	३	९०	९३	गण्डः	गण्डः	गण्ड
५	४	८८	९२	स्कन्धः	स्कन्धः	स्कन्ध
६	५	८६	९१	विजयः	विजयः	विजय
७	६	८४	९०	तालाङ्कः	दर्प	दर्प
८	७	८२	८९	दर्प	तालाङ्क	ताराङ्क
९	८	८०	८८	समरः	समरः	समर
१०	९	७८	८७	सिंहः	सिंह	सिंह
११	१०	७६	८६	शेषः	शेष	शीर्ष
१२	११	७४	८५	उत्तेजाः	उत्तेजा	उत्तेज
१३	१२	७२	८४	प्रतिपक्षः	प्रतिपक्षः	कर्षि
१४	१३	७०	८३	परिधर्मः	परिधर्मः	रस
१५	१४	६८	८२	मराल	मराल	प्रतिधर्मः
१६	१५	६६	८१	दण्डः	मृगेन्द्र	मराल
१७	१६	६४	८०	मृगेन्द्रः	दण्डः	मृगेन्द्र
१८	१७	६२	७९	मर्कटः	मर्कटः	दण्डः
१९	१८	६०	७८	मदनः	मदन	मर्कटः
२०	१९	५८	७७	राष्ट्रः	महाराष्ट्र	मधुकर
२१	२०	५६	७६	वसन्त	वसन्तः	वासक
२२	२१	५४	७५	कण्ठः	कण्ठः	कण्ठः
२३	२२	५२	७४	मयूरः	मयूरः	मयूरः
२४	२३	५०	७३	बन्धः	बन्ध	बन्ध
२५	२४	४८	७२	भ्रमरः	भ्रमरः	भ्रमरः
२६	२५	४६	७१	भिन्नमहाराष्ट्रः	द्वितीयो महाराष्ट्र	भिन्नमहाराष्ट्रः
२७	२६	४४	७०	बलभद्रः	बलभद्रः	बलभद्र
२८	२७	४२	६९	राजा	राजा	राजा
२९	२८	४०	६८	वलित	वलितः	वलितः
३०	२९	३८	६७	रामः	राम	मयूख
३१	३०	३६	६६	मन्थानः	मन्थानः	मन्थान

प्रस्तार	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
४८	२३	१०६	१२६	मानस	मन	ध्रुव
४६	२२	१०८	१३०	ध्रुवक	ध्रुव	वलय
५०	२१	११०	१३१	कनकम्	कनकम्	किन्नर
५१	२०	११२	१३२	कृष्ण	कृष्ण·	शक
५२	१६	११४	१३३	रञ्जनम्	रञ्जनम्	जन
५३	१८	११६	१३४	मेघकर	मेघकर	मेघाकर
५४	१७	११८	१३५	ग्रीष्म	ग्रीष्म	ग्रीष्म
५५	१६	१२०	१३६	गरुड	गरुड	गरुड
५६	१५	१२२	१३७	शशी	शशी	शशी
५७	१४	१२४	१३८	सूर्य	सूर्य·	सूर्यः
५८	१३	१२६	१३६	शल्य	शल्य	शल्य
५६	१२	१२८	१४०	नवरङ्ग	नवरङ्ग	नर
६०	११	१३०	१४१	मनोहर	मनोहरः	तुरग
६१	१०	१३२	१४२	गगनम्	गगनम्	मनोहर.
६२	६	१३४	१४३	रत्नम्	रत्नम्	गगनम्
६३	८	१३६	१४४	नर	नर	रत्नम्
६४	७	१३८	१४५	हीरः	हीर	नव.
६५	६	१४०	१४६	भ्रमरः	भ्रमर	हीर·
६६	५	१४२	१४७	शेखर.	शेखर	भ्रमर.
६७	४	१४४	१४८	कुसुमाकर.	कुसुमाकरः	शेखर
६८	३	१४६	१४६	दीप्त·	दीप	कुसुमाकरदीप
६६	२	१४८	१५०	शङ्ख	शङ्ख	शङ्खः
७०	१	१५०	१५१	वसु	वसु	वसु
७१	०	१५२	१५२	शब्द	शब्द	शब्द

प्र.क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत पैङ्गलम्	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका
१५	५६	४०	९६	श्वा	श्वा	श्वान
१६	५५	४२	९७	सिंहः	सिंह.	सिंह
१७	५४	४४	९८	शार्दूल	शार्दूल	शार्दूलः
१८	५३	४६	९९	कर्म	कूर्म	कर्म
१९	५२	४८	१ ०	कोकिलः	कोकिल	कोकिल
२	५१	५	१०१	खरः	खरः	खरः
२१	५०	५२	१०२	कुञ्जरः	कुञ्जरः	कुञ्जरः
२२	४९	५४	१ ३	मदन	मदन	मदन
२३	४८	५६	१०४	मत्स्य	मत्स्यः	मत्स्यः
२४	४७	५८	१ ५	तालाङ्क	तालाङ्क	सारङ्ग
२५	४६	६	१ ६	शेष	शेष	शेष
२६	४५	६२	१ ७	सारङ्ग	सारङ्ग	सारस
२७	४४	६४	१ ८	पयोधरः	पयोधर	पयोधर
२८	४३	६६	१ ९	कुन्द	कुन्दः	कुन्द
२९	४२	६८	११	कमलम्	कमलम्	कमलम्
३	४१	७	१११	वारण	वारणः	कुन्दः
३१	४	७२	११२	जङ्गम	शरभ	वारणः
३२	३९	७४	११३	शरभ	जङ्गम	शरभः
३३	३८	७६	११४	धृ तीव्रम्	ज तीव्रम्	जङ्गम
३४	३७	७८	११५	दाता	दाता	शरः
३५	३६	८	११६	शरः	शरः	सुशरः
३६	३५	८२	११७	सुशर	सुशरः	समरः
३७	३४	८४	११८	समर	समर	सारसः
३८	३३	८६	११९	सारस	सारसः	शारदः
३९	३२	८	१२	शारद	शारद	मेरु
४	३१	९	१२१	मद.	मेरुः	मदकर
४१	३	९२	१२२	मदकरः	मदकर	मद
४२	२९	९४	१२३	मेरु	मदः	सिद्धि
४३	२८	९६	१२४	सिद्धि	सिद्धिः	बुद्धिः
४४	२७	९८	१२५	बुद्धि	बुद्धि	करतल
४५	२६	१	१२६	करतलम्	करतलम्	कमलाकरः
४६	२५	१ २	१२७	कमलाकर	कमलाकरः	धवल-
४७	२४	१ ४	१२८	धवल	धवल	मतक

प्र क्र	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
४८	२३	१०६	१२९	मानस	मन	ध्रुव
४९	२२	१०८	१३०	ध्रुवक	ध्रुव	वलय
५०	२१	११०	१३१	कनकम्	कनकम्	किन्नर
५१	२०	११२	१३२	कृष्ण	कृष्ण	शक
५२	१९	११४	१३३	रञ्जनम्	रञ्जनम्	जन
५३	१८	११६	१३४	मेघकर	मेघकर	मेघाकर
५४	१७	११८	१३५	ग्रीष्म	ग्रीष्म	ग्रीष्म
५५	१६	१२०	१३६	गरुड	गरुड	गरुड
५६	१५	१२२	१३७	शशी	शशी	शशी
५७	१४	१२४	१३८	सूर्य	सूर्य	सूर्य.
५८	१३	१२६	१३९	शल्य	शल्य	शल्य
५९	१२	१२८	१४०	नवरङ्ग	नवरङ्ग	नर:
६०	११	१३०	१४१	मनोहर	मनोहर.	तुरग
६१	१०	१३२	१४२	गगनम्	गगनम्	मनोहर.
६२	९	१३४	१४३	रत्नम्	रत्नम्	गगनम्
६३	८	१३६	१४४	नर	नर	रत्नम्
६४	७	१३८	१४५	हीरः	हीर	नव
६५	६	१४०	१४६	भ्रमर	भ्रमर	हीर
६६	५	१४२	१४७	शेखर.	शेखर	भ्रमर.
६७	४	१४४	१४८	कुसुमाकर	कुसुमाकर.	शेखर
६८	३	१४६	१४९	दीप्त.	दीप	कुसुमाकरदीप
६९	२	१४८	१५०	शङ्ख	शङ्ख	शङ्खः
७०	१	१५०	१५१	वसु	वसु	वसु
७१	०	१५२	१५२	शब्द	शब्द	शब्द

क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका
१५	५६	४०	९६	श्वा	श्वा	श्वानः
१६	५५	४२	९७	सिंहः	सिंह	सिंह
१७	५४	४४	९८	शार्दूल	शार्दूल	शार्दूलः
१८	५३	४६	९९	कूर्म	कूर्म	कूर्म
१९	५२	४८	१००	कोकिलः	कोकिल	कोकिल
२०	५१	५०	१०१	खरः	खरः	खरः
२१	५०	५२	१०२	कुञ्जरः	कुञ्जरः	कुञ्जरः
२२	४९	५४	१०३	मदन	मदन	मदन
२३	४८	५६	१०४	मत्स्य	मत्स्य	मत्स्यः
२४	४७	५८	१०५	तालाङ्क	तालाङ्क	सारङ्ग
२५	४६	६०	१०६	शेष	शेष	शेष
२६	४५	६२	१०७	सारङ्ग	सारङ्ग	सारस
२७	४४	६४	१०८	पयोधरः	पयोधरः	पयोधर
२८	४३	६६	१०९	कुन्दः	कुन्द	कुन्द
२९	४२	६८	११०	कमलम्	कमलम्	कमलम्
३०	४१	७०	१११	वारण	वारणः	कुन्दः
३१	४०	७२	११२	जङ्गम	शरभः	वारणः
३२	३९	७४	११३	शरभ	जङ्गम	शरभः
३३	३८	७६	११४	ज्योतिष्मम्	ज्योतिष्मम्	जङ्गमः
३४	३७	७८	११५	दाता	दाता	शरः
३५	३६	८०	११६	शरः	शरः	सुसरः
३६	३५	८२	११७	सुसर	सुसर	समरः
३७	३४	८४	११८	समर	समर	सारसः
३८	३३	८६	११९	सारस	सारस	शारदः
३९	३२	८८	१२०	शारद	शारद	मेरुः
४०	३१	९०	१२१	मद	मेरुः	मदकरः
४१	३०	९२	१२२	मदकर	मदकर	भूप
४२	२९	९४	१२३	मेरुः	मदः	सिद्धि
४३	२८	९६	१२४	सिद्धि	सिद्धि	बुद्धिः
४४	२७	९८	१२५	बुद्धि	बुद्धि	करतल
४५	२६	१००	१२६	करतलम्	करतलम्	कमलाकर
४६	२५	१०२	१२७	कमलाकर	कमलाकरः	धवलः
४७	२४	१०४	१२८	धवल	धवल	मृतक

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३.	मन्दर.	[भ]	१, ६, १२, १६, मन्दरि–१७; हृदयम्–१६.
१४	कमलम्	[न]	१, ६, १२, १६; हरणि–१७, युग–१६.

चतुरक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१५.	तीर्णा	[म. ग]	१, ६. १२, १६; कन्या–१, ६, १०. १३, १५, १७, कीर्णा–१७; गीति –१६
१६	धारी	[र ल]	१, ६, १२, १६, १७; धर्म–१६
१७.	नगाणिका	[ज ग]	१, ६, १२, १६, विलासिनी–१०, जया–११, १६; कला–१७
१८.	शुभग	[न ल]	१; पद्म–१७, हरि.–१७, वपि–१६.

पञ्चाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१६	सम्मोहा	[म ग.ग.]	१, ६, १६, सम्मोहासार –१२, १७, वाला–१७
२०.	हारी	[त ग.ग]	१, ६, १२, हारीत–१६; लोल–१७, सहारी–१७, मृगाक्षि–७, तिष्ठद्गु–१६.
२१	हंस	[भ.ग ग.]	१, ६, १२, पंक्ति –१०, १२, १३, १५, १७, अक्षरोपपदा–११, कुन्तलतन्वी–११, कांचन-माला–१६.
२२	प्रिया	[स ल ग.]	१, १५, १७; रमा–१६
२३	यमकम्	[न ल ल]	१, ६, १६, हलि–१७; जनि–१७

षडक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४	शीषा	[म. म.]	१, ६, १२, १६, सावित्री–१०, १६; विद्युल्लेखा–१३, १५, १७
२५	तिलका	[स स]	१, ६, १२, १६, १७; रमणी–१०, नलिनी–११, कुमुदम्–१६
२६	विमोहम्	[र र]	१, विमोहा–१७, विज्जोहा–१, ६, १२, १६, १७, मालती–३; चर्फरिका–१०, गिरा–११; हंसमाला–१६
२७.	चतुरंसम्	[न य]	१, १२, १६; चउरसा–१; चतुरसा–६, शशिवदना–१०, १३, १५, १७, मकरकशीर्षा–३, ११; मुकुलिता–११, २०, कनकलता–१६.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३	मन्दर	[भ]	१, ९, १२, १६, मन्दरि–१७; हृदयम्–१९.
१४	कमलम्	[न]	१, ९, १२, १६; हरणि–१७, वृग्–१९.

चतुरक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१५.	तीर्णा	[म. ग.]	१, ९. १२, १६; कन्या–१. ६, १०, १३, १५, १७; कीर्णा–१७, गीति–१९.
१६	धारी	[र ल]	१, ९, १२, १६, १७, वर्त्म–१९.
१७	नगाणिका	[ज ग]	१, ९; १२, १६, विलासिनी–१०; जया–११, १९; कला–१७
१८.	शुभम्	[न ल]	१; पट्ट–१७, हरि–१७; वयि–१९.

पञ्चाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१९	सम्मोहा	[म ग ग]	१, ९, १६, सम्मोहासार–१२, १७; बाला–१७
२०	हारी	[त ग.ग]	१, ९, १२, हारीत–१६; लोलं–१७, सहारी–१७, मृगाक्षि–७, तिळद्वगु–१९.
२१	हंस	[भ.ग ग.]	१, ९, १२, पङ्क्ति–१०, १२, १३, १५, १७; अक्षरोपपदा–११, कुन्तलतन्वी–११, कांचनमाला–१९.
२२	प्रिया	[स ल ग.]	१, १५, १७; रमा–१९
२३	यमकम्	[न ल ल]	१, ९, १६; हलि–१७, जग्मि–१७

षडक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४	शेषा	[म. म.]	१, ९, १२, १६; सावित्री–१०, १९; विद्युल्लेखा–१३, १५, १७.
२५	तिलका	[स स]	१, ९, १२, १६, १७; रमणी–१०, नलिनी–११, कुमुदम्–१९
२६	विमोहम्	[र र]	१, विमोहा–१७, विज्जोहा–१, ९, १२, १६, १७; मालती–३; क्षफरिका–१०; गिरा–११; हंसमाला–१९
२७.	चतुरसम्	[न य]	१, १२, १६; चउरसा–१; चतुरसा–९; शशिवदना–१०, १३, १५, १७, मकरकशीर्षा–३, ११; मुकुलिता–११, २०; कनकलता–१९.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			१०, १३, १५, १७; समानी–१८, १९; समान–२२.
४४.	तुङ्गा	[न न ग ग]	१; तुङ्ग–६, १२; रतिमाला–१०; तुरङ्गा–१२.
४५.	कमलम्	[न स.ल ग.]	१, ६, १२, १६, लसदसु–१७.
४६.	माणवकक्रीडितकम्	[भ त ल.ग.]	१, २, ७, १२ २०, २२, माणवकक्रीडा–१६; माणवकम्–५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९.
४७.	चित्रपदा	[भ भ.ग.ग]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १९; चितान–७, १८, १९; चित्रपदम्–२०; हंसरुतम्–२२
४८.	अनुष्टुप्		१, १२; श्लोक–७, ८, १६.
४९.	जलदम्	[न.न ल.ल.]	१. कृतयु–१७, कृशयु–१७.
	नवाक्षर छन्द		
५०.	रूपामाला	[म म.म]	१, ६, रूपामाली–१२, १५ १६, १७
५१	महालक्ष्मिका	[र.र.र]	१, ६, १२, १७; महालक्ष्मी–१६.
५२.	सारङ्गम्	[न य स]	१, सारङ्गिका–१, ६, १२, १६, १७; मुसला–१७
५३	पाइत्तम्	[म भ स.]	१, पाइत्ता–१, ६, १२, १६; पापिता–१७; सिंहाक्रान्ता–१०; वीरा–१७; प्रवीरा–१७.
५४	कमलम्	[न न स]	१, ६, १२; कमला–१५, १६; लघुमणि-गुणनिकर–१०, मदनक–१७; रतिपदम्–१७.
५५	बिम्बम्	[न स य.]	१, ६, १२, १६, १७; गुर्वी–७, १८; विशाला–६, १०
५६	तोमरम्	[स ज ज]	१, ६, १२, १६, १७
५७	भुजगशिशुसृता	[न न म]	१, २, ५, १०, १७, १८, २०, २२. भुजगशिशुसृतम्–१६, भुजगशिशुभृता–१, ८, १३, १५, १७, भुजगशिशुवृता–१७, मधुकरी–३, मधुकरिका–११.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७४.	शालिनी	[म.त.त.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
७५.	वातोर्मी	[म.भ.त.ग.ग.]	१, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९; उर्मिला-४; वातोर्मीमाला-२०, २२. १० एवं १९ में [म.भ.भ.ग.ग.] लक्षण भी माना है।
७६.	उपजाति	[शालिनी-वातोर्मीमिश्रा]	१,
७७	दमनकम्	[न.न.न.ल.ग.]	१, ९, १२, १६, १७
७८.	चण्डिका	[र.ज.र.ल.ग.]	१, श्रेणिका-१; श्रेणिः-१९; श्येनी-२, १०, १५, १७, १८, २०, २२; श्येनिका-५, १३, १७; सेनिका-१२, १७, नि श्रेणिका-५; नि श्रेणिकम्-११, ताल-१६
७९.	सैनिका	[ज.र.ज.ग.ल.]	१, ९, सैनिकम्-१७,
८०.	इन्द्रवज्रा	[त.त.ज.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; उपस्थिता-६, ११
८१	उपेन्द्रवज्रा	[ज.त.ज.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८२	उपजाति	[इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रामिश्रा]	१, २, ४, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, इन्द्रमाला-१९, २०, २२.
८३.	रथोद्धता	[र.न.र.ल.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२
८४.	स्वागता	[र.न.भ.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८५.	भ्रमरविलसिता	[म.भ.न.ल.ग.]	१, ४, ५, १५, १७, १८, २०, २२; भ्रमरविलसितम्-२, ७, १०, १३, १९; वानवासिका-११.
८६.	अनुकूला	[भ.त.न.ग.ग.]	१, १५, १७; कुड्मलदन्ती-२, १०, श्री-१०, १३, १७, १८; सान्द्रपदम्-११, १९, रुचिरा-११; मौक्तिकमाला-१७
८७.	मोटनकम्	[त.ज.ज.ल.ग.]	१, ३, १०, १५, १७, मोटकम्-१९.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१	द्रुतविलम्बितम्	[न भ भ र]	१, २, ६, ७, ८, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२; हरिणप्लुतम्–३, ११
१०२	वंशस्थविला	[ज त.ज र.]	१; वंशस्थविलम्–१, १५, १७; वंशस्तनितम्–१; वंशस्थम्–३, ६, ७, ८, १०, १३, १६, १७, १८, १९, २२, वंशस्था–२, २०; वसन्तमञ्जरी–७, ११, अभ्रवंशा–११
१०३	इन्द्रवंशा	[त त ज र]	१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२, इन्दुवंशा–१७, वीरासिका–१७
१०४	उपजाति	[वंशस्थविला-इन्द्रवंशा मिश्रा]	१, १७; करम्बजाति–१९, कुलालचक्रम्–१९, वंशमालिका–१९, वंशमाला–२०
१०५	जलोद्धतगति	[ज स ज स]	१, २, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२
१०६	वैश्वदेवी	[म म य य]	१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२, चन्द्रलेखा–३.
१०७	मन्दाकिनी	[न न र र]	१, १५, १७; गौरी–२; प्रभा–१, १७
१०८	कुसुमविचित्रा	[न य न य]	१, २, १०, १३, १५, १७, २२, मदनविकारा–११, गजलुलितम्–११, गजललिता–१९
१०९	तामरसम्	[न ज.ज य]	१, ६, १०, १३, १५, १७, ललितपदा–४, १९, कमलविलासिनी–११
११०.	मालती	[न ज ज र]	१, ४, ६, १०, १३, १५, १७, वरतनु–२, [illegible] १४, १९, यमुना–[illegible]
१११	मणिमाला	[त य त य.]	[illegible]६, ११, १३, १[illegible] –१९,
११२.	जलधरमाला	[म भ [illegible]]	
११३	प्रियम्वदा	[न भ.[illegible]]	
११४.	ललिता	[[illegible]]	
११५.	ललितम्	।	

क्रमाङ्क	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३०	चन्द्रिका	[न न त त ग]	१, १३, १५, १७, उत्पलिनी–१, १७; कुटिलमति–२; कुटिलगति–१०; ६ मे चन्द्रिका का लक्षण 'न. न त र ग' है और १६ मे 'य म र र ग' है।
१३१	कलहस	[स ज स स ग.]	१, १५. १७; सिंहनाद–१, १७, कुटज–१, १०, १६, कुटजा–१७, भ्रमर–११, भ्रमरी–१६; क्षमा–१७
१३२	मृगेन्द्रमुखम्	[न ज ज र ग]	१, १५, १७; सुवक्त्रा–१०, १६, अचला ११
१३३	क्षमा	[न न.त र ग.]	१, १३; १० में 'न त.त र ग' लक्षण है।
१३४	लता	[न स ज ज ग]	१, लय–१०, उपगतशिखा–१७,
१३५	चन्द्रलेखम्	[न स र र ग]	१, १४, चन्द्रलेखा–१, १०, चन्द्ररेखा–१५
१३६	सुद्युति	[न स त त ग]	१; विद्युन्मालिका–१०
१३७	लक्ष्मी	[त भ.स ज ग]	१, ४, १०, १६, प्रभावती–१५, १६, १७ रुचि–१६.
१३८.	विमलगति	[न न न न ल.]	१; अडमरु–१७

चतुर्दशाक्षर छन्द

क्रमाङ्क	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३९	सिंहास्य	[म म.म.म.ग ग]	१, सकल्पासार–१७, संकल्पाधार–१७.
१४०.	वसन्ततिलका	[त भ ज ज ग ग]	१, २, ३, ४, ५, ६, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६; काश्यपमते सिंहोन्नता–२, ७, ११, १३, १७, २२, सैतवमते उद्धर्षिणी–२, १०, १३, १७, राममते मधुमाधवी १७; भरतमते सुन्दरी–१७, वसन्ततिलकम्–८, २०, २२; सैतवमते इन्दुमुखी–२२.
१४१	चक्रम्	[भ न न न ल ग]	१, १२, १७; चक्रपदम्–९, १६
१४२	असम्बाधा	[म त न स ग ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२
१४३	अपराजिता	[न न र स ल ग]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२
१४४	प्रहरणकलिका	[न न भ न ल.ग]	१, ५, ६, १५, १७, १६, २०, प्रहरणकलिता–२, १०, १३, १८; प्रहरणगलिता–२२

क्रमाङ्क	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१४५.	वासन्ती	[म त न म ग ग]	१ १५, १७
१४६	लोला	[म स म भ ग ग]	१ ११ १५, १७ अलोला-१ १७
१४७	नान्दीमुखी	[न न.त त ग ग]	१ ५, १५, १७ नन्दीमुखी-११; वसन्त-१ १६
१४८.	वदर्मी	[भ भ भ.भ ग ग.]	१ १४ कुटिला-२ १४ कुटिलं-१०, १४ हंसश्येनी-११ हंसश्यामा-१६, मध्यक्षामा-१४; चूडापीडम्-१७
१४९.	इन्दुवदनम्	[भ.ज स न.ग.ग]	१ इन्दुवदना-१ १३ १७; वरसुन्दरी-२ स्खलितम्-१ वनमयूर-११ १६ इन्दुवदना-१७ विलासिनी-२२; १ में ‘भ ज.स.न स ग’ लक्षण है।
१५	शरभी	[न भ न स.ग ग]	१; शरभा-१
१५१	अहिधृति.	[न,न म.ज.ज ग]	१
१५२	विमला	[न ज न ज स ग]	१; धृति-१ मणिकटकम्-११ १६, प्रमदा-१४
१५३	मल्लिका	[स.ज स ज स ग]	१ मञ्जरी-१४ कुररीरुता-१७
१५४	मणिगणम्	[न न.न न.स.स]	१ मधुहरि-१७ मधुहरि-१७

पञ्चदशाक्षर छन्द

क्रमाङ्क	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१५५	लीलाखेल	[म म.म.म म]	१ १६; सारंगिका-१ ६ सारंगी-१२ १६ १७ कामक्रीडा-१ १४ १७ लीलाखेल-१७ ज्योति-१६ मित्रम्-१६
१५६	मालिनी	[न न म य य]	१ २ ४ ५ ६ ७ ८ ६ १ १२ १३ १५ १६ १७ १८ १६ २० १२ नान्दीमुखी-३ ११
१५७	चामरम्	[र ज र.ज र.]	१ ६ १२ १६ तूणकम्-१ १ १५, १७ सोमवल्ली-५ तोदकं-७ चंचला-वर्त-१७ महोत्सव-१६
१५८	भ्रमरावलिका	[स.स स स स]	१ १०; भ्रमरावली-१ ६, १२ १६.
१५९	मनोहंस	[स.ज.ज भ र]	१ ६ १२ मणिहंस-१७; मनोहंस-११
१६	शरभम्	[न न न न स]	१ ६ १३ १६ १७ शशिकला-१ ५ ६ १ १३ १५, १७ १८ १६ मणिगुणनिकर-१ ३ ४ ५, ११ १३ १५ १७

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			१८, १९, २०, २२, स्रक्-१, ११, १३, १५, १७, १८, १९, चन्द्रावर्ता-२, ११, २२, माला-२, ११, २०, २२; मणिनिकर-१७; रुचिरा-१९; चन्द्रवर्त्मा-२०
१६१	निशिपालकम्	[भ ज स न र]	१, ९, १२, १६, १७
१६२	विपिनतिलकम्	[न स न र र.]	१, १५, १७
१६३	चन्द्रलेखा	[म र.म य य]	१, ६, १०, १३, १५, १७, चण्डलेखा-१, ७, १०, १४ में 'र र म य य' और १९ में 'र र.त त म' लक्षण है।
१६४	चित्रा	[म म म य य]	१, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, चित्रम्-१, मण्डुकी-११, १८, १९, चञ्चला-११
१६५	केसरम्	[न.ज.भ ज र]	१, प्रभद्रकम्-६, १०, १३, १७; सुकेसरम्-१४, १९
१६६	एला	[स ज न.न य]	१, १०, १३, १७, १९
१६७	प्रिया	[न न त भ र]	१; उपमालिनी-६, १०, रूपमालिनी-१४
१६८	उत्सव	[र न भ भ र]	१, सुन्दरम्-१०; मणिभूषणं-११, १९; रमणीय-११, १९, नूतनं-१७, सूचकण-१७.
१६९	उडुगणम्	[न.न न न न]	१, शरहति-१७
		षोडशाक्षर छन्द	
१७०	राम	[म म स स म ग]	१, ब्रह्मरूपकम्-१, ९, १६, ब्रह्मरूपम्-१५; ब्रह्म-१२, १७, कामुकी-१०, चन्द्रापीडम्-१७.
१७१	पञ्चचामरम्	[ज र ज र ज ग]	१, ५, ६, १०, १४, १५, १९, नराचम्-१, ९, १२, १४, १५, १६, १७
१७२	नीलम्	[भ भ भ भ भ.ग]	१, ९, १२, १६, १७, अश्वगति-६, १४, १५, सङ्गतम्-१०, पद्ममुखी-११, १९, सुरता-११, सद्मुद्धरण-११, सोपानक-११, रत्नगति-१७, विशेषिका-१७
१७३	चञ्चला	[र ज र ज र ल]	१, ९, १२, १६, १७; चित्रसङ्गं-१, १४, १५; चित्र-५, ६, १७; चित्रशोभा-५;
१७४	मदनललिता	[म भ न म.न ग]	१, १०, १५, १७, मदनललित-५

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१७५	वाणिनी	[न ज भ ज र ग]	१ ६ १ ११ १५ १७ १६; १० में वाणिनी का 'न ज ज ज र ग' लक्षण भी स्वीकार किया है।
१७६	प्रवरललितम्	[य म न स र ग]	१ ३ १५, १७ अयानन्दम्-१ १६
१७७	गरुडरुतम्	[न ज भ ज त ग]	१ १५ १७ चन्द्रलेखा-२२
१७८	चकिता	[भ स म त न ग]	१ १५, १७
१७९.	गजतुरग विलसितम्	[भ र न न न ग]	१ ऋषभगजविलसितम्-१ २ ३ १० ११ १५, १७ १८ १६ गजवरविलसितम्-५ भरतगजविलसितम्-११ वृषभगजविलसिता-९; ऋषभगजविलसिता-१२
१८०	शैलशिखा	[भ र न भ भ ग]	१ २ १० १४; मामिनी-१६
१८१	ललितम्	[भ र न र न ग]	१ ४; धीरललिता-१४ १५ महिषी-१०
१८२	सुकेसरम्	[न स ज स ज ग]	१
१८३	ललना	[स न न ज भ ग]	१
१८४	गिरिवरधृतिः	[न न न न न ग]	१ अचलधृति-१ ५, ६ १० १५ १७ १८

सप्तदशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१८५.	लीलाधूमम्	[म म म म म ग ग]	१; मानाक्रान्ता १७
१८६	पृथ्वी	[ज स ज स य ल ग]	१ २ ५, ६ ७ ८ ६ १ १२ १३ १५ १६ १७ १८ १६, २ २२ विलम्बितगतिः ३ ११
१८७	मालावती	[न स ज स य ल ग]	१; मालाधरः-१ ६ १२ १६, १७
१८८.	शिखरिणी	[य म न स भ ल ग]	१ २ ३ ४ ५, ६ ७ ८ १ १२ १३ १५ १६ १७ १८ १६ २ २२
१८९.	हरिणी	[न स म र स ल ग]	१ २, ३ ५ ६ ७ ८ १ १२ १३ १५ १७ १८ १६ २ २१ वृषभचरितम्-४; वृषभललितम् ११
१९	मन्दाक्रान्ता	[म भ न त त ग ग]	१ २ ४ ५ ६ ७ ८ ६ १२ १३ १५, १६ १७ १८ १६ २ २२ श्रीधरा-३ ११

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१९१	वंशपत्रपतितम्	[भ र न भ.न ल ग]	१, २, ३, ४, ६, १० १३, १५, १७, १८, १९, २२, वंशपत्रपतिता-१, २०; वंशदलम्-१, ११, वंशतल-५, वंशपत्रललितम्-५, वंशपत्रम्-१७
१९२.	नर्दटकम्	[न ज.भ ज ज ल ग]	१, १७; नर्कुट-८, नर्कुटकम्-४, ७, ११, १३, १५, १८, १९, अवितथम्-२, १०, १४.
	कोकिलकम्*	[न.ज भ ज ज ल ग.]	१, २, १०, १३, १४, १५, १७, १९.
१९३.	हारिणी	[म भ न म य ल ग]	१, ५, १०, १५; १७ मे 'म भ.न य.म ल ग' लक्षण है।
१९४.	भाराक्रान्ता	[म भ न र स ल ग]	१, ५, १०, १५, १७,
१९५	मतंगवाहिनी	[र ज.र ज र.ल.ग]	१,
१९६	पद्मकम्	[न.स भ त त ग ग]	१, १०,, पद्मम्-५
१९७	दशमुखहरम्	[न न.भ न न.ल ल.]	१, अचलनयनम्-१७

अष्टादशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१९८	लीलाचन्द्र	[म म म म म म]	१, ९
१९९	मञ्जीरा	[म म भ म स म]	१, ९, १२, १६, १७
२००	चर्चरी	[र स ज ज भ र]	१, ९, १२, १६, १७; विबुधप्रिया-२, १४; उज्ज्वलम्- १०, मालिकोत्तरमालिका-११, १९, मत्तकोकिलम्-१७, कूर्पर-१७; चञ्चरी १७, रूपगोस्वामी कृत मुकुन्दमुक्तावली मे 'रथिणी' और गोवर्द्धनोद्धरण मे 'मुग्धसौरभम्' नाम दिए हैं।
२०१	क्रीडाचन्द्र	[य य.य य य य]	१, १२, १७; क्रीडाचक्रम्-१९; वारवाणा-१७; क्रीडगा-१७, चन्द्रिका-१७
२०२	कुसुमितलता	[म त न य य य]	१, २, ५, १०, १३, १५, २२, चित्रलेखा-३; चन्द्रलेखा-७, कुसुमलतावेल्लिता-१७, १८, कुसुमितलतावेल्लिता-१९, २०
२०३	नन्दनम्	[न ज भ ज र र.]	१, १५, १७.
२०४	नाराच	[न न र र र र]	१, १५, १७, नाराचकम्-२, मञ्जुला-१, महामालिका-१७, तारका-६, वरदा-१९; निशा-१९
२०५	चित्रलेखा	[म भ न य य य]	१, ५, १०, १४, १५, १७, चन्द्रलेखा-१७, महाराणा कुम्भकर्ण रचित पाठ्यरत्न-

*लक्षण 'नर्दटकम्' का है परन्तु यतिभेद के कारण अपर नाम 'कोकिलकम्' दिया है।

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२५	प्लवङ्गभङ्ग-मङ्गलम्	[ज र ज र ज.र ल ग]	१,
२२६	शशाङ्कचलितम्	[त.भ ज.भ.ज भ.ल.ग.]	१; शशाकचरितम्–७, शशाकरचितम्–१०.
२२७.	भद्रकम्	[भ.भ भ भ र.स.ल.ग]	१; नन्दकम्–१०; भासुरम्–१६.
२२८	अनवधिगुणगणम्	[न.न न न न न.ल.ल.]	१,

एकविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२९	ब्रह्मानन्द.	[म.म म म म म म]	१,
२३०.	स्रग्धरा	[म.र.भ.न य.य.य.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
२३१.	मञ्जरी	[र न.र.न.र.न र.]	१; तरंग.–१०; तरगमालिका–१९; कनकमालिका–१७.
२३२	नरेन्द्र	[भ र न न ज.ज.ज.]	१, ९, १२, १६.
२३३.	सरसी	[न ज.भ.ज ज ज र.]	१, १५, १७; सुरतरु–१, सिद्धकम्–१; सिद्धि –५, १०; सिद्धिका–६; शशिवदना–२, ११; चित्रलता–११, चित्रलतिका–१९, सलिलम्–१४; श्री –१४; चम्पकमालिका–१७, १९; चम्पकावली–१७; पञ्चकावली–१७.
२३४.	रुचिरा	[न.ज भ.ज.ज ज र.]	१, ११.
२३५.	निरुपम-तिलकम्	[न.न न न.न न न.]	१.

द्वाविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२३६.	विद्यानन्दः	[म.म म म म म म ग.]	१,
२३७	हंसी	[म म.त न न न.स ग.]	१, ९, १२, १५, १६, १७; रजतहंसी–१७.
२३८	मदिरा	[भ भ भ भ भ भ भ ग]	१, ५, १०, १४, १५, १७; लताकुसुमम्–६, ११, १९; सवैया–१६; मालिनी–१७
२३९.	मन्द्रकम्	[भ र.न र न र न ग]	१; मद्रकम्–२, ३, ५, १०, १८, १९, २२; भद्रकम्–६, १३, १५, २०; विद्युद्व-धरितम्–७; १७ मे 'भ र न स न र न ग' लक्षण हैं। मद्रकं–१७, भद्रिका–१७;
२४०	शिखरम्	[भ र.न र न.र न.ग]	१

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२५६	मल्ली	[स स.स स स.स.स स ग.]	१, मुदिरम्–१७
२६०	मणिगुणम्	[न न न न.न न.न न.ल]	१

षड्विंशाक्षर छन्द

२६१	गोविन्दानन्द	[म म म.म.ग.म म म ग ग]	१, जीमूताधानम्–१७
२६२	भुजङ्गविजृम्भितम्	[म.म त न न न.र स ल ग]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२
२६३	अपवाह	[म न न.न.न न न.स.ग ग]	१, ५, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, अपवाहक.–२; २२, अपबाधम्–६,
२६४	मागधी	[भ.भ.भ.भ भ भ भ भ.ग.ग.]	१, प्रियजीवितम्–१७
२६५	कमलदलम्	[न न न.न न.न न.न ल ल]	१.

प्रकीर्णक छन्द

१	पिपीडिका	[म म त न न न न ज भ र]	१, ५, १०; जलद दण्डक–२२
२	पिपीडिकाकरभः	[म म त न न न.न.ल–५, ज भ र]	१, ५, १०
३	पिपीडिकापणव	[म म त न न.न न ल–१०, ज.भ र]	१, ५, १०
४	पिपीडिकामाला	[म म त न न न ल ल–१५, ज भ र.]	१, ५, १०.
५	द्वितीयत्रिभङ्गी	[ल–२०, भ ग.ग.स ग ग.ल.ल ग ग.]	१, १६
६	शालूर	[ग ग. ल–२४, स]	१, १६.

दण्डक छन्द

१	चण्डवृष्टिप्रपात	[न न.र–७]	१, १०, १३, १५, १७, मेघमाला–३; चण्डवृष्टि–५, १०, १६; चण्डवृष्टि-प्रयात–२, ६, १८, १६, २०, २२
२.	प्रचितक	[न न.र–८]	१, २
३	अर्णः	[न न र–८]	१, ५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १६; अर्णव –२२.

क	छन्द-नाम		लक्षण		सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८	केतुमती	१,३ [स ज स ग]	२,४.	[भ.र.न.ग.ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १६, २०, २२.
६.	वाङ्मती	,, [र ज.र ज]	,,	[ज.र.ज.र.ग.]	१, यवमती–२, ५, ६, १०, १३, १८; अमरावती–१७; यमवती–१७, २०, २२, यवध्वनि–१६, २० के अनुसार 'र.ज र.ज.ग' 'ज र ज र.ग' लक्षण है।
१०	षट्पदावली	,, [ज.र ज.र.]	,,	[र ज र ज.ग.]	१, ५, १०, १४.

विषमवृत्त

		लक्षण		सन्दर्भ
१.	उद्गता	[*१ स ज स.ल	*२. न स.ज.ग.	१, २, ४, ५, ६, १०, १३, १५,
		*३ भ न.भ ग	*४. स ज स ग]	१७, १८, १६, उद्गतः २०,
२	उद्गताभेद	[१ स ज स ल	२. न स ज ग.	
		३. भ न ज ल ग.	४. स ज स ग]	१, १५, २२
३	सौरभम्	[· स स ल.	२. न स.ज ग	१, १७, सौरभकम्–२, ५, ६,
		३. र न भ ग	४. स.ज स ज ग.]	१०, १३, १५, १८, १६; सौरभक–२०; सौरभकं–२२
४,	ललितम्	[१ स ज स ल.	२ न स ज ग.	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७,
		३. न न स स.	४. स ज स ज.ग]	१८, १६, २२, ललित–२०
५,	भाव	[१. म म.	२. म म	
		३ म म	४. भ भ भ.ग]	१

६, वक्त्रम् [लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय और चतुर्थ चरण मे 'भ ग य ग' होता है]
१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२.

७, पथ्यावक्त्रम् [लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय एवं चतुर्थ चरण का पाचवां छठा और सातवां अक्षर 'जगण' होता है]
१, २, ६, १०, १३, १५, १७, १८; पथ्या–५, १६, २०, २२

---

*–१–प्रथम चरण का लक्षण, २–द्वितीय चरण का लक्षण, ३–तृतीय चरण का लक्षण, ४–चतुर्थ चरण का लक्षण।

वैतालीय-छन्द

क्रमाङ्क	छन्दनाम		लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१	वैतालीयम्	*१ ३	[१४ मात्रा—कला ६ र.ल.ग]	१ १ ४ ६ ७ १ ११ १५
		२ ४	[१६ मात्रा—कला ८ र.ल.ग]	१७ १८ १९, २ २२
२	औपच्छन्दसकम्	१ ३	[१६ मात्रा—कला ६ र.ल.ग.ग.]	१ २ ४ ६ ७ १ ११
		२ ४	[१८ मात्रा—कला ८ र.ग]	१५ १७ १८ १९ २ २२
३	आपातलिका	१ ३	[१४ मात्रा—कला ६ भ.ग.ग]	१ २ ६ ७ १ १३ १७
		२,४	[१६ मात्रा—कला ८ भ.ग.ग]	१८ १९, २ २२
४	नलिनम्		[१४ मात्रा—कला ६ भ.ग.ग]	१
५	अपरं नलिनम्		[१६ मात्रा—कला ८ भ.भ.ग]	१
६	दक्षिणान्तिका वैतालीयम्		[१४ मात्रा—ल ग कला ४ र.ल.ग]	१ ६ १ १३ १७ २२
७	उत्तरान्तिका वैतालीयम्		[१६ मात्रा—कला ८ र.ल.ग]	१ ११
८	प्राच्यवृत्ति	१ ३	[१४ मात्रा—कला ६ र.ल.ग]	१ २ ६ १ १३ १७
		२ ४	[१६ मात्रा—कला ४ ग कला ४ र.ल.ग]	१८ १९, २० २२
९	उदीच्यवृत्ति	१ ३	[१४ मात्रा—ल.ग कला ४ र.ल.ग]	१ २ ६ ११ १७ १८ १९, २ २२
		२ ४	[१६ मात्रा—कला ८ र.ल.ग]	
१०	प्रवृत्तकम्	१ ३	[१४ मात्रा—ल ग कला ४ र.ल.ग]	१ २, ६, १ ११ १७ १८ १९, २ प्रवृत्तकम्-२२
		२ ४	[१६ मात्रा—कला ४ ल. कला ४ र.ल.ग]	
११	अपरान्तिका		[१६ मात्रा—कला ४ ग कला ४ र.ल.ग]	१ २ ६ १ ११ १७ १८ २२; अपरान्तिकम्-१९
१२	चारुहासिनी		[१४ मात्रा—ल ग कला ४ र.ल.ग]	१ २ ६ १ ११ १७ १८ १९

---

*१,३ अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण ।
२,४ अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण ।

(ग.) छन्दों के लक्षण एवं प्रस्तारसंख्या[*]

क्रमाङ्क	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तार संख्या
		एकाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २	
१	श्रीः	ऽ	१
२	इ	।	२
		द्व्यक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४	
३	कामः	ऽऽ	१
४.	मही	।ऽ	२
५	सार	ऽ।	३
६	मधु	।।	४
		त्र्यक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ८	
७	ताली	ऽऽऽ	१
८	शशी	।ऽऽ	२
९	प्रिया	ऽ।ऽ	३
१०.	रमण	।।ऽ	४
११	पाञ्चालम्	ऽऽ।	५
१२	मृगेन्द्र	।ऽ।	६
१३.	मन्दर.	ऽ।।	७
१४	कमलम्	।।।	८
		चतुरक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १६	
१५.	तीर्णा	ऽऽऽऽ	१
१६	धारी	ऽ।ऽ।	११
१७	नगाणिका	।ऽ।ऽ	६
१८	शुभम्	।।।।	१६
		पञ्चाक्षरछन्द–प्रस्तारभेद ३२	
१९	सम्मोहा	ऽऽऽ ऽऽ	१
२०	हारी	ऽऽ। ऽऽ	५
२१	हंस	ऽ।। ऽऽ	७
२२.	प्रिया	।।ऽ ।ऽ	१२
२३	यमकम्	।।। ।।	३२

[*] यहाँ क्रमाङ्क और छन्द नाम वृत्तमौक्तिक के अनुसार दिए गए हैं। ऽ चिह्न गुरु अक्षर का सूचक है और । लघु का। अंतिम कोष्ठक मे प्रस्तार भेदो की सख्या दी गई है।

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केतांक
	षडक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६४		
२४	शेषा	SSS SSS	१
२५	तिलका	IIS IIS	२८
२६	विमोहम्	SIS SIS	१९
२७	चतुरंसम्	III ISS	१६
२८	मन्थानम्	SSI SSI	३७
२९.	शंखनारी	ISS ISS	१०
१०	सुमालतिका	ISI ISI	४६
११	तनुमध्या	SSI ISS	१३
१२	दमनकम्	III III	६४
	सप्ताक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १२८		
१३	शीर्षा	SSS SSS S	१
१४	समानिका	SIS ISI S	४३
१५.	सुवासकम्	III ISI I	११२
१६	करहञ्चि	III IIS I	९६
१७	कुमारललिता	ISI IIS S	३०
१८	मधुमती	III III S	६४
१९.	मदलेखा	SSS IIS S	२५
४	कुसुमततिः	III III I	१२८
	अष्टाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २५६		
४१	विद्युन्माला	SSS SSS SS	१
४२	प्रमाणिका	ISI SIS IS	८६
४३	मल्लिका	SIS ISI SI	१७१
४४	तुङ्गा	III III SS	६४
४५	कमलम्	III IIS IS	९६
४६	माणवकक्रीडितकम्	SII SSI IS	१०३
४७	चित्रपदा	SII SII SS	५५
४८	अनुष्टुप्		
४९	बलदम्	III III II	२५६
	नवाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ५१२		
५०	रूपामाला	SSS SSS SSS	१
५१	महालक्ष्मिका	SIS SIS SIS	१४७

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
५२	सारङ्गम्	।।। ।ऽऽ ।।ऽ	२०८
५३	पाइत्तम्	ऽऽऽ ऽ।। ।।ऽ	२४१
५४	कमलम्	।।। ।।। ।।ऽ	२५६
५५	बिम्बम्	।।। ।।ऽ ।ऽऽ	९६
५६	तोमरम्	।।ऽ ।ऽ। ।ऽ।	३६४
५७	भुजगशिशुसृता	।।। ।।। ऽऽऽ	६४
५८	मणिमध्यम्	ऽ।। ऽऽऽ ।।ऽ	१९९
५९	भुजङ्गसङ्गता	।।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ	१७२
६०	सुललितम्	।।। ।।। ।।।	५१२

दशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १०२४

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
६१	गोपाल.	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽ	१
६२.	सयुतम्	।।ऽ ।ऽ। ।ऽ। ऽ	३६४
६३.	चम्पकमाला	ऽ।। ऽऽऽ ।।ऽ ऽ	१९९
६४.	सारवती	ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ	४३९
६५.	सुषमा	ऽऽ। ।ऽऽ ऽ।। ऽ	३९७
६६	अमृतगति	।।। ।ऽ। ।।। ऽ	४९६
६७	मत्ता	ऽऽऽ ऽ।। ।।ऽ ऽ	२४१
६८.	त्वरितगति	।।। ।ऽ। ।।। ऽ	४९६
६९	मनोरमम्	।।। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ	३४४
७०	ललितगति	।।। ।।। ।।। ।	१०२४

एकादशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २०४८

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
७१	मालती	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽ	१
७२	बन्धु	ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽऽ	४३९
७३	सुमुखी	।।। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ	८८०
७४	शालिनी	ऽऽऽ ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ	२८९
७५	वातोर्मी	ऽऽऽ ऽ।। ऽऽ। ऽऽ	३०५
७६	उपजाति	[शालिनी वातोर्मी मिश्रित]	
७७	दमनकम्	।।। ।।। ।।। ।ऽ	१०२४
७८.	चण्डिका	ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ	६८३
७९	सेनिका	।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।	१३६६
८०	इन्द्रवज्रा	ऽऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ	३५७
८१	उपेन्द्रवज्रा	।ऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ	३५८
८२	उपजाति	[इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रा मिश्रित]	

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
८३	रथोद्धता	S I S I I I S I S I S	६९९
८४	स्वागता	S I S I I I S I I S S	४४३
८५	भ्रमरविलसिता	S S S S I I I I I I S	१००९
८६	अनुकूला	S I I S I I I I S S	४८७
८७	मोटनकम्	S S I I S I I S I I S	७७
८८	सुकेसी	S S S I I S I S I S S	३४५
८९	सुभद्रिका	I I I I I I S I S I S	७०४
९०	शकुलम्	I I I I I I I I I I I	२०४८

द्वादशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४०९६

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
९१	आपीड	S S S S S S S S S S S S	१
९२	भुजङ्गप्रयातम्	I S S I S I S S I S S	५८६
९३	लक्ष्मीधरम्	S I S S I S S I S S I S	११७१
९४	तोटकम्	I I S I I S I I S I I S	१७५६
९५	सारङ्गकम्	S S I S S I S S I S S I	२३४१
९६	मौक्तिकदाम	I S I I S I I S I I S I	२९२६
९७	मोदकम्	S I I S I I S I I S I I	३५११
९८	सुन्दरी	I I I S I I S I I S I S	१४६४
९९	प्रमिताक्षरा	I I S I S I I I S I I S	१७७२
१००	चन्द्रवर्त्म	S I S I I I S I I I I S	१९७९
१०१	द्रुतविलम्बितम्	I I I S I I S I I S I S	१४६४
१०२	वंशस्थविला	I S I S S I I S I S I S	१३८२
१०३	इन्द्रवंशा	S S I S S I I S I S I S	१३८१
१०४	उपजाति	[वंशस्थविलेन्द्रवंशा मिश्रित]	
१०५	जलोद्धतगतिः	I S I I I S I S I I I S	१८८६
१०६	वैश्वदेवी	S S S S S S I S S I S S	५७७
१०७	मन्दाकिनी	I I I I I I S I S S I S	१२१६
१०८	कुसुमविचित्रा	I I I S S I I I I S S	९७६
१०९	तामरसम्	I I I I S I I S I I S S	८८
११०	मालती	I I I I S I I S I S S	१३९२
१११	मणिमाला	S S I I S S S S I I S S	७८१
११२	जलधरमाला	S S S S I I I I S S S S	२४९
११३	प्रियम्वदा	I I I S I I I S I S I S	१४
११४	ललिता	S S I S I I I S I S I S	१३९७

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
११५	ललितम्	ऽ।। ऽऽ। ।।। ।।ऽ	२०२३
११६.	कामदत्ता	।।। ।।। ऽ।ऽ ।ऽऽ	७०४
११७	वसन्तचत्वरम्	।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ	१३६६
११८	प्रमुदितवदना	।।। ।।। ऽ।ऽ ऽ।ऽ	१२१६
११९	नवमालिनी	।।। ।ऽ। ऽ।। ।ऽऽ	९४४
१२०	तरलनयनम्	।।। ।।। ।।। ।।।	४०९६

त्रयोदशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ८१९२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१२१	वाराह	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽ	१
१२२	माया	ऽऽऽ ऽऽ। ।ऽऽ ।।ऽ ऽ	१६३३
१२३	तारकम्	।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ऽ	१७५६
१२४.	कन्दम्	।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ ।	४६८२
१२५	पङ्क्तावलि	ऽ।। ।।। ।ऽ। ।ऽ। ।	७०३९
१२६	प्रहर्षिणी	ऽऽऽ ।।। ।ऽ। ऽ।ऽ ऽ	१४०१
१२७	रुचिरा	।ऽ। ऽ।। ।।ऽ ।ऽ। ऽ	२८०६
१२८	चण्डी	।।। ।।। ।।ऽ ।।ऽ ऽ	१७९२
१२९	मञ्जुभाषिणी	।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ।ऽ। ऽ	२७९६
१३०	चन्द्रिका	।।। ।।। ऽऽ। ऽऽ। ऽ	२३६८
१३१	कलहंस	।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ।।ऽ ऽ	१७७२
१३२	मृगेन्द्रमुखम्	।।। ।ऽ। ।ऽ। ऽ।ऽ ऽ	१३९२
१३३	क्षमा	।।। ।।। ऽऽ। ऽ।ऽ ऽ	
१३४	लता	।।। ।।ऽ ।ऽ। ।ऽ। ऽ	२९१२
१३५	चन्द्रलेखम्	।।। ।।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ	११८४
१३६	सुद्युति	।।। ।।ऽ ऽऽ। ऽऽ। ऽ	२३३६
१३७	लक्ष्मी	ऽऽ। ऽ।। ।।ऽ ।ऽ। ऽ	२८०५
१३८	विमलगति	।।। ।।। ।।। ।।। ।	८१९२

चतुर्दशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १६३८४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१३९.	सिंहास्य	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽ	१
१४०.	वसन्ततिलका	ऽऽ। ऽ।। ।ऽ। ।ऽ। ऽऽ	२९३३
१४१.	चक्रम्	ऽ।। ।।। ।।। ।।। ।ऽ	८१९१
१४२	असम्बाधा	ऽऽऽ ऽऽ। ।।। ।।ऽ ऽऽ	२०१७
१४३	अपराजिता	।।। ।।। ऽ।ऽ ।।ऽ ।ऽ	५८२४
१४४	प्रहरणकलिका	।।। ।।। ऽ।। ।।। ।ऽ	८१२८
१४५	वासन्ती	ऽऽऽ ऽऽ। ।।। ऽऽऽ ऽऽ	४८१

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१४६	लोला	SSS IIS SSS SII S S	१ ६७
१४७	नान्दीमुखी	III III SSI SSI S S	२११८
१४८	चक्री	SSS SII III ISS S S	१ ९
१४९.	इन्दुवदनम्	SII ISI IIS III S S	१८२१
१५	सरभी	SSS SII III SSI S S	
१५१	अहिधृतिः	III III SII ISI I S	७०९६
१५२	विमला	III ISI SII ISI I S	७ ८८
१५३	मल्लिका	IIS ISI IIS ISI I S	
१५४	मणिगणम्	III III III III I I	१६३८४

पञ्चदशाक्षर छन्द प्रस्तारभेद ३२७६८

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१५५	लीलाखेल:	SSS SSS SSS SSS SSS	१
१५६	मालिनी	III III SSS ISS ISS	४६७२
१५७	चामरम्	SIS ISI SIS ISI SIS	१ ९२१
१५८	भ्रमरावलिका	IIS IIS IIS IIS IIS	१४ ४४
१५९.	मनोहंसः	IIS ISI ISI SII SIS	११६२८
१६	शरभम्	III III III III IIS	१६३८४
१६१	निशिपालकम्	SII ISI IIS III SIS	१९ ९५
१६२	विपिनतिलकम्	III IIS III SIS SIS	९६६९
१६३	चन्द्रलेखा	SSS SIS SSS ISS ISS	४९२५
१६४	चित्रा	SSS SSS SSS ISS ISS	४१ ९
१६५	केसरम्	III ISI SII ISI SIS	११ ८४
१६६	एला	IIS ISI III III ISS	८१७२
१६७.	प्रिया	III III SSI SII SIS	११५८४
१६८	उत्सवः	SIS III SII SII SIS	११७ ७
१६९.	उडुगणम्	III III III III III	३२७६८

षोडशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६५५३६

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१७	राम	SSI SSS SSS SSS SSS S	१
१७१	पञ्चचामरम्	ISI SIS ISI SIS ISI S	२१ ४६
१७२	नीलम्	SII SII SII SII SII S	९८ ८७
१७३	चञ्चला	SIS ISI SIS ISI SIS I	४३६९१
१७४	मदनललिता	SSS SII III SSS III S	२९११६
१७५	वाणिनी	III ISI SII ISI SIS S	१११८४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२ ६	भ्रमरपदम्	ऽ।। ऽ।ऽ ।।। ।।। ।।। ।।ऽ	११ ९७१
२ ७	शार्दूलललितम्	ऽऽऽ ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ऽऽ। ।।ऽ	१ ११ ५१९
२ ८	सुसमितम्	।।। ।।। ऽऽऽ ऽऽ। ऽ।। ऽ।ऽ	
२ ९	उपवनकुसुमम्	।।। ।।। ।।। ।।। ।।। ।।।	२ ६२ ४४
	एकोनविंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ५,२४ २८८		
२१	नागानन्द	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽ	१
२११	शार्दूलविक्रीडितम्	ऽऽऽ ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ऽऽ। ऽऽ। ऽ	१४९,११७
२१२	चन्द्रम्	।।। ।।। ।।। ।ऽ। ।।। ।।। ।	५,२१ २५४
२१३	धवलम्	।।। ।।। ।।। ।।। ।।। ।।। ऽ	२ ६२ १४४
२१४	शम्भु	।।ऽ ऽऽ। ।ऽऽ ऽ।। ऽऽऽ ऽऽऽ ऽ	३ १७२
२१५	मेघविस्फूर्जिता	।ऽऽ ऽऽऽ ।।। ।।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ	७५,७१४
२१६	छाया	।ऽऽ ऽऽऽ ।।। ।।ऽ ऽऽ। ऽऽ। ऽ	१४६,४४२
२१७	सुरसा	ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ।। ।।। ।ऽऽ ।।। ऽ	२ ३७ ४५७
२१८	फुल्लदाम	ऽऽऽ ऽऽ। ।।। ।।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ	८५ ७४६
२१९	मृदुलकुसुमम्	।।। ।।। ।।। ।।। ।।। ।।। ।	५,२४ २८८
	विंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १० ४८ ५७६		
२१	योगानन्द	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽ	१
२२१	गीतिका	।।ऽ ।ऽ। ।ऽ। ऽ।। ऽ।ऽ ।।ऽ ।ऽ	१ ७२ ७१
२२२	गण्डका	ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।	१,९९ ३१
२२३	शोभा	।ऽऽ ऽऽऽ ।।। ।।। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ	१ २१ ४९
२२४	सुवदना	ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ।। ।।। ।ऽऽ ऽ।। ।ऽ	४ ३६ ८३३
२२५	प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्	।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ	
२२६	शशाङ्कचलितम्	ऽऽ। ऽ।। ।ऽ। ऽ।। ।ऽ। ऽ।। ।ऽ	
२२७	भद्रकम्	ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।ऽ ।।ऽ ।ऽ	
२२८	अनवधिगुणगणम्	।।। ।।। ।।। ।।। ।।। ।।। ।।	१ ४८ ५७६
	एकविंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २० ९७ १५२		
२२९	ब्रह्मानन्द	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ	१
२१	स्रग्धरा	ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ।। ।।। ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ	१ २९९३
२३१	मञ्जरी	ऽ।ऽ ।।। ऽ।ऽ ।।। ऽ।ऽ ।।। ऽ।ऽ	७ ६५,६९०
२३२	नरेन्द्रः	ऽ।। ऽ।ऽ ।।। ।।। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ।	४५ ३१९
२३३	सरसी	।।। ।ऽ। ऽ।। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ऽ ऽ	७ ९९६
२३४	रुचिरा	।।। ।ऽ। ऽ।। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ऽ।ऽ	७ ११६
२३५	निरुपमतिलकम्	।।। ।।। ।।। ।।। ।।। ।।। ।।।	२ ९७ १५२

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या

द्वाविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४१,६४,३०४

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
२३६	विद्यानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२३७	हसी	SSS SSS SSI III III III IIS S	१०,४८,३२१
२३८	मदिरा	SII SII SII SII SII SII SII S	१७,६७,५५६
२३६	मन्द्रकम्	SII SIS III SIS III SIS III S	१६,३१,२२३
२४०	शिखरम्	SII SIS III SIS III SIS III S	१६,३१,२२३
२४१	अच्युतम्	III III III III IIS ISI ISI S	
२४२	मदालसम्	SSI SII ISS ISI IIS SIS III S	१६,१५,५०६
२४३.	तरुवरवत्तम्	III III III III III III III I	४१,६४,३०४

त्रयोविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ८३,८८,६०८

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
२४४	दिव्यानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२४५.	सुन्दरिका	IIS IIS SII IIS SSI ISI ISI IS	३५,६०,०४४
	पद्मावतिका	IIS IIS SII IIS SSI ISI ISI IS	३५,६०,०४४
२४६	अद्रितनया	III ISI SII ISI SII ISI SII IS	३८,६१,४२४
२४७	मालती	SII SII SII SII SII SII SII SS	१७,६७ ५५६
२४८	मल्लिका	ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI IS	३५,६५ ११८
२४६	मत्ताक्रीडम्	SSS SSS SSI III III III III IS	४१,६४,०४६
२५०	कनकवलयम्	III III III III III III III II	८३,८८,६०८

चतुर्विंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १,६७,७७,२१६

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
२५१	रामानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
२५२	दुर्मिलका	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS	७१,६०,२३६
२५३	किरीटम्	SII SII SII SII SII SII SII SII	१,४३,८०,४७१
२५४	तन्वी	SII SSI III IIS SII SII III ISS	३६,५५ ३६७
२५५	माधवी	ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI	१,१६,८३,७२६
२५६	तरलनयनम्	III III III III III III III III	१,६७,७७,२१६

पञ्चविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ३,३५,५४,४३२

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
२५७	कामानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२५८	क्रौञ्चपदा	SII SSS IIS SII III III III III	८१,६७,७६,३८१
२५६	मल्ली	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS S	७१,६०,२३६
२६०	मणिगुणम्	III III III III III III III III	१३,३५,५४,४३२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या

षड्विंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६७१०८८६४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२५१	मौक्तिकमाला	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२५२	भुजङ्गविजृम्भितम्	SSS SSS SSI III III III SIS IIS IS	२३८५४८४९
२५३	अपवाह	SSS III III III III III III IIS SS	८३८८६०१
२५४	मागधी	SII SII SII SII SII SII SII SII SS	१४३८०४७१
२५५	कमलदलम्	III III III III III III III III II	६७१०८८६४

प्रकीर्णक—छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण
१	पिपीलिका	SSS SSS SSI III III III III ISI SII SIS
२	पिपीलिकाकरभः	SSS SSS SSI III III III III III III SIS IIS IS
३	पिपीलिकापणवः	SSS SSS SSI III III III III III III III IIS ISI ISI S
४	पिपीलिकामाला	SSS SSS SSI III III III III III III III III III ISI SII SIS
५	द्वितीयत्रिभंगी	III III III III III III IIS IIS SII SSS IIS S
६	शालूरः	SSI III III III III III III III III IS

दण्डक—छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण
१	चण्डवृष्टिप्रपातः	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
२	प्रचितक	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
३	अर्णः	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
४	सर्वतोभद्र	III III ISS ISS ISS ISS ISS SS IS
५	अशोकपुष्पमञ्जरी	SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS I
६	कुसुमस्तबक	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS
७	मत्तमातङ्ग	SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
८	अनङ्गशेखर	ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI S

अर्धसम-वृत्त

<table>
<tr><th>क्रमांक</th><th>छन्द-नाम</th><th>प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण</th><th>द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण</th></tr>
<tr><td>१</td><td>पुष्पिताग्रा</td><td>||| ||| S|S |SS</td><td>||| |S| |S| S|S S</td></tr>
<tr><td>२</td><td>उपचित्रम्</td><td>||S ||S ||S |S</td><td>S|| S|| S|| SS</td></tr>
<tr><td>३</td><td>वेगवती</td><td>||S ||S ||S S</td><td>S|| S|| S|| SS</td></tr>
<tr><td>४</td><td>हरिणप्लुता</td><td>||S ||S ||S |S</td><td>||| S|| S|| S|S</td></tr>
<tr><td>५.</td><td>अपरवक्त्रम्</td><td>||| ||| S|S SS</td><td>||| |S| |S| S|S</td></tr>
<tr><td>६.</td><td>सुन्दरी</td><td>||S ||S |S| S</td><td>||S S|| S|S |S</td></tr>
<tr><td>७</td><td>भद्रविराट्</td><td>SS| |S| S|S S</td><td>SSS ||S |S| SS</td></tr>
<tr><td>८.</td><td>केतुमती</td><td>||S |S| ||S S</td><td>S|| S|S ||| SS</td></tr>
<tr><td>९</td><td>वाङ्मती</td><td>S|S |S| S|S |S|</td><td>|S| S|S |S| S|S S</td></tr>
<tr><td>१०</td><td>षट्पदावली</td><td>|S| S|S |S| S|S</td><td>S|S |S| S|S |S| S</td></tr>
</table>

विषमवृत्त

<table>
<tr><td>१. उद्गता</td><td>[प्र च][1] ||S |S| ||S |</td><td>[द्वि च.][1] ||| ||S |S| S</td></tr>
<tr><td></td><td>[तृ च.][1] S|| ||| S|| S</td><td>[च च.][1] ||S |S| ||S S</td></tr>
<tr><td>२ उद्गताभेदः</td><td>[प्र च.] ||S |S| ||S |</td><td>[द्वि च] ||| ||S |S| S</td></tr>
<tr><td></td><td>[तृ च.] S|| ||| |S| |S</td><td>[च.च] ||S |S| ||S S</td></tr>
<tr><td>३. सौरभम्</td><td>[प्र च.] ||S |S| ||S |</td><td>[द्वि च] ||| ||S |S| S</td></tr>
<tr><td></td><td>[तृ च] S|S ||| S|| S</td><td>[च च.] ||S |S| ||S
|S| S</td></tr>
<tr><td>४ ललितम्</td><td>[प्र च] ||S |S| ||S |</td><td>[द्वि च] ||| ||S |S| S</td></tr>
<tr><td></td><td>[तृ च] ||| ||| ||S ||S</td><td>[च च.] ||S |S| ||S
|S| S</td></tr>
<tr><td>५ भाव</td><td>[प्र च] SSS SSS</td><td>[द्वि च.] SSS SSS</td></tr>
<tr><td></td><td>[तृ च] SSS SSS</td><td>[च च] S|| S|| S|| S</td></tr>
<tr><td>६ वक्त्रम्</td><td></td><td>[समचरणे] SSS, S |SS S</td></tr>
<tr><td>७ पथ्यावक्त्रम्</td><td></td><td>[समचरणे] |S| (५ ६ ७ वां वर्ण)</td></tr>
</table>

---

[1] [प्र च] प्रथम चरण का लक्षण । [द्वि.च.] द्वितीय चरण का लक्षण
[तृ च] तृतीय चरण का लक्षण । [च च] चतुर्थ चरण का लक्षण

(घ) विरुदावली छन्दों के लक्षण[*]

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
त्रिपा कलिका	१६ मा क	४–चतुष्कल	चतुष्कल की मैत्री
रादिकलिका	२ मा क	४–पञ्चकल	१–२ और ३–४ पंचकलों की मैत्री
मादिकलिका	४८ मा क	समान षट्कल–८	
नादिकलिका	२४ मा क	त्रिकल–८ अर्थात् नगण ८	अनुप्रासयुक्त
पलादिकलिका	२ मा क	४–पंचकल प्रत्येक पंचकल के आदि में गुरु	
मिश्रा कलिका	२७ व क	गुरु-लघु-मिश्र	तिल-तंदुल के समान गुरु और लघु मिश्रित हों।
(१) मध्या कलिका		आदि और अन्त में कलिका और मध्य में पद्य	
(२) मध्या कलिका		आदि और अन्त में मैत्री रहित पद्य और मध्य में कलिका।	
त्रिभङ्गी कलिका	२८ व क	गुरु-लघु-क्रम से २४ वर्ण अन्त में ४ गुरु	६ भंग होते हैं इनमें भंग होने पर भी मैत्री होती है। द्वितीय और चतुर्थ मधुर एवं स्निग्ध होते हैं।
विदग्धत्रिभङ्गी कलिका	२४ व क	स.न,स न स.न भ भ	पूर्वार्ध-भंग और दोनों भगणों की मैत्री

---

*कलिका में प्रत्येक के चार चरण होते हैं। चण्डवृत्तों में प्रत्येक में ६ ८ १० १२ १४ तक कलिका विरुद होते हैं। विरुद तीन होते हैं। धीर, वीर, देव आदि सम्बोधन होते हैं। यहां केवल चण्डवृत्त छन्दों के लक्षण मात्र दिये गये हैं कलिका विरुदादि के नहीं दिये गये हैं क्योंकि वे ऐच्छिक होते हैं।

संकेत—म=मगण य=यगण र=रगण स=सगण त=तगण ज=जगण भ=भगण न=नगण ग=गुरु ल=लघु, षट्कल=६ मात्रा पञ्चकल=५ मात्रा चतुष्कल=४ मात्रा त्रिकल=३ मात्रा च=चतुष्पदी व=वर्ण मा=मात्रा

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
तुरगत्रिभंगी कलिका	२२ व०च०	स भ ल,त भ ल,त.भ ल ग	
पद्म ,, ,,	३२ मा०च०		देखें, प्रथम खंड के चतुर्थ प्रकरण में पद्मावती, त्रिभङ्गी, दण्डकलादिछन्द
हरिणप्लुत ,,	३३व०च०	न य भ,न य भ,न य भ,भ.भ	६ भग हों और दोनों भगणों की मैत्री हो।
नर्त्तक ,, ,,	३४व०च०	न.य.भ,न य भ,न य.भ,न.ज ल	
भुजङ्ग ,, ,,	३०व०च०	म भ ल ल,म भ ल ल,म भ ल.ल,भ भ	दूसरे और चौथे में भग, क्वचित् चौथे में भग न भी हो, दोनों भगणों की मैत्री हो।
वलितात्रिगता ,, ,,	३३व०च०	म न न,म न.न,म न न,भ भ	तृतीय वर्ण में भग हो।
ललिता ,, ,, ,,	२०व०च०	त न.भ,त न भ त न भ,भ.	द्वितीय वर्ण में भग हो।
वरतनु ,, ,, ,,	३६व०च०	न य न ल,न य न ल,न य न ल, भ भ	६ भग होते हैं।
मुग्धा द्विपादिका युग्म-भग्न कलिका	२०व०च०	म त ल,म त ल,भ भ.	युग्मभग
प्रगल्भा ,, ,, ,,	१८व०च०	म त ल,म त ल,ग ग ग ग	
मध्या(१),, ,, ,,	१८व०च०	म भ स म भ भ	
,, (२) ,, ,, ,,	१४व०च०	न ल भ न ज ल	
,, (३) ,, ,, ,,	११व०च०	न न स ल ल	
,, (४) ,, ,, ,,	११व०च०	न ज न ल ल	
शिथिला,, ,, ,,	१८व०च०	म त ल,म त ल,ल ल ल ल	
मधुरा ,, ,, ,	२२व०च०	म भ ल ल,म भ ल ल भ,भ	
तरुणी ,, ,, ,,	२०व०च०	म भ ल ल,म भ ल ल,ग ग ग.ग	
	प्रति चरण-वर्ण		
पुरुषोत्तम चण्डवृत्त	९	स स भ	४, ८ वर्ण श्लिष्ट; ३, ६ वर्ण दीर्घ,
तिलक ,,	१५	न न स न.न	१०वां वर्ण मधुर;
अच्युत ,,	२४	न य न य.न य न य. शेष चरण में—न य न य न य न ज	छठा वर्ण श्लिष्टपर; ४ या ८ पद होते हैं।
वर्द्धित ,,	१३	भ न.ज ज ल	२, ६, १२वां वर्ण श्लिष्ट

पञ्चम परिशिष्ट

सन्दर्भ-ग्रन्थों में प्राप्त वर्णिक-वृत्त[*]

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
		चतुरक्षर-छन्द	
२	क्रीडा	य ग	१०, ६; क्रीडा–१७, वृद्धि –१६
३	समृद्धि	र ग	१०, पुण्य–११, नन्द –१७, वृद्धि १६
४	सुमति	स ग	१०, १६, भ्रमरी–११, दोला–१७, रामा–१७,
५	सोमप्रिया	त ग	१०, धरा–१७, तारा–१६
७	सुमुखी	भ ग	१०, १६, ललिता–११, वसा–१७
८	मृगवधू	न ग	७, १०, १५, सती–१७; मधु–१६; कुसुमिता– २२, तरणिजा–१७
९	मुग्धस्	म ल	१७, गोपाल–१७, वल्ली–१६
१०	वारि	य ल	१७; कर्तृ–१७, सद्म–१६
१२	कारु	स ल	१७; चीर–१७; कवली–१६
१३	तावुरि	त ल	१७; कृष्ण–१७, ऋनु–१६
१४.	ऋजु	ज ल	१७; जपा–१६.
१५	अनृजु	भ ल	१७; निशि–१७, जतु–१६.
		पञ्चाक्षर-छन्द	
२	नाली	य ग ग	१७;
३	प्रीति	र ग ग	१०, १६, सूरिणी–१७.
४	घनपंक्ति	स ग ग	१०, प्रगुण–१७, चतुर्वंशा–१७; सुवती–१६
६.	सती	ज ग ग	१०, १६, शिखा–११, कण्ठी–१७
८	कललि	न ग ग	१७;

---

[*] जिन छन्दों का वृत्तमौक्तिक में समावेश नहीं हुआ है और जो अन्य सन्दर्भ-ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं वे अवशिष्ट छन्द प्रस्तार-क्रम से इस परिशिष्ट मे दिए गए हैं। प्रारम्भ मे प्रस्तारानुक्रम से उस छन्द की प्रस्तार-संख्या दी है, तत्पश्चात् छन्द का नाम और उसके लक्षण दिए हैं। तदनन्तर सन्दर्भ-ग्रन्थ का संकेत और छन्द का नाम-भेद एवं सन्दर्भ-ग्रन्थ का संकेताक दिया है। सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और संकेताक पृष्ठ ४१४ के अनुसार है।

पञ्चम परिशिष्ट

सन्दर्भ-ग्रन्थों में प्राप्त वर्णिक-वृत्त[*]

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
		चतुरक्षर-छन्द	
२	वीडा	य ग	१०, ६; क्रीडा–१७, वृद्धि–१९
३	समृद्धि	र ग	१०, पुण्य–११, नन्द–१७, घर्द्धि १९
४	सुमति	स ग	१०, १९, भ्रमरी–११, दोला–१७, रामा–१७,
५	सोमप्रिया	त ग	१०, धरा–१७, तारा–१९
७	सुमुखी	भ ग	१०, १९, ललिता–११, बला–१७
८	मृगवधू	न ग	७, १०, १५; सती–१७, मधु–१९; कुसुमिता– २२, तरणिजा–१७
९	मुग्धम्	म ल	१७, गोपाल–१७, वल्ली–१९
१०	वारि	य ल	१७; कर्तृ–१७, सद्म–१९
१२	कारु	स ल	१७; चीरु–१७; कदली–१९
१३	तारुरि	त ल	१७; कृष्ण–१७, त्रपु–१९
१४.	ऋजु	ज ल	१७; जपा–१९.
१५	अनृजु	भ ल	१७; निशि–१७, जतु–१९.
		पञ्चाक्षर-छन्द	
२	नाली	य म ग	१७;
३	प्रीति	र ग ग	१०, १९, सूरिणी–१७.
४	घनपवित	स ग ग	१०, प्रगुण–१७, चतुर्वंशा–१७; सुव्रती–१९
६	सती	ज ग ग	१०, १९, शिखा–११, कण्ठी–१७
८	कललि	न ग ग	१७;

---

[*] जिन छन्दों का वृत्तमौक्तिक मे समावेश नहीं हुआ है और जो अन्य सन्दर्भ-ग्रन्थो में प्राप्त होते हैं वे अवशिष्ट छन्द प्रस्तार-क्रम से इस परिशिष्ट मे दिए गए हैं। प्रारम्भ मे प्रस्तारानुक्रम से उस छन्द की प्रस्तार-सख्या दी है, तत्पश्चात् छन्द का नाम और उसके लक्षण दिए हैं। तदनन्तर सन्दर्भ-ग्रन्थ का सकेत और छन्द का नाम-भेद एव सन्दर्भ-ग्रन्थ का सकेताक दिया है। सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और सकेताक पृष्ठ ४१४ के अनुसार है।

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८	सावित्री	म भ ग	१ ; हासिका–१७
९	क्षमा	य भ ग	६ १ ; नदी–१७
११	विधायक:	र भ य	१ वामुरा–११; अनस–१७ भामिनी–२२; धृति–१९
१३	नन्दा	त भ य	६, १ १९, कलिका–१७
१४	भिता	ज भ ग	१७
१५	रति	म स य	१ मन्मथम्–१७ सर्म–१९
१६	शशिमुखी	न भ ग	१ मृगचपला–११ कनकमुखी–११ धृति:–१९ पुष्टु–१७
१७	कुम्भारि	म य स	१७
१८	ध्र:	य ग स	१७
१९	ह्री	र य न	१७
२०	पाक्ति	स य न	१७
२१	बिम्बशिख	स य न	१७
२२	वर्धि	ज ग न	१७
२३	विद्	भ य न	१७
२४	पांशु	न य स	१७
२५	मालीनम्	म भ न	१७
२६	वरीया	य स न	१७
२७	कलिक	र भ न	१७
२८	मतु	स भ न	१७
२९	क्षिप्रम्	त ज न	१७
३१	अयम्	ज ज न	१७; हरम्–१७
३२	भुज	भ भ न	१७; विष्णु–१७

पञ्चाक्षर-छन्द

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	शिखण्डिनी	य ग	१ २ ; पञ्चा–१७
३	भामिनी	र ग	३ १ ; करेणु–१७
४	सुधीमुखी	स ग	१ २ सम्मिता–१७
५	सख	त ग	१७
६	कन्या	ज ग	१७
७	विस्मिता	भ ग	१ सिन्धुरवा–१७
८	गुणवती	न ग	१७
९	सुनन्दा	न ग	१ लक्ष्मी–१७ हरी–१९
११	पिपासी	र ल	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१२	विमला	स य	१०, कमनी-१७
१४.	अरजस्का	ज य	१७
१५.	कामलतिका	भ य	१०; ईति-१७; कामललिता-१६.
१७.	तटी	म र	१०; प्रवोढा-१७.
१८.	कच्छपी	य र	१७.
२०	मृदुकीला	स र	१७.
२१	जला	त र	१०, स्याली-१७.
२२.	वलीमुखी	ज र	१७
२३.	लघुमालिनी	भ र	१०, शुनकम्-१७
२४	निरसिका	न र	१७, मणिरुचि -१६
२५.	मुकुलम्	म स	१०, १६; वीथी-११, निस्का-१७
२६	मङगा	य स	१७
२७.	कर्मदा	र स	१७
२६.	वसुमती	त स	१०, १७
३०	कुही	ज स	१७
३१	सौरभि	भ स	१७.
३२	सरि	न स	१७.
३३.	साहृति	म त	१७.
३४	बिन्दू	य त	१७.
३५	मन्त्रिका	र त	१७
३६.	तुष्टि	स त	१७
३८.	क्षमापालि	ज त	१७
३६.	राढि	भ त	१७
४०	अनिभृतम्	न त	१७
४१	मङ्कुरम्	म ज	१७.
४२.	वृत्तहारि	य ज	१७
४३	आर्भवम्	र ज	१७
४४.	मधुमारकम्	स ज	१७.
४५	हाटकशालि	त ज	१७
४७.	पाकलि	भ ज	१७.
४८	पुटमर्दि	न ज	१७.
४६.	कसरि	म भ	१७
५०	सोमश्रुति	य भ	१७.
५१	सोपधि	र भ	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२२.	सुभद्रा	ज र ग	१०; पुरोहिता-१७.
२३	होडपदा	भ र ग	१७
२४	मनोज्ञा	न र ग	१०; खरफरा-१७.
२६.	मुदिता	य स ग	१०; महनीया-१७
२७.	उद्धता	र स ग	१०, ३, शरगीति-१७; उद्यता-२२.
२८	करभित्	स स ग	१७
२९	भ्रमरमाला	त स ग	१०, ३, १९; स्थूला-१७, वज्रक-२०.
३१	विधुवक्त्रा	भ स ग	१०, रुचिर-१७, मदलेखा-१९
३२	वृत्ति	न स ग	१७
३३.	हिन्दीर	म त ग	१७
३४	ऊषिकम्	य त ग	१७
३५	मुष्टपादा	र त ग	१७
३६	मायाविनी	स त ग	१७
३७	राजराजी	त त ग	१७
३८.	कुठारिका	ज त ग	१७
३९	कल्पमुखी	भ त ग	१७.
४०.	परभृतम्	न त ग	१७
४१	महोन्मुखी	म ज ग	१७
४२	महोद्धता	य ज ग	१७.
४४	विमला	स ज ग	१०; कठोद्गता-१७.
४५	पूर्णा	त ज ग	१७.
४६	वहिर्वलि	ज ज ग	१७.
४७	शारदी	भ ज ग	१०, उन्दरि-१७, घुनी-१९
४८	पुरटि	न ज ग	१७.
४९	सरलम्	म भ ग	१०, १९; वर्करिता-१७
५०	केशवती	य भ ग	१७.
५१	सौरकान्ता	र भ ग	१७
५२	अधिकारी	स भ ग	१७
५३	चूडामणि	त भ ग	१४, निर्वाधिका-१७
५४	महोधिका	ज भ ग	१७.
५५	मौरलिकम्	भ भ ग	१७, कलिका-१० १९, सोपान-११ २२, भोगवती-११.
५६	स्वनकरी	न भ ग	१७
५७	नवसरा	म न ग	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
९३.	सरलाङ्घ्रि	त स ल	१७
९४	विरोही	ज स ल	१७
९५	वरजापि	भ स ल	१७.
९७	सम्पाक	म त ल	१७.
९८	पद्धरि	य त ल	१७,
९९.	गूर्णिका	र त ल	१७
१००	काह्री	स त ल	१७
१०१.	कामोद्धता	त त ल	१७
१०२.	खर्परि	ज त ल	१७.
१०३	शन्तनु	भ त ल	१७; लीला–१७
१०४	मुरजिका	न त ल	१७
१०५	कालम्बी	म ज ल	१७
१०६	उपोहा	य ज ल	१७.
१०७	कार्पिका	र ज ल	१७.
१०८	मुहुरा	स ज ल	१७
१०९	दोषा	त ज ल	१७
११०	उपोदरि	ज ज ल	१७
१११	जासरि	भ ज ल	१७
११३.	भूरिमधु	म भ ल	१७
११४	भूरिवसु	य भ ल	१७
११५	हर्षिणी	र भ ल	१७,
११६	लोलतनु	स भ ल	१७.
११७.	क्रोशान्तिकम्	त भ ल	१७
११८	स्तरधि	ज भ ल	१७
११९	पौरसरि	भ भ ल	१७
१२०	वीरवटु	न भ ल	१७
१२१	श्रमति	म न ल	१७
१२२	श्रहति	य न ल	१७
१२३.	वरशशि	र न ल	१७
१२४	धनधरि	स न ल	१७.
१२५.	मुशाकि	त न ल	१७
१२६.	कुरदि	ज न ल	१७
१२७.	कोशि	भ न ल	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५८	चतुरीहा	ज भ ग ग	१७
५६	वृत्तमुखी	न भ ग ग	१७.
५७	हंसरुतम्	म न ग ग	२, १०, १४, १७
६१.	सन्ध्या	त न ग ग	१७
७४	विहावा	य य ल ग	१७.
७५	अनुष्टुप्	र य ल ग	१०.
८१.	क्षमा	म र ल ग	१६.
८३	हेमरूपम्	र र ल ग	१९.
८४.	शल्लकप्लुतम्	स र ल ग	१७
८५	नाराचिका	त र ल ग	१४, १७, नाराचम्–५, १०; नाराचक–६, १६
८८.	सुमालती	न र ल ग	१०, १६, उपलिनी–१७; कृतवती–१७
९२	मही	स स ल ग	१०; कलिला–१७, करिला–१७
९३	श्यामा	त स ल ग	७
१००	सरघा	स त ल ग	१७
१०४	माण्डवकम्	न त ल ग	१७
१०५	हाठनी	म ज ल ग	१७
१०७	अद्धरा	र ज ल ग	१७; उद्धरा–१७
१०९	विद्या	त ज ल ग	१७; उदया–१७; आनुष्टुव्–१६.
११०	अरालि	ज ज ल ग	१७
११२.	ललितगति	न ज ल ग	१०; अवनि–१७.
११५	कुरुचरी	र भ ल ग	१७
१२०	गजगतिः	न भ ल ग	१५, १७.
१२१	शिखिलिखिता	म न ल ग	१७.
१२५	ईहा	त न ल ग	१७, ईला–१७.
१२७	अरि	भ न ल ग	१७
१२८.	कुसुमम्	न न ल ग	७; हरिपद–१७, द्रुतपदं–१७.
१४०	नागारि	स य ग ल	१७
१४७	लक्ष्मी	र र ग ल	१७
१४८	वलीकेन्दु	स र ग ल	१७
१५०	अमानिका	ज र ग ल	१७
१५२	नखपदा	न र ग ल	१७
१६०	हरित्	न स ग ल	१७
१६५	किष्कु	त त ग ल	१७

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१८	प्रमृतगर्भ	स भ य ल	१७; मृतगर्भ–१७
१८१	प्रमरविल	त भ ग ल	१७
१८२	कुलचारि	ज भ य ल	१७
१६	करम्बि	ज न भ स	१७.
१६६	मृत्तम्	स भ स ल	१७
१६८.	धाराकिरि	ज भ स ल	१७
१६६.	पञ्चारि	भ भ ल ल	१७
२	प्रमीता	न भ ल ल	१७; मीता–१७ प्रतिमीता–१७ प्रतिमीता १७
२ १	मञ्चारि	भ य म ल	१७
२ २	कालुनि	य य ल भ	१७
२ ४	संफुल्लकम्	त य स ल	अभयोस्वामिकृत मम्बाहुरत्नस्तोत्र
२१	माया	य र ल ल	१७; संमाया–१७; संमासा–१७
२१६	पालकिनि	न र ल ल	१७
२२	प्रसना	स त ल भ	१७
२३	प्राक्तलु	ज त ल ल	१७
२३५	मावेदम्	र ज ल स	१७.
२४१	प्रतिमनि	भ न ल भ	१७.
२४४	सुतमधु	स भ ल ल	१७
२४६.	मद	ज म ल ल	१७
२५	जयनम्	य न ल ल	१७
२५१	कुसकम्	र न ल ल	१७
२५२	निस्वम्	स न ल ल	१७.
२५३	सिम्धुक	त न ल ल	१७
२५४	करम्	ज न ल ल	१७; सुरं–१७
२५५	मिरि	भ न ल ल	१७; मिथि–१७

नवाक्षर-छन्द

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२	मैपालोकः	य म म	१७
७.	वरत्नम्	भ भ म	१
१६	मायासारी	न ध म	१७
१५.	कैलासरूपम्	न स म	१७.
२८	तारम्	स त म	१ वरमि–१७ वरमक १७ उवरामक– ७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२६.	वैसार	त स म	१७; वैसारम्-१७.
३०	निर्विन्ध्या	ज स म	१७; निर्वन्ध्या-१७.
३१	कर्मिष्ठा	भ स म	१७, किर्मिष्ठा-१७.
४९	धृतहाला	म भ म	१७
५२	कलहम्	स भ म	१७.
५७	अयनपताका	म न म	१७.
६१	मकरलता	त न म	१०; रम्भा-१७; ६ के अनुसार-'म.न य' लक्षण है
७४	विशल्यम्	य य य	१७; वृहत्यं-१९
९७	अर्धक्षामा	म त य	१७, सुन्दरलेखा-१९
१००	सम्बुद्धि.	स त य	१७.
१०३	शम्बरधारी	भ त य	१७
११२	शशिलेखा	न ज य	१०; शरलीला-१७.
११७	रुचिरा	त भ य	१०
१२१.	कांसीकम्	म न य	१७
१२४	सुगन्धिः	स न य	१७
१२५.	कामा	त न य	१७.
१५२	वृहत्तिका	न र र	५, १०.
१६४	निभालिता	स त र	१७
१६६.	चारुहासिनी	ज त र	१९
१७१	कामिनी	र ज र	१०, तरगवती-११, २०.
१७३	रवोन्मुखी	स ज र	१७
१७४	अवनिजा	ज ज र	१७.
१७५	अवहत्तिका	भ ज र	१७
१७६	हल्लोद्गता	न ज र	१७
१८०	मधुमल्ली	स भ र	१७.
१८२	सहेलिकर	ज भ र	१७
१८३	मदनोद्धुरा	भ भ र	१७, वत्सुकम्-१०, १९
१८४	करशायर	न भ र	१७.
१८७	भद्रिका	र न र	१०, १४, १७, १९.
१९२.	उपच्युतम्	न न र	१०, १९.
२१५.	विषधम्	भ र स	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
८०.	सुराक्षी	न य य ग	१७
८६	कुवलयमाला	म स य ग	३.
६०.	कलापान्तरिता	य स य ग	१७
६६	हारवहा	र त य ग	१७; भारवहा-१७
१००.	विशदच्छाय	स त य ग	१७
११०.	इन्द्र	ज ज य ग	१७, ऐन्द्री-१७.
११२	विपुलभुजा	न ज य ग	१०.
१२१	हीराङ्गी	म न य ग	१७, पणव-२, १०, १८, २०; पणवक-१६; पणला-२२ कुवलयमाला-११,
१४७	हेमहास	र र र ग	१७, बाला-१७.
१७१.	मयूरसारिणी	र ज र ग	२, ३, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १६, २२
१७२	सुखला	स ज र ग	१७
१७३.	नमेरु	त ज र ग	१७, लाजवती-१७.
१६५	कलिका	र म स ग	१० .
१६६	गणदेहा	स म स ग	१७
२०५	मदिराक्षी	त य स ग	१६
२०८.	नरगा	न य स ग	१७.
२१७	उद्धतम्	म स स ग	१०, प्रसरा-१७
२१६	मणिरग	र स स ग	१०, १६; केरम्-१७.
२२०	उदितम्	स स स ग	१७, वितानम्-४
२३६	माला	स ज स ग	१०; प्रमिता-११
२४४	बलधारी	स भ स ग	१७.
२५१.	अचलपक्ति	र न स ग	१७
२५२	असितधारा	स न स ग	१७
२५३	उत्तालम्	त न स ग	१७.
२५४	निरन्तिकम्	ज न स ग	१७
२५५	उपधाय्या	भ न स ग	१७
२५६	तनिमा	न न स ग	१७
२६३	विशालान्तिकम्	त त त ग	१७
२६४	विशालप्रभम्	ज त त ग	१७
२६६	चरपदम्	न त त ग	१७
३००.	उपसकुला	स ज त ग	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४८७	मृगचपला	भ त न य	१०, मौक्तिकमाला–१३.
४९२	धमनिका	स ज भ ग	१७
४९७	हंसी	म भ न ग	१४, १७.
५०५	कुमुदिनी	भ न न ग	१०; कुसुमसमुदिता–११.
५११	कृतमणिता	भ न न ग	१७, मणिता–१७
५१२	निलया	न न न ग	१०; मकरमुखी–१७
६६२	महिमावसायि	स भ र ल	१७.
६६३.	कामचारि	ल भ र ल	१७
६६४.	नेमचारि	ज भ र ल	१७
६६५	हीरलम्बि	भ भ र ल	१७.
६६६.	वनिताविनोदि	न भ र ल	१७
६९६	विरेकि	र न र ल	१७
७२८.	कुकपादि	म र स ल	१७.
७३२	ललितम्	स स स ल	१७.
७४८	रसभूम	स ज स ल	१७
७६३	चारचारणम्	र न स ल	१७.
७६५	सरसमुखी	स न स ल	१७
७६८	ऋतम्	न न स ल	१७
७७५	कीलालम्	भ म त ल	१७.
७८४	कौरलि	न य त ल	१७
७९३	कामनिभा	म स त ल	१७.
८००	विस्रसि	न स त ल	१७
	कान्तिडम्बरम्	र स ज ल	रूपगोस्वामिकृत सुदर्शनादिमोचन स्तोत्र
१०००	चीरनिधि	न न न ल	१७
	हारिहरिणम्	भ स न ल	रूपगोस्वामिकृत वर्षाशरद्विहारचरितम्

एकादशाक्षर-छन्द

५	धाराधिनी	त म म ग ग	१७
१०	भ्रमालीनम्	य य म ग ग	१७.
१३.	मेघध्वनिपूर	त य म ग ग	१७
१५	उद्गतिकरी	भ य म ग ग	१७
२०	अपयोधा	स र म ग ग	१७
२५	अन्तर्वनिता	भ स म ग ग	१७
३०.	प्रफुल्लकदली	ज स म ग ग	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०९	ईहामृगी	त भ त ग ग	१७
३२०	परिमललतितम्	न न त ग ग	१७
	विलासिनी	ज र ज ग ग	२
३४८.	विमला	स स ज ग ग	१७.
३५०	सरोजवनिका	ज स ज ग ग	१७
३५१	श्रमन्दपाद	भ स ज ग ग	१७
३५२.	पञ्चशाखी	न स ज ग ग	१७
३६४.	पट्टुपट्टिका	स ज ज ग ग	१७.
३६५	उपस्थिता	त ज ज ग ग	१७, १९
४००.	श्रुतकीर्ति	न य भ य ग	१७, पतिता–१०, ४, १४, १९; श्री –१९
४१२	वर्णवलाका	स स भ ग ग	१७
४१५	श्रमितशिखण्डी	भ स भ ग ग	१७
४४०.	रोधकम्	न भ भ ग ग	१७
४७२.	मदनमाला	न र न ग ग	१७.
४८०.	श्रशोका	न स न ग ग	१०.
५०५	मात्रा	म न न ग ग	१७.
५०८	सुवृत्ति	स न न ग ग	१७
५१२	वृत्ताङ्गी	न न न ग ग	२२.
५८६	भुजङ्गी	य य य ल ग	१७
६००	जवनशालिनी	न र य ल ग	१७
६०६	सारिणी	ज स य ल ग	२०, सङ्गता–२२.
६०८	प्रसृमरकरा	न स य ल ग	१७.
६२०	सारणी	स ज य ल ग	१०
६४०	मल्लकम्	न न य ल ग	१७
६५०	प्रपातावतारम्	य य र ल ग	१७
६५९.	गह्वरम्	र र र ल ग	१७
६६३	धारयात्रिकम्	भ र र ल ग	१७
६६४.	इन्दिरा	न र र ल ग	१७, १५ टी०, कनकमञ्जरी–रूपगोस्वामिकृत वस्त्रहरण स्तोत्र; भाविनी–१७; भामिनी–१७,
६९२	सीधु	स भ र ल ग	१७, श्रपराजिता–१९.
७००	प्रतारिता	स भ र ल ग	१७

प्रस्तार-संख्या	छंद-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३७२	पिचुलम्	स स ज ग ल	१७.
१४००	कालदर्म	न भ ज ग ल	१७
१५११	सान्द्रपदम्	भ त न ग ल	१७; १५ टी०
१७७७	शेखापीडम्	म भ स ल ल	१७.
२०००.	केलिचरम्	न य न ल ल	१७.

द्वादशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छंद-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३१	भामितभरणम्	भ स म म	१७.
३२	विषमज्वाली	न स म म	१७
६१	शम्पा	त न म म	१७.
६४	मिथुनमाली	न न म म	१७
९१	किंशुकास्तरणम्	र स य म	१७.
९२	रसलीला	स स य म	१७.
९३	विशालाम्भोजाली	त स य म	१७; अम्भाजाली-१७
९४	वीणादण्डम्	ज स य म	१७
९७.	मत्ताली	भ त य म	१७.
१२८	वसनविशाला	न न य म	१७
१९३	लीलारत्नम्	म म स म	१७
२५३	विवरविलसितम्	त न स म	१७
२५६.	शुद्धान्तम्	न न स म	१७
३४८	साक्षी	स स ज म	१७
३६४	स्वरवर्षिणी	स ज ज म	१७.
४४८	धवलकरी	न न भ म	१७
४७६.	लुम्बाक्षी	स स न म	१७; लुब्धाक्षी-१७
५०५	मलयसुरभिः	भ न न म	१७
५२५	वाहिनी	त य म य	२०
५७६.	पुट	न न म य	२, ३, ४, ६, १०, १३, १७, १८, १९, २२, पुटा-२०
५७८.	आविदेवी	य म य य	१७.
६०४.	समयप्रहिता	स स य य	१७
६०८	मिहिरा	न स य य	१७
६१४	कलवल्लीविहङ्ग	ज त य य	१७.
६६२	वसुधारा	ज र र य	१७; वसधारा-१७.
६८८	वर्लोजिता	न ज र य	१७, १९; अचलमर्चिका-१७.

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ संकेताङ्क
५८९	पुण्डरीकम्	म भ र य	१७
५९२	वधिरा	स भ र य	१७
५९५	वलभी	भ भ र य	१७
७११	केकीरवम्	स य स य	१ ; महेन्द्रबाला–११ ; मिथिला–१९
७१३	कोल	ज स स य	१
७१७	लीलालर्क	म त स य	१७
७४१	वनितावलोक	त त स य	१७
७४२	कुमुदिनीविकास	ज त स य	१७
७५१	वसन्तहासः	म भ स य	१७
७५७	श्रुति	त भ स य	१९
७५८	स्मृति	ज भ स य	१९
७८१	सितसमणिमाला	भ य त य	१७ ; स्वितमणिमाला–१७
७८४	विद्रुमलोला	न य त य	१७
८१७	सुखशैलम्	भ भ त य	१७
८२	करमाला	स भ त य	१७
८३२	विनयपरिणया	न न त य	१७
८६५	कासारकान्ता	न त ज य	१७
८७७	माया	त ज ज य	१७
८७८	परिलेखा	ज ज ज य	१७ नारी–१७
८७९	वरभा	भ ज ज य	१७
८८१	कुम्भोष्मी	भ भ ज य	१७
८८४	सारमेया	स भ ज य	१७
८८५	गौरामितकम्	त भ ज य	१७
८८८	कलहंसा	न भ ज य	१ १९ सुतपदम्–१७ सुतपदा–४ ११ १९ मुकरम्–११
८९१	भक्तिपदम्	र न ज य	१७
८९२	परितोषा	स न ज य	१७
८९३	ध्वनितकपदम्	त न ज य	१५
८९४	उपवानम्	ज न ज य	१७
८९५	पथिकान्ता	भ न ज य	१७
९७१	कुमुदिनी	र य न य	१ ; कुमुदविभा–१ तथा ३ के अनुसार न य र य लक्षण भी है।
९९१	धनितमदना	ज त न य	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१६	द्रुतपदम्	न भ न य	१४
१०२१	विरतिमहती	त न न य	१७.
१०८०.	ततम्	न न म र	२, १०, १८, ललितम्–१७, १४; गौरी–१७.
११४२	गलितनाला	ज भ य र	१७.
११६२	सरोजावली	य य र र	१७.
११७६	मेघावली	न र र र	१०; वसन्त.–११.
११९९	विप्लुतशिखा	भ ज र र	१७.
१२००	विशिखलता	न ज र र	१७
१२३६	सुतलम्	स र स र	१७
१३६५	अन्तर्विकासवासक	त र ज र	१७
१३७१	परिपुङ्खिता	र स ज र	१७
१३७६	प्रसृमरमरालिका	न स ज र	१७
१३९०	विधारिता	ज ज ज र	१७
१३९१	पिकालिका	भ ज ज र	१७; पिधायिनी–१७
१४०४.	विरला	स न ज र	१७; वीरला–१७.
१४०७	अविरलरतिका	भ न ज र	१७.
१४६०	राधिका	स भ भ र	१७.
१४७२	उज्ज्वला	न न भ र	१०, १३, १७; चपलनेत्रा–११; चलनेत्रिका १८
१५१५	विपुलपालिका	र ज न र	१७
१५२४	उपलेखा	स भ न र	१७
१५२६	भसलविनोदिता	ज भ न र	१७.
१५२७.	विरतप्रभा	भ भ न र	१७.
१५३१	मुकुलितकलिकावलि	र न न र	१७.
१६७६	अतिवासिता	स य र स	१७
१६९१	भुजङ्गजुषी	र स र स	१७
१६९५	अर्जितफलिका	भ स र स	१७.
१७०३	ललना	भ त न स	१४.
१७२८.	ह्री	न न न स	१०.
१७३५	ललना	भ म स स	१७; १५ टी०
१७३८	कुरङ्गावतार	य य स स	१७.
१७७४	विकत्थनम्	ज ज स स	१७
१७७५	नीलगिरिका	भ ज स स	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	क्ष्मा	न न म र ग	१०
१,१५४.	चञ्चरीकावल	य म र र ग	१७, १४; चञ्चरी–१०, चन्द्रिका–१६.
१,१६२	दर्पमाला	य य र र ग	१७; दर्भमाला–१७
१,१६५	भाजनशीला	त य र र ग	१७.
१,१७१.	श्रद्धरान्ता	र र र र ग	१७.
१,२०६	श्रानता	म न र र ग	१७.
१,२१६	प्रमोद.	न न र र ग	१७, चन्द्रिका-१०
	कौसुम्भ	म त स र ग	१०
१,३६८	सुकर्णपूरम्	न र ज र ग	१७
१,३७२	जगत्समानिका	स स ज र ग	१७.
१,३६०.	श्रतिरह्	ज ज ज र ग	१७
१,४६१	माणविकाविकाश	त भ भ र ग	१७.
१,४६६	कीरलेखा	न र न र ग	१७.
१,६३६	श्राननमूलम्	भ त य स ग	१७.
१,७५३	लोध्रशिखा	म स स स ग	१७
	उपस्थितम्	ज स त स ग	१३
	गौरी	न न त स ग	१०, २ के अनुसार 'न न न स ग' लक्षण है।
१,८६६	शलभलोला	य य ज स ग	१७
१,८८१	पकजधारिणी	म स ज स ग	१७.
१ ८८४	कुबेरकटिका	स स ज स ग	१७
१,८८६	रुचिवर्णा	ज स ज स ग	१७, साला–१७.
१,८८७	सयूखसरणि	भ स ज स ग	१७
१,६८४.	विधुरवितानम्	न न भ स ग	१७.
	मदललिता	न ज न स ग	१०, १६
२,३४१	पारावत	त त त त ग	१७
२,३४२	प्रवाहिका	ज त त त ग	१७.
२,३४३	स्विन्नशरीरम्	भ त त त ग	१७.
२,३४४	उर्वशी	न त त त ग	१०, परिवृढम्–१७; कौमुदी–१६
२,३५१.	वामवदना	भ ज त त ग	१७.
२,३५२.	किरात	न ज त त ग	१७
	विद्युत्	न न त त ग	१४, कुटिलगति – १४
२,३६६	भसलमदम्	भ स ज त ग	१७, भसलपदम्–१७.
२,४००	कठिनी	न स ज त ग	१७.

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	गणक्रम	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४०१	बुद्बुदमाला	त त ज त ग	१७
२,४२१	मर्मस्फुरम्	त म ज त ग	१७
२७०६	पुष्पदन्ती	त र र ज ग	१७; निस्तुषा–१७
२,७१	मधुपमण्डनम्	ज र र ज ग	१७
२,७११	कमलापतिप्रभा	र ज र ज ग	१७
२,७५२	अशोकपुष्पकम्	भ न र ज ग	१७; अशोकम्–१७
२७६२	करपल्लवोद्‌गता	म य स ज ग	१७
२७६३	सान्द्रपदा	र य स ज ग	१७
२७६४	सुवक्त्रम्	स य स ज ग	१ मञ्जुहासिनी–१० मणि-कुण्डलम्–११
२७६	मञ्जुभाषिणी	ज त स ज ग	१ मंजुहासिनी–१४
२७६५	मञ्जुमालती	र ज स ज स	१७; मञ्जुभाषिणी–११
२८०८	विरोधिनी	न भ स ज ग	१७
२८१६	ललितम्	न न स ज ग	११
२१ ७	चन्द्रहासकरा	र स ज ज ग	१७
२,१ ८	कुतलतन्विनी	त स ज ज ग	१७
२,१ ९	कनककेतकी	त स ज ज ग	१७
२११	मत्तवारिता	ज स ज ज ग	१७
२११२	अमितगमालिका	भ स ज ज ग	१७
२११८	मापविका	ज त ज ज ग	१७
२१२१	पुष्पसारिका	ज ज ज ज ग	१७ मधुसारिका–१७
२१११	प्रमोदलतिका	स भ ज ज ग	१७; मधुकम्–१
२१३६	सारसमावलि	न भ ज ज ग	१७
२१४१	पर्यवितरतिका	ज न ज ज ग	१७
११८२	चपलाहास	ज त भ ज ग	१७
१ ४६	कलमालिका	ज त न ज ग	१७
१५०७	चञ्चलतालीला	त य स भ ग	१७
११६	विरता	न स त भ ग	१७
१४२१	प्रभानलिका	भ त ज भ ग	१७
१५११	कर्पट	म भ ज भ ग	१७; मन्द्रदर्पि–११
१५४१	नवलीलता	भ र न भ ग	१७
१७१६	चन्द्रोद्गतमुखी	न र र भ ग	१७
१७३१	प्रबोधललिता	र न र भ ग	१७
१७८८	कोमलकलकलिका	भ य त भ ग	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३,८३५	परगति	र न स न ग	१७.
३,८६२	अभिरामा	स भ त न ग	१७.
३,६६४.	उपसरसी	स न ज न ग	१७
४,०४८	मदनजवनिका	म य न न ग	१७
४,०६०	वरिवशिता	स स न न ग	१७, परिवशिता–१७
४,०६३	अर्धकुसुमिता	भ स न न ग	१७
४,०८४	विनताक्षी	स भ न न ग	१७; वनिताक्षी–१७
४,०८५	नरावलि.	त भ न न ग	१७, निरावलि–१७
४,०८६.	अभीरुका	ज भ न न ग	१७
४,०८७	कतकिता	भ भ न न ग	१७
४,०६६	त्वरितगति	न न न न ग	१०, हरवनिता–१७, उपनमिता–१७.
४,४६०.	सुखकारिका	स ज ज भ ल	१७
५,८१३.	अट्टहासिनी	त भ र स ल	१७
	अङ्करुचि	भ भ भ भ ल	१०.
७,८०७.	पङ्कावलि	भ न य न ल	१७
८,०००	अशनि	न न त न ल	१७.

चतुर्दशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२०५.	वशोत्तसा	त य स भ ग ग	१७
६६१.	कालध्वानम्	म म न य ग ग	१७, कालध्वान्तम्–१७.
१,०२१.	पारावार.	त न न य ग ग	१७.
१,२६३	प्रपन्नपानीयम्	त य त र ग ग	१७
१,२६६	अनिन्दगुर्विन्दु	न य त र ग ग	१७; गुर्विन्दु–१७, पूर्वेन्दु–१७.
१,५३७.	घोरध्वानम्	म म म स ग ग	१७.
१,७४४	ललितपताका	न य स स ग ग	१७
२,०२२	सम्बोधा	ज त न स ग ग	१७
२,०६५	विन्ध्यारूढम्	म र म त ग ग	१७, वन्ध्यारूढम्–१७
२,३२१	लक्ष्मी	म र त त ग ग	५, १०, चन्द्रशाला–१६, विम्बालक्ष्यम्–१७
२,३२२	दृप्तदेहा	य र त त ग ग	१७.
२,३२३	बभ्रु लक्ष्मी	र र त त ग ग	१७
२,३३२	सरमासरणि	स स त त ग ग	१७
२,३३५.	पुष्पशकटिका	भ स त त ग ग	१६, लक्ष्मी–१६
२३३७.	निर्यत्पारावार	म त त त ग ग	१७

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२,३११	कन्याकान्ता	र त त त य य	१७
२,१४४	परीवाहः	न त त त ग य	१७
	चन्द्रमल्लिकितम्	न म म त ग य	१ ; शरभा-११
२,६८७	वाटिकाविकाश	भ म य ज ग ग	१७ वाटिकाविकाश—१७; वाटिका-
२,७११	मर्कटीपा	र ज र ज ग य	१७
२,७४	मदालसाता	स म र ज य य	१७.
२,८ ४	चंद्रामृतम्	स म स ज य य	१७ सुगन्धा—११
२,८०२	केलाम्बलम्	स म स ज य ग	१७; केलाम्बलम्—१७ केलान्तरम् १७
२ ८ ६	कुसुम्भिनी	ज म स ज ग य	१७
२ ८ ८	बिसम्बनीया	न म स ज य य	१७
२,९१९	मनस्विनामा	न न स ज न य	१७
	नदी	न न त ज ग ग	१४
	कुमारी	न ज म ज म य	१४
	हृतमालम्	त ज म म न य	१७.
३,२८७	सारवचनाः	त य स भ ग य	१७
३,३११	परिमाही	म म स भ म म	१७
३,४१९	रतिरेखा	त य भ भ ग य	१७.
३,४८४	मानसा	स स म भ ग य	१७.
३,५११	भाद्रमुखी	भ य म भ न य	१७
३,५१५	ललना	र न भ भ ग य	१०; लता—११ मयलता—१९.
३,८६२	प्रतिमादर्शिनम्	स भ त न म य	१७
	राजरमणीय	ज स र न य म	१ २ ; रूपगोस्वामिकृत वत्सचार नादिस्तोत्र में 'प्रफुल्ल कुसुमाली' है।
	वरसुन्दरी	भ ज स न ग ग	१४
	सुचित्रम्	त र न न न म	१४
४ ९	ऊर्ध्वचित्रम्	म म म न न न	१ १९ ऊर्जितम्—१७
	ज्योत्स्ना	म र म य स ग	५, १ ; ज्योत्स्निका—५
४,६०२	करिमकरभुजा	न न य ज न न	१ ; कामदा—१९
४,६८२	प्रपात	म य य य न न	१७.
४,७ ४	जलदरसिता	न त य ज न न	१७
४,८४४	कम्बा	स ज स ज न य	१७; अर्चिता—११
५,१६७	चन्द्रकीलिता	र र र र न ग	१७
५,४११	भुजगपरा	र ज त र न य	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५,४५६	कलाधरः	र र ज र ल ग	१७
५,४६२	कुडङ्गिका	ज र ज र ल ग	१७
	सुकेसरम्	न र न र ल ग	१०, १४.
	सुदर्शना	स ज न र ल ग	१६.
५,६६२	वितानिता	न म न र ल ग	१७
	सिंह.	न म र स ल ग	१०
	जया	म र र स ल ग	५, १०
५,८१३	अलकालिका	त भ र स ल ग	१७; अलिकालका–१७.
५,८१५.	दर्दुरक	भ भ र स ल ग	१०, १६
५,८१६	गगनोद्गता	र न र स ल ग	१७.
५,८५२	विनन्दिनी	स स स स ल ग	१७.
६,१७२	भूरिशिखा	स स म त ल ग	१७.
६,३६४	क्रीडायतनम्	स स स त ल ग	१७; क्रीडावसथम्–१७
६,५४१.	नासाभरणम्	त य भ त ल ग	१७
६,५८३	कर्णिकार·	भ भ भ त ल ग	१७
७,०३२	विपाकवती	न भ ज ज ल ग	१७
७,०८६	काकिणिका	ज ज भ ज ल ग	१७
७,०८७	कारविणी	भ ज भ ज ल ग	१७.
७,३१५.	कूर्वलललितम्	र र र भ ल ग	१७
७,५३२	कलहेतिका	स ज ज भ ल ग	१७
७,५३५	अञ्चलवती	भ ज ज भ ल ग	१७
८,०२७	गगनगतिका	र स ज न ल ग	१७
८,०८१	निर्मुक्तमाला	म र भ न ल ग	१७
६,३६३	कामशाला	र र र र ग ल	१७
६,६७५	उत्सर्ग	भ भ स स ग ल	१७
११,६२८	उपकारिका	स ज ज भ ग ल	१७
११,६३१	हेममिहिका	भ ज ज भ ग ल	१७
११,६३२.	हेति.	न ज ज भ ग ल	१७
१४,०४४.	मधुपालि	स स स स ल ल	१७
१६,०००.	वेशम्भारि	न न य न ल ल	१७.

पञ्चदशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३.	वप्रमाली	त य म म म	१७.
१६	स्फोटकीडम्	न य म म म	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२३,१३१	ऊहिनी	र स य ज ज	१७.
२३,२६४	मितसविय	न स स ज ज	१७.

षोडशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१,०२४	माल्योपस्यम्	न न न य म म ग	१७.
४,०९६.	कल्पाहारो	न न न न म ग	१७.
	वेल्लिता	स स स त म ग	१०, २०.
५,५३६.	प्रतीपवल्ली	स स भ र य ग	१७
७,१५६	प्रारभटी	भ भ न ज य ग	१७
९,२८०	वक्रावलोक	न न म र र ग	१७
	सुरतललिता	म न स त र ग	१०.
	चित्रम्	र ज र ज र ग	१०.
१० १९२	अभिधात्री	स स स ज र ग	१७
१३,१०८	अनिलोद्दा	स भ त य स ग	१७.
	कान्तम्	न य न म स ग	१६.
१३,३०९	भोगावलि	त न न य स ग	१७
१४,०४४.	कामुकी	स स स स स ग	१०; सोमडकम्--११, कलधौत-पदम्--१७
	ललितपदम्	न न न ज स ग	१०, कमलदलम्--१६.
१५,३७६	चलिवदनम्	न य म भ स ग	१७
१५,५६५	सूतशिखा	त य स भ स ग	१७
१५,५८०	परिखायतनम्	स स स भ स ग	१७; परिखापतन--१७
१५,६०१	मालावलयम्	म भ स भ स ग	१७
	शरमाला	भ भ भ भ स ग	१०, स्मरशरमाला--१६
१६,३६६	भीमावर्त्त	म भ न न स ग	१७
१६,३८४	शिशुभरणम्	न न न न स ग	१७.
	कोमललता	म त स त त ग	१०, २०.
२३,२६४.	तरधारिका	न स स ज ज ग	१७
	मञ्जुलमञ्जना	न भ ज ज ज ग	१०, १६.
२५,५५२.	कमलपरम्	न य न य भ ग	१७
२७,८२४	मणिकल्पलता	न ज र भ भ ग	९, १०, १४; त्रोटकम्--१७; चिन्तामणि--१६; इन्दुमुखी--१६
२८,६७२	कलहकरम्	न न न न भ ग	१७
	प्रमुदिता	भ र न र न ग	१०.

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६६,३६२	कर्णस्फोटम्	न य त न म ग ल	१७
७४,८९९	प्रतीहार	र र र र र ग ल	१७
७५,७१४	कान्तारम्	य म न स र ग ल	१७
८१,१४०	फल्गु	स भ स भ स ग ल	१७
	ललितभृङ्ग	भ स न ज न ग ल	रूपगोस्वामिकृत रासक्रीडास्तोत्र

अष्टादशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३१,४५०.	परामोद.	य स स ज न स	१७
३२,२३०.	विलुलितवनमाला	न न भ न न भ	१७
	अनङ्गलेखा	न स म म य य	५, १०
	चन्द्रमाला	न न म म य य	५, १०
३७,४४०	नीलशार्दूलम्	न न म य य य	१७; नीलशालूर-१७, नील-मालूरम्-१७
	मन्दारमाला	स त न य य य	१९
४४,०२५	सत्केतु	म न न ज र य	१७
	पङ्कजवक्त्रा	न न स स त य	१०, पङ्कजमुक्ता-१९.
	भङ्गि	भ भ भ भ न य	१०; विच्छित्तिः-११.
	काञ्ची	म र भ य र र	१०; वाचालकाञ्ची-११, २०
	केसरम्	म भ न य र र	५, १०, १४
७४,८९९	सिन्धुसौवीरम्	र र र र र र	१७
	निशा	न न र र र र	१०, तारका-११, मञ्जु-मालिका-१४
७७,५०४	पर्विणी	न न र न न र	१७
७७,८०९	क्रोडक्रोडम्	म भ न न र र	१७
	बुद्बुदम्	स ज स ज त र	१०
८६,००८	वसुपदमञ्जरी	न ज भ ज ज र	१७
	हरिणीपदम्	न स म त भ र	५, १०
९३,०१७	हरिणप्लुतम्	म स ज ज भ र	१४, १७
	कुरङ्गिका	म त न ज भ र	५, १०
	चलम्	म म न ज भ र	१०, १४; अचलम्-५.
९५,७०४	षट्पदेरितम्	न र न र न र	१७
९६,०९४	पार्थिवम्	ज स ज स न र	१७
	गुच्छकभेद	न न न न न र	रूपगोस्वामिकृत-अरिष्टवधस्तोत्र

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१ १२,१४८	परिपोषकम्	स स स स स स	१७
	क्रीडा	य म म स स स	१ ; सुधा–१४; मुक्तामाला–१४ १७
	सुरभि	स न ज न न स	१ ११
	मणिमाला	य य म म य स	१ ११
१ ९९ १११	मधमति	म भ भ म भ स	११
१ ४१ ७१७	प्रचण्डितराजापि	त त त त त त	१७; मद्यान्तरानापि–१७
१ ४६,७६८	मत्तङ्गपाद	ज त त त त त	१७
२ २४ ११२	हीरम्हारभरम्	म म म म म म	१७
२,४९ ४११	हंसी	त न त न त न	१७.

एकोनविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२० ४११	मिश्रलीला	न य म म ज म ग	१७
३१ २९५	विद्युन्निभृतम्	म म न त न म ग	१७
४८ १८९	माराभिसरणम्	त न न म स य ग	१७
७४ ८११	लोलालोलम्बलीलम्	र र र र र र ग	१७
	विस्मिता	य म न स र र ग	१४
	पुष्पकम्	य म न न र र ग	१
	मापवीसता	म र म त स ज ग	१ २
	रतिलीला	ज स ज स ज स ग	१ ११
	तरवीणलेखा	स स स स स स ग	१ १
११ १४९.	किरणकीर्ति	त ज त भ न स ग	१७
	चञ्चितम्	म त न स त त ग	१० चन्द्रबिम्बम्–११ बिम्बं १४ विचितम्–१४
१ ६६,४८१	छिन्नीपुरोज्जृम्भित	म स ज न ज त ग	१७
१ ७४ ७११	कलापदीपकम्	र ज र ज र ज ग	१७.
१ ७४ ७८४	प्रपन्नचामरम्	न न र ज र ज ग	१७; प्रपञ्चकम्–१७
	पञ्चचामरं	न न त ज र ज ग	१४
१ ७८ ११९.	कम्पलतापताकिनी	भ न न त स ज ग	१७
	मकरन्दिका	य म न स ज ज ग	५, १ १४
	मणिमञ्जरी	य भ न य ज ज ग	१४
	तरलम्	न भ र स ज ज ग	१ ११
	ऊर्जितम्	र स स स ज ज ग	१ ; शार्ङ्गि–११
१ ९२,११९	निर्मलितोत्पला	न न र न न ज ग	१७
	वायुवेगा	भ त ज ज न ज ग	१० १२

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१,६६ ६२१	ग्रावास्तरणम्	म भ स भ म भ ग	१७
	समुद्रलता	ज स ज स त भ ग	१४
२,४१,३३६	टङ्कणम्	र न र न र न ग	१७

विंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५२,४६५	वाणीवाण	म भ स भ त य ग ग	१७
१,२६,०३१	भेकालोक	भ म म त न स ग ग	१७.
	चित्रमाला	म र भ न त त ग ग	५, १०; सुप्रभा–७ ११.
१,५१,४१३.	विष्वग्वितानम्	त भ ज न त त ग ग	१७
१,५१,४८६	सूरिशोभा	म म न न त त ग ग	१७
१,६१,२४०.	सलक्ष्यलीला	न र न र न त ग ग	१७.
१,६३,६८८.	भारावतार	न त ज न न त ग ग	१७; हारावतार.–१७
२,२४,६६५	वीरविमानम्	भ म भ म भ भ ग ग	१७.
२,६८,६७६	मत्तेभविक्रीडितम्	स भ र न म य ल ग	१०, १७, १६
	रत्नमाला	म न स न म य ल ग	१०.
२,६६,५६४.	श्रवन्ध्योपचार	य य य य य य ल ग	१७.
३,५५,७६६	कामलता	भ र न भ भ र ल ग	१०; उत्पलमालिका–११, १७, १६.
	दीपिकाशिखा	भ न य न न र ल ग	१०, २०
	मुद्रा	न भ भ भ स स ल ग	१०, १६, उज्ज्वलम्–११, १६,
	पुटभेदकम्	र स स स स स ल ग	१६
५,०७,६५५	सौरभशोभासार.	भ म त न स न ल ग	१७

एकविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८१,६२१	अशोकलोक	म म म म त र म	१७, अशोकलोकालोक –१७
	ललितगति	न न न य य र म	१६
८६,०८०.	मन्दाक्षमन्दरम्	न न म म ज र म	१७.
१,६१,८२७	तल्पकतल्लजम्	भ भ भ भ भ ज म	१७.
२,६६,५६४.	विद्युद्वाली	य य य य य य य	१७.
५,६७,६०५	दूरावलोक	म र भ न य र र	१७.
५,६६,५०८.	शरकाण्डप्रकाण्डम्	स र न र र र र	१७
६,१६,६६२.	कलमतल्लिका	न र न र न र र	१७
	ललितविक्रम	भ र न र न र र	१०, २०
	घनमञ्जरी	न ज ज ज ज भ र	१०, १६

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	कमापतिः	त र म न ज भ र	१० २
	पद्मसद्म	र स न ज भ भ र	१६
८,६८,७८	प्रतिमा	स स स स स स स	१७ सवैया–१७
६ ११२	कमलाक्षिता	न य म भ स स स	१७
६,१६ २४	ललितललाम	न ज त त त ज स	१७
	मत्तक्रीडा	म म त न न न स	१
	तन्वनप्रकृतिः	र ज त म न न स	१
१७ १७ ५९६	तडिदम्बरम्	म म म म म म म	१७; सवैया–१७

द्वाविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२ २६२१	बालकक्रीडा	म म त त य भ म य	१७
३ ११ ७७६	सुतमुखम्	न न न न म र य म	१७
५,६ ११३	भीमाभोगः	म त त म म र र म	१७
५ ६८६ २	वीरलीलायना	य य य य र र र ज	१७
५ ६६ १८५	कन्दुकलावणापी	म र र र र र र य	१७
५,६६ १८७	कन्दुकलापः	र र र र र र र य	१७
	महाराभप	स त त न स र र य	१ १९
८,१७ ११८	मर्कटमाला	म त न त न म त य	१७
८ ७६,४४१	मत्तानिस्वरणम्	म स भ न ज र स य	१७
८,६७ ७८	यममानम्	स स स स स स स य	१७
	दीपार्चिः	म स ज स ज स ज य	१ २
	मदनतापकः	न भ ज भ ज भ ज य	१९
१५,७ ४८५	भोगावली	त भ र स न न ज य	१७
११ ११ ६	स्वर्णाभरणम्	स स त स न य म य	१७
१५,७७,६११	निष्कलकण्ठी	भ म स त य स म न	१७
१६,१४ १७	मुकुलकुमेलतम्	त भ र र स र न य	१७
	लालित्यम्	म त र स त ज न य	१४
	वरतनुः	म त य न न न न न	१
२ ६७ १६२	प्रचलविरतिः	न न न न न न ज य	१७
११ २४ ५८८	वनवासिनी	स ज ज भ र न त न	१७

त्रयोविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८ ४६,१७६	परिवासीयम्	न न भ त ज ज त न न	१७
१७,२९ ४७६	विलासवासः	म स ज न ज ज भ न म	१७; सुनाम–१७; विलासः १७

प्रस्तार-संख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१७,८८,१०४.	मन्यरायनम्	न र न न भ भ भ ग ग	१७; मन्थरं–१७.
१८,३१ ६०३	पुलकाञ्चितम्	भ स न य न न भ ग ज	१७.
२०,८६,४४७	इन्द्रविमानम्	भ त न म भ न न ग ग	१७
	वृन्दारकम्	ज स ज स य य य ल ग	१०, २०.
२८,१७,४०१	विपुलायितम्	म न ज भ न ज र ल ग	१७.
	चित्रकम्	र न र न र न र ल ग	६, १०, १६
३२,७०,१४५	पारावारान्तस्यम्	म म म स भ स त ल ग	१७; पारावारान्त.–१७
३३,६४,८०१	रामावद्धम्	म भ स भ त न त ल ग	१७
३५,२८,५४२	विलम्बललितम्	ज स ज स ज स ज ल ग	१७, बिलम्–१७
३५,६५,११७	शङ्ख	त ज ज ज ज ज ज ल ग	१०, १६
३५,६५,१२०	हंसगतिः	न ज ज ज ज ज ज ल ग	१०, १६; महातरुणीदयितम्-११, १६; श्रवणाभरण–१७; विराजितम्–१७.
३६,४३,८७६	गोत्रगरीय	भ त न त य न ज ल ग	१७
	चपलगति	भ म स भ न न न ल ग	१०
४१,६४,३०४	भ्रमरचमरी	न न न न न न न ल ग	१७.
५०,४५,३७५	सभृतशरचि	भ न य भ न य स ग ल	१७
५६,६१,८६३	चकोर	भ भ भ भ भ भ भ ग ल	१७

चतुर्विंशाक्षर छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६,८८,२६६.	वंशलोन्नता	र ज र म म ज र म	१७.
१०.४६,२६३	धौरेयम्	भ भ स स न न स म	१७
२३,६६,७४६	भुजङ्ग	य य य य य य य य	१७; महाभुजङ्ग –१७; सुघाय १७
३१,०२,६३५.	भासमानबिम्बम्	र ज भ स ज भ स य	१७; मानबिम्ब–१७, भासमान–१७.
३५,६५,१२०.	समाहितम्	न ज ज ज ज ज ज य	१७
३६,३८,२७२	विगाहितगेहम्	म न न य म न ज य	१७, गाहितगेह–१७; गाहितदेहम्–१७.
३६,५३,११३.	अधीरकरीरम्	म न न भ स न ज य	१७
४१,५६,८५५	अर्दितम्	भ म भ भ भ भ न य	१७; नर्दितम्–१७
४१,६०,३३५.	पार्षतसरणम्	भ न य म न न न य	१७
	ललितलता	न न भ न ज न न य	१०, १६
४१,६३,४७६	कोकपदम्	भ म स भ न न न य	१७, हसपदम्–१६.

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
		षड्विंशाक्षर-छन्द	
३३,६६,१६६.	तनुकिलकिञ्चितम	म म म न ज न त य ग ग	१७
३६,६४,५७६	विनयविलास'	न य न य न य न य ग ग	१७
९५,११,४९७	विश्वविश्वास.	म य य य र र त त ग ग	१७
९५,३४,६६१	अशोकानोकहम्	म भ न भ न र स त ग ग	१७
९५,८७,०६१	आभासमानम्	य य य य त स त त ग ग	१७.
९५,८७,०६५	वीरविक्रान्त.	म न ज त स स त त ग ग	१७.
१,११,८४,८११.	विकुण्ठकण्ठ	र ज र ज र ज र ज ग ग	१७
१,१२,०२,८१६.	चारुगति	न न स म न ज र ज ग ग	१७
१,५७,९०,३२१.	भसनशलाका	म न स म न य त न ग ग	१७
१,६७,६७,८७१	उद्भिक्तकदनम्	भ न ज ज ज न न न ग ग	१७
	मकरन्द	न य न य न न न न ग ग	१७.
	वनलतिका	न न न न न न न न ग ग	१९
१,९१,३२,९९२	कुहकुहूरम्	न न म म न न म य ल ग	१७
१,९२,४८,२८५	सुरसूचक	म स ज स स स य य ल ग	१७
१,९८,१५,६१०.	विषाणाश्रितम्	य न र भ ज त स य ल ग	१७.
२,२३,६६,४२७.	विनिद्रसिन्धुर	र र र र ज र ज र ल ग	१७
२,२३,८०,१७७	शकुन्तकुन्तल	म र र न न र ज र ल ग	१७
२,८१,४२,४२७	काकलीकलकोकिल	र स ज ज भ र स ज ल ग	१७.
	सुधाकलश	न ज भ ज ज ज भ ज ल ग	१०, १९.
२,९३,३०,९४३	शृङ्खलवलयित	भ न न भ म न न ज ल ग	१७
३,२१,७५ ७९२.	विरामवाटिका	न ज र स न ज र न ल ग	१७.
३,३५,९२,८२१	कर्णाटकम्	त भ ज भ ज भ न न ल ग	१७
	आपीड	भ न न स म न न न ल ग	१०,
	वेगवती	न न न स भ न न स ल ग	१०
३,८३,४७,९६८.	कुम्भकम्	न न र र र र र र ग ल	१७
५,७५,२१,८८४	वशंवद	स स स स स स स स ल ल	१७.

प्रकीर्णक-छन्द

२७.	मालावृत्त	म स स त न न य य य	५, ६, मालाचित्र–१०
२७.	विकसितकुसुमम्	म भ न न न न न न स	१९, मालावृत्तम्–१९.
२७	मालावृत्तम्	म म त न भ म स भ म	१९.

पद्यसंख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२७	विपरीतलसितम्	न न न न म म भ म स	१९
२८	त्रिभङ्गी	न स भ म त ज त स य	१९
२९	प्रमोदमहोदय	म त य त म न म र त ल ग	१
२९	कमला	म न न न न न म न न ल ग	१९
२९	मणिकिरण	न न भ न ज न न न न स य	१९;
३	मुक्तललितम्	म ज स न भ ज स न भ य	१　वृत्तललितम्-१९
३१	स्तुहरिका	न न न न न न न न न न य	१९
३१	विधातं	११ वर्ण	१६
३१	सम्पविधातं	११ वर्ण	१६
३२	उपविधातं	१२ वर्ण	१६
३२	सम्पोपविधातं	१२ वर्ण	१६
३३	चक्र	भ न न भ न न भ न न स य	१९
३४	विभव	भ न न भ न न भ न न भ न य	१९
३४	प्रतिभाक्रम	म म त न न न न न स ज ज म	२　मेघदण्डक–२२
३८	ललितमुखा	न-१२ ज य	१　१९
३८	पिपीलिकादण्डकः	म म त न न म न न न न र स ल ग	२२
४२	चण्डदण्डक	म म त न न न न न न न न ज म र	२२
४६	करभदण्डक	म म त न न न न न न न न न स ज ज ग	२२
५	ललितदण्डकः	म म त न न न न न न न न न न न र त ल ग	२२
	वारी	४६ मात्रा	१६
	उपवारी	४२ मात्रा	१६

दण्डक-छन्द

३३	अर्णवः	[न न र-९]	५ ६ १　१३ १५ १६ १७ १८ १९　अर्ण-१२
३६	व्याल	[न न र-१०]	५ ६ १　१३ १५ १६ १७ १८ १९ व्याल–२२
३९	जीमूत	[न न र-११]	५, ६ १　१३ १५, १६ १७ १८ १९, व्याल–२१
४२	लीलाकर	[न न र-१२]	५ ६ १　१३ १५ १६ १७ १८ १९ जीमूत–२१

वर्ण-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३६	अचल	[न-१२]	१६
२८.	वर्णक	[न न. भ-७, ग.]	४.
३५	समुद्रः	[न न. र ज र ज र ज र ज र ल ग]	४
	उत्कलिका	[न न, पचमात्रिकगण यथेष्ट]	१०.
३०.	बाललीलातुर	[१० गण ऐच्छिक]	१७
३२.	मनोहरणकवित्त	[१० गण ऐच्छिक, ल-२]	१७
८९	कुसुमितकाय	[म म त न त य ज त र भ स स भ स भ स भ स भ त य स भ स य स भ न न य ग]	१७
	मकरालय	[न ग र, सप्ताक्षरगण यथेच्छ	१६.
	सिंह	[ल ३, यथेच्छ गण]	१९
	अब्द	[ल. ४, यथेच्छ गण]	१९.
	चण्ड	[ल ५, यथेच्छ गण]	१९.
	वात	[ल ७, यथेच्छ गण]	१९
९९९.	महादण्डक	[न न, र-३३३]	समयसुन्दरकृत विज्ञप्तिपत्री

अर्द्धसमवृत्त

वर्ण-संख्या°	वृत्तनाम	विषमचरणो का लक्षण•	समचरणो का लक्षण*	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(३, ८)	कामिनी	[र]	[ज र ल ग]	१०.
(३, १२)	शिखी	[र]	[ज र ज र]	१०.
(३, १६)	नितम्बिनी	[र]	[ज र ज र ज ग]	१०
(३, २०)	वारुणी	[र]	[ज र ज र ज र ल ग]	१०
(३, २४)	वतसिनी	[र]	[ज र ज र ज र ज र]	१०

टि– ° वर्णसंख्या के कोष्ठक मे प्रयुक्त पहला अंक प्रथम और तृतीय चरणो का और दूसरा अंक द्वितीय और चतुर्थ चरण के वर्णों का द्योतक है।

• विषम चरण अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण।

* सम चरण अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण।

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(५, ११)	हंसा	[स ज ग]	[स स स ल ग]	१
(५, २४)	मृगाङ्कमुखी	[स ज ग]	[स स स स स स स स]	१०
(८ ९)	भ्रामरी	[ज र ल ग]	[र]	१
(९ ८)	प्रभद्रकम्	[र ज ग ग]	[ज र ल ग]	११
(१ १)	वैसारी	[त ज र]	[म स ज ग]	१७
(१ १)	पतोमम्	[ज त त ग]	[त त त ज]	१७ मत्तिकम्–१७
(१ ११)	मुक्तावली	[त ज र ग]	[म न ज र ग]	१७
(१ १२)	समुद्रकान्ता	[त ज र ग]	[म स त ग]	१७.
(१ १४)	विलासवापी	[त ज र ग]	[स म र ज ग ग]	१७
(१ १)	विद्युत्प्रभा	[त त त ज]	[ज त त ग]	१७
(१ १२)	सम्पातप्रीता	[त म र ग]	[स न म ग]	१७
(१ १)	पत्तिका	[त स ज ग]	[स स ज ग]	१७
(१ १४)	कारिणी	[न त त ग]	[र र न त ग]	१७
(२ ९)	वासवविलसिता	[न स ज ग]	[त ज र]	१७
(२ ११)	करभा	[म स ज ग]	[न म र ल ग]	१७
(२ ११)	पुष्पा	[भ म ज ज]	[स म र ल ग]	१७
(१ १)	प्रभासिता	[भ स ज ग]	[स स ज ग]	१७
(१ १२)	मकरावली	[भ स स भ]	[स म ज त]	१
(१ १)	मालोत्पलिका	[त स ज ग]	[त त ज ग]	१७.
(१ १२)	भद्रमुखा	[स स ज ग]	[न ज ज र]	१७.
(१ १)	प्रमामिता	[स स ज ज]	[म स ज ग]	१७
(१ १२)	नवनीतलता	[स स ज ग]	[स भ ज र]	१७ नवनीलता–१७ नवनीतलता–१७
(११ ११)	विपरीताख्यानिकी	[ज त ज ग ग]	[त त ज ग ग]	२ ५, १ ११ १७ १८ १९ २२
(११ ११)	आख्यानिकी	[त त ज ग ग]	[ज त ज ग ग]	२ ५ १ ११ १७ १९ आख्यानिका–१८ २ २२
(११ १२)	विस्तारक:	[त ज ज ल ग]	[ल स स त]	१७
(११ ११)	ललनावती	[त न स ल ग]	[स म न ल ग]	१७
(११ १२)	शिखरशिखा	[न न र ल ग]	[न ज ज र]	१७
(११ १)	वैताली	[म न र ज ग]	[म स ज ग]	१७.
(११ ११)	वाटलिका	[न य न ग ग]	[य म य ग ग]	१७
(११ १२)	सावीहतकामा	[न य भ ग ग]	[त न भ स]	१७

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ संकेतांक
(११, ११)	औपगवम्	[न र र ग ग]	[भ र र ल ग]	१७
(११, १२)	उपाढ्यम्	[न स ज ग ग]	[भ भ र य]	१७.
(११, ११)	करभोद्धता	[भ त र ल ग]	[स न र ल ग]	१७
(११, १३)	विलसितलीला	[भ भ त ल ग]	[न ज न स ग]	१०, १६
(११, १२)	द्रुतमध्या	[भ भ भ ग ग]	[न ज ज य]	२, ६, १०, १३, १७ १८, १९, २०, २२; चलमध्या–५
(११, ११)	कोरकिता	[भ भ भ ग ग]	[न य न ग ग]	१७.
(११, १२)	कमलाकरा	[भ भ भ ग ग]	[भ न ज य]	१७
(११, १०)	वर्गवती	[भ भ भ ग ग]	[स स स ग]	१७
(११, ११)	अवहित्रा	[भ भ भ ग ग]	[स स स ल ग]	१७
(११, १०)	केतु	[भ र न ग ग]	[स ज स ग]	१७.
(११, ११)	औपगवीतम्	[भ र र ल ग]	[न र र ग ग]	१७
(११, १३)	बद्धास्यम्	[भ भ न ल ग]	[स स न न ग]	१७
(११, १०)	युद्धविराट्	[म स ज ग ग]	[त ज र ग]	१७
(११, १२)	असुराढ्या	[म स ज ग ग]	[म न र य]	१७
(११, ११)	वर्णिनी	[र त भ ग ग]	[र न र ल ग]	१७
(११ १२)	किलकिता	[र न र ल ग]	[न भ ज र]	१७
(११, ११)	सारिका	[र न र ल ग]	[र न भ ग ग]	१७
(११, १०)	ललिता	[र स स ल ग]	[स ज ज ग]	१४.
(११, ११)	शालभञ्जिका	[स न र ल ग]	[भ त र ल ग]	१७.
(११, १२)	विमानिनि	[स भ र ल ग]	[म न ज र]	१७.
(११, १०)	असुधा	[स भ र ल ग]	[भ स ज ग]	१७
(११. १०)	सुन्दरी	[स भ र ल ग]	[स स ज ग]	१७, सुरमालिका– १७, वियोगिनी–१७
(११, ११)	अग्रवती	[स भ न ल ग]	[त न त ल ग]	१७,
(११, १२)	मालभारिणी	[स स ज ग ग]	[स भ र य]	१०, २०; नितम्बिनी- ११, उपोद्गता–१७ वसन्तमालिका–१७. परिश्रुता–१७, सुबोधिता–१६, प्रिया–१६
(११, १२)	हरिलुप्ता	[स स स ल ग]	[स भ भ र]	१७.
(१२, १२)	शखनिधि	[ज त ज र]	[त त ज र]	१६; सुनन्दिनी–१६
(१२, १२)	विपरीतभामा	[ज भ स य]	[त भ स य]	१६
(१२, ३)	शिखण्डि	[ज र ज र]	[र]	१०

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ ग्रंथ-संकेतांक
(१२, ११)	नटक	[स स स स]	[त ज ज ल ग]	१७
(१३, १३)	प्रकीर्णकम्	[ज भ स ज ग]	[त भ स ज ग]	१९; (रुचि-रुचिर-उपजाति)
(१३, १३)	निर्मधुवारि	[त भ र स ल]	[स ज स ज ग]	१७.
(१३, १४)	लास्यलीलालय	[त य र र ग]	[भ स त त ग ग]	१७.
(१३, १२)	अन्विताग्रा	[न ज ज र ग]	[न न र य]	१७.
(१३, १२)	प्रमाथिनी	[न ज ज र ग]	[स भ र य]	१७
(१३, १४)	आलेपनम्	[न त त त ग]	[न भ य य ल ग]	१७.
(१३, १६)	परप्रीणिता	[न न त त ग]	[न न स त त ग]	१७
(१३, १३)	विमुखी	[न न भ स ल]	[न न स स ग]	१७.
(१३, १५)	प्रमोदपरिणीता	[न न र ज ग]	[न ज ज भ य]	१७.
(१३, १०)	सुरहिता	[न न स स ग]	[त न न न ग]	१७.
(१३, १३)	रुचिमुखी	[न न स स ग]	[न न भ स ल]	१७
(१३, १३)	शिशुमुखी	[न भ ज ज ग]	[न भ स ज ग]	१७.
(१३, १३)	अनिरया	[न भ स ज ग]	[न भ ज ज ग]	१७
(१३, १४)	प्रतिविनीता	[न य ज र ग]	[स भ र न ग ग]	१७
(१३, १३)	अल्परतम्	[भ न ज ज ग]	[भ न य न ल]	१७
(१३, १३)	अर्धरतम्	[भ न य न ल]	[भ न ज ज ग]	१७
(१३, १३)	अनङ्गपदम्	[भ भ भ भ ग]	[स स स स ग]	१७
(१३, १३)	धीरावर्तः	[म त य स ग]	[म भ स म ग]	१७.
(१३, १३)	धीरावर्त.	[म भ स म ग]	[म त य स ग]	१७.
(१३, १०)	किंशुकावली	[म न ज र ग]	[त ज र ग]	१७
(१३, १३)	अलिपदम्	[र र न त ग]	[न त त त ग]	१७
(१३, १३)	मधुवारि	[स ज स ज ग]	[त भ र स ल]	१७
(१३, १३)	कलनावती	[स ज स ज ग]	[स ज स स ग]	१७.
(१३, १२)	पद्मावती	[स ज स स ग]	[त भ ज य]	१७
(१३, १३)	कलना	[स ज स स ग]	[स ज स ज ग]	१७
(१३, १२)	चमूरु.	[स न ज र ग]	[र न ज र]	१७.
(१३ १२)	वियद्वाणी	[स भ र य ग]	[म स ज म]	१७.
(१३, १४)	मन्दाक्रान्ता	[स स ज र ग]	[म स ज र ग ग]	१७
(१३, ११)	कामाक्षी,	[स स न न ग]	[म भ न ल ग]	१७
(१३, १३)	भुजङ्गभृता	[स स स स ग]	[भ भ भ भ ग]	१७.
(१४, १५)	अवरोधवनिता	[न भ भ र ल ग]	[स स ज भ य]	१७.
(१४, १३)	अनालेपनम्	[न भ य य ल ग]	[न त त त ग]	१७.

षष्ठ परिशिष्ट

गाथा एवं दोहा भेदों के उदाहरण[1]

गाथा-भेदो के उदाहरण

१. लक्ष्मीः

यत्रार्याया वर्णास्त्रिशत्सख्या लघुत्रयं तत्र ।
दीर्घास्तारातुल्याश्चेत्स्यु प्रोक्ता तदा लक्ष्मी ॥१॥

२. ऋद्धिः

यत्रार्याया वर्णा एकत्रिशन्मिता यदा पञ्च ।
लघव षड्विंशत्या दीर्घा ऋद्धि समा नाम्ना ॥२॥

३. बुद्धिः

यत्रार्याया वर्णा दन्तैस्तुल्या भवन्ति चेद् दीर्घा ।
तत्त्वैस्सप्तलघूना नाम्ना बुद्धिस्तदा भवति ॥३॥

४ लज्जा

यत्रार्याया वर्णा देवैस्तुल्या जिनोन्मिता गुरवः ।
नवलघवश्चेत्तत्र प्रोक्ता नाम्ना तदा लज्जा ॥४॥

५. विद्या

वर्णा वेदाग्निमिता गुरवो रामाश्विभिर्मिता यत्र ।
रुद्रमिता लघवश्चेन्नाम्ना विद्या तदा श्रार्या ॥५॥

६. क्षमा

बाणाग्निमिता वर्णा श्राकृतितुल्यास्तु यत्र गुरवस्स्यु ।
ह्रस्वा विश्वनियमिता प्रोक्ता नाम्ना क्षमा सार्या ॥६॥

७ देही

षट्त्रिंशन्मितवर्णा. प्रकृतिमिताः सम्भवन्ति चेद् दीर्घा ।
बाणेन्दुमिता लघव. कथिता सार्या तदा देही ॥७॥

---

[1] वृत्तमौक्तिक मे गाथा और दोहा छन्द के प्रस्तार-भेद से नाम एव सक्षेप मे लक्षण प्राप्त हैं किन्तु इन भेदो के उदाहरण प्राप्त नही हैं अत वाग्वल्लभ-ग्रन्थ से इनके लक्षणयुक्त उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

८ गौरी

सप्ताग्निमिता वर्णा नवमितगुरवो घनोन्मिता लघवः ।
यत्र स्युः किल सार्या सहि भवेन्नामतो गौरी ॥८॥

९. धात्री रात्री च

वसुगुणतुल्या वर्णा गुरवो नभवो यदातिधृतितुल्याः ।
फणिपप्रोक्ता सार्या भवति तदा नामतो धात्री ॥९॥

१ चूर्णा

नवगुणपरिमितवर्णा धृतिमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वाः ।
प्रकृतिमिता यदि सार्या प्रोक्ता नाम्ना तदा चूर्णा ॥१०॥

११ छाया

त्रिगुणितनखमितवर्णा घनमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वा ।
विकृतिमिता यदि सार्या कथिता नाम्ना तदा छाया ॥११॥

१२ कान्ति

शशियुगपरिमितवर्णा अष्टिप्रमिता भवन्ति चेद्गुरवः ।
शरकृतिपरिमितलघवो नाम्ना सार्या भवेत् कान्तिः ॥१२॥

१३ महामाया

यमयुगपरिमितवर्णास्तिथिमितगुरवश्च मोन्मिता लघवः ।
सार्या भवति तदासौ फणिना कथिता महामाया ॥१३॥

१४ कीर्त्तिः

गुणयुगपरिमितवर्णा मनुमितगुरवो नवाश्विमितलघवः ।
स्युर्यदि यत्र च सार्या फणिना कथिता तदा कीर्त्तिः ॥१४॥

१५ सिद्धा

श्रुतियुगपरिमितवर्णा भवति रवितुल्या भवन्ति चेद्गुरवः ।
शशधरगुणमितलघवः प्रभवति सा नामतस्सिद्धा ॥१५॥

१६ मानिनी मनोरमा च

शरयुगपरिमितवर्णा रविमितगुरवश्च देवमितलघवः ।
यदि फणिपणपतिभणिता सार्या सामु मानिनी भवा ॥१६॥

१७. रामा

रसयुगपरिमितवर्णा. शिवमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
शरगुणपरिमितलघवो यत्र भवति शोदिता रामा ॥१७॥

१८. गाहिनी

नवयुगपरिमितवर्णा यदि दश गुरवो भवन्ति नियत चेत् ।
नगगुणपरिमितलघवस्तदनु भवति गाहिनी किल सा ।।१८।।

१९ विदवा

वसुयुगपरिमितवर्णा यदि नव गुरवो भवन्ति लघवश्चेत् ।
इह नवहुतभुगभिमिता प्रभवति फणिपतिभणितविदवा ।।१९।।

२०. वासिता

नवयुगपरिमितवर्णा यदि वसुगुरव शशियुगमितलघवः ।
फणिगणपतिपरिभणिता भवति तदनु वासिता किल सा ।।२०।।

२१. शोभा

इह यदि मुनिमितगुरवो हुतभुग्जलनिधिमितास्तथा लघवः ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति सनियममियमिति शोभा ।।२१।।

२२. हरिणी

यदि रसपरिमितगुरव शरयुगपरिमितलघव इह तदनु चेत् ।
फणिपतिपरिभणिततनु प्रभवति नियत तदा हरिणी ।।२२।।

२३. चक्री

नगयुगमितलघुगण इह शरमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति ननु सनियममिह चक्री ।।२३।।

२४ सरसी

जलनिधिपरिमितगुरवो यदि नवजलधिपरिमितलघव इह चेत् ।
भुजगाधिप इति कथयति भवति नियतविहिततनु सरसी ।।२४।।

२५. कुररी

स्युरथ गुणमितगुरव इह यदि शशधरशरपरिमितलघव इति च ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति लसद्यतिरिय कुररी ।।२५।।

२६. सिंही

द्विकगुरुगुणशरपरिमितलघुविरचिततनुरिह यदि च भवति किल ।
अहिगणपतिरिति कथयति नियतजनितविरतिरथ सिंही ।।२६।।

२७ हंसी, हंसपदवी च

शशिमितगुरुशरशरमितलघुविरचिततनुरियमिह यदि विलसति ।
फणिगणपतिभणितविरतिहंसपदविरथ नियतकृतयति ।।२७।।

दोहा भेदों के उदाहरण

१ भ्रमरः

यत्र स्युर्दीर्घास्त्रयोविंशत्या तुल्याश्च ।
द्वौ ह्रस्वौ स्यातां यदा पूर्वस्यात्तन्नाम्ना च ॥१॥

२ भ्रामरः

द्वाविंशत्या सम्मिता दीर्घा ह्रस्वा यत्र ।
चत्वारः स्युर्भ्रामरो नाम्नाऽसौ स्यादत्र ॥२॥

३ शरभः

चेत्स्युर्भूदशोन्मिता दीर्घा ह्रस्वा यर्हि ।
षण्णागेशेनोदितो नाम्ना शरभस्तर्हि ॥३॥

४ श्येनः

दीर्घा विंशत्या मिता अष्टौ लघवो यत्र ।
पिङ्गलनागप्रोदितः श्येनः स्यादित्यत्र ॥४॥

५ मण्डूकः

दीर्घा धृतिभूस्युर्मिता ह्रस्वा स्युर्दश यर्हि ।
भूतेऽनन्तो नामतो मण्डूकं किल तर्हि ॥५॥

६ मर्कटः

दीर्घाः स्युर्धृतिसम्मिता ह्रस्वा द्वादश यत्र ।
पिङ्गलनागेनोदितो मर्कटनामा तत्र ॥६॥

७ करभः

दीर्घाः स्युर्धर्मसम्मिता इन्द्रमिता लघवश्च ।
ब्रूते शेषो यदि तदा नाम्नाऽसौ करभश्च ॥७॥

८. नरः

षोडश गुरवः सन्ति चेल्लघवो यत्र किलापि ।
पिङ्गलनागेनाऽसकौ नाम्ना नर भासापि ॥८॥

९. मरालः

अष्टादश लघवो यदा गुरवः पञ्चदशैव ।
मरालनामेत्यहिपतिः शेषो भणति तदैव ॥९॥

१०. मदकल

मनुमितगुरवो विंशतिर्लघवः सन्ति यदा च।
मदकलनामाऽसौ भवेदित्थ शेष उवाच ॥१०॥

११. पयोधर

नाम पयोधर इति भवेदतिरविगुरवस्सन्ति।
न्यस्ता आकृतिसम्मिता लघवो यत्र भवन्ति ॥११॥

१२. चल

लघवश्च चतुर्विंशतिर्गुरवो द्वादश यत्र।
स्यु. फणिगणपतिरिति वदति चलनामाऽसावत्र ॥१२॥

१३. वानर

एकादश गुरवो यदा रसयममितलघवश्च।
नाम्ना वानर इह तदा फणिनायकभणितश्च ॥१३॥

१४. त्रिकल

वसुयममितलघवो यदा दश गुरवश्च भवन्ति।
तदा विशिष्य त्रिकल इति नाम बुधा निगदन्ति ॥१४॥

१५. कच्छप

लघवो द्विगुणिततिथिमिता गुरवो नव यदि सन्ति।
नाम्ना कच्छप इति भवति सुधियो नियतमुशन्ति ॥१५॥

१६. मत्स्य

रदपरिमितलघवो यदा वसुमितगुरवस्सन्ति।
भवति मत्स्य इह खलु तदा विबुधा इति कथयन्ति ॥१६॥

१७. शार्दूल.

श्रुतिगणपरिमितलघव इह नगमितगुरवो यत्र।
फणिगणपतिपरिभणित इति शार्दूल स्यात्तत्र ॥१७॥

१८ अहिवरः

रसगुणपरिमितलघव इह रसमितगुरवो यर्हि।
अहिवर इति खलु नामत फणिपतिभणितस्तर्हि ॥१८॥

१९. व्याघ्र

वसुगुणपरिमितलघव इह शरमितगुरवश्चापि।
व्याघ्रक इति भवति सनियममहिगणपतिनाऽलापि ॥१९॥

२० विशालः

गगनसमभिमितसभय इह फणिमितिमितगुरवश्च ।
प्रभवति यदि फणिपतिभणित इति नाम विशालश्च ॥२०॥

२१ दशा

यदि यमयुगमितसभय इह गुणपरिमितगुरुकाणि ।
दशा फणिपतिगुरुस्मतिमिरिति भवति समियमगाणि ॥२१॥

२२ चतुर्वरः, समुद्रश्च

द्विगुरुत्वलधियुगलभुभिरिह नियमिततनुरनुभवति ।
फणिपतिरिति सत्त उन्मुदः सुमियतक्रतयति भवति ॥२२॥

२३ सर्पः

यदिगुरुरसमुगमितसभुभिरव कृततनुरिह सतति ।
फणिगणपतिरचितक्लबिरति सर्प इति समभिसयति ॥२३॥

२४ अमरम्

बसुजलनिधिपरिमितलघुभिरभिनियमिततनु भवति ।
यदमरमित्वमिति नियतमति फणिगणपतिरनुभवति ॥२४॥

सप्तम परिशिष्ट

ग्रन्थोद्धृत ग्रन्थ-तालिका

नाम	ग्रन्थकार	पृष्ठांक
अथ च		१८९
अयथा		३८
अनर्घराघवम्	मुरारि	२०५
अन्येऽपि		२०५.
अष्टाध्यायी	पाणिनि	२०३.
इति वा		१८८.
उदाहरणमञ्जरी	लक्ष्मीनाथभट्ट	१०, १३, १६, १७, २१, २४, ८१.
कविकल्पलता	देवेश्वर	२०५.
कादम्बरी	बाण.	२०६
काव्यादर्श.	दण्डी	७५.
किरातार्जुनीयम्	भारवि:	९८, १००, १०६, १३९, १९२
कृष्णकुतूहलमहाकाव्यम्	रामचन्द्रभट्टः	१०५, १०७, ११४, ११६, १२१, १३५, १३७, १३८, १३९, १५१, १६१.
कण्ठाभरणम्		१२०.
खञ्जवर्णने	लक्ष्मीनाथभट्ट	१६०
गौरीदशकस्तोत्रम्	शङ्कराचार्य	१०५
गोविन्दविरुदावली	श्रीरूपगोस्वामी	२२२, २२४, २२८.
गीतगोविन्दम्	जयदेव	२०५.
चन्द्रशेखराष्टकम्	मार्कण्डेय	१४५
छन्द सूत्रम्	पिङ्गल	१८४, २०४.
छन्दःसूत्रवृत्ति	हलायुध	१५८, १७३, १७५, १७७, १७८, १९४, १९८, १९९, २००.
छन्दोरत्नावली	अमरचन्द्र (?)	३३०, ३३१.
छन्दश्चूडामणि ?	शम्भु	१०९, १३९, १९७, २७२, २८०, २८२, २८३
छन्दोमञ्जरी	गङ्गादासः	९२, ९३, १०५, १२४, १४०, १४७, २०६.

नाम	ग्रन्थकार	पृष्ठांक
शृङ्गारकल्लोलम् (खण्डकाव्यम्)	रायभट्टः	१२१.
शिको-काव्यम् (?)		१५६
शिवस्तुति	लक्ष्मीनाथभट्ट	४५
शिशुपालवधम्	माघ.	९८, १६२, १९२
सुन्दरीध्यानाष्टकम्	लक्ष्मीनाथभट्ट	१४४.
सौन्दर्यलहरीस्तोत्रम्	शकराचार्यः	१३७
हर्षचरितम्	बाण	१९०.
हरिमहमीडे स्तोत्रम्	शङ्कराचार्य.	१०५
हंसदूतम्	श्रीरूपगोस्वामी	१३७.

अष्टम परिशिष्ट

छन्दःशास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें

	नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख*
१	अभिनववृत्तरत्नाकर	भास्कर	सी सी
२	टिप्पण	,, श्रीनिवास	,,
३	एकावली	फतेहशाह वर्मन् ?	मिथिला केटलॉग
४	कर्णतोष	मुद्गल	अनूप सी सी में इसका नाम 'कर्णसन्तोष' है।
५	कर्णाभरण	कृष्णदास	हि एस
६	कविदर्पण		प्रकाशित
७	कविशिक्षा	जयमंगलाचार्य	हि एस
८	काव्यजीवन	प्रीतिकर अवस्थी	हि. एस सी सी
९	काव्यलक्ष्मीप्रकाश	शिवराम S/o कृष्णराम	सी सी
१०	काव्यावलोकन [कन्नडभाषीय]	नागवर्म	कन्नडप्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थसूची
११	कीर्तिध्वजमाला	रामानारायण S/o विष्णुदास	युनिवर्सिटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग
१२	टीका	,,	
१३	कपट विरमाहृत		जैन-ग्रन्थावली

---

* संकेत—सी.सी. = केटलॉगस केटलॉगरम्; मिथिला केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स इन मिथिला; अनूप = केटलॉग ऑफ दी अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर; हि.एस = ए हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर एम कृष्णमाचारी; युनिवर्सिटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ दी संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन दी लायब्रेरी ऑफ दी युनिवर्सिटी ऑफ बोम्बे; रायल एशियाटिक सोसायटी बम्बई केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन दी लायब्रेरी ऑफ दी बोम्बे ब्रांच ऑफ दी रायल एशियाटिक सोसायटी; बड़ोदा केटलॉग = एन अल्फाबेटिकल लिस्ट ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स इन दी ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा; रा.प्रा.प्र. जोधपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर; रा.प्रा.प्र. चित्तौड़ = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा कार्यालय चित्तौड़; रा.प्रा.प्र. बीकानेर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा कार्यालय बीकानेर; रा.प्रा.प्र. जयपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा कार्यालय जयपुर।

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१४	गाथारत्नकोष		जैन-ग्रन्थावली
१५	गाथारत्नाकर		,,
१६	गाथालक्षण	नन्दिताढ्य	प्रकाशित
१७	,,	रत्नचन्द्र ?	रॉयल एशियाटिक सोसायटी बम्बई केटलॉग
१८	छन्द कन्दली		उल्लेख कविदर्पण
१९	छन्द कल्पतरु	राघव झा	मिथिला केटलॉग, हि एस
२०	छन्द कल्पलता	मथुरानाथ	हि एस
२१	छन्द कोष	रत्नशेखरसूरि	प्रकाशित
२२	,, टीका	,, चन्द्रकीर्त्ति	सी सी
२३	छन्द कौमुदी	नारायणशास्त्री खिस्ते	प्रकाशित
२४	छन्द कौस्तुभ	दामोदर	बड़ोदा केटलॉग
२५	,,	राधादामोदर	सी सी, हि एस
२६	,, टीका	,, विद्याभूषण	सी सी
२७	,, ,,	,, कृष्णराम	,,
२८	छन्दस्तत्त्वसूत्रम्	धर्मनन्दन वाचक	रा प्रा प्र जोधपुर
२९	छन्द पयोनिधि		प्रकाशित
३०	छन्द पीयूष	जगन्नाथS/oराम	रा प्रा प्र जोधपुर, सी सी,
३१	छन्द प्रकाश	शेषचिन्तामणि	बड़ोदा केटलॉग, हि एस,
३२	,, टीका	,, सोमनाथ	सी सी
३३	छन्द प्रशस्ति	श्रीहर्ष	सी सी [उल्लेख-नैषध १७/२१९]
३४	छन्द प्रस्तारसरणि	कृष्णदेव	बड़ौदा केटलॉग
३५	छन्दःशास्त्र	जयदेव	प्रकाशित
३६	,,	, हर्षट	सी सी
३७	छन्द शिक्षा	परमेश्वरानन्द शास्त्री	प्रकाशित
३८	छन्द शेखर	जयशेखर	जैन-ग्रन्थावली
३९	,,	राजशेखर	प्रकाशित
४०	छन्दश्चन्द्रिका		प्रकाशित
४१	छन्दश्चिह्नम्		,,
४२	छन्दश्चिह्नप्रकाशनम्	आत्मस्वरूप उदासीनP/o गंगाराम उदासीन	,,
४३	छन्दश्चूडामणि	शम्भु	उल्लेख वृत्तरत्नाकर-नारायणभट्टी टीका
४४	छन्दश्छटामण्डन	कृष्णराम [जयपुर]	हि एस,

अष्टम परिशिष्ट

छन्दःशास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें

	नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख*
१	अभिनववृत्तरत्नाकर	भास्कर	सी सी
२	टिप्पण	श्रीनिवास	
३	एकावली	फतेहशाह् वर्मन् ?	मिथिला केटलॉग
४	कर्णतोष	मुद्गल	अनूप सी सी. में इसका नाम 'कर्णसन्तोष' है।
५	कर्णाभरण	कृष्णराम	हि. एस
६	कविदर्पण		प्रकाशित
७	कविशिक्षा	जयमंगलाचार्य	हि. एस
८	काव्यजीवन	प्रीतिकर अवस्थी	हि. एस सी सी,
९	काव्यलक्ष्मीप्रकाश	शिवराम S/o कृष्णराम	सी सी
१	काव्यावलोकन [कन्नडभाषीय]	नागवर्म	कन्नडप्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थसूची
११	कीर्तिचन्द्रोमाला	रामनारायण S/o विष्णुदास	युनिवर्सिटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग
१२	टीका	"	
११	क्षेपक विरुदाहृता		जैन-ग्रन्थावली

* संकेत—सी सी = केटलोगस केटलोगरम्; मिथिला केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स इन मिथिला; अनूप = केटलॉग ऑफ दी अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर; हि.एस = ए हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर एम कृष्णमाचारी; युनिवर्सिटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ दी संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन दी लायब्रेरी ऑफ दी युनिवर्सिटी ऑफ बॉम्बे; रायल एशियाटिक सोसायटी बम्बई केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन दी लायब्रेरी ऑफ दी बॉम्बे ब्रांच ऑफ दी रायल एशियाटिक सोसायटी; बड़ोदा केटलॉग = एन अल्फाबेटिकल लिस्ट ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स इन दी ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा; रा.प्रा.प्र जोधपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर; रा.प्रा.प्र चित्तौड़ = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा कार्यालय चित्तौड़; रा.प्रा.प्र. बीकानेर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा कार्यालय बीकानेर; रा.प्रा.प्र जयपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा कार्यालय जयपुर।

	नाम	कर्त्ता एव टीकाकार	उल्लेख
७२	छन्दोऽम्बुधि		सी सी
७३	छन्दोमञ्जरी	गंगादास s/o गोपालदास वैद्य	प्रकाशित
७४	,, टीका	,, कृष्णराम	सी सी
७५	,, ,,	,, कृष्णवल्लभ	हि एस
७६	,, ,,	,, गोवर्धनदास	हि एस ,सी सी
७७	,, ,, [छन्दोमञ्जरीजीवन]	,, चन्द्रशेखर भारती	,, ,,
७८	छन्दोमञ्जरी टीका	,, जगन्नाथ सेन s/o जटाधर कविराज	हि एस., सी सी
७९	,, ,,	,, जीवानन्द	प्रकाशित
८०	,, ,	,, वाताराम	हि.एस, सी.सी
८१	,, ,,	,, रामधन	प्रकाशित
८२	,, ,,	,, वशीधर	हि एस, सी सी
८३	,, ,,	,, हरिदत्तशास्त्री शकरदत्तपाठकश्च	प्रकाशित
८४	छन्दोमञ्जरी	गोपाल*	सस्कृत कॉलिज बनारस रिपोर्ट सन् १९०९-१७
८५	,,	गोपालदास*	हि.एस
८६	,,	गोपालचन्द्र*	सी सी.
८७	छन्दोमन्दाकिनी	गुरुप्रसाद शास्त्री	प्रकाशित
८८	छन्दोमहाभाष्य	दामोदरभट्ट s/o रघुनाथ	बडोदा केटलॉग
८९	छन्दोमातङ्ग		सी सी [उल्लेख-वृत्तरत्नाकरादर्श]
९०	छन्दोमार्तण्ड	मणिलाल	बडोदा केटलॉग
९१	छंदोमाला	शार्ङ्गधर	हि एस
९२	छंदोमुक्तावली	प्यारेलाल	सी सी
९३	,,	शम्भुराम s/o सीताराम	हि एस , सी सी.
९४	छंदोरत्न	पद्मनाभभट्ट	सी सी
९५	छंदोरत्नहलायुध	?	सी सी.

* छन्दोमञ्जरी के कर्त्ता गोपालदास वैद्य के पुत्र गंगादास हैं। अतः संभव है प्रतिलिपिकारों के भ्रम से गोपाल गोपालदास, गोपालचन्द्र नाम से भिन्न २ प्रणेता का भ्रम हो गया हो।

	नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
७२	छन्दोऽम्बुधि		सी सी
७३	छन्दोमञ्जरी	गंगादास s/o गोपालदास वैद्य	प्रकाशित
७४	,, टीका	,, कृष्णराम	सी सी.
७५	,, ,,	,, कृष्णवल्लभ	हि एस
७६	,, ,,	,, गोवर्धनदास	हि.एस, सी सी
७७	,, ,, [छन्दोमञ्जरीजीवन]	,, चन्द्रशेखर भारती	,, ,,
७८	छन्दोमञ्जरी टीका	,, जगन्नाथ सेन s/o जटाधर कविराज	हि एस., सी सी
७९	,, ,,	,, जीवानन्द	प्रकाशित
८०	,, ,,	,, बालाराम	हि एम, सी सी
८१	,, ,,	,, रामधन	प्रकाशित
८२	,, ,,	,, यशोधर	हि एस, सी सी
८३	,, ,,	,, हरिदत्तशास्त्री प्रभाकरदत्तपाठकश्च	प्रकाशित
८४	छन्दोमञ्जरी	गोपाल*	संस्कृत कॉलेज बनारस रिपोर्ट सन् १९०९-१७
८५	,,	गोपालदास*	हि.एस
८६	,,	गोपालचन्द्र*	सी.सी
८७	छन्दोमन्दाकिनी	गुरुप्रसाद शास्त्री	प्रकाशित
८८	छन्दोमहाभाष्य	दामोदरभट्ट s/o रघुनाथ	बडोदा केटलॉग
८९	छन्दोमातङ्ग		सी सी [उल्लेख-वृत्तरत्नाकरादर्श]
९०	छन्दोमार्तण्ड	मणिलाल	बडोदा केटलॉग
९१	छन्दोमाला	शार्ङ्गधर	हि एस
९२	छन्दोमुक्तावली	प्यारेलाल	सी.सी.
९३	,,	शम्भुराम s/o सीताराम	हि एस, सी सी.
९४	छन्दोरत्न	पद्मनाभभट्ट	सी सी
९५	छन्दोरत्नहलायुध	?	सी सी

---

* छन्दोमञ्जरी के कर्त्ता गोपालदास वैद्य के पुत्र गंगादास है। अतः संभव है प्रतिलिपिकारों के भ्रम से गोपाल, गोपालदास, गोपालचन्द्र नाम से भिन्न २ प्रणेता का भ्रम हो गया हो।

	नाम	कर्ता एव टीकाकर	उल्लेख
१२२	,, टीका [मिताक्षरा]	,, जगन्नाथमिश्र	रा.प्रा प्र., जोधपुर
१२३	,, टीका	,, दामोदर	हि एस.
१२४	,, टीका	,, पद्मप्रभसूरि	सी सी
१२५	,, ,,	पिंगल, पशु कवि ?	सी सी
१२६	,, ,,	,, भास्कराचार्य	,,
१२७	,, ,,	,, मथुरानाथ शुक्ल	,,
१२८	,, ,,	,, मनोहरकृष्ण	,,
१२९	,, ,, [भाष्यराज]	,, यादवप्रकाश	हि एस
१३०	,, ,,	,, वामनाचार्य	सी सी.
१३१	,, ,,	,, वेंबाराज	,,
१३२	,, ,,	,, श्रीहर्ष शर्मा S/o मकरध्वज	हि. एस
१३३	,, ,, [मृतसञ्जीवनी]	,, हलायुध	प्रकाशित
१३४	पिंगलसारोद्धार		जैन-ग्रंथावली
१३५	प्रस्तारचिंतामणि	चिंतामणि दैवज्ञ	मधुसूदन पुस्तकालय, लाहोर सूत्रीपत्र, हि एस
१३६	,, टीका	,, ,,	हि एस, सी सी
१३७	प्रस्तारपत्तन	कृष्णदेव	,, ,,
१३८	प्रस्तारविचार		हि एस
१३९	प्रस्तारशेखर	श्रीनिवास	,,
१४०	प्राकृत-छंद-कोष	अल्हू	राजस्थान के जैन शास्त्र भंडार, जयपुर भा ४
१४१	प्राकृतपिंगल	पिंगल	प्रकाशित
१४२	,, टीका [कृष्णीय विवरण]	,, कृष्ण	प्राकृतपैंगलम्
१४३	,, टीका [पिंगलभावोद्योत]	,, चन्द्रशेखर भट्ट	अनूप
१४४	,, ,,	,, चित्रसेन	सी सी.
१४५	,, ,,	,, दुर्गेश्वर	उल्लेख-रूपगोस्वामिकृत नन्दोत्सवादिचरितटीकायाम्
१४६	,, ,,	,, नारायणदीक्षित	अनूप

क्रमांक	नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१७१	वृत्तचन्द्रोदय	भास्कराध्वरिन्	हि. एस, सी, सी,
१७२	वृत्तचन्द्रिका	रामदयालु	,, ,, मधुसूदन०
१७३	वृत्तचिन्तामणि	गोपीनाथ दाधीच	रा प्रा प्र लक्ष्मीनाथ-संग्रह जयपुर
१७४	वृत्तचिन्तारत्न	शान्तराज पण्डित	हि. एस,
१७५	वृत्तजातिसमुच्चय	विरहाक	प्रकाशित
१७६	,, टीका	,, गोपाल	,,
१७७	वृत्ततरङ्गिणी	कृष्ण	हि एस,
१७८	वृत्तदर्पण	गगाधर	सी सी
१७९	,,	जानकीनन्द कवीन्द्र S/o रामानन्द	मिथिला केटलॉग
१८०	,,	भीष्ममिश्र	,, हि. एस, सी सी,
१८१	,,	मणिमिश्र	सी सी,
१८२	,,	मथुरानाथ	सी सी
१८३	,,	वेंकटाचार्य	सी सी,
१८४	,,	सीताराम	हि. एस,
१८५	वृत्तदीपिका	कृष्ण	,, सी सी,
१८६	,,	वेंकटेश	,,
१८७	वृत्तद्युमणि	यशवत S/o गगाधर	बडोदा के हि एस, सी सी
१८८	,,	गगाधर	हि एस,
१८९	वृत्तप्रत्यय	शकरदयालु	,, सी सी,
१९०	वृत्तप्रत्ययकौमुदी		सी सी,
१९१	वृत्तप्रदीप	जनार्दन	,, हि एस,
१९२	,,	बद्रीनाथ	हि एस,
१९३	वृत्तमणिकोष	श्रीनिवास	प्रकाशित
१९४	वृत्तमणिमाला	गणपतिशास्त्री	हि. एस
१९५	वृत्तमणिमालिका	श्रीनिवास	हि एस,
१९६	वृत्तमहोदधि		बडोदा केटलॉग
१९७	वृत्तमाणिक्यमाला	सुषेण	सी सी
१९८	वृत्तमाला	वल्लभाचि	,, हि एस,
१९९	,,	विरुपाक्षयज्वन्	हि एस,
२००	वृत्तमुक्तावली	कृष्ण भट्ट	प्रकाशित
२०१	,,	कृष्णराम	हि एस, सी सी
२०२	,,	गगादास	,, ,,

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकर	उल्लेख
२२७	वृत्तरत्नाकर-टीका	केदारभट्ट, जीवानन्द	प्रकाशित
२२८	,, ,,	,, ज्ञारसराम शास्त्री	,,
२२९	,, ,,	,, तारानाथ	हि. एस,
२३०	,, ,,	,, त्रिविक्रम S/o रघुसूरि	,, सी सी,
२३१	,, ,, [वृत्तरत्नाकरादर्श]	,, दिवाकरS/oमहादेव	अनूप, हि. एस, सीसी,
२३२	,, ,,	,, देवराज	हि एस,
२३३	,, ,,	,, नरसिंहसूरि	,,
२३४	,, ,, [मणिमञ्जरी]	,, नारायण पंडित S/o नृसिंहमज्वन्	सी सी.
२३५	,, ,,	,, नारायणभट्ट S/o रामेश्वर	प्रकाशित
२३६	,,	,, नृसिंह	प्रकाशित
२३७	,,	,, पूर्णानन्द कवि	बड़ौदा केटलॉग
२३८	,, ,,	,, प्रभावल्लभ	हि एस,
२३९	,, ,,	,, भास्करार्य S/o दायाजिभट्ट	,, रा प्रा प्र. जोधपुर
२४०	,, ,, [बालबोधिनी]	,, यश कीर्ति P/o अमरकीर्ति	अनूप, रा. प्रा प्र. जोधपुर
२४१	,, ,,	,, रघुनाथ	हि. एस, सी सी,
२४२	,, ,,	,, रामचन्द्र कवि-भारती	प्रकाशित
२४३	,, ,, [प्रभा]	,, विश्वनाथ कवि S/o श्रीनाथ	हि एस, सी सी, बड़ौदा केटलॉग
२४४	,, ,,	,, शार्दूल कवि	] ,, ,,
२४५	,, ,,	,, शुभविजय	रा प्रा प्र जोधपुर
२४६	,, ,,	,, श्रीकण्ठ	सी सी,
२४७	,, ,, [पीडोधिनी]	,, श्रीनाथ कवि	सी सी, बड़ौदा केटलॉग
२४८	,, ,, [रत्नोलक्ष्यदान]	,, श्रीनाथ S/o गोविन्द भट्ट	,, हि एस,
२४९	,, ,, [सुगमवृत्ति]	,, समयसुन्दर	अनूप, रा प्रा प्र, जोधपुर

क्रमांक	नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२ ३	वृत्तमुक्तावली	दुर्गादत्त	मिथिला केटलॉग
२ ४	,,	मल्लारि	अनूप रा प्रा प्र जोधपुर बड़ोदा केटलॉग
२ ५	टीका [तरल]		
२ ६	,	शंकर शर्मा	सी सी केटलॉग ऑफ संस्कृत मेनुस्क्रिप्ट्स इन अवध भा २१ सन् १८८१
२ ७	,,	हरिव्यास मिश्र	हि एस सी सी
२ ८	वृत्तमुक्तहारावली	शृंगाराचार्य	हि एस
२ ९	वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट	अनूप सी सी हि एस
२१	टीका [दुष्करोद्धार]	लक्ष्मीनाथ भट्ट	अनूप
२११	टीका [दुर्गमबोध]	,, मेघविजय	विनयसागर संग्रह कोटा
२१२	वृत्तरत्नाकर	केदार भट्ट	प्रकाशित
२१३	टीका 'श्रीकां'	अयोध्याप्रसाद	हि एस सी सी
२१४		आत्माराम	हि एस सी सी
	,,	,, ठा आसक	रा प्रा प्र जोधपुर
२१६	,, [कविचिन्तामणि]	,, करुणाकरदास S/o कुलपालिका	बड़ोदा केटलॉग
२१७	,,	, कृष्णराम	सी सी
२१८	,, ,,	कृष्णवर्मन्	हि एस
२१९	,, ,,	कृष्णदास	हि. एस,
२२		क्षेमहंस	रा प्रा प्र जोधपुर, सी सी
२२१	,, ,,	,, गोविन्द भट्ट	हि एस सी सी
२२२	,, [वृत्तपुष्पप्रकाशन]	,, चिन्तामणि	सी सी
२२३	,, ,, [सुधा]	चिन्तामणि पण्डित	हि. एस सी सी
२२४		,, चूडामणि दीक्षित	,, ,,
२२५	,, [वृत्तरत्नाकरवार्तिक]	,, जगन्नाथ S/o राम	सी सी
२२६	,, ,, [भावार्थदीपिका]	जनार्दन विबुध	हि. एस सी सी बड़ोदा केटलॉग

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२७४	वृत्तरामायण	रामस्वामी शास्त्री	हि. एस.
२७५	वृत्तरामास्पद	क्षेमकरणमिश्र	हि एस, सी सी
२७६	वृत्तलक्षण	उमापति	हि एस.,सी सी. वृत्तवार्तिक
२७७	वृत्तवार्तिकम्	रामपाणिवाद	प्रकाशित
२७८	,,	वैद्यनाथ	हि एस, सी. सी,
२७९	वृत्तविनोद	फतेहगिरि	,, ,,
२८०	वृत्तविवेचन	दुर्गासहाय	,, ,,
२८१	वृत्तसार	पुष्करमिश्र	अनूप
२८२	,,	भारद्वाज	हि एस, सी सी, बड़ोदा केटलॉग
२८३	,,	रमापति उपाध्याय	मिथिला केटलॉग, सी सी,
२८४	,, टीका [वृत्तसारालोक]	,, ,,	,,
२८५	वृत्तसारावली	यशोधर	अनूप,
२८६	वृत्तसिद्धान्तमञ्जरी	रघुनाथ	हि. एस. सी. सी,
२८७	वृत्तसुधोदय	मथुरानाथ शुक्ल	,, ,,
२८८	वृत्तसुधोदय	वेणीविलास	हि एस,
२८९	वृत्ताभिराम	रामचन्द्र	,, , सी सी, बड़ोदा केटलॉग
२९०	वृत्तालङ्कार	छविलालसूरि	हि एस,
२९१	वृत्तिबोध	बलभद्र	अनूप
२९२	वृत्तिवार्तिक	विद्यानाथ	केटलॉग ऑफ संस्कृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन अवध भाग १५, सन् १८८२
२९३	वृत्तोक्तिरत्न	नारायण	हि एस,
२९४	शृङ्गारमञ्जरी		कन्नडप्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रंथ सूची
२९५	श्रुतबोध	कालिदास	प्रकाशित
२९६	,, टीका	,, कनकलाल शर्मा	,,
२९७	,, ,, [पद्योतनिका]	,, चतुर्भुज	सी सी
२९८	,, ,, [बालविवेकिनी]	,, ताराचन्द्र	हि. एस, सी सी, मिथिला केटलॉग

क्रमांक	नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२५	वृत्तरत्नाकर टीका	केदारभट्ट सदाशिव S/o	अनूप
	[मर्मदीपिका]	विश्वनाथ	
२५१		सारस्वत सदाशिव	हि एस सी सी
	[वृत्तरत्नावली]	मुनि	
२५२		सुल्हण S/o भास्कर	„ „ अनूप
	[सुकविहृदयानन्दिनी]		
२५३	„	सोमपण्डित	„ „
२५४		„ सोमचन्द्रगणि	अनूप
	[मुग्धबोधकरी]		रा प्रा प्र जोधपुर
२५५	„ „	„ हरिभास्कर S/o आपाजी भट्ट	अनूप
	[वृत्तरत्नाकरसेतु]		
२५६	वृत्तरत्नाकर अवचूरि	?	अनूप
२५७	बालावबोध	मेरुसुन्दर	रा. प्रा प्र जोधपुर
२५८	वृत्तरत्नार्णव	नरसिंह भागवत P/o रामचन्द्र योगीन्द्र	हि एस
२५९	वृत्तरत्नावली	कालिदास	
२६	„	कृष्णराम	„
२६१	„	चिरंजीव भट्टाचार्य	अनूप मिथिला और बड़ोदा कैटलॉग
२६२	„	यशवंतसिंह	हि एस सी सी रा प्रा. प्र जोधपुर
२६३	„	दुर्गादत्त	
२६४	„	नारायण	„
२६५	„	मथिराम S/o बसंत	सी सी
२६६	टीका [चंद्रिका]	कालिकाप्रसाद	
२६७	„	शिव सानन्द	हि एस सी सी
२६८	„	रविकर	„ „
२६९	„	रामचूडामणि	[अलोक काव्यदर्पण]
२७	„	रामदेव चिरंजीव	
२७१	„	रामास्वामी शास्त्री	
२७२	„	वेंकटेश S/o सरस्वती	प्रकाशित
२७३	वृत्तरामायण	कवि P/o रामानुजाचार्य	सी सी

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एव टीकाकार	उल्लेख
२७४	वृत्तरामायण	रामस्वामी शास्त्री	हि. एस,
२७५	वृत्तरामास्पद	क्षेमकरणमिश्र	हि एस, सी सी
२७६	वृत्तलक्षण	उमापति	हि एस.,सी सी वृत्तवार्तिक
२७७	वृत्तवार्तिकम्	रामपाणिवाद	प्रकाशित
२७८	,,	वैद्यनाथ	हि एस, सी सी,
२७९	वृत्तविनोद	फतेहगिरि	,, ,,
२८०	वृत्तविवेचन	दुर्गासहाय	,, ,,
२८१	वृत्तसार	पुष्करमिश्र	अनूप
२८२	,,	भारद्वाज	हि एस, सी सी, बडोदा केटलॉग
२८३	,,	रमापति उपाध्याय	मिथिला केटलॉग, सी सी,
२८४	,, टीका [वृत्तसारालोक]	,, ,,	,,
२८५	वृत्तसारावली	यशोधर	अनूप,
२८६	वृत्तसिद्धान्तमञ्जरी	रघुनाथ	हि· एस, सी· सी,
२८७	वृत्तसुधोदय	मथुरानाथ शुक्ल	,, ,,
२८८	वृत्तसुधोदय	वेणीविलास	हि एस,
२८९	वृत्ताभिराम	रामचन्द्र	,, , सी सी, बडोदा केटलॉग
२९०	वृत्तालङ्कार	छविलालसूरि	हि एस,
२९१	वृत्तिबोध	बलभद्र	अनूप
२९२	वृत्तिवार्तिक	विद्यानाथ	केटलॉग ऑफ संस्कृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन अवध भाग १५, सन् १८८२
२९३	वृत्तोक्तिरत्न	नारायण	हि एस,
२९४	शृङ्गारमञ्जरी		कन्नडप्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रंथ सूची
२९५	श्रुतबोध	कालिदास	प्रकाशित
२९६	,, टीका	,, कनकलाल शर्मा	,,
२९७	,, ,, [पदद्योतनिका]	,, चतुर्भुज	सी सी
२९८	,, ,, [बालविवेकिनी]	,, ताराचन्द्र	हि. एस, सी सी, मिथिला केटलॉग

सहायक-ग्रन्थ

१	अग्निपुराण	
२	अथर्ववेदीय बृहत्सर्वानुक्रमणी	
३	अनर्घराघवननाटक	मुरारि
४	अरिष्टवधस्तोत्र	रूपगोस्वामी
५	[illegible] हृदय	वाग्भट
६	उपनिदान सूत्र	गार्ग्य
७	ऋग्यजुष् परिशिष्ट	
८	ऋग्वेद के मन्त्रद्रष्टा कवि	बद्रीप्र स । पचोली
९	ऋग्वेद मे गोतत्त्व	,,
१०	ए हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल सस्कृत लिटरेचर	एम कृष्णमाचारी
११	ए हिस्ट्री ऑफ सस्कृत लिटरेचर	आर्थर ए. मेकडॉनल
१२	ए हिस्ट्री ऑफ सस्कृत लिटरेचर	कीथ
१३	ऐतरेय आरण्यक	
१४	कविकल्पलता	देवेश्वर
१५	कविदर्पण	स० एच. डी. वेल्हणकर
१६	काकरोली का इतिहास	पो० कण्ठमणि शास्त्री
१७	काठक सहिता	
१८.	कामसूत्रम्	वात्स्यायन
१९.	काव्यादर्श	दण्डी
२०	किरातार्जुनीय काव्य	भारवि
२१	कुमारसम्भव काव्य	कालिदास
२२	कौषीतकि महाब्राह्मण	
२३	गाथालक्षण	सं० एच डी वेल्हणकर
२४	गीतगोविन्द	जयदेव
२५	गोपाललीलामहाकाव्य	सं० वेचनराम शर्मा
२६	गोवर्धनोद्धरण स्तोत्र	रूपगोस्वामी
२७	गोविन्दविरुदावली	,,
२८	गौरीदशकस्तोत्र	शकराचार्य
२९	छन्द कोश	स० एच डी वेल्हणकर
३०	छन्द सूत्र-हलायुध टीका सहित	पिंगल, हलायुध
३१.	छन्द सूत्र-टिप्पणी	अनन्तराम शर्मा
३२.	छन्द सूत्रभाष्य	यादवप्रकाश

६९	रागगोष्ठीस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७०	रसिकरञ्जनम्	रामचन्द्र भट्ट
७१.	रासक्रीडास्तोत्र	रूपगोस्वामी
७२	रोमावलीशतक	रामचन्द्र भट्ट
७३	वत्सचारणादिस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७४.	वर्षाशरद्विहारचरितस्तोत्र	,,
७५.	वल्लभपक्षवृक्ष	सं० पं० कण्ठमणि शास्त्री
७६.	वस्त्रहरणस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७७.	वाग्वल्लभ	दुःखभञ्जन कवि
७८.	वाजसनेयी संहिता	
७९.	वाणीभूषण	दामोदर
८०	वार्त्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन	डॉ० हरिहरनाथ टंडन
८१	विजयदेवमाहात्म्य	श्रीवल्लभोपाध्याय
८२.	विज्ञप्तिपत्री	समयसुन्दरोपाध्याय
८३.	विज्ञप्तिलेख-संग्रह प्रथम भाग	सं० मुनि जिनविजय
८४	वृत्तजातिसमुच्चय	सं० हरिदामोदर वेल्हणकर
८५	वृत्तमुक्तावली	देवर्षि कृष्णभट्ट
८६	वृत्तरत्नाकर नारायणीटीकायुत	केदारभट्ट, नारायणभट्ट
८७	वेदविद्या	डॉ वासुदेवशरण अग्रवाल
८८	वैदिक छन्दोमीमांसा	युधिष्ठिर मीमांसक
८९.	वैदिक दर्शन	डॉ० फतहसिंह
९०	वैदिक-साहित्य	रामगोविन्द त्रिवेदी
९१	शतपथ ब्राह्मण	
९२.	शिशुपालवध	माघकवि
९३.	श्रुतबोध	कालिदास
९४	शृङ्गारकल्लोल	रायभट्ट
९५	सुदर्शनादिमोचनस्तोत्र	रूपगोस्वामी
९६	सुवृत्ततिलक	क्षेमेन्द्र
९७	सौन्दर्यलहरी	शंकराचार्य
९८	स्वयम्भूछन्द	सं० हरि दामोदर वेल्हणकर
९९	सप्तसन्धानमहाकाव्य	महो० मेघविजय
१००.	सभाष्या रत्नमञ्जूषा	सं० हरि दामोदर वेल्हणकर
१०१	संस्कृत साहित्य का इतिहास	कीथ
१०२	,,	वाचस्पति गैरोला
१०३.	सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका	लक्ष्मीनाथ भट्ट
१०४	हंसदूतम्	रूपगोस्वामी
१०५	हरिमीडे-स्तोत्र	शंकराचार्य
१०६.	हिमांशुविजयजी नां लेखो	

सूची-पत्र

1. A descriptive Catalogue of Sanskrit and Prakrita Manuscripts in the Library of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society — H.D Velankar
2. An alphabetical list of manuscripts in the Oriental Institute, Baroda. — Raghavan Nambiyar Shiromani
3. A descriptive catalogue of manuscripts in Mithila — Kashi Prasad Jayaswal
4. A descriptive Catalogue of the Sanskrit and Prakrit Manuscripts the Library of the University of Bombay — H D Velankar
5. कन्नड प्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थ-सूची — के भुजबली शास्त्री
6. Catalogue of Anupa Samskrita Library Bikaner — Dr C. Kunhan Raja
7. Catalogue of Samskrita manuscripts in Avadha
   Part-15 1882
   Part-21 1890
8. Catalogus Catalogum — T Aufrecht
9. मधुसूदन पुस्तकालय लाहौर, का सूचीपत्र
10. राजस्थान के जैन शास्त्रभंडार — डॉ कस्तूरचन्द कासलीवाल
11. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर का सूचीपत्र
12. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय चित्तौड़ यति बालचन्द्र जी संग्रह का सूचीपत्र
13. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय जयपुर, लक्ष्मीनाथ शास्त्री संग्रह का सूचीपत्र
14. राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, बीकानेर का सूचीपत्र
15. संस्कृत कॉलेज बनारस रिपोर्ट सन् १९ ८-१९१७

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला में प्रकाशित

(क) संस्कृत-प्राकृत-ग्रन्थ

१ प्रमाणमञ्जरी, (ग्रन्थाङ्क ४), तार्किक चूडामणि सर्वदेवाचार्य कृत; अद्वयारण्य, वलभद्र, वामनभट्ट कृत टीकात्रयोपेत, सम्पादक – मीमांसान्यायकेसरी प० पट्टाभिराम शास्त्री, विद्यासागर (७+१०६), १९५३ ई०। मू ६ ००

२ यन्त्रराज-रचना, (ग्रन्थाङ्क ५), महाराजा सवाई जयसिंह कारित; सपादक – स्व० प० केदारनाथ ज्योतिर्विद् (८+२८), १९५३ ई०। मू. १.७५

३ महर्षिकुलवैभवम् भाग १, (ग्रन्थाङ्क ६), स्व० प० मधुसूदन ओझा प्रणीत, म म प० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित एव हिन्दी व्याख्या सहित (५६+२९१), १९५६ ई०। मू. १०.७५

४ महर्षिकुलवैभवम् (मूलमात्र), (ग्रन्थाङ्क ५९), स्व० प० मधुसूदन ओझा प्रणीत, सपादक – प० प्रद्युम्न ओझा (१६+१३३+१०), १९६१ ई०। मू ४ ००

५ तर्कसग्रह, (ग्र० ९), अन्नभट्ट कृत टीकाकार – क्षमाकल्याण गणि; सपादक – डा० जितेंद्र जेटली, (१७+७४), १९५६ ई०। मू. ३ ००

६ कारकसबधोद्योत, (ग्र० १८), प० रभसनन्दी कृत, कातन्त्रव्याकरणपरक रचना, सपादक – डा० हरिप्रसाद शास्त्री (२२+३४), १९५६ ई०। मू. १ ७५

७ वृत्तिदीपिका, (ग्र० ७), मौनिकृष्णभट्ट कृत; सपादक – स्व० प० पुरुषोत्तम शर्मा चतुर्वेदी, साहित्याचार्य (६+४४+१२), १९५६ ई०। मू २ ००

८ कृष्णगीति, (ग्र० १६), कवि सोमनाथ विरचित, राधाकृष्ण सम्बन्धी प्रेमकाव्य, सपादिका – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (२७+३२), १९५६ ई०। मू १ ७५

९. शब्दरत्नप्रदीप, (ग्र० १९), अज्ञातकर्तृक, बह्वर्थक शब्दकोश, सपादक डॉ० हरिप्रसाद शास्त्री-(१२+४४), १९५६ ई०। मू २ ००

१० नृत्तसग्रह, (ग्र० १७), अज्ञातकर्तृक, सपादिका – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (६+४५), १९५६ ई०। मू १ ७५

११ शृङ्गारहारावली, (ग्र० १५), श्री हर्षकवि विरचित सस्कृत-गीतकाव्य, सपादिका – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (१०+८२) १९५६ ई०। मू २.७५

१२ राजविनोद महाकाव्य, (ग्र० ८), महाकवि उदयराज प्रणीत, अहमदाबाद के सुलतान महमूद बेगडा का चरित्र-वर्णन; सपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (२८+४४) १९५६ ई०। मू २ २५

१३ चक्रपाणिविजय महाकाव्य (प्र० २) भट्ट लक्ष्मीधर विरचित; उषा-परिणय संबंधी अद्यावधि अज्ञात काव्य; संपादक – के का शास्त्री (७+११२) १९५६ ई । मू ३.५०

१४ नृत्यरत्नकोश (प्रथम भाग) (प्र २५) महाराणा कुम्भकर्ण कृत संगीतराजरत्न कोशान्तर्गत संपादक – प्रो० रसिकलाल छो परीख एवं डॉ प्रियबाला शाह (७+१४४) १९५७ ई । मू ३.७५

१५ उक्तिरत्नाकर (प्र० १२) साधुसुन्दर गणि विरचित संस्कृत एवं देशी शब्दकोश संपादक – मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य (१ +११८) १९५७ । मू ४.७५

१६ दुर्गापुष्पाञ्जलि (प्र २२) म म पं दुर्गाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत संपादक पं श्री गङ्गाधर द्विवेदी (१६+१४०) १९५९ ई । मू ४.२५

१७ कर्णकुतूहल एवं कृष्णलीलामृत (प्र २६) महाकवि भोलानाथ जयपुर नरेश सवाई प्रतापसिंह समाश्रित विरचित संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (२५+१) १९५७ ई । मू १.५

१८ ईश्वरविलास महाकाव्यम् (प्र २९) कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित जयपुर निर्माता सवाई जयसिंह द्वारा अनुष्ठित अश्वमेध यज्ञ का प्रत्यक्ष वर्णन एवं जयपुर राज्येतिहास सम्बन्धी अनेक संस्मरण संकलित महाकाव्य संपादक – कविशिरोमणि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री (७६+२९१) १९५८ ई । मू ११.५

१९ रसदीर्घिका (प्र ४१) कवि विद्याराम प्रणीत संस्कृत रसालङ्कारपरक सरल एवं लघु कृति संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (१२+८) १९५९ ई० । मू २

१ पद्यमुक्तावली (प्र० १) कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित अनेक साहित्यिक एवं ऐतिहासिक पद्य संग्रह संपादक – कविशिरोमणि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री (२ +१४१) १९५९ ई । मू ४.०

२१ काव्यप्रकाश भाग १ (प्र ४६) मूल ग्रन्थकार मम्मटाचार्य के समकालीन भट्ट सोमेश्वर कृत 'काव्यादर्श संकेत' सहित जैसलमेर के जैन ग्रन्थ-भंडारों से प्राप्त प्राचीन प्रति के आधार पर संपादित संपादक – श्री रसिकलाल छो परीख (४+१५२) १९५९ ई० । मू १२.०

२२ काव्यप्रकाश भाग २ (प्र ४७) संपादक – श्री रसिकलाल छो परीख (२२+११ +१४) १९५९ ई । मू ८.२५

२३ वस्तुरत्नकोश (प्र ४८) अज्ञातकर्तृक संस्कृत का सामान्यज्ञान-कोश; संपादक – डॉ प्रियबाला शाह (६+९४) १९५९ ई । मू ४.०

२४ रामकर्णामृतम्, (प्र २१) म म पं दुर्गाप्रसाद द्विवेदी कृत रामचरितात्मक संस्कृत-काव्य संपादक – श्री गङ्गाधर द्विवेदी (४+१२६) १९६ ई । मू ४

२५ श्री भुवनेश्वरीमहास्तोत्रम् (प्र ५४) पृथ्वीधराचार्य विरचित कवि पद्मनाभ प्रणीत भाष्यान्वित पूजा-पञ्चाङ्गादि संवलित संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (१+१९९) १९६ ई । मू ३.७५

२६ रत्नपरीक्षादि सप्तग्रन्थ सग्रह, (ग्र० ६०), दिल्ली-सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के मुद्राधीक्षक ठक्कुर फेरू विरचित, मध्यकालीन भारत की आर्थिक दशा एव रत्नपरीक्षादि वस्तुजात-सग्रहादिक विषयो पर विस्तृत विवेचनात्मक ग्रन्थ; सपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य । १९६१ ई० । मू. ८.२५

२७ स्वयम्भूछन्द, (ग्र० ३७) कवि स्वयम्भू कृत, दसवी शताब्दी मे रचित प्राकृत एवं अपभ्रश छन्द शास्त्र पर अलभ्य कृति, सम्पा० प्रो एच०डी० वेलणकर (२५+२४४) १९६२ ई० । मू. ७.७५

२८ वृत्तजातिसमुच्चय, (ग्र० ६१), कवि विरहाङ्क कृत, ९वी शताब्दी मे प्रणीत सस्कृत एव प्राकृत छन्दःशास्त्र पर अलभ्य कृति; सपादक प्रो० एच डी वेलणकर (३२+१४४), १९६२ ई० । मू ५ २५

२९. कविदर्पण, (ग्र० ६२), अज्ञातकर्तृक, १३वीं शताब्दी मे रचित प्राकृत-सस्कृत छन्द-शास्त्र पर अनुपम कृति; सपादक – प्रो० एच. डी. वेलणकर (५२+१५६), १९६२ ई० । मू ६.००

३० वृत्तमुक्तावली, (ग्र० ६६), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट प्रणीत, वैदिक एव सस्कृत छन्द शास्त्र पर दुर्लभ कृति; सपादक – प० श्री मथुरानाथ भट्ट (१७+७६) १९६३ ई० । मू ३ ७५

३१. कर्णामृतप्रपा, (ग्र०२) सोमेश्वर भट्ट कृत (१३वी शताब्दी) मध्यकालीन सस्कृत-काव्य-सग्रह, जैसलमेर के जैन-भडारो से प्राप्त अलभ्य प्रति के आधार पर; सपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य; (१०+५६), १९६३ ई० । मू २ २५

३२ पदार्थरत्नमञ्जूषा, (ग्र ३८), श्रीकृष्णमिश्र प्रणीत दर्शनशास्त्र की वैशेषिक शाखा पर आधारित, जैसलमेर के जैन-भडारो से प्राप्त प्राचीन प्रति के आधार पर सपादित; संपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य, प्रस्तावना – श्री दलसुख मालवणिया । (७+४५) १९६३, ई० । मू ३ ७५

३३ त्रिपुराभारती-लघु-स्तव, (ग्र० १), लघ्वाचार्य प्रणीत वागीश्वरी स्तोत्र, सोमतिलक सूरि (१३४० ई०) कृत टीका सहित, सपादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य (१०+५६) १९५२ ई० । मू ३.२५

३४ प्राकृतानन्द, (ग्र० १०), रघुनाथ कवि कृत प्राकृत भाषा व्याकरण सबधी महत्त्वपूर्ण रचना, सपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य (१७+५२+५३+७६) १९६२ ई० । मू ४ २५

३५ इन्द्रप्रस्थ-प्रबन्ध, (ग्र ७०), अज्ञात कर्तृक, दिल्ली के प्रारम्भिक शासकों के विषय में ऐतिहासिक काव्य, संपादक – डा० दशरथ शर्मा (८+४६) १९६३ ई० । मू २ २५

१२. राजस्थानी हस्तलिखित-ग्रन्थ सूची भाग १, (ग्र ४४) मार्च १९५८ तक के ग्रयो का विवरण ; सम्पादक - मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य, (३०२+१९), १९६० ई, मू. ४.५०

१३ राजस्थान हस्तलिखित ग्रन्थ सूची भाग २, (ग्र. ५८) १९५८-५९ के संगृहीत ग्रयो का विवरण ; सम्पादक - पुरुषोत्तमलाल मेनारिया, (२+६१) १९६१ ई। मू २.७५

१४ स्व. पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण ग्रथ सग्रह, (ग्र. ५५), सम्पादक - श्री गोपालनारायण बहुरा और श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी (८+१९३+३८) १९६१ ई.। मू ६ २५

१५ मुंहता नैणसी री ख्यात भाग १, (ग्र ४८), मुंहता नैणसी कृत साधारणत राजस्थान-देशीय एव मुख्यत. (मारवाड) राज्य का प्रथम प्रामाणिक व ऐतिहासिक ग्रथ, सम्पादक आ श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३६५), १९६० ई.। मू. ८ ५०

१६. मु० नै० री ख्यात भाग २, (ग्र ४९), आ. श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३४३) १९६२ ई.। मू ९.५०

१७. मु० नै० री ख्यात भाग ३, (२+२९४) १९६४ ई। ,, ,, मू. ८ ००

१८ सूरजप्रकास भाग १, (ग्र ५९) - चारण करणीदान कविया कृत, सामान्य रूप से मारवाड का ऐतिहासिक विवरण और विशेषत जोधपुर के महाराजा अभयसिंहजी व सरबुलन्दखान के बीच हुए अहमदाबाद के युद्ध का समकालीन वर्णन, सम्पादक - श्री सीताराम लाळस (२०+३१०+३७), १९६१ ई.। मू ८ ००

१९ सूरजप्रकास भाग २, (ग्र ५७), सम्पादक - श्री सीताराम लाळस (९+३९३+६१) १९६२ ई.। मू. ९ ५०

२० ,, भाग ३, (ग्र. ५८), ,, ,, ,, (९७+२७५+८४), १९६३ ई। मू ९ ७५

२१. नेहतरग, (ग्र. ६३) बूदी नरेश राव बुधसिंह हाडा कृत, काव्य-शास्त्रीय-ग्रथ, सम्पादक - श्री रामप्रसाद दाधीच, (३२+१२०), १९६१ ई। मू ४ ००

२२ मत्स्य-प्रदेश की हिन्दी-साहित्य को देन, (ग्र ६६) लेखक डॉ मोतीलाल गुप्त, पूर्वी राजस्थान में हस्तलिखित ग्रंथों की खोज विषयक शोध-प्रबन्ध, (९+२९६), १९६० ई। मू ७ ००

२३ राजस्थान में सस्कृत साहित्य की खोज, (ग्र.३१) : अनु० श्री ब्रह्मदत्त त्रिवेदी, प्रोफेसर एस आर भाण्डारकर द्वारा हस्तलिखित सस्कृत ग्रथो की खोज मे मध्यप्रदेश व राजस्थान में (१९०५-६) मे की गई खोज की रिपोर्ट का हिन्दी अनुवाद (२+७७+१९), १९६३ ई। मू. ३.००

२४ समदर्शी आचार्य हरिभद्र, (ग्र ६८) . लेखक-पं० सुखलालजी, हिन्दी अनुवादक-शान्तिलाल म जैन, राजस्थान के गण्यमान्य साहित्यकार एव विचारक आचार्य हरिभद्र का जीवन-चरित्र और दर्शन; (८+१२२), १९६३ ई०। मू. ३ ००